ISSN 2277 - 7083

आधुनिक साहित्य

Aadhunik Sahitya

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

UGC Approved Care Listed Journal
वर्ष/Year-11 अंक/Vol.-44 द्विभाषी/Bilingual
अक्टूबर - दिसंबर / Oct. - Dec. 2022

विश्व हिं

संपादक
डॉ. आशीष कंधवे

सभी देशवासियों को

आज़ादी के अमृत महोत्सव

की हार्दिक शुभकामनाएँ।

संपादक
–डॉ. आशीष कंधवे

हरिवंश राय बच्चन स्मरणांजलि

जो बीत गई सो बात गई है
जीवन में एक सितारा था
माना वह बेहद प्यारा था
वह डूब गया तो डूब गया
अम्बर के आनन को देखो
कितने इसके तारे टूटे
कितने इसके प्यारे छूटे
जो छूट गए फिर कहाँ मिले
पर बोलो टूटे तारों पर
कब अम्बर शोक मनाता है
जो बीत गई सो बात गई

आधुनिक साहित्य

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

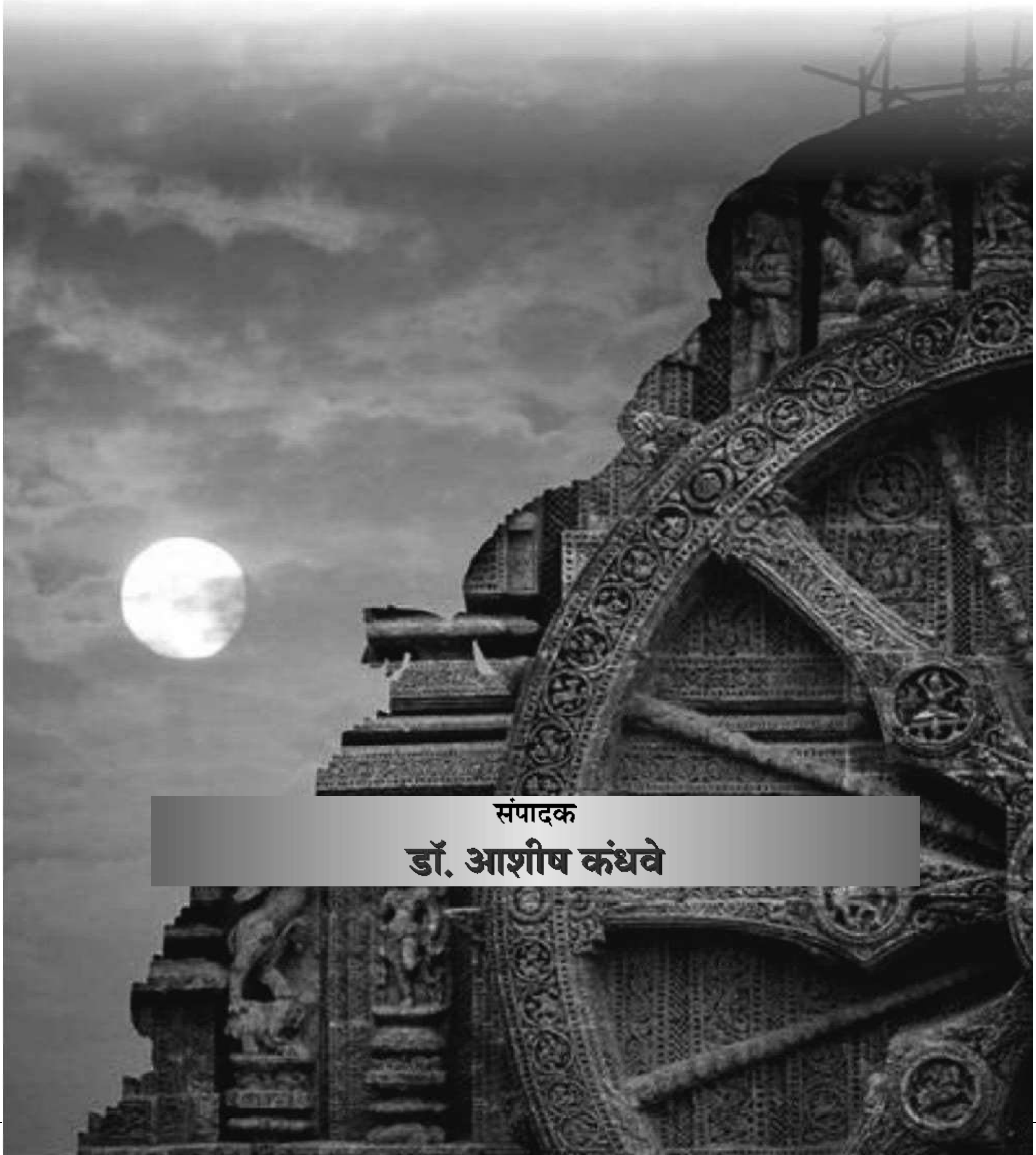

संपादक

डॉ. आशीष कंधवे

विश्व हिंदी साहित्य परिषद

प्रकाशन | वितरण | राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन

प्रमुख उद्देश्य

★ हिंदी का प्रचार-प्रसार

★ उत्तम साहित्य का प्रकाशन

★ साहित्यकार साहित्य योजना

★ पुरस्कार प्रतियोगिता का संचालन

★ रोजगारोन्मुख हिंदी के लिए प्रयास

★ हिंदी एवं भारतीय भाषाओं का समग्र विकास

★ साहित्य एवं संस्कृति के चहुँमुखी विकास के लिए प्रयत्न

★ संग्रहालय, पुस्तकालय एवं संगोष्ठी कक्ष की स्थापना में प्रयासरत

मुख्यालय

एडी-94-डी, शालीमार बाग, दिल्ली-110088

संपर्क सूत्र : 09811184393, 011-47481521

ई-मेल : vhspindia@gmail.com, aadhuniksahitya@gmail.com

Website : www.vhsp.in

UGC Approved Care Listed Journal

आधुनिक साहित्य

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

वर्ष/Year-11 अंक/Vol.-44 अक्तूबर-दिसंबर 2022/October-December 2022 द्विभाषी/Bilingual

Aadhunik Sahitya

संपादक
डॉ. आशीष कंधवे*
Editor
Dr. Ashish Kandhway

संरक्षक	Patron
प्रो. उमापति दीक्षित	Prof. Umapati Dixit
कुमार अविकल मनु	Kumar Avikal Manu
उप संपादक	Sub Editor
रजनी सेठ	Rajni Seth
प्रबंध संपादक	Managing Editor
ममता गोयनका	Mamta Goenka
विशेष संवाददाता (अमेरिका)	Special Correspondent (USA)
रश्मि शर्मा	Rashmi Sharma
संवाददाता (अंग्रेजी)	Correspondent (English)
निलांजन बैनर्जी	Nilanjan Banerjee

*आशीष कंधवे (मूल नाम आशीष कुमार)।

आधुनिक साहित्य में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखकों के हैं जिनसे संपादक, प्रकाशक, मुद्रक एवं पत्रिका से जुड़े किसी भी व्यक्ति का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। सभी विवादों का निपटारा दिल्ली क्षेत्र के अन्तर्गत सीमित है। पत्रिका में सम्पादन से जुड़े सभी पद गैर-व्यावसायिक एवं अवैतनिक हैं।

आधुनिक साहित्य

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

UGC Approved Care Listed Journal

केंद्रीय हिंदी संस्थान के सहयोग द्वारा प्रकाशित

RNI No. DELBIL/2012/42547
ISSN 2277 - 7083

© सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रकाशित सामग्री के पुनः उपयोग के लिए लेखक, अनुवादक अथवा आधुनिक साहित्य की स्वीकृति अनिवार्य है।

संपादकीय कार्यालय
एडी-94-डी, शालीमार बाग, दिल्ली-110088
फोन : 011-27181521, +91-9811193392
ई-मेल : aadhuniksahitya@gmail.com
adhuniksahitya@gmail.com

प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के हैं। इनसे संपादक/प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

मूल्य : ₹ 500 प्रति अंक

शुल्क : तीन वर्ष (12 अंक) ₹ 6000
पांच वर्ष (20 अंक) ₹ 9000
(डाक व्यय सहित)
आजीवन सदस्यता ₹ 21,000
विदेश के लिए (3 वर्ष) 300 डॉलर

शुल्क 'AADHUNIK SAHITYA' के नाम से भेजें।

Account Name	:	Aadhunik Sahitya
Account No.	:	16800200001233
Bank	:	Federal Bank Ltd.
Branch	:	Shalimar Bagh New Delhi-110088
IFSC Code	:	FDRL0001680

'**आधुनिक साहित्य**' हिंदी त्रैमासिकी आशीष कुमार के स्वामित्व में और उनके द्वारा एडी 94डी, शालीमार बाग, दिल्ली 110088 से प्रकाशित तथा आभा पब्लिसिटी, 163, देशबंधु गुप्ता मार्केट, करोलबाग, नई दिल्ली से मुद्रित। स्वामी/संपादक/प्रकाशक/मुद्रक : डॉ. आशीष कुमार

'AADHUNIK SAHITYA' A quarterly bilingual (Hindi & English) Journal of Literature, Culture & Modern Thinking owned/published/printed/edited by Ashish Kumar from AD-94-D, Shalimar Bagh, Delhi-110088 and printed at Abha Publicity, 163, Deshbandhu Gupta Market, Karolbagh, New Delhi.

अनुक्रम

संपादकीय

- **डॉ॰ आशीष कंधवे** / भारतीय ज्ञान परंपरा : सार्वभौमिक समरसता और समावेशी संतुलन का आधार / 10

हिंदी प्रभाग

- **अमृत कुमार तिवारी एवं डॉ. दीपक कुमार पाण्डेय** / किसान कविता : एक प्रारंभिक पड़ताल / 13
- **डॉ. ऐश्वर्या झा** / 21वीं सदी हिंदी सिनेमा / 21
- **डॉ.वन्दना चतुर्वेदी एवं श्याम सिंह** / माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन / 24
- **डॉ. अमृता कुमारी** / स्त्री अस्मिताः चिन्तन के आयाम / 34
- **डॉ. कल्पना मिश्रा एवं कु. अंजली खलखो** / कठगुलाब उपन्यास के प्रमुख स्त्री पात्रों की व्यथा एवं संघर्ष / 39
- **बिनीता मल्ल** / मध्य हिमालयीय क्षेत्र जौनपुर के लोकगीतः एक परिचय / 46
- **प्रभात कुमार एवं कल्पना देवी** / मूर्तिकला में चामुण्डा के विभिन्न स्वरुपों का अंकन-उत्तर भारत के विशेष सन्दर्भ में / 56
- **डॉ. बी. एन. जागृत एवं अनवर खान** / कैलाश बनवासी की कहानियाँ और भूमंडलीकरण / 70
- **डॉ. लालीमोल वर्गिस** / हिन्दी सिनेमा में चित्रित नारी के विभिन्न रूप / 74
- **प्राचीरंगा** / लोककला और संस्कृति के संरक्षण एवं प्रदर्शन में संग्रहालयों की भूमिका / 80
- **प्रो. अर्चना श्रीवास्तव एवं ममता आर्या** / विवाह विच्छेद का बच्चों पर शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक प्रभाव / 84
- **कल्पना जैन** / 21वीं सदी के प्रथम दो दशकों के हिन्दी गीतकाव्य में धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्य / 92
- **डॉ. प्रतिभा राणा** / आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना और प्रयास / 101
- **डॉ. रमेश कुमार वर्णवाल** / उत्तर-आधुनिका और उपभोक्तावादः मृगतृष्णा या वास्तविक सुख की तलाश / 108
- **डॉ. मोहनन वीटीवी** / रोनाल्ड ई. आशरः अनुवाद चिंतन एवं साहित्यिक गरिमा / 116
- **प्रियंका श्रीवास्तव एवं डॉ. रीता सिंह** / स्त्री का राजनैतिक प्रतिरोधः स्वरूप एवं संभावनाएं / 121

- **सुश्री नूतन कुमारी** / हिंदी और मैथिली रामायण में 'जीवन दर्शन' / 127
- **रूबी शर्मा एवं प्रो. बी.एल. जैन** / नई शिक्षा नीतिः 2020 एकाधिक प्रविष्टि एवं विकास से संबंधित प्रावधान एवं क्रियान्वयन की चुनौतियाँ / 131
- **डॉ. राहुल द्विवेदी** / रसवादी आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल / 138
- **कुमारी रागिनी** / लोक-संस्कृति और लोक-साहित्य में मथुरा प्रसाद 'नवीन' का योगदान / 144
- **डॉ. सिंधु टी.आई** / पर्यावरणः मृदुला गर्ग की कहानी 'विनाश दूत' / 151
- **कैलाश कुमार एवं डॉ. शंकर मुनि राय** / अटल बिहारी वाजपेयी का जीवन-दर्शन / 155
- **डॉ. नम्रता कुमारी** / थारू लोक नृत्य-झमटा में वर्णित थरूहट क्षेत्र का ऐतिहासिक एवं भौगोलिक विवरण / 162
- **डॉ. इन्दु कुमारी** / स्त्री-पीड़ा का अथाह स्वरः सुन्नर पांडे की पतोह / 169
- **प्रो. मीना यादव** / राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) -2020 में नया क्या? / 171
- **प्रो. भारती गोरे** / गांधी-दर्शन का साहित्यिक परिदृश्यः कल, आज और कल (हिंदी कथात्मक साहित्य के विशेष संदर्भ में) / 184
- **डॉ. सत्येंद्र प्रताप सिंह** / हिंदी साहित्य के हाशिये में भी हाशिए पर सिमटा हुआ किन्नर समाज / 191
- **सोनम डहेरिया** / मध्यकालीन युग में संत जाम्भोजी / 199
- **डॉ. मीना सिंह** / कुषाण काल में केश विन्यासः विदेशी प्रभाव का पुनर्विलोकन / 204
- **राजीव गुप्ता** / गांधी का ईश्वरीय दर्शन / 210
- **डॉ. अंजू रानी** / राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और वर्तमान परिदृश्य / 216
- **गुंजेश गौतम** / मानवता के कल्याण का विचार है एकात्म मानवदर्शन / 225
- **डॉ. देबश्री सिन्हा** / हिंदी कथा साहित्य में नारी संवेदना का उदय / 233

ENGLISH SECTION

- Preeti / **A Study of Gender Prejudice in a Haryanvi Folk Song** / 1
- Yengkhom Sushma Devi / **An Alternative Approach to Ramkatha: *The Forest of Enchantments*** / 8
- Leimayon Laishram / **Counter-Narrative Voices: A Case Study of Meitei Folktales** / 15
- Zothanchhingi Khiangt / **Disabled Bodies: The Double Jeopardy of Aging Women** / 23
- Sanjay Bansal and Dr. Annu Bahl Mehra / **Effect of Replacement of expression "Reason to believe" by "Information" under Section 148 of the Income Tax Act, 1961?** / 31

- Dr. T.S. Ramesh and P. Yogapriya / **Stephen Greenblatt's New Historicist Concept of Social Energia in William Shakespear's *Henry IV Part I*** / 39
- Rachna Tuli / **Evil Portrayed in the Select Novels of Graham Greene and Iris Murdoch** / 45
- Radhika J. and Dr. T.S. Ramesh / **An Eco Critical Approach to Anita Desai's *Fire on the Mountain*** / 51
- Dr. Ph. Jayalaxmi and Elangbam Priyokumar Singh / **A Reading B. M. Maisnamba's *Imasi Nurabee* Magic Realist Text** / 57
- G. Vimala / **The Impact of Cultural Factors and Relocations of Female Protagonists Selina and Avey in Paule Marshall's Novels 'Brown Girl, Brownstones' and 'Praise Song for the Widow'** / 66
- Mini Srivastava, Prof. (Dr.) A.P. Bhanu and Rakshit Dhingra / **Impact of IT Rules, 2001 vis-à-vis OTT Platforms-An Analytical Study** / 72
- Maj Gen. Kulpreet Singh and CDR (Dr.) Avikshit / **Impact of Leadership Styles on Job Satisfaction: A Special Reference to Higher Education Institutes** / 79
- Manoj Kumar Gupta and Dr. Sudhir Sudan Kaware / **Mobile Phone App Technology: New Innovative Learning Instrument** / 87
- Lakhibai Yumnam / **Multiracial Space in Zadie Smith's *NW;* A Study** / 93
- Dr. Pankaj Dwivedi and Dr. Pramod Kumar / **Offences Relating to Marriage: An Analysis** / 99
- R. Suriya / **Overcoming Collywobbles of War: A Glance at David Malouf's *the Great World*** / 107
- Sima Nath / **Temsula Ao's *Laburnum for My Head:* An Ecofeminist Critique** / 111
- Subhash. S and Dr. T.S. Ramesh / **Spatial Construction of Ideology in Ernest Hemingway's *For Women the Bell Tolls*** / 118
- Dr. Ravindra Kumar and Sanjna Plawat / **T.S. Eliot's "The Waste Land": A Journey From Death to Life** / 124
- Bipin Kumar Thakur / **Women in the Indian Parliament: Access Matters for Success** / 133
- Joanna Pauline C. and Dr. P. Santhi / **Henry Green: The Hero of the Mundane** / 140
- M. Rahman Khan and Dr. M. Shajahan Sait / **The Mastery of Narrative Craft in Alice Munro's Short Stories** / 145
- P. Vimal Raj and Dr. N. Ramesh/ **Mukerjee's Desired Daughter, Tara—In**

Trishanku's Heaven, to the Pursuit of Home, Identity and Culture in '*Desirable Daughters*' / 150

- S. Lilly and Dr. Sivachandran / **Female Sensibility and Her Struggle for Existance** / 157
- R. Sridevi and Dr. V. Kundhavi / **Feminism and Theatre in Alice Childress's *Trouble in Mind*** / 162
- S. Farhana Zabeen / **Struggle Towards Empowerment in Hanan al-Shaykh's *Women of Sand and Myrrh*** / 168
- A Anchiristilla Priya Dharsini and Dr. Anita / **"A Dream" of the Liberated Women according to Virginia Woolf's" A Room of One's Own"** / 175
- D. Ronald Hadrian and Dr. Anita / **Elements of Dystopian Fiction in Station Eleven** / 181
- Keerthi R. and Dr. D. Deepa Caroline / **The Language of Octavia Butler in Xenogenesis Trilogy** / 186
- M.Vidhya and Dr. D.M. Amala / **Narrative Techniques in Roma Tearne's Novels** / 192
- P. Sakthivel and Dr. V.Anbarasi / **Inter Diasporisation in Sudha Murty's *Dollar Bahu*** / 197
- M Vasanthamullai / **Myth, Dream and Journey in Paulo Coelho's *The Alchemist*** / 204
- Dr.T.Alagarasanb and M. Sathya / **Exploration of Sonny's and Will's Cultural Identity and Identity Crisis in Gordimer's *My Son's Story*** / 210
- N.Kalaiarasi and Dr. G. Keerthi / **Man-Woman Rapport: A Study of the Novels of Manju Kapur** / 217
- S. Yasmeen Firdous and Dr. T. Gangadharan/ **Idiosyncrasies: A Psychological Analysis in Roopa Farooki's *Half Life*** / 223
- Joshi Usha and Dr. J. Dharageswari / **Inspiring Image of Epic Women in the Select Novels of Amish Tripathi** / 228
- S.Deviga and Dr. B. Vishalakshi / **Women are Exploited as Immigrants and Expatriates in Certain South Asian Novels** / 232
- K. Thamarai Selvi and Dr. K. Mangayakarasi / **A Study of Cultural Predicament in Foreign Land in Divakaruni's the Mistress of Spices** / 238
- B. Riyaz Ahmed and Dr. S.Abdullah Shah / **Women the 'Strongest Soul': A Study on Premchand's "SATI"** / 243
- Chandra. R and Dr. P. Mythily / **Postmodernist Perspective of Yann Martel's Beatrice and Virgil** / 249
- Ms.M.Uma and Dr. S. Kirubhakaran / **A Study of Existential and**

Psychological Concepts in Anita Desai's Select Novels / 255
- Dr. Dolly Mishra and Dr. Sanjeev Gupta / **The Role of Proxy Advisory Firms in Activism in India** / 259
- Dr. Nikhilesh Dhar / **Rabindranath Tagore and Nationalism : A Post-colonial Reading** / 268
- Dr. Ramyabrata Chakraborty / **Swami Vivekananda's Vision: A Nationalistic Perspective** / 275
- Sadhana Tiwari, Dr. Ashish Saxena, Dr. Sharad Chaturvedi and Priayanka Agarwal / **Employee Selection Process in IT Sector: How it can be improved** / 281
- Rwisummwi Brahma and Pradip Kr. Patra / **Gender Patriarchy and Identity: A Study of the Select Novels of Meghna Pant and Meena Kandaswamy** / 293
- Dr. Shinam Batra and Dr. Sunil Kumar / **Trends in Digitalization and Concerns** / 300
- Dr. Monika Malik and Chhavi Ahlawat / **Uniformity in Civil Laws Vis a Vis Positive Secularism** / 309
- Neetu Kundu and Dr. Anu Rathee / **Identity Subjectivity in Laxmi Narayan Tripathi's *Me Hijra, Me Laxmi*** / 318
- Monika and Dr. Naresh Rathee / **Exploring the Cultural Consciousness: A Study of Sudha Murthy's *Dollar Bahu*** / 323
- Reema Bhattacharya and Dr. Aqueeda Khan / **Self Incrimination in view of Constitutional Law and Human Rights: A Light on Godhra Carnage Case** / 329
- Prikshit Singh and Dr. Naresh Rathee / **Perceiving Marriage Through Virmati' Life in Manju Kapur's Difficult Daughters** / 335
- Partho Banerjee / **Artifical Intelligence in Digital Marketing: Applications and Challenges** / 340
- Manisha and Dr. Anu Rathee / **Exploring Space, Identity and Family Values in Vivek Shanbagh's *Ghachar, Ghochar*** / 348

संपादकीय

भारतीय ज्ञान और ज्ञान केंद्रित समाज : नयी शिक्षा नीति के आलोक में

विश्व के सभी देशों की ज्ञान परंपराएँ तथा उन पर आधारित शिक्षा पद्धति के मॉडल हमारे देश के नीति नियंताओं के सामने सुलभ थे फिर भी वे नयी शिक्षा नीति बनाते समय **भारतीय ज्ञान परंपरा को अपने चिंतन के केंद्र में रखते हैं यह बात ध्यान देने योग्य है।** अन्य देशों की ज्ञान परंपराएँ भी मानव के विकास के लिए प्रतिबद्ध हैं किन्तु केवल मानव विकास। जबकि भारतीय ज्ञान परंपरा मनुष्य के साथ-साथ मनुष्यता के विकास की बात करती है। दोनों के बीच का अंतर बड़ा भारी अंतर है।

मनुष्य, व्यक्ति है मनुष्यता विचार है। व्यक्ति नश्वर है विचार शाश्वत है।

ज्ञान परंपरा केवल मनुष्य अर्थात व्यक्ति अर्थात 'नश्वर' के विकास के लिए प्रतिबद्ध है वह नाशवान का विकास करते करते विनाश की दिशा में बढ़ती है। **मनुष्यता एक विचार है और विचार सनातन होता है, चिरंतन होता है, शाश्वत होता है।** सनातन का विकास सृजन, उत्थान और उन्नयन की ओर ले जाता है। ज्ञान परंपरा मनुष्यता/मानवता और उसकी चिरंतनता में विश्वास रखती है वह स्थायित्व पूर्ण है। भारतीय ज्ञान परंपरा मानव और मानवता के संतुलित विकास को साधती है।

भौतिक विकास और आत्मिक विकास दोनों के लिए नयी शिक्षा नीति में 'ज्ञान' शब्द एक व्यापक अर्थ रखता है। केवल सूचना, जानकारी और रटन्त विद्या से कहीं अधिक इस नीति में यह शब्द बालक के सर्वांगीण विकास, संवेदनात्मक संतुलन और सांवेगिक बुद्धि से जोड़ा गया है। ज्ञान शब्द के इसी व्यापक संप्रत्यय को ध्यान में रखकर ही यह नीति ज्ञान केंद्रित समाज के निर्माण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हुई प्रतीत होती है। इ**स दृष्टि से ज्ञान केंद्रित समाज वह समाज है जो भौतिक उन्नति के साथ साथ आत्मिक और सांस्कृतिक उन्नति की ओर संतुलन लिए अग्रसर हो।**

जो नई पीढ़ी को आत्मनिर्भर के साथ-साथ परदुखकातर (दूसरे के दुख में दुखी होने वाला) भी बनाता हो। स्वयं के विकास के साथ-साथ विश्व मानव और मानवता के विकास के उदात्त लक्ष्य जिसके प्रमुख लक्ष्य हों।

मातृभाषा का संस्कार, अन्य भाषाओं की समझ और उनका सम्मान, मूल्यपरक जीवन दृष्टि, तकनीकी ज्ञान, डिजिटल शिक्षा, आत्मनिर्भरता, मानसिक स्वास्थ्य, कला और संस्कृति की शिक्षा, रचनात्मकता का विकास, नैतिक शिक्षा, व्यक्तिव का सर्वांगीण विकास, संवेदनशीलता, संवेगों का संतुलन इस नीति की प्रमुख ऐसी बातें हैं जो ज्ञान केंद्रित समाज के निर्माण में सहायक हैं। **यह शिक्षा नीति अपनी इस भूमिका के निर्वहन में सफल भी होगी अवश्य, बस आवश्यकता इस बात की है कि हम नीति में अंतर्निहित 'नीयत' का मान रखते हुए अपनी संपूर्ण शक्ति से, उपलब्ध संसाधनों का उचित दिशा में अभिनिवेश कर सकें।**

ज्ञान केंद्रित समाज के निर्माण में नयी शिक्षा नीति कि कुछ प्रमुख उल्लेखनीय बाते हैं -

1. शिक्षा का सार्वभौमीकरण और वैश्वीकरण इस शिक्षा नीति के दो प्रमुख उद्देश्य हैं। सार्वभौमीकरण का अभिप्राय है अंतिम पंक्ति में खड़े व्यक्ति और वर्ग तक शिक्षा की पहुँच। और यदि हम इस उद्देश्य को पूरा कर पातें हैं तो ज्ञान केंद्रित समाज के निर्माण से हम दूर नहीं होंगे। आवश्यकता इस बात की है उपलब्ध संसाधनों का शुचितापूर्ण उपयोग सकारात्मक दिशा में किया जाए।

वैश्वीकरण के अंतर्गत यह उद्देश्य निहित है कि भारतीय शिक्षा को वैश्विक पटल पर स्थान दिलाया जाए, इसका प्रत्यक्ष लाभ यह होगा कि विश्व के ज्ञानात्मक अनुशासनों के अनुभवों का लाभ भारतीय जनमानस को मिल सकेगा और ज्ञान केंद्रित समाज के निर्माण की दिशा में हम एक मजबूत कदम आगे बढ़ सकेंगे।

2. भाषा, संस्कृति, कला और रचनात्मकता के प्रति यह शिक्षा नीति विशेष भूमिका लेकर सामने आई है। कहने की आवश्यकता नहीं कि एक ज्ञान केंद्रित समाज में भाषा, संस्कृति, कलात्मकता और रचनात्मक चिंतन की कितनी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। कलाओं के प्रति यह दृष्टि अभिनंदनीय है। संगीत कला संबंधी कुछ प्रावधानों पर ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ- वर्तमान में नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में संगीत शिक्षा एवं अन्य कलाओं आदि के संदर्भ में जो प्रावधान एवं प्रस्ताव दिए गए हैं उन्हें देखना भी समीचीन होगा-

(क) भारत की इस सांस्कृतिक संपदा का संरक्षण, संवर्द्धन एवं प्रसार देश की उच्चतर प्राथमिकता होनी चाहिए क्योंकि यह देश की पहचान के साथ-साथ इसकी अर्थव्यवस्था के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण है।

(ख) भारतीय कला एवं संस्कृति का संवर्द्धन न सिर्फ राष्ट्र बल्कि व्यक्तियों के लिए भी महत्वपूर्ण है। सांस्कृतिक जागरूकता एवं अभिव्यक्ति जैसी प्रमुख क्षमताओं को बच्चों में विकसित करना जरूरी है।

(ग) सभी प्रकार की भारतीय कलाएँ प्रारंभिक बाल्यावस्था, देखभाल व शिक्षा से आरंभ करते हुए शिक्षा के सभी स्तरों पर छात्रों को प्रदान की जानी चाहिए। **संदर्भ - [अन्य केंद्रीय विचारणीय मुद्दे (भाग -3), राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ 88 से 90]**

3. डिजिटल शिक्षा और ई-लर्निंग के साथ नैतिक शिक्षा और अनुशासन का संतुलन अर्थात भौतिक विकास एवं आत्मिक विकास का संतुलन विद्यार्थियों को ज्ञान की सार्थकता से जोड़ता है। नयी शिक्षा नीति इस संतुलन के प्रति विशेष रूप से सचेत है।

4. आधुनिक विश्व में संवेगात्मक असंतुलन और संवेदनहीनता की प्रवृत्ति हमें आत्मघात और पतन की ओर धकेलती है। नयी शिक्षा नीति में मेंटल हेल्थ अर्थात मानसिक स्वास्थ्य हेतु विशेष प्रावधान है। संवेग संतुलन, सांवेगिक बुद्धि का विकास, परामर्श एवं निर्देशन (गाइडेंस एंड काउंसिलिंग) इस नीति के विशेष अंग है। सांवेगिक बुद्धि से युक्त तथा संवेदनशील व्यक्तियों से ही ज्ञान केंद्रित समाज का निर्माण होता है।

5. मातृ भाषा शिक्षण के विशेष प्रावधान के अंतर्गत नई शिक्षा नीति के माध्यम से मातृभाषा को विशेष महत्व दिया गया है ताकि भारत की आने वाली पीढ़ियां अपनी मूल भाषा ही चेतना से जुड़ सके और संस्कृति के उत्स समझ सके। भाषा की चेतना और संस्कृति का उत्स ही एक व्यक्ति को अपने राष्ट्र के प्रति निष्ठावान और जागृत करता है। नई शिक्षा नीति इस बिंदु पर बहुत स्पष्ट रूप से आने वाले 40-50 वर्षों की योजना को लेकर अपने लक्ष्य के पूर्ति हेतु संकल्पबद्ध दिखाई देती है।

6. मूल्य आधारित शिक्षा व्यवस्था में सत्य, अहिंसा, करुणा, प्रेम, सेवा, सहयोग और समानता आदि जीवन के साधारण जीवन मूल्यों में सम्मिलित किए जाते हैं। नई शिक्षा नीति शिक्षण के माध्यम से भारतीय ज्ञान परंपरा की उस निष्ठा को जिसमें सत्य, अहिंसा, करुणा और प्रेम निष्पक्ष रुप से मनुष्य के नैसर्गिक गुण बनाने की ओर चलने को निर्देशित करती है। वहीं सेवा और सहयोग के बिना समानता की परिकल्पना राष्ट्र में नहीं की जा सकती। सार्वभौमिक सामाजिक समर्थन के लिए आवश्यक है कि समाज का प्रत्येक मनुष्य राष्ट्र के प्रति निष्ठा के साथ-साथ अपनी भाषा संस्कृति और साहित्य की चेतना को भी जीवित रखे।

7. कौशल विकास नई शिक्षा नीति के माध्यम से जो सबसे रोचक तथ्य समाज के सामने रखा गया है वह शिक्षा के साथ-साथ छात्रों के कौशल को विकसित करने का भी है। भारत अपनी सनातन प्रवृत्ति और सनातन संस्कृति दोनों में आत्मनिर्भर रहा है और उसकी आत्मनिर्भरता का मूल सिद्धांत यहाँ के निवासियों के भीतर कौशल के विकसित होने के कारण ही संभव हुआ था। आज फिर वह समय आ गया है कि 135 करोड़ के भारत के प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा के साथ-साथ कौशल विकास करने की प्रवृत्ति की ओर ध्यान दिया जा रहा है। कौशल विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना ही भारत को विश्व में आत्मनिर्भर कर देने जैसा होगा।

संकल्प से सिद्धि के मूल सिद्धांत पर आधारित नई शिक्षा नीति आने वाले दिनों में आने वाले दशकों में एक नए प्रकार के भारत का निर्माण करेगी जो अपने गौरवशाली अतीत को वर्तमान में जीना सीखा जाएगा और राष्ट्र अपनी संपूर्ण संकल्पना के साथ आत्मनिर्भर हो जाएगा।

जय भारत।

-डॉ. आशीष कंधवे
+91-9811184393

किसान कविता एक प्रारंभिक पड़ताल

—अमृत कुमार तिवारी
—डॉ. दीपक कुमार पांडेय

फसल मुरझाने और चेहरे के मलीन हो जाने के पश्चात किसान हताश होकर किंकर्तव्यविमूढ़ नहीं होता अपितु वह पुनः प्रकृतिजनित विपरीत परिस्थिति के विरुद्ध अपना प्रयास जारी रखता है।

'समकालीन हिंदी कविता' नई कविता के बाद चले विविध आंदोलनों में से एक महत्वपूर्ण काव्य-आन्दोलन है। 'समकालीन' या 'समकालीनता' हिंदी आलोचना का एक पारिभाषिक शब्द है। इसका कोशगत अर्थ है- एक समय में रहने वाला या होने वाला। साहित्य में इस शब्द का अर्थ विस्तार हो चुका है। आज यह शब्द कालवाचक अर्थ के साथ-साथ मूल्यगत अर्थ भी धारण कर चुका है। समकालीनता को यदि परमानंद श्रीवास्तव के हवाले से समझा जाए तो हम इसे ऐतिहासिक मोहभंग से उत्पन्न ऐसी मूल्यदृष्टि कह सकते हैं जो आज भी संश्लिष्ट वास्तविकता में प्रवेश करने को प्रतिबद्ध जीवन दृष्टि देती है। साथ ही यह अपने समय के कटु और यथार्थ जीवन बोध को समझने तथा सामना करने का साहस प्रदान करती है। मूर्धन्य साहित्यकार रघुवीर सहाय समकालीनता को परिभाषित करते हुए लिखते हैं, कि "मेरी दृष्टि में समकालीनता मानव जीवन के प्रति पक्षधरता का दूसरा नाम है- भविष्य के प्रति या नियति के प्रति नहीं।"[1] इस संदर्भ में हम कह सकते हैं कि समकालीनता आम जनमानस के वर्तमान जीवनस्तर में सुख, शांति और समृद्धि हेतु किया जाने वाला मानवीय प्रयास है जिसे किसी अलौकिक शक्ति के संरक्षण के बजाय पूर्णतया भौतिक जगत से संबद्ध होना चाहिए। समकालीन काव्य-आंदोलन एक प्रचलित काव्य-आंदोलन होने के साथ-साथ नामकरण एवं काल-विभाजन को लेकर सर्वाधिक विवादास्पद आंदोलन भी रहा है। आलोचकों का काल-विभाजन संबंधी मतभेद इस विवाद का कारण है। कमोवेश कुछ आलोचक इसकी शुरुआत सन् 1970 ई. से तो कुछ सन् 1975 ई. से मानते हैं, लेकिन अधिकांश आलोचक इसकी शुरुआत सातवें दशक के प्रारंभ से ही मानते हैं। विद्वानों के मतों पर समग्रता से विचार करने के पश्चात हम सन् 1960 ई. के बाद की कविता को समकालीन कविता की संज्ञा से अभिहित कर

सकते हैं। समकालीन कविता की प्रमुख विशेषता यह है कि इस कविता ने सामान्य से सामान्य विषय तथा यथार्थ चित्रण को अपनी निर्मिति का आधार बनाया। इस कविता ने लिंग, जाति, रंग, क्षेत्र के साथ-साथ कर्म आधारित वर्गों को भी काव्य विषय बनाया। ऐसा ही एक वर्ग है 'किसान'। वह किसान जिसकी पहचान लोक कवि 'घाघ' इस प्रकार बताते हैं-

''बांधे कुदारी खुरपी हाथ, लाठी हंसुआ राखे साथ।
काटे घास औ खेत निरावे, सो पूरा किसान कहावे।।''[2]

घाघ की इन पंक्तियों के जरिए हम पारंपरिक भारतीय किसान की छवि को स्पष्टतया देख सकते हैं। यह आत्मनिर्भर किसान की छवि है जो अपना काम स्वयं करता है और अपने लाभ-हानि के प्रति स्वयं उत्तरदायी है। आधुनिक किसान पारंपरिक किसान से भिन्न हैं। शनै-शनै उसकी प्रकृति पर निर्भरता औसतन कम हुई है। विज्ञान और तकनीकी ने वर्तमान किसान के कृषि-यंत्र तो बदल दिए हैं परंतु कृषि कार्य की प्रक्रिया तथा मौजूदा समस्याओं के समाधान के दृष्टिकोण से अब तक हुई उन्नति-अवनति का मूल्यांकन शेष है।

किसान तथा उसका जीवन-जगत हिंदी साहित्य में अन्य विषयों की अपेक्षा कम चित्रित हुआ है। हिंदी कथा साहित्य ने भारतीय समाज के सबसे बड़े तथा संघर्षशील वर्ग की समस्याओं को यथोचित अभिव्यक्ति दी है किंतु कविता तथा आलोचना ने इसका सम्यक मूल्यांकन नहीं किया। अब तक न कोई किसान केंद्रित महाकाव्य लिखा गया न आलोचना में इस वर्ग विशेष के प्रति समुचित न्याय किया गया और न ही इसे विमर्श के केंद्र में लाने का कोई प्रयत्न किया गया। यद्यपि हिंदी कविता का स्वर किसानों के संबंध में उग्र रहा है परंतु अत्यंत सीमित परिधि के भीतर सिमटा हुआ प्रतीत होता है।

हमारे प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में पृथ्वी को माता, मनुष्य को पुत्र तथा मेघ को पिता का स्थान प्राप्त है।

''माता भूमिरू पुत्रोऽहं पृथिव्या:। पार्जन्य: पिता स उ न: पिपर्तु।।''[3]

अर्थात यह भूमि हमारी माता है, मेघ हमारे पिता है और हम सब इनके पुत्र हैं तथा ये परस्पर मिलकर हमारा पालन करते हैं।

आदिकालीन एवं मध्यकालीन कवियों ने अपनी कविता में प्रसंगानुकूल किसान जीवन को अभिव्यक्ति दी है। जहाँ स्वतंत्रता पूर्व आधुनिक हिंदी कविता ने किसान की यथोचित उपस्थिति दर्ज की है वहीं स्वातंत्रयोत्तर हिंदी कविता में स्वतंत्र रूप से कृषि अथवा कृषक केंद्रित महाकाव्य या खण्डकाव्य प्राप्त नहीं होता। अनेक कवियों ने समय, प्रसंग तथा भाव-वश यत्र-तत्र इनका चित्रण अपनी कविताओं में किया है।

आधुनिक हिंदी कविता के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर 'त्रिलोचन' की कविताओं में भारतीय किसान का आक्रोश तथा उसकी दयनीय स्थिति का चित्रण अत्यंत सजगता से हुआ है। त्रिलोचन के काव्य में चित्रित किसान-जीवन के संदर्भ में वरिष्ठ आलोचक मैनेजर पांडेय का मत द्रष्टव्य है, ''त्रिलोचन की कविता के बारे में यह कहना काफी नहीं है कि वह किसानों के जीवन-संघर्ष की कविता है। यह भी देखना जरूर है कि वे किसान-जीवन के यथार्थ को किस दृष्टि से देखते और

चित्रित करते हैं। हिंदी में किसान-जीवन के कवियों की कमी नहीं है। उनमें से अधिकांश कवि मध्यवर्गीय दृष्टि से किसान-जीवन के यथार्थ को देखते हैं। वे कभी समय की मांग और कभी बौद्धिक सहानुभूति के कारण किसान-जीवन की कविता लिखते हैं। ऐसी कविताओं में कहीं कवि तटस्थ दर्शक की तरह होता है तो कहीं किसानों का वकील। इनसे भिन्न मध्यवर्गीय दृष्टि के कवि हैं जो किसान की दयनीयता से द्रवित होकर उनकी व्यथा कथा कहते हैं या किसान-जीवन की सरलता, सादगी और पवित्रता का गौरव गान करते हैं। त्रिलोचन ऐसे कवि नहीं है। उनकी दृष्टि एक सजग किसान की दृष्टि है जो उस जीवन को जीते, देखते-सुनते और समझते हुए कवि को मिली है, इसलिए उसमें मध्यवर्गीय तटस्थता और भावुकता नहीं है। उसमें किसान जीवन से आत्मीयता और तादात्म्य है, लेकिन उस जीवन में मौजूद रूढ़ियों की आलोचना भी है। उनकी दृष्टि किसान जीवन की समग्रता को देखती हैं। वह उस जीवन की शक्ति के स्रोतों की खोज करती है, तो जड़ता की जड़ों पर प्रहार भी करती है। त्रिलोचन इसी सजग किसान दृष्टि से प्रकृति, समाज और विश्व को देखते हैं। मानवीय संबंधों और भावों के उनके बोध में भी वही दृष्टि सक्रिय रहती है।''[4]

बाढ़ और सूखा किसान जीवन के सपनों एवं आकांक्षाओं पर कुठाराघात करने वाले दो प्रबलतम शत्रु हैं। यही कारण है कि खेती के लिए प्रकृति का समय के साथ सामंजस्य अत्यंत आवश्यक होता है। यदि सामंजस्य स्थापित न हो तो किसान की फसल मुरझाने लगती है। इस संदर्भ में कवि त्रिलोचन की कविता 'मिलकर वे दोनों प्रानी दे रहे खेत में पानी' दृष्टव्य है-

''आये ना बहुत दिन बादल / होता नित घाम भयंकर / हरियाली रही न निर्मल / औ लगी फसल मुरझाने''[5]

किसान ही नहीं अपितु किसान-जीवन के सहभागी पशु-पक्षी भी अकाल के शिकार होते हैं। भवानी प्रसाद मिश्र ने अपनी '*इन सबका दुख गाओगे या नहीं*' शीर्षक कविता में सूखा पड़ने से पशु-पक्षी, नदी-नाले, पवन-प्रकृति तथा इनके संरक्षक किसान पर पड़ने वाले प्रभाव का चित्र खींचा है-

''इस बार शुरू से धरती सूखी है / हवा भूखी है / वृक्ष पातहीन हैं / इस बार शुरू से ही नदियाँ क्षीण हैं, / पक्षी दीन हैं / किसानों के चेहरे मलीन हैं''[6]

फसल मुरझाने और चेहरे के मलीन हो जाने के पश्चात किसान हताश होकर किंकर्तव्यविमूढ़ नहीं होता अपितु वह पुन: प्रकृतिजनित विपरीत परिस्थिति के विरुद्ध अपना प्रयास जारी रखता है। त्रिलोचन की कविता '*मिलकर वे दोनों प्रानी दे रहे खेत में पानी*' शीर्षक कविता में किसान दंपती की अदम्य जिजीविषा फसल को वर्षा के भरोसे नहीं छोड़ती अपितु स्वयं उसे हरा-भरा करने में जुट जाते हैं-

आखिर अपने बल ले कर / मिलकर वे दोनों प्रानी / दे रहे खेत में पानी''[7]

अवध के किसान कवि त्रिलोचन के काव्य में कृषक-जीवन के विविध रंग-रूप स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। उनकी अनेक कविताओं यथा '*बह रही वायु सर सर सर सर, बरसते मेघ झर झर झर झर, काँपते पल थर थर थर', पथ है, तू है, मेरे राही, तेरा चलना बड़ा भला है आविरल*

चलना बड़ा भला है', 'चांदनी चमकती है गंगा बहती जाती है', 'गंगा बहती है लहराती लहरों वाली', 'झीने श्वेत बादल आकाश में', 'धूप सुंदर धूप में जग-रूप सुंदर' आदि में किसान जीवन के बहुरंगी दृश्य व्याप्त है।

साहित्य और सत्ता की आपसी टकराहट आधुनिक साहित्य की एक विशिष्ट प्रवृत्ति मानी जाती है। कविता का तेवर इस परिप्रेक्ष्य में अत्यंत प्राचीन है। मध्यकालीन हिंदी कविता में जहाँ कबीर, तुलसीदास, बिहारी आदि कवि सत्ता के प्रजाविरोधी चरित्र को चुनौती देते हैं वहीं आधुनिक हिंदी कवि जनता के भीतर शोषण के विरुद्ध क्रांति की चेतना भरते हुए परिवर्तन के लिए प्रोत्साहित करते हैं। सुप्रसिद्ध कवि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना अपनी 'आग' शीर्षक कविता में क्रांति का आह्वान करते हुए किसानों एवं मजदूरों का प्रतिनिधित्व करते हैं-

''उसने कहा / लिखो- 'आग' / दिनभर के थके-माँदे चंद / अनपढ़ खेतिहर मजदूरों ने / सिर झुका, पहली बार / अटक-अटक कर / स्लेट पर खड़िया से लिखा / 'आग'।''[8]

इसी कविता में किसान और मजदूरों के आग लिखने और प्रतिरोध का स्वर ऊंचा करने में जो हाथ और कंठ अटक रहे हैं, वो आगे उन्मुक्त हो जाते हैं। उनके भीतर की आग धधककर कवि के भावों को सार्थकता प्रदान करती है। कवि क्रांति की मसाल से निकलती ज्वाला की तपिश को महसूस करता है-

''वह आग मेरे करीब आती जा रही है / कभी मैं किसानों की चिलमों में / अंगारे की तरह दमकने की कामना करता था, मजदूरों की बीड़ियों में सुलगने के / ख्वाब देखता था / अब / उनका और मेरा चेहरा एक हो गया है / हम सब एक अंगार हैं / एक लपट, एक आग / एक शब्द, एक अर्थ, एक राग''[9]

सर्वेश्वर की '*शाम-एक किसान*' शीर्षक कविता में किसान और शाम का एक अद्वितीय रूपक प्रस्तुत किया गया है। कविता ऐसा आभास कराती है जैसे किसान और शाम प्रतिरूप हैं तथा दोनों एक-दूसरे को गढ़ रहे हैं-

''आकाश का साफा बाँधकर / सूरज की चिलम खींचता / बैठा है पहाड़, / घुटनों पर पड़ी है नन्ही चादर-सी, / पास ही दहक रही है / पलाश के जंगल की अँगीठी''[10]

सर्वविदित है कि भारतीय समाज में आर्थिक असंतुलन एक बड़ी सच्चाई है किंतु उससे बड़ा सच यह भी है कि अधिकांश संपन्न लोग यथास्थिति को बनाए रखने का कुटिल षड्यंत्र करते रहे हैं। इससे जो परिस्थितियां उत्पन्न हुई अथवा बनी रहीं उसे कवियों ने अपनी कविताओं में अभिव्यक्ति दी है। गोरख पाण्डेय अपनी कविता '*सोचो तो*' में किसान की स्थिति को इस प्रकार चित्रित करते हैं-

''सोचो तो मामूली तौर पर / जो अनाज उगाते हैं / उन्हें दो जून अन्न जरूर मिलना चाहिए''[11]

ऐसा मान्यता है कि रक्त के आठ कतरों से पसीने की एक बूँद बनती है। भारतीय किसान अपना खून पसीना एक करके इस देश के लिए अन्न उपजाता है किंतु हमारे समय और समाज की यह विडंबना है कि देश का पेट भरने वाले किसान को दो वक्त की रोटी भी बड़ी मुश्किल से

मिलती है। कभी उसका परिवार फाकाँ करता है और कभी-कभी परिस्थितियाँ इतनी असहनीय हो जाती है कि किसान को आत्महत्या करनी पड़ती है।

भारतीय लोकतंत्र में जो भी नीति-नियम और कायदे-कानून बनाये गए वह समस्त भारतीय जनमानस पर लागू होते हैं। समाजहित में बने यह नियम समान रूप से लागू हो पाए हैं या नहीं, यह प्रश्न आज भी प्रासंगिक बना हुआ है। कानून व्यवस्था के व्यावहारिक पक्ष की ओर संकेत करते हुए गोरख पांडेय अपनी कविता '*कानून*' में लिखते हैं-

''मजदूरों पर गोली की रफ्तार से / भूखमरी की रफ्तार से किसानों पर / विरोध की जुबान पर / चाकू की तरह चलेगा / व्याख्या नहीं देगा / बहते हुए खून की / कानून व्याख्या से परे कहा जाएगा''[12]

आपातकाल के दौरान काशी हिंदू विश्वविद्यालय में वसंत पंचमी के अवसर पर निकलने वाली झांकी में जनता को दिखाने वाली राजनीतिक छवि तथा उसमें कवि को दिखने वाला आडंबर एक साथ गोरख पांडे की कविता '*भड़ुआ वसंत*' में अभिव्यक्त हुआ है। जिसमें वो लिखते हैं कि राजनीति द्वारा प्रस्तावित झाँकी में वह किसान जो भूमि विहीन होकर जमींदार के अधीन हो गया है, जो अन्न का उत्पादक होते हुए भी भूखा है उसे मोटर में बैठाया गया है और वसंत का गीत गवाया जा रहा है। क्या यह परिस्थिति उस प्रक्रिया की ओर इशारा नहीं करती जिसमें बकरे के आगे लड्डू होता है और गर्दन के ऊपर तलवार?

''अब कृषि की बारी है / मोटर में बैठा हुआ किसान / देखो, किसान कितना गंवार है / अभी तक वह जितना गरीब है / उतना चमार है / लेकिन झाँकी में किसान सबसे / तेज आवाज में गा रहा है / भूल जाओ कि जो किसान है / और अन्न उगा रहा है / वह भर पेट खाना नहीं पा रहा है / भूल जाओ कि अब भी जमीन का मतलब / जमींदार का जूता, भूखमरी और कुर्क अमीन है / यह झाँकी है जहाँ किसान है, / ढोल-मजीरा है / और गूंजती हुई गलतफहम / आवाज बाकी है / सब कुछ.... / हे भड़ुआ वसंत! यह सब कुछ आपके चरणों में समर्पित है''[13]

समकालीन हिंदी कविता में अभिव्यक्ति के आधार पर हमारे समक्ष दो प्रकार के कवि उपस्थित होते हैं। एक जो उग्र अभिव्यक्ति के लिए जाने जाते हैं, मसलन धूमिल, रघुवीर सहाय, गोरख पांडेय आदि तथा दूसरे जो सहज-सरल अभिव्यक्ति के संवाहक हैं, यथा ज्ञानेन्द्रपति, कुँवर नारायण, केदारनाथ सिंह आदि। केदारनाथ सिंह समकालीन हिंदी कविता के रचनात्मक इंद्रधनुषी प्रतिभासम्पन्न रचनाकार हैं जो ग्राम्य जीवन के छोटे-छोटे विषयों पर कविता करने के लिए जाने जाते हैं। किसान और गाँव का संबंध ठीक वैसा ही है जैसा शहर और बाजार का। कवि केदारनाथ सिंह की कविता में किसान की अनेक छवियाँ व्याप्त हैं। ये किसान की परिस्थितियों को महज भावुक संदर्भ देकर अनर्गल प्रलाप नहीं करते अपितु स्वयं साहस, आशा, जिजीविषा के मोती किसान जीवन से चुनते हैं। किसान संस्कृति, परंपरा, धर्म तथा अनुभवजन्य ज्ञान का प्रमुख संवाहक होता है। केदारनाथ सिंह अपनी कविता '*कुछ सूत्र जो एक किसान बाप ने बेटे को दिए*' में किसान के ज्ञान एवं मूल्य संवहन का चित्र प्रस्तुत करते हैं-

"मेरे बेटे / कुँए में कभी मत झाँकना / जाना / पर उस ओर कभी मत जाना / जिधर उड़े जा रहे हो / काले-काले कौए / कभी अंधेरे में / अगर भूल जाना रास्ता / तो ध्रुवतारा पर नहीं / सिर्फ दूर से आने वाली / कुत्तों के भूँकने की आवाज पर / भरोसा करना" [14]

किसान अपने आसपास के चर-अचर जगत से कौटुंबिक संबंध रखता है। वह पेड़ की पूजा करता है, धरती को माता मानता है, पशु-पक्षियों से भ्रातृत्वभाव रखता है तथा समस्त प्राणी मात्र के लिए विश्व बंधुत्व का भाव रखता है। ऐसा ही चित्रण इन पंक्तियों में किया गया है-

"रात को रोटी जब भी तोड़ना / तो पहले सिर झुकाकर / गेहूं के पौधे को याद कर लेना / हरा पत्ता / कभी मत तोड़ना / और अगर तोड़ना तो ऐसे / कि पेड़ को जरा भी / न हो पीड़ा" [15]

समकालीन कविता के प्रतिनिधि कवि धूमिल व्यवस्था को प्रश्नांकित करने की विशेष रचनाप्रक्रिया के लिए जाने जाते हैं। दलित, किसान, मजदूर आदि की तरफ से वे सत्ता तथा समाज से निरंतर सवाल करते हैं। अपनी कविता '*हरित क्रांति*' में वे किसान की परिस्थिति को रेखांकित करते हैं-

"इतनी हरियाली के बावजूद / अर्जुन को नहीं मालूम / उसके गालों की हड्डी क्यों / उभर आई है। उसके बाल / सफेद क्यों हो गए हैं। / लोहे की छोटी-सी दुकान में बैठा हुआ आदमी / सोना और इतने बड़े खेत में खड़ा आदमी / मिट्टी क्यों हो गया है" [16]

साहित्यकार परिस्थिति, घटना अथवा संवेदना को शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है और यही उसकी सार्थकता भी है। वह सूक्ष्मतम समस्या को भी देख सकता है तथा समाधान के उपाय भी बता सकता है किंतु स्वयं समाधान नहीं दे पाता। भवानी प्रसाद मिश्र अपनी कविता '*आषाढ़ का पहला दिन*' में कृषक के समक्ष उपस्थित होने वाली चुनौतियों की ओर संकेत करते हैं तथा चित्रण के अतिरिक्त और कोई समाधान न दे पाने की विवशता हेतु क्षमा माँगते हैं। साथ ही यह भी दर्शाते हैं कि कृषक की संघर्षशीलता ही है जो कालिदास जैसे अद्वितीय कवि को आकृष्ट करती है-

"जो भूखा रहकर, धरती चीरकर जग को खिलाता है / जो पानी वक्त पर आए नहीं तो तिलमिलाता है / अगर आषाढ़ के पहले दिवस के प्रथम इस क्षण में / वही हलधर अधिक आता है, कालिदास के मन में / तू मुझको क्षमा कर देना" [17]

किसानी में लाभ की अनिश्चितता तथा हानि की संभावना साथ-साथ बनी रहती है। विपत्ति काल में संचित पूँजी के रूप में किसान के पास उसके पशु और खेत ही होते हैं। यह पूँजी भी बहुधा जीवन के विशिष्ट प्रयोजनों में रिक्त हो जाती है। किसान बेटी की शादी करे, बच्चों की उच्च शिक्षा का प्रबंध करे या फिर किसी कुटुम्ब की बीमारी का उपचार कराए तो उसकी स्थिति किसान से मजदूर में परिवर्तित हो जाती है। ऐसा ही दृश्य समकालीन कविता के वरिष्ठ कवि विनोद कुमार शुक्ल की कविता '*बोने को चार बीज*' में दिखाई देता है-

"बोने को चार बीज हैं धान के / जाते-जाते झरकर बच गए देहरी में / जैसे स्वयं बचे ये बीज / सबकी नजर बचाकर / पर बचा नहीं अबकी बार / खेत का अंतिम टुकड़ा / किसान होना भी उसका नहीं बचा / वह बिना खेत का / बचा रह गया मोह / खेत के अंतिम टुकड़े का" [18]

किसान एक ऐसा वर्ग है जो जीवन मूल्यों के प्रति सर्वाधिक संवेदनशील रहा है। भारतीय जीवन शैली में एक मूल्य प्रारम्भ से व्याप्त है कि '*जिसका खाओ उसका गाओ*'। यह आधुनिक शोध का भी अभिन्न अंग है, जिसे हम उद्धरण के रूप में प्रयोग करते हैं। अर्थात हम अपने शोध की पूर्णता के निमित्त जिनके शब्द उधार लेते हैं, उनको उसका श्रेय भी देते हैं। किसान जीवन की परिकल्पना खेत के अलावा खेती के लिए प्रयुक्त समस्त औजारों के बगैर पूर्ण नहीं होती। मोती भुवानिया की कविता '*एक किसान अपने फावड़े से*' में किसान फावड़ा को अपना सच्चा जीवनसाथी स्वीकार करता है तथा उसके योगदान को अपने जीवन के सर्वाधिक प्रिय पक्षों जोड़ता है-

''हल बैल द्वारा खेत की जुताई / तुम्हारे बगैर सदा अधूरी होगी / तुम ही तो हो, / जिसे अपने सुकुमार बच्चे सा, / कंधों पर बिठा / खेत में ले जाऊँ, / वापस लाऊँ-/ दिनभर तुमसे कड़ी मेहनत करवाऊँ (अपना पेट पालने को) / बैलों को चारा तो चाहिए, / तुमने मुझसे आज तक / कुछ न चाहा / मेरे अभिन्न अंग बन चुके हो, / अंतिम घड़ियों तक रहोगे- / ओ मेरे सच्चे जीवनसाथी''[19]

किसान-जीवन की चुनौतियों ने विस्थापन में बहुत बड़ी भूमिका अदा की है। विस्थापन वर्तमान समय का ऐसा कड़वा सच है जिसे न चाहते हुए भी भारतीय जनमानस अत्यंत तीव्रता के साथ अपना रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में अनिवार्य आवश्यकताओं की अनापूर्ति तथा रोजगार की कमी इसका मुख्य कारण है। किसान परिवार इसे दो कारणों से अपनाता है- पहला उपज हेतु कठिन परिश्रम तथा लाभ की अनिश्चितता। दूसरा सामाजिक रूप से यथोचित सम्मान का न मिलना। फिर भी यह प्रश्न ज्यों का त्यों बना हुआ है कि अपनी-जमीन, अपना-खेत छोड़कर शहर में किसी और की नौकरी करना कितना सहज है? समकालीन हिंदी कविता के अलक्षित कवि विजेंद्र ने अपनी कविता '*मैं स्वर्ग की कामना नहीं करता*' में विस्थापन की टीस को अभिव्यक्त किया है-

''मैं किसी स्वर्ग की कामना नहीं करता / मैं इन्हीं खेतों / खलियानों और नदियों के बीच / बड़ा होना चाहता हूँ। / मेरी माँ मुझे छोड़ गई / और पिता बहुत पहले विदा हुए- / पर दोनों ने कहा था / अपनी धरती को मत भूलना। / मैंने उसे छोड़ दिया / और अब अजनबियों की तरह भटकता हूँ''[20]

समकालीन हिंदी कविता की परिधि अत्यंत विस्तृत होते हुए भी किसान और किसानी को यथोचित स्थान नहीं दे पायी। बावजूद इसके किसान तथा उसका जीवन समकालीन हिंदी कविता में नदी और उसकी धारा के समान नहीं तो छोटे-छोटे जलाशयों के समान जरुर उपस्थित रहा है। समकालीन कवियों ने किसान कविताधारा को अपने समय की चुनौतियों के अनुरूप रच कर समृद्ध किया है। ये किसान कविताएँ भी दो रूपों में हमारे समक्ष उपस्थित होतीं है। पहली वे कवितायें जो प्रत्यक्ष रूप से किसान तथा उसके जीवन से संबंधित है। दूसरा स्वरूप उन कविताओं का है जो प्रतीक, रूपक अथवा भावाभिव्यक्ति हेतु किसान तथा किसानी से संबद्ध होती हैं। ये दोनों प्रवृत्तियाँ किसान कविता के आरंभिक चरण से ही स्थापित हैं। हिंदी कविता में

किसान तथा उसके जीवन के चित्रण की छिटपुट वर्षा के बाद भी यह प्रश्न कवियों एवं पाठकों के सामने शेष रह जाता है कि इसकी मूसलाधार बरसात क्यों नहीं हो सकी ?

संदर्भ सूची :

1. नवल, नंदकिशोर. *समकालीन काव्य यात्रा.* नयी दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2004, पृष्ठ 8.
2. सिंह, दुर्गा प्रसाद. *भोजपुरी के कवि और काव्य.* पटना, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, 2001, पृष्ठ 85.
3. अथर्ववेद (कांड-12, सूक्त 1,)चा 12)
4. श्रीवास्तव, परमानंद (सं.). *समकालीन हिंदी आलोचना.* दिल्ली, साहित्य अकादमी प्रकाशन, 1998, पृष्ठ 453.
5. त्रिलोचन. *धरती.* इलाहबाद. नीलाभ प्रकाशन, 1977, पृष्ठ 18.
6. कोईरी, डॉ. मृत्युंजय (सं.). *किसानी कविताएँ.* ग्रेटर नोएडा, दिशा इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2020, पृष्ठ 106.
7. त्रिलोचन. धरती. इलाहबाद. नीलाभ प्रकाशन, 1977, पृष्ठ 18.
8. सक्सेना, सर्वेश्वरदयाल. *जंगल का दर्द.* नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2019, पृष्ठ 16-17.
9. वही, पृष्ठ 21.
10. कोईरी, डॉ. मृत्युंजय (सं.). *किसानी कविताएँ.* ग्रेटर नोएडा, दिशा इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2020, पृष्ठ 125.
11. कृष्ण, प्रणय (सं.). *समय का पहिया (गोरख पांडेय की चुनी हुई कविताएँ).* मेरठ, संवाद प्रकाशन, 2004, पृष्ठ 49.
12. वही, पृष्ठ 68.
13. वही, पृष्ठ 76-77
14. श्रीवास्तव, परमानंद. अनिल त्रिपाठी (सं.). *प्रतिनिधि कविताएँ (केदारनाथ सिंह).* नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2015, पृष्ठ 38.
15. वही, पृष्ठ 38-39.
16. रत्नशंकर (सं.). *सुदामा पाँड़े का प्रजातंत्र.* नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2014, पृष्ठ 88.
17. कोईरी, डॉ. मृत्युंजय (सं.). *किसानी कविताएँ.* ग्रेटर नोएडा, दिशा इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2020, पृष्ठ 106.
18. त्रिपाठी, अरविन्द (सं.). *आकाश धरती को खटखटाता है (विनोद कुमार शुक्ल की चुनी हुई कविताएँ).* पंचकूला (हरियाणा), आधार प्रकाशन, 2006, पृष्ठ 164.
19. भुवानिया, मोती. *निमिष में.* नई दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लिमिटेड, 1993, पृष्ठ 60
20. विजेंद्र. *ऋतु का पहला फूल.* जयपुर, हंसा प्रकाशन, 1994, पृष्ठ 53.

❐❐❐

शोध छात्र, हिंदी विभाग, पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, ग्राम व पोस्ट- घुद्दा, बठिंडा, पिन- 151401, संपर्क- मो. 8564863172, ई-मेल: deepak.pandey@cup.edu.in

21वीं सदी का हिंदी सिनेमा

—डॉ. ऐश्वर्या झा

'समकालीन कविता' नई कविता के बाद चले विविध आंदोलनों में से एक महत्वपूर्ण काव्य-आन्दोलन है। 'समकालीन' या 'समकालीनता' हिंदी आलोचना का एक पारिभाषिक शब्द है। इसका कोशगत अर्थ है- एक समय में रहने वाला या होने वाला।

Matter awaited

ससस

माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन

—डॉ. वंदना चतुर्वेदी
—श्याम सिंह

किशोर विद्यार्थी शिक्षा में जितना आकांक्षी एवं समायोजित होगा शिक्षा में वह उतनी ही अधिक उन्नति कर सकेगा और अपने भावी जीवन में कदम-कदम पर आने वाली कठिनाईयों का दृढ़ता से सामना कर सकेगा।

*शोध सारांश : प्रस्तुत अध्ययन ''माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। जिसके उद्देश्य : 1. माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में लिंग (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन करना। 2. माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में क्षेत्र (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन करना। उद्देश्यों के आधार पर निम्नलिखित शून्य परिकल्पनाएं निर्मित की गयी हैं- 1. माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में लिंग (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है। 2. माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में क्षेत्र (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा- असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है। यह शोध पत्र शासकीय, अनुदानित एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 600 किशोरों (छात्र-छात्राएं) तक सीमित है। वर्तमान अध्ययन की शोध विधि में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग उसके उद्देश्यों व विशेषताओं को ध्यान में रखकर किया गया है। न्यादर्श हेतु शोधार्थी ने कानपुर नगर जिले के शासकीय, अनुदानित एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों के छात्र-छात्राओं में 300 किशोर छात्र एवं 300 किशोर छात्राएं जिनमें (150-150 शहरी-ग्रामीण छात्र एवं 150-150 शहरी-ग्रामीण छात्राएं) इनका चयन साधारण यादृच्छिक विधि से किया है। **निष्कर्ष** : 1. छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में 0.05 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है। 2. छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनकी शैक्षिक उपलब्धि में*

0.01 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है। 3. शहरी माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में असार्थक सहसम्बन्ध है। 4. ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में 0.01 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है। 5. शहरी माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में असार्थक सहसम्बन्ध है। 6. ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में 0.01 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है।

महत्वपूर्ण शब्द *: माध्यमिक स्तर, सुरक्षा-असुरक्षा की भावना, समायोजन*

प्रस्तावना

हमारा देश एक प्रजातान्त्रिक देश है जिसका प्रमुख लक्ष्य योग्य नागरिकों का निर्माण करना है जिसका प्रमुख आधार शिक्षा है। भारत एवं किसी भी राष्ट्र के भाग्य का निर्माण विद्यालयों के प्रागंण में ही होता है। इसीलिये शिक्षा के क्षेत्र में उचित पाठ्यकमों एवं राष्ट्र के अनुकूल परिमार्जनों की आवश्यकता है क्योंकि आज के परिवेश में शिक्षा, किशोर विद्यार्थियों के मस्तिक के पोषण के लिये उतनी ही आवश्यक है जितना कि उनके शरीर के पोषण के लिये उत्तम आहार। शिक्षा किशोर छात्र-छात्राओं के सुरक्षा-असुरक्षा की भावना के हर पहलू को विकसित करती है। अत: किशोर छात्र-छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन को कितना प्रभावित करती है इस तथ्य का आंकलन करना ही शोध का अहम् उद्देश्य है।

किशोर विद्यार्थी शिक्षा में जितना आकांक्षी एवं समायोजित होगा शिक्षा में वह उतनी ही अधिक उन्नति कर सकेगा और अपने भावी जीवन में कदम-कदम पर आने वाली कठिनाईयों का दृढ़ता से सामना कर सकेगा। छात्र-छात्राओं को भी समाज में स्थान पाने व भावी जीवन को सफल बनाने के लिय समायोजन के क्षेत्र में स्वयं को स्थापित करना ही पड़ता है साथ ही साथ एक अन्य तीव्र समस्या से जुझना पड़ता है वह है संवेगात्मक समायोजन की समस्या, विशेष रूप से किशोरावस्था में पग रखते ही किशोरों को, क्योंकि यह एक क्रान्तिकारी परिवर्तनों का काल होता है, साथ ही साथ यह अवस्था एक ऐसे पुल सदृश्य है, जो बाल्यावस्था को परिपक्वता से जोड़ता है। जिस आयु में भविष्य के जीवन का पूरा खाका तैयार करने के साथ-साथ ही समाज के जिम्मेदार आदर्श नागरिक बनने की तैयारी भी करनी होती है। यही समायोजन है। समायोजन की प्रक्रिया के बल आधुनिक काल में ही नहीं वरन् यह प्रक्रिया प्राचीन काल में भी व्यक्त थी उस समय हमारे देश में वर्ण व्यवस्था थी, सभी जाति के लोग अपने-अपने कार्यों और क्षेत्रों तक सीमित थे। अन्य जातियों से अधिक सम्पर्क न होने के कारण समायोजन की समस्या नहीं के बराबर थी। वे लोग अपने रीति रिवाज, संस्कृति और स्थितियों के अनुसार खुद को समायोजित करते थे।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व

आज के छात्र-छात्रायें ही देश के भावी कर्णधार हैं और इसके निर्माण में शिक्षा की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण है। शिक्षा के बिना कोई भी छात्र व छात्रा समाज में अपना स्थान नहीं बना सकती है। मनुष्य बौद्धिक क्षमताओं से युक्त प्राणी है इसलिए यह प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता

है। वह अपनी शिक्षा के द्वारा अपने विचारों एवं कल्पनाओं को साकार कर सकता है तथा नवीन परिस्थितियों के साथ समायोजन करने में समर्थ हो सकता है। सुरक्षा तत्व किशारों के माध्यमिक विद्यालयी जीवन एवं भविष्य के लिए अत्यंत आवश्यक एवं महत्वपूर्ण तत्व है। इसके अभाव में वह सामाजिक, शैक्षिक एवं व्यवसायिक परिस्थितियों का सामना कर पाने में असमर्थ है। समायोजनशीलता किशोरों के विकास का प्रमुख आधार है तथा वह जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करता है, जैसे-सामाजिक, शैक्षिक, सांवेगिक आदि, इसलिए सुरक्षा तत्व समायोजनशीलता को भी प्रभावित कर सकती है।

कानपुर नगर जिले में माध्यमिक स्तर के अनेक विद्यालय है जो शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित हैं, ये शासकीय, अनुदानित एवं निजी माध्यमिक विद्यालय हैं। इन माध्यमिक विद्यालयों में बालिका वर्ग, बालक वर्ग एवं सह-शिक्षा वर्ग के छात्र-छात्राएं शिक्षा ग्रहण करते हैं। जब छात्र-छात्राएं माध्यमिक कक्षाओं (9-10) में प्रवेश लेते हैं, उस समय उनकी उम्र 13-18 आयु वर्ष होती है, इस आयु वर्ष के छात्र-छात्राएं किशोरावस्था की श्रेणी में आते हैं। किशोर-परिवार, विद्यालय एवं समाज से जुड़ा होता है, उसमें दोस्ती, पढ़ायी, नौकरी, आदि की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना बनी रहती है, इससे उनके समायोजन पर भी प्रभाव पड़ सकता है।

शोधकर्ता ने किशोर विद्यार्थियों की इन्हीं समस्याओं को ध्यान रखते हुए शोध समस्या ''माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन'' में कानपुर नगर जिले का क्षेत्र चयनित किया है।

प्रस्तुत शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में लिंग (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में क्षेत्र (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन करना।

प्रस्तुत शोध की परिकल्पना

शोधकर्ता नें प्रस्तुत शोध अध्ययन में सर्वोत्तम 'शून्य परिकल्पना' को अपनाते हुए अपने शोध विषय के उद्देश्यों को पूर्ण किया है। प्रस्तुत अनुसंधान के उद्देश्यों के आधार पर निम्नलिखित शून्य परिकल्पनाएं निर्मित की गयी हैं-

1. माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में लिंग (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में क्षेत्र (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है।

परिसीमांकन

1. शोधपत्र का कार्य कानपुर नगर जिले के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र तक सीमित है।

2. यह शोध पत्र शासकीय, अनुदानित एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 600 किशोरों (छात्र-छात्राएं) तक सीमित है।
3. यह शोध पत्र माध्यमिक शिक्षा परिषद उ0 प्र0 प्रयागराज के हिन्दी माध्यम के शासकीय, अनुदानित एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों के किशोर (छात्र-छात्राएं) तक सीमित है।
4. यह शोध पत्र सुरक्षा-असुरक्षा की भावना, समायोजन के चरों तक सीमित है।

सम्बन्धित साहित्य

रानी, रेनू (2017) ने अम्बाला मण्डल के सरकारी एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के समस्याओं का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन के उद्देश्य निम्न है। 1. सरकारी एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों के उच्च समस्या से ग्रसित विद्यार्थियों के समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन करना। 2. सरकारी एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों के सामान्य समस्या से ग्रसित विद्यार्थियों के समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन करना। 3. सरकारी एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों के निम्न समस्या से ग्रसित विद्यार्थियों के समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन करना। प्रस्तुत शोध हेतु न्यादर्श के रूप अम्बाला मंडल के सरकारी एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा-10 के 600 विद्यार्थियों का चयन किया गया। अध्ययन में निष्कर्ष में पाया गया कि सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की समस्याओं से उच्च ग्रसित विद्यार्थियों में शैक्षिक समायोजन में निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षा में अधिक सक्षम हैं। सरकारी विद्यालयों की समस्याओं से सामान्य ग्रसित विद्यार्थियों में समायोजन के सभी पक्षों में निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षा में अधिक सक्षम हैं। सरकारी विद्यालयों की समस्याओं से निम्न ग्रसित विद्यार्थियों में समायोजन के सभी पक्षों में निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षा में अधिक सक्षम हैं।

शोध विधि

वर्तमान अध्ययन की शोध विधि में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग उसके उद्देश्यों व विशेषताओं को ध्यान में रखकर किया गया है। शोध समस्या का विषय ''माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन'' से सम्बन्धित है।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श हेतु शोधार्थी ने कानपुर नगर जिले के शासकीय, अनुदानित एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों के छात्र-छात्राओं में 300 किशोर छात्र एवं 300 किशोर छात्राएं जिनमें (150-150 शहरी-ग्रामीण छात्र एवं 150-150 शहरी-ग्रामीण छात्राएं) इनका चयन साधारण यादृच्छिक विधि से किया है।

शोध अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत शोध अध्ययन में तीन परीक्षणों का प्रयोग किया गया है।

1. सुरक्षा-असुरक्षा की भावना – डॉ. बीना शाह द्वारा निर्मित।
2. समायोजन – डॉ. ए. के. पी. सिन्हा एवं आर. पी. सिंह द्वारा निर्मित।

प्रस्तुत शोध में प्रयुक्त सांख्यिकीय विधियाँ

शोधकर्ता ने विभिन्न सांख्यिकीय विधियों द्वारा निष्कर्ष प्राप्त करने के लिए उनका विश्लेषण किया है। शोधकर्ता ने आँकड़ों की गणना हेतु सर्वप्रथम प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर प्रत्येक चर का मध्यमान ज्ञात किया, इसके पश्चात् प्राप्त मध्यमान के आधार पर प्रामाणिक विचलन निकाला, तत्पश्चात् माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन हेतु क्रान्तिक मान एवं सहसम्बन्ध गुणांक का प्रयोग किया है।

परिकल्पनाओं के सत्यापनों द्वारा विश्लेषण एवं व्याख्या

सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त प्रदत्तों से परिणाम ज्ञात करने के लिए शोधकर्ता ने उपर्युक्त सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया और प्राप्त परिणामों को सुविधा की दृष्टि से सारणीबद्ध किया। तत्पश्चात् परिणामों की व्याख्या अथवा स्पष्टीकरण का कार्य किया है। प्राप्त परिणामों का सारणीयन व उनकी परिकल्पनाओं के आधार पर व्याख्या इस प्रकार है –

परिकल्पनाओं का परीक्षण

परिकल्पना संख्या-01 का परीक्षण- ''माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में लिंग (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है''- का सत्यापन।

तालिका सं0 01

किशोर विद्यार्थियों में लिंग (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर सम्बन्धात्मक तालिका

क्र.सं.	छात्र/छात्राएं	चर	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	सहसम्बन्ध गुणांक	क्रान्तिक मान	सार्थकता
1.	छात्र	सुरक्षा-असुरक्षा की भावना	300	68.17	12.67	0.135993	2.37	0.05 स्तर पर सार्थक
		समायोजन		67.33	14.91			
2.	छात्राएं	सुरक्षा-असुरक्षा की भावना	300	70.63	14.01	-0.16997	2.97	0.01 स्तर पर सार्थक
		समायोजन		68.29	15.58			

तालिका सं0-01 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि किशोर विद्यार्थियों में **लिंग** (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि **छात्रों** (N=300) की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का परीक्षण प्राप्ताँकों का मध्यमान 68.17 एवं मानक विचलन 12.67 ज्ञात हुआ तथा परीक्षण समायोजन का मध्यमान 67.33 एवं मानक विचलन 14.91 प्राप्त हुआ। छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन के प्रभाव के बीच सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए सहसम्बन्ध गुणाँक 0.135993 की गणना की। यह जानने के लिए कि छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव पड़ता है अथवा नहीं, इसके लिए क्रान्तिक मान ज्ञात किया जो 2.37 प्राप्त हुआ, जो कि सार्थकता सारणी में देखने से ज्ञात होता है कि यह मान 1.96 से अधिक एवं 2.56 से कम पाया गया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में 0.05 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है।

किशोर विद्यार्थियों में **लिंग** (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि **छात्राओं** (N=300) की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का परीक्षण प्राप्ताँकों का मध्यमान 70.63 एवं मानक विचलन 14.01 ज्ञात हुआ तथा परीक्षण समायोजन का मध्यमान 68.29 एवं मानक विचलन 15.58 प्राप्त हुआ। छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन के प्रभाव के बीच सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए सहसम्बन्ध गुणाँक-0.16997 की गणना की। यह जानने के लिए कि छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव पड़ता है अथवा नहीं, के लिए क्रान्तिक मान ज्ञात किया जो 2.97 प्राप्त हुआ, जो कि सार्थकता सारणी में देखने से ज्ञात होता है कि यह मान 1.96 एवं 2.56 से अधिक पाया गया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनकी शैक्षिक उपलब्धि में 0.01 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है।

अत: परिकल्पना संख्या-01- ''माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में लिंग (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है''- **अस्वीकृत** की जाती है।

आरेख सं0-01

किशोर विद्यार्थियों में लिंग (छात्र एवं छात्रा) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर सम्बन्धात्मक आरेखीय प्रदर्शन

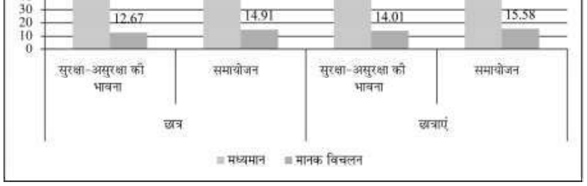

परिकल्पना संख्या-02 का परीक्षण- ''माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में क्षेत्र (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है'' का सत्यापन।

तालिका सं0-02

किशोर विद्यार्थियों में क्षेत्र (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर सम्बन्धात्मक तालिका

क्र. सं.	छात्र/छात्राएं	चर	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	सहसम्बन्ध गुणांक	क्रान्तिक मान	सार्थकता
1.	शहरी मा.वि. के छात्र	सुरक्षा-असुरक्षा की भावना	150	66.72	12.08	0.129248	1.58	असार्थक
		समायोजन		66.52	15.75			
2.	ग्रामीण मा.वि. के छात्र	सुरक्षा-असुरक्षा की भावना	150	70.65	12.85	0.22042	2.70	0.01 स्तर पर सार्थक
		समायोजन		68.26	14.00			
3.	शहरी मा.वि.	सुरक्षा-असुरक्षा की भावना	150	67.21	12.82	0.010828	0.13	असार्थक
		समायोजन		63.43	14.06			
4.	ग्रामीण मा.वि. की छात्राएं	सुरक्षा-असुरक्षा की भावना	150	73.71	13.64	-0.32007	3.93	0.01 स्तर पर सार्थक
		समायोजन		69.74	15.95			

तालिका सं0-02 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि किशोर विद्यार्थियों में **क्षेत्र** (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि **शहरी माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों** (N=150) की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का परीक्षण प्राप्ताँकों का मध्यमान 68.72 एवं मानक विचलन 12.08 ज्ञात हुआ तथा परीक्षण समायोजन का मध्यमान 66.52 एवं मानक विचलन 15.75 प्राप्त हुआ। शहरी माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन के प्रभाव के बीच सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए सहसम्बन्ध गुणाँक 0.129248 की गणना की। यह जानने के लिए कि शहरी माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव पड़ता है अथवा नहीं, इसके लिए क्रान्तिक मान ज्ञात किया जो 1.58 प्राप्त हुआ, जो कि सार्थकता सारणी में देखने से ज्ञात होता है कि यह मान 1.96 एवं 2.56 से कम पाया गया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि शहरी माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में असार्थक सहसम्बन्ध है।

किशोर विद्यार्थियों में **क्षेत्र** (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि **ग्रामीण माध्यमिक**

विद्यालयों के छात्रों (N=150) की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का परीक्षण प्राप्ताँकों का मध्यमान 70.65 एवं मानक विचलन 12.85 ज्ञात हुआ तथा परीक्षण समायोजन का मध्यमान 68.26 एवं मानक विचलन 14.00 प्राप्त हुआ। ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन के प्रभाव के बीच सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए सहसम्बन्ध गुणाँक 0.22042 की गणना की। यह जानने के लिए कि ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव पड़ता है अथवा नहीं, इसके लिए क्रान्तिक मान ज्ञात किया जो 2.70 प्राप्त हुआ, जो कि सार्थकता सारणी में देखने से ज्ञात होता है कि यह मान 1.96 एवं 2.56 से अधिक पाया गया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में 0.01 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है।

किशोर विद्यार्थियों में **क्षेत्र** (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि **शहरी माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं** (N=150) की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का परीक्षण प्राप्ताँकों का मध्यमान 67.21 एवं मानक विचलन 12.82 ज्ञात हुआ तथा परीक्षण समायोजन का मध्यमान 63.43 एवं मानक विचलन 14.06 प्राप्त हुआ। शहरी माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन के प्रभाव के बीच सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए सहसम्बन्ध गुणाँक 0.010828 की गणना की। यह जानने के लिए कि शहरी माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव पड़ता है अथवा नहीं, इसके लिए क्रान्तिक मान ज्ञात किया जो 0.13 प्राप्त हुआ, जो कि सार्थकता सारणी में देखने से ज्ञात होता है कि यह मान 1.96 एवं 2.56 से कम पाया गया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि शहरी माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में असार्थक सहसम्बन्ध है।

किशोर विद्यार्थियों में **क्षेत्र** (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं (N=150) की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का परीक्षण प्राप्ताँकों का मध्यमान 73.71 एवं मानक विचलन 13.64 ज्ञात हुआ तथा परीक्षण समायोजन का मध्यमान 69.74 एवं मानक विचलन 15.95 प्राप्त हुआ। ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन के प्रभाव के बीच सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए सहसम्बन्ध गुणाँक -0.32007 की गणना की। यह जानने के लिए कि ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर प्रभाव पड़ता है अथवा नहीं, के लिए क्रान्तिक मान ज्ञात किया जो 3.93 प्राप्त हुआ, जो कि सार्थकता सारणी में देखने से ज्ञात होता है कि यह मान 1.96 एवं 2.56 से अधिक पाया गया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में 0.01 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है।

अत: परिकल्पना संख्या-02 ''माध्यमिक स्तर पर किशोर विद्यार्थियों में क्षेत्र (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं है'' आंशिक रूप से स्वीकृत की जाती है।

आरेख सं0-02

किशोर विद्यार्थियों में क्षेत्र (शहरी एवं ग्रामीण) के आधार पर सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन पर सम्बन्धात्मक आरेखीय प्रदर्शन

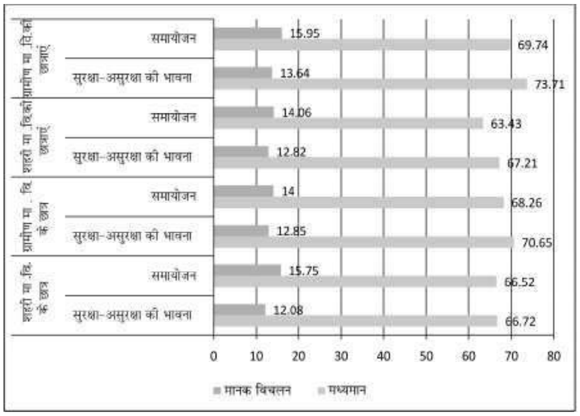

प्रस्तुत शोध पत्र का निष्कर्ष

1. छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में 0.05 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है।
2. छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनकी शैक्षिक उपलब्धि में 0.01 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है।
3. शहरी माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में असार्थक सहसम्बन्ध है।
4. ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में 0.01 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है।
5. शहरी माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में असार्थक सहसम्बन्ध है।
6. ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं की सुरक्षा-असुरक्षा की भावना का उनके समायोजन में 0.01 स्तर पर सार्थक सहसम्बन्ध है।

संदर्भ सूची :

1. कपिल, एच. के. (2012). अनुसंधान विधियाँ. आगरा, उ. प्र. : एच. पी. भार्गव बुक हाउस.
2. कुलश्रेष्ठ, एस. पी. (2011). शिक्षा मनोविज्ञान. मेरठ, उ. प्र. : आर. लाल. बुक डिपो.
3. गैरेट, एच. ई. (1989). शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकीय. हिन्दी संस्करण लुधियाना, पंजाब : कल्याणी पब्लिशर्स.

4. राय पारसनाथ. अनुसंधान परिचय (चावला एण्ड सन्स आगरा पृष्ठ 94-107 तथा पृष्ठ 120-125 व पृष्ठ 289-298.
5. रानी, रेनू (2017). अम्बाला मण्डल के सरकारी एवं निजी माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के समस्याओं का उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन. इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ कॉमर्स, आर्ट्स एंड साइंस, 8(1), 22-29.
6. लाल रमन बिहारी (2010-2011). भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याएं.मेरठ: रस्तोगी पब्लिकेशन्स.
7. सरीन एवं सरीन. शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा पृष्ठ-53-79.
8. सारस्वत मालती. माध्यमिक शिक्षा सिद्धान्त (आगरा प्रकाशन लखनऊ इलाहाबाद संस्करण-99 पृष्ठ 2.
9. International Educational E-Journal, {Quarterly}, ISSN 2277-2456, Volume-II, Issue-I, Jan-Feb-Mar 2013 www.oiirj.org ISSN 2277 - 2456 Page 55.

❒❒❒

शोध निर्देशिका (शिक्षाशास्त्र), आर.के.डी. एफ.विश्वविद्यालय, गाँधी नगर- भोपाल (म.प्र.)
शोधार्थी (शिक्षाशास्त्र), आर.के.डी. एफ.विश्वविद्यालय, गाँधी नगर- भोपाल (म.प्र.); 170, एल.आई.जी, वैदेही विहार, जरौली फेस-2, बारा, कानपुर नगर-208027, मो. 7355586838

स्त्री अस्मिताः चिन्तन के आयाम

—डॉ. अमृता कुमारी

स्त्री-विमर्श के क्रम में हिंदी लेखिकाओं ने स्त्री की संरक्षा और सुरक्षा के लिए काफी कुछ लिखा है, उनमें प्रमुख हस्ताक्षर के रूप में-

कृष्णा सोबती, मन्नू भण्डारी, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, ममता कालिया, प्रभा, खेतान, नासिरा शर्मा, क्षमा शर्मा, रमणिका गुप्ता, रोहिणी अग्रवाल, गीताश्री, सरला महेश्वरी, निर्मला जैन, अनामिका आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

''कोई भी पक्षी एक पंख से नहीं उड़ सकता। कोई भी राष्ट्र स्त्री व पुरुष में से किसी एक वर्ग द्वारा सम्मुन्न नहीं हो सकता।'' स्त्रियाँ पत्नी के रूप में पुरुष को साहस प्रदान करती हैं, माता के रूप भावी सन्तति को शिक्षित करती हैं, जिससे आत्म-सम्मान, स्वतंत्रता व श्रेष्ठ आचरण का अनुगमन वे कर सकें। ईश्वर की दिव्य शक्ति का प्रतिनिधित्व नारी करती है। माँ उनका मधुरतम नाम है।" वर्णित पृष्ठभूमि में महिलाओं के न्यायोचित हितों की सुरक्षा के लिए संविधान निर्माताओं ने भारतीय संविधान में व्यापक प्रावधान किया है।[1]

आधुनिक भारत में स्त्री-विमर्श के विषयों और आज के विषयों में थोड़ा-बहुत ही अन्तर हुआ है। विशेष बात यह हुई है कि विज्ञान, शिक्षा और प्रौद्योगिकी के विकास तथा दुनिया के देशों के समीप आने के कारण लोगों के मन-मस्तिष्क पर पड़े प्रभाव का परिणाम है कि मर्दों की सोच में बुनियादी बदलाव देखने को मिल रहा है। वे लड़कियों को पढ़ाना चाहते हैं। औरतों को अच्छा कपड़ा और अच्छा वस्त्र देने लगे हैं। बिमारियों की हालत में दवा-दारु में अच्छा-खासा खर्च भी करने लगे हैं। आबादी का एक छोटा भाग अब बेटे और बेटियों में कोई फर्क नहीं करता है, बल्कि बेटी को ही बेटे के समान पालता-पोसता, पढ़ाता-लिखाता है। पढ़ी-लिखी औरतों को नौकरी करने देने में आबादी का एक अच्छा हिस्सा किसी तरह की रोक-टोक नहीं करता है। लेकिन आज उसने भीषण रूप धारण कर लिया है- जैसे दहेज हत्याएँ और बलात्कार की घटनाएँ।

आज लिंग-परीक्षण पर रोक, बाल-विवाह पर रोक जैसे विषयों पर कानून तो बने हैं लेकिन इन कानूनों में ऐसे झोल हैं कि अदालत में मर्द जीत जाता है और औरत हार जाती है।

स्त्री-विमर्श के नये विषय कहें या नया विकास कहें-यह है कि देश को आर्थिक संकट से निकालने के लिए जनसंख्या नियंत्रण को जरूरी माना गया। जनसंख्या नियंत्रण का मतलब है-स्त्री की कोख पर नियंत्रण। कोख पर नियंत्रण के लिए निरोध, गर्भनिरोधक उपकरणों और गोलियों का आविष्कार हुआ है। इसी अभियान का एक महत्त्वपूर्ण हथियार है गर्भपात कानून। परिवार-नियोजन योजनाओं का परिणाम है कि बेटियों की संख्या लगातार घट रही है; क्योंकि हर परिवार को अनिवार्य रूप से सिर्फ पुत्राधिकारियों की ही जरूरत है। 'एमनियों सेंटोसिस टेस्ट' ने बेटियों को गर्भ में ही गला घोंट देना आसान बना दिया है।

1950 ई० में भारतीय संविधान के लागू होने के बाद से व्यक्तिगत संबंधों और परम्परागत विवाह संस्था के स्वरूप, स्वभाव और स्थितियों में लगातार परिवर्तन हुआ है। शिक्षाकरण, शहरीकरण, औद्योगीकरण और आर्थिक दबावों के कारण संयुक्त परिवार तेजी से टूटने-बिखरे लगे हैं। छोटा परिवार-सुखी परिवार माना जाने लगा है। शिक्षित स्त्रियाँ भी घर से बाहर निकलकर नौकरी या अन्य काम-धन्धा करने लगी हैं। शुरू में परिवार की आर्थिक बोझ को कम करने के लिए उसे ऐसा करना जरूरी लगा था। आर्थिक स्वतंत्रता और व्यक्तित्व के विकास की चेतना बहुत बाद में उसमें आयी। परिवार की प्रतिष्ठा के सवाल आगे चलकर व्यक्तिगत स्वतंत्रता और अधिकारों के सामने गौण होने लगे और परिणामत: मध्यमवर्गीय एकल परिवारों में पति-पत्नी के बीच तनाव या एक-दूसरे से मुक्त होने की इच्छा आकांक्षा या विवशता अदालत तक पहुँचने लगी। फिर भी स्त्री-विमर्श के नये आयाम खुलने लगे। अदालतों में लगातार बढ़ते तलाक, गुजारा-भता, बच्चों का संरक्षण, दहेज, स्त्री-धन, मानसिक यातना के मुकदमें आदि स्त्री-विमर्श के नये विषय बने हैं।

बाल-विवाह की कुप्रथा के उन्मूलन के लिए आवश्यक है कि सामाजिक सोच में बदलाव के साथ-साथ स्त्री शिक्षा का व्यापक प्रचार-प्रसार तथा गरीबी को समाप्त करने का सार्थक प्रयास किया जाये। यह भी सच है कि सामाजिक रूढ़िवादिता तथा महिलाओं के प्रति सम्मान की भावना के अभाव का दुष्परिणाम था कि बाल-विवाह रोकने की विधिसम्मत कार्रवाई के लिए भँवरी देवी जैसी निष्ठावान तथा कर्त्तव्यपरायण महिला को अपने दायित्व के निर्वाह के लिए पुरस्कार की जगह न्याय-तंत्र की विफलता के चलते अपमान का जहर पीना पड़ा।

आज लिंग-परीक्षण पर रोक, बाल-विवाह पर रोक जैसे विषयों पर कानून तो बने हैं लेकिन इन कानूनों में ऐसे झोल हैं कि अदालत में मर्द जीत जाता है और औरत हार जाती है। हिन्दू विवाह अधिनियम के अनुसार शादी के समय दुल्हन की उम्र 18 वर्ष से अधिक होनी चाहिए। लेकिन भारतीय दंड संहिता 1860 की धारा 375 के अपवाद में प्रावधान है, "अपनी ही पत्नी जिसकी उम्र पन्द्रह (15) साल से कम न हो, के साथ सहवास करना बलात्कार नहीं है।" जबकि धारा 375 (6) के अनुसार किसी भी पुरुष द्वारा सोलह साल से कम उम्र की युवती की सहमति या असहमति से उसके साथ सहवास करना बलात्कार है।"

वधू हत्या और जिन्हें दहेज हत्या भी कहते हैं, के मामलों में या जब पुनर्विवाह करके फिर से दहेज प्राप्त करने के उद्देश्य से हत्या की जाती है या जब प्रेमान्ध होकर दूसरी स्त्री से विवाह किया जाता है- ऐसे मामलों में मौत की सजा सबसे उपयुक्त हो सकती है। देश में हर साल हजारों

बहुएँ दहेज के लिए जलाई जा रही हैं, इसके आँकड़े रोज बढ़ रहे हैं लेकिन न्यायालय शायद ही किसी भी मामले में किसी को फाँसी की सजा अभी तक दे पाया है।

हम एक ऐसे देश में रहते हैं जहाँ परम्परा और आधुनिकता दोनों साथ-साथ चलती है। एक तरफ हम अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की बात करते हैं तो दूसरी तरफ महिलाओं के शोषण-उत्पीड़न और गिरावट की बात करते हैं। आज बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ हों या राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियाँ टेलिविजन और समाचार-पत्रों के माध्यम से नंगी-अधनंगी युवतियों द्वारा अपने माल बेच रही हैं। कुछ तो नाम, यश, धन और ग्लैमर के लिए नंगी होकर अपनी उत्तेजक छवि को कैमरे में कैद कराती है। वकील अंजली कपूरन के अर्ध-नग्न फोटो छपने, छापने और छपवाने को लेकर अदालत में विवादास्पद बहस चली थी। अंजली कपूर की हिमायत में महिला संगठनों का कहना था कि यह उसका 'व्यक्तिगत मामला' है। सुमन ब्राउन मिलर अपनी पुस्तक 'अगेंस्ट आवर विल' में लिखती हैं, नग्न साहित्य बलात्कार की तरह पुरुषों की खोज है, स्त्री को अमानवीय बनाने की खोज है, स्त्री को अमानवीय बनाने के उद्देश्य से स्त्री को यौन-वस्तु में बदलने के लिए, ताकि उसकी उत्तेजना और संवेदना को नैतिक मूल्यों से मुक्त किया जा सके। ऐसे साहित्य में हमेशा स्त्री की नग्न छाती और प्रजनन अंगों को ही दिखलाया जाता है, क्योंकि नग्न शरीर उसकी शर्म है। स्त्री के गुप्त अंगों को पुरुष अपनी व्यक्तिगत संपदा मानता है, जबकि अपने अंगों को प्राचीन, धार्मिक व्यापक पितृसत्ता का प्रतीक जो स्त्री पर जबरन राज करता है। अश्लील साहित्य विशुद्ध रूप से नारी-विरोधी प्रचार है।"

स्त्री-विमर्श का एक विषय यह भी है कि मर्यादाओं की जंजीर में जकड़ी स्त्री के लिए निजी जीवन का मतलब है व्यभिचार। एक वैवाहिक संबंधों से बाहर हर संबंध अनैतिक पाप और अक्षम्य अपराध है। पुरुष के लिए व्यभिचार की खुली कानूनी छूट है। रखैल, वेश्या, कॉल गर्ल्स सभी पुरुषों के आनन्द के लिए बनी हैं। जिसके पास धन है उसके लिए औरत भोग की सुन्दर वस्तु बनायी जा रही है। शारीरिक रूप से अक्षम हो रहे और नपुंसकता की ओर बढ़ती मर्दो की जमात को कामवासना की तृप्ति के लिए आनन्द बाजार बढ़ रहा है। वियाग्रा और उसकी तरह की अन्य दवाइयों का इजाद जोरों पर है।

समाज यूँ नहीं बदल करता। वचनों, प्रवचनों, विवादों और विचारधाराओं से उसे बदलने के लिए महामारी आकाल, भूकम्प, बाढ़ जैसी विराट पैमाने की कोई प्राकृतिक आपदा चाहिए या फिर युद्ध जैसी मानव रचित दुर्घटना, क्योंकि ऐसे ही समयों में मनुष्य की चेतना सामुदायिक रूप से इतनी तत्पर, सतर्क और सन्नद्ध होती है कि विचारों को शब्दों के घेरे से बाहर निकाल कर कर्म में परिवर्तन कर दे।

प्रभा खेतान स्त्री-विमर्श की जबर्दस्त पैरोकार हैं। वह निरन्तर इस विषय पर लिख रही हैं। इनके पास स्त्री-विमर्श समझने-समझाने के अपने तर्क हैं, इनमें दम है और किसी को अपने विचारों से कायल करने की क्षमता भी है। उन्होंने 'हंस' के जनवरी-फरवरी 2000 के अंक में ''स्त्री विमर्श: इतिहास में अपनी जगह" शीर्षक से एक आलेख लिखा है, जिसमें इनके चिन्तन को देखा जा सकता है।

नारीवाद पारंपरिक ज्ञान और दर्शन को चुनौती देता है। ऐतिहासिक रूप से हम पुरुष प्रधान समाज में रहते आये हैं, जहाँ स्त्री ज्ञाता नहीं, बल्कि ज्ञान की विषय-वस्तु है। हम जिसे यथार्थपरक ज्ञान या वस्तुपरक ज्ञान कहते हैं वास्तव में वह पुरुषों द्वारा निर्मित एवं उत्पादित ज्ञान है। इसी ज्ञान को पुरुष सत्ता ने समाज के केन्द्र में अधिष्ठित किया। इसके विपरीत नारीवादी सिद्धांत स्त्री-केन्द्रित ज्ञान की चर्चा करता है।

ज्यों-ज्यों नारीवाद का विकास होता गया इसकी शाखा-प्रशाखाएँ विभिन्न दिशाओं में फूटती गई। सरल स्पष्ट शब्दों में इन नारीवादी विचारों को लेखा-जोखा देना एक बड़ा कठिन अध्यवसाय है क्योंकि निरंतर घटने वाली सामाजिक घटनाएँ, विभिन्न खेमों से निकलने वाली चुनौतियाँ, विचारधारा को स्थिर नहीं रहने देती।

पारंपरिक दर्शन की स्त्री-विरोधी प्रवृत्ति पर प्रकाश डालते हुए, नारीवादी चिंतकों ने यही कहा कि पारम्परिक दर्शन ने न केवल स्त्री के बौद्धिक प्रयास का अवमूल्यन किया, बल्कि स्त्री के निजी मूल्य-बोध को भी तुच्छ किया है। दार्शनिक चिंतन के जगत में स्त्री भी अपना स्थान बना सकती थी। किंतु पारंपरिक दर्शन, पुरुष केन्द्रित सोच तक ही सीमित रहा।

गाँधी स्त्रियों को अहिंसा, त्याग तथा ममता की मूर्ति मानते थे। महिलाओं के प्रति स्मृति-ग्रंथों के दृष्टिकोण पर टिप्पणी करते हुए गाँधी ने कहा कि निर्दयी परम्पराओं को धार्मिक स्वीकृति देना धर्म के खिलाफ है। गाँधी का मानना था कि पुरुष और स्त्री एक-दूसरे के पूरक हैं।

1973 ई० में एलेन सोपोलटा की 'ए लिट्रेचर ऑफ देयर ओन प्रकाशित हुई। ऐलेन सोपोलटा के अनुसार स्त्री दलन का मुख्य कारण निजी संपति की अवधारणा है। अत: स्त्री-दलन का कारण पितृसत्ता नहीं, बल्कि पूंजीवाद है।

यदि हम स्त्री की मुक्ति चाहते है तो पूंजीवाद के स्थान पर हमें मार्क्सवाद से प्रेरणा लेनी चाहिए ताकि अर्थ का समान वितरण हो आर्थिक रूप से स्वावलंबी स्त्री ही पुरुष की बराबरी कर सकती है।

1970 ई० से 80 तक अधिकतर नारीवादी सिद्धांतों की प्रमुख समस्या थी स्त्री को अधीनता से मुक्ति मिले और इसके लिए बहुतेरी नारीवादियों ने मार्क्स को एक मसीहा के रूप में पाया। यह वही दौर था जब अतिवादी वामपंथी सक्रिय थे। पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ जिनमें से अधिकतर स्कूल-कॉलेजों में टीचर और प्रोफेसर थी, बौद्धिक जगत से संबंधित थी तथा उन्हें मार्क्सवाद से पूरी सहानुभूति थी।

स्त्री के इस विशिष्ट पारिवारिक योगदान को यो पहचान रहित छोड़ देना तथा परिवार को केवल पुरुषकर्त्ता द्वारा निर्धारित एकल सामाजिक संबंध के रूप में स्थापित करना स्त्री के साथ अन्याय है।

1968 ई० की छात्र सभा में जर्मन मार्क्सवादी स्त्री कार्यकर्त्ता हेल्के सेंडर ने कहा- ''स्त्री को पहचान तभी मिलेगी जब वह मंच पर अपने निजी जीवन की समस्याओं को अभिव्यक्त करे और इसी आधार पर राजनैतिक रूप से एकबद्ध होकर संघर्ष करे।" दोनों धाराओं में विवाद का केंद्रित मुद्दा था पितृसत्ता।

स्त्री दलन के संदर्भ में इन्हीं दिनों सुलामिथ फायरस्टोन ने यह कहा कि स्त्री वास्तव में जन्म से स्त्रीकरण का शिकार है। स्त्री होने के लिए उसे पुरुष सत्ता का वर्चस्व स्वीकारना पड़ता है।[2]

सत्ता ने कामना के प्रसंग में स्त्री की इच्छा-अभिच्छा का सवाल ही नहीं उठाया।

एक सवाल और क्या सामाजिक ढाँचे और स्त्री मुक्ति के प्रसंग में ये मानसिक विश्लेषण काफी है? मानसिक संरचना की समझ मात्र से स्त्री अपने जीवन में संघर्ष के काबिल नहीं हो जायेगी। वह समाज में रहती है और सामाजिक परिस्थितियों का उसे ज्ञान होना चाहिए। सामाजिक विश्लेषण करते हुए नारीवादियों ने पाया कि स्त्री दलन का कारण केवल 'पूँजीवाद नहीं बल्कि पुरुष की सत्ता है तथा पुरुषों के मन में जातीय श्रेष्ठता का बोध है।

अस्सी के दशक के बाद बहुतेरी नारीवादियों में गृहस्थी और श्रम के बाजार के भौतिक विश्लेषण के बदले भाषा की संरचना, प्रतिनिधित्व का अधिकार एवं समस्या तथा सत्ता का विमर्श पर प्रश्न उठाये तथा वैश्विक स्तर पर सामाजिक संरचना पितृसत्ता और पूंजीवाद के विश्लेषण के बदले विभिन्न संस्कृतियों के विमर्श, विचारधारा और मनोविश्लेषण को प्रस्तुत किया।

तरह-तरह के विमर्श हैं, भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक, व्यवहार, लेखन, कलाकार, विचारक एवं आधुनिकों के अर्थव्याख्यायित सिद्धांतीकरण है जिनके दबाव से हम स्वयं मुक्त नहीं। मानों अब तक हम जो सोच रहे थे, वह सब गलत हो गया। निरंतर प्रगति की अवधारणा से यह कैसा मोहभंग हुआ। जागरण काल की विरासत से कुछ नहीं मिला। सत्ता, सेक्स और स्त्रीकरण के बीच संबंध स्थापित करते हुए हम कह सकते हैं कि "स्त्री कामना की राजनीति अपने प्राचीन रूप में मानव संघर्ष का सबसे गहरा मुद्दा स्त्री-पुरुष का यह संघर्ष है, जो कि मानव सभ्यता का बेमिसाल उदाहरण है।"

निष्कर्षत : महिलाओं के सामाजिक सशक्तिकरण अभियान की सफलता के लिए आवश्यक है कि महिलाओं में ऐसी चेतना विकसित की जाये कि वे जाति या धर्म अथवा स्थान का भेद भुलाकर महिलाओं के हितों के संरक्षण के लिए एकताबद्ध हो सकें। अपने से कमजोर महिलाओं को प्रगति के मार्ग पर आगे बढ़ाने में सबल सहायक बनें। सुशिक्षित महिलाओं से अपेक्षा की जाती है कि महिलाओं की अज्ञानता तथा निरक्षरता के उन्मूलन में सक्रिय भूमिका निभाएँ। माँ-बहनों से उम्मीद की जाती है, कि वे अभिभावक के नाते महिलाओं को ज्ञान एवं कौशल अर्जन के लिए प्रेरित करें तथा उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए उन्हें स्वावलम्बी बनाने का प्रयास करें। पंचायती राज संस्थाओं से सम्बद्ध महिला जनप्रतिनिधियों से अपेक्षा की जाती है कि वे सरकारी योजनाओं का अपेक्षित लाभ के लिए समाज में ऐसे माहौल का निर्माण करायें कि महिलाएँ घरेलू हिंसा की पीड़ा से मुक्त हो सकें तथा असामाजिक तत्त्वों को अपने कुकृत्यों के लिए समुचित दंड मिले। सुझावों का सारांश है कि महिलाओं के सामाजिक सशक्तिकरण में महिला जन प्रतिनिधि या महिला संगठन अपने सुनियोजित प्रयासों से नया कीर्तिमान स्थापित करने में सफल हो सकते हैं।

संदर्भ सूची :

1. महिला सशक्तिकरण के सपने: कितने पूरे कितने अधूरे, डॉ० ईश्वर चन्द्र कुमार पृष्ठ-44
2. स्त्री-विमर्श के असली नकली चेहरे, पृ०-82

❐❐❐

सच्चिदानन्द सिन्हा कॉलेज, औरंगाबाद; पत्नि-श्री सत्यम कुमार सिंह, गांव-चेनारी डीह, पोस्ट- चेनारी, जिला-रोहतास, बिहार-821104, मो. 9873239826

कठगुलाब उपन्यास के प्रमुख स्त्री पात्रों की व्यथा एवं संघर्ष

—डॉ. कल्पना मिश्रा
—कु. अंजली खलखो

कठगुलाब उपन्यास में स्मिता, मारियान, असीमा, दर्जिन बीबी, नीरजा, नर्मदा आदि प्रमुख स्त्री पात्र है। जिनकी अपनी अलग- अलग समस्याएं व संघर्ष है। ये सभी स्त्रियाँ कभी समाज द्वारा कभी पुरूष द्वारा तो कभी अपने ही समकक्ष की स्त्रियों द्वारा सताई गई है।

साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब है। जिसमें युगीन परिवेश एवं युगबोध का समावेश होता है। जिसके माध्यम से समाज व मानव जीवन की जटिलताओं को उद्घाटित किया जाता है। इसी समाज का अभिन्न अंग है नारी। समाज में स्त्री को लेकर कई विचारधाराएँ हैं। जिसे साहित्य के माध्यम से समय समय पर प्रकाश में लाया जाता रहा है। समय के साथ साथ स्त्रियों के जीवन में कई उतार-चढ़ाव आये हैं। जिससे उनकी सामाजिक स्थिति में बदलाव आया है। स्त्री और पुरूष दोनों समान है, दोनों के अपने अलग-अलग विचार, योग्यता, भाव, कार्य दक्षता है। स्त्री-पुरूष दोनों की व्यक्तिगत विशिष्टताएं होती है। जिसके माध्यम से वे समाज में अपनी महत्ता स्थापित करते हैं, दोनों समान है परंतु पुरूष अपने को स्त्री से ऊंचा ही समझता आया है। वह स्त्री को अपने से कमतर समझते हुए उसे दबाने की चेष्टा करता है। जिसे स्त्री ने सहर्ष स्वीकार कर लिया था। पहले स्त्री स्वयं को शारीरिक रूप से कमजोर मानकर पुरूष से दया एवं सहानुभूति की उम्मीद लगाए रखती थी परंतु अब वह जागरूक हो चुकी है। वह पुरूष तथा समाज के दबाव से ऊपर उठने का निरंतर प्रयत्न कर रही है और इसमें उसे सफलता भी मिली है।

स्त्री की सामाजिक स्थिति की गंभीरतापूर्वक पड़ताल करने पर ज्ञात होता है कि स्त्री-पुरूष के बीच गैरबराबरी की धारणा सदियों से पुरूषों के हित में ही चली आ रही है। जिसे स्त्रियों द्वारा ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया गया। इस सामाजिक व्यवस्था, असमानता और अन्याय के खिलाफ आवाज उठाना स्त्रियों के लिए संघर्ष व चुनौतीपूर्ण रहा है।

स्त्रियों को बचपन से ही सिखाया जाता रहा है कि उनका चरित्र आदर्श हो। वे पुरूषों से भिन्न हैं तथा उन्हें उनसे विपरीत उनके अधीन रहकर जीवन व्यतीत करना है। स्त्रियों को इच्छाशक्ति नहीं बल्कि समर्पण और दूसरों के समक्ष झुक कर

रहना आदि बातें सिखाई जाती है। उन्हें बताया जाता है कि दूसरों की भावनाओं का ख्याल रखें उनके लिए जिएं, पूर्ण आत्मत्याग करें और इसके अतिरिक्त उनका स्वयं का कोई जीवन न हो। स्त्रियों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार से उनमें इच्छा शक्ति का विकास हुआ और वे अपनी सामाजिक स्थिति के खिलाफ खड़ी हो सकी।

'कठगुलाब' उपन्यास मृदुला गर्ग का छठवां उपन्यास है। इस उपन्यास में उन्होंने भारतीय तथा अमरीकी समाज में स्त्री की विडम्बनापूर्ण नियति को अभिव्यक्त किया है। इस उपन्यास में स्मिता और मारियान के अमरीकी परिवेश में उनके साथ हुए शोषण, संघर्ष तथा उनके साहस धैर्य और विवेकपूर्ण निर्णय का मृदुला गर्ग ने साक्षात्कार करवाया है। उपन्यास में स्मिता, मारियान, नर्मदा, दर्जिन बीबी, नीरजा, असीमा सभी स्त्री पात्रों ने अपने जीवन में जिस साहस और संघर्ष के साथ अपनी घुटन भरी जिंदगी को बदलने का प्रयास किया वह आज की नारी की तस्वीर को दर्शाता है। जो कठिन व प्रतिकूल परिस्थितियों से किस प्रकार से बाहर निकला जाए स्वयं उस सार्थक मार्ग का चुनाव करती हैं। मृदुला गर्ग ने सभी स्त्री पात्रों की आंतरिक और बाह्य संघर्षों को इस उपन्यास में यथार्थता के साथ चित्रित किया है। मृदुला गर्ग ने स्त्री पात्रों को लेकर कहा है कि "अधिकतर कहानियों में जैसे ही किसी पुरूष विशेष का पदार्पण होता है, स्त्री 'मैं क्या हूँ' पूछना छोड़, मैं इस पुरूष के लिए क्या हूँ, पूछना शुरू कर देती है। फिर तमाम जिम्मेदारी पुरूष के कंधों पर लाद दी जाती है और सैकड़ों 'स्त्री-व्यथा की मार्मिक कहानियों' का जन्म होता है, जिनमें विवाहोपरांत स्त्री घुटती, पिसती, मरती-खपती, रोती, सहती रहती है और कभी कभार धाकड़पने के नाम पर पति से पल्ला छुड़ाकर स्वतंत्र भी हो जाती है।"[1] इस प्रकार कठगुलाब उपन्यास के स्त्री पात्रों के माध्यम से लेखिका ने स्त्री जीवन की समस्याओं को चाहे वह स्त्री अमरिकी समाज की हो या भारतीय समाज की उनके जीवन की घुटन, टूटन, मानसिक अंतर्द्वंद्व, आर्थिक शोषण, तलाक, अकेलापन आदि समस्याओं का तथा उन समस्याओं से स्वतंत्रता का यथार्थ अंकन किया है।

स्मिता

स्मिता का जीवन बचपन से ही अनेक आंतरिक व्यथा एवं संघर्षों के साथ बीता है। माता-पिता की मृत्यु के बाद उसे अपनी बड़ी बहन और जीजा के घर में शरण लेनी पड़ती है। जीजा के तानों के साथ-साथ उसे जीजा के गंदे स्पर्शो को भी बर्दाश्त करना पड़ता है। बड़ी बहन नमिता का इन सब हरकतों को नजरअंदाज करना उसे अंदर ही अंदर तोड़ता रहता है। वह वहाँ से बाहर निकलने के लिए बड़ौदा जा कर पढ़ाई करने की बात कहती है परंतु उसके जाने के पहले ही उसका जीजा उसके साथ बलात्कार का घिनौना कृत्य करता है। वह उसे खाट में बांध कर उसके मुँह में कपड़ा ठूस कर उसके सामने तेज रौशनी के साथ बड़े आईने को रख देता है। जिसके कारण बिना चश्में के स्मिता, जो उसके साथ बलात्कार करता है उसे पहचान ही नहीं पाती है। नमिता को जब पता चलता है कि स्मिता के साथ बलात्कार हुआ है। उस बलात्कारी का पता लगाकर उसको सजा दिलवाने के बजाए वह उसे वहाँ से भाग जाने को कहती है। स्मिता मन में

संशय लेकर उसका अपराधी उसका जीजा है या कोई और प्रतिशोध की ज्वाला में जलती रहती है।

स्मिता बड़ौदा न जाकर कानपुर चली जाती है और वहाँ अर्थशास्त्र में प्रवेश लेती है। वह इतना आगे बढ़ने की इसलिए सोच पाती है क्योंकि वह अपने साथ हुए अपराध को 'सूरजमुखी अंधेरे के' उपन्यास की पात्रा रति के समान स्वयं की गलती नहीं मानती है। इस विषय पर डॉ. रामायणप्रसाद टंडन ने कहा है कि ''अंदर और बाहर की दोहरी दुश्मनी में जकड़ी रति की लड़ाई मानवीय मन की नितान्त उलझी हुई चाहत और जीवट भरे संघर्ष का दस्तावेज है। रती के साथ बचपन में बलात्कार की दुर्घटना घटित हो जाती है, उस समय जब वह इन सबका अर्थ भी नहीं समझती और उसका दुष्परिणाम उसको अपनी तमाम जिंदगी में भोगना पड़ता है। उसके संगी-साथी सब उसके दुश्मन बन जाते हैं। उसका मन अन्तर्द्वंद्व में भटकता रहता है।''[2] इस प्रकार स्मिता अपने साथ हुए अपराध के लिए स्वयं को दोषी या पापी नहीं मानती और जीवन में आगे बढ़ने की महत्वाकांक्षा लिए हुए मन में प्रतिहिंसा की भावना के साथ अमेरिका चली जाती है। बॉस्टन यूनिवर्सिटी में अर्थशास्त्र एम.एस. में दाखिला लेती है, असिस्टेंटशिप के साथ। वहीं पर उसकी मुलाकात साइक्याट्रिस्ट जिम जारविस के साथ होती है। शुरू शुरू में जिम स्मिता को प्रेम और सम्मान देता है परंतु धीरे-धीरे जिम का भेड़िया रूप स्मिता के सामने आने लगता है। जब तक स्मिता, जिम के हाँ में हाँ मिलाती है जिम को लगता स्मिता उसके काबू में है। इसका एक उद्धरण इस प्रकार है ''अब जब वह 'हाँ' कहती तो वह कहता, ओ.के., तब... यह-यह करो। कभी कहता, वह उसे गोदी में लिटाकर स्तनपान करवाये। कभी कहता, सारे कपड़े उतारकर, लालीपॉप चूसते हुए, नर्सरी राइम्स गायें। कभी उसकी नग्न तस्वीरें खींचता और उन्हें सामने रखकर कहता, ''इन्हें देखो और जिस्म के उभारों को छूकर कहो, अब मैं बच्ची नहीं हूँ।'' कभी ...''[3] इस प्रकार स्मिता पति के रूप में जिम द्वारा किए जा रहे अवमाननापूर्ण हरकतों को हँसते-हँसते स्वीकार कर लेती है परंतु जब जिम स्मिता को नग्न अवस्था में शीशे के सामने तेज रोशनी में खड़ा कर देता है तब स्मिता को बचपन का वह भयावह कृत्य याद आ जाता है। वह समझ नहीं पाती की उसके पीछे जिम है या जीजा। वह शीशा तोड़कर जिम को दुबारा ऐसा नहीं करने की हिदायत देती है। जिम यह बर्दाश्त नहीं कर पाता और स्मिता को ही पागल औरत की संज्ञा देता है। वह उसे बेतहाशा गालियाँ बकता हुआ उस पर बैल्ट से वार करता है और उसका भोग करने का प्रयास करता है परंतु अब स्मिता खाट से बंधी हुई मजबूर लड़की नहीं है। वह जिम से उसका बैल्ट छिनकर उसकी धुनाई कर देती है। जिम ने जब बैल्ट से स्मिता को मारा था तब स्मिता के नाजुक जगह लग जाने से उसका गर्भपात हो जाता है। इस प्रकार स्मिता का जीवन स्वर्था संघर्षों के साथ बीतता है। वह जीजा के शारीरिक और मानसिक शोषण फिर बलात्कार, नमिता द्वारा उसको ही भगाना, जिम जारविस द्वारा शारीरिक और मानसिक शोषण, मारपीट, गर्भस्थ शिशु की मौत इतना सबकुछ उसके गर्भ के साथ-साथ उसके जीवन को भी पूरी तरह से खाली कर देता है। इस खाली जगह को भरने का प्रयास वह भारत लौटकर गोधन योजना से जुड़कर अजनबी गाँव को अपना कुटुम्ब बना कर तथा पूरे गाँव वालों की बा बन कर करती है।

मारियान

मारियान कठगुलाब उपन्यास की दूसरी स्त्री पात्र है। मारियान, माँ वरजिनया और पिता स्वर्गीय रॉल्फ ब्रुक की बेटी है। वरजिनया ने दूसरा विवाह जार्ज रिचर्डसन से किया। सौतेला पिता हो कर भी जार्ज मारियान को सुरक्षा और एक पिता का स्नेह देता था। मारियान सुन्दर बिल्कुल भी नहीं थी। मारियान ह्वीटन कॉलेज में समाजशास्त्र की व्याख्याता नियुक्त थी और तीन कमरे के मकान की मालकिन थी। इसी से प्रभावित होकर इर्विंग व्हिटमेन ने मारियान से शादी की थी क्योंकि माँ वरजिनया की तुलना में उसके शरीर और चेहरे का गठन सुंदर नहीं था। उसके बाल चूहे की खाल जैसे थे पतले कसे ओंठ गोल चेहरा तथा फिड्डी भूरी आँख और ठिगना बदन देखकर लोग मारियान की तुलना में माँ वरजिनया के साथ आमोद-प्रमोद में लग जाते थे। मारियान ने इर्विंग व्हिटमेन को एक संवेदनशील युवक समझकर विवाह किया था। इर्विंग लेखक था परंतु उसने न तो कहानी या कविता छपवाई थी और न लिखी थी। इर्विंग व्हिटमेन मौकापरस्त इंसान था। उसने मारियान के घर के साथ-साथ उसकी लेखकीय प्रतिभा का उपयोग स्वयं की स्वार्थपूर्ति के लिए करता है। इर्विंग अपने नए-नए विषयों कभी कोलम्बस की डिस्कवरी ऑफ अमेरिका, कभी रेड इंडियन की मामूली जिन्दगी के बारे में तो कभी अमरीकी यहूदियों के बारे में मारियान को बताता और सभी के ब्यौरे तथा तथ्यों को ढूँढने का काम मारियान के जिम्मे डाल देता। वह स्वार्थ मारियान से झूठ बोलता जब भी उपन्यास का सृजन होगा वह हम दोनों का होगा। इस बीच मारियान प्रेग्नेंट हो जाती है परंतु इर्विंग जो अपनी सिर्फ स्वार्थपूर्ति के लिए मारियान के साथ है बच्चा पैदा करने के खिलाफ है। वह मारियान को मनाने में कामयाब हो जाता है कि बच्चा एक महान कलाकृति की रचना में बाधक बन सकता है। वह मारियान को एबार्शन के लिए राजी कर लेता है। कर्मठ और संवेदनशील मारियान हृदय की गहराई में बच्चे की चाहत लिए हुए महान रचना के सृजन में इर्विंग का साथ देती रहती है।

मारियान ने अपने जर्नल में रूथ, रॉक्जॉन, एलेना, सूजन के बारे में जो भी तथ्य लिखा था वह पूरी तरह से एक उपन्यास ही था उसमें कुछ भी करने को बचा नहीं था परंतु इर्विंग ने मारियान को आभास तक होने नहीं दिया और उसे सिर्फ तथ्यों का पुलिंदा कह कर जर्नल को अपने सुपुर्द ले लिया। जब उपन्यास छपकर आया वुमन ऑफ द अर्थ उसमें सिर्फ इर्विंग का नाम था। मारियान स्तब्ध रह गई थी इर्विंग ने उसका इस्तेमाल किया था। बच्चे के लिए लालयित मारियान को बच्चे के जन्म का मोह देकर उसे अपनी बातों में फंसा कर सारे तथ्य लेता रहा था। यह सब प्रतिबिम्ब मारियान के सामने घूमने लगे। मारियान गुस्से में इर्विंग पर नाखूनों और दाँतों से वार कर देती है जिसका उपयोग इर्विंग अदालत में तलाक लेने के और मारियान को हिस्टीरिया का रोगी साबित करने के लिए करता है। मारियान दूसरा विवाह गैरी कूपर से करती है। जो मारियान की तरह ही तलाकशुदा था। मारियान अपने अतीत की कुंठा और हताशा को छोड़कर जीवन में आगे बढ़ती है। वह बच्चे पैदा करना चाहती थी परंतु उसे हैबिचुअल गर्भपात की बीमारी हो जाती है। वह चाहकर भी बच्चे पैदा नहीं कर सकती। वह बच्चा गोद लेने की तैयारी करती है परंतु गैरी इस बात के लिए साफ इंकार कर देता है। इस प्रकार मारियान जीवन भर बच्चे के लिए तरसती रहती

है। उसकी बौद्धिक प्रतिभा, शरीर और मन का शोषण हुआ फिर भी वह रूकी नहीं अंत में लेखिका बनने में सफल हो जाती है और औसत अंदाज में मशहूर भी।

नर्मदा

नर्मदा सिलाई का कारखाना की संचालिका है और इस कारखाना से वह बेसहारा और जरूरतमंद स्त्रियों की सहायता किया करती है परंतु नर्मदा के यहाँ तक पहुंचने का रास्ता संघर्षशील रहा है। नर्मदा अपनी माँ के देहांत के बाद अपने भाई बावला (भोला) को लेकर अपनी बड़ी बहन गंगा और जीजा गनपत के यहाँ चली जाती है। बचपन में ही उसका जीजा उसे चूड़ी बनाने के कारखाने में भेज देता है। जिससे उसकी उंगलियों के साथ-साथ हाथ पाँव सिर आंख भी सब भट्ठी के ताप से झुलसते रहते हैं। वहाँ की गर्मी का ताप बालिका नर्मदा का शरीर नहीं सह पाया तो बहन गंगा अपने साथ लोगों के घरों में काम करने ले जाने लगी। घरों में काम करते-करते ही वह असीमा और दर्जिन बीबी के संपर्क में आई। दर्जिन बीबी नर्मदा को सिलाई सिखाना चाहती थी परंतु इसकी इजाजत भी लोभी जीजा गनपत से लेना पड़ा। पैसे के लोभ में गनपत नर्मदा को सिलाई सिखने के लिए हामी भर देता है। जीजा गनपत नर्मदा की माँ के घर के लोभ में नर्मदा से जबरदस्ती शादी कर लेता है। नर्मदा इसका बहुत विरोध करती है भागने की भी पुरजोर कोशिश करती है परंतु भाग नहीं पाती और उसकी शादी जीजा के साथ हो जाती है। नर्मदा जब नमिता के यहाँ काम करने लगी वहाँ एक ड्राईवर के प्रेम में पड़ जाती है। वह उससे बच्चा चाहती थी परंतु माँ बनने का सुख उसको मिला ही नहीं और प्रेमी ड्राईवर भी अपने गाँव जाकर कभी लौट कर नहीं आया। नर्मदा ने अपने भाई भोला के लिए कितने कष्ट सहे थे परंतु वह भी शादी कर के अपनी जायदाद अलग कर लिया। बहन गंगा और जीजा तो उसे पैसे निकालने की मशीन ही समझते थे। तो नर्मदा उनसे स्वत: ही अलग हो गई। उसे बच्चे की चाहत बहुत थी। नमिता के जिन बच्चों को पाल-पोस के बड़ा किया वे भी उससे दूर हो गए उसके जीवन में अपना कहने वाला कोई नहीं था। इस प्रकार नर्मदा अपने जीवन में सर्वथा अकेली ही रह गई। अंत में दर्जिन बीबी ने अपने वारिस के रूप में नर्मदा को चुन कर सिलाई के कारखाने की सारी जिम्मेदारी उसे सौंप दी।

असीमा

असीमा एक आत्मनिर्भर व धाकड़ लड़की है। वह केवल कोट और पेंट पहना करती है। उसका नाम सीमा था परंतु वह अपना नाम असीमा कर देती है क्योंकि वह किसी बंधन में बँधना नहीं चाहती। असीमा स्मिता की बचपन की सहेली है। वह स्मिता को उसकी बहन के घर से निकलने तथा पढ़ाई में आर्थिक सहायता देने के लिए भी तैयार रहती है। असीमा नर्मदा की हर प्रकार से सहायता करती है वह नर्मदा को उसके अधिकारों के बारे में जानकारी देती है। असीमा के विषय में मृदुला गर्ग कहती है कि ''उसे 'मर्दों से नफरत' है, क्योंकि सब एक से बढ़कर एक 'हरामी' होते हैं। वह सबसे बड़ा हरामी अपने 'बाप' और 'भाई' को ही मानती है, क्योंकि बाप ने माँ को छोड़कर किसी अन्य औरत को रखैल बना लिया है और भाई सारी संपत्ति का उत्तराधिकारी बन बैठा है। असीमा अपनी सुरक्षा के लिए कराटे की ब्लैक-बेल्ट होल्डर है।''[५] इस प्रकार

असीमा अपने साथ-साथ दूसरों की सहायता के लिए भी कराटे का इस्तेमाल करती है। जब प्रिंसिपल का अधेड़ पति नर्मदा के साथ जबरदस्ती करने की कोशिश करता है तो असीमा उसकी धुनाई कर देती है वह नमिता के पति पर भी कराटे से वार कर चुकी है। असीमा का व्यक्तित्व शुरू से अंत तक दबंग रहा है परंतु वह भी अंत में अकेली ही रह जाती है क्योंकि दर्जिन बीबी ने मरते वक्त जिस विपिन मजूमदार के साथ असीमा को बिना शादी के साथ रहने की बात कही थी। वह विपिन नीरजा से प्रेम करता है। इस प्रकार असीमा गोधड़ योजना से जुड़कर वहाँ के गाँव वालों को अपना कुटम्ब बना लेती है।

नीरजा

नीरजा आधुनिक युग की पढ़ी लिखी स्त्री है। वह डॉक्टरी की पढ़ाई कर रही है। नीरजा, स्मिता की बहन नमिता की बेटी है। उसने बचपन से ही अपने माता-पिता को लड़ते और एक दूसरे को नीचा दिखाते हुए देखा है। नमिता का पति जब बहुत बीमार था खाट से उठ भी नहीं पाता था। उस स्थिति में भी नमिता उस पर दया भाव नहीं रखती थी और बेटी नीरजा व बेटा परदीप को पिता के पास भटकने तक नहीं देती थी। इन्हीं सब परिस्थितियों में पली-बड़ी नीरजा कभी विवाह न करने की ठान लेती है क्योंकि उसे विवाह पर विश्वास या आस्था है ही नहीं। वह अपने से बड़े उम्र के विपिन मजूमदार से बिना शादी के साथ रहने और बच्चे देने के लिए तैयार हो जाती है। जो उसकी आधुनिक विचारधारा को नहीं बल्कि माता-पिता के आपसी रिश्ते तथा बाद में पिता के पार्टनर तोंदल का माँ के साथ संबंध और उसके बाद असीम और माँ के अवैध संबंध आदि से प्रभावित हो कर लिया गया निर्णय था। नीरजा चाह कर भी माँ नहीं बन पाती इसका दुख वह नहीं सह पाती है। विपिन के कहने पर भी की वह उससे प्रेम करने लगा है। उसे बच्चे नहीं चाहिए फिर भी वह विपिन को छोड़कर डॉ. जोशी से विवाह कर लेती है। जिनकी पत्नी मर चुकी है और उनके दो बच्चे भी है। इस प्रकार अंत में नीरजा में प्रेम की अनुभूतियों का विकास होता है।

दर्जिन बीबी

दर्जिन बीबी का जीवन संघर्षों के साथ बीता है। पति ने उसे त्याग दिया क्योंकि वह पति की शारीरिक जरूरत को पूरा नहीं कर पाती है और अपने अंगों का प्रदर्शन करने से भी इंकार कर देती है। दर्जिन बीबी स्वाभिमानी स्त्री है। वह पति से पैसे लेकर जीवन व्यापन करने को भी मना कर देती है। वह अकेले ही दो बच्चों का लालन-पालन करते हुए जीवन की विकट परिस्थितियों से जुझते हुए अनेक समस्याओं से धैर्य पूर्वक संघर्ष करते हुए अपने बलबूते पर सिलाई का कारखाना खड़ा करती है और अपने साथ-साथ दूसरी औरतों को भी सबल बनाने में सहायता करती है। दर्जिन बीबी नर्मदा को सिलाई सिखाती है तथा अंत में अपना वारिस नर्मदा को ही चुनती है।

इस प्रकार कठगुलाब उपन्यास के प्रमुख नारी पात्रों की व्यथा एवं संघर्ष विविध स्तरों पर कायम है। उन्हें प्रताड़ित किया जाता है। वे दुर्व्यवहार की शिकार होती है। पीड़ित, शोषित, कमजोर स्त्रियों के लिए अनेक संस्थाएं है जो नारी उद्धार के कार्यों में लगे हुए हैं फिर भी नर्मदा पर

जो अन्याय हो रहा था उससे उसे कोई बाहर नहीं निकाल पाता है, असीमा भी नहीं। मृदुला गर्ग स्मिता और मारियान के विषय में कहती है कि "स्मिता और मारियान (अमेरिका में) सारी नारीवादी समझ स्त्री शक्ति, साधन सुविधा के बावजूद अपने ही मामलों में अदालत से न्याय नहीं पा सकी और अदालत के बाहर पतियों से समझौता ही करना पड़ा।"[5] इस प्रकार कह सकते हैं कि नर्मदा जैसी निम्न वर्ग की स्त्री हो या मध्य वर्ग की स्मिता और मारियान उन्हें अपने संघर्षो से स्वयं लड़ना और उससे बाहर आना पड़ा। असीमा संवेदनशील गुणों से परिपूर्ण है। वह पुरूष प्रधान सामाजिक व्यवस्था से बार-बार टकराती रहती है। वह पूर्ण होते हुए भी अपूर्ण होती है। असीमा में प्रेम है, करूणा है, साहस है, आत्मविश्वास है, ममत्व है, जिम्मेदारी है, वह अविवाहित है इसका आशय यह कदापि नहीं है कि उसमें इन सब गुणों का अभाव है। किसी कारण से उसने विवाह नहीं किया यह उसकी गहरी सोच और उसका स्वयं का दृष्टिकोण है। असीमा की विचारधारा अलग है परंतु आधारहीन बिल्कुल भी नहीं है। उसने स्वयं के जीवन तथा दूसरे के जीवन के संघर्षो को बड़े ही साहस के साथ पूर्ण किया। दर्जिन बीबी, नीरजा अपनी शर्तो पर जिंदगी जीते हुए अपनी कमजोरियों पर विजय पाते हैं।

कठगुलाब उपन्यास में स्मिता, मारियान, असीमा, दर्जिन बीबी, नीरजा, नर्मदा आदि प्रमुख स्त्री पात्र है। जिनकी अपनी अलग-अलग समस्याएं व संघर्ष है। ये सभी स्त्रियाँ कभी समाज द्वारा कभी पुरूष द्वारा तो कभी अपने ही समकक्ष की स्त्रियों द्वारा सताई गई है। इस प्रकार से स्त्री की अनेक व्यथा एवं संघर्ष है जिसे मृदुला गर्ग ने अपने कठगुलाब उपन्यास के माध्यम से हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है।

संदर्भ सूची :

1. जगदीश्वर चतुर्वेदी. स्त्री-अस्मिता साहित्य और विचारधारा. कोलकाता : आनन्द प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2004; 211.
2. टण्डन, डॉ. रामायणप्रसाद. समकालीन उपन्यासों में व्यक्त नारी-यातना. दिल्ली : मित्तल एंड संस, प्रथम संस्करण, 2014; 147.
3. गर्ग, मृदुला. कठगुलाब. नयी दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ, दसवां संस्करण, 2019; 52-53.
4. जैन, अरविंद. औरत अस्तित्व और अस्मिता महिला लेखन का समाजशास्त्रीय अध्ययन. दिल्ली : सारांश प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2000; 115.
5. वही, 120.

❒❒❒

सहायक प्राध्यापक, शा.दू.ब. महिला स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

शोधार्थी, शा.दू.ब. महिला स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.); पता-पुत्री स्व. सिनुख खलखो दयाशंकर निवास, पीएनबी सिद्धार्थ चौक के सामने, टिकरापारा रायपुर, छत्तीसगढ़-492001, मो. 9770851200

मध्य हिमालयी क्षेत्र जौनपुर के लोकगीतः एक परिचय

—बिनीता मल्ल

मध्य हिमालयी क्षेत्र जौनपुर के लोकसाहित्य एवं संस्कृति में लोकगीतों का समृद्ध एवं अक्षुण भण्डार रहा है। लोकगीतों के बिना इस समाज का जीवन अधूरा है।

शोध सार - मध्य हिमालय की रमणीय घाटी में बसा उत्तराखण्ड राज्य का जौनपुर क्षेत्र सांस्कृतिक एवं साहित्यिक दृष्टि से विशेष महत्व रखता है। यहां की धरती अपनी विविधतामयी संस्कृति के रंगों से पहचानी जाती है। उत्सवप्रिय समाज होने के कारण यहां के बाशिंदे लोकगीतों, नृत्यों, कथाओं-गाथाओं में झूमते नजर आते हैं। अनादिकाल से ही इस समाज की मौखिक परम्पराएं पीढ़ी दर पीढ़ी संप्रेषित हुई है। इन मौखिक परम्पराओं की श्रीवृद्धि में लोक-गीतों का अहम् योगदान रहा है। जौनपुर के लोकगीतों की झलक यहाँ के तीज-त्यौहारों, शादी-ब्याह, पर्व उत्सव, श्रम-कार्य आदि में देखने को मिलते हैं। इन लोकगीतों में प्रस्तुत समाज की प्रथाएं, विश्वास, आचार-विचार व लोक जीवन के अनेकानेक पक्ष समाहित है।

मूल शब्द — जौनपुर, साहित्य, संस्कृति, लोक, मानस, जीवन, समाज, लोकगीत, परम्परा, क्षेत्र।

लोकगीत लोकसाहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा है। यह अंग्रेजी भाषा के फोक-सांग शब्द का समानार्थी है। लोकगीत लोक जीवन की मौखिक परम्पराओं से सम्बन्धित होने के कारण इनका स्वरूप प्रायः अलिखित ही पाया गया है। लोक मानस की सहज व स्वाभाविक रागात्मक अनुभूतियों के दर्शन इन लोकगीतों में प्राप्त होते हैं। लोक द्वारा रचित होने के कारण इन गीतों का रचयिता कोई एक व्यक्ति न होकर पूरा समाज होता है इस कारण लोकगीतों में किंचित परिवर्तन की स्थिति सदैव बनी रहती है लोक साहित्यकारों व विद्वानों द्वारा लोकगीत की भिन्न-भिन्न परिभाषाएं दी गयी है। यथा-

रॉल्फ विलियम्स के अनुसार- ''लोकगीत न पुराना होता है न नया। वह तो जंगल के एक वृक्ष के समान है, जिसकी जड़े तो दूर जमीन में (भूतकाल) में धँसी हुई है, परन्तु जिसमें निरंतर नई-नई डालियाँ पल्लव और फल फूलते रहते हैं।''[1]

मराठी लेखक डॉ. सदाशिव फड़के के कथनानुसार- ''शास्त्रीय नियमों की विशेष परवाह न करके सामान्य लोक व्यवहार के उपयोग में लाने के लिए मानव अपने आनन्द - तरंग में जो छन्दोबद्ध वाणी सहज उद्भूत करता है, वही लोकगीत है।''[2]

डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती के मत में- ''लोकसंस्कृति, लोकविश्वास एवं लोकपरम्परा की रक्षा एवं निर्वाह करते हुए लोकजीवन अपनी रागात्मक प्रवृत्तियों की तत्स्फूर्त लयात्मक अभिव्यक्ति जिस माध्यम से करता है उसे लोकगीत कहते हैं''[3]

रामनरेश त्रिपाठी लोकगीत को ग्रामगीत कहते हुए इस प्रकार से लोकगीत की व्याख्या करते हैं- ''ग्रामगीत प्रकृति के उद्‌गार हैं। इनमें अलंकार नहीं, केवल रस है। छन्द नहीं, केवल लय है। लालित्य नहीं, केवल माधुर्य है। ग्रामीण मनुष्य के स्त्री-पुरुषों के मध्य में हृदय नामक आसन पर बैठकर प्रकृति गान करती है। प्रकृति के वे ही गान ग्रामगीत है।''[4]

उपरोक्त परिभाषाओं पर दृष्टिपात करते हुए कहा जा सकता है कि लोकगीत सामान्य मानव हृदय की वे रागात्मक अभिव्यक्ति है जो लोकजीवन से जुड़ी हुई सहजता, स्वाभाविकता को अपनाए हुए है। इनमें न अलंकार, न छंद और न ही अन्य किसी प्रकार की काव्यशास्त्रीय नियमों की बाध्यता रहती है। ये लोकगीत स्वत: ही लोकमानस के हृदय से स्फूर्त होते हैं। लोकजीवन से जुड़े होने के कारण लोकगीतों का विस्तार भी बहुत अधिक है, फिर भी लोकगीतों की विषय-वस्तु, रूप-रंग को ध्यान में रखते डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने लोकगीतों के छ: (संस्कार सम्बन्धी गीत, ऋतु सम्बन्धी गीत, व्रत सम्बन्धी गीत, देवी-देवताओं के गीत, जाति सम्बन्धी गीत, श्रम सम्बन्धी गीत) भेद बताए हैं।[5]

गढ़वाली लोक साहित्यकार डॉ. गोविन्द चातक ने गढ़वाली लोकगीतों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया है[6]- (1) धार्मिक लोकगीत (2) संस्कारों के गीत (3) वीर गाथा (4) प्रेमगीत (5) स्त्रियों के गीत (6) नीति, उपदेश तथा व्यावहारिक ज्ञान के गीत (7) विविध गीत।

मोहन लाल बाबुलकर ने गढ़वाली लोकगीतों को निम्न वर्गों में विभाजित किया है[7]-

1. संस्कारों के गीत
2. देवी-देवता स्तुति, पूजा, त्यौहार-गीत
3. खुदेड़ गीत
4. ऋतु सम्बन्धी (विरह गीत)
5. सामूहिक गेय गीत
6. तंत्र-मंत्र के गीत
7. लघु गीत
8. जातियों के गीत

मध्य हिमालयी क्षेत्र जौनपुर के लोकसाहित्य एवं संस्कृति में लोकगीतों का समृद्ध एवं अक्षुण भण्डार रहा है। लोकगीतों के बिना इस समाज का जीवन अधूरा है। प्रत्येक पर्व-उत्सव, थौल-मेले अथवा कार्य में इन लोकगीतों की विशेष भागीदारी रहती है जिन्हें यहां के लोक -समाज ने स्वयं ही अपने लिए रचा है। किसी के हर्ष, उल्लास, प्रशंसा में तो गीत रचे ही गए हैं

परंतु अप्रिय कार्य करने वालों पर भी यहाँ गीतों की रचना हो जाती है इसलिए मनुष्य गलत - कार्यों को करने से दूर ही रहता है कि कहीं हम पर गीत न बन जाए । गढ़वाली लोकगीतों की ही भांति जौनपुर क्षेत्र के गीतों में भी अत्यंत विस्तार एवं विविधता देखी गई है। उपरोक्त वर्गीकरणों तथा जौनपुर क्षेत्र में गाए जाने वाले लोकगीतों को ध्यान में रखते हुए उक्त क्षेत्र के लोकगीतों का वर्गीकरण इस प्रकार से किया जा सकता है।

1. संस्कार सम्बन्धी गीत
2. तीज-त्यौहार सम्बन्धी गीत
3. खुदेड़ गीत
4. ऋतु सम्बन्धी गीत
5. रिश्ते सम्बन्धी
6. नृत्यात्मक गीत
7. समसामयिक घटना के गीत
8. खेल गीत (बालगीत)
9. श्रम सम्बन्धी गीत
10. घसियारी गीत
11. देवी-देवताओं के गीत
12. अन्य गीत

1. संस्कार सम्बन्धी गीत → हिन्दू धर्म में सोलह संस्कारों का उल्लेख मिलता है। उन संस्कारों में से जौनपुर के समाज ने जन्मसंस्कार, नामकरण, अन्नप्राशन, मुंडन, विवाह व मुत्यु संस्कार को ही अपनाया है। जौनपुर में मनाए जाने वाले इन संस्कारों में कुछ ही संस्कारों के लोकगीत क्षेत्र में पाए गए हैं-

(क) जन्म के गीत - पुत्र जन्म पर गाए जाने वाले गीतों को हिन्दी भाषी क्षेत्रों में 'सोहर' कहा गया है। जौनपुर में जन्म संस्कार सम्बन्धी लोकगीत की कतिपय पंक्तियां इस प्रकार है-

'बाजिगी को बेटा शाही बजा बड़ाई
बामिणऽ को बेटा ले टीको लगा पिठाही
बाबा जी को दारऽ बेटा लो जनिमो
बेटा लो जनिमो, तबऽ बजी बड़ाई।'

(ख) नामकरण / दशोटण - नामकरण संस्कार जौनपुर की पालीगाड़ व सकलाना पट्टियों में अधिकांशतः समृद्ध परिवारों द्वारा मनाया जाता है। शेष जौनपुर में नामकरण के स्थान पर पुत्र जन्म के दस दिन पश्चात श्दशोटणश संस्कार को मनाने की परम्परा रही है प्रायरू इसी दिन नामकरण भी कर दिया जाता है मांगल गीत व मांगल ध्वनि के साथ कुल देवता, ईष्ट देवता से पुत्र के लिए यश व उन्नति की कामना की जाती है। जौनपुर में अन्नप्राशन संस्कार भी घर पर ही पुत्र जन्म के 7वें महिने में परिवार के सदस्यों द्वारा बच्चे को अन्न खिलाकर कर दी जाती है, परन्तु उत्सव के

रूप में इस संस्कार को नहीं मनाया जाता है और न ही कोई लोकगीत प्रचलन में रहा है। वर्तमान में क्षेत्र के कुछ लोग अन्नप्राशन संस्कार को अवश्य मना रहे हैं।

(ग) चूड़ाकर्म संस्कार - पुत्रजन्म के तीसरे अथवा पाँचवे वर्ष चूड़ाकर्म संस्कार पूरे विधि विधान के साथ किया जाता है। इस संस्कार को घर अथवा मंदिर में सम्पन्न करने की परम्परा रही है और मांगल गीत-मांगल ध्वनि के साथ इस संस्कार को किया जाता है।

(घ) विवाह के गीत- विवाह संस्कार के ही पश्चात मनुष्य गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है इसलिए इस संस्कार को सबसे प्रमुख माना गया है। विवाह संस्कार सम्बंधी क्रियाएं वर-वधू दोनों ही परिवारों में किए जाते हैं। विवाह के समय होने वाली आनुष्ठानिक क्रियाओं जैसे वेदी बनाना, मंगल स्नान, हल्दी हाथ, दाल भिगाते व पीसते हुए, कड़ाही में तेल डालते हुए आदि क्रियाओं पर मांगल गीत गाए जाते हैं। इन मांगल गीतों में सर्वप्रथम महिलायें कुल व ईष्ट देवी-देवता, पंच-पाण्डव की आराधना करती हैं तत्पश्चात वर-वधु के लिए जय- यश के साथ सुफल व सुकाम की कामना करती है।

'जसो ले दैंया ले पोरोत बामीणा, जसो ले दैंया सुघड़ी सुबेर
जसो ले दैंया ले पंच नॉऊ पाण्डव, जसो ले देंया ले कुल देवता
बाजगी को बेटा ले शाही बजा बड़ाई, बामीणऽ को बेटा ले टीको लगा पिठाही'

यह मांगल गीत नामकरण (दशोटण), चूड़ाकर्मसंस्कार में भी गाया जाता है। कन्या की विदाई पर पूरा वातावरण भावमय हो जाता है। उस समय कन्या के हृदय में उठने वाले संवेगों तथा मन:स्थिति का करुण चित्रण इस लोकगीत में किया गया है-

'आजू छूटी गौयो, साथेणी को साथै
आजू छूटी गौयो, आगुणी को खेलिणो
आजू छूटी गौयो, माया री दौपारी'

इन मांगल गीतों के अन्यत्र विवाह में बारात आगमन, बारातियों द्वारा भोजन करने व फेरों के समय वधु पक्ष की ओर से महिलाएं वर पक्ष को मधुर-मधुर गालियां देते हुए हंसी-मजाक में चुटकियां लेते हुए भी नजर आती हैं। इन गालियों को क्षेत्र में 'लिका' देना कहते हैं ।

2. तीज-त्यौहार सम्बन्धी गीत → उत्सव प्रिय समाज होने के कारण जौनपुर में प्रति माह कोई न कोई पर्व अवश्य मनाया जाता है। दुबड़ी, बग्वाली, मौण, पितरौंस, फुल्यारी संगराद, पंचमी, मरोज आदि यहां के प्रमुख पर्व हैं। इन तीज-त्योहारों से सम्बंधित लोकगीत भी क्षेत्र में प्रचलन में है। उदाहरण स्वरूप 'मौण' पर्व का एक लोकगीत दर्शनीय है

'मैत जांदू रण जांदू मौण मेरा दादू रे
पैरा दादू हातू की धागूली मेरा दादू रे
दे दे कोड़ी कापीड़ा मेरा दादू रे।'

प्रतिवर्ष अगलाड़ नदी पर मनाए जाने वाले इस पर्व (मौण) को राजमौण के नाम से जाना गया है क्योंकि यह पर्व राजशाही समय से राजा की आज्ञा के पश्चात ही मनाया गया था।

3. खुदेड़ गीत → जौनपुर में अपने प्रियजन, स्वजन की याद आने को 'खुद' लगना कहते हैं। खुद से ही खुदेड़ शब्द बना है। पहाड़ों में नारी अत्यंत कठोरपूर्ण जीवन व्यतीत करती है। ससुराल द्वारा उसके साथ किया जाने वाला दुर्व्यवहार, पति का नौकरी के कारण घर से दूर रहना, लाड़ प्यार में पली बेटी के लिए ससुराल की नई परिस्थितयों में रहना, आर्थिक अभावग्रस्त जीवन में मायके की स्मृति आदि में नारी हृदय के करुण पक्ष को उजागर किया गया है।

'घुंरऽ घुघुती चईतऽ की, खुद लगी मुखऽ मईतऽ की
हरि डाड़ी लाबु की, खुदऽ लगी मुखऽ बाबु की
हरि डाड़ी पंईयां की खुदऽ लगी मुखऽ भईया की।'

प्रकृति जैसे-जैसे अपना रंग-रूप बदलती है तो विरहा युवती को रह-रहकर अपने मायके-जनों की याद सताती है । चौत माह पर घुघुती (पक्षी) जब चहकती तो उसकी ध्वनि सुनकर नारी अपने मायके की तीव्र याद का वर्णन उक्त लोकगीत में करती है।

4. ऋतु सम्बन्धी गीत → लोक साहित्य में ऋतु सम्बन्धी गीतों की परम्परा अत्यंत प्राचीन रही है। ऋतुओं का पूर्ण प्रभाव मनुष्य पर पड़ता है। सुख-दु:ख की अनेक अनुभूतियां प्राकृतिक सौन्दर्य व प्रकृति के बदलते रंग-रूप को देखकर होती है और प्रकृति इन गीतों के माध्यम से गुंजायमान हुई है। जौनपुर में ऋतु सम्बन्धी गीतों के अन्तर्गत चौती, चौमासा, बारामासा व माघ के गीत पाए गए हैं-

(क) चौमासा - बरसात की ऋतु को जौनपुर में चौमासा कहते है। वर्षाकाल में चारों तरफ धुंध व घना कोहरा छाया रहता है जिससे विरहा हृदय की अपने मायके की स्मृति और व्याकुलता ओर अधिक तीव्र हो जाती है।

'डांडु कुरेड़ी आईगो ससुरे, यो मईनो आईगो सावनऽ
सासु-ससुरे मईतऽ न भेजऽ, यो दिन मेरो रुणऽ को
आयो चौमासो लागी काकुड़ी, भाणी जांऊ ले काप मां
मेंरे माईते मुकेनी जाणी, तुंखे लागुंदे पापऽ मां।'

(ख) माघ के गीत - हिन्दू संस्कृति के अनुसार माघ माह को पवित्र मानते हुए मांस-मदिरा का सेवन इस माह वर्जित माना गया है परंतु जौनपुर, जौनसार व रंवाई क्षेत्र में इस माह को बड़े ही उत्साह व भिन्न परम्परा के रूप में मनाया जाता है। माघ माह शुरू होने से एक-दो दिन पूर्व ही इन क्षेत्रों में बकरे की बली दी जाती है और फिर पूरे माघ माह में रात्रि को नाच गानों व ढोल-दमाऊं के साथ दावत के रूप में मांसाहार परोसते हैं। माघ माह में जो गीत गाए जाते हैं वे ऋतु विशेष के अनुसार तो नहीं होते परंतु त्यौहार व श्रृंगारिक भावना से ओत-प्रोत अवश्य होते हैं।

'मैं मेरी पीतल पराता, मैं मेरी शनाले सुणीदी
मैं मेरी पांड़ो की शारदा, मैं मेरी बिगाली पोतरी'

(ग) चौती गीत - चौत माह से सम्बन्धित गीतों को चौती गीत कहा गया है। चौत माह हिन्दू नववर्ष का प्रथम माह है। इस माह की प्रथम संक्रान्ति पर औजी (ढोलवादक) सभी घरों के आंगन में नववर्ष के स्वागत के लिए ढोल-दमाऊं बजाते हैं। ग्रामीण उन्हें भेंट स्वरूप अनाज व

घर पर बने पकवान देते हैं। चौत माह में बच्चे घरों की देहलियों, चूल्हों पर रोज धूप लगने से पहले पुष्प चढ़ाते हैं और गीत गाते हैं-

''फूल देई, छमा देई, दैणीदार, भर भण्डार
जो जस देई, फूल संगरांद, आओ बच्चों
फुल्यू क, झंगोली - मंगोली झुलय क''[8]

(घ) बारामासा - वे लोकगीत जिनमें बारह महीनों का उल्लेख किया गया है उन्हें बारामासा गीत कहा गया है। इन गीतों में ऋतुओं के क्रम के अनुसार कार्यो का विवरण तथा एक विरहिणी की पीड़ा का भी चित्रण मिलता है ।

5. रिश्ते सम्बन्धी गीत → एक परिवार अनेक रिश्तों से जुड़ा होता हैं, उन रिश्तों में कभी मधुरता तो कभी खट्टास देखने को मिलती है। लोकगीतों ने परिवार के रिश्तों व सम्बन्धों को भी अपना वर्ण्य विषय चुना है क्योंकि लोकगीत लोकजीवन से ही उपजते हैं। देवर-भाभी का यह रिश्ता भी कुछ ऐसा ही है। यदि भाभी कर्कशा है तो देवर उनके बोल को विष समान मानता है और भाई यदि बुरा भी है तो खून का रिश्ता होने पर वह उसे प्रिय ही है-

'जाती सुणेन्दी भाई की बांसुरी
ते ती बोलेन्दु कखी न जांऊ
जाती सुणेन्दी बौ को ककड़ाट
ते ती बोलेन्दु विष खै मरी जांऊ।'

उक्त लोकगीत को छोड़े गीतों के रूप में भी गाया जाता है।

6. नृत्यात्मक गीत → नृत्यात्मक गीत उन गीतों को कहा गया है जो नृत्य के साथ गाए जाते हैं। इन गीतों में छोपती, रासो, तान्दी, झेन्ता, धुमसू, मोइला, हारूल इत्यादि प्रमुख है।

(क) छोपती - छोपती नृत्यात्मक गीत पद्य शैली पर आधारित संवाद गीत है। इन गीतों में प्रेम के संयोग-वियोग दोनों ही पक्षों का वर्णन मिलता है साथ ही जीवन को क्षणभंगुर मानते हुए वर्तमान में जीने का संदेश छोपती गीतों में प्राप्त हुआ है-

'बानै की बौराणी मेरी भग्यानी बौ
हंसी रैणी खेली मेरी भग्यानी बौ
दुई दिन पराणी मेरी भग्यानी बौ
दुई दिनै री जवानी मेरी भग्यानी बौ
हंसी रैणी खेली मेरी भग्यानी बौ
ज्वानी रैगी थोड़ा मेरी भग्यानी बौ।'

(ख) रासो - यह गीत उपदेशात्मक शैली में तथा किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति-विशेष की घटना पर आधारित होते हैं। नृत्य के आधार पर दो प्रकार (सामान्य रासो, घुंड्या रासो) देखने को मिलते हैं। घुंड्या रासो गीत की कुछ पंक्तियां दृष्ट्य है

'तवा ये ते तोवे मेरे घुन्डिया रासो लागो
पोईले राखो फेरे, मेरे घुन्डिया रासो लागो

जा कपीडे धोए, मेरे घुन्डिया रासो लागो।'

(ग) तान्दी - तान्दी गीतों में रासो गीतों के ही समान किसी व्यक्ति विशेष घटना व प्रेम पर आधारित गीत प्राप्त होते हैं।

(घ) झेन्ता - शादी, उत्सव-पर्व पर यह नृत्यात्मक गीत आँगन में किया जाता है। झेन्ता नृत्य गीत से सम्बन्धित पंक्तियाँ इस प्रकार है

'ऊना ऐ तांऊ फांडी बलै भेडूड़ियां काई लागी पातड़ी
ऊना ऐ दिनै प्यारै बलै सूरिजऽ राति पियारी
जूनै ऐ दिनै प्यारै बलै सुरिजै राति पियारी'

(ड़) हारूल- हारुल जौनपुर के लोकगीतों की लोकप्रिय विधा है। इसके अन्तर्गत वीर एवं श्रृंगार रस से ओत-प्रोत किसी ऐतिहासिक व पौराणिक घटना का चित्रण मिलता है।

''डाण्डे को पांजो मैं साड़ो - समीणै डाण्डे की भयमाली टोली
गाबल्यूं के गछोल्ट्या मैं सेयले रन्दो
गाबीले भींगन्दे बोली भोलै रे प्यारा, ओरे भेड़वाड़ गजुमोला''[७]

(च) मोईला- धुमसु - मोईला और धुमसु में गायन शैली व विषय - वस्तु एक जैसी ही रहती है केवल नृत्य में थोड़ा भिन्नता पाई जाती है। विषय की ष्टि से इनमें सामान्य लोकगीत ही गाए जाते हैं।

7. समसामयिक घटना के गीत → क्षेत्र में घटित अतीत अथवा वर्तमान से सम्बन्धित घटनाओं का विवरण गीतों में किया गया है इन गीतों में घटना के विवरण के साथ एक नव चेतना, जागृति के स्वर उद्वेलित होते हैं। उत्तराखण्ड आन्दोलन में क्षेत्रवासियों का अथाह योगदान रहा हैं जेल की अनेक यात्रा व यंत्राएं उन्हें झेलनी पड़ी। 2 सितम्बर 1994 को मसूरी गोलीकांड से सम्बन्धित एक लोकगीत क्षेत्र उभर कर आया है-

'गैणी रीटो बल तारो ले अयन्सू क ले सालेन्दो
लागो उत्तराखण्ड को नारो ले गुड़ तोड़ी भेली ले
ई तारीख १ सितम्बर ले मसूरी की बोले रेली ले।'

8. खेल गीत (बाल गीत) → बच्चों को सुलाने, दुलारने व स्वयं बच्चों द्वारा खेल में गाए जाने वाले गीत बालगीत अथवा खेलगीत की श्रेणी में आते हैं। डॉ. गोविन्द चातक ने बालगीतों की दो कोटियां बताई है एक 'लोरी' के रूप में दूसरा 'स्वयं बच्चों द्वारा अपने मनोरंजन के लिए गाए जाने वाले गीत। जौनपुर में ये दोनों ही प्रकार के बालगीत उपलब्ध है।

लोरी के रूप में- 'घुघुती बासुती क्या खांदी - दूध-भाति
जुठो छ आफु खा सुचो छः मैं भी दे।'

स्वयं बच्चों द्वारा अपने मनोरंजन के लिए गाया जाने वाला खेलगीत का उदहारण इस प्रकार है-

'खेलदू-खेलदू काखड़ी मिली, काखड़ी मैन रायलो बनायो
रायलो मैन लुहारै देनु, लुहार न मु दाथरी देनी

दाथरी मैन घास काटो, घास मैन बुछाक देनु
बुछान मुं दूध देनु, ... कुत्तान मेरी टाँग देनी तोड़ी।'

9. **श्रम सम्बन्धी गीत** → लोक गीतों की इस श्रेणी के अन्तर्गत धान की रोपाई व मंडुआ गोड़ाई के गीत लिए गए हैं। यथा-

रोपणी के गीत -
'सेरड क रोपदारी बासमति घणी रोपिंया
क्यारिकऽ मेरे स्वामिन देनो बांसुरी को रैबारऽ
बासमति घणी रोपिया क्यारिकऽ
बीचऽ क रोपदारी छांटो रोपिया सेरो
बासमती घणी आंदे मुंगऽ लो बोलो स्वामिन रैबार'

गोडणी के गीत -
'सेरी भया उपाणो तो कुरो, सेरी भया ना बजा बाँसुरी
घरऽ बलऽ ब्वारी मानऽ बुरो, घरऽ तेरी ब्वारी मानऽ बुरो'

10. **घसियारी गीत** → घास काटते समय महिलाओं द्वारा गाए जाने वाले गीतों को घसियारी गीत कहा गया है। इनके अन्तर्गत जौनपुर में अनेक लोकगीतों के प्रकार देखने को मिलते हैं, जिन्हें घास काटने से लेकर शादी-ब्याह या खाली समय व्यतीत करने के लिए मनोरंजन स्वरूप भी गाया जाता है। इन गीतों में 'दुआ', 'जंगु', 'बाजु', 'छोड़े' इत्यादि प्रमुख हैं। जब संचार के साधन उपलब्ध नहीं थे तो यहां के जनमानस ने संदेश भेजने के लिए इन लोकगीतों की रचना की है -

(क) दुआ - इन गीतों में विशेषकर महिलाओं की भावनात्मक चिंता, प्रेम को अभिव्यक्ति मिली है। इसमें संवादात्मक रूप देखने को मिलता है-

'तारू भरी गईण, कई जागुमाँ होली मेरी पीठी बेदऽ भईणऽ
डंगारू को सुरू, मंई आईगऽ तोई मिलिणऽ, तू चलीगी दुरू'

(ख) जंगु - जंगु गीतों में कोई वाद्य यंत्र नहीं बजाया जाता है और विषय वस्तु के आधार पर इनमें प्रेम-प्रसंग तथा आध्यात्मिक उपदेश के संकेत मिलते हैं। जंगु गीतों में भी संवाद शैली पाई जाती है। इनमें एक की बात समाप्त होने पर अन्य व्यक्ति स्वर मिलाने के लिए 'जंगु ऐ' कहते हुए 'हीऽऽऽऽ' की' ध्वनि निकालते हैं।

'पड़ो छाइलो, पड़ो डुंगुरीया माते
बाटो मिलो चलुवा, ज्यों नटु ते तेरो साथे
काली कुकुरी सुखरू छीड़ले बाती
तेरी मेरी जवानी चांहेती पुसे माघे री राती। जंगु ऐ हीऽऽऽऽ'

(ग) बाजु- विषय वस्तु एवं प्रकृति की दृष्टि से बाजु भी दुआ के ही समान है लेकिन लय का अंतर दोनों में देखने को मिलता है। बाजु की लय बहुत ही धीमी होती है और स्त्री-पुरुषों के प्रणय संवाद ही इनमें मुख्य होते हैं।

(घ) छोड़े – लोकजीवन से जुड़े सभी पक्ष सूक्तियों व उपदेश के रूप में छोड़े गीतों में गाए जाते हैं। इनमें प्रेम, सत्य-असत्य, जन्म-मरण, क्षणभंगुरता, यथार्थ जीवन आदि दार्शनिक पक्षों का विवरण मिलता है। एक व्यक्ति की बात समाप्त होने पर अन्य अन्तिम वर्ण को लम्बा उच्चारित करते हुए 'हेणऽऽऽ' कहते हैं।

'हंसी त बोलणू बांटी खाणू, धरती पिठाडू. नी लीजाणी
जिउन्दे मनख्यूंन मरी जाणू , बुरे बोली करिन कोईन क्या पाणू'

अर्थात- हंस-बोलकर, मिल- बांटकर खाओ। धरती से किसी ने कुछ भी साथ नहीं ले जाना है। जिन्दा इंसान ने अंत में मरना ही है तो बुरा बोलकर किसी ने क्या पाया।

11. देवी-देवताओं के गीत → उत्सव प्रिय समाज होने के कारण यहाँ अनेक पर्व - उत्सव, थौल-मेले मनाए जाते हैं, जो कि किसी न किसी देवी- देवताओं की स्तुति आदि से सम्बन्धित होते हैं। इन लोक देवी-देवताओं के प्रति क्षेत्रवासियों की गहरी आस्था रही है फलत: प्रस्तुत समाज की स्थानीय जनता व लोक गायकों ने अपने देवी-देवता विषयक गीतों की रचना की है साथ ही कुछ विशेष पूजा के लिए भिन्न गीत बने हैं जिन्हें श्जागरश कहते हैं। जागर गीत देवता को जागृत करने के लिए आवाहान गीत के रूप में गाए जाते हैं। इनमें नरसिंग, नागराजा, सुरकंडा के जागर गीत क्षेत्र में प्रमुख है। उदाहरण स्वरूप नरसिंह देवता के जागर की कुछ पंक्तियाँ दी गई हैं-

'जाग- जाग गुरू गोरखनाथ का चेला
जाग जाग नरसिंह वीर बाबा जाग
रूपा को तेरा सोटा जाग
खरुवा की तेरी झोली जाग
आदेस, आदेस लांदू तेरी खरुवा की झोली'

'जागर गीत के ईतर कुछ देवी-देवता विषयक गीत वे हैं जिन्हें पर्व-उत्सव, तीज-त्यौहारों पर गाया जाता है। जैसे-

''जय देवा तेरी जय-जय कारा ऊंचे त्याड़े भदराजे
नौणे धूपे देवा सिरनी सजे तेरे ढ़ोल रा साजे
पोईलों थाने देवा दूधली पंड़ दूजो थान तियाड़े
तिजो- चौथों तेरों कोटी, जयद्वार, पांचे थाने मराड़''[10]

भदराज देवता से सम्बन्धित उक्त गीत में उनके पाँच थान (स्थान- मंदिर) व उनका पूर्ण परिचय मिलता हैं।

12. अन्य गीत → जौनपुर में गाए जाने वाले लोकगीतों का बहुत अधिक विस्तार पाया गया है इसलिए अनेक ऐसे गीत हैं जो उपरोक्त दिए गए लोकगीतों के प्रकारों की श्रेणी में नहीं आते हैं इसलिए उन्हें अन्य गीतों के अन्तर्गत रखा गया है।

अत: उपरोक्त लोकगीतों की विविधता के आधार पर यह कहना युक्तिसंगत होगा कि जौनपुर क्षेत्र में अनेक लोकगीतों का प्रचलन रहा है, जिन्हें विविध सुअवसरों पर गाया जाता है। ये गीत

यहां के सरल व संवेदनशील मानव हृदय के स्वाभाविक उद्‌गार हैं जो कि यहां के समाज की लोकसंस्कृति व साहित्य की धरोहर एवं प्राण हैं। लोक गीतों की विविधता तथा प्रचुरता के अनुसार यह क्षेत्र समृद्ध रहा है, उन सबका विस्तृत विवरण मेरे इस शोध पत्र में देना सम्भव नहीं है किंतु इन गीतों की विविधता एवं यहां की संस्कृति का परिचय उक्त शोध पत्र में बखूबी देखने को मिलता है।

संदर्भ सूची :

1. भारतीय लोक-साहित्य, श्याम परमार, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, 1954 ई., पृ.- 55
2. लोक संस्कृति विशेषांक, सम्मेलन पत्रिका, मराठी लोकगीत, पृ.- 250
3. लोकसाहित्य के प्रतिमान, डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती, भारत प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ़, 1971 ई., पृ.- 47
4. कविता -कौमुदी, भाग-5 (प्रस्तावना), रामनरेश त्रिपाठी, पृ.-1-2
5. लोक साहित्य की भूमिका, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड, इलाहाबाद, 1957 ई., पृ. - 58
6. गढ़वाली लोकगीत विविधा, डॉ. गोविन्द चातक, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2001 ई., पृ. - 22
7. वही, पृ. -36
8. जौनपुर के तीज-त्यौहार, सुरेन्द्र पुण्डीर, समय-साक्ष्य, देहरादून, 2015 ई., पृ. -33
9. रौंत्याओं जौनपुर, संपादन- पवन कुमार गुप्ता, प्रकाशक- सिद्ध (सोसायटी फॉर इण्टीग्रेटेड डेवलपमेन्ट ऑफ हिमालय), लण्ढ़ोर कैन्ट, मसूरी, 2003 ई., पृ.- 26
10. गायक-राजेश रावत, ग्राम- टटोर नैनबाग, जौनपुर, टिहरी गढ़वाल, लिंक - https://youtu-be/mlVDqqqqqizDJrQ

❑❑❑

हे.न.ब.गढ़वाल (केन्द्रीय) विश्वविद्यालय श्रीनगर, उत्तराखण्ड, ई. मेल-Mallbinita04@gmail.com, मो. 8449872931; पता-कैनतुरा निवास, साउथ रोड़, लैंडर बाजार, अनुपमा होटल के नजदीक, मंसुरी, उत्तराखंड-248179

मुर्तिकला में चामुण्डा के विभिन्न स्वरूपों का अंकन-उत्तर भारत के विशेष संदर्भ में

—प्रभात कुमार
—कल्पना देवी

चामुण्डा के प्रादुर्भाव से सम्बन्धित कथानक देवीमहात्म्य, वायुपुराण, स्कन्दपुराण, वामनपुराण, मत्स्य पुराण, शिव पुराण, देवीभागवत तथा वराह पुराण आदि में मिलते है। वामनपुराण[16] के अनुसार, शिव ने पार्वती को काली कह पुकारा इस बात से रुष्ट होकर देवी हिमालय में तपस्या करके ब्रह्मा जी से सुशील स्वरुप प्रदान करने का आशीष प्राप्त किया।

मानव मस्तिष्क की सर्वोत्तम कल्पना, कला है। कला के माध्यम से मानव अपने विचारों को मूर्तिमान रुप प्रदान करता आ रहा है। मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ कलात्मक विकास में भी अभिवृद्धि हुई। कलात्मक विकास में संस्कृति, धार्मिक विचारों, आदर्शो तथा अनुभवों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। धर्म की सन्देशवाहिका के रुप में मूर्तिकला के क्षेत्र ने सहायिका की भूमिका प्रदान की हैं। इसके माध्यम से भारतीय जीवन तथा धार्मिक पद्धति को प्रदर्शित करती कलात्मक आकृतियों का निर्माण किया गया जिसे प्रतिमाओं या मूर्तियों की उपमा प्रदान की गई। विविध पूजनीय देवों एवं देवियों को शक्ति का परिचायक मानकर उनके स्वरुप के विभिन्न आयामों को प्रस्तुत किया गया। इसी सन्दर्भ में देवियों को समर्पित प्रस्तरप्रतिमाओं को निर्मित किया गया। भारतीय धर्म एवं संस्कृति में शक्ति की पूजन परम्परा प्राचीन काल से प्रचलन में रही है, जो वर्तमान समय तक भारतीय समाज में विद्यमान है। भारत में इसके अस्तित्व की झलक सैन्धव सभ्यता से देखी जा सकती है। शक्ति की पूजा त्रि-समुदायों शैव, वैष्णव तथा शाक्त में विशेष रुप से प्रचलन में रही है। इसके अतिरिक्त तंत्र सम्प्रदाय में भी देवी उपासना का विशेष स्थान रहा है। देवियों की पूजन परम्परा में प्रारम्भिक काल से ही रौद्र तथा सौम्य रुपों का प्रचलन प्रमुखत: रहा है। देवी के रौद्र रुप में चामुण्डा का प्रमुख महत्व है, इसका उद्‌भव चण्ड तथा मुण्ड नामक दैत्यों के संहार हेतु हुआ। इसकी उत्पत्ति से सम्बन्धित आख्यान पौराणिक ग्रंथों में उपलबध है, जिससे इसकी प्राचीन ऐतिहासिकता की सार्थकता प्राप्त होती है। भारतीय कला के विभिन्न आयामों विशेषत: मूर्तिकला के माध्यम से इसके विभिन्न स्वरुपों जिनमें कृशोदरी, मातृका, समान्य स्त्री तथा नृत्यरत रुप को प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से देवी के चामुण्डा रुप को माध्यम बनाकर उत्तर भारत से प्राप्त होने

वाली प्रतिमाओं के विभिन्न स्वरुपों का अध्ययन करना है। इसके साथ ही इन प्रतिमाओं में प्रदर्शित पौराणिक तथा प्रतिमाशास्त्रीय लक्षणों पर भी प्रकाश डालना प्रमुख उद्देश्य रहेगा।

बीज शब्द:- रौद्र, कराल वदना, रक्तदंती, ज्वालानेत्र, भैरवी, कपालमालिनी, नाटेश्वरी

प्रस्तावना

चामुण्डा देवी के रौद्र रुप को प्रदर्शित करती हैं। मातृकाओं में इसका प्रमुख स्थान है, जिनकी संख्या सप्त, अष्ठ या षोडश है। इसके अतिरिक्त चौसठ योगिनियों में भी इसका प्रमुख स्थान है। चामुण्डा का सम्बन्ध शिव से है। शिव के समान संहारक रुप से सम्बन्धित होने के कारण इन्हें योगेश्वरी की संज्ञा दी गई है।[1] यह रुप देवी ने सृष्टि की रक्षा के लिए दैत्यों के विनाश हेतु धारण किया। चामुण्डा का वर्णन पौराणिक ग्रन्थों में मिलता है जिनमें मार्कण्डेय पुराण, मत्स्य पुराण, अग्नि, लिंग, वामन, ब्रह्मवैवर्त पुराण, कालिका पुराण आदि प्रमुख है। इसके अतिरिक्त शिल्पशास्त्रीय ग्रन्थों में भी इसके स्वरुप का वर्णन किया गया है, जिसमें प्रमुख ग्रन्थ विष्णुधर्मोत्तर, बृहतसंहिता, अपराजितपृच्छा, रुपमण्डन, शिल्प-रत्न, देवतामूर्तिप्रकरण, मानसार तथा श्रीतत्त्वनिधि प्रमुख है। इसे रुद्रचर्चिका[2], रुद्रचामुण्डा[3], महालक्ष्मी[4], सिद्वचामुण्डा[5], सिद्वयोगेश्वरी[6], रुपविद्या[7], क्षमा[8] तथा दन्तुरा[9] काली[10], कृष्णा[11] चण्डिका[12], रक्तचामुण्डा[13], रक्तदंती[14], योगेश्वरी[15] आदि नामों से वर्णित किया गया है।

चामुण्डा उत्पत्ति से सम्बन्धित पौराणिक कथानक-

चामुण्डा के प्रादुर्भाव से सम्बन्धित कथानक देवीमहात्म्य, वायुपुराण, स्कन्दपुराण, वामनपुराण, मत्स्य पुराण, शिव पुराण, देवीभागवत तथा वराह पुराण आदि में मिलते है। वामनपुराण[16] के अनुसार, शिव ने पार्वती को काली कह पुकारा इस बात से रुष्ट होकर देवी हिमालय में तपस्या करके ब्रह्मा जी से सुशील स्वरुप प्रदान करने का आशीष प्राप्त किया। स्वर्ण स्वरुप प्राप्त कर अपने कृष्णवर्ण का त्याग कर पार्वती वापिस अपने निवास चली गई। यह कृष्णवर्णा कौशिकी व कात्यायनी के नाम से जगत प्रसिद्ध हुई। इन्द्र ने कौशिकी को विन्ध्य पर्वत पर वास करके देवों की रक्षा करने की प्रार्थना की जिससे वह विन्ध्यवासिनी कहलाई। अत: यही देवी चण्ड तथा मुण्ड नामक दैत्यों के संहार के लिए चामुण्डा कहलाई। देवीभागवतपुराण[17] में देवी कौशिकी की उत्पत्ति शुम्भ तथा निशुम्भ के बढ़ते अत्याचारों के अंत के लिए हुई। यही देवी उग्र रुप धारण कर चण्ड-मुण्ड नामक दैत्यों का संहार करके चामुण्डा के नाम से प्रसिद्व हुई, परन्तु इसकी उत्पत्ति का अत्यंत सुन्दर वर्णन मार्कण्डेय पुराण में वर्णित है। मार्कण्डेय पुराण[18] के देवीमाहात्म्य खण्ड में वर्णित है कि देवों तथा असुरों के संग्राम में पीड़ित देवगण हिमालय पर्वत पर देवी से सहायता लेने के लिए गए। उन्होंने देवी की स्तुति की। उनकी प्रार्थना को सुनकर देवी ने उनसे आने का कारण पूछा। इतना पूछते ही देवी के शरीर से एक अन्य देवी उत्पन्न हुई जिसे शिवा, अम्बिका या कोश से उत्पन्न होने के कारण कौशिकी की उपमा दी गई। कौशिकी की देह से पृथक् हो जाने पर पार्वती ने श्यामवर्ण धारण कर लिया; यही अम्बिका, कालिका के नाम से हिमालय में वास करने लगी। देवी के सौन्दर्य की अतुलनीय व्याख्या असुर महाराज ने शुम्भ तथा निशुम्भ के समक्ष की। असुर राजाओं ने अपने दूत चण्ड तथा मुण्ड को देवी को

अपने समक्ष प्रस्तुत करने के लिए भेजा। दूतों ने देवी को अपने असुर राजा के विषय में बताया। देवी ने उन्हें उत्तर देते कहा कि मेरा पाणिग्रह वह व्यक्ति ही कर सकेगा, जो मुझे रणक्षेत्र में पराजित करेगा। देवी की यह बात जब दूतों ने असुर महाराज के समक्ष प्रस्तुत की तो क्रोधवश असुर राज ने युद्ध हेतु चण्ड तथा मुण्ड नामक दूतों को देवी के समक्ष भेजा। दूतों को देख देवी ने क्रोधवश उग्रस्वरुप धारण कर लिया। क्रोधित देवी के शरीर से भयावाही कालवदना, नरमुण्डमाला पहने देवी कालिका उत्पन्न हुई। इसके हाथ में खट्वांग तथा कंकालस्वरुपा, व्याघ्रचर्मधारिणी, मुख खुला जिह्वा लपलपाती हुई नेत्र क्रोध से लाल तमतमाती हुई थी। वह अपने वाहन सिंह पर विराज होकर असुर चण्ड की तरफ बढ़ी तथा केशों से पकड़कर उसके शीश को धड़ से अपनी तलवार से काट दिया। चण्ड का वध होते देख मुण्ड देवी की तरफ क्रोधवश बढ़ा। देवी ने अपनी तलवार के एक वार से उसे मृत्यु की गोद में सुला दिया। दैत्य सेना का संहार कर तथा चण्ड-मुण्ड के सिर काटकर वह कौशिकी के पास गई। कालिका के इस कृत्य से प्रसन्न होकर देवी ने इसे 'चामुण्डा' नाम से जगत प्रसिद्व होने का आशीर्वाद दिया। इस प्रकार देवी महात्मय में देवी का संहारक रुप प्रस्तुत होता है। देवी के स्वरुप का वर्णन मार्कण्डेय पुराण में इस प्रकार से किया गया है-

काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी।। 6
विचित्रखट्वांड्गधारा नरमालरविभूषणा ।
द्वीपिचर्मपरीधना शुष्कमांसातिभैरवा।। 7
अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा ।
विमग्रा रक्तनयना नादापूरितदिड्गमुखा ।।8

मार्कण्डेयमहापुराण/6-8/71

चामुण्डा के प्रतिमा शास्त्रीय लक्षण-

पौराणिक एवं प्रतिमा शास्त्रीय ग्रन्थों यथा मत्स्य पुराण, मार्कण्डेयपुराण, अग्निपुराण, रुपमण्डन, अपराजितपृच्छा, देवतामूर्तिप्रकरण आदि में इसके प्रतिमा स्वरुप के लक्षणों का वर्णन किया गया है; विष्णुधर्मोत्तर पुराण[19] में इसे भीमा, लम्बस्तना; रुपमण्डन[20] में क्रूररुपा, भयावहा, कृष्णा, निर्मांसा, कृशोदरी; मार्कण्डेयपुराण[21] में शुष्कमांसा तथा स्कंदपुराण[22] में वृश्चिकोदरी कहा गया है। यह उर्ध्वकेशी[23], पिंड्गकेशी[24], ज्वालाकेश[25] का वर्णन किया गया है। यह त्रिनेत्री[26], भीमनेत्री[27], रक्तनयना[28] के रुप में वर्णित है। चामुण्डा के उत्तरीय तथा अधोवस्त्र में गजचर्म[29] तथा व्याघ्रचर्म[30] प्रमुख है। इसके आयुधों का वर्णन अग्निपुराण[31] में डमरु, शक्ति, शूल, नागपाश, खेटक, कुठार, घण्टा तथा गदा प्रमुख है। रुपमण्डन[32] में खेटक, खड्ग, धनुष, त्रिशूल, बाण, पाश, अंकुश, घण्टा, शंख, दण्ड, धनुष, कुठार तथा हल/लांगल का वर्णन किया गया है। अपराजितपृच्छा[33], में दर्पण, कुठार तथा मुदगर का वर्णन किया गया है। इसके वाहनों में प्रमुखतः शव, प्रेत, काक, गदर्भ, उलूक आदि प्रमुख है। मत्स्य पुराण[34] में गदर्भ, पूर्वाकारणागम[35] में उलूक तथा काक का उल्लेख मिलता है।

उत्तर भारतीय कला में चामुण्डा के स्वरुप–

चामुण्डा प्रतिमाओं की प्राप्ति मूर्त्तिकला के क्षेत्र में गुप्तकाल से होती है। प्रारम्भिक प्रतिमाएं लगभग चौथी शताब्दी से मिलनी प्रारम्भ होती है। गुप्तोत्तर काल में इसका स्वरुप मातृका के रुप में विकसित हुआ। समयानुसार इसके स्वरुप में परिवर्तन होता गया। इसके स्वरुप की प्रमुख विशेषताएं अग्रलिखित है, जो उत्तर भारतीय कला शैली में मिलती है।

कृशोदरी स्वरुप - गुजरात (बडबल)

चामुण्डा के कृशोदरी स्वरुप की प्रतिमाएं स्थानक आसन तथा नृत्य शैली में निर्मित होती हैं। इन प्रस्तर प्रतिमाओं में गुजरात के बडबल नामक स्थान से प्राप्त है। यह चतुर्भुजी स्थानक द्धिभंग मुद्रा में उकेरित प्रतिमा वर्तमान समय में बडौदा विश्वविद्यालय के संग्रहालाय (चित्र संख्या 1) में है।[36] 9वीं शताब्दी की इस प्रतिमा के अग्र दक्षिणकर में अध:कर्तरी एवं उर्ध्वकर में कपाल है। वामोर्ध्व भुजा मुड़ी हुई है, जिसमें खटवांग सदृश्य आयुध को दबाया गया है। इसी भुजा के हस्त की कनिष्ठ को दांतों में दबाया है। भुजाओं में कंगन का भी अंकन किया गया है। शेष अग्र वाम हस्त खण्डित अवस्था में है। देवी का स्वरुप उग्र, गर्त्ताक्षी, त्रिनेत्रा, लम्बकर्णा तथा अस्थिाभूषणों से सुशोभित है। देवी के केश नरमुण्ड जटामुकुट से बंधे है। गले में सर्पमाला पहने हुए शुष्कपयोधर तथा संकुचित उदर से युक्त शारीरिक संरचना है। इसके दाहिनें कंधे से सरकती हुई खण्डित मुण्डमाला का अंकन सदृश्य है। इसके खण्डित अवस्था में मुण्डमाला पहने है। इसके कमर से अधोवस्त्र को सर्प की सहायता से बांधा गया है। प्रतिमा का निम्न भाग खण्डित अवस्था में है। इस प्रकार इसके वाहन के बारे में निश्चित रुप से कहा नहीं जा सकता। इस प्रकार इसके वाहन के बारे में निश्चित कहा नहीं जा सकता। इसका स्वरुप अग्निपुराण[37] में वर्णित चामुण्डा के विषयक से साम्य रखता है। यद्यपि प्रस्तुत प्रतिमा खण्डित अवस्था में है। परंतु इसके लक्षण जैसे त्रिनेत्री, चतुर्भुजा, ज्वालानेत्र तथा व्याघ्रचर्म परिधान का अंकन इसका साम्यकरण अग्निपुराण में वर्णित चामुण्डा लक्षणों से करता है।

मातृका स्वरुप - (पटना)

चामुण्डा के विभिन्न स्वरुपों में मातृका का स्वरुप अत्यंत लोकप्रिय है। अधिकांश मातृका पट्ट में इसका अंकन; ब्रह्माणी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही तथा इन्द्राणी के साथ किया जाता है। मातृका स्वरुप में इनकी गोद में शिशु का अंकन दृश्यमान होता है। स्वतंत्र रुप से चामुण्डा की प्रतिमाएं दुलर्भ प्राप्त होती है। शिशु के साथ मातृका स्वरुप का अंकन सरायकेला से प्राप्त चामुण्डा प्रतिमा में दृश्यी है। वर्तमान समय में यह पटना संग्रहालय[38] में संरक्षित है। (चित्र सं0 2) चतुर्भुजी इस चामुण्डा की गोद में बालक का अंकन है। इसके अध: दक्षिण कर में कर्तरी, उर्ध्व दक्षिाहस्त में नर की आकृति तथा वामोर्ध्व हस्त में नरमुण्ड तथा अग्र वामहस्त में बालक को थामे हुए हाथ में सर्प का अंकन है। ज्ञातवत है कि कपाल का अंकन नहीं किया गया। इसका मुख खुला, ज्वालानेत्र, भयावाही तथा लम्बकर्णो से युक्त है। इसके उर्ध्वकेश ज्वाला की भांति ऊपर की ओर उठे हुए है। इसके स्तन लटकते हुए तथा पेट अंदर की ओर धंसा हुआ है। 12 वीं शताब्दी की यह प्रतिमा मांसल संरचना से रहित है। पूर्वाकारागम[39] में उलूक

वाहन का अंकन किया गया है। पौराणिक ग्रंथ मत्स्य पुराण में भी इस सम्बन्धित अंकन मिलता है।

नृत्य स्वरुप - (आहाड़ संग्रहालय)

चामुण्डा के नृत्य स्वरुप की प्रतिमाएं अतिअल्प प्राप्त होती है, इस संदर्भ में आहाड़ संग्रहालय[40] की प्रतिमा प्रमुख है। यह नृत्य मुद्रा में है। (चित्र सं0 3) इसके दक्षिणाग्र हस्त में कर्तरीधारी, दक्षिणोर्ध्व हस्त में त्रिशूलधारिणी, वामोर्ध्व हस्त मुख के निकट है, जिसकी मुड़ी हुई भुजा में खटवांग को दबाए जाने का अंकन किया गया है। इसके वामाध: हस्त में कपाल को धारण करने का अंकन किया गया है। यह व्याघ्रचर्म अधो: परिधान से सुशोभित है। यह कंकाल स्वरुपिणी, मुण्डमालाधारिणी, जटामुकुट तथा सर्पाभूषणों से युक्त है। है। इसके पैरों के पीछे प्रेत का अंकन है। यह स्वरुप अपराजितपृच्छा[41] में वर्णित चतुर्भुजी चामुण्डा से साम्य रखता है।

सौम्य स्वरुप - (राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली)

सौम्य रुपिणी चामुण्डा की प्रतिमाओं की प्राप्ति दुलर्भ है, इस सन्दर्भ में राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली[42] में संरक्षित चामुण्डा प्रतिमा प्रमुख है। (चित्र सं0 4) यह प्रतिमा मध्यप्रदेश की है। यह 12वीं शताब्दी की परमारकालीन प्रतिमा है। यह स्थानक मुद्रा में अवस्थित है। दशभुजाओं से युक्त यह द्विभंग मुद्रा में प्रेत पर खड़ी है। इसके अग्र दक्षिण एवं वाम करों में कपाल को थामे हुए वाम कर की उँगली कपाल में डुबोए प्रदर्शित है। इसके दक्षिण तीन हस्तों में त्रिशूल डमरु तथा खड्ग है। इसी प्रकार वाम हस्तों में खेटक, कमण्डल और खटवांग है। शेष दायां तथा बायां हाथ खण्डित है। यह प्रभामण्डल से युक्त करण्ड मुकुट धारिणी, कानों में कुण्डल तथा गले में हारों से अलंकृत है। इसके पैरों में भी आभूषण का अंकन है। निम्न दाएं पार्श्व में खड़ा हुआ पुरुष त्रिशूलधारी है तथा बाएं पार्श्व में खड़ा अनुचर प्रेत के मुख में छेनी डालकर हथौड़े से प्रहार कर रहा है। चण्डी देवी के इस स्वरुप का वर्णन प्रतिमा शास्त्रीय ग्रन्थों[43] में भी किया गया है।

उलूकवाहिनी स्वरुप - (खजुराहो)

चामुण्डा के उलूक वाहिनी स्वरुप की प्रतिमाएं प्राय: उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश से प्राप्त होती है। यह लगभग 8 वीं शताब्दी से मिलनी प्रारम्भ होती है। यह चतुर्भुजी, अष्टभुजी, द्वाद्वशभुजी तथा षोडशभुजी रुप में प्राप्त होती है। इसी सन्दर्भ में खजुराहों की द्वाद्वशभुजी उलूकवाहिनी चामुण्डा दर्शनीय है। वर्तमान समय में स्थानीय संग्रहालय[44] में संरक्षित है। (चित्र सं0 5) इसकी अधिकांश भुजाएं खण्डित अवस्था में है। अवशिष्ट भुजाओं में एक दो हाथ खड्गधारी तथा बायां खेटकधारी है। इसके दक्षिण तथा वाम पार्श्व में स्त्री अनुचरों का अंकन अत्यंत सुंदर कलात्मक ढंग से किया गया है। इसके अतिरिक्त पशुओं का भी अंकन किया गया है। उलकू तथा चामुण्डा का अंकन मांसल संरचना से युक्त है। इसका स्वरुप कालिका पुराण[45] में वर्णित षोडशभुजी चामुण्डा प्रतिमा से साम्य रखता है, जिसका वर्णन कालिका पुराण में पर्णित योगिनी स्वरुप से सुमेलित है।

तांत्रिक प्रभाव से युक्त-

चामुण्डा की प्रतिमाओं में कपाल में मत्स्य का अंकन सदृश्य होता है। मत्स्य का सम्बन्ध तांत्रिक सम्प्रदाय से जोड़कर देखा जाता है। मत्स्य की गणना पञ्चमकारों यथा: मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा तथा मैथुन में होती है।[46] इस प्रकार की प्रतिमाएं राजस्थान में मिलती है। इनमें राजपूताना संग्रहालय की प्रतिमा जो चन्द्रावाती से प्राप्त की गई है, जो इस रुप को प्रस्तुत करती है।[47] इसके दाएं उर्ध्व हस्त में त्रिशूल, वामोर्ध्व हस्त मुख के निकट है, जिसकी भुजा में खटवांग को दबाया गया है। निम्न दक्षिणाहस्त में मुण्ड को पकड़े जाने का अंकन है तथा अग्रवाम हस्त में कपाल का अंकन है, जिसमें मछली को अंकित किया गया है। यह प्रेतवाहिनी है, तथा इसके दाहिने पाद के पास सियार का अंकन किया गया है।[48]

अष्टचामुण्डा स्वरुप-

चामुण्डा के अष्टस्वरुपों के बारे में विस्तृत वर्णन अग्निपुराण में मिलता है। इन अष्ट स्वरुपों में रुद्रचर्चिका, रुद्रचामुण्डा, महालक्ष्मी, सिद्धचामुण्डा, सिद्धयोगेश्वरी, रुपविद्या, क्षमा तथा दन्तुरा के नाम वर्णित है।

रुद्रचर्चिका:-

अग्निपुराण[49] में चामुण्डा के अष्ट प्रकारों का वर्णन है। इस पुराण में रुद्रचर्चिका को छठ भुजाओं से युक्त दर्शाया गया है। इसके पैर और मुख ऊपर की ओर होते है। इसके दो उर्ध्व (उपर) हाथों में गजचर्म, अन्य हाथों में कपाल, शूल, कर्त्तरी (कटार) तथा पाश होता है। प्रस्तुत चामुण्डा प्रतिमा राजस्थान (नागदा)[50] के सास-बहू मंदिर की है। (चित्र सं0 6) यह षड्भुजी चामुण्डा अर्धपर्यक आसन्न मुद्रा में आसीन है। इसके दक्षिण हस्तों में एक वरद मुद्र में, कर्तरी धारी तथा अन्य त्रिशूल से युक्त है। वाम हस्तों की उर्ध्व भुजा मुड़ी हुई, जिसकी कनिष्ठा को मुख में डाले हुए तथा अन्य खटवांग तथा कपाल को पकड़े हुए प्रदर्शित है। यह भयावाही, शुष्कपयोधरा, कंकालस्वरुपिणी तथा कृशोदरी है। इसका जटामुकुट मानव मुण्ड से अलंकृत है। यह मुण्डमाला पहने तथा सर्पाभूषणों से सुशोभित है। इसके आसन्न के रुप में प्रेत का अंकन है। यह पेट के बल न लेटकर अग्र भाग से भुजा का सिर को सहारा दिए लेटा है। इसका यह स्वरुप अग्निपुराण की रुद्रचर्चिका से साम्य रखता है।

रुद्रचामुण्डा:-

रुद्रचामुण्डा[51] अष्टभुजी देवी है। इसके छ: आयुध रुद्रचर्चिका की भांति हैं। सिर तथा डमरु धारण करके यह रुद्रचर्चिका, रुद्रचामुण्डा की कहलाती है। इसे नृत्य स्वरुप में नाटेश्वरी कहा जाता है। झालवाड़ संग्रहालय[52] (चित्र सं0 7) की मूर्ति की गणना इस रुप के अधीन की जा सकती है। 10 वीं शताब्दी की प्रस्तुत चामुण्डा अष्टभुजी, रौद्ररुपिणी, कृशोदरी, कंकालस्वरुपिणी, लम्बस्तना तथा स्थानक मुद्रा में है। यह प्रतिमा लगभग 10वीं शताब्दी की है। दोनों उर्ध्व हाथों में नवगृहों के पट्ट को उठाए जाने का अंकन किया गया है, दक्षिण एवं वाम हस्त में लिए गए पुरुष का अंकन स्पष्ट नहीं है। शेष दोनों हाथों में कर्तरी तथा शव है। दो वाम हस्तों के आयुध खण्डित है। इसके वाहन के रुप में प्रेत/शव के स्थान पर दाएं पार्श्व में श्रृंगाल अंकित है। यह

नरमुण्डमाला धारिणी तथा यज्ञोपवीत से अलंकृत है। नवग्रहों में राहु के अतिरिक्त अन्य ग्रहों के मस्तक खण्डित हो चुके है।

महालक्ष्मीः-

महालक्ष्मी[53] रुद्रचामुण्डा की भांति है परन्तु इसके एक के स्थान पर चार मुख है अर्थात् रुद्रचामुण्डा की बैठी हुई चतुर्मुखी प्रतिमा का स्वरुप महालक्ष्मी कहलाता है। चामुण्डा के महालक्ष्मी रुप की मूर्त्तियां अत्यंत दुलर्भ पाई गई है। नागपुर संग्रहालय[54] की एक चामुण्डा प्रतिमा इस सन्दर्भ में दर्शनीय है। इसके तीन मुख तथा छः भुजाएं है। यह स्थानक मुद्रा में प्रेत पर खड़ी है। दाएं हाथ में कर्तरी, खड्ग, और त्रिशूल है तथा बाएं हाथ में एक खण्डित अवस्थता में तथा दूसरे का आयुध स्पष्ट सदृश्य नहीं है। केवल तीसरा हस्त कपाल से युक्त है। यह विकरालमुखी, निर्मांसा तथा कृशोदरी है। त्रिमुख जटाजूट है। यह विकरालमुखी निर्मांसा तथा कृशोदरी त्रिमुखी एवं जटाजूट है। यह नरमुण्डों तथा भुजंगावरणों से युक्त है। तीनों मुखों के पीछे चौथे की कल्पना की जा सकती है। इसका कुछ साम्य अग्निपुराण में वर्णित चामुण्डा से कुछ साम्य रखता है।

सिद्धचामुण्डाः-

सिद्धचामुण्डा[55] का वर्णन हाथ में विद्यमान मनुष्य तथा महिष को खाते हुए किया गया है। इसके दस हाथ और त्रिनेत्र है। दक्षिण हस्तों में कृपाण तथा तीन डमरु तथा वाम हस्तों में घण्टा, खेटक, खटवांग तथा त्रिशूल धारण किए हुए है। यह रुद्रचर्चिका की भांति दोनों हाथ में गजचर्म धारण करती है। राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली[56] में संग्रहीत एक पालकालीन प्रतिमा है। (चित्र सं0 8) यह दस भुजाओं से युक्त है। दस भुजाओं से युक्त यह वृक्ष के नीचे पद्मासन पर ललितासन मुद्रा में बैठी है। यह रौद्रमुखी, शुष्क पयोधरा, कृशोदरी तथा कंकाल स्वरुपिणी है। इसके शरीर की अस्थियां और शिराएं दृश्यी है। यहां भी देवी की मुखाकृति रौद्र, पयोधर शुष्क, उदर कृश एवं शरीर कंकाल मात्र है। शरीर की अस्थियां और शिराएं दिखाई देती है। इसके दोनों उर्ध्व करों से मस्तक के पीछे गजचर्म को फैलाये जाने का अंकन किया गया है। वे दोनों उर्ध्व करों से मस्तक के पीछे गजचर्म को फैलाये है। उनके अन्य शेष दाएं हाथों में से दो कर्तरी और खड्गधारी है एवं दो खण्डित है तथा बाएं हाथों में से एक खण्डित है। अन्य शेष दाएं हाथों में से दो कर्तरी, खड्ग, दो हस्त खण्डित अवस्था में तथा बाएं हाथों में से एक खण्डित है। यह यज्ञोपवीत, नरमुण्डों की माला एवं भुजंगाभरण से अलंकृत है। इसके आसन के नीचे प्रेत वाहन है। वृक्ष की शाखाओं पर पक्षी बैठे हुए है और नरमुण्ड लटके हुए है। पाद पीठ के मध्य में हाथों एवं नरमुण्डों से युक्त कुण्ड तथा पार्श्वो में उलूक और शव का भक्षण करते हुए गृध, श्वान का अंकन किया गया है। यह दृश्य चामुण्डा के शमशान का दृश्य करता है जिसमें चामुण्डा वास करती है।

सिद्धयोगेश्वरीः-

अग्निपुराण में सिद्धयोगेश्वरी[57] का वर्णन सब प्रकार की सिद्धियों को प्रदान करने वाली देवीशक्ति के रुप में उल्लेखित है। इसकी बारह भुजाएं (द्वाद्वशभुजी) है। इस देवी के आयुध

उपरोक्त सिद्धचामुण्डा की भांति है; देवी के हाथ में पाश तथा अंकुश से युक्त देवी के आयुध पूर्ववत ही है। द्वाद्वशभुजी चामुण्डा की मूर्तियां सिद्धयोगेश्वरी के रुप के अन्तर्गत अध्ययन की जाती है। रीवा (चित्र सं0 9) से प्राप्त लगभग 10वीं शताब्दी की मूर्ति[58] कराल नेत्रा, भग्न नासिका, लम्बओष्ठ, करालदंतों, कृशोदरी, दोनों करों से शव को मस्तिष्क के ऊपर धारण किए हुए; कपाल, डमरु, खटवांग, चाप तथा नरमुण्डों से युक्त है। यह प्रेतवाहना नृत्य मुद्रा में मुण्डमालाधारिणी तथा अन्य सामान्य आभूषणों से युक्त है।

रुपविद्या:-

रुपविद्या[59] द्वाद्वशभुजाओं से युक्त है। रक्तवर्ण के पाश तथा अंकुश को धारण करके यह भैरवी कहलाई। अत: यह द्वाद्वशभुजी देवी है जो रौद्र रुप में श्मशान में निवास करती है। इसके आयुधों का कोई उल्लेख नहीं किया गया । प्राय: द्वाद्वशभुजी चामुण्डा प्रतिमाओं को सिद्वयोगेश्वरी के रुप में वर्णित किया जाता है।

क्षमा:-

क्षमा[60] द्विभुजी और वृद्व स्त्री के रुप में शृंगालियों से घिरी हुई है।, क्षमा-चामुण्डा के इस रुप का वर्णन उड़ीसा और बंगाल में प्रमुखत: मिलता है। इस प्रकार की प्रतिमाओं में बंगाल के बर्दवान[61] से 8 वीं शताब्दी की है। यह द्विभुजी वृद्ध स्त्री के रुप में कूल्हों के बल पर आसीन है। इसका दायां हाथ खण्डित अवस्था में है तथा बायां आसन पर अवस्थित है। यह कराल नेत्रां, उग्रदंता तथा क्षीणदेहा है। इसके पादपीठ के बायीं ओर गदर्भ का अंकन है।

दन्तुरा:-

चामुण्डा के इस रुप (दन्तुरा)[62] का वर्णन अधिकांशतय: कला क्षेत्र में नहीं मिलता है। दीनाजपुर की चामुण्डा प्रतिमा इस रुप से साम्य रखती है।[63] चामुण्डा का यह रुप बंगाल की अधिकतर चामुण्डा प्रतिमाओं में पाया जाता है। यह घुटनों के बल बैठी हुई है जिसका दायां हाथ दायें घुटने पर तथा बायां हाथ सतह पर स्पर्श करता है। देवी के काकपक्ष के समान केश अवस्थित है। पादपीठ पर गदर्भ पर अंकित है।

निष्कर्ष-

प्राय: रौद्र रुप में प्रदर्शित चामुण्डा का कला में अंकन प्रतिमाओं के माध्यम से किया गया है। कला में यह अंकन प्रतिमाशास्त्रीय ग्रंथों के आधार पर किया गया है। मूर्त्तिकला के क्षेत्र में इसकी प्रतिमाएं गुप्तकाल से मिलने लगती है, परंतु गुप्तोत्तर काल में इसका स्वरुप विकसित अवस्था में मिलने लगता है। सर्वप्रथम द्विभुजी, चतुर्भुजी तथा फिर कला के क्षेत्र में विकास होने के साथ-साथ यह अष्ट, दश तथा षोड्श भुजा के रुप में विकसित होते-होते। इसके शारीरिक स्वरुप में भी परिवर्तन हुआ। मांसल संरचना के अतिरिक्त यह सामान्य स्त्री रुप में कला में निर्मित की जाने लगी। 12 वीं शताब्दी तक आते-आते इसका सौम्य स्वरुप भी भारतीय कला के रुप में देखने को मिलते है। समयानुसार परिवर्तन इसके स्वरुप, आयुधों, वाहनों तथा देखने को मिलता है। उत्तर भारत में प्रमुखत: कृशोदरी, मातृका, सौम्य, तांत्रिक प्रभाव से युक्त तथा अधिकांशत: एक हाथ की उंगली को मुख में डाले दर्शाया गया है। इसके अधिशेष अग्निपुराण

से साम्य रखते नृत्य गजचर्मधारिणी, शव तथा नवगृहपट्ट को उर्ध्वहस्तों से पकड़े जाने का अंकन किया गया है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि उत्तर भारतीय कला में क्षेत्रीय विभिन्नता इसके स्वरुपों तथा वाहनों द्वारा आंकी जा सकती है। यद्यपि यह प्रतिमाएं प्रतिमाशास्त्रीय ग्रंथों के अनुरुप शिल्पियों द्वारा उकेरित की गई है।

साभार –

द्वितीय लेखिका (कल्पना देवी), भारतीय ऐतिहासिक अनुसंधान परिषद द्वारा प्रदत्त अध्येता वृत्ति का आभार व्यक्त करती है; जिसके सहयोग से शोधार्थिनी ने शोध पत्र का कार्य पूर्ण किया।

संदर्भ सूची :

1. शर्मा, आचार्य श्रीराम. (1970) मत्स्य पुराण (द्वितीय खण्ड), बरेली, उ0 प्रदेश. संस्कृति संस्थान. पृ0 465
2. द्विवेदी, आचार्य शिवप्रसाद. (2014). अग्निपुराणम् (हिन्दी व्याख्या सहित). दिल्ली. चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान. पृ0 124, 31–37
3. तथैव
4. तथैव
5. तथैव
6. तथैव
7. तथैव
8. तथैव
9. तथैव
10. अवस्थी, भगवानदास. 1942. श्री मार्कण्डेयपुराण. प्रयाग:ज्ञानलोक प्रकाशन.पृ0 71

    काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी।।6।।

    विचित्रखट्वांड्गधारा नरमालरविभूषणा ।

    मार्कण्डेयमहापुराण/6/71
11. श्रीवास्तव, बलराम (अनुवादक). 1989, रुपमण्डन. वाराणसी: मोतीलाल बनारसीदास, पृ0 264
12. तथैव
13. तथैव
14. तथैव
15. पूर्वोक्त, 43/अग्निपुराण
16. आचार्य, श्रीराम शर्मा. (2015). वामनपुराण (भाग 2), विनियाकोत्त्पतिवर्णन. बरेली.संस्कृत संस्थान. पृ0 20
17. विद्याभास्कर, पं सरयूप्रसादशास्त्री द्विजेन्द्र गार्ग्यमुनि रुपेश ठाकुर प्रसाद. 2014. श्रीमद्देवीभागवत पुराण. वाराणसी. प्रसाद प्रकाशन. पृ. 651
18. पूर्वोक्त, श्रीमार्कण्डेयपुराण. पृ0 176
19. शाह, प्रियावाला (अनुवादक). 1990. विष्णुधर्मोतरपुराण. (खण्ड–3). अहमदाबाद. दी न्यू ऑर्डर बुक, पृ0 214/73–30
20. पूर्वोक्त, रुपमण्डन

    चण्डिका क्रूररुपा च पिड्गकेशा कृशोदरी।

    व्याघ्रचर्म परीधाना भुजंड्गाभरणान्विता।।40/264

21. पूर्वोक्त, मार्कण्डेयमहापुराण
द्वीपिचर्मपरीधना शुष्कमांसातिभैरवा।। 7/71
22. वृश्चिकैरग्निपुञ्जाभैर्गोन सैश्च विभूषिता।।
त्रैलोक्यपूरयामास विस्तरेणीच्द्रयेण च।।
स्कंदपुराण/(34-37/389)
23. पूर्वोक्त, अग्निपुराण
चामुण्डा कोटराक्षी स्यान्निर्मासा तु त्रिलोचना।।
निर्मासा अस्थिसारा व उर्ध्वकेशी कृशोदरी।
(21/50/अग्निपुराण)
24. पूर्वोक्त, रुपमण्डन
चण्डिका क्रूररुपा च पिङ्गकेशा कृशोदरी।
व्याघ्रचर्मपरीधाना भुजङ्गाभरणाविन्ता।।
रुपमण्डन/39-41/264
25. विद्युतज्वालाकुला रौद्रा विघुदाग्निनिभेक्षणा।34
मुक्तकेशी विघालाक्षी कृशग्रीवा कृशोदरी।।
स्कंदपुराण/34/385
26. पूर्वोक्त, अग्निपुराण, 21/50
27. पूर्वोक्त रुपमण्डन
चण्डिका क्रूररुपा च पिड़ग्केशा कृशोदरी।
रक्ताक्षी भयेनेत्रा द्धभीमनेत्राऋ च निर्मासा विकृतानना।।36।।
28. पूर्वोक्त, मार्कण्डेयमहापुराण
विमग्रा रक्तनयना नादापूरितदिङ्ग्मुखा ।।8/71
29. पूर्वोक्त, श्रीमद्द्देवीभागवत पुराण. पृ0 651
निष्क्रान्ता च तदा काली ललाटफलकाद् द्रुतम।।39।।
व्याघ्रचर्माम्बरा क्रूरा गजचर्मोत्तरीयका।
30. वही
व्याघ्रचर्माम्बरा क्रूरा गजचर्मोत्तरीयका।
मुण्डमाला घोरा शुष्कवापीसमोदरा।।40।।
श्रीमद्द्देवीभागवतपुराण/40/651
31. पूर्वोक्त, अग्निपुराण (1/50/अग्निपुराण)
32. पूर्वोक्त, रुपमण्डन
त्रिशूल खेटकं खड्गं धनु: पाशाङ्कुशौ शर:।।
41/264
33. जुगनू, श्रीकृष्ण शर्मा, भंवर, अपराजितपृच्छा, पार्ट-2, परिमल पब्लिकेशन, दिल्ली। पृ0 1351
स्फुरन्नयदंष्ट्रा च विकृत नखरानना।। 2।।
त्रिशूलखड़ग्खेटाश्र्च धनुर्बाणश्र्च पाशक:।
अड़्कुशाच्श्रैव घण्टा च तथा दर्पणवज्रकौ।
दण्ड: कुठारशङ्खौ च चक्रं गदा च मुदग्र।। 3।।
34. पूर्वोक्त, मत्स्य पुराण, पृ0 465

मस्तिष्काक्तं च गिणानां शक्तिकां दक्षिणे करे।।
गृधस्था वायस्था वा निर्मासा विनतोदरी।
करालवदना तद्वत् कर्तव्या सा त्रिलोचना।।
चामुण्डा बद्वघण्टा वा द्वीपिचर्मधरा शुभा।

35. राव, गोपीनाथ टी0 ए0. पूर्वकारणागमे: ऐलीमेंटस आफ हिन्दू आइकनोग्राफी. वाल्यूम1 पार्ट 2. एपेंडीक्स सी, प्रतिमालक्षणानि. पृ0 152
कौशिकारोहिणी- काक वासौ चामुण्डा गृहकेतुका।।
मांसलखण्डसुसम्पूर्ण कपालं वामपाणिभाक्।
36. भट्टाचार्य, यू0 सी0.1960-61. कैटालॉग एण्ड गाइड टू राजपूताना म्यूजियम. पार्ट 1. अजमेर, राजस्थान. पृ0 36
37. पूर्वोक्त, अग्निपुराण (21/50/अग्निपुराण)
38. पटना संग्रहालय, संख्या 10821
39. पूर्वोक्त, पूर्वाकाराणागम, पृ0 152
40. आहाड़ संग्रहालय, संख्या 03
41. पूर्वोक्त, अपराजितपृच्छा
कर्णे कपालमाला च मुण्डखट्वाड़शूलका:।
निर्मासा कूररुपा च चामुण्डा दशनोज्ज्वला।।15।।
42. राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली, 66.13
43. जैन, पं0 भगवानदास (हिन्दी अनुवादक), हूजा, रीमा (आंग्ल अनुवाद). (1999). देवतामूर्तिप्रकरणम् (हिन्दी, अंग्रेजी अनुवाद), जयपुर, प्राकृत भारती अकादमी पृ0 266
निगद्यतेह्यथो चण्डी हेमभासा सुरुपिणी।
त्रिनेत्रा यौवनस्था च पीतपीनपयोधरा।। 94।।
44. खजुराहों संग्रहालय, ए0 आई0 आई0 स0, गुरुग्राम
45. गौतम, चमनलाल. कालिका पुराण. (द्वितीय खण्ड) बरेली, उ0 प्र0, प्रकाशक संस्कृति संस्थान, पृ0 265, 60/61/62
46. गोर्डियान, टी0. गुप्ता, संयुक्ता. (1981). हिन्दू तांत्रिक एण्ड शाक्ता लिटरेच. वाल्यूम 2. ओटो हैरासोवित्ज़ विस्बाडेन, पृ0 84
47. पूर्वोक्त, भट्टाचार्य यू0 सी0. पृ0 36
48. वही, राजपूताना म्यूजियम, अजमेर सं0 302
49. गजचर्मभृदर्वास्यापादा स्याद्रद्रुचर्चिका।।
(31/50/अग्निपुराण)
50. नागदा, ए0 आई0 आई0 स0, गुरुग्राम
51. सैव चाष्टभुजा देवी शिरोडमरुकान्विता।।
तेन सा रुद्रचामुण्डा नाटेश्वर्यथ नृत्यती।।
(32/50/अग्निपुराण)
52. झालवाड़ संग्रहालय, सं0 28, ए0 आई0 आई0 स0, गुरुग्राम
53. इयमेव महालक्ष्मीरुपविष्टा चतुर्मुखी।
(32/50/अग्निपुराण)
54. डिस्क्रीपटिव लिस्ट आफ एग्सीविटस इन द आर्कियोलाजिकल सेक्शन ऑफ दी नागपुर म्यूजियम. इलाहाबाद. द पियोनर प्रेस. पृ0 18-19

55. नृवाजिमहिषेभोश्च खादनी च करे स्थिताम।
दशबाहुस्त्रिनेत्रा च शस्त्रासिडमरुत्रिकम।।
बिभ्रती दक्षिणे हस्तेवामेघण्टां च खेटकम।
खटवांड्ग च त्रिशूल च सिद्व चामुण्डा।
(34/50/अग्निपुराण)
56. राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली, सं0 63.934
57. सिद्वयोगेश्वरी देवी सर्वसिद्धिप्रदायिका।
एतद्रूपा भवेदन्या पाशाङ्कुशतारुणा।।
(35/50/अग्निपुराण)
58. रीवा, ए0 आई0 आई0 स0, गुरुग्राम
59. भैरवी रुपविद्या तु भुजैद्वाद्वशभिर्युता।
एता: श्मशानजा रौद्रा अम्बष्टकमिंद स्मृतम।।
(36/50/अग्निपुराण)
60. क्षमा शिवावृता वृद्वा द्विभुजा विवृतानना।
(37/50/अग्निपुराण)
61. मजूमदार आर0 सी0, 1943, दी हिस्टरी आफ बंगाल, वाल्यूम 1, दी यूनिवर्सिटी ऑफ डेक्का, पृ0 455
62. दन्तुरा क्षेमकारी स्याद भूमो जानुकरा स्थित।
(37/50/अग्निपुराण)
63. जयसवसल, कुसुमकुमारी. (1992). उत्तर भारत की प्राचीन हिन्दू देवी–मेर्तियां. दिल्ली. आत्माराम एण्ड सन्स, पृ0 216

फलक सं0 1

चित्र संख्या-1:
गुजरात (बडबल)
(साभार ए0 आई0 आई0 एस0, गुरुग्राम)

चित्र संख्या-2:
पटना संग्रहालय
संख्या-10821

फलक सं0 2

चित्र संख्या-3:
आहाड़ संग्रहालय
संख्या-03

चित्र संख्या-4
राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली
संख्या- 66 13

फलक सं0 3

चित्र संख्या-5
खजुराहों
(साभार ए0 आई0 आई0 एस0, गुरुग्राम)

चित्र संख्या-6
नागदा
(साभार ए0 आई0 आई0 एस0, गुरुग्राम)

फलक सं0 4

चित्र संख्या-7
झालवाड़ संग्रहालय
(साभार ए0 आई0 आई0 एस0, गुरुग्राम)

चित्र संख्या-8
साभार राष्ट्रीय संग्रहालय, दिल्ली
संख्या- 63.934

फलक सं0 5

चित्र संख्या-9
रीवा, म0 प्र0
(साभार ए0 आई0 आई0 एस0, गुरुग्राम)

' ए0 आई0 आई0 एस0- अमेरिकन इंस्टिट्यूट फॉर इण्डियन स्टडीज़

❒❒❒

प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, गुरुकुल काँगडी समविश्वविद्यालय, हरिद्वार, उतराखण्ड।
शोधछात्रा, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, गुरुकुल काँगडी समविश्वविद्यालय, हरिद्वार, उतराखण्ड।
devikalpna09@gmail.com, Mob. No. 9548306679, पता: हरबंस लाल, मकान नं. ई.बी.-89, सेक्टर-3, तेल्लवारा, मुकेरियाँ, होशियारपुर-144216

कैलाश बनवासी की कहानियाँ और भूमंडलीकरण

—डॉ. बी.एन. जागृत
—अनवर खान

''दुर्ग छत्तीसगढ़ का कुशल कहानीकार कैलाश बनवासी कहानी 'बाजार में रामधन' के कारण चर्चा में आया। नामवर सिंह के अनुसार इस वर्ष की यह सबसे श्रेष्ठ कहानी है। कहानी का कथ्य लोहे की तरह मजबूत है।

''बीसवीं सदी के आखिरी दशक में परिवर्तन और विकास की जिस प्रक्रिया ने लोगों का ध्यान आकर्षित किया, वह था भारत में सन् 1991 के बाद शुरू हुआ आर्थिक उदारीकरण और भूमंडलीकरण का दौर। इसका स्पष्ट और मुखर प्रभाव आज जीवन के हर क्षेत्र में देखा जा सकता है। विश्व भर के इतिहास में भूमंडलीकरण सर्वथा नई परिघटना का संकेत दे रहा है। इस परिघटना के तहत दुनिया अपने राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक संगठनों के द्वारा नवीन रूप में उभर रही है। भूमंडलीकरण की विकास की प्रक्रियाओं ने समकालीन समय और समाज को बड़ी गहराई के साथ प्रभावित कर यथार्थ में परिवर्तन किया, जिसे आखिरी दशक के नई पीढ़ी के समकालीन रचनाकारों ने गंभीरता के साथ अपनी कहानियों का विषय बनाया है। भारतीय समाज एवं व्यवस्था व यथार्थ में परिवर्तन के अनेक तत्कालीन एवं ऐतिहासिक कारण थे, परंतु भूमंडलीकरण और बाज़ारवाद ने उसे एक निश्चित दिशा देने में अहम भूमिका निभाई है।''[1]

''सोवियत संघ का विघटन, भूमंडलीकरण, धार्मिक कट्टरता, संचार-क्रांति, वर्तमान राजनीति का प्रभाव साहित्य जगत पर बेहिसाब पड़ा है। बीसवीं सदी के आखिरी दशक में हिंदी कहानी की एक बड़ी रचनाशीलता भूमंडलीकरण की प्रक्रिया और उसके प्रभावों से गहरा संवाद और प्रतिरोध करते हुए बढ़ी है। पिछले दशक में दाखिल नई युवा पीढ़ी ने भूमंडलीकरण से उत्पन्न स्थितियों को गहराई से अनुभव किया है। गाँव, कस्बा और शहर के जीवन और समाज के बीच बाहरी और भीतरी बदलाव, इस दौर के महत्वपूर्ण कहानियों के विषय बनते हैं।''[2]

''नवलेखन अंकों की सुदीर्घ परंपरा से चुन-छन कर आये हैं। इन्हीं कथाकारों की परत-दर-परत बनती है भूमंडलोत्तर समय की कथा पीढ़ी अक्टूबर 2004 में प्रकाशित 'वागर्थ' की नव-लेखक अंक की अगली परत थी, जिसके महत्वपूर्ण नामों में मनोज कुमार पांडे, चंदन पांडे, विमल चन्द्र, आशुतोष मिश्र,

कैलाश बनवासी, पंकज सुबीर, विमलेश त्रिपाठी, दीपक श्रीवास्तव, मो. आरिफ, कुणाल सिंह एवं राकेश मिश्र का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है।''[3]

समकालीन कहानी व्यापक विषय, परिप्रेक्ष्य और संवेदनाओं को समेटती है। एक तरफ स्वयं प्रकाश, अखिलेश, ज्ञानरंजन, प्रियंवद, शेखर जोशी, हिमांशु जोशी जैसे वरिष्ठ कथाकारों की कहानियाँ है, तो बीसवीं सदी के अंतिम दो दशकों के आस-पास से लिखने वाले उदय प्रकाश, पंकज मित्र, कैलाश बनवासी, मनीषा कुलश्रेष्ठ, नीलम कुलश्रेष्ठ, पंखुरी सिन्हा, अनिता भारती, सूर्यनाथ, एस.आर. हरनोट, नीलाक्षी सिन्हा, अल्पना मिश्र, संजय खाती, चन्दन पांडे, रणेन्द्र आदि नवोदित लेखक हैं, जो विभिन्न विषयों, संवेदनाओं को अपनी कहानियों में दर्ज कर रहे हैं।

आधुनिक युग के यथार्थ को सहज और सीधे ढंग से प्रस्तुत करने वाले कहानीकारों में कैलाश बनवासी का नाम प्रमुख है, उन्होंने समकालीन यथार्थ को अपने साहित्य का लक्ष्य बनाया है। उन्होंने भूमंडलीकरण के बाद की स्थिति को अपनी कहानियों का विषय बनाया है। मौजूदा समय बहुत ही जटिल हो चुका है। बाज़ारवाद का जाल शहर से लेकर गाँव-देहात तक अपने पैर पसार चुका है। हमारे तीज-त्यौहार, रीति-रिवाज, खान-पान, शिक्षा-दीक्षा, बोली-बानी सब कुछ आज बाज़ार की चपेट में है। छत्तीसगढ़ अंचल को आधार बनाकर लिखी गई भूमंडलीकररण से सबंधित कैलाश बनवासी की कहानियाँ वर्तमान समय की अनेक दृश्यों को हमारे समक्ष प्रस्तुत करती है।

कैलाश बनवासी अपनी लेखनी के माध्यम से हिंदी साहित्य में एक अलग ही पहचान रखते हैं। उनकी कहानियाँ में समाज में घटित यथार्थ के अनेक पहलू उजागर हुए हैं और वह यथार्थवादी कहानी परंपरा के दायरे में क्षमतावान लेखन के रूप में हमसे मुखातिब होते हैं। दुर्ग छत्तीसगढ़ का यह कुशल कथाकार सबसे पहले चर्चा में आया कहानी 'बाजार में रामधन' के कारण। ग्रामीण जीवन के विविध पहलुओं को उजागर करने का काम कैलाशी ने अपनी कहानी 'बाजार में राममधन' में किया है। कैलाश बनवासी की अब तक पाँच कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमें- 1. 'लक्ष्य तथा अन्य कहानियाँ' (1999), 2. 'बाजार में रामधन' (2004), 3. 'पीले कागज की उजली इबारात' (2008), 4. 'प्रकोप तथा अन्य कहानियाँ' (2015), 5. 'जादू टूटता है' (2019)।

कैलाश बनवासी की इन कहानियों में वर्तमान समय की तमाम विसंगतियाँ, यथा- वैश्वीकरण और बाजारीकरण के खेल को आधार देती बहुराष्ट्रीय कंपनियों की भूमिका, शिक्षा का व्यवसायीकरण, भारत के हिंदू-मुस्लिम संबंधों की जमीनी हकीकत आदि जैसे विषय की प्रस्तुतीकरण इन्हें औरों से अलगाता है। कैलाश बनवासी वर्तमान भारत में व्याप्त समस्याओं को छत्तीसगढ़ अंचल से जोड़कर उसे एक अलग रूप देते हैं। संग्रह की पहली कहानी 'इस समय चिड़ियों के बारे में' बाजारवाद के बढ़ते कदम और मल्टीनेशनल कंपनियों की चालाकियों को उजागर करती है। कहानी बहुत साधारण तरीके से बाजार के बीच ले जाती है, यह दृश्य कोई नया नहीं है। वर्षो से हम यह सब देखते-सुनते और इसमें सहभागी बनते रहे हैं। पिछले कुछ दशकों से त्यौहार का जैसा बाजारीकरण हुआ है, उससे कोई भी अछूता नहीं है। कहानी हमें बहुत सहज तरीके से हमारा देखे-सुने दृश्य दिखाती है और हमें लगता है सच बिल्कुल ऐसा ही होता है। मगर

बाजार में छत्तीसगढ़ अंचल की ग्रामीण व्यवसायी औरतें जो पहले से व्यवसायी नहीं थी, समय के अनुसार बाजार में अपने श्रम के बदले त्यौहार के लिए पैसा जुगाड़ लेने की चाहत में बाजार के बीच आती हैं, परंतु यह पैसे के बदले मिले शोषण पर वे महिलाएँ ही नहीं पाठक भी हतप्रभ रह जाता है। अपनी बिक्री से ज्यादा टैक्स चुकाते इन जैसे तमाम श्रमजीवियों की दीवाली और बाजार द्वारा प्रचारित दीवाली का फर्क साफ नज़र आने लगता है और कहानी में बाजार के संदर्भ में इस कथन से बाजारवाद का उद्देश्य भी सार्थक हो उठता है- ''ये दे जतना के बेचे रहेंव तेनो ल कुपन वाला मन झटक के लेगे। अइसना में ते काला कमाबे बहनी। और हर कम्पनी दीवाली पर कुछ-न-कुछ दे रही है- नारियल फोड़ो ऑफर, फटाका फोड़ा आँफर, स्क्रैच एण्ड विन ऑफर । हमारे दीवाली मनाने की हमसे ज्यादा चिन्ता इन कम्पनियों को हो गई है और यह भी कि हमारा दीवाली मनाता इन्हीं चमकदार हँसते-गाते बेफिक्र चेहरों द्वारा संचालित है। मैं तय नहीं कर पाता - दीवाली हमारी होती है या इनकी।''[4]

''दुर्ग छत्तीसगढ़ का कुशल कहानीकार कैलाश बनवासी कहानी 'बाजार में रामधन' के कारण चर्चा में आया। नामवर सिंह के अनुसार इस वर्ष की यह सबसे श्रेष्ठ कहानी है। कहानी का कथ्य लोहे की तरह मजबूत है। नवीन एवं पुरानी पीढ़ी के संघर्ष के माध्यम से कृषि-संस्कृति को बनाये रखने के लिए कथाकार जी-जान से वकालत करते हैं। किसानों के लिए गाय, बैल, गाँव, जमीन उनकी अस्मिता की निशानी होते हैं। 'बाजार में रामधन' कहानी बाजार के चक्रव्यूह को दिखाती है। कहानी का पात्र मुन्ना पढ़-लिख कर भी बेरोजगार है और उसे बैल बेचने के लिए मजबूर होना पड़ता है। यहाँ पर आज भूमंडलीकरण के दौर में एक बात ध्यान देने लायक है, आज का पढ़ा-लिखा शिक्षित वर्ग उद्योग-धंधों को तो सम्मानजनक समझता है, लेकिन खेती करना निकृष्ट कार्य समझता है। ये कैसी विचारधारा है। वह बेकार बैठा रहेगा, लेकिन काम नहीं करेगा। इसमें कैलाश बनवासी ने रामधन के द्वारा बाजार-तंत्र का पूरा खाका खींचा है और रामधन का अपने बैलों को न बेचना इस अर्थतंत्र को विफल करना है। 'बाजार में रामधन' कहानी के माध्यम से कहानी के इतिहास में पहली बार बैलों और मनुष्य के रिश्तों को इतनी बारीकी से कहानी के प्रमुख केंद्र-बिंदु में रखा गया है और उसका व्यक्ति से वार्तालाप करते दिखाया गया है। ये सभी विशेषताएँ कैलाश बनवासी को अन्य कहानीकारों से अलग व परिपक्व तथा उनकी मानसिक सोच को प्रकट करता है।''[5]

वर्तमान समय में जीवन-मूल्य तेजी से बदल रहा है। आधुनिकता से आक्रांत मनुष्य की जीवन-शैली ने नगरों से लेकर जीवन तक को प्रभावित किया है। पूँजीवाद व्यवस्था ने जिस तरह कृषि आधारित अर्थव्यवस्था पर जीने वाले एक बड़े समूह को उनके अस्तित्व को ही चुनौती दे डाली। यह आज के आधुनिक युग का चिंतनशील एवं विचारणीय विषय है, जिस पर युवा कथाकार कैलाश बनवासी की नज़र गई और उनके कथा-संग्रह 'बाजार में रामधान' में दिनों-दिन बढ़ते जा रहे, शक्तिशाली हो रहे बाजार के दबावों की सुगमता से पड़ताल की माँग की गई है। प्रेमचंद युग में उनकी कहानियों का मुख्य पात्र भारतीय किसान थे और उन किसानों का सामंतवादी किस तरह ञोषण करते थे, जिसकी व्याख्या इन कहानियों मं दिखती है। ठीक उसी तरह 21वीं सदी में सामंतवादी ताकतों की जगह भूमंडलीकरण पूँजीगत बाजार ने ले ली है, जो लोक-अर्थव्यवस्था को तहस-नहस करने पर तुली है। भारतीय किसानों की पारिवारिक पृष्ठभूमि

एवं उन पर बढ़ते दबावों की संवेदना को जिस तरह से कैलाश बनवासी व्यक्त करते हैं, यह पाठक का ध्यान अपनी ओर खींचती है।

कैलाश बनवासी के कहानी-संग्रहों में चतुर्थ कहानी-संग्रह 'प्रकोप तथा अन्य कहानियाँ' है, जिसक प्रकाशन 2015 में हुआ। बनवासी का यह नया कथा-संग्रह इनके पिछले संग्रहों से हटकर है। बदलते सामाजिक संरचना में जो तेजी से जुड़ता जा रहा है, कथा के माध्यम से कथाकार ने उसे ही समग्रता में कैद करके पाठकों के सामने रख दिया है। संकलन में कुल नौ कहानियाँ संग्रहित है। सब के केंद्र-बिंदु में आज जूझती, समर्पण करती, अपने होने को स्थापित करती व बलिदान करती स्त्रियाँ हैं। अत: इसी अंतर्वस्तु को उद्‌घाटित करने के तहत उक्त संकलन को समर्पित भी उन्हें ही किया है, मानो अघोषित तौर पर कथाकार ने एक ओर शीर्षक ही दे दिया हो संकलन का।

उक्त संकलन में कहानीकार ने भारतीय कृषक जीवन की तकलीफों, विद्रुपताओं, विडम्बनाओं के साथ ही उनके परिवार के साथ होने वाले समस्त अमानवीय व्यवहार के बीज को उद्‌घाटित किया है। कैलाश बनवासी अपने समय, समाज एवं परिवेश के प्रति प्रतिबद्ध कथाकार हैं, जिसकी अभिव्यक्ति पूरी गंभीरता के साथ इनकी कहानियों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

इसी क्रम में कैलाश बनवासी का नवीन एवं पाँचवाँ कहानी-संग्रह 'जादू टूटता है'। वर्ष 2019 में प्रकाशित हुआ है, जिससे पाठक काफी प्रभावित हुए। उक्त संग्रह के अनेक कहानियों का संदर्भ शिक्षा और शिक्षा संस्थानों से है, जहाँ विसंगतियाँ एवं मूल्यहीनता पनप रही है, जहाँ भूमंडलीकरण के कारण पूँजी के वर्चस्व व्यवसायिकता पसर रही है। कहानीकार खुद शैक्षणिक पेशे से आते हैं, इसलिए ये कहानियाँ यथार्थ से परिचित कराती है। "कैलाश बनवासी की कहानियाँ एक तरह से यथार्थ से आक्रांत कहानियाँ हैं। उनकी कहानियाँ भूमंडलीकरण युग के बाजारवादी और उपभोक्तावादी प्रभावों को प्रकट करती है, जिनसे शहर का मध्यवर्ग सबसे अधिक ग्रसित है। मल्टीनेशनल कंपनियाँ लोगों में पैसा कमाने की हवस पैदा कर उनकी सोच और चेतना को जकड़ रही है। उनके प्रति भी चिन्ता व्यक्त करती है।"

अंतत: हम यह कह सकते हैं कि कैलाश बनवासी भूमंडलीकृत कहानीकार के रूप में हमारे सामने उपस्थित होते हैं। वे बहुत संवेदनशील, ईमानदार वैचारिक प्रतिबद्ध कथाकार हैं, जो लेखन का प्रतिफल समाज की यथार्थता को चित्रित करने में विश्वास करते हैं।

संदर्भ सूची :

1. खेतान, प्रभा. बाजार के बीच बाजार के खिलाफ. दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2004; 11.
2. खरे, नीरज. कहानियों की इबारत में इस उजले समय के स्या रंग. परिकथा : नवम्बर-दिसम्बर, 2005; 94.
3. बिहारी, राकेश. अतिक्रमण से उत्पन्न समय सत्यों का अन्वेषण. संवेद पत्रिका विशेषांक, 2013; 13.
4. शुक्ल, उर्मिला. विसंगतियों की उजली इबारत. पुस्तक-वार्ता, जनवरी-फरवरी, 2010; 17.
5. कैलाश बनवासी. बाजार में रामधन संग्रह. गाजियाबाद : अंतिका प्रकाशन, 2008; 20-21.
6. परिकथा. नवम्बर-दिसम्बर, 2009; 32.

❑❑❑

निर्देशक, सहा. प्राध्यापक (हिंदी), शास. दिग्विजय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजनांदगाँव (छ.ग.)

शोध-छात्र, हेमचंद यादव विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.); पता-वार्ड नं. 9, कुम्हार पारा अम्बागढ़ चौकी, जिला-राजनन्द गांव, छत्तीसगढ़-491665, मो. 9770492518

हिंदी सिनेमा में चित्रित नारी के विभिन्न रूप

—डॉ लालीमोल वार्गिस

हिंदी साहित्य और हिंदी सिनेमा में सामान्य रूप से महिलाओं का चित्रण बहस और चर्चा का विषय रहा है। दशकों से हिंदी सिनेमा उस समय और परिदृश्य को प्रतिबिम्बित करनेवाला दर्पण रहा है, जिससे राष्ट्र गुजरा है। हाल के वर्षो में भारतीय सिनेमा में महिलाओं के लिए एक खुशी का दौर देखा गया है, क्योंकि उन्हें अब थिएटर में दर्शकों को आमंत्रित करने के लिए किसी पुरुष सुपर स्टार की आवश्यकता नहीं है। हर युग में सिनेमा में नारी पात्रों की भूमिका बदलती आ रही है। इसकी शुरुआत आजादी के पश्चात् बनी हिंदी फिल्मों से देखी जा सकती है।

ऐसा ही एक फिल्म है 14 फरवरी 1957 को रिलीज हुई फिल्म मदर इंडिया। इसका निदेशक ग्रेट इंडियन डायरेक्टर महबूब खान है। भारतीय सिनेमा के शुरुआती दौर से आने वाली यह क्लासिक फिल्म अपने समय की एक पथ प्रदर्शक फिल्म थी। इसमें राधा के रूप में नरगिस एक गरीब ग्रामीण है जो अपने दो बेटों के लिए सभी बाधाओं से लड़ती है। उसे गांवों द्वारा न्याय के प्रतीक के रूप में देखा जाता है।

सन 1960 के समय का दौर ही अलग था। स्त्री केवल एक भोग विलास की वस्तु तक रहकर चित्रित हो गई थी। उसकी अपनी पहचान या किसी भी मंशा की पूर्ति साध्य नहीं थी। 1987 में रिलीज हुई केतन मेहता द्वारा निर्देशित 'मिर्च मसाला' एक साधारण महिला सोनिया की कहानी है जो स्मिता पाटील द्वारा निभाई गई है जो शक्ति शाली सत्ता (सूबेदार) को न कहने का विकल्प चुनती है, खुद को बुरी नजर से बचाने के लिए। गांव की मुखिया की पत्नी दीप्ति नवल का चरित्र एक साहसी स्त्री के रूप में हुआ है जो विद्रोह करती है अपने पति के खिलाफ, अपनी बेटी को शिक्षित करने के लिए, अत्याचार के खिलाफ। वास्तव में प्रतिगामी समय में महिला सशक्तिकरण की एक प्रभावशाली कहानी है।

समाज में स्त्रियों से हमेशा से यही अपेक्षा रही है कि अपने प्रति हो रहे अत्याचारों को चुपचाप ऊह तक किए बिना सहे। गरीब औरतें तो अमीरों के हाथों खिलवाड़ की वस्तु बन गयी थी। पुरुष की इस पाशविक मनोवृत्ति की झलक 'दामिनी में संजीव ढंग से प्रकट हुई है।

उस दौर में महिलाओं को इतनी आजादी नहीं थी कि वह अपनी पहचान बनाये, अपने अस्तित्व की इमारत खड़ी कर सके। इसका एक ज्वलंत उदाहरण है, ऋषिकेश मुखर्जी द्वारा निर्देशित फिल्म अभिमान। 'अभिमान' एक ऐसी महिला की कहानी है जो अपनी शादी के लिए, अर्थात अपने वैवाहिक जीवन को सफल बनाने या अच्छी गृहिणी बनने की कोशिश करने से कहीं ज्यादा संगीत से प्यार करती है। परंतु उसके पति का अहं उसके सपनों की आहुति देने पर मजबूर करता है।

समाज में स्त्रियों से हमेशा से यही अपेक्षा रही है कि अपने प्रति हो रहे अत्याचारों को चुपचाप ऊह तक किए बिना सहे। गरीब औरतें तो अमीरों के हाथों खिलवाड़ की वस्तु बन गयी थी। पुरुष की इस पाशविक मनोवृत्ति की झलक 'दामिनी में संजीव ढंग से प्रकट हुई है। दामिनी गरीब परिवार की औरत होने के कारण, उससे यह अपेक्षा की जाती है कि अपने पति के घर में हुए बलात्कार को देखकर वह रहे। उसके खिलाफ आवाज न उठाए। स्वयं अपने पिता द्वारा पागल साबित किए जाने पर भी दामिनी की आक्रोशता को कोई नुकसान नहीं पहुंचा पाता। यह महिला शक्ति और उनकी मानसिक दृढ़ता का उदाहरण दर्शाने वाला फिल्म है।

आर्थिक विपन्नता महिलाओं को देह व्यापार की ओर ले जाती है। उसका मांसल शरीर सोने के भाव में बिकता है। मधुर भंडारकर की फिल्म इस सत्य का सजीव उजागर करती है। 2001 में रिलीज हुई इस फिल्म ने समाज के विभिन्न विषयों को छुआ और मनुष्य की पशुवत् प्रवृत्ति को सूक्ष्मता से दिखाया।

माता पिता के निधन के बाद मुंबई में अपने अंकल के साथ मजबूर होकर रहने वाली मुमताज का जीवन नरक से भी बदतर बन जाता है। मुंबई के मशहूर गुंडे से वह विवाह करती है। एक औरत के लिए इससे हृदय विदारक घटना और क्या हो सकती है कि जानबूझकर वह ऐसे रिश्ते में फँसे। उसे डांस बार में काम करने मजबूर किया जाता है। अपने बच्चों की देखभाल करती हुई नशे में धुत लोगों के साथ वह नृत्य करती है। वह मन ही मन छटपटाती है। पर इस गंदे पेशे ने उसे जानवरों की तरह जकड़ लिया है, हालांकि वह यह महसूस करती है कि इससे मुक्त होना असंभव है।

मातृत्व की सहज ममता से परिपूर्ण मुमताज यह सोचती है कि अपने पुत्र अभय को वह एक अच्छा मर्द बनाएगी जो उसके पिता से भिन्न होगा। इस गंदी नाली में वह उसे हरगिज गिरने नहीं देगी।

लोग उसकी बेटी पर गंदी नजर के उद्देश्य से इस पेशे पर लाने की बात करते हैं। तब वह क्रोधित हो उठती है।

वह सिसक सिसक कर रोती है। उसके सपने टूटकर चकनाचूर हो जाती है जब वह अपने बेटे द्वारा गोली चलाते हुए देखती है। वह अपने बच्चों में अपना अच्छा भविष्य देखना चाहती थी, लेकिन उसमें वह अपना अतीत ही पाती है। वह अंत में बार में फिर जाकर जुड़ जाती है। अपना वजूद ढूंढते रह जाती है।

रोमांटिक फिल्मों में संजय लीला भंसाली की 'हम दिल दे चुके सनम' में भारतीय स्त्री की संस्कृति की अनुपम झलक नंदिनी किरदार के माध्यम से झलकती है। एक मशहूर गायक की बेटी अपने पिता के शिष्य समीर से प्यार करती है। पर उसका विवाह वनराज वकील के साथ हो जाती है। वह समीर की याद में अपने पति के साथ कठोर व्यवहार करती है। भारतीय संस्कृति में पति परमेश्वर के dialouge से बाहर उसकी सोच अपने प्रेमी समीर पर एकत्रित होती है। वह सोचती है कि इस गठबंधन का कोई अर्थ नहीं है। यह रिश्ता दिल से नहीं जुडा है। वह छुप छुप कर समीर को चिट्ठीयाँ लिखती है। समीर से मिलने वह लंडन तक निकल पडती है। पर जवानी की जोश में भले ही वह बहक जाती है, किन्तु जब पति वनराज स्वयं उसे अपने प्रेमी समीर के साथ मिलाने में लग जाता है तब उसे शर्मिंदगी का अहसास होता है कि यह उसने क्या किया? पत्नी धर्म को कलंकित कर दिया स मंगलसूत्र की पवित्रता प्रश्न चिन्ह बनकर आंखों के सामने आने लगती है। विवाह के पश्चात् पर पुरुष के बारे में सोचना भी भारतीय संस्कृति में निर्लज्ज है। वह चरित्र हीन नारी की गणना का प्रतीक होता है।

उसे वनराज पर गर्व होने लगता है। वह अपने किए पर शर्मिंदा होती है। समीर से मिलने पर वह कहती है कि समीर तुमने मुझसे बहुत प्यार किया। इस कारण तुमसे मिलने के लिए मैं सात समंदर पार कर आई हूँ, पर आज हमारे सामने का यह सात कदम मैं पार नहीं कर पा रही हूँ। तुमने प्यार करना सिखाया पर प्यार निभाना मैंने अपने पति वनराज से सीखा। समीर जब गेले लगता है तब वह निर्जीव होकर खड़ी रहती है, क्योंकि वह सोचती है कि समीर को छूना अब सही नहीं है, क्योंकि वह शादीशुदा है। किसी और की अमानत है। यही भारतीय नारी की विशिष्टता है। वह समीर से कहती है कि मुझे अपने पत्नी धर्म को निभाना है। अब यह मेरी बारी है। उन्होंने अपना धर्म निभाया। पत्नी की इच्छा का साथ दिया। पर मुझे उनके साथ रहकर अपना धर्म निभाना है। यह कहकर वह समीर से अलविदा लेती है।

जातीयता के कारण नारी को जिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है, उसकी करुण यातना का मार्मिक चित्रण, संजय लीला भंसाली द्वारा निर्देशित फिल्म देवदास में सजीव ढंग से पिरोया गया है। इसमें पारो का चित्रण एक स्वाभिमानी युवती के रूप में हुआ है जो प्रेम से बढ़कर अपने आत्मसम्मान को प्रधानता देती है। चंद्रमुखी का पात्र एक अलग अस्तित्व लिए हुए हैं। वह पेशे से वेश्या है। देवदास के अनोखे व्यक्तित्व से प्रभावित होकर वह उस पर मुक्त हो जाती है। वेश्यावृत्ति में मजबूर होकर फँस कर तड़पनेवाली वाली चंद्रमुखी को देवदास पेड़ की उस ठंडी छांव की भांति प्रतीत होता है जहां उसे सुकून मिलता है। वह देव का अत्यंत ख्याल रखती है। पारो की मां का चरित्र इन सबसे अलग रंग के साथ उभरकर पाठकों के दिल में जगह बनाता है। वह आत्म सम्मान से परिपूर्ण स्त्री के रूप में चित्रित हुई है। वह ऐसी मां है जो अपनी बेटी को किसी भी कीमत पर अपना सम्मान नहीं खोने देती है।

वेश्यावृत्ति स्त्री परिस्थिति वश आकर ही स्वीकारती है। मजबूरी उसे इस गंदी गली में धकेल देती है।

'नीरजा' को सोनम कपूर की बेस्ट फिल्मों में गिना जाता है। फिल्म में प्लेन हाईजैक के दौरान एक एयर होस्टेस किस तरह बहादुरी से अपने नैतिक और सामाजिक कर्तव्य निभाती है इसका बेहतरीन प्रस्तुतीकरण किया गया है। नीरजा की बहादुरी और निर्णय लेने की क्षमता तब भी दिखाई देती है जब उससे भनक लगती है कि आतंकी सारे पासपोर्ट इकट्ठा कर अमेरिकी नागरिकों को मार सकते हैं। वह अपने साथियों के साथ अमेरिकी के पासपोर्ट छिपा देती है और आतंकियों की योजना में बाधा उत्पन्न कर देती है। राम माधवानी द्वारा निर्देशित यह फिल्म स्त्री के धैर्य बुद्धिमत्ता और दृढ़ता का जीता जागता उदाहरण है।

आज की पीढ़ी में कभी कभी स्त्रियों को उनकी शिक्षा को लेकर मतभेद के दायरे में लाया जा रहा है। इसका ज्वलंत उदाहरण है, फिल्म -'इंग्लिश -विग्लिश'। यह ऐसी महिला की कहानी है जो इंग्लिश भाषा में अपने आपको व्यक्त नहीं कर पाती है। शशी नामक किरदार के जरिये सूक्ष्मता के साथ दिखाया गया है कि किस तरह अंग्रेजी नहीं जाननेवाला शख्स Bank, Airport या बड़े होटल जाने से घबराता है। वह एक सफल माँ और गृहिणी है, किन्तु स्वयं उसके बच्चे और पति उनका निरादर करते हैं, क्योंकि वह अंग्रेजी बोल नहीं सकती।

New york में शशि एक restorant में अपने लिए कॉफी खरीदने जाती है तो उससे अंग्रेजी में ऐसी बात की जाती है कि बेचारी घबरा जाती है। अंग्रेजी में जब उसके आसपास लोग बात करते हैं तो उसे नींद आने का बहाना बनाकर वहाँ से उठती है, ताकि उनके बीच वह बेवकूफ न बने। अपनी बेटी के स्कूल में मीटिंग में जाने के लिए भी वह कतराती है क्योंकि बेटी उसे शर्मिंदगी वश डांट ना दे, इस बात का भय उसके मन में रहता है। मगर शशि हार नहीं मानती। वह न्यूयॉर्क जाकर इंग्लिश क्लास में जाती है। वहां अंग्रेजी सीखने का उसका प्रयास कई हद तक सफल भी होता है। वह अपने आप में बदलाव महसूस करती है। वहां का फ्रेंच पुरुष उस की ओर आकर्षित होकर उसकी सुंदरता की तारीफ भी करता है जो उसे अच्छा नहीं लगता। लेकिन इस घटना से वह अपने आप पर अभिमान सा महसूस करती है और उसकी एक नई यात्रा शुरू होती है।

हिंदी सिनेमा का सफर एक लंबी यात्रा से कम नहीं है। आज के बदलते दौर में नारी का रोल वही नहीं रहा। उसके किरदार भिन्न है। जैसे पुराने जमाने के फिल्मों में नारी के मांसल सौंदर्य और रोमांटिक किरदारों की प्राथमिकता थी। उसे डरी, सहमी और संयमशील के रूप में प्रतिष्ठित किया जाता था। उसके चरित्र के विकास को एक सीमा निर्धारित की जाती थी। 'हीरो' के साथ गाना और अंत में विवाह। पर युग में बदलाव के साथ यह दृष्टिकोण भी बदला। नारी अबला नहीं है। वह मर्द के हवस का शिकार नहीं है। उसकी अपनी एक पहचान है, गरिमा है। इसका उदाहरण है राजेश खन्ना की बहूचर्चित सिनेमा 'आराधना'। 1969 में रिलीज हुई आराधना की प्रमुख नायिका वंदना है। इस किरदार को शर्मिला टैगोर द्वारा अति आकर्षक रूप में निभाया गया। वंदना जो अरुण नामक युवक से प्यार करती है और विवाह पूर्व गर्भ धारण कर लेने के कारण उसे कई सामाजिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वह अरुण को खो बैठती है अर्थात उनका निधन हो जाता है। वह अपने बच्चे को जन्म देकर उसे पालने का फैसला करती

है। हां यहाँ वंदना का चरित्र एक साहसी युवती के समान हमारे समक्ष उभर कर आता है जो परिस्थितियों से घबराकर नहीं भागती, बल्कि उनका सामना करती है। वह बच्चे को आश्रम में पालने छोड़े बगैर एक दंपति को सौंपती है। अपने मातृत्व को पूरा निभाने वहां वह उस बच्चे की देखभाल करने वाली आया के रूप में काम करती है। अंत में वह अपने बेटे से मिल जाती है। यहीं इस त्यागशील नारी का परिचय खत्म होता है।

1974 में रिलीज हुई कोरा कागज की प्रमुख नायिका अर्चना है। इस किरदार को हिंदी की मशहूर फिल्म अभिनेत्री जया भादुरी ने निभाया। अर्चना पढ़ी -लिखी समझदार और सुशील लड़की है जो कि ऊँचे घराने से है मगर उसमें अमीर होने का गुरुर नहीं है।

वह अपनी मां के आरजू के खिलाफ जा कर सुकेश से प्रेम विवाह तो करती है, पर अपनी मां का दिल ना टूटे इस कारण उनकी बात में हामी भरती है और वही करती है जो माँ चाहती है।

मां का अहं अर्चना की जिंदगी को तहस-नहस कर देता है। वह अपनी मां की बातों में आकर सुकेश के स्वाभिमान को ठेस पहुंचाती है। सुकेश को समझती भी है लेकिन मां का दिल ना टूटे इसलिए वह खामोश रह जाती है। सिनेमा का अन्य मुख्य पात्र है अर्चना की मां जोकि बहुत घमंडी महिला है उन्हें अपनी दौलत का गुरूर इतना है कि इस कारण अपनी बेटी की जिंदगी तबाह भी हो जाए तो उन्हें इसकी तनिक भी चिंता नहीं। उनकी मान्यता है कि अमीर का रिश्ता अमीर से जुड़े तो वह सफल रिश्ता सिद्ध होगा।

1978 में रिलीज हुई सत्यम् शिवम् सुंदरम् एक औरत की दर्द भरी दस्तान का जीता जागता उदाहरण है। इसकी प्रमुख नायिका रूपा है जिसे बचपन से ही अपने पिता और गांव वालों के ताने का शिकार होना पड़ता है। नाम रूपा होने पर भी वह कुरूप लड़की के नाम से मशहूर है। क्योंकि उसके चेहरे पर एक हादसे के कारण जल जाने के दाग है। उसके कंठ में मा सरस्वती का वास कहा जा सकता है क्योंकि उसकी आवाज में उतनी ही मीठास थी। सारा गांव भोर होते ही उसकी आवाज सुनकर जागता। कोई उससे विवाह करने तैयार नहीं होता। अंत में जब उसका विवाह हो जाता है तब भी वह कई बाधाओं का सामना करती। मगर अपने पिता को तकलीफ ना पहुंचे इस कारण चुप चाप सब कुछ सहती है।

पत्नी होने पर भी उसे प्रेमिका के रूप में राजीव का प्यार हासिल करना पड़ता है। जब वह मां बनती है तो उसे जलील किया जाता है कि वह बदचलन स्त्री है क्योंकि राजीव उसे अपना बच्चा कहने से इंकार कर देता है। नारी की बेबसी का इतना मार्मिक चित्रण कहीं नहीं देखा जा सकता है। वह राजीव को श्राप देकर उसके जीवन से चली जाती है। जब सारा गांव तूफान और बाढ़ से बर्बाद हो जाता है तब राजीव उसे अपना लेता है। अपनी गलती स्वीकार करता है तब सब कुछ पुन: शांत हो जाता है।

हिंदी सिनेमा में समय के साथ-साथ बदलाव आता गया। नायिका को केवल रोमांटिक गीतों तक सीमित कर उन्हें अपने टैलेंट को प्रदर्शित करने का प्लेटफार्म दिया। उसे डरी सहमी और रोमांटिक पात्रों तक सीमित करते हुए सामाजिक प्रश्नों से जूझती हुई स्त्री के रूप में किरदार प्रदान किया जा रहा है नारी में आत्मविश्वास है साहस और धैर्य है बुलंदियों को छूने की

महत्वाकांक्षा है। फिर उसे ऐसे किरदार क्यों न प्रदान किया जाए। आज की पीढ़ी सिनेमा में ज्यादा रुचि रखती है। ऐसे में नारी को प्रेरित कर उसे 'bold role' प्रदान किया जाए तो वह आने वाली पीढ़ियों के लिए मार्गदर्शक साबित होगा। मधुबाला और मीनाकुमारी जैसी अभिनेत्रियों ने यह साबित किया कि फिल्मों में महिलाओं की भूमिका कितना सशक्त है। वैसे तो समाज में हर क्षेत्र में महिलाओं ने अपना योगदान दिया लेकिन film & industry में नारी की खूबसूरती को कुछ अलग अंदाज से ही दिखाया गया है। हिंदी फिल्मों में महिलाओं को stereo type किरदार निभानी है। उन्हें या तो glamorous girl friend के रूप में दिखाया जाता है। पत्नियों और माताओं का त्याग, भूमिका चाहे जो भी हो, वे पुरुष के लिए एक एकमात्र पत्नी है।

भारतीय मीडिया उद्योग में आये परिवर्तन की लहरों ने हिंदी फिल्म उद्योग में भी प्रवेश किया। उसने हिंदी के लोकप्रिय सिनेमा को 80 के दशक में संचालित करने के तरीके से एक प्रस्थान के रूप में चित्रित किया और जानबूझकर एक उद्योग के रूप में इसे बदल दिया। हिंदी फिल्मों में महिला पात्रों के उपचार में बदलते pattern को समझने के लिए कई फिल्म नमूनों का विश्लेषण किया गया है। विश्लेषण में यह शामिल है कि किस तरह दर्शकों से विशेष रूप से उदारीकृत भारत में महिलाएं सिनेमा में नारीत्व के बारे में पूर्व कल्पित धारणाओं के अनुरूप रही है। जरूरत इस बात की है कि अधिक से अधिक महिलाओं को मास कम्युनिकेशन प्रोग्रामिंग स्तरों में शामिल किया जाए ताकि उनका दृष्टिकोण उस पुरुष को कमजोर कर दे जो पक्षपाती और गुप्त रूप से दुखदायी है। आज नारी किसी भी मामले में कम और घर की चार दीवारों में कैद नहीं है। वे उच्च शिक्षित है और उच्चतम पदों पर भी आसीन है। आज सिनेमा में किरदार निभाने वाली नायिकाओं को समाज में प्रतिष्ठित होकर देखा जाता है। पुरुष वर्ग उनके 'fan' बनने लगे हैं। समय बदल रहा है और साथ ही साथ लोगों का नजरिया भी बदल रहा है जो हमें भविष्य में अच्छे फिल्मों के लिए प्रेरित करेगा।

संदर्भ सूची :

1. फिल्म मदर इंडिया –1957, निदेशक –मेहबूब खान
2. मिर्च मसाला –1985, निदेशक खेतन मेहता
3. अभिमान –ऋषिकेश मुखर्जी 1973
4. चाँदनी बार –मधुर भण्डारकर 2001
5. हम दिल दे चुके सनम –1999, निदेशक –संजय लीला भंसाली
6. देवदास 1955–बिमल राय
7. नीरजा –2016–राम मधवानी
8. इंग्लिश विंगलिश –2012, गौरी शिन्दे
9. आराधना –1969, शक्ति सामंत
10. कोरा कागज –1974, अनिल गाँगुली
11. सत्यम् शिवम् सुंदरम –1978, राज कपूर

❒❒❒

एसोसिएट प्रोफेसर, राजीव गांधी मेमोरियल कॉलेज, कोटाथारा, जिला–पल्लाकड़, पिन–678521, मो. 9605921067

लोककला और संस्कृति के संरक्षण एवं प्रदर्शन में संग्रहालयों की भूमिका- (उत्तराखण्ड राज्य के विशेष संदर्भ में)

—प्राची रंगा

वेदों में हिमालय की तलहटी पर बसे हुए गढ़वाल प्रान्त का वर्णन मिलता है। ब्राह्मण ग्रन्थों में बद्रीनाथ का उल्लेख हुआ है।[2] ऐतरेय ब्राह्मण में उत्तरी कुरु प्रदेश का उल्लेख मिलता है। भौगोलिक रूप से डॉ० कटोच के अनुसार गढ़वाल कुमाऊँ और उसके आस-पास का प्रदेश उत्तर कुरु का ही एक अंग था।

भारत के सत्ताईसवें राज्य के रूप में उत्तराखण्ड राज्य का गठन उत्तरप्रदेश से पृथक कर यहां की विशिष्ट भौगोलिक परिवेश एवं पृथक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के कारण किया गया था। यह भारत के पर्वतीय राज्यों में से एक है जिसकी पहचान यहां के भौगोलिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विशिष्टताओं के कारण है अनेक ऋषियों की तपस्थली रहने के कारण इस राज्य को देवभूमि के नाम से भी जाना जाता है। उत्तराखण्ड राज्य की अपनी गौरवशाली ऐतिहासिक परम्परा के साथ-साथ यहां की ग्रामीण संस्कृति भी विशेष है, जो कि सम्पूर्ण भारतवर्ष में उत्तराखण्ड को अलग पहचान देती है। यहां के पारम्परिक वस्त्राभूषण, खान-पान, लोक संगीत, लोकवाद्य, लोकपर्व आदि अत्यन्त विशिष्ट हैं जिन्हें यहां के सर्वसाधारण समाज के साथ-साथ विभिन्न ग्रामीण, जनजातीय समाजों में आज भी देखा जा सकता है। विभिन्न संस्कृतियों को विलीन करती आधुनिकीकरण एवं भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया से लाभ और हानि दोनों ही हमें देखने को मिलती हैं। उत्तराखण्ड की लोक संस्कृति के विभिन्न अवयवों को सुरक्षित रखने के लिए नवीन पीढ़ी को यहां की ग्रामीण संस्कृति से परिचित कराने के लिए प्रमुख लोकवाद्यों, वस्त्राभूषणों, लोक-साहित्य एवं पाण्डुलिपियों को संग्रहालय में सुरक्षित रखना और प्रदर्शित किया जाना चाहिए। उत्तराखण्ड के प्रत्येक जिले में एक जिला- संग्रहालय की स्थापना करके यहां के इतिहास एवं ग्रामीण संस्कृति को प्रदर्शित किया जाना चाहिए। जिससे नयी पीढ़ी को अपनी मूल संस्कृति से जुड़ने की प्रेरणा मिल सके।

मूल शब्द - उत्तराखण्ड, संस्कृति, लोक कला, संगीत, नृत्य, वस्त्राभूषण, संग्रहालय।

उत्तराखण्ड भारत का पर्वतीय राज्य है यह 28°43′ से 31°27′ उत्तरी अक्षांशी व 77°34′ से 81°02′ पूर्वी देशान्तरों के मध्य स्थित है।[1] गढ़वाल कुमाऊँ के उत्तर के तिब्बत, नेपाल

और चीन, दक्षिण में उत्तरप्रदेश के मुरादाबाद, पीलीभीत, बरेली और बिजनौर जनपद, पश्चिम में हिमाचल प्रदेश तथा पूर्व में काली नदी है, जो कि इसे नेपाल से अलग करती है। उत्तराखण्ड को दो मण्डलों में बांटा गया है गढ़वाल और कुमाऊँ मण्डल पुराणों में गढ़वाल को केदारखण्ड एवं कुमाऊँ को मानसखण्ड कहा गया है।

गढ़वाल मण्डल में हरिद्वार, देहरादून, उत्तरकाशी, टिहरी, पौड़ी, चमोली एवं रुद्रप्रयाग जिले सम्मिलित हैं। जबकि कुमाऊँ मण्डल में अल्मोड़ा, नैनीताल पिथौरागढ़, चम्पावत बागेश्वर और उधमसिंह नगर शामिल हैं। उत्तराखण्ड का लगभग 90 प्रतिशत भाग पर्वतीय क्षेत्र है, शेष मैदानी है।

वेदों में हिमालय की तहलटी पर बसे हुए गढ़वाल प्रान्त का वर्णन मिलता है। ब्राह्मण ग्रन्थों में बद्रीनाथ का उल्लेख हुआ है।[2] ऐतरेय ब्राह्मण में उत्तरी कुरु प्रदेश का उल्लेख मिलता है। भौगोलिक रूप से डॉ0 कटोच के अनुसार गढ़वाल कुमाऊँ और उसके आस-पास का प्रदेश उत्तर कुरु का ही एक अंग था।[3] हिमालय की गोद में बसे इस राज्य की सबसे बड़ी गढ़वाल एवं कुमाऊँ क्षेत्र के ये विशिष्ट सांस्कृतिक अवयव हैं जो यहां के निवासिया एवं सस्कृति को पूरे देश से अलग बनाते हैं।

उत्तराखण्ड के लोक-साहित्य द्वारा यहां की सांस्कृतिक विरासत के विषय में पर्याप्त जानकारी मिलती है। जिनमें लोकगीत, लोकनृत्य, वाद्ययन्त्र, विभिन्न कलाएं वस्त्राभूषण एवं खान-पान आदि का पूर्ण ब्यौरा प्राप्त होता है। गढ़वाल में थड्या, नांगल, छोपती, लांग मैलो और चौफुला आदि गीत तथा नृत्य परम्परागत रूप से प्रचलित हैं, जबकि कुमाऊँ में छपेली, चांचरी, भगनौल झोडे र संस्कार एवं न्यौली गीतों का प्रचलन मिलता है। विभिन्न प्रकार के मांगलिक कार्यक्रमों एवं उत्सवों आदि पर इस प्रकार के लोक गीतों एवं लोक नृत्यों की परम्परा को सहज रूप से देखा जा सकता है। इन लोक गीतों को और अधिक सरस बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के लोक वाद्ययन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। इन वाचयन्त्रों को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है-[4]

1. धातु या घन वाद्ययन्त्र - मंजीरा, बि.ाई, करताल, चिमटा, कांसे की थाली, थाली आदि।
2. चर्म वाद्य यंत्र - नगाड़ा, ढोल, हुड़की, हुडका, डौंर, साइया, दमाऊं तबला, डफली आदि।
3. तार या तांत वाद्ययंत्र - एकतारा, सारंगी, दो तारा वीणा आदि।
4. सुषिर या फूंक वाद्ययंत्र - तुरही, रणसिहा, अकोरा, नागफणी, शंख, मोठंग, अलगोजा, मशकबीन आदि।
5. अन्य वाद्ययंत्र - हारमोनियम आदि।

इन वाद्ययन्त्रों का उत्तराखण्ड की लोक संस्कृति में विशेष महत्व है। बिणाई नामक वाद्ययंत्र को महिलाओं द्वारा ही बजाया जाता है। यह अब सामान्य प्रचलन से बाहर होता जा रहा है। वहीं ढोल का प्रयोग पारम्परिक रूप से देवताओं के जागर, विवाहोत्सव एवं अन्य सभी मांगलिक कार्यो के अवसर पर किया जाता है। यहां पर ढोल का निर्माण तांबे या साल की लकड़ी से किया जाता है जिसकी बाई पुड़ी पर बकरी की खाल तथा दाई पूड़ी पर बारहसिंगा या भैंस की खाल

चढ़ाई जाती है। ढोल उत्तराखण्ड का राज्य वाद्ययंत्र भी है। सामान्यत: ढोल और दमाऊ को साथ-साथ ही बजाया जाता है। उमस को उत्तराखण्ड में डर कहा जाता है। इसका वादन सिर्फ ब्राह्मण पुरोहित द्वारा ही किया जाता है। इसका अधिक प्रचलन हमें गढ़वाल क्षेत्र में देखने को मिलता है।

उत्तराखण्ड अपने विशेष परिधान के लिए भी जाना जाता है। प्रत्येक समाज की तरह उत्तराखण्ड का पहनावा भी यहां की प्राचीन परम्पराओं, लोक विश्वासों, लोक जीवन, जलवायु तथा सामाजिक-आर्थिक स्थिति का दर्पण है। यहां पर मूलत: दो प्रकार के परिधान पाये जाते हैं जिन्हें कुमाऊनी एवं गढ़वाली परिधानों के रूप में विभाजित किया गया है। कुमौंऊनी पुरुषों द्वारा पारम्परिक रूप से धोती कुर्ता पैजामा, सुराब, कोट, भोटू कमीज टाक और टोपी को पहने का प्रचलन है। जबकि महिलाओं द्वारा घगरा, लंहगा, आंगड़ी, खान चोली, थाती आदि पहना जाता है। बच्चों को सामान्य रूप से झागुलि, झागुल कोट, संतराथ आदि वस्त्र पहनाये जाते हैं। गढ़वाली पुरुषों द्वारा पारम्परिक रूप से धोती, चूड़ीदार पजामा, सफेद टोपी, पगडी, वास्कट, गुलबंद, मिरजई आदि धारण किया जाता है, जबकि महिलाएं आंगड़ी गाती, धोती आदि चस्त्रों को धारण करती हैं।[5] विभिन्न प्रकार के उत्सवों मेलों एवं मांगलिक कार्यक्रमों के अवसर पर इन सभी वस्त्रों का प्रयोग हम उत्तराखण्ड में सहजता से देख सकते हैं।

वस्त्रों के साथ-साथ आभूषणों का भी अत्यधिक महत्व है। गढ़वाल एवं कुमाऊं के विभिन्न गीतों में यहां के आभूषणों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है जिनमें शिरोभूषण के रूप में सीसफूल मांगटीका, बांदी (गढ़वाल में अधिक प्रयोज्य) बाली (बीरा बाली, छोकरों बाली, पतली बाली) आदि प्रमुख हैं। नासिकाभूषणों में नथ; नथुली, बुलॉक (बुलाँकी), लौंग, बीरा एवं बिड का महत्वपूर्ण स्थान है। कर्णाभूषणों में कुण्डल, बल्ली, मुनडे, कनफूल उत्तरौले, झुपझुपी, बुन्दिया (बुक्सा जनजाति में) दुरिया (बुक्सा जनजाति में) बुजनी (कान का कुण्डल), गोरख गढ़वाली पुरुषों द्वारा धारण किया जाता है) आदि का विशेष स्थान है। ग्रीवाभूषणों में ग्लोबन्छ, चम्पाकली, हंसुली, मटरमाला, रूपमाला, सतलड़ी हार, पंचलड़ी हार, मंगलसूत्र, कंठी, चन्द्रहार, लार, मोहनमाला आदि लोकप्रिय हैं। हस्ताभूषणों में धागुले (ठोस कड़े), ठेके, पौची, दस्तोबन्द, चूडिया, कंगन, गोखले (बाजूबन्द) मुदरी, छल्ला आदि प्रमुख हैं। कटि एवं पाद आभूषणों में तगड़ी या करवनी, आंवर (पैर का कड़ा), पौटा लच्छा, जेवरी, नूपुर, कण्डवा, बिछुवा का प्रयोग अधिक किया जाता है। इन सभी वस्त्राभूषणों को पारम्परिक रूप से विभिन्न उत्सवों, मांगलिक कार्यक्रमों पर धारण किया जाना आवश्यक माना जाता है। विवाहित महिलाओं की पहचान आभूषणों के आधार पर किया जाना सहज होता है। विवाहित स्त्री की पहचान गले में चरेऊ पहनने से होती है।[6] उत्तराखण्ड के आभूषण में नथ, नथुली की विशेष पहचान है। यह विवाह के अवसर पर वधू एवं घर की विवाहित महिलाओं द्वारा धारण की जाती हैं।

वर्तमान समय में जहां छोटे आभूषणों को धारण किये जाने की परम्परा जन्म ले रही है वहीं उत्तराखण्ड की नथुली अपने आप में बड़े आकार एवं भारी वजन के कारण आकर्षण का केन्द्र

रही है। इस आभूषण को चर्चा प्राचीन लोकगीतों से लेकर वर्तमान समय में बनने वाले गढ़वाली और कुमाऊंनी गीतों में भी मिलता है। टिहरी गढ़वाल की नथ आज भी विशेष रूप से प्रसिद्ध है।[7]

लोक कलाओं की दृष्टि से भी उत्तराखण्ड एक सम्पन्न राज्य है। यहां पर विभिन्न त्यौहारों के अवसर पर महिलाओं द्वारा घर में घ्पण बनाई जाती है। इसके लिए गेरू के द्वारा घर के आंगन एवं सीढ़ियों को लीपा जाता है तथा पिसे चावलों के चूर्ण से आकर्षक चित्रों का निर्माण किया जाता है। जिनमें सूर्य चौकी, नामकरण चौकी दर चौकी, जन्मदिवस चौकी, विष्णु पीठ, शिव पीठ, शिवशक्ति पीठ, सरस्वती पीठ आदि प्रमुख हैं। इस प्रकार के चित्रों के निर्माण की योग्यता महिलाओं को परम्परा से ही मिलती है। हरेले आदि पर्वो पर मिट्टी के डिकारे बनाये जाते हैं। ये डिकारे भगवान के प्रतीक माने जाते हैं। दरवाजो पर विभिन्न जानवरों एवं पक्षियों के चित्रों के निर्माण की परम्परा भी गढ़वाल एवं कुमाऊं में देखी जाती है।

उत्तराखण्ड की विभिन्न लोक कलाओं के कारण ही इस राज्य एवं यहां के निवासियों की अपनी पृथक पहचान है। इनके संरक्षण एवं संवर्धन के लिए संग्रहालयों का प्रयोग किया जाना परम आवश्यक प्रतीत होता है उत्तराखण्ड में लोक संस्कृति से सम्बन्धित संग्रहालयों की संख्या बहुत अधिक नहीं है। ऐसे संग्रहालय गढ़वाल एवं कुमाऊँ दोनों ही मण्डलों में स्थापित किये जाने चाहिए। जहां पर लोक परिधार आभूषण, चित्रकला, नृत्य वाद्ययंत्रों पाण्डुलियों एवं लोक साहित्य से सम्बन्धित विभिन्न विथिकाएं बनायी जानी चाहिए। जिससे कि नवीन पीढ़ी और बाहर से आने वाले दर्शक इनका आसानी से दर्शन एवं अध्ययन कर सकें। ऐसा करने से लोक संस्कृति को न सिर्फ राजकीय प्रोत्साहन मिलेगा अपितु साधारण जनमानस के हृदय में अपनी ग्रामीण एवं लोक संस्कृति के प्रति उच्च भावों का प्रभाव बढ़ेगा जिससे वे अपनी संस्कृति के प्रति और अधिक आकृष्ट होकर उसे भविष्य में भी समृद्धशाली बनाये रखने का प्रयास कर सकेंगे।

संदर्भ सूची :

1. रावत, नवीन (सम्पा.), उत्तराखण्ड ईयर बुक, विनसर पब्लिकेशन, देहरादून, 2017, पृ. 123
2. रावत डॉ अजय सिंह, उत्तराखण्ड का समग्र राजनैतिक इतिहास, अंकित प्रकाशन, हल्द्वानी, नैनीताल, 2017, पृ.
3. वही, पृ. 8
4. http://gyanacademy.in/uttarakhand-major-musical-instruments/
5. https://uttarakhandexpress.in/some-traditional-dresses-of uttarakhand/
6. https://www.jagran.com/uttarakhand/dehradun-city-uttarkhandstraditional-clothes-and-jewelery-is-very-special-18623386.html
7. वही

❑❑❑

शोधार्थी, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, गुरूकुल कांगडी समविश्वविद्यालय हरिद्वार-249404, उत्तराखंड, मो. 9991605000

विवाह विच्छेद का बच्चों पर शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक प्रभाव

—प्रो. अर्चना श्रीवास्तव
—ममता आर्या

विवाह-विच्छेद विवाह को विघटित कर देता है, जिससे पति-पत्नी के मध्य सभी सम्बन्ध समाप्त हो जाते है वे पुनः अविवाहित की प्रस्थिति में आ जाते है। विवाह-विच्छेद को तलाक भी कहते है।

विवाह विच्छेद का प्रभाव जब पारिवारिक संरचना एवं प्रकार्य के सन्दर्भ में देखा जाता है तो सर्वाधिक प्रभावित पक्ष पारिवारिक संरचना की एक इकाई जो उस परिवार का भविष्य है, अर्थात् परिवार के बच्चे सर्वाधिक प्रभावति होते है एक ओर सामाजीकरण की प्रक्रिया जो विभिन्न आयु सोपानों में विभाजित होती है, प्रत्येक स्तर पर किसी एक की कमी अर्थात् पिता या माता का न होने उनके मूल संवेगात्मक भावात्मक जीवन को प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न आयु सोपानों/अवस्थाओं में बच्चों का शारीरिक स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में विभिन्न आयु वर्गो के बालकों का अध्ययन किया गया एवं अध्ययन के आधार पर पाया गया कि विवाह विच्छेद का बच्चों पर शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक प्रभाव होता है एवं किशोरावस्था में सर्वाधिक प्रभाव प्राप्त आंकड़ों के आधार पर पाया गया।

कुंजी शब्दः-

विवाह विच्छेदः- विधि या नियम के अनुसार पति-पत्नी का संबध-विच्छेद।

याचिकाः- किसी निर्णय के विरूद्व न्यायालय से की हुई प्रार्थना।

परिवारिक संरचना :- मुख्य आधार एक स्त्री और पुरूष के बीच के सम्बन्ध जो विवाह द्वारा पति-पत्नी के सम्बन्धों में बदल जाते हैं।

परिवार की संरचना का दूसरा आधार परिवार के बच्चे

परिवार की संरचना का तीसरा आधार सामान्य निवास स्थान या घर इस प्रकार पति-पत्नी बच्चे सामान्य निवास परिवार की संरचना को बनाते है।

प्रस्तावना

वर्तमान में विवाह मात्र एक समझौता बनकर रह गया है आज छोटी-छोटी बातों से ही विवाह विच्छेद हो रहे हैं जिसका प्रभाव अबोध बच्चों को भुगतना पड़ रहा है। पति पत्नी के अलग होने से पूरा परिवार टूट कर बिखर जाता है। उचित

पालन-पोषण के लिये माता-पिता दोनों का साथ, प्यार व दुलार की आवश्यकता होती है, किन्तु विवाह विच्छेद पश्चात् बच्चा माता-पिता में से किसी एक से दूर हो जाता है और यह स्थिति उसके कोमल मन को अंदर से तोड़ देती है जिससे बच्चों की मानसिक, शारीरिक एवं सामाजिक स्थिति प्रभावित होती हैं। कुछ बच्चे माता-पिता के बीच आई इस दूरी को आसानी से सहन नही कर पाते और अवसाद से ग्रसित हो जाते हैं।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन

प्रस्तुत शोध पत्र हेतु शोधकर्ता द्वारा किये गये पूर्व अध्ययन साहित्य का विवरण निम्नानुसार है-

Marlene and Maya, Adolescent-Parent attachment: Monds that support healthy development (2004) ने किशोरों का माता-पिता से अलगाव नामक विकय पर अध्ययन किया। तथा अपने अध्ययन में पाया कि माता-पिता के बीच लगाव की निरन्तरता एवं विश्वास को कायम रखकर सम्बन्धों को स्थायी बनाया जा सकता है।

Mackay Rosse, The Impact of Family Structure and Family change on child outcome: A Personal reading of the research literature socal policy journal of Newujiland (2005) ने बच्चों के पारिवारिक संरचना एवं परिवर्तन का प्रभाव नामक विकय पर अध्ययन किया जिसमें पाया गया कि पारिवारिक अलगाव से जुड़े बच्चे बुरे अनुभव लिये हुये थे और उनकी मानसिक दशा काफी रूग्ण करने वाली थी।

Naomi Waulterickx, Anneleen Gouwy, Piet Bracke, Depression and Divorce Long-Term Efects on Adults Children (2006) के अनुसार बचपन में माता-पिता के तलाक का प्रभाव वयस्क में अवसाद का कारण बनता है। इन्होंने अपने अध्ययन में बेलिजियम के 47227 पुरूषों और महिलाओं पर अध्ययन किया जिसमें इन्होंने पाया कि माता-पिता का तलाक वयस्कों को आजीवन प्रभावित करता है।

मेरी सहेली पत्रिका के सितम्बर (2017) में प्रकाशित एक लेख के अनुसार तलाक का बच्चों के मानसिक स्तर और स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। जिससे उनकी स्कूल की परफॉरमेन्स खराब होने लगती है।

प्रभासाक्षी पत्रिका के अक्टूबर (2017) में प्रकाशित एक लेख के अनुसार तलाक के बाद बच्चों की कस्टडी को माता या पिता किसको दी जाये जिससे कि बच्चे का समाजीकरण सही रूप से हो सके। बच्चे की भलाई व उसका हित सर्वोपरि होता है। कानून इस बात पर गौर करते हुये ही फैसला करता है कि बच्चा माता-पिता किसके साथ ज्यादा सुरक्षित है, 95 प्रतिशत मामलों में बच्चे की अभिरक्षा का भार माँ को ही सौंपा जाता है।

Jarar Ali, Impact of Divorce on childrens life (2021) के अनुसार तलाक बच्चों के उम्र और विकास पर प्रभाव डालता है। तलाक कभी भी सकारात्मक नही माना सकता तलाक के पश्चात् बच्चे अपने को असहाय महसूस करते है, जिसका असर उन पर जिन्दगी भर रहता है।

शोध अन्तराल-

पूर्व में विवाह विच्छेद का बच्चों पर प्रभाव से सम्बन्धित जो भी अध्ययन हुए है उनमें मैंने पाया कि विवाह विच्छेद का बच्चों पर प्रभाव पर अभी तक अध्ययन मुख्य रूप से उनके आयु के आधार पर पड़ने वाले प्रभावों पर नही किया गया है। अत: प्रस्तुत शोध पत्र में विवाह विच्छेद का बच्चों पर उनकी आयु के अनुसार पड़ने वाले शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक प्रभावों का अध्ययन किया गया है।

अवधारणात्मक व्याख्या-

विवाह विच्छेद का अर्थ-

विवाह-विच्छेद विवाह को विघटित कर देता है, जिससे पति-पत्नी के मध्य सभी सम्बन्ध समाप्त हो जाते है वे पुन: अविवाहित की प्रस्थिति में आ जाते है। विवाह-विच्छेद को तलाक भी कहते है। यह एक ऐसा विधान है जो समाज द्वारा स्वीकृत है तथा वैवाहिक असफलता से सम्बन्धित है। विवाह-विच्छेद वैधानिक रूप से विवाह की अन्तिम समाप्ति है।

विवाह विच्छेद की परिभाषा-

हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 (1976 तक संशोधित) के अनुसार ''कोई भी विवाह, जो चाहे इस अधिनियम के लागू होने से पहले या बाद में हुआ हो, पति या पत्नी द्वारा किये गये आवेदन के आधार पर तलाक के एक आदेश द्वारा तोड़ा जा सकता है।''

अध्ययन के उद्देश्य-

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में अध्ययन की विकाय प्रकृति के आाधार पर निम्नलिखित शोध उद्देश्य निर्धारित किये गये है-

1. विवाह विच्छेद का हिन्दू बच्चों पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना

परिकल्पना

प्रस्तुत शोध कार्य हेतु निम्न परिकल्पनाओं का निर्धारण किया गया है।

1. विवाह विच्छेद का बच्चों पर पूर्ण रूप से नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
2. विवाह विच्छेद (तलाक) का सबसे अधिक प्रभाव किशोरावस्था में पड़ता है।

शोध अभिकल्प एवं पद्धतिशास्त्र

विवाह विच्छेद प्रभावित महिलाओं की स्थिति से सम्बन्धित प्रस्तावित शोध कार्य विवरणात्मक शोध अभिकल्प पर आधारित है। अध्ययन में कुमाऊँ मण्डल के नैनीताल जनपद की विवाह विच्छेद प्रभावित महिलाओं व बच्चों की मानसिक, पारिवारिक, सामाजिक, एवं आर्थिक स्थिति, विवाह विच्छेद के कारणों तथा विवाह विच्छेद का बच्चों पर पड़ने वाले प्रभावों को जाँचने का अध्ययन किया गया है।

समग्र एवं निदर्श: प्रस्तुत शोध अध्ययन में समग्र के रूप में नैनीताल जिले की वर्ष 2018-2019 के विवाह विच्छेद के कुल 251 पंजीकृत केसों से हिन्दू विवाह विच्छेदित महिलाओं को अलग किया गया जिनकी संख्या 82 थी, जिनमें से 25 प्रतिशत ऐसी विवाह विच्छेदित महिलाओं को चयनित किया गया जिनके बच्चे थे। बच्चों की कुल संख्या 45 है जिन्हे अध्ययन

में शामिल किया गया है, जो कि संगणना विधि पर आधारित है। इस प्रकार इनसे प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर विवाह विच्छेद का बच्चों पर पड़ने वाले शारीरिक, मानसिक व सामाजिक प्रभावों का अध्ययन किया गया है।

तथ्य संकलन के स्त्रोत

प्रस्तुत शोधकार्य के लिये अध्ययन विषय से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन प्राथमिक व द्वितीयक स्त्रोत द्वारा किया गया है। प्राथमिक स्त्रोत के अर्न्तगत सूचनाओं का संकलन साक्षात्कार अनुसूची तथा निरीक्षण विधि के द्वारा किया गया है। तथ्य संकलन के लिये शैशवावस्था के बच्चों की माताओं से विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछकर सूचनाएं एकत्र की गयी एवं बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था के बच्चों से अवलोकन एवं साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर सूचनाएं एकत्र की गयी।

शोध पत्र में विषय से सम्बन्धि आकड़ें एकत्र करने के लिये साक्षात्कार अनुसची का निर्माण किया गया, जिसमें उद्देश्य के आधार परवांछित सूचनाएं प्राप्त करने के लिये विभिन्न प्रश्न निर्मित किये गये एवं तथ्यों का संकलन किया गया।

तालिका नं0-1.1

बच्चों की उम्र के आधार पर वर्गीकरण

क्र0सं0	उम्र	सूचनादाताओं की संख्या	प्रतिशत
1	1-5 वर्ष	8	18
2	6-12 वर्ष	21	47
3	12-18 वर्ष	16	36
कुल		45	100

उपरोक्त तालिका के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि 18 प्रतिशत बच्चे 1-5 वर्ष के है जो कि शैशवावस्था में आते है। 47 प्रतिशत बच्चे 6-12 वर्ष के है, जो बाल्यावस्था में आते है तथा 36 प्रतिशत बच्चे 12-15 वर्ष के है जो किशोरावस्था में आते है। अत: शोध में यह पाया गया कि में सबसे अधिक बच्चे बाल्यावस्था के हैं।

शारीरिक प्रभावों के आधार पर वर्गीकरण

तालिका नं0-1.2 (अ)

क्र0सं0	शैशवावस्था पर प्रभाव	सूचनादाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	शारीरिक रूप से स्वस्थ्य	2	25
2.	शारीरिक रूप से अस्वस्थ्य	4	50
3.	सामान्य	2	25
कुल		8	100

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि 25 प्रतिशत बच्चे शारीरिक रूप से स्वस्थ्य है, 50 प्रतिशत बच्चे शारीरिक रूप से अस्वस्थ्य है तथा 25 प्रतिशत बच्चो का शारीरिक स्वास्थ्य सामान्य

रहता है। अत: निष्कर्ष यह निकलता है कि विवाह विच्छेद के पश्चात् शैशवावस्था में बच्चों पर शारीरिक रूप से प्रभाव अधिक पड़ता है। इस उम्र में शारीरिक विकास तेजी से होता है बच्चो के शारीरिक विकास के लिये उन्हे सही पोषण का मिलना जरूरी है। चूँकि इस आयु के बच्चे अपनी माता के साथ ही रहते है,तो कभी-कभी आर्थिक कमी के कारण उनको पोषण ठीक प्रकार से नही मिल पाता है। जिससे उनका स्वास्थ्य अस्वस्थ्य रहता है।

तालिका नं0-1.2 (ब)

क्र0सं0	बाल्यावस्था पर प्रभाव	सूचनादाताओं की संख्या	कुल
1.	शारीरिक रूप से स्वस्थ्य	6	29
2.	शारीरिक रूप से अस्वस्थ्य	10	48
3.	सामान्य	5	24
कुल		21	100

उपरोक्त तालिका के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि 29 प्रतिशत बच्चे शाररिक रूप से स्वस्थ्य है, 48 प्रतिशत बच्चे शारीरिक रूप से अस्वस्थ्य है तथा 24 प्रतिशत बच्चो का स्वास्थ्य सामान्य रहता है। शारीरिक वृद्धि के हिसाब से यह उम्र बच्चे के विकास की सबसे पेचिदा उम्र है। सही पोषण ओर खान-पान बच्चे के विकास पर प्रभाव डालता है। सही पोषण के अभाव में उनका शारीरिक विकास ठीक प्रकार से नही हो पाती है।

तालिका नं0-1.2 (स)

क्र0सं0	किशोरावस्था पर प्रभाव	सूचनादाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	शारीरिक रूप से स्वस्थ्य	3	19
2.	शारीरिक रूप से अस्वस्थ्य	6	38
3.	एल्कोहोलिक/धुम्रपान का सेवन	7	44
कुल		16	100

उपरोक्त तालिका के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि 19 प्रतिशत बच्चे शाररिक रूप से स्वस्थ्य है, 38 प्रतिशत बच्चे शारीरिक रूप से अस्वस्थ्य है एवं 44 प्रतिशत बच्चे माता-पिता के तलाक के पश्चात् गलत संगत में फस गये थे जैसे वे एल्कोहल लेने लग गये या उन्हे धूम्रपान जैसी लत लग गयी थी जिस कारण उनके शारीरिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा।

मानसिक प्रभावों के आधार पर वर्गीकरण

तालिका नं0-1.3 (अ)

क्र0सं0	शैशवावस्था पर प्रभाव	सूचनादाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	सामान्य	3	38
2.	चिड़चिड़ा	1	13
3.	संकोची	4	50
कुल		8	100

उपरोक्त तालिका के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि शैशवावस्था में 38 प्रतिशत बच्चे सामान्य रहते है। 13 प्रतिशत बच्चों का स्वभाव चिड़चिड़ा था तथा 50 प्रतिशत बच्चे संकोची प्रवृत्ति के थे। उनकी माताओं के अनुसार जब बच्चा अपने साथ के अन्य बच्चों के पिता को उनके साथ देखता है तो उसे भी अपने पिता की कमी महसूस होती है तब वह बार-बार अपने पिता के बारे में पूछते है या पिता की बात होते ही उसके स्वभाव में चिडचिड़ापन हो जाती है।

तालिका नं0-1.3 (ब)

क्र0सं0	बाल्यावस्था पर प्रभाव	सूचनादाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	सामान्य	5	24
2.	अक्रामक	9	43
3.	संकोची	7	33
	कुल	21	100

उपरोक्त तालिका के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि बाल्यावस्था में 24 प्रतिशत बच्चों का स्वास्थ्य सामान्य था। 43 प्रतिशत बच्चें स्वभाव से आक्रामक थे तथा 33 प्रतिशत बच्चे संकोची थे। इस आयु तक बच्चे स्कूल में तथा अपने दोस्तो के साथ ज्यादा समय व्यतीत करते है, जिनमें से उसके माता-पिता के तलाकशुदा होने पर बहुत से बच्चे उन्हें इस बात के लिये चिड़ाते है, जिस कारण उनका स्वभाव कभी-कभी आक्रामक हो जाता है।

तालिका नं0-1.3 (स)

क्र0सं0	किशोरावस्था पर प्रभाव	सूचनादाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	सामान्य	4	25
2.	आक्रामक	3	19
3.	अवसाद से ग्रसित	9	56
	कुल	16	100

उपरोक्त तालिका के अनुसार यह दर्शाती है कि किशोरावस्था में 25 प्रतिशत बच्चे मानसिक रूप से सामान्य थे, 19 प्रतिशत बच्चों का व्यवहार आक्रामक था एवं 56 प्रतिशत बच्चे अवसाद से ग्रसित थे। इस उम्र के बच्चों को माता-पिता दोनों के सहयोग की आवश्यकता होती है, बच्चे यदि माता के पास रहते है तो बहुत सी बातें वह अपनी माता के साथ नहीं कर पाते और अन्दर ही अन्दर कुंठित होने लगते है जिसके कारण कभी-कभी वह अवसाद से ग्रसित हो जाते है।

सामाजिक प्रभावों के आधार पर वर्गीकरण

तालिका नं0-1.4 (अ)

क्र0सं0	शैशवावस्था पर प्रभाव	सूचनादाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	सामान्य	5	63
2.	सामाजिक असुरक्षा	3	38
	कुल	8	100

उपरोक्त तालिका के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि 63 प्रतिशत बच्चों का व्यवहार समाज में सामान्य रहता है। क्योंकि इस आयु में बच्चों में अच्छे-बुरे की समझ नही होती है। 38 प्रतिशत बच्चे असुरक्षा की भावना महसूस करते है क्योंकि दूसरे बच्चों के साथ उनके पिता को देखकर उन्हे भी लगता है कि वो अपने पिता के साथ अधिक सुरक्षित रहते।

तालिका नं0-1.4 (ब)

क्र0सं0	बाल्यावस्था पर प्रभाव	सूचनादाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	सामान्य	3	14
2.	सामाजिक असुरक्षा	6	29
3.	अपनी उम्र के बच्चों के साथ न जाना	12	57
	कुल	21	100

उपरोक्त तालिका के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि 14 प्रतिशत बच्चों का व्यवहार समाज में सामान्य है। 29 प्रतिशत बच्चे सामाकि असुरक्षा महसूस करते है उन्हें कही भी जाने पर डर महसूस होता है, क्योंकि बच्चे पिता के साथ अपने आप को ज्यादा सुरक्षित महसूस करते है। तथा 57 प्रतिशत बच्चे अपनी उम्र के बच्चों के साथ घुलना-मिलना पसन्द नहीं करते है, क्योंकि उनके माता-पिता के तलाक की वजह से उन्हें शर्मिन्दगी महसूस करनी पड़ती है कभी-कभी दूसरे बच्चों के द्वारा भी उन्हें तलाकशुदा माता-पिता की सन्तान होने पर सबके समक्ष नीचा दिखाया जाता है। जिससे बच्चों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

तालिका नं0-1.4 (स)

क्र0सं0	किशोरावस्था पर प्रभाव	सूचनादाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	सामान्य	3	19
2.	गलत मित्रों की संगति	7	44
3.	अपराधिक प्रवृत्ति	6	38
	कुल	16	100

उपरोक्त तालिका यह दर्शाती है कि 19 प्रतिशत बच्चों का व्यवहार सामाजिक रूप से सामान्य है। 44 प्रतिशत बच्चे ऐसे थे जो गलत संगत में पड़ गये थे तथा 38 प्रतिशत बच्चे अपराधिक क्रियाकलाप में शामिल थे जिसमें मुख्य रूप से चोरी करना, छेड़खानी, शराब पीना एव मारपीट करना इत्यादि।

प्राप्त आकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकला कि विवाह विच्छेद का बच्चों पर शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक प्रभाव होता है। शैशवावस्था एवं बाल्यावस्था में उनका स्वास्थ्य सर्वाधिक प्रभावित हुआ एवं किशोरावस्था के बालकों में विभिन्न विकृतियां उत्पन्न हुई जैसे गलत संगत के कारण एल्कोहोलिक या धूम्रपान जैसे व्यसन के वे आदि हो गये जिससे उनके स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। मानसिक प्रभावों के दृष्टिगत बच्चों में बाल्यावस्था में अधिकांश

बालकों के व्यवहारों में आक्रामकता देखने को मिली एवं किशोरावस्था में वे आक्रामक एवं अवसाद दोनों की स्थितियां देखने को मिली। विवाह विच्छेद के सामाजिक प्रभाव के अर्न्तगत बच्चे सामाजिक असुरक्षा अनुभव करने के साथ-साथ एकाकी रहना पसन्द करने लगे एवं इनमें 38 प्रतिशत बच्चे अपराधिक गतिविधियों में भी सम्मिलित पाये गये। अत: अध्ययन हेतु बनायी गयी परिकल्पना नं0 1 पूर्ण सत्य से सिद्ध हुई कि विवाह विच्छेद का बच्चों पर पूर्ण रूप से नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

परिकल्पना नं0 2 विवाह विच्छेद का सर्वाधिक प्रभाव किशोरावस्था पर पड़ता है यह भी पूर्ण रूप से आकड़ों के आधार पर सत्य सिद्व हुई। अत: विवाह विच्छेद का बच्चों पर बहुआयामी प्रभाव देखने को मिला अर्थात् पारिवारिक संरचना के प्रकार्य के रूप में विघटित संरचना असामान्य स्थितियां (विकृत) उत्पन्न करती है जिससे बच्चों का सामाजीकरण प्रभावित होता है।

संदर्भ सूची :

1. केसरी, यू0पी0डी0 एवं केसरी ए0 (2013), हिन्दू विधि 13वॉ संस्करण, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहबाद पृ0सं0 100-105
2. लाल आर0बी0 एवं आर0 निवास (2011), शिक्षा मनोविज्ञान, रस्तोगी पब्लिकेशन पृ0सं0 9-12
3. Singh S. (2018), Hindu Law of Marriage and Divorce (2nd ed.) Universal Law Publishing. Page No. 67-69
4. सिंह वी0, (2020), भारतीय विवाह एवं विवाह विच्छेद समस्या या समाधान, बी0यू0यू0के0एस0 पृ0सं0 134-148
5. फरवरी 7, (2020), विवाह और परिवार के बदलते प्रतिमान Retrived from www.viarjun.com http://www.viarjun.com/category/openpage
6. मार्च 15, (2019), परिवार बढ़ते विवाह विच्छेद से टूटती कड़ियाँ Retrived from www.livehindustan.com http://livehindustan.com/news//article/story/9220
7. ओ0 के0, जून (1997) विवाह विच्छेद के मनौवैज्ञानिक और भावात्मक पहलू Retrived from www.Mediale.com http: //www .midiate .com/ article/psych.cfm
8. Marlene and Maya, (2004), Adolescent-Parent attachment: Monds that support healthy development Pediyart Health Volume-9 page no. 551-555
9. Rosse Mackay, (2005), The Impact of Family Structure and Family change on child outcome: A Personal reading of the research literature socal policy journal of Newujiland Page No. 111-133
10. Waulterickx Naomi, Gouwy Anneleen, Brac ke Piet, (2006) Depression and Divorce Long-Term Efects on Adults Children. Journal of Divorce & Remarriage, 45 (3-4), 43-68.
11. Ali Jarar, (2021), Impact of Divorce on childrens life
12. पवन उपाध्याय, (2020), बच्चों पर तलाक का नकारात्मक असर Retrived from http://www.merisaheli.com
13. प्रीति, (2017), माता-पिता हुये अलग अब बच्चें कहाँ जाय Retrived from http://www.prabhasakshi.com

❒❒❒

विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र, डी.एस.बी. परिसर, कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

शोध छात्रा, डी.एस.बी. परिसर, नैनीताल, मो. 9458939974, ई-मेल: mamtasep8989@gmail.com, care of **किशन राम आर्या**, गांव-हिम्मतपुर, गोरखहल रोड़, बऊबली, पिन-263132, गोरखहल सैनिक स्कूल के नजदीक

21वीं सदी के प्रथम दो दशकों के हिंदी गीतिकाव्य में धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्य

—कल्पना जैन

सांस्कृतिक जीवन-मूल्य, लोगों को सहिष्णुता और भाईचारे के द्वारा एक सूत्र में बाँधकर उनका उच्चतर विकास करते हैं। प्रत्येक संस्कृति के जीवन-मूल्य उस समाज की परिस्थिति तथा आदर्शों व नियमों के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। भारतीय संस्कृति, आध्यात्मिक प्रधान समन्वयवादी और अनेकता में एकतावादी संस्कृति है।

21वीं सदी का हिन्दी गीतिकाव्य सामाजिक परिप्रेक्ष्य का दृश्य प्रस्तुत करता है, वह समाज की आधुनिक विचारधारा तथा उनमें व्याप्त मूल्यों का साक्षी है। गीतिकाव्य गीतकार के हृदय से उत्पन्न उसकी अनुभूतियों की तीव्र स्फूटन का परिणाम होता है। समाज में उच्च जीवन-मूल्यों को धर्म और संस्कृति के माध्यम से स्थापित किया जाता है। भारतीय संस्कृति, आध्यात्मिकता प्रधान, समन्वयवादी और अनेकता में एकतावादी संस्कृति है। धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्य किसी भी समाज का आधार होते हैं। हिन्दी गीतकाव्य में गीतकार अपने गीतों के माध्यम से समाज में व्याप्त धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों को व्यक्त करते रहते हैं, जिससे समाज के वर्तमान मूल्यों के दर्शन गीतों के माध्यम से हो जाते हैं। आज का समाज अर्थोन्मुखी होता जा रहा है। इसके प्रभाव से धार्मिक मान्यताओं और उच्च सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। प्रत्येक व्यक्ति धन को प्राप्त करने के लिए उच्च आदर्शों की अनदेखी कर रहा है। गीतकारों ने अपने गीतकाव्यों में धार्मिक-मूल्यों में ह्रास तो अवश्य ही दर्शाया है, परंतु समाज में धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों के प्रति आस्था भी प्रकट की हैं। भारतीय संस्कृति के उच्च जीवन-मूल्य मानव के जीवन के विकास में सहायक होते हैं, परन्तु जीवनानुभूतियों और मानव मानसिक-वैचारिकता के कारण नए मूल्य पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव और आधुनिकीकरण से प्रभावित होने के कारण, नई पीढ़ी नितान्त नए के मोह में दिग्भ्रमित हो, उपयोगी और सार्थक धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों को नकार रही है तथा समाज में परिवेश की आवश्यकताओं और चुनौतियों की ओर ध्यान न देकर, पश्चिमी सभ्यता के मोह में फंसकर, अपनी बनाई आंतरिक खोह में भटक रही है। आज आवश्यकता है आधुनिकता और पुराने मूल्यों में सामंजस्य स्थापित कर, उच्च आदर्शों को स्थापित

करके, सही मार्गदर्शन करने की, जिससे धार्मिक- सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों का संरक्षण हो सकें।

संकेत शब्द : गीतिकाव्य, धर्म, संस्कृति, जीवन-मूल्य।

प्रस्तावना

21वीं सदी का हिन्दी गीतिकाव्य सामाजिक परिप्रेक्ष्य का दृश्य प्रस्तुत करता है, वह समाज की आधुनिक विचारधारा तथा उनमें व्याप्त मूल्यों का साक्षी है। गीतिकाव्य गीतकार के हृदय से उत्पन्न उसकी अनुभूतियों की तीव्र स्फूटन का परिणाम होता है।

रस्किन के शब्दों में, ''गीतिकाव्य कवि की निजी भावनाओं का प्रकाश होता है। सहजशुद्ध भाव, स्वच्छंद कल्पना, तर्कवाद और न्यायमूलकता से मुक्त विचार, ये ही गीतिकाव्य की वास्तविक विशेषताएँ हैं।"[1]

गीतिकाव्य में समाज में व्याप्त जीवन-मूल्यों की झलक मिलती है। जीवन-मूल्य समाज के लिए अत्यंत उपयोगी और आवश्यक है। उच्च जीवन-मूल्य व्यक्ति के जीवन को सही दिशा प्रदान करते हैं।

आलपोर्ट ने कहा है कि, ''मूल्य मानव विश्वास है जिनके आधार पर मनुष्य वरीयता प्रदान करते हुए कार्य करता है।''[2]

समाज में उच्च जीवन-मूल्यों को धर्म और संस्कृति के माध्यम से स्थापित किया जाता है। धर्म से ही कर्म और अर्थ को नियंत्रित कर सही मार्ग के चयन करने की निर्णय शक्ति व्यक्ति को प्राप्त होती है। को कार्य उचित है या अनुचित यह धर्म की कसौटी पर ही कसकर पता चलता है। धार्मिक-मूल्य वह है जो व्यक्ति को धार्मिक, नैतिक नियमों के रूप में प्राप्त होते हैं तथा व्यक्ति उनका पालन अपने धार्मिक विश्वासों के आधार पर करता है, इसके अंतर्गत भक्ति, पूजा, उपासना आदि कार्य आते हैं।

भारतीय संस्कृति धर्म पर आधारित संस्कृति है, धर्म उन सिद्धांतों का एकीकरण है, जिससे मानव और समाज अपना अस्तित्व धारण करता है।

'वैशेषिक धर्म के प्रणेता कणाद ने धर्म की व्याख्या करते हुए कहा है :-

''यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिध्दि स धर्मः"

अर्थात् जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस् सिद्धि हो वह धर्म है। अभ्युदय से लौकिक और निःश्रेयस् से पारलौकिक सिद्धि की प्राप्ति होती है। इस प्रकार हमारा धर्म मानवतावादी धर्म है, यह सभी जीवों के कल्याण, दया और क्षमा में विश्वास रखता है। इसलिए धार्मिक जीवन-मूल्य उच्च आदर्शों को स्थापित करते हैं।'[3]

धर्म और संस्कृति आपस में परस्पर संबंधित है। धर्म जहाँ सही गलत का ज्ञान कराता है, संस्कृति वहाँ मानव के समाजीकरण का आधार बनती है।

सदरलैंड और वुडवर्थ के अनुसार, ''संस्कृति में वह प्रत्येक वस्तु सम्मिलित है, जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संक्रमित हो सकती है। किसी जन-समुदाय की संस्कृति उसका ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, कानून तथा विचारने की पद्धति ही है।''[4]

सांस्कृतिक मूल्य जन समुदाय अर्थात् समाज के कल्याण के लिए स्थापित किए जाते हैं। सांस्कृतिक जीवन-मूल्य, व्यक्ति के समाज में समायोजन में सहायक सिद्ध होते हैं, साथ ही व्यक्ति के व्यक्तिगत मूल्यों के निर्धारण पर भी अपना प्रभाव डालते हैं।

''मूल्य ही संस्कृति के पूर्ण बुद्धिगम्य, व्यापकार्थ का आधार है, क्योंकि सभी संस्कृतियों का वास्तविक विन्यास मुख्यतः मूल्यों के संदर्भ में ही किया जाता है। संस्कृति बिना मूल्य सन्दर्भ के उन अर्थहीन तत्वों का गठन बन जाती है, जो स्थानीय एवं क्षणिक होते हैं। संस्कृतियों द्वारा परस्पर मूल्यों का आदान-प्रदान न केवल पारस्परिक नैकट्य का ही परिचायक है, अपितु नए मूल्यों का योजक भी। संस्कृतियों में वैभिन्नय होते हुए भी सभी का चरम लक्ष्य एक है, 'परमशुभ' की प्राप्ति।''[5]

सांस्कृतिक जीवन-मूल्य, लोगों को सहिष्णुता और भाईचारे के द्वारा एक सूत्र में बाँधकर उनका उच्चतर विकास करते हैं। प्रत्येक संस्कृति के जीवन-मूल्य उस समाज की परिस्थिति तथा आदर्शों व नियमों के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। भारतीय संस्कृति, आध्यात्मिक प्रधान समन्वयवादी और अनेकता में एकतावादी संस्कृति है। सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों में लोक कल्याण की भावना, वसुधैव कुटुंबकम् की भावना, कर्तव्यपराणता, अतिथि सत्कार, दीनों की सेवा आदि जीवन-मूल्य निहित हैं।

धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्य भारतीय संस्कृति और समाज में महत्वपूर्ण भूमिका रखते हैं। इन मूल्यों के ह्रास से समाज का ढांचा चरमरा जाता है और व्यक्ति के विकास में बाधा उत्पन्न हो जाती है। संस्कृति में बदलाव के साथ सांस्कृतिक जीवन-मूल्य भी परिवर्तित होते रहते हैं। इन मूल्यों में उच्च आदर्शों की प्रमुखता से समाज का स्वरूप निखरता है तथा धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों के ह्रास से अनास्था, अनाचार, संत्रास, घुटन और एकाकीपन जैसे तत्वों का जन्म होता है।

हिन्दी गीतिकाव्य में गीतकार अपने गीतों के माध्यम से समाज में व्याप्त धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों को व्यक्त करते रहते हैं, जिससे समाज के वर्तमान मूल्यों के दर्शन गीतों के माध्यम से हो जाते हैं। गीतों में व्याप्त ये मूल्य गीतकार की अनुभूतियों का संचय होते हैं, जो हृदय के उद्‌गार द्वारा स्फूटित हो गीत का रूप धारण कर लेते हैं।

भारतीय संस्कृति अध्यात्म और धर्म प्रधान है, लोगों का रहन-सहन, रीति-रिवाज, आदर्श, धर्म पर आधारित होते हैं, ऐसे ही संस्कारिक आदर्श से सुसज्जित गीत आनंद तिवारी ने 'माँ की मनुहार' रचा है, जिसमें धार्मिक मान्यताओं का महत्व गीत के उद्धरित अंश से स्पष्ट है :-

बाबा का शंख और
पूजा का देवासन।
बचपन से चाचा का,
गाँठ बँधा अनुशासन।
राई औ करमा में
बज्जी का नाचना।

दद्दा की सुरलहरी,
रामायण बाँचना।[6]

'माँ की मनुहार' गीत में सुबह-सुबह पूजा-पाठ, शंख की ध्वनि की महत्ता का सुंदर चित्र प्रस्तुत किया है। बड़ों द्वारा अनुशासन के प्रति बच्चों को प्रेरित करना और विभिन्न अवसरों पर नृत्य आदि की परम्परा तथा बड़े बुजुर्गों द्वारा रामायण जैसे उच्च आदर्शगामी ग्रंथों के वाचन से घर के लोगों में उच्च आदर्श व्याप्त करना ही यह गीत दर्शाता है।

धार्मिक-सांस्कृतिक मूल्यों में समाज में परिवर्तन के साथ-साथ परिवर्तन होता रहता है। आज का समाज अर्थोन्मुखी होता जा रहा है। इसके प्रभाव से धार्मिक मान्यताओं और उच्च सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। प्रत्येक व्यक्ति धन को प्राप्त करने के लिए उच्च आदर्शों की अनदेखी कर रहा है। धर्म भी इस अर्थोन्मुखी व्यवस्था से अछूता नहीं रहा है। सच्चे धर्म गुरुओं का स्थान नकली पाखंडी धर्मगुरुओं ने ले लिया है, इसलिए धर्म एक व्यापार बनकर रह गया है। धर्म के नाम पर स्वार्थी लोगों ने लोगों को ठगना अपना व्यवसाय बना लिया है। मधुकर अष्ठाना के 'हाशिये समय के' गीत संख्या 'चालीस' में गीतकार ने अन्धविश्वास और पाखंड के धार्मिक कार्यों में बढ़ते हुए प्रादुर्भाव को प्रकट किया है। धर्म में फैला यह अनाचार, धार्मिक-नैतिकता की कमी का कारण बन गया है। गीत संख्या 'चालीस' के गीत की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं :-

हमें ज्ञान का पाठ पढ़ाने
उद्धव जी
आ गये नगर में
ज्योति जलाते हैं
अ श्य वे
लोग न भटकें
कहीं डगर में
साथ आर्केस्टा है उनका
और गवैयों का है मेला
फौज चेलियों-चेलों की है
पुण्य लूटने आया रेला
चकाचौंध भक्तों की आँखें
महासंत के जगर-मगर में
साथ लगी दस-बीस दुकानें
मनमाना पाखण्ड भुनाती
धर्म भीरुओं के अन्तर में
खूब अंधविश्वास जगाती
डुबा रहे आस्था हमारी
कर्मकाण्ड के

आडम्बर में
कुण्डलिनी जागेगी साधो
सहस्रार से रस बरसेगा
दानी ही अपार वैतरणी
धरती से जा, पार करेगा
क्या रक्खा है
नश्वर जग के
क्षण-भंगुर डोला डम्बर में
नेता और माफिया दोनों
बने हुए हैं इनके कन्धे
लुटा रहे सर्वस्व इन्हीं पर
लाखों बने आँख के अन्धे
छाये रहते रोज़
यही पर
अख़बारों की
बड़ी ख़बर में [7]

मधुकर अष्ठाना के गीत संख्या 'चालीस' में स्वार्थ व धन लोभी लोग नकली संत बनकर पूरे साज-सज्जा व आडम्बरों के साथ अपना पाखंड फैलाकर लोगों को भ्रमित कर अंधविश्वास में फंसाते हैं। इनकी अपनी एक पूरी मंडली होती है, जिसमें गायक और अनुयायी आदि होते हैं। ये पाखंडी लोग, व्यक्ति को संगीत व अन्य समारोह द्वारा ऐसा अनुभव कराते हैं कि वह पुण्य प्राप्त करा रहे हैं और भक्ति के भाव में विभोर कर रहे हैं। इनके द्वारा भक्ति समारोह के साथ व्यापार के लिए ईश्वर से संबंधित वस्तुओं का क्रय-विक्रय भी होता रहता है। भक्ति सभा के साथ व्यापार द्वारा अपनी स्वार्थ सिद्धि भी होती रहती है। लोग इन पाखंडी संतो की चमक-दमक से प्रभावित हो उनकी बातों में आ जाते हैं और इनके प्रपंचों के कारण धर्म से डरकर आसानी से अंधविश्वास में फंसकर भयभीत होते रहते हैं तथा पाखंडी लोग अपनी स्वार्थ पूर्ति करते है। ये पाखंडी लोग कभी धर्म के प्रति आस्था के नाम पर, कभी भाग्य को जाग्रत करने के नाम पर, कभी कुंडलियों और ग्रंथियों के अमश्त प्राप्त कराने के नाम पर, कर्मकांड और आडम्बरों में फंसाकर लोगों को मूर्ख बनाकर धन लूटते रहते हैं। ये पाखंडी लोग दान के नाम पर लोगों को परलोक की नदी को भी पार कराने तक का प्रलोभन देने से भी नहीं चूकते हैं। उन्हें इस गोरखधन्धे में नेताओं और माफिया दोनों का प्राय: संरक्षण और समर्थन प्राप्त होता है, क्योंकि यह लोगों का विश्वास प्राप्त कर अपने अनुसार कार्य कराने में कुशल होते हैं और लोग इनके झांसे में आकर अपना सर्वस्व लुटाते रहते हैं। गीतकार ने ऐसे ही भ्रष्ट पाखंडी संतो पर आक्षेप कर, समाज में धर्म के प्रति अंधविश्वासों में न पड़कर सतर्क रहने के प्रति सचेत किया है।

भारतीय संस्कृति में बड़ों का आदर और उनका आशीर्वाद बड़े ही महत्वपूर्ण तत्व है। बड़ों के वचन, छोटो के लिए मार्गदर्शन के साथ-साथ उनका उचित विकास भी करते हैं, परन्तु तेजी से होते आधुनिकीकरण, सभ्यता के विकास, नई तकनीकों और पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध ने नई पीढ़ी के विचारों को भ्रमित कर दिया है। वह अपनी संस्कृति और आधुनिकीकरण में समंजस्य नहीं बैठा पा रही है। वह भ्रमित हो उच्च जीवन-मूल्यों की भर्त्सना कर आधुनिकीकरण की अन्धी दौड़ में शामिल होना चाहती है। संस्कारों के महत्व और उनके ज्ञान के अर्जित अमृत से उन्हें बंदिशें महसूस होती हैं।

कृष्ण मोहन 'अम्भोज' के गीत 'पश्चिम की फांसे' में संस्कृति में जीवन-मूल्यों पर पड़ते प्रभाव स्पष्ट दृष्टव्य हैं। 'पश्चिम की फांसे' गीत प्रस्तुत है :-

कसती रहती तानें
बूढ़े बरगद पर,
पढ़ लिख गई
हवाएं, जबसे दो अक्षर।
बूढ़े कानों को नई जुबानें
देने लगी सलाह,
परी कथाएँ, काजल, कजरौटे
लगने लगे गुनाह,
अनुभव झिड़के
जाते हैं बात-बात पर।
पूरब के आंगन फंसी हुई है
पश्चिम की फांसे,
नंगी होड़ों के चलते घुटती
लाज शरम की सासें,
रिश्ते करते
खुदखुशी शर्मिन्दा होकर।...[8]

'पश्चिम की फांसे' गीत में गीतकार ने दो पीढ़ियों के बीच संघर्ष और सांस्कृतिक बदलाव को दर्शाया है। आज की युवा नई पीढ़ी, नई तकनीक और आधुनिकीकरण के समाज में पली-बढ़ी हुई है। ऐसे में पुरानी पीढ़ी की नई तकनीकी सम्बन्धी अज्ञानता को वह मूर्खता समझ उनका अनादर करने से भी नहीं चूकती हैं। जहाँ बड़ों की सलाह लेकर छोटों को उचित मार्ग चयन करना चाहिए, वहाँ नई पीढ़ी उल्टा उन्हें उनके सुझावों जोकि उन्होंने एक उम्र बिताकर अर्जित किए हैं, उन पर उन्हें झिड़क देती है, जैसे वह अर्थहीन और बेमानी हो। नई पीढ़ी को अपने ज्ञान और अपने निर्णयों के आगे सब व्यर्थ ही लगता है। वे सोचते हैं कि उन्हें ही सर्वोच्च ज्ञान प्राप्त हैं। वे यह नहीं जानते कि पश्चिमी सभ्यता के मोहपाश में बंधकर वे अपने रिश्तों और

अपनत्व को खोते जा रहे हैं। अपनी निर्लज्जता, बेशर्मी, अश्लीलता और आधुनिकता की अंधी दौड़ से उन्हें केवल एकाकीपन, घुटन और रिश्तों की टूटन ही मिलेगी।

सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों में सदाचार, सहिष्णुता, भाईचारे, एकता, सर्वधर्म सम्मान जैसे उच्च जीवन-मूल्य प्रमुख हैं। लोगों के रहन-सहन, उनके व्यवहार, उनकी एकता और भाईचारा संस्कृति को सुदृढ़ बनाता है और एक आदर्श समाज का निर्माण करता है। सांस्कृतिक मूल्यों में सम्पूर्ण विश्व को भी एक कुटुम्ब की भाँति माना गया है, परन्तु जब परिवार ही जुड़कर एकता का प्रतीक नहीं बन पा रहे हैं तो विश्व की संकल्पना तो दूर की बात है। ओमप्रकाश तिवारी के गीत 'मूल्य बिकते' में भाईचारे और एकता जैसे उच्च सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों में आई गिरावट को दर्शाया गया है। 'मूल्य बिकते' गीत की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं :-

विश्व के
एकीकरण का
स्वप्न सब पाले हुए
भाइयों के साथ
भोजन की रसम टाले हुए।
जल रहे हैं
चार चूल्हे
एक ही परिवार में।
ईद, होली
व दशहरा
या कि दीवाली रहे
गले मिलना दूर
अब तो
जुबाँ भी खाली रहे।
उँगलियों से
एक एसएमएस
भेजते त्यौहार में।[९]

'मूल्य बिकते' गीत में उन सांस्कृतिक मूल्यों की तरफ गीतकार ने ध्यान आकृष्ट किया है जो संस्कृति का आधार है जैसे प्रेम, भाईचारा और एकता। गीतकार गीत में स्पष्ट करता है कि आज के दौर में जब भाई-भाई में वैमनस्य है और वह साथ बैठकर भोजन तक नहीं करते हैं और अपने स्वार्थ में लिप्त संयुक्त परिवार की परंपरा को भी तोड़ते रहते हैं तो ऐसे वातावरण में विश्व में एकीकरण एक स्वप्न के समान ही है। आधुनिक युग में मिलकर संयुक्त परिवार में एक साथ रहने से संरक्षण की भावना और एक दूसरे की परवाह कर, उनके सुख-दुख में शामिल होने की भावना, लोगों में धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही हैं। वह स्वार्थवश केवल अपने बारे में ही सोच कर एकाकी बनते जा रहे हैं। जो उनमें घुटन, अवसाद और पलायन को जन्म दे रहा हैं। ईद, होली,

दशहरा, दीपावली आदि मिलकर मनाने पर जो एकता के भाव लोगों में उत्पन्न होते थे उसे अन्धी आधुनिकता और तकनीकी विकास ने खोखला बना दिया हैं। लोगों की संवेदनाएँ सूखती जा रही हैं। आपसी प्रेम और सौहार्द केवल एक औपचारिकता मात्र बनकर रह गए हैं। मोबाइल से एक एसएमएस भेज कर औपचारिकता पूरी कर त्यौहार मनाए जा रहे हैं। ईद, होली, दिवाली आदि पर गले मिलकर बधाई देने की रिश्तो की गरमाहट अब तकनीकी विकास के कारण ठंडी पड़ रही है।

निष्कर्ष :-

धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्य किसी भी समाज का आधार होते हैं। धार्मिक-नैतिक उत्थान द्वारा ही समाज का उत्थान होता है। सांस्कृतिक जीवन-मूल्य समाज को दिशा प्रदान करते हैं। गीतकारों ने अपने गीतकाव्यों में धार्मिक-मूल्यों में ह्रास तो अवश्य ही दर्शाया है, परंतु समाज में धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों के प्रति आस्था भी प्रकट की हैं। धर्म के प्रति भक्ति, आस्था, उपासना के मूल्य लोगों में व्याप्त हैं और वह उनके प्रति समर्पित भी हैं, किन्तु कुछ स्वार्थी तत्व, लोगों को भ्रमित कर, अंधविश्वासों में फंसाकर, अर्थलोभ के कारण, कर्मकांड और आडम्बरों में फंसा देते हैं। धार्मिक जीवन-मूल्य, लोगों को उच्च आदर्श पर चलकर परम सुख की प्राप्ति कराते हैं, परन्तु जब धर्मगुरु या अन्वेषक समाज के नए तत्वों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट करते हैं, तो मानव की धारणाओं और मान्यताओं में नए मूल्य शामिल हो जाते हैं। भारतीय संस्कृति के उच्च जीवन-मूल्य मानव के जीवन के विकास में सहायक होते हैं, परन्तु जीवनानुभूतियों और मानव मानसिक-वैचारिकता के कारण नए मूल्य पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव और आधुनिकीकरण से प्रभावित होने के कारण, नई पीढ़ी नितान्त नए के मोह में दिग्भ्रमित हो, उपयोगी और सार्थक धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों को नकार रही है तथा समाज में परिवेश की आवश्यकताओं और चुनौतियों की ओर ध्यान न देकर, पश्चिमी सभ्यता के मोह में फंसकर, अपनी बनाई आंतरिक खोह में भटक रही है। वह सुख-सुविधाओं की मृगतृष्णा के पीछे, अपने संस्कारों को भूलकर, अन्धी होकर दौड़ रही है, जिससे सम्बन्धों में दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं और व्यक्ति के भीतर घुटन, कुंठा, निराशा, एकाकीपन और खालीपन बढ़ता जा रहा है। नई पीढ़ी पश्चिमी सभ्यता की चमक-दमक के प्रति आ ष्ट और अर्थोन्मुखी होने के कारण न तो अपनी परंपरा की ही जड़े पकड़ पा रही है और न ही अपने लिए उपयोगी और उचित मार्ग का चयन करने में सक्षम हो पा रही है। नई पीढ़ी में संवेदनशून्यता का प्रभाव व्याप्त होना मानवतावादी जीवन-मूल्य पर घात है। आज आवश्यकता है आधुनिकता और पुराने मूल्यों में सामंजस्य स्थापित कर, उच्च आदर्शों को स्थापित करके, सही मार्गदर्शन करने की, जिससे धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों का संरक्षण हो सकें।

संदर्भ सूची :

1. वर्मा. डॉ. धीरेन्द्र (सम्पादक), 'हिन्दी साहित्य कोश', ज्ञान मंडल लिमिटेड, वाराणसी, प्रथम संस्करण, सन् 1958 ई., पृष्ठ 262

2. सक्सेना. एन0 आर0 स्वरूप तथा संजय कुमार, '**शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धांत**', आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ, प्रथम संस्करण, सन् 2008 ई., पृष्ठ 1153
3. पचौरी. डॉ0 गिरीश, '**उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक**', इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, प्रथम संस्करण, सन् 2007 ई., पृष्ठ 512
4. पचौरी. डॉ0 गिरीश, '**उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक**', इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, प्रथम संस्करण, सन् 2007 ई., पृष्ठ 508
5. गुप्ता. डा0 अरुणा, '**छठे दशक की हिंदी कहानी में जीवन-मूल्य**', इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् 1989 ई., पृष्ठ 19
6. तिवारी. आनंद, '**धरती तपती है**', उद्‌भावना प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् 2008 ई., पृष्ठ 69
7. अष्ठाना. मधुकर, '**हाशिये समय के**', उत्तरायण प्रकाशन, लखनऊ, प्रथम संस्करण, सन् 2015 ई., पृष्ठ 108-109
8. अम्भोज. श्रीकृष्ण मोहन, '**संवेदन के बस्ते**', नर्मदा प्रकाशन, पचोर, प्रथम संस्करण, सन् 2013 ई., पृष्ठ 59
9. तिवारी. ओमप्रकाश, '**खिड़कियाँ खोलो**', बोधि प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण, सन् 2012 ई., पृष्ठ 89
10. पाठक. पंडित रामचंद्र (संपादक), '**भार्गव आदर्श हिन्दी शब्दकोश**', भार्गव बुक डिपो, वाराणसी, संस्करण सन् 1995 ई.।

❑❑❑

शोधार्थी (हिन्दी), बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, मध्य प्रदेश, मोबाइल नंबर: 8802868383,
मेल:Kalpanajainindia@gmail.com, पता: एफ-3, प्रथम तल, गली नं. 5, पांडव नगर, दिल्ली-110091

आत्म-निर्भर भारत की संकल्पना और प्रयास

—डॉ. प्रतिभा राणा

भारत आज अपनी स्वतंत्रता के 75 वर्ष को 'अमृत महोत्सव' के रूप में मना रहा है। हम विदेशी हाथों द्वारा पराधीन होकर अपने संघर्ष और समर्पण की बदौलत स्वाधीन तो हो गए। लेकिन आर्थिक और मानसिक रूप से अभी स्वतंत्र नहीं हुए, छोटी-छोटी वस्तु के लिए हम विदेशों पर निर्भर क्यों हैं?

आज व्यक्ति विशेष नहीं; सम्पूर्ण देश के परिप्रेक्ष्य में 'आत्मनिर्भर भारत' बनाने की दिशा में प्रयास को हम जान और सुन रहे हैं। भारत के जन-जन को विशेषकर युवाशक्ति को 'स्टार्ट-अप' के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। दरअसल 'स्वावलम्बन' की बात और अवधारणा उतनी ही प्राचीन है जितना प्राचीन हमारा भारत देश। बेशक परतंत्रता ने भारतीय जन को सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, शारीरिक और मानसिक सभी स्तरों पर तोड़ा था लेकिन कभी हिम्मत न हारने की जिजीविषा ने ही स्वाधीनता भी दिलाई। आज पूरा देश जब आजादी का अमृत महोत्सव मना रहा है तब आत्मनिर्भर शब्द पर विचार और मंथन जरूरी हो जाता है। भारत को सम्पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में कार्य करने की आवश्यकता है जो केवल एक व्यक्ति, सरकार या राज्य के द्वारा साकार नहीं हो सकती। सबका सम्मिलित प्रयास और योगदान ही इस काम को पूरा कर पाएगा।

हमारा देश एशिया महाद्वीप की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था है। कोरोना महामारी ने इसको नुकसान तो जरूर पहुँचाया है लेकिन 'स्वावलंबन' की संजीवनी ने एक उम्मीद भी जगाई है। हमने साथ मिलकर अनेक असंभावनाओं को दरकिनार करके उनसे सम्पूर्ण विकास की नई संभावनाओं को खोजा है और निरंतर प्रयासरत है। पुरातन और नवीन रोजगार के तरीकों में समन्वय करके सकारात्मक रचा जा रहा है लेकिन ये अभी शुरुआत भर है।

बीज शब्द: स्वावलंबन, स्टार्ट-अप, अर्थव्यवस्था, विश्वगुरु, युवाशक्ति, घरेलू उद्योग, तकनीकी ज्ञान।

प्रस्तावना

आत्म निर्भर अर्थात् स्वावलम्बन, यह स्वावलम्बन की अवधारणा भारतीय सन्दर्भों में नई नहीं है। विभिन्न ऐतिहासिक खोजों में अनेक ऐसे तथ्य सामने आए जो प्राचीन भारत के

आत्मनिर्भर होने की तरफ संकेत करते हैं। देश की परतंत्रता ने आत्मनिर्भरता के लिए आवश्यक आत्मबल पर आघात पहुँचाया। लेकिन आजादी के अनेक वर्षो बाद भी हमारा मन वो साहस लघु और घरेलू उद्योगों के संरक्षण हेतु नहीं जुटा पाया। इसके पीछे कहीं न कहीं विदेशी वस्तुओं के प्रति आकर्षण रहा। हालांकि स्वतंत्रता सेनानी इस मोह से परिचित थे तभी विदेशी वस्तुओं की होली जलाने की घटनाएँ उस समय हुई। केंद्रीय भाव में तब देश भारत और उसकी अस्मिता एवं आजादी ही थी। भारत कब इंडिया बन गया पता ही नहीं चला। लेकिन अब पुनर्विचार आवश्यक है कि जो अपना है उसे कैसे आगे बढ़ाया जाए। इस अपनेपन में अपना हुनर, अपने शौक को व्यवसाय से जोड़ना, स्टार्टअप के मंत्र से अपने एवं अन्य के लिए रोजगार के अवसर मुहैया कराना प्राथमिक कार्य होना चाहिए। अपने हुनर को जीविका और बाजार से जोड़कर नए-नए प्रयोगों को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। साथ में गाँव और शहर के बीच की सामाजिक, मानसिक और आर्थिक दूरी कम को कम करने की आवश्यकता है। तभी आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना को साकार किया जा सकता है।

आत्म-निर्भर भारत की संकल्पना और प्रयास

आत्म-निर्भर का सीधा अर्थ स्वावलम्बन से है, जो बिना किसी सहारे के अपने पांवों पर खड़ा हो, अपना सहारा स्वयं बना हो अपनी राह खुद खोजी हो। आज व्यक्ति विशेष नहीं सम्पूर्ण देश के परिप्रेक्ष्य में इस पर बहुत विचार किया जा रहा है जिसे हम 'आत्मनिर्भर भारत' के नाम से सुन और जान रहे हैं। यह स्वावलम्बन की अवधारणा भारतीय सन्दर्भो में भारतीय सभ्यता जितनी ही पुरानी है। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो आदि सभ्यताओं की खोज में अनेक ऐसे तथ्य सामने आए जो प्राचीन भारत के आत्मनिर्भर होने की तरफ संकेत करते हैं। भारत क्यों 'सोने की चिड़िया' कहलाता था, क्यों दूर देश के यात्री यहाँ आते थे कैसे शिक्षा और ज्ञान की नगरी कहलाया गया था; इन सभी बातों की जड़ में पहुंचना जरूरी है। पराधीनता के काले बादलों ने भारतीय जन को सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, शारीरिक और मानसिक सभी स्तरों पर तोड़ा था। लेकिन पराधीनता के वो काले बादल 1947 में हटे और 2047 में देश स्वतंत्रता के सौ बरस पूर्ण करेगा। आज पूरा देश जब आजादी का अमृत महोत्सव मना रहा है तब आत्मनिर्भर शब्द पर विचार और मंथन जरूरी हो जाता है। भारत को सम्पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में कार्य करने की आवश्यकता है। जो केवल एक व्यक्ति, सरकार या राज्य के द्वारा साकार नहीं हो सकती। सबका सम्मिलित प्रयास और योगदान ही इस काम को पूरा कर पाएगा। शिक्षा, समानता और रोजगार के साथ देश को आर्थिक स्तर पर भी मजबूत करने की आवश्यकता है। आत्मनिर्भर भारत का भाव नया नहीं है, लेकिन अब उसका पुनर्सृजन करना है। हम सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत समृद्ध राष्ट्र भारत में रहते हैं, यह विविधताओं से भरा देश है। उसकी इसी विविधता में एकता की खूबसूरती भी छिपी है। स्वावलम्बन हमारी उज्ज्वल पहचान रहा है जो पराधीनता के समय धूमिल हो गया था। उसकी पुनः खोज आसान तो नहीं लेकिन नामुमकिन भी नहीं है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने भी अपनी रचना 'पंचवटी' में रामकथा के माध्यम से स्वावलम्बन की बात पुष्ट की है

''अपने पौधों में जब भाभी, भर-भर पानी देती है,
खुरपी लेकर आप निराती,जब वे अपनी खेती है
पाती है तब कितना गौरव, कितना सुख कितना संतोष
स्वालम्बन की एक झलक पर, न्यौछावर कुबेर का कोष''-[1]

स्पष्ट है हम भारतीय किसी से कम नहीं बस जरूरत है अपने उन्नत ज्ञान-विज्ञान की पुन:खोज की। सर्वांगीण विकास का सूत्र और खोए आत्मविश्वास को पाने हेतु हमें पुनरवलोकन करने की आवश्यकता है। दम तोड़ते लघु और घरेलू उद्योगों को सरकारी प्रयासों से बचाया जा सकता है, आज इस दिशा में उल्लेखनीय काम हो रहे हैं। गाँव, कस्वों, महानगरों और राज्य से सम्बंधित विशेषता को देश और वैश्विक पहचान दिलाने की दिशा में अनेक कार्य आकार ग्रहण कर रहे हैं। बनारस का सिल्क उद्योग, लखनऊ की लखनवी कढ़ाई, उड़ीसा, बंगाल का रेशम और तात का काम, मिथिला की मधुबनी कला, पंजाब की फुलकारी, घरों में मसाले, पापड़ और अचार बनाने के लघु उद्योग आदि अनेक हुनर और हुनरमंद देश में हैं। इनके हुनर को जीविका और बाजार से जोड़कर नए-नए प्रयोगों को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। भारत विविधताओं से भरा देश है उसकी यह विविधता में एकता हमें अन्य देशों से विशेष बनाती है। अलग-अलग राज्यों की संस्कृति को बढ़ावा देकर आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना को साकार किया जा सकता है। गांवों और शहरों को आधुनिक सड़कमार्गों एवं तकनीक से जोड़ना जरूरी है जिससे इनके बीच की सामाजिक, मानसिक और आर्थिक दूरी कम की जा सके। कुलमिलाकर भारत को आत्मनिर्भर भारत के सफर में अनेक चुनौतियों से जूझकर विकास की दिशा लेनी होगी जहाँ से 'सबका साथ और सबका विकास' का नारा फलीभूत हो सके। सुशासन की अवधारणा में स्वावलम्बन की धारणा महत्वपूर्ण है। सुशासन का मतलब या आशय नया विमर्श नहीं है। चाणक्य, अरस्तू और तुलसीदास सरीखे विद्वानों ने रामराज्य या कल्याणकारी राज्य के सन्दर्भ में अपनी बात रखी है-

''दैहिक दैविक भौतिक तापा। रामराज्य नहिं काहुहीं ब्यापा
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती''-[2]

यहाँ रामराज्य मतलब कल्याणकारी राज्य से ही है। जहाँ जनता को किसी प्रकार का कष्ट शासन द्वारा न दिया जाए। बिना किसी भेदभाव के उसे विकास के समान अवसर प्राप्त हो।

भारत आज अपनी स्वतंत्रता के 75 वर्ष को 'अमृत महोत्सव' के रूप में मना रहा है। हम विदेशी हाथों द्वारा पराधीन होकर अपने संघर्ष और समर्पण की बदौलत स्वाधीन तो हो गए। लेकिन आर्थिक और मानसिक रूप से अभी स्वतंत्र नहीं हुए, छोटी-छोटी वस्तु के लिए हम विदेशों पर निर्भर क्यों हैं? अभिव्यक्ति की गुणवत्ता के लिए विदेशी भाषा को क्यों निहारते हैं? इसकी जड़ में पहुंचना आवश्यक है।

महान वैज्ञानक और पूर्व राष्ट्रपति डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम ने भी भारत की प्रगति और आत्मनिर्भरता को लेकर एक सपना देखा था। अपनी कार्यशैली से उस सपने को हकीकत में पहुँचाने का यथासंभव प्रयास भी किया। नतीजतन पोखरण का परमाणु परिक्षण या इसरो के

मिशन विश्वपटल में भारत को रक्षा एवं अन्तरिक्ष क्षेत्र में एक आत्मनिर्भर राष्ट्र के रूप में शुरूआती पहचान दिलाने में महत्वपूर्ण अंग बनें। उन्होंने भारत को वर्ष 2020 तक विश्वशक्ति बनाने का सपना देखा था। भारत को विश्वशक्ति और पुन: विश्वगुरु सर्वांगीण विकास से ही बनाया जा सकता है और यह सर्वांगीण विकास भारत के जन-जन के विकास से ही पूर्ण होगा। भारतरत्न डॉ.कलाम के अनुसार

''हमें इसका भी गर्व और प्रसन्नता है कि कृषि, विज्ञान, कला, संस्कृति और सामाजिक क्षेत्रों में कार्यरत अनेक व्यक्तियों के स्वप्न भी साकार हो चुके हैं परन्तु हमारी परिकल्पना अभी भी अधूरी ही है-गरीबी से रहित एक समृद्ध भारत की परिकल्पना, वाणिज्य एवं व्यापार में अग्रणी भारत की परिकल्पना, विज्ञान तथा तकनीक के विविध क्षेत्रों में शक्तिशाली भारत की परिकल्पना, और नवपरिवर्तनशील ऐसे औद्योगिक भारत की परिकल्पना जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा और स्वास्थ्य की सुविधाएँ उपलब्ध हों। सच्चाई यह है कि इनमें से कई विषयों पर आज निराशा ही व्याप्त है। हम स्वाधीनता का पचासवां वर्ष पूरा कर चुके हैं-और आज के अधिकांश भारतवासी इसी अवधि में पैदा हुए हैं। हर साल हमारे देश की जनसंख्या लगभग दो करोड़ बढ़ जाती है।''-[3]

स्वतंत्रता के 50 वर्ष पर लिखी यह पुस्तक आज 25 वर्ष बाद भी उन्हीं प्रश्नों से जूझ रही है। हालांकि अब हुनर को पटल देने के सरकारी स्वर सुनाई पड़ने लगे हैं, श्रम को जीविका से जोड़कर नए आयामों पर चर्चा भी होने लगी है। जनसंख्या समस्या के साथ, जनसंख्या नियंत्रण और जनसंख्या संयोजन जैसे शब्द भी सुनाई पड़ने लगे हैं। दरअसल महानगर, शहर, गाँव में रह रही आबादी को श्रम के आधार पर वर्गीकृत करके उनके लिए रोजगारपरक योजनाएं चलाई जा रही हैं। साथ में नए-नए रोजगार के अवसर भी तलाशने की कोशिश भी 'आत्मनिर्भर भारत' बनाने की कड़ी का एक हिस्सा है। आज भारत की गिनती सबसे युवा देशों में है, इस युवाशक्ति को स्वावलम्बन से जोड़कर विकास के नए प्रतिमान गढ़े जा सकते हैं। इस दिशा में 'स्टार्ट अप' शब्द बहुत केंद्रीय भूमिका के साथ अवतरित हुआ है, यह स्टार्ट अप खुद पर विश्वास का है, अपने हुनर को पहचान देने का है, अपने सपनों को उड़ान देकर साकार करने का है। इस कड़ी में 45% महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका के साथ खड़ी हैं। और उनकी आत्मनिर्भरता की यह उड़ान लगातार जारी है राधिका पटेल (चप्पल बनाने का व्यवसाय) जैसी महिलाएं अनेक स्त्रियों में स्वावलम्बन की अलख जला रही हैं। वहीं गाजियाबाद में रहने वाली सुमन अपने साथ लगभग 250 महिलाओं को स्वावलम्बी बनाने का उल्लेखनीय काम कर रही हैं। स्वयं उद्यमी बन चुकी सुमन के शब्दों में ''मेरा उद्देश्य अधिक से अधिक महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाना है। अब ये महिलाएं अपने घर का खर्च चला रही हैं। जरूरतमंद महिलाओं की सहायता के साथ भारतीय कला भी विदेश तक पहुंच रही है। आर्थिक प्रगति भी हो रही है।'[4]

ये 'स्टार्ट-अप' भारत को आत्मनिर्भर बनाने की तरफ बढ़ता कारगर कदम है। विश्व में भारत की छवि को शक्तिशाली भारत, सक्षम भारत बनाने के लिए अनेक योजनाएं चल रही हैं। हमारा देश एशिया महाद्वीप की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था है। कोरोना महामारी ने इसको नुकसान तो जरूर पहुंचाया है लेकिन 'स्वावलंबन' की संजीवनी ने एक उम्मीद भी जगाई है। सरकारी

आंकड़ों के अनुसार आज लगभग 623 जिलों में 'स्टार्ट अप' कम्पनियां हैं, जिससे आने वाले वर्षो में 30 लाख से अधिक रोजगार उत्पन्न होने की पूरी सम्भावना है। आज यह स्वावलंबन की मिसाल कम्पनियां लाखों-करोड़ों से बढकर यूनिकार्न तक पहुँच रही हैं। प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना ने भी देशवासियों विशेषकर युवाओं को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है। लघु और कुटीर उद्योगों की भूमिका देश की अर्थव्यवस्था में जितनी महत्वपूर्ण है उतनी ही व्यक्ति में आत्म-विश्वास का संचार करने में है। क्योंकि अर्थव्यवस्था की दृष्टी से आत्म निर्भरता या आत्म निर्भर भारत की बात सीधे-सीधे रोजगार से जुडती है। इसीलिए इन लघु और कुटीर उद्योगों से देश को सक्षम बनाया जा सकता है। दरअसल इन "लघु और कुटीर उद्योगों के विकास से बड़ी मात्रा में रोजगार का सृजन होता है। भारत बेरोजगारी, अल्प रोजगारी, प्रछन्न बेरोजगारी तथा मौसमी बेरोजगारी से पीड़ित है। चारों ओर फैली बेरोजगारी को हल करने में SSCIs (लघु और कुटीर उद्योग) का विकास रामबाण सिद्ध हो सकता है। दूसरी ओर भारत में पूंजी का अभाव है। ये उद्योग अपेक्षाकृत कम पूंजी से चलाए जा सकते हैं। ये उद्योग भारत के अनुकूल हैं, जहाँ पूंजी का अभाव और श्रम की बाहुल्यता है। भारत के औद्योगीकरण में ये उद्योग निर्णायक भूमिका निभा सकते हैं।"[5]

स्वावलंबन या आत्मनिर्भर शब्द में आत्मशक्ति, ठान लेने की जिद और कार्यशैली मिली-जुली है। जिसे वर्तमान में 'स्टार्ट अप' का नाम दे दिया गया है। शुरुआत या पहल करने की इच्छाशक्ति ही आज 'स्वावलंबन का स्टार्ट अप' है। वर्तमान आंकड़ो की बात करें तो इंडिया स्किल्स रिपोर्ट 2022 के अनुसार भारत के बैंकिंग, आईटी, फार्मा, ई-कॉमर्स इंडस्ट्री में आने वाले वर्षो में रोजगार के अवसरों में वृद्धि होगी। घरेलू सेवा और सुविधा प्रदान करने में स्वावलंबन की शुरुआत के उत्साहवर्धक परिणाम आने लगे हैं लेकिन इस दिशा में अभी और कार्य करने की आवश्यकता है। जिससे जीवनचर्या विशेषकर कोरोनाकाल का जीवन सुगम बनाया जा सके। इस दिशा में 'गिग वर्कर्स' की उल्लेखनीय भूमिका सामने आई है, ये वो वर्कर्स हैं जो जोमैटो, स्विग्गी, अमेजन, ओला, अर्बन कंपनी, ग्रोफर्स, उबर, बिग बास्केट, फ्लिप्कार्ट आदि कम्पनियों के लिए काम कर रहे हैं। इनमें युवाओं की संख्या अधिक है। इस क्षेत्र में काम कर रहे लोगों को सामाजिक सुरक्षा देने की दृष्टी से योजना बनी है लेकिन उसका सही तरह से क्रियान्वयन होना आवश्यक है।

आज युवा भारत आत्मनिर्भर भारत के मंत्र के साथ आगे बढ़ रहा है। जहाँ हरियाणा की महिला ललिता चौधरी अपनी संकल्प शक्ति के बूते लुप्त हो चुके खाकी कपास को पुन: जीवनदान देती है और अंतर्राष्ट्रीय फैशन बाजार में भारत की इस सम्पदा का परचम लहराते हुए अपने साथ अनेक को इससे जोडती है। वहीं जबलपुर के युवा अभिषेक नायक स्मार्ट एम पी डिजिटल प्लेटफार्म स्टार्ट कर ई-कॉमर्स क्षेत्र को आगे बढ़ाने का कार्य कर रहे हैं। दामिनी अग्रवाल, सिद्धार्थ स्वामी, उत्कल, रोहित तिवारी जैसे अनेक युवाओं के नाम स्वावलम्बन की मशाल लेकर अनेक लोगों को राह दिखा रहे हैं। हमने साथ विकास की नई सम्भावनाओं को खोजा है और लगातार प्रयासरत है। यह कोशिश ही सफलता के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि

-"धाराओं के विरुद्ध तैरकर जीतना हमें बखूबी आता है। इस बार हमारा एकनिष्ठ लक्ष्य होना चाहिए कि अगले 25 वर्षों के दौरान देश को विकसित राष्ट्र बनाना है। हम एक समृद्ध, सतत और खुशहाल भारत चाहते हैं। हमें अपनी दृष्टि , संस्थानों, प्रणालियों, नीतियों, संस्कृति और मानसिकता को परिभाषित कर योजनाबद्ध ढंग से इस मुद्दे का समाधान निकालना है। इन सभी को विकसित भारत मिशन के साथ जोड़ना चाहिए। विकसित भारत मिशन के अंतर्गत हम इसका खाका खींच रहे हैं। अपने आर्थिक माडल पर पुनर्दृष्टि के साथ ही हमारी मानसिकता में भी बदलाव आवश्यक है। हमें सभी मतभेद भुलाकर '2047 तक विकसित भारत' मिशन में जुटना चाहिए। अगर हम इसे संभव न कर सके तो उसमें किसी और का दोष नहीं होगा।"[6] भारत के प्रत्येक क्षेत्र में जो यहाँ की विशेष पहचान है उसे वैश्विक स्तर पर पहचान दिलाना हम सभी का कर्तव्य है।

निष्कर्ष

आज नवीन भारत में पुरातन और नवीन रोजगार के तरीकों में समन्वय करके सकारात्मक रचा जा रहा है लेकिन ये अभी शुरुआत भर है। भारतीय अर्थव्यवस्था को विश्व की शक्तिशाली अर्थव्यवस्था बनाने की दिशा में अभी तकनीक पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। कृषि और ग्रामीण क्षेत्रों की तरफ ध्यान देने की जरूरत है। हमारी लुप्तप्राय संपदा को पुनर्सृजित करने की भी आवश्यकता है। बेशक भारत सरकार ने आत्मनिर्भर रोजगार अभियान के तहत इस बार के बजट में कृषि समेत 12 क्षेत्रों को अपनी इस महत्वाकांक्षी योजना से जोड़ा है। लेकिन भारत को पुन: आत्मनिर्भर भारत बनाने की दिशा में जन-जन का योगदान आवश्यक है। तभी हम जब वर्ष 2047 में स्वाधीनता प्राप्ति की शतवार्षिकी मना रहे होंगे तब आत्मनिर्भर भारत, 'सोने की चिड़िया' भारत को साकार होते भी देख पाएंगे। शिक्षा, समानता और रोजगार के साथ देश को आर्थिक स्तर पर भी मजबूत करने की आवश्यकता है। आज इस दिशा में उल्लेखनीय काम हो रहे हैं। गाँव, कस्बों, महानगरों और राज्य से सम्बंधित विशेषता को देश और वैश्विक पहचान दिलाने की दिशा में अनेक कार्य आकार ग्रहण कर रहे हैं। बनारस का सिल्क उद्योग, लखनऊ की लखनवी कढ़ाई, उड़ीसा, बंगाल का रेशम और तात का काम, मिथिला की मधुबनी कला, पंजाब की फुलकारी, घरों में मसाले, पापड़ और अचार बनाने के लघु उद्योग आदि अनेक हुनर और हुनरमंद देश में हैं। इनके हुनर को जीविका और बाजार से जोड़कर नए-नए प्रयोगों को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। उसकी यह विविधता में एकता हमें अन्य देशों से विशेष बनाती है। अलग-अलग राज्यों की संस्कृति को बढ़ावा देकर आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना को साकार किया जा सकता है। गाँवों और शहरों को आधुनिक सड़कमार्गों एवं तकनीक से जोड़ना जरूरी है जिससे इनके बीच की सामाजिक, मानसिक और आर्थिक दूरी कम की जा सके। कुलमिलाकर भारत को आत्मनिर्भर भारत के सफर में अनेक चुनौतियों से जूझकर विकास की दिशा लेनी होगी। जिसमें 'स्टार्ट-अप' भारत को आत्मनिर्भर बनाने की तरफ बढ़ता कारगर कदम है। विश्व में भारत की छवि को शक्तिशाली भारत, सक्षम भारत बनाने के लिए अनेक योजनाएँ चल रही हैं। आज भारत एशिया महाद्वीप की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था है। कोरोना महामारी ने

सम्पूर्ण विश्व की तरह हमें भी हानि पहुंचाई है लेकिन 'स्वावलंबन' की संजीवनी ने एक उम्मीद भी जगाई है कि हम हार नहीं मानेंगे। हमने साथ मिलकर अनेक असंभावनाओं को दरकिनार करके उनसे सम्पूर्ण विकास की नई संभावनाओं को खोजा है और निरंतर प्रयासरत है।

संदर्भ सूची :

1. मैथिलीशरण गुप्त, 1993, पंचवटी, हिंदुस्तान एकेडमी, इलाहबाद, प्रथम संस्करण पृष्ठ 18
2. तुलसीदास, 2007, तुलसीदास कृत रामचरितमानस रामायण उत्तरकाण्ड, टीकाकार श्री ज्वाला प्रसाद जी, श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भंडार वाराणसी, संस्करण, पृष्ठ 854
3. ए.पी.जे.अब्दुल कलाम/वाई.एस.राजन, 2004, भारत 2020 नवनिर्माण की रुपरेखा राजपाल एंड संस दिल्ली, भूमिका
4. दैनिक जागरण, 6 जनवरी 2022
5. प्रो.एस.के.गुप्ता/डॉ.डी.डी.चतुर्वेदी/डॉ.आनंद मित्तल, 2008, भारत में आर्थिक विकास और नीति–2, किताब महल पब्लिशर्स दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृष्ठ–142
6. राजेंद्र प्रताप गुप्ता, दैनिक जागरण (दिल्ली एनसीआर), सम्पादकीय पृष्ठ, गुरूवार, 30 दिसंबर 2021

❐❐❐

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, स्वामी श्रद्धानंद महाविद्यालय दिल्ली विश्वविद्यालय, pratibha@ss.du.ac.in

उत्तर आधुनिकता और उपभोक्तावाद: मृगतृष्णा या वास्तविक सुख की तलाश

—डॉ. रमेश कुमार बर्णवाल

भारत में अध्यात्म का मूल आत्मा-परमात्मा का संबंध है। विभिन्न देवी देवताओं की भरमार के बीच एक ईश्वर की अवधारणा आने के बाद अध्यात्मवाद को और मजबूती मिली और इसका आरंभ ऋग्वेद में ही हो चुका था जिसमें एक जगह कहा गया है- 'एक अग्नि है जो अनेक स्थानों पर जलती है। एक सूर्य है जो सर्वत्र प्रकाशित है।

मनुष्य की चेतना के दो पक्ष हैं- आध्यात्मिक और भौतिकतावादी। जीवन में तनाव तब आता है जब मनुष्य की आध्यात्मिक चेतना और भौतिकवादी जरूरतों में द्वंद्व या संघर्ष होता है। सामान्यत: जीत भौतिकवादी जरूरतों की होती है और आध्यात्मिक चेतना को हार माननी पड़ती है। दार्शनिक स्तर पर भौतिकतावाद भारत में कोई नई चीज नहीं है। प्राचीन काल में भौतिकतावादी चार्वाक दर्शन ने व्यापक अध्यात्मवादी समाज को गंभीर चुनौती दी थी लेकिन अध्यात्मवादियों द्वारा उसे विकृत रूप में प्रस्तुत कर उसका मजाक उड़ाया गया और उसकी निंदा की गई। इस तरह अध्यात्मवाद को पुन: मजबूती से खड़ा किया गया। लेकिन 19वीं शताब्दी की औद्योगिक क्रांति ने अध्यात्मवाद को झकझोर कर रख दिया। भारतीय संदर्भ में देखें तो अध्यात्मवाद को नए सिरे से अपनी खोज करनी पड़ी। ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज, विवेकानंद के नववेदांत जैसे प्रयास भारतीय अध्यात्मवाद को एक नया जीवन देते हैं। लेकिन औद्योगिक क्रांति ने जिस आधुनिकतावादी समाज और वैज्ञानिक तर्कपद्धति को केंद्रीय रूप से स्थापित कर दिया उससे कई बार ऐसा लगा कि भौतिकतावाद ने अध्यात्मवाद पर एक निर्णायक विजय प्राप्त कर ली है। और आज उत्तर आधुनिकता के वर्तमान दौर में जो व्यापक उपभोक्तावादी समाज बना है उसमें भी आध्यात्मिकता एक परदा भर प्रतीत होती है।

उपभोक्तावादी समाज है क्या और क्या हैं इसकी आकांक्षाएं? क्या यह कोई तात्कालिक, हवा में निर्मित समाज है या इसकी गहरी जड़ें हैं? क्या अध्यात्मवाद की फिर कोई सुसंगत जगह बन सकती है? यह आलेख इन सभी प्रश्नों के उत्तर तलाश करने की एक कोशिश है।

भारत में आध्यात्मिकता बनाम भौतिकतावाद: प्रत्येक देश की तरह भारत में भी आदिम मनुष्यों का जीवन

भौतिकतावादी जरूरतों से संचालित होता था। वे आत्मा, परमात्मा, ब्रह्म, जीव, ईश्वर, ब्रह्मांड, सृष्टि के आध्यात्मिक प्रश्नों से अनजान अपनी भौतिक जरूरतें पूरी करने के लिए संघर्षमय जीवन बिता रहे थे। धीरे-धीरे चेतना के विकास के साथ-साथ उनमें प्रकृति और सृष्टि के प्रति अचरज भरी जिज्ञासा का जन्म हुआ। इसी जिज्ञासा से अनेक रहस्यपूर्ण और धार्मिक अवध ारणाओं का जन्म हुआ। ईश्वर और देवी-देवताओं से पहली बार मनुष्य का परिचय हुआ। उनके जीवन में किसी न किसी रूप में योगदान देने वाले अग्नि, जल, वृक्ष, नदी, पृथ्वी, सूर्य, चंद्रमा आदि सभी उनके लिए देवी-देवता बन गए। उन्होंने प्रकृति की सभी वस्तुओं पर अलौकिक और रहस्यमयी शक्तियां आरोपित करके उनकी पूजा शुरू कर दी। उनकी समझ में प्रकृति की सभी घटनाओं में अलौकिक गुण विद्यमान थे। अपनी कल्पना से उन्होंने उन्हें देवी देवता के रूप में साकार कर लिया। इस तरह अपनी बेचैनी भरी जिज्ञासाओं को शांत कर उन्होंने पहली बार मानसिक शांति का अनुभव किया। फिर प्रकृति की शक्ति के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए और उनके प्रकोप से स्वयं को बचाने के लिए उन्होंने देवी देवताओं की पूजा और आराधना की विधियों का भी आविष्कार किया। साथ ही जीवन के विभिन्न अवसरों से लेकर मृत्यु के बाद तक से जुड़े कई विश्वासों और संस्कारों का जन्म हुआ। भारत के आदिम मनुष्यों के बाद सिंधु घाटी की सभ्यता से लेकर ऋग्वैदिक काल तक भारतीय आध्यात्मिक चेतना का यही आरंभिक इतिहास है। ऋग्वेद के समय तक भारत में आध्यात्मिक मनुष्य स्थापित हो चुका था। उपनिषद काल तक आते आते अध्यात्मवाद अपने शिखर पर पहुंच गया। फिर ब्राह्मण ग्रंथों, मनुस्मृति आदि ने कर्मकांडों में वृद्धि कर दी जिसकी प्रतिक्रिया में लोकायत, सांख्य, योग, जैन, बौद्ध जैसे भौतिकतावादी दर्शनों का उदय हुआ।

भारत में अध्यात्म का मूल आत्मा-परमात्मा का संबंध है। विभिन्न देवी देवताओं की भरमार के बीच एक ईश्वर की अवधारणा आने के बाद अध्यात्मवाद को और मजबूती मिली और इसका आरंभ ऋग्वेद में ही हो चुका था जिसमें एक जगह कहा गया है- 'एक अग्नि है जो अनेक स्थानों पर जलती है। एक सूर्य है जो सर्वत्र प्रकाशित है। एक उषा है जो इस सबको प्रकाशमान करती है। वह जो परमेश्वर है, उसमें यह सब है।'[1] यह पूर्ण विकसित संसार परम पुरुष का एक अंग माना गया। 'ब्रह्मांड उस ब्रह्मांडीय पुरुष के विराट स्वरूप का एक अंश मात्र है। आकाश उसका मस्तक है, सूर्य उसकी आंख है, पृथ्वी उसका पैर है, पवन उसका श्वास है और नक्षत्र उसके बाल हैं।'[2]

उपनिषदों में ब्रह्म की अवधारणा की शक्तिशाली ढंग से स्थापना हुई जो आज भी भारतीय अध्यात्मवाद का आधार है। उपनिषदों में ऋषि याज्ञवलक्य, श्वेतकेतु, जनक, मैत्रेयी आदि अनेक दार्शनिकों के संसार और उसकी गतिविधियों से जुड़े बुनियादी प्रश्न और उनके समाधान संकलित हैं। मसलन, यह संसार क्या है, किसकी इच्छा से मनुष्य का जीवन चलता है, हम किस आधार पर जीवित हैं, मनुष्य जब सो जाता है तो उसकी बुद्धि कहां चली जाती है और कहां से लौट आती है इत्यादि। उपनिषदों में जहां ब्रह्म को परम शक्ति माना गया है, वहीं ब्रह्म और जीव या परमात्मा और आत्मा में एकता की अभिव्यक्ति भी सशक्त रूप से हुई है, विशेष रूप से

मुण्डक उपनिषद और बृहदारण्यक उपनिषद में। यानी आत्मा और ब्रह्म के बीच कोई भेद नहीं है। मनुष्य में बसने वाली आत्मा और समस्त ब्रह्मांड में संचार करने वाली जीवनी शक्ति दोनों एक ही है। मुण्डक उपनिषद में एक सुप्रसिद्ध श्लोक है, जिसमें कहा गया है कि ब्रह्म को जान लेने वाला ब्रह्म हो जाता है।[3] छांदोग्य उपनिषद के एक श्लोक में कहा गया है कि ''यह सब कुछ परमात्मा ही है, जो ऐसा मानता और समझता है, वह परमात्मा में परम अनुराग, परमात्मा में ही क्रीड़ा, उन्हीं में संयोग का सुख और उन्हीं में आनंद का अनुभव करता हुआ परमात्मरूप हो जाता है।'' बाद में गीता के अठारहवें अध्याय में कहा गया-''भक्ति के द्वारा वह इस बात को जान लेता है कि मैं वस्तुत: कौन हूं और कितना हूं। तब तत्त्व रूप में मुझे जान लेने के बाद वह मुझमें प्रवेश कर जाता है।''[4] इसकी व्याख्या सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने इस प्रकार की है-''ज्ञाता तथा भक्त परमेश्वर, पूर्ण पुरुष के साथ आत्मज्ञान और आत्मानुभव में एकाकार हो जाता है। ज्ञान और भक्ति दोनों का एक ही लक्ष्य है। ब्रह्म बनने का अर्थ है-परमात्मा से प्रेम करना, उसे पूरी तरह जानना और उसमें प्रवेश कर जाना।[5]

जीवात्मा और परमात्मा के इसी संबंध को आगे चलकर आदि शंकराचार्य ने अपने अद्वैतवाद के दार्शनिक सिद्धांत में स्थापित किया। उन्होंने कहा कि ''यदि हम निरपेक्ष परब्रह्म के स्वरूप को जान लें तो समस्त सीमित आकृतियां और सीमाएं अपने आप विलुप्त हो जाती हैं। जगत माया है क्योंकि यह ब्रह्म की अनंत यथार्थता का सत्य नहीं है। उसका आभास है।''[6] उनके अनुसार शरीर तथा उस जैसी अन्य वस्तुएं अविद्या की सृष्टि हैं। वे उतनी ही अस्थायी हैं, जितने पानी के बुलबुले होते हैं। अत: ज्ञान की सहायता से यह जानो कि 'मैं ही परम ब्रह्म हूं' (अहम् ब्रह्मास्मि)। उपनिषदों में यह कहा गया है कि ब्रह्म का ज्ञाता ब्रह्म हो जाता है तो ज्ञाता को अवश्य ब्रह्म के साथ एकात्मरूप होना चाहिए। सब कुछ ब्रह्म ही है (सर्व खल्विदं ब्रह्म:), तो इसके अनुसार जीव तथा जीवात्मा भी और कुछ नहीं, स्वयं ब्रह्म ही है। अत: वह भी ब्रह्म के समान स्वत:प्रकाशित, अनंत और उन्मुक्त है। उसकी सीमाएं उन उपाधियों और परिस्थितियों का परिणाम है, जो अविद्या के कारण दिखाई पड़ती हैं। अविद्या को विद्या से दूर कर दो, तुरंत जीव और ब्रह्म के बीच का द्वैत तिरोहित हो जाएगा, जीव का कोई अलग अथवा भिन्न अस्तित्व नहीं रहेगा और वह अपने यथार्थ रूप में अर्थात ब्रह्म रूप में दृष्टिगत होगा।[7]

ऋग्वेद और उपनिषदों में मुख्य रूप से अध्यात्मवाद का दार्शनिक आधार प्रस्तुत किया गया था। लेकिन इनके बाद और इनके साथ-साथ रचे गए ब्राह्मण ग्रंथों और मनुस्मृति में कर्मकांड, सामाजिक नियम और साथ ही वर्णव्यवस्था को विशेष महत्व दिया गया। सतपथ ब्राह्मण में दो तरह के देवता बताए गए। देवता तो देवता हैं ही। ब्राह्मण, जिन्होंने पवित्र मंत्रों को कंठस्थ कर रखा है और जो इन्हें दूसरों को सिखाते हैं, वे भी मनुष्य रूप में देवता हैं। इसी तरह यज्ञ दो तरह के माने गए। अग्नि में जो यज्ञ किए जाते हैं वे देवताओं की पूजा के लिए होते हैं। किंतु जो उपहार और पूजा ब्राह्मणों को भेंट की जाती है, वह मनुष्य रूपी देवताओं के लिए यज्ञ होते हैं। मनुस्मृति में वर्णव्यवस्था की पुरजोर ढंग से स्थापना करते हुए मनु ने घोषणा की थी कि ब्राह्मण चूंकि वेदों का अधिकारी है, अत: उसे समस्त सृष्टि का प्रभु होने का अधिकार है। ब्राह्मण ग्रंथों और

मनुस्मृति तक स्वर्ग-नरक, पुनर्जन्म, कर्मफल, मोक्ष जैसी मान्यताओं का पूर्ण विकास हो चुका था।

इन सबकी प्रतिक्रिया में भौतिकवादी दर्शनों का उदय हुआ था। और चूंकि वेदों पर अधिकार के कारण ही ब्राह्मणवाद की स्थापना हुई थी इसलिए वेदों की सत्ता को स्वीकार करने से भी उन्होंने इनकार कर दिया और ब्रह्मांड की उत्पत्ति के संबंध में उपनिषदों की अवधारणा का भी पूरी शक्ति से विरोध किया। भौतिकवादी दर्शनों में लोकायत या चार्वाक दर्शन में अध्यात्मवाद का सबसे उग्र विरोध हुआ। यहां तक कि इसी कारण उसे एक भोगवादी दर्शन के रूप में प्रचारित किया गया और कहा गया कि यह कर्ज लेकर घी पीने का दर्शन है। भारत में 15वीं सदी में भी अध्यात्मवादियों द्वारा लोकायत दर्शन की मान्यताओं का विरोध किया जाना इस बात का संकेत देता है कि समाज में इस दर्शन से बड़ी संख्या में लोग प्रभावित थे जिन्हें 'सही' राह पर लाने के लिए अध्यात्मवादियों को इसकी मान्यताओं का विरोध करना पड़ रहा था। लोकायत दर्शन ने आत्मा, परमात्मा, स्वर्ग, नरक, मोक्ष आदि से जुड़ी सभी अध्यात्मवादी मान्यताओं को झूठ का पुलिंदा कहा। उसके अनुसार इस संसार के अलावा कोई दूसरा संसार नहीं है। न तो स्वर्ग है और न नरक है।[8] मोक्ष के बारे में उन्होंने कहा कि मोक्ष मृत्यु के अलावा और कुछ नहीं है। और मृत्यु प्राणों का समाप्त हो जाना ही है। अत: बुद्धिमान लोगों को मोक्ष के लिए कष्ट नहीं उठाने चाहिए। मूर्ख ही तप और व्रत आदि से अपने शरीर को शक्तिहीन और निर्बल बनाते हैं। लोकायत दर्शन में धार्मिक साहित्य को झूठा कहा गया है और इसलिए उसकी उपेक्षा करने को कहा गया है। इसके अनुसार कोई देवी-देवता या अलौकिक शक्ति नहीं है। अमर आत्मा जैसी भी कोई चीज नहीं है। शरीर की मृत्यु होने पर कुछ शेष नहीं रहता।[9] वेदों और उपनिषदों के गंभीर दार्शनिक और आध्यात्मिक प्रश्नों के इन्होंने यथार्थवादी और भौतिकवादी उत्तर दिए। उनके अनुसार केवल प्रत्यक्ष ज्ञान ही सच्चा ज्ञान प्रदान करता है। धार्मिक उपदेश और पुरोहित वर्ग निरर्थक है। उन्होंने घोषणा की कि जीवन का लक्ष्य अधिकतम आनन्द का उपभोग करना है।

इस तरह हम देखते हैं कि भारत में प्राचीन काल से ही आध्यात्मिकता के साथ-साथ भौतिकतावाद की एक समानांतर दार्शनिक विचारधारा मौजूद रही है। और इसकी समाज में ही नहीं विद्वानों में भी महत्त्वपूर्ण स्वीकृति रही है। लेकिन भारत आध्यात्मिकता का देश है, यह प्रचारित करते समय पूरे आधुनिक युग में इस पहलू की गंभीर उपेक्षा हुई है। इससे निश्चित ही अंग्रेजों को अपने औपनिवेशिक हितों को पूरा करने में मदद मिली और आधुनिक चेतना से संपन्न लोगों में अपने देश की परंपरा के प्रति विद्रोह की भावना अधिक उत्पन्न हुई और पश्चिमी भौतिकतावाद की तरफ वे अधिक आकर्षित हुए। यह अवश्य है कि आधुनिक युग के पहले आध्यात्मिकता ही वर्चस्व की विचारधारा थी। भक्तिकाल में कबीर जैसे क्रांतिकारी कवि ने भी 'माया महाठगिनी हम जानी' कहकर लोगों को इस संसार की माया से मुक्त रहने की सीख दी थी। लेकिन आधुनिक युग में बीसवीं सदी के एकदम प्रारंभ में श्रीधर पाठक जैसे कवियों ने इस जगत को ही सच्चा मानने पर जोर दिया। अपनी 'जगत सचाई सार' कविता में वे उपदेशक के ही अंदाज में कहते हैं- ''यह जग सच्चा तनिक न कच्चा, समझो बच्चा इसका भेद।'' लेकिन

उत्तरआधुनिकता के वर्तमान दौर में एक बार फिर पहिया घूम रहा है। एक तरफ जहां भौतिकतावाद और उपभोगवाद बाजार की नई शक्तियों के कारण उफान पर है और आर्थिक मंदी के साथ उसका बुलबुला थोड़ा फूटा भी है, तो साथ-साथ एक नकली आध्यात्मिकता भी समाज में फैलती चली गई है। कथावाचकों और आध्यात्मिक गुरुओं की भरमार हो गई है। और रोचक यह है कि इसमें उत्तरआधुनिकता की नई बाजार प्रणाली ही मददगार है। तमाम टीवी चैनलों ने आध्यात्मिकता का बाजार और फैलाया है और इस आध्यात्मिकता के उपभोक्ता सभी धर्मों में बढ़े हैं। सोशल मीडिया और विशेष रूप से फेसबुक और यूट्यूब जैसे माध्यमों ने भी आध्यात्मिकता को नए मंच दिए हैं।

उत्तरआधुनिकता और बाजार का नवपूंजीवाद- वर्तमान भौतिकतावाद और उपभोक्तावाद के लिए बाजारवाद को जिम्मेदार माना जाता है। लेकिन हम जानते हैं कि भारत में व्यापारिक पूंजीवाद मध्ययुग में ही आ गया था। तब बाजार की जरूरतों के कारण ही दस्तकारों और शिल्पकारों को विशेष महत्त्व मिला था और समाज में वे आत्मविश्वास के साथ अपनी आवाज उठाकर खड़े होने लगे थे। जुलाहे समुदाय से आने वाले कबीर को संत के रूप में व्यापक मान्यता मिलना इसी का सबूत है। इसमें उस समय की नई अर्थव्यवस्था की भी भूमिका थी।

फिर आधुनिक युग की औद्योगिक क्रांति जो एक पूंजीवादी सभ्यता विकसित की उसे भी एक व्यापक बाजार की जरूरत थी और भारत ब्रिटेन का उपनिवेश बनने के साथ-साथ उसके उत्पादनों का एक बाजार भी बन गया था। और यह बाजार इस कदर विस्तृत हो गया था कि स्वाधीनता संग्राम के दौरान राष्ट्रभक्तों ने विदेशी सामानों की होली तक जलाई थी और स्वदेशी को अपनाने का प्रण लिया था। तो फिर आज का बाजारवाद और उपभोगवाद किस अर्थ में अलग है? उत्तरआधुनिकता के सिद्धांतकारों ने विस्तार से इसका जवाब दिया है। उसमें के पूंजीवाद को वृद्ध पूंजीवाद कहा गया है। साथ ही इसे नवपूंजीवाद भी कहा गया है।

इसमें उपभोक्ता बनाने के तरीके पूंजीवादी युग के तरीकों से भिन्न है। इसने जिस बाजारवाद को जन्म दिया है उसने एक बड़ा उपभोक्तावादी समाज बनाया है। जो वस्तुओं को नहीं खरीदता बल्कि वास्तव में उन संकेतों की खरीददारी करता है जिन्हें बाजार ने बनाया है। ये संकेत आकर्षक विज्ञापनों से बनाए जाते हैं। आज के नवपूंजीवाद और बाजारवाद की सबसे बड़ी शक्ति है विभिन्न जनसंचार माध्यमों में आकर्षक और छलावे विज्ञापनों की शक्ति।

वर्तमान बाजारवाद और उपभोक्तावाद को व्याख्यायित करते हुए बोद्रियार्द इसके तीन कारण बताते हैं- 1. अमेरिका और पूरे यूरोप में उत्पादन में बेतहाशा बढ़ोतरी हुई है। जब उत्पादन बढ़ जाता है तब चाहे कृत्रिम ढंग से सही, मांग को प्रोत्साहित किया जाता है। और इसके लिए लोगों तक पहुंच बनाने के नए-नए तरीके अपनाए जाते हैं। इससे लोगों में उपभोग की प्रवृत्ति बढ़ती है। 2. भिन्न दिखने की लालसा। समाज में लोग अपना जीवन पद्धति द्वारा अमनी प्रतिष्ठा बढ़ाना चाहते हैं। वे बताना चाहते हैं कि उनकी जीवन पद्धति और लोगों से भिन्न है। भिन्न दिखने की यह आकांक्षा उन्हें ज्यादा से ज्यादा उपभोग करने के लिए प्रेरित करती है। और 3. बोद्रियार्द ने कहा कि वस्तुएं संकेत हैं। लोग वस्तुओं का उपभोग नहीं करते, संकेतों का उपभोग करते हैं। नए

जनसंचार माध्यमों में आकर्षक और छलावे विज्ञापनों के कारण अब वस्तुएं आवश्यकताओं को पूरा करने का साधन बनकर नहीं आतीं बल्कि वे संकेतक बनकर आती हैं। ये संकेत उपभोग के लिए लोगों को प्रेरित करते हैं। अगर वस्तुओं को बाजार में बिकना है तो उन्हें सशक्त संकेत बनना ही पड़ेगा नहीं तो वे बाजार से उठ जाएंगी। इस तरह वस्तुओं का उपयोग मूल्य महत्वपूर्ण नहीं रह जाता बल्कि उनका संकेत मूल्य ही महत्वपूर्ण हो जाता है।[10]

बोद्रियार्द कहते हैं कि उत्तरआधुनिकता का समाज बुनियादी रूप से मास मीडिया या जनसंचार माध्यमों का समाज है। ये जनसंचार माध्यम रियलिटी या यथार्थ की जगह हाइपररियलिटी यानी अतियथार्थ या आभासी यथार्थ का निर्माण करते हैं और अपनी इसी शक्ति के कारण इन्होंने एक नए उपभोक्ता समाज को बनाया है।[11] इस नए समाज की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें वर्गों के विभाजन का आधार उत्पादन संबंध नहीं रह गया है जो कि औद्योगिक या आधुनिक समाज की विशेषता थी। बल्कि इसका आधार समाज में उपभोग का स्तर हो गया है। भारत में हम देख सकते हैं कि आर्थिक उदारीकरण और भूमंडलीकरण के बाद उपभोक्ता समाज को बढ़ाने में बाजारवाद की शक्तियां ही सक्रिय नहीं रहीं बल्कि स्वयं सरकारों ने इसके लिए अनुकूल नीतियां और वातावरण तैयार करने को लेकर अभूतपूर्व प्रयास किए हैं। भारत में विदेशी कंपनियों को आमंत्रित करना और यहां के उपभोक्ता बाजार को बढ़ा-चढ़ाकर बताना आज की प्रमुख अर्थनीति हो गई है। लेकिन इस उपभोक्तावादी समाज ने क्या भारत के पारंपरिक समाज में कोई महत्त्वपूर्ण तोड़-फोड़ की है जिसे युगांतरकारी माना जाए, इसकी परीक्षा करना जरूरी है। क्या भारतीय समाज को बदलने में उपभोक्तावाद की कोई सकारात्मक भूमिका भी मानी जा सकती है या यह एक मृगतृष्णा भर है? पिछले कुछ वर्षों में आर्थिक मंदी के कारण नवपूंजीवाद और उपभोक्तावाद का जो बुलबुला फूटा है उसके संदर्भ में यह जानना और जरूरी हो गया है।

उपभोक्तावादः मृगतृष्णा या सच्चे सुख की तलाश- क्या सुविधाएं या भौतिक साधन खुशी या प्रसन्नता प्रदान कर सकते हैं? क्या उपभोक्तावादी जीवन से सच्चे सुख की तलाश पूरी हो सकती है? अब ये सवाल पूछे जाने का दौर गुजर चुका है और उपभोक्तावाद हमारे समाज की एक प्रमुख प्रवृत्ति बन चुकी है। लेकिन अब भी ये सवाल अपनी जगह हैं।

भारत में भूमंडलीकरण के साथ उपभोक्तावाद का वास्तविक रूप तब सामने आया जब कार, टीवी, फ्रिज जैसी चीजें खरीदने के लिए बैंकों से कर्ज मिलना शुरू हुआ और मध्यवर्ग ही नहीं बल्कि निम्नमध्यवर्ग की दबी हुई इच्छाएं भी पूरी होने लगीं। कर्ज लेकर घी पीने की कहावत जब सही अर्थों में साकार होने लगी। ब्याज चुकाए जाने की चिंता छोड़ लोगों ने किस्तों पर ये चीजें लेनी शुरू कर दीं। और फिर आवश्यकताओं ने अपना पैर पसारना शुरू किया। क्रेडिट कार्ड ने लोगों को जब और जहां भी खरीदारी की सुविधा दे दी, तत्काल पास में पैसे न हों तो भी। लोगों के सपनों को पंख लगने शुरू हुए। पहले मध्यवर्ग के लोग अपनी चीजें पड़ोसियों को दिखाकर यह कहते हुए रोब जमाते थे कि यह इम्पोर्टेड है। लेकिन अब एक-एक कर सभी विदेशी कंपनियां चलकर भारतीय बाजार में आ गईं। और फिर शुरू हुआ ब्रांडों से जुड़ी पहचान का दौर। ब्रांडों के पीछे भागने का दौर। ऐसा नहीं कि पहले ब्रांड नहीं थे। पार्कर पेन, रेमंड सूट जैसी

अनेकानेक कंपनियों की साख पहले भी थी। लेकिन उनके प्रति आम लोगों में आग्रह नहीं था लेकिन टीवी चैनलों और टीवी कार्यक्रमों की भरमार के साथ-साथ विज्ञापनों का जो नया युग आया उसने ब्रांडों को आम लोगों में परिचित बना दिया। इसके अलावा नए मध्यवर्ग के उदय और शॉपिंग मॉल तथा स्थानीय बाजारों तक में इन ब्रांडों के शोरूम्स खुलने से लोगों की इन तक पहुंच बढ़ गई। अब उपभोक्तावाद केवल क्रयशक्ति का मामला रह गया। और वह जादू क्या जो सिर चढ़कर न बोले। कुछ वर्ष पहले कोल्डड्रिंक के एक विज्ञापन में दिखाया गया था कि एक आदिवासी इलाके में गरीब बच्चे सचिन तेंदुलकर का मुखौटा लगाए उल्लास के साथ एक खास कंपनी की कोल्डड्रिंक पी रहे हैं। और कुछ अंशों में यह हकीकत भी बन चुका है। आज ये चीजें सामाजिक पहचान से जुड़ चुकी हैं और लोगों की जरूरत बन चुकी हैं।

इन प्रवृत्तियों को देखते हुए ऐसा लगता है कि बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में महात्मा गांधी द्वारा प्रचारित अपरिग्रह का सिद्धांत समाज में अप्रासंगिक हो चुका है। कबीर ने कहा था, साई इतना दीजिए जामे कुटुम्ब समाए, आप भूखा ना रहें साधु ना भूखा जाए। लेकिन अब लोगों की आकांक्षाएं इतनी सीमित नहीं रही हैं। शायद तब भी नहीं थीं वरना कबीर को ऐसा क्यों कहना पड़ता और क्यों उनका जीवन संत का जीवन कहलाता- ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया। आज समाज का बहुत छोटा सा वर्ग 'संतोष परम सुखम्' को अपने जीवन का आदर्श मानता है और बहुत बड़ा वर्ग क्रय शक्ति न होने के कारण मजबूर है लेकिन उपभोग की इच्छाएं उसके पास हैं। और दुहराने की आवश्यकता नहीं कि उनकी ये इच्छाएं सुखी और ऐश्वर्यभरा जीवन जीने की प्राकृतिक लालसा के साथ-साथ मीडिया द्वारा पैदा की गई लालसा भी है। आज मीडिया समृद्धि के जैसे संकेतों का निर्माण कर रहा है उसमें यही होना स्वाभाविक था। मीडिया में हर साल अमीरों की बढ़ती संख्या का ढिंढोरा पीटा जाना समाज के संकेतक का ही निर्माण है। मुकेश अंबानी का अरबों रुपए का बंगला हमारे समय का एक मजबूत संकेतक मीडिया द्वारा ही बनाया गया है। संक्षेप में, अपरिग्रह अब समाज का मानक आदर्श नहीं रहा। निम्नमध्यवर्ग के लोगों के साथ यह एक महत्वपूर्ण बात देखी जा सकती है कि वे उपभोग की आकांक्षाओं के साथ-साथ अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाने के लिए भी प्रयत्नरत हैं। वे जानते हैं कि जीवन की सुख-सुविधाएं अच्छी शिक्षा के माध्यम से हासिल की जा सकती हैं। इस तरह हम देखते हैं कि समाज का जीवन अब भौतिकतावादी जीवन बन चुका है। तो क्या अध्यात्मवाद का युग समाप्त हो गया?

विडंबना यह है कि जिस मास मीडिया को समाज में उपभोक्तावाद को बढ़ाने का श्रेय जाता है, उसी मास मीडिया ने आध्यात्मिकता का कारोबार भी बढ़ाया है। भौतिकतावाद मुख्यत: नास्तिकता का दर्शन है लेकिन वर्तमान में हम धार्मिकता का एक नया ज्वार भी देख रहे हैं। टीवी चैनलों में कुम्भ मेले का सीधा प्रसारण दिखाया जाता है और हर साल कुम्भ के भीड़ भरे मेले में जाने वालों की संख्या बढ़ती जाती है। कांवड़ियों की भीड़ भी लगातार बढ़ती दिखाई देती है और उनमें युवाओं की संख्या ही ज्यादा होती है। धार्मिक और आध्यात्मिक कार्यक्रमों वाले टीवी चैनलों की भरमार भी दर्शकों में इनकी व्यापक स्वीकृति का संकेत है।

इस संबंध में हाल में घटी दो प्रमुख घटनाएं प्रतीकात्मक महत्व रखती हैं। 1. कोरोना के बाद पूरी दुनिया के साथ-साथ भारत में भी आर्थिक मंदी का वर्तमान दौर। इसने भौतिकतावादी दर्शन से प्रभावित उपभोक्तावाद के सामने चुनौती पेश की है और बाजारवाद भी फिलहाल थोड़ा सहमा हुआ है। 2. कुछ वर्ष पूर्व अध्यात्मगुरु आसाराम बापू की यौन उत्पीड़न मामले में गिरफ्तारी। आसाराम बरसों से करोड़ों लोगों की आस्था का मूर्त रूप बने हुए थे। लोग भगवान की तरह उनकी तस्वीर घर और दुकानों में लगाया करते थे। यौन उत्पीड़न के अनेक मामलों में आसाराम की संलिप्तता उजागर होने से करोड़ों लोगों की आस्था ठगी सी रह गई। अंत में प्रश्न यह है कि भौतिकतावाद और आध्यात्मिकता दोनों तरफ से निराश मनुष्य क्या करे? जिस तरह ढलकर सूरज फिर अगले दिन निकल आता है, परिदृश्य बता रहे हैं कि भारतीय समाज में ये दोनों ही लंबे समय तक जारी रहने वाले हैं।

संदर्भ सूची :

1. ऋग्वेद, 8.58.2
2. पुरुष एवेदं सर्व यद्भूतयच्चभव्यम- ऋग्वेद, 10.90
3. ब्रह्मवित् ब्रह्मैव भवति:- मुण्डकोपनिषद
4. श्रीमद्भगवद्गीता, 18:55
5. भगवद्गीता, (2001) राधाकृष्णन, पृ. 428
6. वही, पृ. 565
7. के. दामोदरन, (2004) भारतीय चिंतन परंपरा, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, पृ. 259
8. वही, पृ. 107
9. वही, पृ. 108
10. एस. एल. दोषी, (2007) आधुनिकता, उत्तरआधुनिकता एवं नवसमाजशास्त्रीय सिद्धांत, रावत पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, पृ. 217
11. वही, पृ. 224

❐❐❐

असिस्टेंट प्रोफेसर, श्यामलाल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, शाहदरा, दिल्ली-110032, मोबाइल नं. : 9990689254

ई-मेल: burnwalramesh77@gmail.com

रोनाल्ड ई आशर: अनुवाद चिंतन एवं साहित्यिक गरिमा

—डॉ. मोहनन वीटीवी

सन् 1953 में तमिल भाषाध्ययन के लिए वे पहली बार भारत आये। सन् 1963 से लेकर आशर मलयालम का अध्ययन करने लगे। पी श्रीकुमार का मानना यह है कि द्रविड भाषाओं की ग्रंथ सूची से यह जानकारी प्राप्त होती है कि कैमिल स्वलबिल (1927-2009) तथा हेर्मन गुंडर्ट (1814-1893) के बाद जिस विदेशी विद्वान ने तमिल भाषा के क्षेत्र में बड़ा योगदान दिया है, वह आर ई आशर है।

दक्षिण भारत की भाषाएँ तथा साहित्य के साथ आर ई आशर का गहरा संबन्ध है। उन्होंने तमिल तथा मलयालम भाषाओं के साहित्य को अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। वे जाने-माने अनुवादक, अनुवाद चिन्तक, भाषा वैज्ञानिक एवं भाषा प्रेमी थे। आशर ने मलयालम के जाने-माने उपन्यासकार तकषी शिवशंकर पिल्लै तथा वैक्कम मुहम्मद बशीर के लगभग सभी रचनाओं का अंग्रेजी में अनुवाद किया। वे इसलिए अनुवादक तथा अनुवाद चिन्तक के रूप में ख्याति प्राप्त हैं। दक्षिण भारत के शीर्षस्थ भाषा वैज्ञानिक के रूप में आशर का नाम लिया जाता है।[1] ऐसे मशहूर विदेशी साहित्यकार, भाषा वैज्ञानिक तथा भाषा प्रेमियों के नाम लिये जाते हैं जिन्होंने भारत में आकर यहाँ की भाषाएँ पढ़ी और व्याकरण तथा भाषा विज्ञान के महान ग्रंथ रचे। अनेक विदेशी विद्वानों ने इस भेत्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया जिनमें फ्रैंसिस्को औसिंनियो, कैमिल बुल्के, लिंडा हेसो, फ्रैंसिस डब्ल्यू प्रिट्टेत्तु, अन्ना मरे स्किलेली, रलफा रस्सल, हंक हाइफिट्सो डेविड जूलमान, कैमिल वी सी लैबिलो, नोर्मन, कूट्लरो, एड्वर्ड सी डीपॉक, हेर्मन गुंडर्ट आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। आर ई आशर का नाम इसलिए विशेष महत्वपूर्ण है कि वे केवल भाषा प्रेमी नहीं थे, उन्होंने मलयालम भाषा को अंग्रेजी अनुवादों के द्वारा विदेशी भाषाओं के स्तर तक पहुँचाया, मलयालम के व्याकरण लिखे, अनुवाद के सिद्धान्तों को बहुत ही गहरे स्तर तक समझाने की कोशिश की, भाषा वैज्ञानिक ग्रंथ लिखे, अनेक लेख लिखे।

उनका जन्म 23 जुलाई 1926 को इंग्लैंड के कृषक परिवार में हुआ। उनके पिता का नाम एनस्ट आशर तथा माता का नाम डॉरिस हस्ट था। उन्होंने लंडन विश्वविद्यालय से फ्रेंच पुनरुत्थान तथा साहित्य में पी एच डी की उपाधि प्राप्त की। वे उसी विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ ऑरियन्टल तथा अफ्रीकी अध्ययन केन्द्र के प्राचार्य, एडिनबरो विश्वविद्यालय के प्रोफेसर

आदि के रूप में कार्यरत रहे। अब वे एडिनबरो विश्वविद्यालय के भाषा विज्ञान के केन्द्र में एमिरटस प्रोफेसर हैं।

सन् 1953 में तमिल भाषाध्ययन के लिए वे पहली बार भारत आये। सन् 1963 से लेकर आशर मलयालम का अध्ययन करने लगे। पी श्रीकुमार का मानना यह है कि द्रविड भाषाओं की ग्रंथ सूची से यह जानकारी प्राप्त होती है कि कैमिल स्वलबिल (1927-2009) तथा हेर्मन गुंडर्ट (1814-1893) के बाद जिस विदेशी विद्वान ने तमिल भाषा के क्षेत्र में बड़ा योगदान दिया है, वह आर ई आशर है।[2] वी के कृष्ण मेनन ने सन् 1950 के दशक में लंडन विश्वविद्यालय में जो वाचन दिये थे, उसके प्रभाव पर आशर मलयालम सीखने लगे। Kerala and Malayalam Literature, Renaissance of Malayalam Literature आदि उनके ग्रंथ मलयालम भाषा तथा साहित्य पर आधारित हैं।[3] उन्होंने यह माना है कि उपन्यास के क्षेत्र में मलयालम साहित्य बहुत ही आगे बढ़ चुका है।..... भारत के समकालीन साहित्य में विशेष स्थान तमिल, मलयालम, बंगाली, हिंन्दी आदि भाषाओं को है।

सन् 1971 में आर ई आशर ने आर राधाकृष्णन के सहयोग के साथ A Tamil Prose Reader: Selections from Contemperory Tamil Prose with Notes and Glossary तथा सन् 1973 में Some Landmarks in the History of Tamil Prose आदि ग्रंथ लिखे। सन् 1966 में क्वालालंपुर में प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय तमिल भाषा सम्मेलन संचालित किया गया। आशर ने सेवियर तनिनायकम के साथ सम्मेलन के प्रबंधों का संकलन 'Proceedings of the First International Conference Seminar of Tamil Studies' शीर्षक पर प्रकाशित किया। सन् 1968 में चेन्नई में द्वितीय तमिल भाषा सम्मेलन का आयोजन किया गया। आशर ने खुद उस सम्मेलन के प्रबंधों का 'Proceedings of the Second International Conference Seminar of Tamil Studies' शीर्षक पर प्रकाशित किया।

आशर ने तमिल, मलयालम, अंग्रेजी तथा फ्रेंच साहित्य एवं भाषा पर अनेक आलोचनात्मक ग्रंथ लिखे। उन्होंने सन् 1970 में Tamil Renaissance and the beginnings of the Tamil novel तथा सन् 1989 में Renaissance of Malayalam Literature आदि गंभीर लेख लिखे जो उनकी तमिल पर साहित्यिक दक्षता के परिणाम हैं। उन्होंने ई.एफ.के कोर्नर के साथ Coneise History of the Language Scviences - From the Sumerians to the cognitivists नामक ग्रंथ लिखे। भाषा विज्ञान के क्षेत्र में यह ग्रंथ महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उन्होंने इस ग्रंथ के पुरोवाक् में लिखा है, 'There has in the later decades of the 20th Century been an increasing awareness in the field of theoretical linguistics of the value in modern work of an appreciation of the views] findings and insights of our Predecessors through the ages- This book aims to present within the compass of a single volume a comprehensive history of the language Sciences-'[5] चाहे वे जाने-माने वैज्ञानिक हो, आशर के साहित्य में फ्रेंच पुनरुत्थान तथा मलयालम साहित्य का इतिहास भरा पड़ा है। जी. श्रीकुमार ने आशर को उद्धृत किया, 'If we do research into language because it is

language that above all that distinguishes man from other species, then it is in the creative use of language in literature that we find the fullest extent of this distinction.'6 सन् 1986 से लेकर 1989 तक वे एडिनबरो विश्वविद्यालय के भाषा संकाय के डीन थे तथा 1900 से लेकर 1993 तक उसी विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे। सन् 1969 में The Penguin Companion Literature के भारत-पाकिस्तान-श्रीलंका विभाग के संपादक थे। उन्होंने सन् 1994 में The Encyclopedia of Linguistics के दस अंक के संपादन तथा सन् 1994 में सीमोस्ली के साथ The Atlas of the World's Languages का संपादन किया। आशर ने मलयालम, तमिल तथा फ्रेंच साहित्य पर अनेकानेक विद्वत्तापूर्ण समीक्षाएँ लिखीं। उन्होंने शूरनाडु कुंजनपिल्लै के द्वारा संपादित केरल विश्वविद्यालय के मलयालम कोश के बारे में अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं पर विशेष समीक्षाएँ तथा आलेख लिखे। अय्यप्प पणिक्कर, के.एम.जोर्ज, कृष्ण चौतन्य आदि विद्वानों ने मलयालम साहित्य पर अंग्रेजी भाषा में खूब लिखे। आशर ने उन रचनाओं की समीक्षाएँ लिखीं एवं अंग्रेजी विद्वान एवं पाठकों को परिचित करवाया। उन्होंने Encyclopaedia Britannica में तमिल तथा मलयालम भाषा पर लिखे। उन्होंने Dictionary of Oriental Literatures (1974) में ओ. चंतु मेनन, पी. केशवदेव, चंगम्पुषा कृष्ण पिल्लै, कुमारनाशान, के.एम.पणिक्कर, वैक्कम मुहम्मद बशीर, वल्लत्तोल नारायण मेनन, एम.टी.वासुदेवन नायर, तकषी शिवशंकर पिल्लै आदि मलयालम के साहित्यकारों के बारे में लिखकर मलयालम भाषा एवं साहित्य का परिचय करवाया। आशर ने टी सी कुमारी के साथ Descriptive Grammers नामक व्याकरण ग्रंथ लिखा जो 'आशर का व्याकरण' नाम से जाना जाता है। सन् 1997 को रूटलेड्ज ने इस ग्रंथ का प्रकाशन किया। 'Existential, Possessive, locative and copulative sentences in Malayalam' नामक उनका शोध प्रबंध आधुनिक भाषा विज्ञान के सारे तत्वों को प्रकट करता है।

भाषा विज्ञान, व्याकरण आदि पर आशर ने अनेक विद्वत्तापूर्ण लेख एवं ग्रंथ लिखे। उन्होंने मलयालम के अनेक उपन्यासों का अंग्रेजी में किया। इसके साथ अनुवाद के प्रायोगिक पक्ष पर अनेक सिद्धान्त का प्रयोग किया। आशर ने मलयालम पढ़ी, तकषी शिवशंकर पिल्लै तथा वैक्कम मुहम्मद बशीर की लगभग सभी रचनाओं का अंग्रेजी में अनुवाद किया। वैक्कम मुहम्मद बशीर के ख्याति प्राप्त उपन्यास 'न्टुप्पाप्पक्कोरानेन्डार्न' का अंग्रेजी में 'My granddad had an elephent' शीर्षक पर मलयालम से अनुवाद किया। उन्होंने के.पी.रामनुण्णी का उपन्यास 'सूफी परंजा कथा' का अंग्रेजी अनुवाद 'What the Sufi said' एन गोपालकृष्णन के साथ किया। जाने माने साहित्यकार सलमान रूश्दी का मानना यह था कि भारतीय भाषाओं में बेहतरीन रचनाएँ प्रकाशित नहीं हो रही हैं। आशर ने इस वक्तव्य का खण्डन अपनी मलयालम तथा तमिल रचनाओं के अंग्रेजी अनुवादों के द्वारा किया और अनुवाद सिद्धान्तों को सामने रखा। उन्होंने सन् 1980 में बशीर के 'बाल्यकाल सखी' नामक उपन्यास का अंग्रेजी अनुवाद 'Childhood friend' किया।

आशर को उद्धृत करते हुए डॉ सुजा एस यह मानती है, 'बशीर की रचनाओं के अनुवाद में अत्यन्त सतर्क रहना चाहिए क्योंकि वाक् तथा ध्वनियों के साथ उच्च साहित्यिक ज्ञान की आवश्यकता भी है। एक तरफ, वे हस्तामलक की तरह शब्दों का बहुत ही आसान तरीके में प्रयोग करते हैं, तो दूसरी तरफ, उनके शब्दों में अत्यन्त संकीर्ण दुनिया की परख है। हरेक कथाएँ मूल कथा से अत्यन्त गहरे तौर पर जुड़ी हुई हैं। इसलिए अनुवादक को बशीर की तियों को एकक घटक के रूप में अनुवाद करना चाहिए।'

आशर का मानना यह है कि अनुवादक को भाषा विद् होना भी जरूरी है और इसलिए वह कलम के जादूगर हैं। जब वे भाषा के साथ-साथ मूल रचनाकार तथा उनकी संस्कृति के साथ परिचित हो वह एक बेहतर अनुवादक हो सकता है। आशर के अनुवादीय अनुभवों के आधार पर उपर्युक्त प्रस्ताव बहुत ही स्पष्ट हो जाता है। उनका मानना यह है कि अनुवादक को शब्द के यथातथ्य अनुवाद पर ध्यान नहीं देना चाहिए। अनुवाद शब्दानुवाद न हो। बशीर के उपन्यासों के वार्तालाप का अनुवाद अत्यन्त कठिन है। एक उदाहरण यहाँ दिया जाता है जो अंग्रेजी में प्रयुक्त नहीं है।

Umma was saying to some children,

'What you vagabonds!'

The vagabond Kunjupattummas and kunjutachummas, Adimas and Makkars said, 'Gulgulugulu!'

'What did you say, you vagabonds?' Asked Umma.

'Lullullu!' said the children

Umma strated getting all worked up and said& 'you'll be bitten by a deadly snake!'

'memmemme!'

'you pigs!'

'peppeppe!'

'I'll knock you flat!' saidumma. 'Umma', said kunjuppattumma from some way off. 'Leave The alone'.

You say something and their bapas will come and started a quarrel!

'Let them come!' Umma said loud enough for the whole world to hear.

Let them all see you! Let them see Anamakkar's darling daughters' darling daughter. Let them all see! Your uppuppa had an elephant! A huge tusker.

'It was an elephant ant.' Said an eighteen inch tall, dark adimawith snootty nose and hands covered with scabs.

'Elephant ant! Elephant ant!'

जाने-माने भाषा विद्, साहित्य के विद्वान, अनुवादक के साथ-साथ आशर का नाम विख्यात अनुवाद चिंतक के रूप में लिया जाता है। तत्कालीन मलयालम साहित्यकारों के लगभग सभी रचनाओं का अनुवाद उन्होंने अंग्रेजी में किया है। आशर ने अनुवाद को संस्कृति के साथ जोड़ा है। उनका मानना यह है कि अनुवादक को दोनों भाषाओं का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। अनुवादक को मूल तथा लक्ष्य भाषा की संस्कृति से खुला संबन्ध रखना चाहिए उन्होंने उपन्यास, कहानी

आदि साहित्य की विधाओं के साथ गहरा ज्ञान रखा। कविता, नाटक आदि के साथ उनका संबन्ध नहीं था। Malayalam Language and Literatur, Encyclopedia Britannica, The Penguin Companion to Literature, The Novel in India, Studies in the Language and Culture of South Asia, The Dictionary of Oriental Literature and Cassell's Encyclopedia of world Literature आदि उनकी विद्वत रचनाएँ अनुवाद, भाषा एवं साहित्य पर आधारित हैं जो मूलत: भारतीय साहित्य के परिप्रेक्ष्य में लिखे गये हैं।

संदर्भ सूची :

1. पी. श्रीकुमार, मलयालत्तिन्टे आशर, पृ.सं-1, सं. पी. श्रीकुमार, मलयालत्तिन्टे आशर, केरल भाषा संस्थान, तिरुवनंतपुरम, 2013.
2. पी. श्रीकुमार, मलयालत्तिन्टे आशर, पृ.सं-2, सं. पी. श्रीकुमार, मलयालत्तिन्टे आशर, केरल भाषा संस्थान, तिरुवनंतपुरम, 2013.
3. R.E Asher, Routledge London, 1997
4. आशर मलयालम का आत्मसुहृत्त, डॉ पुतुश्शेरी रामचन्द्रन. पृ.सं. 34, मलयालत्तिन्टे आशर, सं. पी. श्रीकुमार, 2013.
5. Editors Foreword, XI, ed. E.F.K Koerner and R.E Asher, Concise History of the Language Sciences - From the Sumerians to the Cognitivists, Pergamon, 1995.
6. पी. श्रीकुमार, मलयालत्तिन्टे आशर, पृ.सं-10, सं. पी. श्रीकुमार, मलयालत्तिन्टे आशर, केरल भाषा संस्थान, तिरुवनंतपुरम, 2013.

❏❏❏

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, सर सईद कॉलेज, तलिप्परंबा, कन्नूर, केरल-670142, मो. 94003 54822

स्त्री का राजनैतिक प्रतिरोधः स्वरूप एवं संभावनाएं

—प्रियंका श्रीवास्तव
—डॉ. रीता सिंह

जब राजनीति का स्त्री के प्रति दैहिक आचरण है, तो आरक्षण के लक्ष्य की दिशा में स्त्री-राजनीति हो कैसे? ऐसे में स्त्री के सामने दो ही रास्ते बन जाते हैं या तो राजनीति से पलायन कर जाए। जैसे गीताश्री की नायिका 'गोलमी', रजनी गुप्त की नायिका 'मृदु' और किरण सिंह की नायिका 'भारती' करती है या फिर दलीय प्रतिबद्धता के नाम पर जो हो रहा है उसका हिस्सा बन जाए।

चुनाव और राजनीति लोकतंत्र की व्यवस्था से जुड़ा मुद्दा है और लोकतंत्र समाज के गठन से। समाज के सुचारू संचालन के लिए स्त्री-पुरुष दोनों की भागीदारी जरूरी होती है, किंतु भारतीय समाज में सामाजिक संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली आधी आबादी (महिलाएं) स्त्री-सशक्तिकरण की दिशा में मिले राजनैतिक आरक्षण के बावजूद राजनीति में गिनी चुनी नजर आने लगती है। साहित्य, समाज और कानून तीनों का समीकरण स्त्री राजनीति के संबंध में विरोधाभाषी है। जहाँ एक ओर कानून में स्त्री-आरक्षण की व्यवस्था कर स्त्री को राजनैतिक भागीदारी के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा हैं और वास्तविक धरातल में स्त्रियां राजनीति में आना भी चाह रही हैं, कला जगत से स्त्रियों को राजनीति में लाया जा रहा हैं। वहीं साहित्य में अधिकांश में स्त्रियां राजनीति में आकर मोहरा बनकर रह जाती हैं या तो समझौते के तहत यौन-शोषण की शिकार हैं या फिर पलायन कर जा रही हैं। ऐसे में स्त्री-राजनीति व स्त्री-आरक्षण के उद्देश्य की दिशा में, स्त्री के राजनैतिक प्रतिरोध के स्वरूप व भविष्य की संभावनाओं को देखने के लिए राजनीति के सामंती चेहरे की पड़ताल अनिवार्य बन जाती है। हिंदी कथा साहित्य में इसकी पड़ताल 21वीं सदी में बड़ी बारीकी से की गई है। सामंतवादी स्त्री संबंधी सोच व सत्ता की मिलीभगत से राजनीति में लाई गई नायिकाओं के राजनीतिक सरोकार, राजनेता का उनके प्रति आचरण, समझौते के तहत बने रहना, पलायन में प्रतिरोध की तलाश स्त्री-राजनीति के भविष्य की दिशा में महत्वपूर्ण व अनिवार्य कदम है।

बीज-शब्दः

यौन-शोषण, लोकतंत्र, स्त्री-आरक्षण, महिला सशक्तिकरण, साहित्य, समाज, कानून, कला-जगत, 21वीं सदी, राजनीतिक सरोकार, पलायन

मूल आलेखः

समाज के गठन के साथ-साथ इसके सुचारू संचालन के लिए नियम की आवश्यकता आन पड़ी और इस आवश्यकता

की पूर्ति के लिए जिस व्यवस्था की संरचना की गई, वह हुई राजनीति। राजनीति के पतन का व्यापक चेहरा आर्थिक घोटालेबाजी में है, तो घृणित चेहरा राजनीति में स्त्री के इस्तेमाल का। स्त्री के प्रति सामंती सोच देह से प्रारंभ होकर देह तक ही सीमित रहती है और सामंती व्यवस्था हो या राजनीति के चतुर राजनेता सबकी नजर में स्त्री मतलब देह और इस देह का मतलब देह तक ही सीमित नहीं है, बल्कि देहसुख को सर्वसुलभ बनाकर सत्ता सुख तक अपना प्रभाव कायम किए हुए है। स्त्री के प्रति इसी सामंती सोच के राजनीतिकरण के प्रति प्रतिरोध का स्वर 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में मजबूत हुआ है, जिसमें गीताश्री का का उपन्यास 'हसीनाबाद' रजनी गुप्त का उपन्यास 'ये आम रास्ता नहीं', रमणिका गुप्ता की आत्मकथा 'आपहुदरी' किरण सिंह की कहानी 'यीशू की कीलें' स्त्री-राजनीति के स्वरूप व संभावनाओं की दिशा में मील का पत्थर साबित हो रही है।

राजनीति में स्त्री-आरक्षण महिला-सशक्तिकरण की दिशा में प्रयास है। माना यह जाता रहा कि आधी-आबादी (स्त्रियाँ) राजनीति में आएँगी, तो समाज कल्याण होगा। राष्ट्रवादी, समाजवादी नेता गांधी, टैगोर का भी यही मानना रहा, इसी कारण स्वाधीनता आंदोलन में स्त्री की भागीदारी को प्रोत्साहित किया। रवीनद्रनाथ टैगोर ने स्त्री को राष्ट्र के भविष्य का निर्माता माना और कहा, "महिला किसी भी राष्ट्र के भविष्य का निर्माण करती है और उसे गढ़ती है।"[1] लेकिन दूसरी ओर युग सत्य के रूप में यह देखने को मिल रहा है कि चुनाव आते ही ऐसी नायिकाओं को टिकट दिया जा रहा है, जिसका राज्य व राजनैतिक सोच (लोकतांत्रिक सोच) से दूर-दूर तक नाता नहीं रहता। उनकी प्रसिद्धि का उपयोग राजनेता चुनाव जीतने के लिए कर रहे है। ऐसे में स्त्री-राजनीति की दिशा में मिले महिला आरक्षण का उद्देश्य व स्त्री राजनीति को लेकर जो भविष्यमुखी संभावनाएं रही, वह कटघरे में खड़ी होती है। गीताश्री की 'हसीनाबाद' में देखें, तो राजनेता रामबालक सिंह नाचने-गाने वाली गोलमी को राजनीति में लाना चाहते हैं, तो इसका उद्देश्य महिला आरक्षण का सम्मान व स्त्री-राजनीति का समर्थन नहीं, बल्कि कहते हैं, "यह तो लोगों को अपनी तरफ खींचने की गजब ताकत रखती है। इसमें बहुत कुछ था जो इस्तेमाल किया जा सकता था। बहुत कुछ, इसे पहचानने का मतलब था लॉटरी लगना।"[2] रजनी गुप्त का उपन्यास 'ये आम रास्ता नहीं' की मृदु को राजनीति में राजनीतिक में आरक्षण की मजबूरी के तहत उतारा जाता है। रजनी गुप्ता 'मृदु' के बारे में राजनीति के दक्ष नेता के राजनीतिक सोच को लिखती हैं, "मृदु को लेना ही पड़ेगा। पिछड़े वर्ग की है, स्त्री है और बोलना भी आता है उसे।"[3] महिला-आरक्षण के तहत सत्ता की सीढ़ी में स्त्री के लिए पद बने, तो दूसरी ओर मोहरे के रूप में उनका उपयोग भी शुरू हो गया। सत्ता पर काबिज होकर भी स्त्री राजनीति से कोसों दूर रही, घाघ नेता द्वारा शासित और संचालित। इसी युग सत्य को किरण सिंह की कहानी 'यीशू की कीलें' भी व्यक्त करती हैं, जहाँ भारती को राजनीति में लाया जा रहा है और लाने के पीछे के कारण के बारे में शिवेंद्र दीदी जी से कहते हैं, "भारती, पार्टी सुप्रीमो की ड्रीम प्लानिंग का हिस्सा है।.... हमारे पार्टी सुप्रीमो सताई हुई, गरीब, हाशिए की स्त्रियों को आगे लाना चाहते हैं।. . . महिला सशक्तिकरण लोकसभा के लिए दस वर्ष का एजेंडा है। दो हजार उन्नीस में पार्टी सुप्रीमो को प्रधानमंत्री बनना है।"[4] पुरुष राजनेता अपनी राजनीति साधने के लिए स्त्री का उपयोग कर रहे हैं और स्त्री-आरक्षण पर पलीता लगा रहे हैं। ऐसे में स्त्री-राजनीति अपने उद्देश्यपरक स्वरूप को

ग्रहण नहीं कर पाएगा। स्त्री के प्रति पुरुष राजनेता की सामंती राजनीतिक सोच को किरण सिंह अपनी कहानी 'यीशू की कीलें' में रखती है, जहां पार्टी सुप्रीमो कहते हैं, ''पुरुष जब अपने एक-एक करके हथियार देता है तब दुर्गा बनती है और जब अपने थोड़े-थोड़े अधिकार देता है, तो महिला नेता।''[5] ऐसे में देखें, तो स्त्री राजनीति का स्वरूप पुरुष राजनेता के भलमनसाहत पर निर्भर है। स्त्री राजनीति को लेकर जिन संभावनाओं के तहत आरक्षण मिला, उसमें योग्य उम्मीदवार का आना व काम कर पाना, अपने आप में एक बड़ा सवाल है।

राजनीति में स्त्री के प्रति पुरुष राजनेता का आचरण स्त्री-राजनीति के स्वरूप की दिशा में जरूरी पहल है। राजनीति में स्त्री के प्रति पुरुष आचरण की पड़ताल करते हुए गीताश्री लिखती हैं, ''राजनीति में वह महिला पहले, नेता बाद में और मंत्री सबसे बाद में मानी जाती है।''[6] यानी पुरुष राजनेता की नजर में एक स्त्री सबसे पहले देह है, फिर उसके राजनीतिक सरोकार। 'ये आम रास्ता नहीं' की अस्सी वर्षीय नेत्री 'रत्ना', 'मृदु' को राजनीति में स्त्री राजनेता के प्रति पुरुष राजनेता के आचरण का पर्दाफाश करते हुए कहती हैं कि यहां राजनेता स्त्री को ''लपककर अपने मुँह में गपक लेना चाहते हैं।''[7] और राजनीति में नई आई 'मृदु' से कहती है, ''सचमुच! सुंदर होना यहां अभिशाप बन जाता है। पहले तो वे उसकी सुंदरता के कसीदे काटेंगे, आंखों की, रूप-रंग की, चाल-चुस्ती की, यहाँ तक की काबिलियत की झूठ-मूठ तारीफें करेंगे, मगर हस्तगत होते ही सारी की सारी काबिलियत एक कोने में धरी रह जाएगी, फिर तो वह मुफ्त का माल बन जाती है।''[8] किरण सिंह 'यीशू की कीलें' में लिखती हैं, ''राजनीति में औरतों के सिर्फ दो नाम होते है-- रंडी या चंडी।''[9] स्त्री का यौन-शोषण व पुरुष राजनेता का स्त्री के प्रति यौनिक आचरण एक युग सत्य है साहित्य में। बतौर रमणिका गुप्ता जब वह अपने प्रति पुरुष राजनेता के दैहिक आचरण का विरोध करती है, तो महिला कार्यकर्ता श्रीमती बनर्जी द्वारा जवाब मिलता है, ''ऐसा तो राजनीति में होता ही है। यह सब इंदिरा जी को भी झेलना पड़ा है।''[10] एक और साहित्य बता रहा है कि आयरन लेडी कहलाने वाली इंदिरा जी को भी यह सब झेलना पड़ा, वहीं राजनीति में सक्रिय नेत्री द्वारा इस दिशा में एक भी आवाज तक नहीं उठाई जा रही। ऐसे में स्त्री-राजनीति अपने जिस सरोकार को लिए चल रही है वह कैसे पूरा होगा।

जब राजनीति का स्त्री के प्रति दैहिक आचरण है, तो आरक्षण के लक्ष्य की दिशा में स्त्री-राजनीति हो कैसे? ऐसे में स्त्री के सामने दो ही रास्ते बन जाते हैं या तो राजनीति से पलायन कर जाए। जैसे गीताश्री की नायिका 'गोलमी', रजनी गुप्त की नायिका 'मृदु' और किरण सिंह की नायिका 'भारती' करती है या फिर दलीय प्रतिबद्धता के नाम पर जो हो रहा है उसका हिस्सा बन जाए। अस्सी वर्षीय नेत्री 'मृदु' को बतलाती है, ''हमें एक बार नहीं, बल्कि कई-कई बार इसकी कीमत चुकानी पड़ती है। तब हमारे पास दो ही विकल्प थे- या तो इसे पूरी तरह छोड़ कर घर लौट जाऊं, या फिर यहां के भेड़ियों से निपटने के लिए कुछ एक के साथ कॉम्प्रोमाइज करूं, अपने क्षेत्र के विकास के खातिर मैंने दूसरा रास्ता चुना।''[11] रमणिका गुप्ता राजनीति में हुए यौन शोषण को बलात्कार नहीं व्याभिचार के रूप में लेती हैं, इसे सुरक्षाकवाच मानती है। वह स्वीकार करती है, ''राजनीति में समझौता या व्याभिचार ज्यादा चलता है, बलात्कार कम।''[12] और मानती है, इसमें अपराध बोध नहीं होना चाहिए। ''अब मैं कहूँ कि वह मेरा शोषण था, तो शायद यह गलतबयानी होगी। .. मुझे मुख्यमंत्री का सुरक्षाकवच मिल रहा था।.. यह मुझे राज्यमंत्री लोकेश

झा या दिलीप जैसे दरिंदों के हाथ में पड़ जाने से बेहतर लग रहा था।"[13] साहित्य की दृष्टि में राजनीति में स्त्री के साथ बलात्कार नहीं, व्याभिचार होता है। यह सुरक्षाकवच है, तो ऐसे कवच में महिला राजनीति कितनी औचित्यपूर्ण रह जाएगी यह विचारणीय है। क्या स्त्री को राजनीति में बने रहने के लिए यही एक मार्ग शेष बचता है और अगर यही एक मार्ग है, तो आरक्षण के बावजूद वह राजनीति में कैसे बनी रहेगी? पलायन ही करेगी। ऐसे में स्त्री राजनीति व आरक्षण का उद्देश्य कैसे पूरा होगा। राजनीति में स्त्री के सामने दो ही रास्ते बनते है, राजनीति से पलायन कर जाए या फिर 'सुरक्षाकवच' के तहत 'समझौता' कर बने रहे। गीताश्री के यहां 'गोलमी', रजनी गुप्त की 'ये आम रास्ता नहीं' की 'मृदु' राजनीति से दूरी बना लेती है। यहाँ राजनीति के समझौतेपरक आचरण का प्रतिरोध है। हालांकि गीताश्री 'गोलमी' के माध्यम से स्त्री-राजनीति के एक मजबूत जरूरी पक्ष की ओर ध्यान आकर्षित करती है। जहाँ गोलमी कहती है, "इससे यह मैसेज जाएगा कि राजनीति में बिना तैयारी के नहीं आना चाहिए, खासकर स्त्रियों को, वह अपने दमखम पर आएं और किसी पर आंख मूंदकर भरोसा ना करें और एक बात... मैं कसम खा कर नहीं जा रही... कल का किसे पता? लेकिन पहले मैं अपनी जमीन तैयार करूंगी, और फिर सोचूंगी, फिलहाल कलाकार गोलमी की तरफ से आप सबको प्रणाम।"[14] पर यह जमीन बनेगी कैसे? 'यीशू की कीलें' की 'भारती' इस जमीन बनाने की दिशा में प्रयास कर रही है। वह कहती है, कि वह राजनीति से पलायन छिपने के लिए नहीं कर रही, बल्कि "बछड़ों को अपना दूध पिलाने के लिए"[15] जा रही है। बछड़ों को दूध पिलाना यानि भ्रष्ट हो चुके राजनैतिक व्यवस्था में सुधार लाना है, पर गोलमी कहीं भी प्रयास नहीं करती, बल्कि गीताश्री ओशो के भाषण के माध्यम से यह स्पष्ट करती हैं कि राजनीति अयोग्य के लिए हैं। गोलमी ओशो के भाषण सुनती है, जिसका मूल है, जिसके पास करने के लिए कुछ नहीं रहता वह राजनीति करते हैं।" जो मूर्ति नहीं बना सकते, चित्र नहीं रंग सकते, जो गीत नहीं गा सकते, जो कुछ भी नहीं कर सकते, उन सब अयोग्यों के लिए यह राजनीति है। आखिर अयोग्य के लिए भी तो कुछ होना चाहिए? जिसमें और कोई योग्यता नहीं है उसमें राजनीति की योग्यता होती है।"[16] यहाँ प्रश्न है कि अगर राजनीति अयोग्य के लिए है, तो अयोग्यों के द्वारा शासित व शोषित होना भी एक युग सत्य हैं, जिसे नकारा नहीं जा सकता फिर स्त्री-सशक्तिरण की दिशा में महिला आरक्षण निरर्थक है।

माना यह जाता रहा कि स्त्री राजनीति में आएगी तो सामज कल्याण अधिक होगा,पर देखा यह गया कि स्त्री राजनीति का स्वरूप भी सत्ता की विद्रूपत्ता से ग्रसित है। मृदुला गर्ग ने सत्ता में स्त्री के आस्तित्व को लेकर कहा है, "स्त्री ज्यादा सहिष्णुक है और स्त्री अगर सत्ता में आई तो वह सकारात्मक रहेगी .. यह हमारी मान्यता है .. प्रश्न करने की जरूरत है जो कुछ होता है .. तो क्या हमारी (स्त्रियों की) प्रतिक्रिया फर्क होती है पुरुष से? दोनों में क्या अंतर होता है ?..लेकिन हम देख रहे हैं कि जब भी कोई स्त्री सत्ता में आती है, तो वैसा ही व्यवहार करती हैं, जैसा पुरुष करता है।"[17] 'हसीनाबाद' की 'गोलमी' हो, 'ये आम रास्ता नहीं' की 'मृदु' राजनीति की विद्रूपत्ता को देखकर भी दलीय प्रतिबद्धता के नाम पर चुप रह जाती हैं। अपने सामाजिक सरोकार से दल के नाम पर समझौता कर लेती है। वास्तविक राजनीति में भी दलीय प्रतिबद्धता देखने को मिलती हैं। मनोरमा सिंह 'स्त्रीकाल' पत्रिका में 'महिला विरोधी मर्दवादी राजनीति' शीर्षक के अपने लेख में लिखती हैं कि कैसे बलात्कार जैसे मुद्दों पर महिला सांसद दलीय अनुशासन के नाम पर

चुप रह जाती हैं, ''हाल ही में मी- टू प्रसंग याद होगा आपको, जब कई महिला पत्रकारों ने एम. जे.अकबर पर यौन उत्पीड़न का आरोप लगाया था, लेकिन उसकी पार्टी की किसी महिला नेता ने एक शब्द विरोध में नहीं कहा। सुषमा स्वराज, आजम खां के विरोध में ट्विटर पर सक्रिय हुई, लेकिन एम.जे.अकबर पर चुप रही। स्मृति ईरानी, निर्मला सीतारमण, मेनका गांधी, हेमा मालिनी अपनी पार्टी के किसी भी महिला विरोधी बयान पर कोई प्रतिक्रिया नहीं देती है। महिला पत्रकार गौरी लंकेश की हत्या के बाद कुत्तिया कहा गया, एक धर्म विशेष की महिलाओं को कब्र से निकालकर बलात्कार करने की बात कही गई, सोनिया गांधी को बार डांसर कहा गया, इंदिरा गांधी को 'रखैल' बोला गया, मायावती को 'वेश्या' कहा गया फिर भी महिलाओं द्वारा ही कोई रेखा नहीं खींची गई।''[18] यह दलीय प्रतिबद्धत्ता युग सत्य है। सत्ता का अपना समीकरण है और वह वही रहता है, फिर चाहे वहाँ स्त्री हो या पुरुष। किरण सिंह की कहानी 'यीशू की कीलें' की दीदीजी का चरित्र इसका प्रमाण है। राजनीति में महिला समाज कल्याण के लिए सर्वोत्तम हो सकती है। लेकिन आज का कथा- साहित्य बतलाता है स्थिति ऐसी नहीं है। किरण सिंह की 'यीशू की कीलें' जैसी कहानी बतलाती है कि स्त्री-राजनीति भी कितनी क्रूर हो चुकी है। कहानी की दीदी जी चुनाव प्रचार में जाती हैं, तो स्त्रियों की सुंदरता का बखान करती है। सारी दिलवाने की बात करती हैं, लेकिन कोई उत्थान की योजना सामने नहीं नजर आती। स्त्री होने के कारण स्त्री संवेदना से तो जुड़ती है, पर राजनीतिक परिकल्पना से शून्य नजर आती है। हर तरह का भ्रष्टाचार कर गलत तरह से चुनावी प्रचार में जुटी हुई है। नैतिकता उसके लिए कोई मोल नहीं रखती। अपनी राजनीति को चमकाने के लिए धर्म, जाति, लिंग का उपयोग करती है। पति, भाई, पार्टी सुप्रीमो, भारती को मोहरा बनाती है और 100% जीत का व्याकरण बताती है पति की हत्या, विरोधी दल का इस पर इल्जाम लगना और खुद चुनाव में खड़े हो जानाद्य स्वयं उनका कथन हैं, ''मैंने तुमसे कहा था न कि मुझे मालूम है कि सौ प्रतिशत जीत कैसे सुनिश्चित होती है .. अपोजीशन पार्टी पति की हत्या करवा दें और उसी सीट से मृतक की पत्नी खड़ी हो, तो सिर्फ उसके जीतने का रिकार्ड है ।''[19] सत्ता में आने के लिए जो हथकंडे दीदी जी अपनाती है, उसमें राष्ट्र, समाज कहीं टिक नहीं पाता, केवल महत्वकांक्षा प्रमुख रह जाती है। एक पुरुष राजनेता अरिमर्दन जो कर रहा है, दीदीजी भी तो वही करने को उतर आई है। पुरूष की तरह स्त्री भी पहले सत्ता में आना चाह रही हैं और सेंटर में जाने का तरीका पुरुषों से अलग नहीं है। दीदीजी के रूप में जिस तरह से किरण सिंह ने दिखाया हैं कि सत्ता में एक स्त्री का प्रवेश जरूरी है, वह आना चाह रही है, लेकिन जिस रास्ते उसमें राष्ट्र का कल्याण नहीं होगा।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सामंतवाद की तरह राजनीति के गलियारे के लिए स्त्री केवल अपने स्वार्थ को साधने का साधन हैं। राजनीति में महिला आरक्षण, स्त्री सशक्तिकरण की दिशा में एक जरूरी प्रयास रहा, तो दूसरी ओर सामंती सोच के अंतर्गत राजनीति की जमीन पर महिला तो मिली, पर उसके अपने विचार और अभिव्यक्ति नहीं। पुरुष राजनेता की नजर में वो केवल देह रही, जिस कारण स्त्री-राजनेता कुर्सी पर आ कर भी सत्ता से बेदखल रही। स्त्री राजनीति को लेकर जो आशा रही, उसका मोहभंग 21वीं सदी के कथा साहित्य में बखूबी दर्ज है। स्त्री-राजनीति का स्वरूप पुरुष राजनीति से भिन्न नहीं है। सत्ता की प्रकृति और उसके समीकरण से दूषित है और भविष्य की संभावना देखें, तो सुरक्षाकवच के नाम पर समझौता या पलायन की

नियति से जूझ रहा है। गीताश्री की कथा नायिका 'गोलमी', राजनीगुप्त की 'मृदु', किरण सिंह की 'भारती' अपने विचार और अभिव्यक्ति को पीछे छोड़ दूसरों के मोहरे बनकर उसके अनुसार राजनीति करने को तैयार नहीं, इसलिए प्रतिरोध की दिशा में वे राजनीति से पलायन करती है, लेकिन व्यवहार में इन जैसी कितनी स्त्रियाँ होगी, जो सत्ता सुख और निजी लाभ को छोड़ लोकहित के लिए ऐसा कर सकेगी। ऐसे में रमणिका गुप्ता की तरह समझौते का रुख ही अंतिम उपाय बनता हैं। जिस प्रकार रामबालक सिंह, पार्टी सुप्रीमो; 'गोलमी', 'मृदु', 'भारती' के फेम का उपयोग अपनी राजनीति को चमकाने में है, अगर साहित्य से बाहर निकल इसे देखे, तो चुनाव के पहले नायिकाओं को टिकट मिलना उसी युग सत्य को दर्शाता है। ऐसे में स्त्री राजनीति का जो वर्तमान स्वरूप नजर आ रहा है, भविष्य की संभावनाओं की दिशा में आतंकित करने वाला ही है, जिसे रचनाओं में उभारकर लेखिकाओं ने प्रतिरोध को मुकम्मल दिशा दी है।

संदर्भ सूची :

1. विश्वनाथन, टी. के, "भाषण" संसदीय पत्रिका, अंक-1, खंड -55, वर्ष 2013, पृष्ठ 1-9.
2. गीताश्री, हसीनाबाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2017, पृष्ठ 131.
3. गुप्त, रजनी, ये आम रास्ता नहीं, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 90
4. सिंह, किरण, "यीशू की कीलें", यीशू की कीलें, आधार प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2021, पृष्ठ 109-110
5. वही, 110
6. गीताश्री, हसीनाबाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2017, पृष्ठ 199.
7. गुप्त, रजनी, ये आम रास्ता नहीं, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 11.
8. वही, 26
9. सिंह, किरण, "यीशू की कीलें", यीशू की कीलें, आधार प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2021, पृष्ठ 109
10. गुप्ता, रमणिका, आपहुदरी (एक जिद्दी लड़की की आत्मकथा), सामयिक प्रकाशन, संस्करण 2021, पृष्ठ 396
11. गुप्त, रजनी, ये आम रास्ता नहीं, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 28
12. वही, 381
13. वही, 380
14. गीताश्री, हसीनाबाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2017, पृष्ठ 226.
15. सिंह, किरण, "यीशू की कीलें", यीशू की कीलें, आधार प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2021, पृष्ठ 107
16. गीताश्री, हसीनाबाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2017, पृष्ठ 220.
17. गर्ग, मृदुला, "देह से ऊपर है स्त्री की प्रज्ञा" स्त्री को स्त्री रहने दो.. बस।, सम्पादन उपाध्याय. डॉ दीपिका, भारत पुस्तक भंडार, संस्करण, 2014, पृष्ठ 52
18. सिंह, मनोरमा. "महिला विरोधी बयान और मर्दवादी राजनीति" स्त्रीकाल, अंक -29. अप्रैल 2019 https://aarambhpatrika.com/bhariya(rajneeti(main(mahila(pratinidhitva(ki(dasha(aur(disha(m(arif(khan#
19. सिंह, किरण, "यीशू की कीलें", यीशू की कीलें, आधार प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2021, पृष्ठ 130

❑❑❑

शोधार्थी, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब, मोबाइल नं. 8927595844

ई-मेल: priyanka.42000541@lpu.in /priyankashrivastava077@gmail.com

शोध निर्देशिका, असिस्टेंड प्रोफेसर, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब; पता: आनंद भवन, राजबारी पारा, जिला-जलापईगुड़ी, पिन-735101, पश्चिम बंगाल

हिंदी और मैथिली रामायण में 'जीवन दर्शन'

—सुश्री नूतन कुमारी

रामायण की रचना समाज के समक्ष एक आदर्श की स्थापना के लिए हुई है। रामचरितमानस में हम भगवान श्रीराम को आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श मित्र, आदर्श शिष्य, आदर्श स्वामी और आदर्श राजा के रूप में देख पाते हैं। रामचरितमानस हमें जीवन जीने का तरीका सिखाता है तथा जीवन में मूल्यों की अनिवार्यता में ही जीवन की सार्थकता है यह सिद्ध कर हमें एक सही दिशा में चलने की सतत प्रेरणा देता है । श्रीराम का सत्य के प्रति अनुराग, माता-पिता और गुरुजनों का आज्ञापालन, उनके प्रति श्रद्धा, सहनशीलता, माता कैकयी को क्षमा दान आदि चारित्रिक सद्गुण हमारे जीवन के पग-पग में संस्कारों का सिंचन करता है। राम काव्य परंपरा में व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक सभी मूल्यों का अद्‌भुत दर्शन मिलता है। श्रीराम वनवास तथा राजा दशरथ की मृत्यु की हेतु होते हुए भी माता कैकयी के प्रति राम का जो अक्षुण्ण प्रेम था वह उनके निष्काम प्रेम का सूचक है। कैकयी का राम वनवास का 'वर' न तो परिवार को तोड़ सका और न ही समाज को। बल्कि, इस वर के परिणामस्वरूप संपूर्ण राष्ट्र की संवेदना राम के प्रति घनीभूत हो गई, संपूर्ण राष्ट्र राम के साथ एक हो गया, परिणामत: असुराधिपति दशानन रावण मारा गया।

राम द्वारा भरत को दिए गए राजनीतिक संदेश में तुलसीदास सफल प्रजापालक धर्म की शिक्षा एवं समस्त राजधर्म का सार बताते हुए लिखते हैं -

मुखिया मुखु सो चाहिऐ, खान-पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक।
(रामचरितमानस/अयो.का./दो-315)

राजनीति धर्म का इससे उच्च शिक्षा अथवा संदेश भला और क्या हो सकता है! सब कालों में सब युगों में एक विकसित राष्ट्र के निर्माण हेतु उपर्युक्त संदेश राजतंत्र हो या प्रजातंत्र सभी के लिए अनुकरणीय है।

वास्तव में केवल स्त्री ही नहीं बल्कि प्रत्येक स्त्री-पुरुष को सीता-राम के नैतिक प्रेमपूर्ण जीवन से शिक्षा लेनी चाहिए। हम सभी अपने अधिकारों के प्रति जितने सचेत रहते हैं, क्या उतनी ही ईमानदारी और सतर्कता हमें अपने कर्तव्यों के निर्वाह के प्रति नहीं बरतनी चाहिए ! यह एक विचारणीय प्रश्न है जिसका उत्तर सीता-राम के जीवन से हमें प्राप्त होता है।

रमेश्वर चरित मिथिला रामायण में भी इस प्रसंग का अत्यन्त विस्तार पूर्वक वर्णन मिलता है जिसमें राम राज्य में प्रजाओं को समय पर वेतन, प्रजाओं का सतत् सुधि लेना, हित जन से सद्भाव, अपकारी भृत्यों को दूर रखना आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है-

राजकाजमे रहब सचेत। देखब प्रजाकाँ न्याय समेत।।
नृपतिक मुख्य थिक ई धर्म। प्रजाभरम सभ न्याय सुकर्म।।
हित जनसौं राखब सद्भाव। तर्कहुसौं न बुझव रिपु भाव।।
करब प्रचार प्रताप प्रचंड। प्रजा बहुत पाबय नहि दण्ड।।
करब प्रजाकेर समुचित न्याय। राखब तनिपर प्रीति सदाय।।
राज्यक जे अपकारी भृत्य। पृथकहि राखब तनिकाँ नित्य।।
जे कर उत्तम काज प्रचार। करब तकर आदर सत्कार।।
मासिक वेतन सभकाँ भाय। कालहि पर दय देब सदाय।।

(र.च.मि.रा./अयो.का./पृ-118-119)

राम ने भरत को जो संदेश दिया उससे सुमार्ग पर चलने वाले युवाओं को मानस की ये पंक्तियाँ सदैव स्मरण रखना चाहिए -

गुर पितु मातु स्वामि सिख पालें। चलेहुँ कुमग पग परहिं न खालें।।

(रामचरितमानस/अयो.का./दो-314/3)

आज स्त्री-विमर्श का समय है। महिलाएं अपने अधिकारों एवं स्वतंत्रता के लिए सतत् प्रयत्नशील हैं। ऐसे में सीता चरित्र से उन्हें अपने कर्तव्यों को सदा स्मरण करना चाहिए क्योंकि स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि ' *यह चरित्र सदा के लिए एक बार ही चित्रित हुआ है। राम तो कदाचित् कई हो गए हैं, पर सीता दूसरी नहीं हुई। स्त्री-चरित्र के जितने भारतीय आदर्श हैं, वे सब सीता के चरित्र से ही उद्भूत हैं। सीता भारतीय आदर्श की सच्ची प्रतिनिधि हैं।*'

(विवेकानन्द साहित्य, खण्ड-5)

वास्तव में केवल स्त्री ही नहीं बल्कि प्रत्येक स्त्री-पुरुष को सीता-राम के नैष्ठिक प्रेमपूर्ण जीवन से शिक्षा लेनी चाहिए। हम सभी अपने अधिकारों के प्रति जितने सचेत रहते हैं, क्या उतनी ही ईमानदारी और सतर्कता हमें अपने कर्तव्यों के निर्वाह के प्रति नहीं बरतनी चाहिए ! यह एक विचारणीय प्रश्न है जिसका उत्तर सीता-राम के जीवन से हमें प्राप्त होता है ।

हिन्दी और मैथिली दोनों महाकाव्यों में अनसूया द्वारा सीता को दी गई पातिव्रत धर्म की शिक्षा प्रत्येक महिलाओं के लिए अनुकरणीय है तथा मानस में वर्णित

जद्यपि गृहं सेवक सेवकिनी। विपुल सदा सेवा बिधि गुनी।।
निज कर गृह परिचरजा करई। रामचंद्र आयसु अनुसरई।।

(रामचरितमानस/उत्तर.का./दो-23/3)

जैसी शिक्षा प्रत्येक महिलाओं के लिए आदर्श है। श्रीराम द्वारा लक्ष्मण को जीव-ईश्वर, भक्ति-ज्ञान-वैराग्य, षड् रिपुओं (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य) को नियंत्रित करने का जो विस्तृत उपदेश रामचरितमानस (अरण्यकाण्ड) तथा मिथिला भाषा रामायण (अयोध्या काण्ड) में किया गया है, वह भयमुक्त, संयमशील तथा अनुशासनयुक्त समाज के निर्माण हेतु अत्यन्त आवश्यक तथा अनुसरणीय है।

रामचरितमानस में सबरी को राम द्वारा जिस गूढ़ नवधा भक्ति का उपदेश दिया गया है वैसा गंभीर वर्णन मिथिला भाषा रामायण में नहीं मिलता है तथापि मिथिला भाषा रामायण में कवि चंदा झा ने उत्तरकाण्ड में श्रीराम शरीर त्याग के पूर्व कौशल्या माता को राम द्वारा जिस अनूठे ज्ञान का उपदेश तथा अद्वैत ज्ञान की शिक्षा का वर्णन किया है अपने आप में अद्‌भुत्‌ प्रसंग है तथा इस प्रसंग का वर्णन रामचरितमानस में नहीं मिलता है संभवत: यह कवि की अपनी मौलिक कल्पना हो सकती है। (मि.भा.रा.,उत्तर का. पृ-411)

अध्यात्मज्ञान के पथिकों के लिए रामचरितमानस में वर्णित काकभुशुण्डी एवं गरूड़ के प्रश्नोत्तर संवाद विशेष रूप से अनुशीलन करने योग्य हैं। इस प्रसंग में ज्ञान एवं भक्ति की महान महिमा का सविस्तार वर्णन है। यह प्रसंग मैथिली रामायण में नहीं है। यूँ देखा जाए तो हिन्दी और मैथिली दोनों रामायण जीवन आदर्श से ओत-प्रोत हैं लेकिन कवियों के दृष्टिकोण को यदि देखा जाए तो **रामचरितमानस में तुलसीदास के संतमत तथा परिपक्व आध्यात्मिक अनुभूति, मिथिला भाषा रामायण में चंदा झा की विद्वत्ता एवं उनके काव्य में साधक जीवन का छाप तथा रमेश्वर चरित मिथिला रामायण में लाल दास के लौकिक जीवन के सामान्य मनोवैज्ञानिक तथ्यों का उद्‌घाटन विशेष रूप से परिलक्षित होता है।**

आज विश्व शान्ति हेतु साम्प्रदायिक सौहार्द्रता की सबसे अधिक आवश्यकता है। हमारे एक वैदिक ऋषि 5000 वर्ष पूर्व प्राप्त ज्ञान **''एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति''** (ऋग्वेद-1.164.46) से साम्प्रदायिक मतभेद के अनौचित्य की घोषणा किए। आदि गुरु शंकराचार्य भी तत्कालीन भारतीय समाज के बीच समन्वय लाए। तुलसीदास एवं चंदा झा भी अपने रामायण में तत्कालीन शैव-वैष्णव के वर्चस्वता को खत्म करने के लिए ही शिव और राम को एक-दूसरे का गुरु बताए हैं। यही कारण है कि विभिन्न प्रसंगों में शिव-पार्वती द्वारा राम गुणगान किया गया है और राम द्वारा शिव-आराधना। किन्तु, लालदास अन्त: शाक्त मतानुयायी थें। अत: उन्होंने रमेश्वर चरित मिथिला रामायण में राम के अपेक्षा शक्ति आराधना अधिक किया है और शिव-पार्वती प्रसंगों को मानस एवं चंदा झा की तरह अपने रामायण में यत्र-तत्र शामिल नहीं किए हैं। इस प्रकार साम्प्रदायिक सौहार्द्रता को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि तुलसीदास एवं चंदा झा ने धार्मिक कट्टरता को खत्म करने का पूरा प्रयास किया है, जो हर युगों के लिए पथ प्रदर्शक तथा प्रासंगिक होगा।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली चरित्र निर्माण पर विशेष बल नहीं देता है । शिक्षित होकर अधिकाधिक धनोपार्जन करना ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य हो गया है। मनुष्य का मन प्रतिस्पर्धा के होड़ में इतना बहिर्मुख हो गया है कि क्षण भर भी आत्म विश्लेषण कर पाना मुश्किल हो गया है। परिणामत: तनाव, अवसाद, चिड़चिड़ापन, क्रोध, एकाकीपन आदि से आज मानव खुद को घिरा पाता है। समाज में व्याप्त अशान्ति तभी खत्म होगा जब मनुष्य आपसी वैर को भूलकर आपस में प्रेम से रहेंगें, उदार और उपकारी होंगे, एकनारिव्रत पति एवं पतिव्रता स्त्रियाँ होंगी, शिक्षा में चारित्रिक निर्माण हेतु सर्वोच्च आदर्श युक्त ग्रन्थों को शामिल किया जाएगा और राम से बढ़कर दूसरा आदर्श क्या होगा जिन्होंने सब युगों के लिए, सदा के लिए रामराज्य की सार्थकता को विश्व पटल पर अमिट कर दिया है।

मनुष्य जीवन में शान्ति का होना अति आवश्यक है। हिन्दी और मैथिली रामायण में राम और भरत चरित्र के अनासक्ति भाव से इसका उद्‌घाटन बखूबी किया गया है। जहाँ तुलसीदास के राम की अनाशक्ति और बाह्य त्याग अवलोकनीय हैं -

कागर-कीर ज्यों भूषन-चीर सरीरु लस्यो तजि नीरु ज्यौं काई।
मातु-पिता प्रिय लोग सबै सनमानि सुभायँ सनेह सगाई।।
संग सुभामिनि, भाइ भलो, दिन द्वै जनु औध हुते पहुनाई।।
राजिवलोचन रामु चले तजि बापको राजु बटाउ कीं नाई।।2।।

(कवितावली/अयोध्याकाण्ड/सवैया)

वहीं भरत जी की अनासक्ति **''संपति सब रघुपति के आही''** के द्वारा प्रकट होती है। अत: जब सारी सम्पत्ति ईश्वर की है, उपनिषदों ने इसे बताया है, महापुरुषगण भी अपने जीवन से यही दिखाए हैं, तुलसीदास भी राम-भरत-चरित्र से अनासक्ति दिखाए, 150 साल पूर्व श्रीराम ष्ण परमहंस एवं स्वामी विवेकानन्द जी भी अपने जीवन से इसी का प्रमाण दिए हैं। जब तक समाज में कामिनी कांचन को पाने का होड़ खत्म नहीं होगा तब तक वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति नहीं होगी, समाज से अशान्ति खत्म नहीं होगा और मनुष्य को सुख नहीं मिलेगा। कवि चंदा झा भी सुख प्राप्ति हेतु मलिनवासना त्याग करने के ही पक्षधर हैं

यावत मलिनवासना रहती, तावत सुख नहि पयबे।

(मि.भा.रा./उत्तर काण्ड/ पृ-398)

मानस में श्रीराम द्वारा प्रजाओं को दी गई मनुष्य जीवन के लक्ष्य को हमें सदैव स्मरण रखना चाहिए -

बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।

(रामचरितमानस/उत्तर का. /दो-42/4)

अर्थात् यह मनुष्य जीवन बड़े भाग्य से मिलता है। जो मनुष्य यह जीवन पाकर भव-बन्धन से मुक्ति का प्रयत्न नहीं करता है, वह आत्मघाती है। अत: ईश्वर को पाना मनुष्य जीवन का लक्ष्य है। चंदा झा भी इसी बात की पुष्टि करते हुए कहते हैं-

जानि ज्ञेय परात्मकाँ मन भयरहित नित रहब।।

(मि.भा.रा./अर.का./पृ-140)

इस प्रकार, हम देखते हैं कि हिन्दी और मैथिली रामायण हमारे जीवन के व्यक्तिगत, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, आध्यात्मिक सभी पक्षों के प्रति एक उदार दृष्टिकोण को अपनाकर एक स्वस्थ और सुन्दर माहौल को बनाने की प्रेरणा देता है। वास्तव में रामकाव्य परम्परा के अंतर्गत रामचरितमानस को सब ग्रन्थों में श्रेष्ठतम स्वीकार किया गया है। यह एक ऐसा ग्रन्थ है जो समस्त मानव समाज को अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक करता है तथा आदर्श जीवन जीने के लिए सदैव प्रेरित करता है।

❑❑❑

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, कोल्हान विश्वविद्यालय, चाईबासा, झारखण्ड, पिन-831017, मो.9835375247, ई-मेल: nutanjha625@gmail.com, पता-बद्रीनाथ, 7571, विजया गार्डन, बारीहीड़ जमशेदपुर, झारखंड-831017

नई शिक्षा नीतिः 2020 एकाधिक प्रविष्टि एवं विकास से संबंधित प्रावधान एवं क्रियान्वयन की चुनौतियाँ

—रूबी शर्मा
—प्रो. बी.एल. जैन

नई शिक्षा नीति को प्रस्तुत करते हुए शिक्षा मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक ने कहा ''देश के प्रधानमंत्री ने एक नए भारत के निर्माण की बात की है जो स्वच्छ भारत होगा, स्वस्थ भारत होगा, सशक्त भारत होगा, समृद्ध भारत होगा, श्रेष्ठ भारत होगा। उस नए भारत के निर्माण में यह नई शिक्षा नीति 2020 मील का पत्थर साबित होगी।''

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के शुभारंभ से भारतीय उच्च शिक्षा में एक नए युग की शुरुआत होगी, जो पहले से काफी बेहतर होगा और एक नये भविष्य का निर्माण करेगा। नई शिक्षा नीति में स्कूल स्तर के साथ-साथ उच्च शिक्षा में कई बदलाव शामिल हैं। उच्च शिक्षा में सामान्य नामांकन अनुपात को 2035 तक 26.3 प्रतिशत (वर्तमान में) से बढ़ाकर 50 प्रतिशत तक लाना है। उच्च शिक्षा में सर्टिफिकेट, डिप्लोमा एवं डिग्री पाठ्यक्रमों को शामिल किया जाएगा। देश में 34 सालों बाद नई शिक्षा नीति आई है जो शोध परक, नवाचार और अनुसंधान को बढ़ावा देती है। इक्कीसवीं सदी के भारत की शिक्षा नीति के स्वरूप को दर्शाने वाली इस शिक्षा नीति में कुल 27 प्रमख बिंदुओं की विस्तार से चर्चा की गई है। कुल मिलाकर यह सरकार की और से एक सराहनीय और बहुत ही सकारात्मक कदम है। समय बताएगा कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, वास्तव में निकट भविष्य की चुनौतियों से निपटने के लिए कारगर सिद्ध होती है या नहीं। कुल मिलाकर यह सरकार की और से एक सराहनीय और बहुत ही सकारात्मक कदम है। लेकिन राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करने में सरकार को बुनियादी अवसंरचना को बहुत अधिक मजबूत करना होगा। इस लेख में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आलोक में बहुप्रविष्टि एवं निकास की आवश्यकता लाभ एवं, वर्तमान चुनौतियों की चर्चा की गई है।

संकेत शब्द- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास।

प्रस्तावना-''**शिक्षा करेगी नवयुग का निर्माण, आने वाला समय देगा इसका प्रमाण**''

1985 'शिक्षा की चुनौती' नामक एक दस्तावेज तैयार किया गया जिसमें भारत के विभिन्न वर्गों (बौद्धिक, सामाजिक, राजनैतिक, व्यावसायिक, प्रशासकीय आदि) ने

अपनी शिक्षा सम्बन्धी टिप्पणियाँ दीं और 1986 में भारत सरकार ने **'नई शिक्षा नीति 1986'** का प्रारूप तैयार किया। इस नीति की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसमें सारे देश के लिए एक समान शैक्षिक ढाँचे को स्वीकार किया और अधिकांश राज्यों ने 10 + 2 + 3 की संरचना को अपनाया। इसे राजीव गांधी जी के प्रधानमन्त्रीत्व में जारी किया गया था। इस नीति में 1992 में संशोधन किया गया था। 1986 की शिक्षा नीति में ऐसी कौन सी कमियां रह गई थी जिन्हें दूर करने के लिए नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लाने की आवश्यकता पड़ी साथ ही क्या यह नई शिक्षा नीति इन उद्देश्यों को पूरा करने में सक्षम होगी जिसका सपना महात्मा गांधी और स्वामी विवेकानंद ने देखा था। पूरे 34 वर्षों के अंतराल के बाद शिक्षा नीति में बदलाव लाया गया और बदलाव लाना भी जरूरी था। गांधी जी के अनुसार, ''शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को आजीविका उपार्जन के योग्य बनाना है, जिससे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो सके। गांधीजी के इस विचार को भारत सरकार अब न शिक्षा नीति-2020 के माध्यम से साकार करने जा रही है। न शिक्षा नीति का उद्देश्य है कि,

''विद्यार्थी करें अपने सपने साकार
नई शिक्षा नीति का यही आधार''।

Figure 1 National Education Policy (NEP) 2020

नई शिक्षा नीति को प्रस्तुत करते हुए शिक्षा मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक ने कहा ''देश के प्रधानमंत्री ने एक नए भारत के निर्माण की बात की है जो स्वच्छ भारत होगा, स्वस्थ भारत होगा, सशक्त भारत होगा, समृद्ध भारत होगा, श्रेष्ठ भारत होगा। उस नए भारत के निर्माण में यह नई शिक्षा नीति 2020 मील का पत्थर साबित होगी।'' आगे फिर उन्होंने कहा ''यह शिक्षा नीति ज्ञान-विज्ञान, अनुसंधान नवाचार, प्रौद्योगिकी से युक्त संस्कारक्षम, मूल्यपरक, हर क्षेत्रा में, हर परिस्थिति का मुकाबला करने वाली, पूरी दुनिया के लिए, भारत में ज्ञान की महाशक्ति के रूप में उभर करके आएगी।'' भारतवर्ष के इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ कि शिक्षा नीति बनाने के लिए देश की लगभग 2.5 लाख ग्राम पंचायतें, 6600 ब्लॉक और 650 जिलों से विचार लिए गए। इसमें शिक्षाविदों, अध्यापकों, अभिभावकों, जनप्रतिनिधियों एवं व्यापक स्तर पर छात्रों से भी सुझाव लेकर उनका मंथन किया गया। जन आकांक्षाओं के अनुरूप एवं राष्ट्रीय आवश्यकता और चुनौतियों के अनुरूप नई शिक्षा नीति 2020 की घोषणा की गई है।

नई शिक्षा नीति के महत्वपूर्ण तथ्य

- अंतिम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में बनाई गई थी जिसमें वर्ष 1992 में संशोधन किया गया था।
- वर्तमान नीति अंतरिक्ष वैज्ञानिक के कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता वाली समिति की रिपोर्ट पर आधारित है।
- नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति सन 2020 के तहत वर्ष 2030 तक सकल नामांकन अनुपात को 100% लाने का लक्ष्य रखा गया है।
- नई शिक्षा नीति के अंतर्गत केंद्र व राज्य के सहयोग से शिक्षा क्षेत्र पर जीडीपी के 6% हिस्से के सार्वजनिक व्यय का लक्ष्य रखा गया है।
- नई शिक्षा नीति की घोषणा के साथ ही मानव संसाधन प्रबंधन मंत्रालय का नाम परिवर्तन कर शिक्षा मंत्रालय कर दिया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 का उद्देश्य भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली में मूलभूत परिवर्तन करना है। ज्ञान अर्थव्यवस्था के युग में देश को विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाने के लिए नीति में प्रमुख भविष्योन्मुखी बदलावों का प्रस्ताव है। प्रस्तावों में से एक बहु प्रवेश और निकास प्रणाली (एमईईएस) के साथ चार वर्षीय स्नातक की डिग्री शुरू करना है। बहु प्रवेश और निकास प्रणाली (एमईईएस) का उद्देश्य प्रचलित कठोर सीमाओं को हटाना और आजीवन सीखने के लिए नई संभावनाएं बनाना है। बहु प्रवेश और निकास प्रणाली (एमईईएस) छात्रों को अपना खुद का डिग्री-निर्माता बनने की अनुमति देता है और उन्हें उस बिंदु से सीखने को फिर से शुरू करने के लिए प्रेरित करता है जो उन्हें बीच में छोड़ने के लिए आवश्यक था और उन्हें जीवन में अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद करता है। इसके अनुसार, छात्रों के पास पाठ्यक्रम के प्रत्येक वर्ष के अंत में बाहर निकलने के विकल्प होंगे। सिफारिश यह है कि उन्हें एक वर्ष पूरा करने के बाद एक प्रमाण पत्र, दो साल पूरा करने के बाद एक डिप्लोमा, तीन साल के बाद स्नातक की डिग्री और चार साल के बाद कुछ शोध तत्व के साथ स्नातक प्राप्त होगा। पाठ्यचर्या संरचना में ये परिवर्तन न केवल छात्रों के लिए लचीले अवसर प्रदान करते हैं। कई जगहों पर, एमईईएस को एक नवाचार के रूप में भी माना जाता है जो सबसे वंचितों के बीच छोड़ने की दर को कम कर सकता है।

(अ) तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण :

1. **एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास**-एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास से तात्पर्य मसलन अगर कोई छात्र स्नातक स्तर में प्रवेश लेकर सिर्फ एक साल का ही कोर्स पूरा करता है, तो उसे इसके लिए सर्टिफिकेट दिया जाएगा। वहीं दो साल पूरा करने वालों को डिप्लोमा और तीन साल पूरा करने वालों को स्नातक स्तर की डिग्री दी जाएगी।
2. **चुनौतियाँ**:-किसी विषयवस्तु के संबंध में आने वाली समस्याएँ।

अध्ययन का उद्देश्य

- एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास के बारे में जानना।

- एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास की आवश्यकता के बारे में जानना।
- एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास के लाभ के बारे में जानना।
- एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास के समक्ष आने वाली चुनौतियों के बारे में जानना।

शोध विधि

यह लेखपत्र द्वितियूक स्रोतों के माध्यम से लिखा गया है। इस हेतु विभिन्न रिपोर्ट, समाचार पत्रों एवं पुस्तकों से तथ्यों का संकलन किया गया है।

एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास

वर्तमान परिदृश्य में शिक्षा के मायने तीव्रता से परिवर्तित हो रहे है। सामाजिक परिवर्तन एवं विकास के लिए कौशल को संयंत्र माना जाता है इस प्रकार शिक्षा का संबंध वर्तमान से न होकर भविश्य से होता है। इसलिए शिक्षा को इस परिपेक्ष्य में देखें कि 21 वी शताब्दी में प्रवेश करने वाली नई पीढी अपने आप को नयी शताब्दी के लिए समर्थ बना सके। आधुनिक युग में जहां एक और प्रगति पथ पर अग्रसर हुआ जा रहा है। वही पर जीवन मूल्यों, व्यक्तित्व विकास, प्रबन्धन क्षमता, व सम्प्रेषण क्षमता का निरन्तर ह्यस होता जा रहा है। केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को मंजूरी दी है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 34 वर्ष पुरानी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 को प्रतिस्थापित करेगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, 21 वीं सदी की पहली शिक्षा नीति है। वर्ष 1968 और 1986 के बाद यह भारत की तीसरी शिक्षा नीति है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत केंद्र एवं राज्य सरकार के सहयोग से शिक्षा के क्षेत्र पर देश की जीडीपी के 6 हिस्से के बराबर निवेश का लक्ष्य रखा गया है। उच्च शिक्षा में एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास का विकल्प होगा जिससे छात्रों को उनकी रूचि के अनुसार शिक्षा मिल सके। इसके साथ ही नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू होने के बाद छात्रों के पास कॉलेज बदलने की सुविधा भी होगी, अगर आपने एक शहर के किसी कॉलेज में दाखिला लिया हो और आप का मन कर रहा है। कि आप अब दूसरे कॉलेज में पढ़ाई करेंगे तो आप अपना दाखिला अन्य महाविद्यालय में करवा सकते हैं। इसके साथ ही आपके क्रेडिट भी ट्रांसफर हो जाएगा। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में छात्रों के पास ऑनलाइन पढ़ाई की सुविधा भी होगी सरकार द्वारा नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति को शुरू करने का मुख्य उद्देश्य बताया गया है कि इस योजना के तहत स्कूल छोड़ने की दर को कम किया जा सके और हमारे देश के अधिक से अधिक छात्रों को शिक्षा प्रदान की जा सके और इस योजना से शिक्षा व्यवस्था को लचीला बनाया जाएगा जिससे हमारे देश के बच्चों को आसानी से शिक्षा मिल सकेगी और बच्चे अपनी पसंद का विषय चुन सकते हैं। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत पसंद के विकल्प को लचीला बनाया जाएगा ताकि ड्रॉपआउट रेट में कमी आ सके राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 का उद्देश्य भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली में मूलभूत परिवर्तन करना है। ज्ञान अर्थव्यवस्था के युग में देश को विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाने के लिए नीति में प्रमुख भविष्योन्मुखी बदलावों का प्रस्ताव है। प्रस्तावों में से एक बहु प्रवेश और निकास प्रणाली (एमईईएस) के साथ चार वर्षीय स्नातक की डिग्री शुरू करना है। वर्तमान में 3 या 4 वर्ष के डिग्री कोर्स में यदि कोई छात्र किसी कारणवश माध्यम में पढ़ाई छोड़ देता है तो उसे डिग्री ना

मिलने के कारण इस पढ़ाई का कोई महत्व नहीं रहता है लेकिन अब इसमें निम्न परिवर्तन किये गये है-

क्र.स.	विकल्प	शैक्षणिक मान्यता
1	1 वर्ष की पढ़ाई पर	सर्टिफिकेट
2	2 वर्ष की पढ़ाई पर	डिप्लोमा
3	3 वर्षकी पढ़ाई पर	डिग्री
4	4 वर्ष की पढ़ाई पर	स्नातक डिग्री (ऑनर्स/रिसर्च)

इस अध्ययन को प्रमुख उद्देश्य नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत लागू किए गए एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास में छात्रों के समक्ष आने वाली चुनौतियों का अध्ययन करना है तथा उन चुनौतियों को किस प्रकार दूर किया जा सके उसके लिए संभावित समाधान की खोज करना है।

एकाधिक प्रवेश और निकास की आवश्यकता

एकाधिक प्रवेश और निकास द्वारा जो छात्र अपनी डिग्री पूरी होने से पहले ही पढ़ाई छोड़ देते हैं, उन्हें उचित प्रमाणन दिया जाएगा। जिससे छात्र द्वारा उच्च शिक्षा में बिताया गया समय बर्बाद नहीं होगा। इसके दो फायदे हैं एक यह है कि वे प्रमाण पत्र के साथ श्रम बाजार में प्रवेश कर सकते हैं। दूसरा यह है कि छात्र क्रेडिट बचा सकते हैं और बाद में उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। इसके तहत 3 या 4 वर्ष के स्नातक कार्यक्रम में छात्र कई स्तरों पर पाठ्यक्रम को छोड़ सकेंगे और उन्हें उसी के अनुरूप डिग्री या प्रमाण-पत्र प्रदान किया जाएगा (1 वर्ष के बाद प्रमाण-पत्र, 2 वर्षों के बाद एडवांस डिप्लोमा, 3 वर्षों के बाद स्नातक की डिग्री तथा 4 वर्षों के बाद शोध के साथ स्नातक) विभिन्न उच्च शिक्षण संस्थानों से प्राप्त अंकों या क्रेडिट को डिजिटल रूप से सुरक्षित रखने के लिए एक एकेडमिक बैंक ऑफ क्रेडिट' दिया जाएगा, ताकि अलग-अलग संस्थानों में छात्रों के प्रदर्शन के आधार पर उन्हें डिग्री प्रदान की जा सके।

Figure 2 Multiple entry and exit system

एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास के लाभ

- एकाधिक प्रवेश और निकास से ड्रॉपआउट दर को कम करने में मदद मिलेगी
- यह छात्र को अपना पाठ्यक्रम छोड़ने और सुविधाजनक होने पर इसे फिर से शुरू करने की अनुमति देता है।

- वित्तीय कठिनाइयों के कारण अपनी पढ़ाई जारी रखने में असमर्थ एक छात्र नौकरी खोजने और पैसे कमाने के लिए बाहर निकल सकता है ताकि पढ़ाई फिर से शुरू की जा सके। दूसरे शब्दों में, एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास आर्थिक रूप से अक्षम छात्रों के लिए अपनी पढ़ाई पूरी करने का एक अवसर है। संभवत आर्थिक कारक कई में से केवल एक है जो उच्च शिक्षा में ड्रॉपआउट का कारण बनता है।
- अन्य कारण जैसे सामाजिक, पारिवारिक, धार्मिक आदि भी भारत में प्रचलित हैं। उदाहरण के लिए, जो लड़कियां जल्दी शादी कर लेती हैं या डिग्री हासिल करते हुए गर्भवती होती हैं और जो दुर्घटनाओं या बीमारियों के कारण शारीरिक कठिनाई का सामना कर रही हैं, वे एमईईएस को एक आशीर्वाद के रूप में देखेंगी। लेकिन अवधारणा का अधिक गहन विश्लेषण व्यावहारिक जटिलताओं और शिक्षा को सामाजिक जिम्मेदारी से व्यक्तिगत जिम्मेदारी में बदलने का प्रयास दिखाता है।

संक्षेप में, एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास को उच्च शिक्षा प्रणाली को अधिक छात्र-अनुकूल और न्यायसंगत बनाने के उद्देश्य से एक बड़ा सुधार माना जा सकता है। इस अभूतपूर्व कदम का रणनीतिक निष्पादन शिक्षार्थियों को कहीं से भी, कभी भी सीखने के अवसर के साथ उनके शून्य-वर्ष के नुकसान को सुनिश्चित करने के लिए सहज गतिशीलता प्रदान करेगा।

एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास के समक्ष आने वाली चुनौतियाँ

- एकाधिक प्रविष्टि एवं निकास को लागू करते समय शैक्षणिक संस्थानों को बहुत सारी चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है। मुख्य समस्याओं में से एक प्रत्येक वर्ष भर्ती होने वाले छात्रों की संख्या का निर्धारण करना होगा। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि एक कॉलेज के लिए डिग्री प्रोग्राम की कुल संख्या 30 छात्र प्रति वर्ष है। यदि, दूसरे सेमेस्टर तक, 10 छात्र बाहर निकलते हैं और लगभग 20 छात्र जो वर्षों पहले बाहर हो गए हैं, उसी समय प्रवेश के लिए कतार में हैं, तो यह शिक्षक-छात्र अनुपात और उपलब्ध बुनियादी सुविधाओं को परेशान करेगा।
- निजी संस्थान इसे उन छात्रों से अत्यधिक शुल्क लेने का एक अच्छा अवसर मानेंगे जो अपनी पढ़ाई फिर से शुरू करने के लिए प्रवेश चाहते हैं।
- छात्र एक साल के बाद सर्टिफिकेट के साथ, दो साल के बाद डिप्लोमा के साथ और तीन साल के बाद बैचलर डिग्री और 4 साल बाद रिसर्च के साथ बैचलर डिग्री के साथ बाहर निकल सकते हैं। इस प्रणाली को लागू करने में पाठ्यचर्या निर्माण एक बड़ी चुनौती है। एक या दो साल के डिग्री कोर्स के बाद एक छात्र किस प्रकार की दक्षता प्राप्त करेगा? इस प्रकार, किसी विशेष विषय क्षेत्र में आवश्यक विशिष्ट दक्षताओं, ज्ञान और कौशल को शामिल करने के लिए पाठ्यक्रम को फिर से तैयार करने की आवश्यकता है।
- उचित मार्गदर्शन के अभाव में छात्रों के मन में भ्रम और शंका उत्पन्न हो सकती है जिससे अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। उचित मार्गदर्शन के अभाव में छात्रों का एक बड़ा वर्ग उच्च शिक्षा से वंचित रहने की आशंका है।

- विभिन्न क्षेत्रों में प्रमाण पत्र और डिप्लोमा धारकों के लिए एक ही समय में किस प्रकार के अवसर उपलब्ध होंगे जब डिग्री धारकों को नौकरी पाने में कठिनाई हो रही है?
- छात्रों को प्रारंभिक प्रमाण पत्र या डिप्लोमा के आधार पर रोजगार खोजने में कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है जब तक कि यह तकनीकी रूप से विशिष्ट न हो।
- क्या हम कई प्रवेश और निकास बिंदुओं के माध्यम से एक या दो साल के पाठ्यक्रम को पूरा करने के बाद प्रमाण पत्र और डिप्लोमा प्रदान करके कुशल उद्यमियों का एक पूल विकसित करने में सक्षम होंगे?
- एक और चिंता जो सभी को परेशान कर रही है, वह यह है कि बीच में पाठ्यक्रम छोड़ने वाले छात्रों की एक बड़ी आबादी कुछ मामूली कारणों से वापस नहीं लौट सकती है। यह सुनिश्चित किया जाना है कि मजबूत प्रेरणा और उचित मार्गदर्शन के अभाव में छात्रों का एक बड़ा वर्ग उच्च शिक्षा से वंचित न हो।
- इस प्रणाली के वास्तविक अर्थ में क्रियान्वयन के लिए बहु प्रवेश विकल्प के तहत प्रवेश के समय फीस का एक त्रुटिहीन तंत्र विकसित करने की आवश्यकता है। यह सुनिश्चित किया जाना है कि यह प्रणाली निजी या अन्य संस्थानों के लिए उन छात्रों से अत्यधिक शुल्क लेने का सुनहरा अवसर न बन जाए जो अपनी पढ़ाई फिर से शुरू करने के लिए वापस प्रवेश चाहते हैं।

निष्कर्ष

शिक्षा नीति 2020 द्वारा प्रस्तावित सभी परिवर्तनों का स्वागत है, लेकिन इतिहास ने दिखाया हैं कि अच्छी नीतियाँ या तो क्रियान्वयन के स्तर पर अटक जाती हैं या क्रियान्वयन में देरी के परिणामस्वरूप नौकरशाही देरी का शिकार हो जाती हैं। यह अनुमान लगाना उचित है कि, शिक्षा नीति में प्रस्तावित परिवर्तनों के आलोक में, नीति निर्माताओं के लिए अगला कदम शिक्षक शिक्षा से संबंधित नीति के क्रियान्वयन के लिए तत्काल, मध्यम और दीर्घकालिक लक्ष्यों को स्थापित करना होगा, जिसमें स्पष्ट निर्देश होंगे इन लक्ष्यों को कैसे प्राप्त करें। इस क्रियान्वयन योजना के विकास और सकारात्मक रणनीति से जनता के मध्य यह संदेश भी जाएगा कि शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में सरकार की नीति और इरादे के बीच को टकराव नहीं है और सरकार इन अनुशंसाओं को लागू करने के लिए प्रतिबद्ध है।

संदर्भ सूची :

1. मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार. (2020), राष्ट्रीय शिक्षा नीति : Retrieved from https://www.education.gov.in/en
2. गंगवाल सुभाष, (22 अगस्त 2020) : नई शिक्षा नीति 21वीं सदी की चुनौतियों का करेगी मुकाबला, दैनिक नवज्योति, पृष्ठ संख्या 4 जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूँ
3. Nandini, ed. (29 July 2020) : "New Education Policy 2020 Highlights : School and higher education to see major changes". Hindustan Times.

❐❐❐

शोधार्थी (शिक्षा विभाग) जैन विश्व भारतीय संस्थान, लाडनूँ; पता-310, गेस्ट हाऊस, फैकल्टी ब्लॉक, तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय, पिन-244001, मो. 9413185326

विभागाध्यक्ष (शिक्षा विभाग) जैन विश्व भारतीय संस्थान, लाडनूँ

रसवादी आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल

—डॉ. राहुल द्विवेदी

भारतेन्दु युग से लेकर द्विवेदी युग तक साहित्य जनवादी हो चुका था। मानव मूल्यों के प्रतिमान एवं नवीन ज्ञान-विज्ञान या तर्क के आधार पर केन्द्रीत शुक्ल युग में आलोचना का दृष्टिकोण आभासी, परम्परागत रूढ़ि एवं नायिका भेद, अलंकार निरूपण वाले ढ़र्रे की विरोधी सी हो गयी थी। क्योंकि रीतिवादी समीक्षा के मानदण्ड सीमित एवं जनोपयोगी नहीं थे।

भारतीय काव्यशास्त्र की रसवादी आचार्य परम्परा में विभिन्न विद्वानों एवं आलोचकों ने रस-सिद्धांत को आधार मानकर आलोचना का प्रतिमान बनाया एवं सम्यक् रूपेण साहित्य परम्परा का मूल्यांकन किया। डॉ. श्यामसुन्दर दास, बाबू गुलाबराय, पं. रामदहिन मिश्र, लक्ष्मीनारायण 'सुधांसु, नन्ददुलारे वाजपेयी, हजारीप्रसाद द्विवेदी, शान्तिप्रिय द्विवेदी, डॉ. नगेन्द्र, डॉ. तारकनाथ बाली, आनन्दप्रकाश दीक्षित, निर्मला जैन, राममूर्ति त्रिपाठी इत्यादि ने रसवादी हिन्दी आलोचना को समृद्ध किया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने रस-सिद्धान्त की नवीन व्याख्या करके, पाश्चात्य समीक्षा सिद्धांत की तुलना में इसे सर्वोपरि आलोचना का प्रतिमान बनाया।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी आलोचना में ख्यातिलब्ध रसवादी आलोचक है। इनका आलोचना कर्म विरूद्धों के सामजंस्य से लोकमंगलवादी अवधारणा के पक्ष में है। वे अव्यक्त, परोक्ष, अज्ञात तथ्यव्यंजना के विरूद्ध लौकिक एवं व्यक्त जीवन जगत् उन्मुखी दृष्टिकोण से साहित्य को देखा परखा और विवेचना किया। आचार्य शुक्ल अपने आत्म- संस्मरण में लिखते हैं- ''ज्यों-ज्यों मैं सयाना होता गया त्यों-त्यों हिन्दी के पुराने साहित्य और नये साहित्य का भेद भी समझ पड़ने लगा और नये की ओर झुकाव बढ़ता गया।''[1] मौलिक सोच और समझ का विस्तार, व्यापक अध्ययनशीलता एवं मर्मग्रहिणी प्रज्ञा के कारण इनके आलोचना-कर्म में न प्राश्चात्य जगत् के प्रतिमानों का अनुकरण है, न तो रीतिशास्त्रीय काव्य लक्षणों का अपितु भारतीय जातीयता का सहज विकास है। आचार्य शुक्ल तथ्यों की गहरीछान-बीन ही नहीं करते बल्कि काव्य के विषय-वस्तु को समग्रता में मूल्यांकन करते हैं।वे समाज, जीवन, जगत, साहित्य, कला, विज्ञान, दर्शन, धर्म इत्यादि परम्परागत शब्दों को अपने आलोचना के साँचे में ढालकर नवीन अर्थ प्रदान करते चलते हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल 'सैद्धांतिक' और 'व्यावहारिक' दोनों तरह की आलोचना में वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। वे आजीवन

हिन्दी साहित्य समृद्धि में लगे रहे। आचार्य शुक्ल को आलोचनात्मक कृतित्व इस प्रकार है-'**तुलसीदास**' (1922 ई.), '**भ्रमर गीतसार**' (1922 ई.), '**जायसी ग्रन्थावली**' (1924 ई.), '**चिन्तामणि भाग-एक**' (1939 ई.), '**चिन्तामणि भाग-दो**' (1939 ई.), '**रस मीमांसा**' (1939 1949 ई. में प्रकाशित)। इन सभी आलोचना ग्रन्थों में कृतित्व के समग्र विवेचन के साथ-ही-साथ इतिहास, दर्शन, व्याकरण, भाषा-विज्ञान एवं साहित्य के विविध पक्षों का भी समीचीन व्याख्या किया गया है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य जगत् में सच्चे अर्थों में आचार्य है। उनका आचार्यत्व कर्म सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों आलोचना में व्यक्त हुआ। 'कविता क्या है?' इस निबन्ध को आचार्य शुक्ल ने बार-बार लिखा। वे 'कविता क्या है?' इस बुनियादी और केन्द्रीय प्रश्न पर भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने व्यापक चिन्तन के आलोक में समझने-समझाने और व्याख्या कर परिभाषा में व्यक्त करने का प्रयास निरन्तर किया हैं। प्राचीन काल से 'लेकर अब तक 'काव्य' की नई-नई परिभाषा एवं उसके प्रतिमानों के सम्बन्ध में विचार दृष्टिगोचर होते हैं। आचार्य शुक्ल का मत है "सच्ची कविता किसी 'वाद' को लेकर नहीं चलती, जगत की अभिव्यक्ति को लेकर ही चलती है।"[2] अर्थात् कविता जगत् के गोचर अभिव्यक्ति का साधन है।

आधुनिक युगबोध के आधार पर साहित्य तत्वान्वेषी आचार्य शुक्ल ने काव्य को जीवन-जगत् के गत्यात्मक नाना रूपों, नाना 'यों एवं नाना व्यापारों से सामंजस्य स्थापित करके लोक सामान्य भावभूमि पर परिभाषित करके लिखते है- "जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती हैं हृदय की इसी मुक्ति साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई उसे कविता कहते हैं।"[3] वे कविता को भाव योग साधना मानते हुए इसे कर्मयोग और ज्ञानयोग के समकक्ष बताया। इस प्रकार आचार्य शुक्ल काव्य परिभाषा के माध्यम से काव्य की आत्मा 'रस' को सिद्ध करते हैं, इसके साथ-ही-साथ आधुनिक काव्यशास्त्र भी गढ़ते चलते हैं, जिसमें पाश्चात्य के प्रतिमानों का विरोध भी है और समन्वय भी। चिन्तामणि निबन्धों के माध्यम से आचार्य शुक्ल ने हिन्दी के काव्यशास्त्र के लिए एक ठोस पृष्ठभूमि तैयार कर उसे वैज्ञानिक और दार्शनिक आधार दिया। उनका मत है कि- "कविता के मूल में भाव या मनोविकार ही रहते है।"[4] "भाव या मनोविकार के नीव पर ही कविता की इमारत खड़ी हो सकती है।"[5] "भाव की अंत: प्रकृति एवं रूप विधान की बाह्य प्रकृति में विविधता है, अत: सामंजस्य काव्य और जीवन दोनों की सफलता का मूल मंत्र है।"[6] इस प्रकार आचार्य शुक्ल ने 'भाव' को काव्य में व्यापकता प्रदान करके उसे 'रस' का मूल माना है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के प्रतिमानों को तर्क की कसौटी पर कसकर एवं उनके उपयोगी तत्वों को आत्मसात् करके रसवादी आलोचनात्मक मानदण्ड के आधार पर काव्य के अंत: एवं बाह्य पक्ष पर सूक्ष्मातिसूक्ष्म मौलिक स्थापना प्रस्तुत करते चलते हैं। काव्य के क्षेत्र में आध्यात्मिकता का निषेध, अव्यक्त की अपेक्षा व्यक्त जगत की स्वीकारोक्ति तो है ही साथ ही साथ वे सौन्दर्य, कल्पना, अलंकार, चमत्कार, सूक्ति, वचनभंगी, शब्द-विधान को काव्य का साधन स्वीकार करते है। "कविता में कल्पना को साधन मानते हैं, साध्य नहीं।"[7] "कल्पना दो प्रकार की होती है- 'विधायक और ग्राहक'।"[8] "अलंकार प्रस्तुत या वर्ण्य वस्तु नहीं, बल्कि वर्णन की भिन्न-भिन्न प्रणालियाँ है, कहने के खास-खास ढंग है।"[9] अलंकार साधन

है, साध्य नहीं।''[10] ''काव्य में अर्थग्रहण मात्र से काम नहीं चलता, विम्ब ग्रहण भी अपेक्षित होता है। यह बिम्ब ग्रहण निर्दिष्ट गोचर और मूर्त विषय का ही हो सकता है।''[11] ''नाद सौन्दर्य से कविता की आयु बढ़ती है।''[12] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कविता को मनोरंजन का साधन नहीं मानते तथा मनोरंजन करने वाली कविता को केवल विलास की सामग्री मानते हैं। अर्थात् रीतिकालीन संस्कारों से मुक्त कर साहित्य को जनोन्मुखी एवं यथार्थ के धरातल पर प्रतिष्ठित करते हैं। उनकी मान्यता है कि- ''कविता का अन्तिम लक्ष्य जगत के मार्मिक पक्षों का प्रत्यक्षीकरण करके उसके साथ मनुष्य हृदय का सामंजस्य स्थापना है।''[13]

भारतेन्दु युग से लेकर द्विवेदी युग तक साहित्य जनवादी हो चुका था। मानव मूल्यों के प्रतिमान एवं नवीन ज्ञान-विज्ञान या तर्क के आधार पर केन्द्रीत शुक्ल युग में आलोचना का दृष्टिकोण आभासी, परम्परागत रूढ़ि एवं नायिका भेद, अलंकार निरूपण वाले ढ़र्रे की विरोधी सी हो गयी थे। क्योंकि रीतिवादी समीक्षा के मानदण्ड सीमित एवं जनोपयोगी नहीं थी। इनमें जीवन-जगत के नाना तत्वों से युक्त साहित्य की छान-बीन एवं पड़ताल करने की क्षमता का अभाव था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की आलोचना मानव जीवन के बहुआयामी तत्वों की न तो अनदेखी करती है और न ही समाज के कल्याणकारी धर्म की उपेक्षा। इनका रसवादी आलोचनात्मक मानदण्ड आनन्द की सीमा से परे, लौकिक जीवनोन्मुखी एवं वास्तविकता के धरातल पर प्रतिष्ठित हैं। वे आलोचना में रचना दृष्टि को ही नहीं, अपितु जीवन दृष्टि को भी महत्वपूर्ण मानते हैं। संस्कृत काव्यशास्त्र एवं हिन्दी आलोचकों में एक मात्र आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ही है जो रस को 'आनन्द' 'लोकोत्तर' 'अनिर्वचनीय' इत्यादि विशेषणों से मुक्त मानते हुए, इसे आध्यात्मिक भूमि से उतारकर लौकिक व्याख्या करते है। आचार्य शुक्ल की मान्यता है कि- ''रसास्वाद का प्रकृत स्वरूप 'आनन्द' शब्द से व्यक्त नहीं होता। 'लोकोत्तर', 'अनिर्वचनीय' इत्यादि विशेषणों से न तो अवाचकत्व का परिहार होता है, न प्रयोगों का प्राश्यचित।''[14] ''आनन्द' शब्द को व्यक्तिगत सुख भोग के स्थूल अर्थ ग्रहण करना मुझे ठीक नहीं जंचता। उसका अर्थ में हृदय का व्यक्तिबद्ध दशा से मुक्त होकर हल्का होकर अपनी क्रिया में तत्पर होना ही उपयुक्त समझता हूँ।''[15]

वस्तुत: जब अनुभव और अनुभूति का स्वरूप बदलता है तो उसके अभिव्यक्ति का स्वरूप भी बदल जाता है। बीसवीं शताब्दी के शुरूआत में भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के योग से हिन्दी साहित्य में संश्लिष्ट काव्यशास्त्र की परम्परा का उदय होता है। ''आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आधुनिक भारत के संश्लिष्ट काव्यशास्त्र के मेरूदण्ड है।''[16] विस्तृत अध्ययन, सूक्ष्म अन्वीक्षण बुद्धि, मर्म ग्रहिणी प्रज्ञा, वस्तुवादी ष्टिकोण एवं भारतीय काव्यशास्त्रीय सिद्धांतों पर दृढ आत्मविश्वास से युक्त आचार्य शुक्ल ने न तो कभी भारतीय रूढ़ियों का समर्थन किया और न ही कभी पाश्चात्य मानदण्डों से आक्रांत हुए बल्कि पुष्ट तथ्यों एवं सबल तर्को के आधार पर अलंकार, रीति, गुण, ध्वनि, वक्रोक्ति और पाश्चात्य आलोचना के प्रतिमान स्वच्छन्दवाद, कलावाद, व्यक्तिवाद, सौन्दर्यवाद, अनुभूतिवाद के अनुपयोगी तत्वों का सजगतापूर्वक विरोध करते हैं। डॉ. रामविलास शर्मा आचार्य शुक्ल के सम्बन्ध में लिखते हैं-''जगत् के वास्तविक दृश्य, जीवन की वास्तविक दशाएँ भावों की व्यंजना में वास्तविकता का आधार-आलोचना में शुक्ल के ये मूल सूत्र है।''[17]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने रस- सिद्धांत को विभाव, अनुभाव एवं संचारी भाव की रस्म आदायगी की परम्परा को स्थान पर 'भाव' को व्यापक धरातल पर व्याख्या कर 'रसानुभूति' को महत्व देते हैं। 'भाव' को संवेदना, हृदय की अनुभूति, मनोविकास एवं राग के अर्थ में भी प्रयुक्त करते है। आचार्य शुक्ल रसवादी आचार्यो की 'रस' अवधारणा का पड़ताल करते हुए लिखते है कि ''आचार्यो ने यूँ ही मनमाने ढंग से पर कुछ भावों को प्रधान भावों में और कुछ को संचारियों में रख दिया अथवा किसी सिद्धांत पर ऐसा किया। केवल यह जानकर ही आधुनिक जिज्ञासा तुष्ट नहीं हो सकती कि ग्रन्थों में यह भाव प्रधान कहे गए हैं और यह संचारी।''[18] आचार्य शुक्ल आधुनिक मनोविज्ञान एवं शैंड के मतों से भावों का पुनर्व्याख्या करते है, परन्तु मनोविज्ञान की भी सीमा तय भी करते है, जहाँ तक वह उपयोगी है वही तक सहमत होते है अन्यथा अपने मौलिक तर्को के आलोक में विवेचना करते हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल रस-सिद्धांत के रस-सूत्र की परम्परा के आधुनिक जिज्ञासा में विवेचना करते हुए लिखते हैं कि- ''भाव से अभिप्राय संवेदना के स्वरूप व्यंजना से है; 'विभाव' से अभिप्राय उन वस्तुओं या विषयों के वर्णन से है जिनके प्रति किसी प्रकार का भाव संवेदना होती है। ... वन, पर्वत, नदी, निर्झर, मनुष्य, पशु, पक्षी इत्यादि जगत की नाना वस्तुओं का वर्णन आलम्बन और उद्दीपन दोनों दृष्टि से होता रहा है।''[19] ''किसी भाव की रसात्मक प्रतीत उत्पन्न करने के लिए कवि-कर्म के दो पक्ष होते हैं- अनुभाव पक्ष और विभाव-पक्ष।''[20] ''विभाव और अनुभव कल्पना साध्य है।''[21]

''विभाव और भाव पक्ष कवि-कर्म के दो विधान है। विभाव में शब्दों द्वारा उन वस्तुओं के स्वरूप की प्रतिष्ठा करनी होती है जो भावों का आश्रय आलम्बन और उद्दीपन होती हैं।जब वह वस्तु प्रतिष्ठा हो लेती है तब भावों का व्यापार प्रारम्भ होता है।''[22] भाव मनोविज्ञान में भाव या मनोविकार का मूल अनुभूति है। ''अनुभूति की तरह भाव भी दो तरह के होते है- एक सुखात्मक, दूसरा दु:खात्मक। प्रेम, उत्साह, श्रद्धा, भक्ति, औत्सुक्य, गर्व आदि के साथ सुखात्मक अनुभूति लगी रहती है। इससे ये सुखात्मक हैं। शोक, क्रोध, भय, घृणा, लज्जा, उग्रता, आमर्ष, असूया, विषाद इत्यादि दु:खात्मक है।''[23] इन भावों का सामाजिक आधार पर जीवन तत्व से साधारण से साधारण सामग्री लेकर आचार्य शुक्ल ने युग बोध, राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक तत्व के लोकधर्मी धरातल पर रसत्व की व्याख्या किया। भावों के अमूर्त विषय में वे मूलत: मूर्त और गोचर यथार्थ को अपेक्षित मानते हैं। असम्बद्ध भावों को भी आचार्य शुक्ल रसवत् ग्रहण करने के पक्षधर है। इस प्रकार वे भाव-संधि व भाव सबलता को रस के क्षेत्र में उपयोगी मानते हैं।

''संचारियों का वर्गीकरण सुखात्मक, दु:खात्मक उभयात्मक, उदासीन में किया एवं प्रत्येक वर्ग की विशेषता का निरूपण जिस प्रकार आचार्य शक्ल ने 'रस-मीमांसा' में किया, वैसा संचारियों का वर्गीकरण अन्यत्र नहीं मिलता है। रसानुभूति प्रत्यक्ष या वास्तविक अनुभूति से सर्वथा पृथक कोई अंत: वृत्ति नहीं बल्कि उसी का उदान्त और औदात्य स्वरूप है।... यह वासना या संस्कार वंशानुक्रम से चली आती हुई दीर्घाभाव परम्परा का मनुष्य जाति की अंत: प्रकृति में निहित संचय है।''[24]

पंडितराज के बाद रस के साधारणीकरण पर लोकोन्मुखी चिंतन के आलोक में आचार्य शुक्ल मानते हैं कि- 'साधारणीकरण' का अभिप्राय यह है कि पाठक या स्रोता के मन में जो

व्यक्ति विशेष या वस्तु विशेष आती है। वह जैसे काव्य में वर्णित 'आश्रय' के भाव का आलंकन होती है वैसे ही सब सहृदय पाठकों या श्रोताओं के भाव का आलंबन हो जाती है।''[25] डॉ. नगेन्द्र लिखते हैं- ''वे मूलत: आलंबन का साधारणीकरण इस प्रकार होता है किपहले वह कवि के भाव का विषय बनता है और फिर समस्त सहृदय समाज के भाव का विषय बन जाता है।''[26] 'हिन्दी काव्यशास्त्र में रस सिद्धांत' में डॉ. सच्चिदानन्द चौधरी आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के साधारणीकरण के विषय में लिखते हैं कि- ''साधारणीकरण सिद्धांत में भी शुक्ल जी ने आलम्बनत्व, धर्म का साधारणीकरण और आश्रय अथवा कवि के साथ तादात्म्य की बात लिखकर अपनी नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का परिचय दिया है।इस प्रकार शुक्ल जी की रसमीमांसा के प्रत्येक क्षेत्र में कुछ न कुछ नवीनता अवश्य है। मैं ऐसा नहीं मानता कि शुक्ल जी ने जो कुछ कहा वह चरम् सत्य है, पर इतना अवश्य कि पराम्परागत विचारों के संशोधन स्वरूप अपनी कई नवीन बातें बतायी और रस-मीमांसा में आपका योगदान रहा।''[27]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आलोचना में व्यक्ति धर्म की अपेक्षा लोकधर्म, व्यक्तिहित की अपेक्षा लोकहित, दार्शनिकता की अपेक्षा सामाजिकता, अध्यात्मिकता की अपेक्षा लौकिकता, शास्त्रीयता की अपेक्षा व्यावहारिक पक्ष को महत्व देते हैं। लोकमंगल की साधानावस्था एवं लोकमंगल की सिद्धावस्था को प्रतिपादित कर रसानुभूति को लोक सामान्य जीवन-जगत् की भावना से समन्वित किया। लोकमंगल की साधानावस्था या प्रयत्न रक्षा को लेकर चलने वाले कवियों या समीक्षकों को 'करुणा' ही को बीज भाव मानना चाहिए। सिद्धावस्था की प्रशांत भूमि पर चलने वाले कवियों का ही प्रेम तत्व को ही बीज भाव कहना ठीक है। आचार्य शुक्ल प्रेमश और 'करुणा' को मंगल विधान के दो भाव ठहराते हैं तथा इन दोनों में दृष्टि भेद मानते हैं, न कि तत्व भेद, क्योंकि वे इसे राग की वासना के अंतर्गत ही मानते हैं। इन्हीं बिन्दुओं के आधार पर शुक्ल जी मध्यकालीन कवि सूर, तुलसी, जायसी एवं हिंदी साहित्य के इतिहास में विभिन्न कवियों के अन्त: प्रकृति साहित्यिक तत्वों एवं लोक अनुभवजन्य संस्कृति एवं कृति की समीक्षा में सूत्रात्मक निष्कर्ष के आधार है।

व्यक्तिवाद, रहस्यवादी प्रतीकवाद, मुक्त छंदवाद, कला का उद्देश्य कलावाद अभिव्यंजनावाद, संवेदनावाद एवं नवीन मर्यादावाद इत्यादि साहित्य सम्बन्धी पाश्चात्यावधारणा का विरोध किया तथा बाहर की भद्दी नकल से साहित्योन्नति नहीं हो सकती, ऐसा उनका भी मत था। भारतीय जीवन एवं सिद्धांतों से उनका सामंजस्य तथा विरोध कहाँ तक है? बिना इसके विवेचन के प्रतिमान के रूप में स्वीकार करना उन्हें स्वीकार नहीं। उनका अभिमत है कि- ''बाहर से सामग्री आए, खूब आए पर वह कूड़ा-करकट के रूप में न इक्ट्ठी की जाए। उसकी कड़ी परीक्षा हो, उस पर व्यापक दृष्टि से विवेचन किया। जाए, जिससे हमारे साहित्य के स्वतंत्र और व्यापक विकास में सहायता पहुँचे।''[28] साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना को सक्षम आलोचकीय प्रतिमा से स्थिर कर लोग मंगल की अवधारणा कर विस्तार करते चलते हैं। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने आचार्य शुक्ल की विशेषता इस प्रकार व्यक्त करते हैं-''जितना उत्कर्ष उन्हें साहित्य के सिद्धांतों का निरूपण करने में प्राप्त हुआ, उतनी ही दक्षता उन्हें उन सिद्धांतों का व्यावहारिक प्रयोग करने में हासिल हुई। पांडित्य में उनकी अप्रतिहत गति थी, विवेचना की उनमें विलक्षण शक्ति थी। वे आलोचक या समीक्षक मात्र नहीं थेय सच्चे अर्थ में साहित्य के आचार्य थे।''[29]

संदर्भ सूची :

1. आलोचक रामचन्द्र शुक्ल, सं. गुलाबराय, विजयेन्द्र स्नातक, आत्माराम एण्ड संस दिल्ली, प्रथम संस्करण 1952, पृष्ठ 2।
2. चिन्तामणि भाग-दो, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, सरस्वती मंदिर, काशी द्वितीय आवृत्ति, वि.सं. 2006, पृष्ठ, 67।
3. चिन्तामणि भाग- 1, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, सोलहवाँ सं. 2019, पृष्ठ- 82।
4. चिन्तामणि भाग - 2, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, सरस्वती मंदिर काशी, द्वितीय आवृत्ति, 2006, पृष्ठ 88।
5. वही, पृष्ठ 99।
6. वही, पृष्ठ, 56।
7. चिन्तामणि भाग दो, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, सरस्वती मंदिर, काशी, द्वितीय आवृत्ति, वि.सं. 2006, पृष्ठ 66।
8. रस मीमांसा, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पुस्तक प्रतिष्ठान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016, पृष्ठ 15।
9. वही, पृष्ठ 28।
10. वही, पृष्ठ 29।
11. वही, पृष्ठ 97।
12. वही, पृष्ठ 27।
13. वही, पृष्ठ 15।
14. वही, पृष्ठ 58।
15. वही, पृष्ठ 161-162।
16. रस सिद्धांत, डॉ. नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1964, पृष्ठ 202।
17. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना- डॉ. रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, चौथा संस्करण, 2015, पृष्ठ 97।
18. रस मीमांसा, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पुस्तक प्रतिष्ठान नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016, पृष्ठ 118।
19. चिन्तामणि भाग-दो, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, सरस्वती मंदिर काशी, द्वितीयआवृत्ति वि.सं., 2006, पृष्ठ 100।
20. वही, पृष्ठ 89।
21. वही, पृष्ठ 88।
22. रस मीमांसा, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पुस्तक प्रतिष्ठान नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016, पृष्ठ 74।
23. वही, पृष्ठ 111।
24. वही, पृष्ठ 163।
25. वही, पृष्ठ 185।
26. रस-सिद्धांत, डॉ. नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1964, पृष्ठ 202।
27. हिन्दी काव्यशास्त्र में रस-सिद्धांत, डॉ. सच्चिदानंद चौधरी अनुसंधान प्रकाशन कानपुर, प्रथम सं.1965, पृष्ठ 502।
28. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, प्रयाग पुस्तक सदन, इलाहाबाद, पृष्ठ 340।
29. हिन्दी साहित्य: बीसवीं शताब्दी, नन्ददुलारे वाजपेयी, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण 2010, पृष्ठ 53।

❑❑❑

ग्राम-पचखरा, पो.-तातारगंज, जि.-प्रयागराज, पिन-212107, मोबाइल न.-7905942443

लोक-संस्कृति और लोक-साहित्य में मथुरा प्रसाद 'नवीन' का योगदान

—कुमारी रागिनी

धरातल से उठने वाले इस साहित्य ने अपना एक शीर्षस्थ स्थान भी बनाया है। जहाँ उसे वैदिक साहित्य के समकक्ष आसन प्राप्त है। इसका प्रमाण यह है कि हमारे जीवन के बहुत से और विशेषकर सांस्कारिक धार्मिक कार्य वैदिक मंत्रों से पूर्ण होते हैं। जहाँ ये मंत्र संस्कृत में पढ़े जाते हैं वहीं गाँव वालों के द्वारा गाये जाने वाले लोकगीत तथा लोकाचार पर आधारित अन्य क्रिया-कलाप भी चलते रहते हैं।

लोक संस्कृति का निर्माण लोक + संस्कृति दो शब्दों से मिलकर हुआ है। लोक एक संस्कृत शब्द है जिसका अर्थ दुनिया, संसार, जगत, विश्व आदि होता है और संस्कृति किसी समाज में गहराई तक व्याप्त गुणों के समग्र स्वरूप का नाम है, जो उस समाज के सोचने, विचारने, कार्य करने के स्वरूप अंतर्निहित होता है। संस्कृति दो प्रकार के होते हैं- भौतिक और अभौतिक। भौतिक संस्कृति के अंतर्गत प्रत्यक्ष रूप से अवलोकन करने वाली वस्तुएँ आती है, जैसे-मकान, घर या अचल संपत्ति। अभौतिक संस्कृति के अंतर्गत-आचार-विचार, कला एवं विश्वास जैसी वस्तुएँ आती है।

लोक संस्कृति का वास्तविक अर्थ उस संस्कृति से है जो ग्रामीण एवं विशेषकर कृषक समाज से उत्पन्न होती है और उसी समाज में विकसित होती है। यानी लोक समाज की संस्कृति ही लोक-संस्कृति कहलाती है। लोक-संस्कृति की परिभाषा देते हुए ''डॉ. संपूर्णानंद'' ने भी कहा है- ''लोक-संस्कृति वह जीती-जागती वस्तु है जिसके द्वारा लोक की संस्कृति बोलती है। ''लोक-संस्कृति शब्द का व्यवहार 'फोकलोर' (Folklore) और लोक-साहित्य का 'फोक लिटरेचर' (Folk Literature) के लिए होता है। ''डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय'' के अनुसार सोफिया बर्न ने लोक-संस्कृति को तीन श्रेणियों में बाँटा है -

(क) लोक मान्यताएँ - लोक विश्वास, अंधविश्वास, परम्पराएँ आदि।

(ख) रीति-रिवाज - त्योहार, रहन-सहन, खान-पान आदि।

(ग) लोक-साहित्य - लोक गीत, लोक गाथा, लोक कथा, लोक नाटक आदि।

इसके बारे में ''डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय'' ने कहा है-''लोक-संस्कृति की उपमा किसी विशाल बटवृक्ष से दी जाए तो लोक-साहित्य को उसकी एक शाखा समझना चाहिए। यदि लोक-संस्कृति शरीर है तो लोक-साहित्य उसका अवयव है। लोक-संस्कृति का क्षेत्र-विस्तार अत्यंत व्यापक है परंतु लोक-साहित्य का विस्तार संकुचित है। लोक-संस्कृति की व्यापकता जन-जीवन के समस्त व्यापारों में उपलब्ध होती है परंतु लोक-साहित्य जनता के गीतों, कथाओं, गाथाओं, मुहावरों तक सीमित है। लोक-संस्कृति में लोक-साहित्य का अंतर्भाव होता है परंतु लोक-साहित्य में लोक-संस्कृति का समावेश होना संभव नहीं।''

लोक-संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष की निधि नहीं है यह संपूर्ण समाज के सहयोग से अनजाने किसी कारण से उत्पन्न हुई और संपूर्ण समाज की संपत्ति बन गई। इसमें धर्म, संगीत, साहित्य, लोक-गाथाओं तथा विश्वासों के प्रशिक्षण को ही महत्वपूर्ण माना जाता है। इन सब में लोक-संस्कृति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग लोक-साहित्य माना जा सकता है। क्योंकि इसमें लोक संस्कृति के सभी अंगों की झलक मिलती है। लोक-साहित्य का अभिप्राय उस साहित्य से है जिसकी रचना लोक करता है। लोक-साहित्य उतना ही प्राचीन है जितना कि मानव जीवन है। हम देखते हैं कि किसी भी समाज की मान्यताएँ, अंधविशवास, त्योहार, रीति-रिवाज, गीत, गाथा, किस्से-कहानियाँ, कहावतें, मुहावरें आदि का परिचय हमें लोक साहित्य ही देता है।

किसी देश अथवा क्षेत्र का लोक-साहित्य वहाँ की आदिकाल से लेकर अब तक ही उन सभी प्रवृत्तियों का प्रतीक है, जो साधारण जन स्वभाव के अंतर्गत आती है। अर्थात हमें कहीं की समूची संस्कृति का अध्ययन करना हो तो वहाँ के लोक-साहित्य का विशेष अवलोकन करना होगा। यह लिपिबद्ध बहुत कम और मौखिक ज्यादा होता है। लोक साहित्य पर व्यक्ति की छाप न होकर समस्त व्यक्ति-लोक की छाप होती है।

धरातल से उठने वाले इस साहित्य ने अपना एक शीर्षस्थ स्थान भी बनाया है। जहाँ उसे वैदिक साहित्य के समकक्ष आसन प्राप्त है। इसका प्रमाण यह है कि हमारे जीवन के बहुत से और विशेषकर सांस्कारिक धार्मिक कार्य वैदिक मंत्रों से पूर्ण होते हैं। जहाँ ये मंत्र संस्कृत में पढ़े जाते हैं वहीं गाँव वालों के द्वारा गाये जाने वाले लोकगीत तथा लोकाचार पर आधारित अन्य क्रिया-कलाप भी चलते रहते हैं। तभी तो हम देखते हैं कि एक ओर पुरोहित मंत्रोच्चार करते हैं तो दूसरी ओर ग्रामीण महिलाएँ गीत गाती है।

मथुरा प्रसाद 'नवीन' मगही और हिंदी के जाने-माने गीतकार और लोक साहित्य के रचयिता है। बड़हिया गाँव, लखीसराय जिला, बिहार के रहने वाले मथुरा प्रसाद नवीन जी का जन्म फाल्गुन शुक्ल पक्ष तृतीया को सन् 1930 ई. में हुआ। बहु आयामी व्यक्तित्व के धनी मथुरा प्रसाद नवीन संपूर्ण धरती पर समानता कि गंध को बिखरने का शत् प्रयास करते रहे हैं। वे अन्याय, अनीति, वाह्याडंबर और पाखंड के कट्टर विरोधी थे। उन्हें अक्खड़पन के कारण ''मगही का कबीर'' भी कहा जाता है। वे मगही भाषा के महान कवि हैं। प्रगतिशील साहित्य आंदोलन से वे आजीवन जुड़े रहे और प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्ष भी रहे। उनके गीत जन आंदोलनों में गाए जाते हैं। इन लोकगीत वास्तव में उनके जीवन का रूपांतर है। अभावों एवं संघर्षों के बीच में

पोषित नवीन जी का मानस दमित न होकर विद्रोही एवं उग्र है। वे अपने गीतों में दीन दुर्बल तथा वंचित एवं पीड़ित-पतित को ही स्थान दिये है। सुखी, समृद्ध, पूंजीवादियों से उन्हें घृणा है। तभी तो वे गंगा की सौगंध खाकर पूंजीपतियों से वे कहते हैं कि आपके लिए कलम नहीं चलाऊँगा-

''शब्द-शब्द में शोला भड़के, तोहरे गीत सुनौबो हम
कसम खा हियो गंगा जी के, कलम न कभी घुमैबो हम
तोहरा खातिर सब कुछ करबो, भुक्खल भी मुसकैबो हम
अत्याचार मिटाबे खातिर, सुखले चना चबैबो हम।''

'नवीन' जी अपनी बात को बिना लाग-लपेट के दु टुक शैली में व्यंग्य की चोट किस पर कितनी पड़ रही है इसकी परवाह न करते हुए हमेशा कहते थे। राजनीतिक उठा-पटक और भ्रष्ट व्यवस्था को व्यंग्यात्मक ढंग से तमाचा लगाते हुए कहते हैं-

''अजी मिसिर जी पतरा देख, कहिया तक सरकार चलत
महज एक कुरसी के खातिर, कहिया तक तकरार चलत
बन लो इ सरकार नया पर, पतरा इहे पुरनका हो
खाली बचल जात हो सबके, खतरा उहे पुरनका हो
सभे नाव में छेद होत हो, उइसे के पतवार चलत''।

अन्य भाषाओं के लोक-साहित्य की तरह 'मगही' भाषा का लोक साहित्य विशाल मगह-क्षेत्र के विस्तृत जन-जीवन के सूक्ष्म पर्यालोचन के लिए यह ऐसे संवेदनशील दर्पण के समान है, जिसमें आचार-व्यवहार, हर्ष-विवाद, रूढ़ियाँ-आकांक्षाएँ, प्रवृतियाँ एवं संस्कार प्रतिबिम्बित हो उठे हैं। मागधी से उत्पन्न मगही बिहारी समवर्ग की प्रमुख भाषा है। मगही का लोक साहित्य सुप्रसिद्ध एवं हृदयारंजक है। अत: मगही लोक साहित्य में लोकगीतों का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि मानव-जीवन का ऐसा कोई पक्ष नहीं है, जो इनसे अछूता रह गया हो। मानव के मातृगर्भ में स्थान पाने के साथ ही इन गीतों का आरंभ हो जाता है एवं अंत उसकी मृत्यु के पश्चात होता है।

लोकगीतों की रचना का आरंभ कब हुआ, इसका तिथि-निरूपण असंभव है। इतना ही कहा जा सकता है कि जबसे पृथ्वी पर मानव बसने लग तभी से उसके मुख से गीत भी फूटने लगे। यह अवश्य है कि युग-परिवर्तन के साथ आदिमानव के गीतों की बाहरी काया भी परिवर्तित होती गई पर उनके मूल भावों की व्यंजना में कोई अंतर नहीं पड़ा। नैसर्गिक भावावेश के क्षणों में फूटनेवाली इन लोकगीतों की धारा विविध भाषाओं में प्राप्त परंपराओं के रूप में प्रवाहित होती चली आ रही है। यह अंतकाल तक इसी रूप में प्रवाहित होती रहेगी। अन्य भाषाओं की तरह मगही लोकगीतों का वर्गीकरण निम्नांकित रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है-

1. संस्कार गीत - सोहर, मुण्डन, जनेऊ, विवाह आदि
2. क्रिया गीत - जँतसार, रोपनी आदि
3. ऋतु गीत - होली, चैती आदि
4. देवगीत - पौराणिक देवता संबंधी, ग्राम देवता संबंधी आदि
5. बालगीत - लोरी, खेलगीत, चकचंदा आदि
6. विविध गीत - झूमर, बिरहा, गोदना, निर्गुण, सामयिक आदि

मगही सोहर के वर्ण्य विषम अति व्यापक है। पति-पत्नी के प्रेम-मिलन, गर्भ की स्थापना, गर्भिणी की विविध स्थितियों शिशु-जन्म एवं ततसंबंधी उत्सव, प्रसूति के नैहर एवं ससुराल के विविध संबंधियों आदि सोहर गीतों में उपलब्ध होते हैं। सोहर का पर्याय मंगलगीत भी होता है। जैसे मगही लोकगीत में निम्नांकित पंक्ति में देखने को मिलता है-

''आजू ललना के बधइया, गावहूँ सखि मंगल हे।''

कृष्ण का जन्म हुआ है। पवनियाँ और नगर के सभी लोग बधाई देने पहुँच रहे हैं-

''भादो मासे कृष्ण जी जन्म लेलन, मथुरा में शोर भेलइ हे,
ललना घर-घर बाजेला बधइया, महल उठे सोहर हे।''

चूडाकरण-संस्कार हिंदू समाज के सोलह संस्कारों में एक है। लोक जीवन में यही संस्कार ''मुण्डन'' के नाम से प्रसिद्ध है। एक मुण्डन गीत में बालक अपने पिता से प्रार्थना करता है कि उसके बाल मुँह पर आते है, इसलिए वे मुण्डन करा दें-

''सभवा बइठल मोरा बाबा तऽ बाबा कउन बाबा हो।
बाबा लाबर मोरा छेकले लिलार करहुँ जग मुंडन हो।''

बालक की माँ के निमंत्रण पर ब्राह्मण तथा अन्य सभी पँवनिएँ आये हैं और सभी मुण्डन पर नेग माँगते है-

''लाला नउयवा जे अंजुरी पसारई
अब माँगऽ हई छुड़वे पर नेग ललन जी के मुड़ना
अब राजा दुलरूआ के मुड़ना
अब ब्राह्मण जे अंजुरी पसारथी
अब मांगऽ हथ पतरे पर नेग ललन जी के मुड़ना
अब राजा दुलरूआ के मुड़ना
अब फुआ जे अंजुरी पसारथी।
अब मांगऽ हथी अँचरे पर नेग ललन जी के मुड़ना
अब राजा दुलरूआ के मुड़ना।''

''यज्ञोपवती'' का अपभ्रंश रूप को ''जनेऊ'' कहा जाता है। हिंदू समाज में उपनयन-संस्कार के अवसर पर शास्त्रीय विधि के अनुसार बालक को ''यज्ञोपवती'' धारण कराया जाता है और यह परंपरा अभी तक चल रही है। जनेऊ से संबद्ध विविध विधि-विधानों का विस्तृत वर्णन मगही गीतों में मिलता है। जनेऊ के अवसर पर बालक ब्रह्मचारी का वेश धारण करता है और जनेऊ पहनाने की क्या विधि है और कौन-कौन जनेऊ पहना रहे हैं, जो निम्न पंक्ति में देख सकते हैं-

''दशरथ के चार गो ललनमा मंडप तर शोभे
बाबा दिहले मुँज जनेऊआ, पापा दिहले सुत जनेऊआ
ब्राह्मण दिहले नौ गुण जनेऊमा, मंडप तर शोभे
दशरथ के चार गो ललनमा मंडप पर शोभे''।

जन्म, मुण्डन और जनेऊ की ही भाँति विवाह संस्कार में वैदिक एवं शास्त्रीय प्रणाली और

लौकिक प्रणाली दोनों चलती है। वैदिक एवं शास्त्रीय प्रणाली का समापन पुरोहित कराते हैं औ लौकिक प्रणाली का समापन महिलाओं द्वारा होता है। विवाह की अनेक विधि है और विवाह गीतों की संख्या अनंत है। विवाह में सबसे पहले सगुन, देवी-देवता के गीत महिलाएँ गाती हैं उसके बाद और सब विधि की गीत गाती है-

''हाँथ कए लेलन विप्र स्वर्ण सठिया जी,
अजी चलियो में भेलन विप्र अयोध्या नगरिया जी।''

यहाँ पर विवाह के पूर्व दुल्हा-दुल्हन को अपने-अपने घर में नहलाया जाता है। इस अवसर पर उन्हें बुरी नजर से बचाने के लिए कुछ इस तरह के टोने-टोटके किये जाते हैं। जिसका उल्लेख निम्न गीत में मिलता है-

''राई जमाइन दादी निहुछे, देखियो रे कोई नजरी न लगवे।
राई जमाइन मम्मी निहुछे, देखियो रे कोई नजरी न लगवे''।

दुल्हन के घर में गाये जाने वाले अनुष्ठान गीतों में आनंद और उल्लास के साथ करूण भावनाएँ से भरी दिखाई देती है-

''कुसवा लेले कोँपथी बेटी के पापा, कइसे करब कन्यादान हे''।

प्रथम मिलन की घड़ी बहुत ही डर एवं उत्कण्ठा मिश्रित होती है। एक सुहागिन सुहाग-रात की कल्पना में अति विभोर जान पड़ती है-

''आज सुहाग के रात, चन्दा तुहुँ उगिहऽ।
चन्दा तुँहुँ उगिहअ, सुरूज मतुँ उगिहऽ।
करिहअ बड़ी तुँहुँ रात, मुरूग जनि बोलहिऽ।
आज सुहाग के रात, पिया मतुँ जइहऽ''।

हिन्दुओं के सोलह-संस्कारों में मृत्यु भी एक संस्कार है जिसको लोक ने इसे भी विशेष महत्व दिया है। मृत्यु संबंधी निर्गुण गीतों में मृत्यु के परिवर्तन का संकेत माना गया हैं। अत: मृत्यु गीतों में निर्वेद ही मुख्य स्थायी भाव है। यहाँ एक मगही लोकगीत निम्न है -

''रामजी जनम देलन, ब्रह्मा भी करम लिखलन
अहे-अहे सखिया जम भइया, अवलन लियावन हो राम।''

मगही में अनेक ऐसे भी लोकगीत हैं, जो अनुष्ठानों के अतिरिक्त अन्य सभी अवसरों पर गाये जाते हैं। ऐसे में बेटी के जोग, बेटा के तिलक, मटकोर, कोहबर, परीछन, बालगीत, खाना खिलाने, खेलाने, लोरी, शिक्षा प्रधान गीत, नागपंचमी, कृष्ण जन्माष्टमी, रामनवमी, कर्मा-धर्मा, जितिया, गोधन, रोपनी, सोहनी, चकचन्दा, झूमर, गोदना, निर्गुण, बिरहा, होली, चैती, ऋतुगीत, जँतसार, सामयिक, छठगीत आदि अनेक विविध गीत हैं, जो मगध क्षेत्र में गाये जाते हैं।

लोक साहित्य में मगही लोक कथा का अपना विशेष महत्व है। लोक कथा गीत में अन्य प्रसंगों के अतिरिक्त, नारी के बलिदान के भिन्न-भिन्न प्रसंग विशेष रूप से सुनने को मिलते हैं। कहीं धार्मिक अंधविश्वास के कारण नारी की बलि चढ़ाई जाती है, तो कहीं सासा-पति और ननद आदि के दुर्व्यहार के कारण नारी-जीवन आरक्षित दीख पड़ती है।

लोक साहित्य में ''लोक गाथा'' की परिभाषा विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से दी है-

श्री जी.एल. किटरेज का मत है कि ''लोकगाथा'' गीतकथा या कथात्मक गीत है।''

श्री फेंक सिजविक ने लोकगाथा (वैलेड) को सरल वर्णात्मक गीत माना है। हेजलिट के अनुसार ''लोकगाथा गीतात्मक कथानक है।''

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने इसकी परिभाषा कुछ इस तरह दी है-

''लोककथा वह गाथा या कथा है, जो गीतों में कही गई हो।''

लोक गाथाएँ मौखिक परंपरा में गायकों द्वारा पूरे भारत में प्रचलित हुई। मगही लोकगाथाओं में उनके रचयिता का कहीं नामोल्लेख नहीं हैं। सभी लोकगाथाएँ गेय हैं। उनकी अपनी संगीत पद्धति है।

मगही लोकगाथाओं में समाज में प्रचलित संस्कार, पूजा-पाठ एवं विश्वासों का सम्मिश्रण देखने को मिलता है। यह लोककथाएँ मौखिक परंपरा में आज भी जीवित है। यह एक प्रकार का वरदान ही है। लोकगाथा को जनता की कविता (Poetry of Folk) कहा गया है। इसलिए इनमें कवि हृदय की अनुभूति एवं स्वाभाविक उद्‌गार को अत्यंत सरलता से प्रस्तुत किया जाता है। यह आकृति में बहुत बड़ी-बड़ी है। इनमें अनेक ऐसी है, जिनका विस्तार किसी महाकाव्य से नहीं। जैसे-लोरकाइन आल्हा, आदि। इनकी (क) सुमिरन और (ख) पुनरूक्ति दो विशेषताएँ हैं।

(क) सुमिरन-मगही लोकगाथाओं का आरम्भ प्राय: देवताओं के स्मरण से होता है।

''रममा राम जी के करऽही सुमिरनमा हे नाम।
रममा माता माई के करऽही परनमिया हे ना।।
रममा ओही देलन हमरो जनमिया हे ना।।''

(ख) पुनरूक्ति-मगही लोकगाथाओं में पुनरूक्ति अनेक बार होती है। जैसे-जहाँ युद्ध-प्रसंग है, वहाँ एक-एक वस्तु का नाम लेकर गायक पुनरूक्ति करता जाता है। इसी तरह अन्य घटाओं और प्रसंगों को भी बार-बार दुहराता है।

लोक साहित्य में नाट्य और गीत का संबंध अति प्राचीन काल से चला आ रहा है। नाटक की उत्पत्ति सभ्यता के विकास के पूर्व इन्हीं तत्वों से हुई थी। मगही में ऐसे भी गीत हैं जो गेय होन के साथ नाट्य हैं। जैसे-जाट-जाटिन, बगुली, सामा-भकवा आदि नाम के गीत। ये लोक के गीत हैं इसलिए इनमें अधिकाशत: गार्हस्थ-जीवन के विविध व्यापारों का उल्लेख है और इनका नाट्य किया जाता है। स्त्रियों के नाट्यगीत सामा-चकवा, बगुली, डोमकच, जाट-जाटिन है। बगुली नाट्यगीत में महिलाएँ अभिनय के साथ गीत गाती हैं। जाट-जाटिन में दो प्रधान पात्र होते हैं।

(1) जाट और (2) जाटिन। इनमें एक ओर एक स्त्री जाटिन के वेश में अपने दल के साथ खड़ी रहती है, दूसरी ओर एक स्त्री जाट के वेश में अपने दल के साथ खड़ी रहती है। सामा-चकवा नाट्यगीत भाई-बहन के मंगलमय स्नेह बंधन को प्रकट करता है। बहन का नाम सामा और भाई का नाम चकवा रहता है।

''डोमकच'' वर के घर से बारात जाने के बाद रात में महिलाएँ डोम-डोमिन का अभिनय करती है। मगध में विवाह के अवसर पर होने वाला ''डोमकच'' में श्रृंगारिक मनोविनोदों की प्रधानता होती है। इसी तरह अनेक पर्वोत्सव के अवसर पर पुरूष लोग नाट्य करते हैं। स्वांग, नौटंकी, रासलीला, रामलीला, आदि इनके प्रिय नाटक हैं। लोकधर्मी नाटक में 'स्वांग' का विशेष महत्व मिला हुआ है। इसमें श्रृंगारी प्रवृत्तियों को बहुत छुट रहती है और इसमें हास्य रस की

प्रधानता रहती है। 'रामलीला' में रामायण के आधार पर राम की विविधा लीलाएँ अभिनीत करते हैं। इसमें कथोपकथन गीत बंध शैली में होता है। दशहरे के अवसर पर रामलीलाएँ अधिकतर प्रदर्शित की जाती है। रासलीला भी प्राय: गीतबद्ध शैली में प्रस्तुत की जाती है। कृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर रासलीलाएँ अधिकतर प्रस्तुत की जाती है। इसी तरह ''विदेसिया'' नाटक बिहार प्रांत की प्रसिद्ध नाटक है। इसमें सामाजिक बुराइयों पर करारी चोट की जाती है।

अत: लोक-साहित्य में हमें समाज का वास्तविक चित्र भी देखने को मिलता है। तभी तो हमें लोकगीतों, लोक-गाथाओं, लोककथाओं और लोकनाट्य से मनुष्य के रहन-सहन, आचार-विचार, खान-पान और रीति-रिवाज की जानकारी प्राप्त होती है। धार्मिक जीवन संबंधी बातों का भी पता हमें लोकसाहित्य में ही मिलता है। लोकगीतों से ही हमें गंगा माता, तुलसी माता, षष्ठी माता, देवी माता तथा शीतला माता आदि का गायन करने का उल्लेख मिलता है। प्राचीन समय में समाज का नैतिक स्तर बहुत ऊँचा था। इसका हमें लोक-साहित्य से ही पता चलता है। जैसे भारत में सती-धर्म का पालन बड़ी ही कठोरता के साथ किया गया है जो कि इसका भी उल्लेख हमें लोक साहित्य में ही मिलता है। लोक-साहित्य का एक प्रमुख अंग भाषा शास्त्र भी है। तभी तो ''डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी'' ने कहा है कि जो लोग लोक-साहित्य का संग्रह कर रहे हैं वे भावी भाषा शास्त्रियों के लिए अमूल्य सामग्री उपस्थित कर रहे हैं।

अत: मथुरा प्रसाद 'नवीन' जी धनी परिवार में जन्म लेकर भी निर्धनता के बीच लोक साहित्य को जीने वालों में शामिल हैं। नवीन जी सामाजिक, राजनीतिक एवं सभी विषयों पर चोट करने वालों में रहे हैं। इनके लोकगीतों को संकलित रूप में देखा जाय तो जनता की कसौटी पर कसे गीतों का संकलन है। आज भले ही वे इस दुनिया में नहीं हैं फिर भी वे समाज के हर व्यक्तियों के दिलों में बसे हुए हैं।

लोक साहित्य लोक संस्कृति के साथ विविध उपादानों के प्रकाश में विभिन्न प्रजातियों के प्रारंभिक से लेकर परवर्ती दौर तक की भाषा, पुरातत्व और भौतिक जीवन के अनुसंधान की दिशा अत्यंत रोचक निष्कर्षों तक पहुँचा सकती है। इस तरह हम देखते हैं कि लोक-साहित्य किसी भी समाज की भाषा और संस्कृति का एक हिस्सा है, जो लोक के स्तर पर अंकुरित होती है, पनपती है और फैलती है तथा पूरे लोक को संस्कारित करती है एवं विशिष्ट स्तर पर अनेक लोगों के विविध पुष्पों द्वारा एक सुंदर माला निर्मित करती है। तभी तो समूचा लोक-साहित्य आज भी हमें बार-बार जागृत कर रहा है। अत: हमें अपने लोक-साहित्य पर गर्व है।

संदर्भ :

1. लोक-संस्कृति की आत्मा - नर्मदेश्वर चतुर्वेदी
2. लोक-साहित्य की भूमिका - डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय
3. लोक संस्कृति की रूपरेखा - डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय
4. हिंदी साहित्य का बृहत इतिहास - राहुल सांकृत्यायन, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय
5. मगही भाषा और साहित्य - डॉ. सम्पत्ति अर्याणी

❐❐❐

मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, मोबाइल : 9473056564, ई-मेल: krragini6@gmail.com, पता: मकान नं. 160, गर्ल्स स्कूल के पास, ठाकुरबाड़ी रोड़, बिहटा, पटना-801103

पर्यावरणः मृदुला गर्ग की कहानी 'विनाश दूत'

—डॉ. सिंधु टी.आई

ब्राह्मण कवि ने शाप देना छोड़ दिया, लेकिन उसने नन्हें मेघ को फटकारा। कवि नन्हे मेघ से तर्क करता है। कवि की राय में कवि की अभिव्यक्ति में बाधा डालना खघ्तरनाक है। कवि का विचार है कि उनकी सोच पर यह पृथ्वी चलती है। ब्राह्मण कवि का तर्क सुनकर नन्हा मेघ खिल्ली उड़ाता है कि ब्राह्मण कवि के आंतरिक नेत्र खुला नहीं है, केवल बाहरी नेत्रों से दुनिया को देखता है, जो कवि के लिए मान्य गुण नहीं है।

कथाकार एवं स्तंभकार मृदुला गर्ग जी की कहानी है 'विनाश दूत'। उनका जन्म २५ अक्तूबर 1938 को पश्चिम बंगाल के कोलकत्ता में हुआ था। उन्होंने प्राय: सभी विधाओं में रचना की। उनके परिवार से ही साहित्यिक वातावरण उनको मिल गया था। साहित्य प्रेमी माँ को अंग्रेजी, हिंदी और उर्दू भाषा का गहरा ज्ञान था। पिताजी श्री बी पी जैन अंग्रेजी, हिंदी, उर्दू और फारसी के अच्छे जानकार थे। उनके पति आनंद प्रकाश गर्ग हैं। उनके भाई-बहनें भी साहित्य में अत्यंत रुचि रखने वाले हैं। हिंदी के प्रसिद्ध कवि राजीव जैन उनके भाई है। हिंदी की जानी-मानी लेखिका मंजुल भगत, चित्र जैन, रेणु जैन, अंग्रेजी की प्रसिद्ध लेखिका अचला बंसल आदि उनकी बहनें हैं। उनके दो पुत्र हैं - शशांक विक्रम और आशीष विक्रम। उनके उपन्यास हैं- 'उसके हिस्से की धूप', 'वंशज', 'चितकोबरा', 'अनित्य', 'मैं और मैं', 'कठगुलाब', 'मिलजुल मन' आदि। निबंध संग्रह हैं 'रंग ढंग', 'चुकते नहीं सवाल' आदि। संस्मरण हैं 'दीदी की याद में', 'कुछ अटके, कुछ भटके', 'कृति और कृतिकार' आदि। व्यंग्य संग्रह हैं 'कर लेंगे सब हजम', 'खेद नहीं है' आदि। उनके कहानी संग्रह हैं- 'कितनी कैदें', 'टुकड़ा-टुकड़ा आदमी', 'डैफोडिल जल रहे हैं', 'ग्लेशियर से', 'उर्फ सेम', 'दुनिया का कायदा', 'शहर के नाम', 'समागम', 'मेरे देश की मिट्टी अहा', 'जूते का जोड़ गोभी का तोड़', 'स्त्री मन की कहानियाँ', 'वो दूसरी', 'हर हाल बेगाने', 'वसु का कुटुम' आदि। उनके चार नाटक हैं- 'एक और अजनबी', 'जादू का कालीन', 'तीन कैदें', 'साम दाम दंड भेद' आदि। अनूदित रचनाएँ हैं- 'उसके हिस्से की धूप' उपन्यास का 'A touch of sun', 'डैफोडिल जल रहे हैं' कहानी का 'Daffodil on fire', 'Sky scrapper' (योगेश गुप्त जी की कहानियों का अनुवाद), 'अगली सुबह' कहानी का अनुवाद 'The morning after', विकी बाम का उपन्यास 'Man never

know' का अनुवाद 'एक तिकोना दायरा', इजबेल एनडूस के एकांकी 'Bride from the hills' का 'दुल्हन एक पहाड़ की' शीर्षक से अनुवाद आदि। कई पुरस्कार भी उन्हें मिले हैं। मृदुला जी ने अर्थशास्त्र में एम ए किया था। उन्होंने लिखा है -''अर्थशास्त्र से संतुष्टि न मिलने पर एक बेपनाह छटपटाहट मन में घर करती गई, जिसे सृजनात्मक लेखन में बांधकर लोगों तक पहुँचाने में मुझे लगा, अधिक सफलता मिलेगी।''[1] मेरे साक्षात्कार में मृदुला जी ने यह भी कहा है- "साहित्य पठन से मेरा लंबा लगाव रहा, बचपन से ...साहित्य ही मेरा एकमात्र आसरा था। वह मेरे खून में समां गया, मेरे दिलो-दिमाग का हिस्सा बन गया। चूँकि उसने मेरे जीवन में बहुत जल्द प्रवेश कर लिया था, इसलिए बड़े नामों से मुझे डर नहीं लगता था।''[2]

कथाकर मृदुला गर्ग जी की कहानी 'विनाश दूत' एक कविता की-सी भावनाओं को संजोए रखने वाली कहानी है। 3 दिसंबर 1984 को भोपाल शहर में गैस दुर्घटना हुई थी, जो भोपाल गैस कांड नाम से जाना जाता है। भोपाल में स्थित यूनियन कार्बाइड नामक कंपनी से मिथाइलआइसोसाइनाइट (MIC) नामक विषैले गैस का रिसाव हुआ था, जिससे हजारों लोगों की मृत्यु हुई थी। यह मिथाइलआइसोसाइनाइट असल में कीटनाशक बनाने के लिए उपयोग किया जाता था। दुर्घटना रात को घटित हुई थी, जिससे लोगों का बचना असंभव हो गया था। इतना ही नहीं, जल्दी ही भोपाल शहर के आसपास के प्रदेशों के वातावरण में यह विषैली गैस फैल गया। मिथाइलआइसोसाइनाइट फैलाने के उपरांत बादल में फोस्जीन, हाइड्रोजन सायनाइड, कार्बन मोनो-ऑक्साइड, हायड्रोजन क्लोराइड आदि के अवशेष पाये गये थे। जैसे-जैसे विषैला गैस फैल गया था, पूरे भोपाल शहर में, सैकड़ों लोग मारे गए थे। आबालवृद्ध सभी इस दुर्घटना के शिकार बन गए थे। आज भी उसका असर भोपाल के उन प्रदेशों में पड़ा हुआ है। इस दुर्घटना का पुन: आविष्कार 'विनाश दूत' कहानी में हुआ है। तीसरी दुनिया को अपने अर्थ-लाभ के लिए उपयोग करने वाली मनोवृत्ति पर व्यंग्य है यह कहानी। तीसरी दुनिया पर पहली दुनिया या अकेली दुनिया का प्रभाव जो पहले था, उसी की पुनरावृत्ति होने के प्रति सजग रहने का संदेश भी 'विनाश दूत' कहानी देती है।

'विनाश दूत' कहानी 'कालिदास-मेघदूत' वाली घटना का जिक्र करते हुए शुरू होती है। कालिदास के 'मेघ दूत' में मेघ काव्य के नायक का संदेश प्रेमिका तक ले जाता है। 'विनाश दूत' का मेघ छोटा है, विद्रोही लगता है, असल में विद्रोही नहीं है, दूसरों की दृष्टि में ही विद्रोही है, करुणा से द्रवीभूत है। छोटा मेघ समझदार है, संवेदनशील है, लीक से हटकर अपनी समझ-बूझ से जिंदगी आगे ले जाने के आकांक्षी है, समाज का कल्याण चाहने वाला मेघ है। कहानी की शुरुआत आज के एक ब्राह्मण कवि और नन्हें मेघ के बीच की एक लंबी बातचीत का अंतिम हिस्सा है। कालिदास के समय में आज्ञा का पालन किया जाता था। आज ऐसा नहीं है। मेघ छोटा है, लेकिन दीर्घ द्रष्टा है। वह सब कुछ देखता है, समझता है। समाज में घटित होने वाली घटनाओं की असली जानकारी रखता है। जैसे ऊपर रहकर उसे असली जानकारी मिलती है। कहानी की बुनावट एक विशेष प्रकार से हुई है। कालिदास का मेघ संदेश ले जाने के लिए सहमत हो जाता है, 'मेघ दूत' काव्य की रचना होती है। यहाँ मेघ संदेश ले जाने से इनकार करता है, 'विनाश दूत' कहानी की रचना भी होती है। सहमति-असहमति दोनों के जरिए कहानी आगे बढ़ती है। कहानी

में ताकतवर देश अमेरिका का, पहली दुनिया का जिक्र भी किया गया है। कालिदास के मेघ दूत का समय, जो 4-5 ईसा पूर्व माना जाता है, जिसे कहानीकार ने शीत युद्ध के बहुत पहले के समय के रूप में, यानी पहली दुनिया, दूसरी दुनिया, तीसरी दुनिया वाले विभाजन के पहले की स्थिति बताया है। यानी कालिदास के मेघ और कहानी के मेघ के बीच समय का बहुत बड़ा अंतराल है, विचारधारा भी बहुत बदल गई है।

अब असली कहानी शुरू होती है। कहानी कालिदास के ही निवास स्थान मध्य प्रदेश में 1984 में हुई गैस दुर्घटना के सिलसिले में रची गई है। ब्राह्मणों पर ताना मारा है कहानीकार ने। बुद्धिमान कहे जाने वाले एक कवि ने नन्हे मेघ से संदेश ले जाने को कहा था। संदेश को व्यक्त नहीं किया गया है। संदेश जो भी हो, नन्हा मेघ उसे ले जाने से इनकार करता है। युगों से बड़ों का या समाज के उच्च वर्ग कहे जाने वाले लोगों की आज्ञा का पालन करना छोटों का या समाज के निम्न वर्ग कहे जाने वाले लोगों का धर्म समझा जाता था। अब उसी का भंग हुआ है। नन्हा मेघ संदेश ले जाने से इनकार करता है। कथाकार मृदुला जी कवि वर्ग के महत्व को स्वीकार तो करती है, सिर्फ समाज के उच्च-निम्न वर्ग के भेद-भाव पर ताना मारती है। ''तनकर खड़ा हो गया मेघ को शाप देने के लिए। पर उसके भीतर के कवि ने उसे रोक लिया।''

ब्राह्मण कवि ने शाप देना छोड़ दिया, लेकिन उसने नन्हें मेघ को फटकारा। कवि नन्हे मेघ से तर्क करता है। कवि की राय में कवि की अभिव्यक्ति में बाधा डालना खष्तरनाक है। कवि का विचार है कि उनकी सोच पर यह पृथ्वी चलती है। ब्राह्मण कवि का तर्क सुनकर नन्हा मेघ खिल्ली उड़ाता है कि ब्राह्मण कवि के आंतरिक नेत्र खुला नहीं है, केवल बाहरी नेत्रों से दुनिया को देखता है, जो कवि के लिए मान्य गुण नहीं है। ''युगों से वह अपने को त्रिकालदर्शी मानता आया था।''[4]

ब्राह्मण कवि हैरान और नाराज हो गया, जो एक कवि के लिए अपेक्षित गुण नहीं है। मेघ की बातों का स्पष्टीकरण वह चाहता था, लेकिन नन्हे मेघ से स्पष्टीकरण माँगना ब्राह्मण कवि के अहं को ठेस पहुँचाने वाली बात थी। फिर भी अपनी जिज्ञासा की वजह से वह स्पष्टीकरण माँगता है। तब नन्हा मेघ सपनों में डूबे हुए कवि का संबोधन देकर उसको अहंकारी, अल्पज्ञ और लोभी मनुष्य की वि तियों का किस्सा सुनाता है। नन्हा मेघ पहली दुनिया वालों की मानसिक वि तियों का कष्स्सिा सुनाता है- ''संपन्न देशों ने अपनी वैज्ञानिक जिज्ञासा शांत करने के लिए तीसरी दुनिया को प्रयोगशाला बना डाला। ... मनुष्यों से उनका सरोकार केवल अपनी दुनिया के मनुष्यों से था।''[5] तीसरी दुनिया उनके लिए ऐशो आराम के लिए बनी थी। तीसरी दुनिया के शासकों से भी कहानीकार नन्हे मेघ के जरिए सवाल करती है- ''क्यों भूल गए तीसरी दुनिया के शासक कि अपने देशों में मनुष्य रहते हैं, कीड़े-मकोड़े नहीं, जिन पर प्रयोग करके संपन्न देश अपने को विकसित बतला लें और विपन्न देश वैज्ञानिक दृष्टि से जागरूक।''

बातचीत के दौरान नन्हा मेघ ब्राह्मण कवि को याद दिलाता है कि भोपाल शहर यहाँ से 80 किलो मीटर दूरी पर है। नन्हे मेघ की बातचीत आगे बढ़ गई तो वह बताता है भोपाल शहर से अब केवल आठ किलो मीटर की दूरी है। भोपाल गैस दुर्घटना को पुन: कहानी में कहानीकार ने कुशलता से लाया है। गैस दुर्घटना के समय की स्थिति कहानी में दोहराई गई है। वही महक, वही

चीख-पुकार, वही खांसी, वही घुटन, वही लाशें। अपनी भाषा-शैली की कुशलता से दुर्घटना को पुन:सृष्टि की गई है। सिर्फ नन्हा मेघ यह सब देखता है, महसूस करता है, त्रिकालदर्शी माने जाने वाले ब्राह्मण कवि को इसका एहसास तक नहीं। गैस दुर्घटना वाली भोपाल का पूरा वातावरण अब नन्हे मेघ और ब्राह्मण कवि के बातचीत की जगह तक पहुँच गया है। गैस दुर्घटना के समय का विषैला गैस उनके पास तक फैल आया है। कवि को घुटन का अनुभव होता है, बात नहीं कर पा रहा है। अस्पष्ट स्वर में कवि अपनी प्रियतमा का नाम लेता है। नन्हा मेघ गुस्से में है कि कवि को अब भी सिर्फ अपनी प्रियतमा की सोच है, जबकि हजारों प्रेमी युगल और परिजन, जो दम तोड़ रहे हैं, उनकी चिंता नहीं है। थोड़ी हवा मिलने के लिए कवि ने अपने कमरे की खिड़की खोल दी तो मेघ कमरे के अंदर घुस जाता है। दुपहर का समय था। लेकिन हर जगह अंधेरा छा गया है। कवि साँस तक नहीं ले पाते थे। नन्हा मेघ भी कमरे के एक कोने में सिमट गया था। कवि को चाहिए था कि वह नन्हे मेघ की रक्षा करें। विषैले गैस की वजह से कवि ने खड़े-खड़े ही प्राण त्याग दिए। प्राण छोड़ने से पहले उनके चेहरे पर शीतल जल की कुछ छींटे पड़े- "वह समझ गया कि उसका वह नन्हा विद्रोही मेघ, स्याह गुब्बारे का ग्रास बनाने से पहले, प्रकृति के अपरिहार्य प्रतिरोध की क्रूरता पर रो दिया है, ठीक उसके चेहरे से हटकर।"[6]

कहानी में कथावस्तु से ज्यादा महत्व नन्हे मेघ और ब्राह्मण कवि के बीच की बातचीत को दिया गया है। उनकी बातचीत कहानी को आगे ले जाती है। वर्षों पहले की एक घटना, जिससे आज की पीढ़ी बिल्कुल अपरिचित है, उसको कहानी के माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। कहानी के अंत तक आते-आते सहृदय माने जाने वाले कवि से भी सहृदय बन गया है नन्हा मेघ, जो प्रकृति का ही हिस्सा है। प्रकृति ही आखिर मनुष्य की रक्षा करेगी। यह महान संदेश देकर कहानीकार प्रकृति के संरक्षण की आवश्यकता पर जोर दिया है। साथ ही अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए जागृत रहने का संदेश भी शासकों को देती है। भविष्य में होने वाले विनाश का दूत बन गया है- नन्हा मेघ। पर्यावरण की रक्षा के लिए सभी देशों के शासकों को सजग रहना चाहिए। लेकिन जब शासक वर्ग ही अपने स्वार्थ-लाभ की पूर्ति के लिए देश का विनाशक बन जाता है, तभी पर्यावरण मनुष्य के लिए ही नहीं, सभी जीव-जंतुओं के लिए विनाशक बन जाता है। 'विनाश दूत'-काव्य सौष्ठव से भरी कहानी। मूल्यवान मोतियों का भंडार।

संदर्भ सूची :

1. मृदुला गर्ग-मेरे साक्षात्कार, पृष्ठ संख्या 39
2. मृदुला गर्ग-मेरे साक्षात्कार, पृष्ठ संख्या 32
3. विनाश दूत-मृदुला गर्ग; पर्यावरण और मानवाधिकार, (सं) पूर्णिमा आर, पृष्ठ संख्या 161
4. विनाश दूत-मृदुला गर्ग; पर्यावरण और मानवाधिकार, (सं) पूर्णिमा आर, पृष्ठ संख्या 161
5. विनाश दूत-मृदुला गर्ग; पर्यावरण और मानवाधिकार, (सं) पूर्णिमा आर, पृष्ठ संख्या 162
6. विनाश दूत-मृदुला गर्ग; पर्यावरण और मानवाधिकार, (सं) पूर्णिमा आर, पृष्ठ संख्या 164

❑❑❑

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सेंट पीटरर्स कॉलेज, कोलेंचेरी, केरल, पिन-682311, मो. 9446611338, ई-मेल: drsindhuti@gmail.com

अटल बिहारी वाजपेयी का जीवन दर्शन

—कैलाश कुमार
—डॉ. शंकर मुनि राय

अटल बिहारी वाजपेयी का जन्म 25 दिसम्बर सन् 1924 ई. को ब्रह्म मुहूर्त में शिंदे की छावनी ग्वालियर में हुआ था। अटल जी का घर गिरिजाघर के पास ही था, उस दिन ईसा मसीह का भी जन्मदिन होने के कारण उषाकाल से ही गिरिजाघर से घंटियों की आवाज आ रही थी। उस समय कौन जानता था कि यह सुन्दर नवजात शिशु एक दिन भारतीय राजनीति का ध्रुव तारा बनेगा तथा देश के प्रधानमंत्री के गौरवपूर्ण पद को सुशोभित करेगा।

प्रस्तावना

''भारत तर्पण की भूमि है, अर्पण की भूमि है, वंदन की भूमि है, अभिनंदन की भूमि है। इसका कंकर-कंकर शंकर है, इसका बिन्दू-बिन्दू गंगाजल है। हम जिएंगे तो इसके लिए मरेंगे तो इसके लिए।''

कुछ लेख कुछ भाषण, पृष्ठ - 256

भारतरत्न, जननायक एवं राजनेता जैसे अनेक अलंकारों से सुशोभित पूर्व प्रधानमंत्री, कवि स्व. अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी कविता के प्रसिद्ध व चर्चित हस्ताक्षर हैं। राष्ट्रवादी विचारधारा से परिपूर्ण काव्य श्रृंखला के श्रृजन में अटल बिहारी वाजपेयी का आधुनिक हिन्दी साहित्य में विशेष महात्म्य है। खोजी संपादक तथा चिंतन प्रधान सांस्कृतिक निबंधों के प्रेणता के रूप में उनकी अलग पहचान है। एक ओर संवेदनशील तथा भावुक कवि के रूप में, मानव हृदय में उद्‌बुद्ध विविध भावों के सतरंगी चित्र खिंचने की अद्‌भूत प्रतिभा से संपन्न हैं तो दूसरी ओर देश के प्रधानमंत्री के रूप में पोखरण में परमाणु परीक्षण कर राष्ट्र को सुरक्षा के दृष्टिकोण से आत्मनिर्भर एवं स्वाभिमान से पूर्ण कर गौरवान्वित करने का कठोर निर्णय लेकर सम्पूर्ण विश्व को चकित कर देने में भी सक्षम है।

उनकी अधिकांश रचना में भारत की सांस्कृतिक अस्मिता तथा गौरव-गरिमा का नवोन्मेष है। उनका काव्य कोरी कपोल कल्पना का चमत्कार न होकर अपनी मातृभूमि को सुजलाम्, सुफलाम् और शस्य याामलाम् से सम्पूर्ण कर चहुंदिश विकास और वैभव की धारा बहाने का संकल्प मंत्र है। उनके लिए साहित्य शिल्प मात्र रचना विधान न होकर एक पवित्र साधना है जिसके बल पर वे राष्ट्र निर्माण का पुनीत वरदान प्राप्त करना चाहते हैं। वे अपने जीवन के कण-कण भारत माता के श्री चरणों में अर्पित करते रहे।

जन्म, बाल्यावस्था एवं पारिवारिक पृष्ठभूमि :- अटल बिहारी वाजपेयी का जन्म 25 दिसम्बर सन् 1924 ई. को ब्रह्म मुहूर्त में शिंदे की छावनी ग्वालियर में हुआ था। अटल जी का घर गिरिजाघर के पास ही था, उस दिन ईसा मसीह का भी जन्मदिन होने के कारण उषाकाल से ही गिरिजाघर से घंटियों की आवाज आ रही थी। उस समय कौन जानता था कि यह सुन्दर नवजात शिशु एक दिन भारतीय राजनीति का ध्रुव तारा बनेगा तथा देश के प्रधानमंत्री के गौरवपूर्ण पद को सुशोभित करेगा। वाजपेयी जी के पिता श्री कृष्ण बिहारी एक अध्यापक थे तथा अध्यापक पद से उन्नति करते हुए प्राचार्य तथा विद्यालय निरीक्षक के पद को सुशोभित किए। माता का नाम श्रीमती कृष्णा देवी था। पं. कृष्ण बिहारी के चार पुत्र- अवध बिहारी, सदा बिहारी, प्रेम बिहारी, अटल बिहारी तथा तीन पुत्रियाँ- विमला, कमला तथा उर्मिला से भरा-पूरा परिवार था।

ग्वालियर में अटल जी के पिता श्री कृष्ण बिहारी जी अध्यापन के साथ-साथ काव्य रचना भी करते थे। उनकी रचनाओं में राष्ट्रप्रेम के स्वर भरे रहते थे। **''सोते हुए सिंह के मुख में हिरण कहीं घुस जाते''** प्रसिद्ध पंक्ति उन्हीं की है। वे ग्वालियर के प्रख्यात कवि थे तथा राजदरबार में उनका विशेष मान-सम्मान था। परिवार का विशुद्ध भारतीय वातावरण अटल जी के रग-रग में बचपन से ही रचने-बसने लगा। वे आर्यकुमार सभा के सक्रिय कार्यकर्ता थे। संघ के प्रति परिवार की निष्ठा के परिणाम स्वरूप अटल जी का झुकाव उसी ओर हुआ और वे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के स्वयं सेवक बन गए। वंशानुक्रम और परिवारिक संस्कार एवं वातावरण ने उन्हें बाल्यावस्था से ही प्रखर राष्ट्र भक्त बना दिया।

शिक्षा एवं उच्च शिक्षा :- वाजपेयी जी को बचपन से ही अध्ययन में विशेष रूचि थी। वैदिक सनातन धर्मावलम्बी कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में जन्म होने के कारण उनका प्रथम साक्षात्कार श्रीमद्‌भागवत गीता तथा रामायण जैसे धार्मिक ग्रंथों से हुआ। उनके पितामह पं. श्यामलाल जी संस्कृत के जाने-माने विद्वान थे। वे गाँवों में भागवत कथा बांचते थे। वाजपेयी जी बचपन में अपने पितामह की पोथियाँ पढ़ा करते थे। उनकी प्राथमिक शिक्षा से बी.ए. तक की शिक्षा ग्वालियर में हुई। तत्कालीन विक्टोरिया कॉलेज जो वर्तमान में लक्ष्मीबाई कॉलेज है, से उन्होंने उच्च श्रेणी में बी.ए. उत्तीर्ण किया। वे विक्टोरिया कॉलेज के छात्रसंघ के मंत्री और उपाध्यक्ष भी रहे। वे वाद-विवाद प्रतियोगिता में सदैव भाग लेते थे। स्नातक के बाद स्नातकोत्तर शिक्षा हेतु ग्वालियर से उत्तरप्रदेश की व्यावसायिक नगरी कानपुर के प्रसिद्ध शिक्षा केन्द्र डी.ए.वी. कॉलेज गए, जहाँ से उन्होंने राजनीति शास्त्र में प्रथम श्रेणी में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। अटल बिहारी वाजपेयी और उनके पिता जी दोनों ने कानून की पढ़ाई के लिए एल.एल.बी. में एक साथ डी.ए.वी. कॉलेज कानपुर में प्रवेश लिया। उस समय उनके पिता राजकीय सेवा से सेवानिवृत हो चुके थे। एल.एल.बी. की कक्षाओं में दोनों साथ ही जाते थे तथा छात्रावास में भी पिता-पुत्र दोनों एक ही कमरे में छात्र रूप में रहते थे, जिससे कई बार कक्षा में अध्यापकों के मध्य हास्य-विनोद की स्थितियाँ निर्मित हो जाती थी। अंततः एल.एल.बी. की पढ़ाई को बीच में ही विराम देकर अटल जी संघ के कार्यो में तल्लीन हो गए।

काव्य में राष्ट्रीय चेतना :- वाजपेयी जी के काव्य में मानवीय संवेदनाएँ, जीवन के उतार-चढ़ाव का प्रगाढ़ अनुभव और राष्ट्रीय चेतना का स्वर भरपूर है, जो उन्हें स्वातंत्र्योत्तर भारत में राष्ट्रीय फलक पर उभरे नेताओं से बहुत आगे ले जाकर खड़ा कर देता है। अटल जी ने सदैव राजनीतिक कालक्रम को सत्ता के दायरों से निकालकर राष्ट्र निर्माण का सर्वश्रेष्ठ उपकरण बनाने का प्रयत्न किया। राष्ट्र के संबंध में उन्होंने लिखा- ''राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाने के लिए आवश्यक है कि हम राष्ट्र की स्पष्ट कल्पना लेकर चलें। राष्ट्र कुछ संप्रदाय अथवा कुछ जनसमूह का समुच्चय मात्र नहीं अपितु एक जीवमान इकाई है, जिसे जोड़-तोड़कर नहीं बनाया जा सकता। इसका अपना व्यक्तित्व होता है, जो उसकी प्रकृति के आधार पर कालक्रम का परिणाम है। उसके घटकों में राष्ट्रीयता की अनुभूति, मातृभूमि के प्रति भक्ति, उसके मन के प्रति आत्मीयता और उसकी संस्कृति के प्रतीक गौरव के भाव में प्रकट होती है।''

एक कवि हृदय ही मातृभूमि और राष्ट्र की ऐसी जीवंत संकल्पना प्रस्तुत कर सकता है। भारत की जिजीविशा लंबे संघर्षों के बाद भी कितनी प्रखर है, उनकी कविता ''आज सिंधु में ज्वार उठा है'' की पंक्तियाँ देखिए-

''आज सिंधु में ज्वार उठा है, नगपति फिर ललकार उठा है ,
कुरुक्षेत्र के कण-कण से फिर पान्चजन्य हुंकार उठा है।
शत-शत आघातों को सह कर, जीवित हिंदुस्तान हमारा,
जग के मस्तक पर रोली सा शोभित हिंदुस्तान हमारा।''

मेरी इक्यावन कविताएँ, पृष्ठ - 58

विपरीत परिस्थितियों के बावजूद भारत की एकता-अखंडता के लिए राष्ट्रीय चेतना का स्वर मुखरित करते हुए अटल जी इन पंक्तियों में संदेश देना चाहते हैं कि राष्ट्र सेवा का मार्ग कंटकाकीर्ण है, इस पथ पर स्वार्थ भेद की बलि चढ़ानी होगी -

''बाधाएँ आती हैं आएँ
घिरे प्रलय की घोर घटाएँ
पावों के नीचे अंगारे
सिर पर बरसे यदि ज्वालाएँ
निज हाथों में हँसते-हँसते
आग लगाकर जलना होगा
कदम मिलाकर चलना होगा।''

मेरी इक्यावन कविताएँ, पृष्ठ - 79

अटल के काव्य में मानवीय चेतना :- मानवीयता की भावना के बिना कोई भी आदमी आदम कद नहीं माना जा सकता चाहे वह ऊँचाई में कितना भी बड़ा हो। अटल जी के हृदय में मानवता का संस्कार बाल्यकाल से ही पल्लवित हुआ था। अटल जी के जीवन और काव्य पर मुख्यत: स्वामी दयानंद सरस्वती तथा स्वामी विवेकानंद के संयम एवं आदर्शों का प्रभाव है। इस

प्रभाव की परिणीति है कि उन्होंने अपने काव्य में मानवीय चेतना को वाणी दी है। ''मेरी इक्यावन कविताएँ'' में संकलित यह लघु रचना उनकी भावनाओं को इंगित कर रहे हैं -

''मेरे प्रभु!
मुझे इतनी ऊँचाई कभी मत देना
गैरों को गले न लगा सकूँ
इतनी रुखाई कभी मत देना।''

क्या खोया क्या पाया, पृष्ठ -46

अटल जी के काव्य में सांस्कृतिक चेतना :- साहित्य संस्कृति का संवाहक है और संस्कृति साहित्य का अभिलक्षित उद्देश्य। संस्कृति विहीन साहित्य की परिकल्पना पत्र विहीन वृक्ष के समान है। संस्कृति वही चिरंतन होती है, जिसका विपुल परिमाण में लिखा साहित्य उपलब्ध होता है। इस तरह साहित्य सर्जन एक सांस्कृतिक कर्म है और राष्ट्रवाद की अक्षुणता का ठोस आधार भी है। अटल जी का जीवन तथा उनका सृजन सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का ही जयघोष है। वे उस काल के कवि हैं जब सर्वश्री शिवमंगल सिंह 'सुमन', रामधारी सिंह दिनकर, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और माखनलाल चतुर्वेदी का ओजस्वी काव्य भारत की स्वतंत्रता कालीन हवाओं में तीव्रता से गूंज रहा था। अटल जी के सामने पराधीन भारत की स्वतंत्रता का ज्वलंत प्रश्न था। अपमानित एवं तिरस्कृत होती भारतीय संस्कृति को बचाने और दलित वंचित, शोषित दरिद्रनारायण को उनके गौरवशाली अतीत का सम्मानजनक वैभवपूर्ण जीवन दिलाने की चिंता थी। यही चिंता उनके काव्य की भाव भूमि बनी। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद से निष्पन्न ओजस्विता ही उनके काव्य का श्रृंगार है। उनकी छोटे-छोटे टुकड़ों में ओजस्वी शब्दावली में राष्ट्रीय भाव भूमि के ऊपर लिखी गई पंक्तियाँ इस प्रकार है :-

''भू भाग नहीं, शत-शत मानव के हृदय जीतने का निश्चय।''

इसमें संस्कृति मुखरता से बोल रही है। अटल जी की इसी तरह की एक और पंक्ति देखिए:

''मैं तो समष्टि के लिए व्यष्टि का कर सकता बलिदान अभय।''

प्रकाशित रचनाएँ - अटल बिहारी वाजपेयी की प्रकाशित रचनाएँ निम्नानुसार है :-

1. मृत्यु या हत्या, 2. अमर बलिदान, 3. कैदी कविराय की कुण्डलियाँ, 4. न्यू डाइमेंशन ऑफ फॉरेन पॉलिसीज, 5. लोक सभा में अटल जी, 6. अमर आग है, 7. मेरी इक्यावन कविताएँ, 8. कुछ लेख, कुछ भाषण, 9. राजनीति की रपटीली राहें, 10. बिन्दु-बिन्दु विचार, 11. सेक्युलरवाद, 12. मेरी संसदीय यात्रा, 13. सुवासित पुष्प, 14. संकल्प काल, 15. विचार बिन्दु, 16. शक्ति से शांति, 17. न दैन्यं न पलायनम्, 18. अटल जी की अमेरिका यात्रा, 19. नई चुनौती: नया अवसर। वाजपेयी जी के लेख और कविताएँ राष्ट्रधर्म, पाँचजन्य, नई कमल ज्योति, धर्म युग, कादम्बिनी तथा नवनीत आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं।

भारत के प्रधानमंत्री के रूप में :- 6 अप्रैल 1980 का दिन अटल जी के लिए विशेष महत्वपूर्ण था। इस दिन बम्बई (मुंबई) में भारतीय जनता पार्टी का जन्म हुआ और वाजपेयी जी

उसके राष्ट्रीय अध्यक्ष बनाए गए। वे इस पद पर 1986 तक आसीन रहे। सन 1962 से 1967 तक, फिर 1986 में वाजपेयी जी राज्यसभा के सदस्य भी रहे।

(1) प्रथम कार्यकाल :- वाजपेयी जी 11वीं लोकसभा में लखनऊ से सांसद के रूप में विजयी हुए। भारतीय लोकतंत्र के प्रधानमंत्री के रूप में राष्ट्रपति महोदय ने उन्हें 16 मई 1996 को प्रधानमंत्री पद की शपथ दिलाई किंतु उनकी सरकार मात्र 13 दिन ही चली। सदन में बहुमत साबित न कर पाने के कारण विपरीत परिस्थितियों में उन्होंने 28 मई 1996 को स्वयं ही त्यागपत्र दे दिया और वे सन 1998 तक लोकसभा में विपक्ष के नेता बने रहे।

(2) द्वितीय कार्यकाल :- सन 1998 के चुनाव में भाजपा लोकसभा में सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी। इस चुनाव में देश के अन्य कई पार्टियों के साथ मिलकर चुनाव लड़े तथा बहुमत प्राप्त होने पर राष्ट्रपति महोदय ने वाजपेयी जी को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया। 19 मार्च 1998 को प्रात: 9:30 बजे उन्हें प्रधानमंत्री पद की शपथ ली। इस बार भी 13 माह तक सरकार चलाने के बाद सहयोगी पार्टियों द्वारा समर्थन वापस लेने के कारण सरकार गिर गई।

(3) तृतीय कार्यकाल :- 1999 में राजग के साझा घोषणापत्र पर चुनाव लड़ा गया, जिसमें वाजपेयी जी के नेतृत्व को प्रमुख मुद्दा बनाया गया। चुनाव में राजग को बहुमत हासिल हुआ और 13 अक्टूबर 1999 को वाजपेयी जी ने तीसरी बार प्रधानमंत्री का पद संभाला तथा कार्यकाल पूरा करते हुए 2004 तक इस पद को सुशोभित किए।

अटल बिहारी वाजपेयी का प्रधानमंत्री के रूप में तृतीय कार्यकाल (छत्तीसगढ़ राज्य निर्माण के विशेष संदर्भ में) :-

भारत के दो क्षेत्र ऐसे हैं जिनका नाम विशेष कारणों से बदला गया। एक तो 'मगध' जो बौद्ध विहारों की अधिकता के कारण बिहार बन गया और दूसरा 'दक्षिण कौशल' जो छत्तीसगढ़ों को अपने में समाहित करने के कारण छत्तीसगढ़ बन गया। छत्तीसगढ़ वैदिक और पौराणिक काल से ही विभिन्न संस्कृतियों के विकास का केंद्र रहा है। यहाँ की प्राचीन मंदिर तथा उनके भग्नावशेष इंगित करते हैं की यहाँ पर वैष्णव, शैव-शाक्त, बौद्ध-जैन के साथ ही अनेक आर्य तथा अनार्य संस्कृतियों का विभिन्न कालों में प्रभाव रहा है।

सर्वप्रथम छत्तीसगढ़ के रूप में पृथक राज्य के स्वप्नदृष्टा पंडित सुंदरलाल शर्मा थे। सन् 1965 में आचार्य नरेंद्र दुबे ने छत्तीसगढ़ समाज की स्थापना की। इसके दो साल बाद 1967 में डॉ. खूबचंद बघेल ने छत्तीसगढ़ 'भ्रातृत्व संघ' बनाकर राज्य निर्माण की माँग को पुनर्जीवित किया। 1979 में छत्तीसगढ़ मुक्तिमोर्चा का गठन कर राज्य गठन की माँग को आंदोलन का रूप दिया गया किंतु प्रत्येक बार केवल आश्वासन ही मिल रहे थे। 2 जनवरी 1995 की सर्वदलीय मंच की रैली में सात सांसद, 23 विधायक और दो मंत्री शामिल हुए। 1998-99 के लोकसभा चुनाव के प्रचार-प्रसार के दौरान वाजपेयी जी रायपुर के सप्रे शाला मैदान के आम सभा में उद्घोष किया कि ''आप मुझे 11 सांसद दीजिए मैं आपको छत्तीसगढ़ राज्य दूंगा।'' चुनाव परिणाम आने पर उन्हें राज्य में लोकसभा से 7 सीटें मिली। इस पर वाजपेयी जी ने कहा - ''रघुकुल रीत सदा चली आई, प्राण जाई पर वचन न जाई।'' अपने वचन के अनुरूप छत्तीसगढ़ राज्य निर्माण की घोषणा

की। 31 जुलाई सन् 2000 को लोकसभा में और 9 अगस्त सन् 2000 को राज्यसभा में राज्य निर्माण का प्रस्ताव पारित हो गया तथा 28 अगस्त को राष्ट्रपति महोदय के. आर. नारायणन के हस्ताक्षर हुए। 4 सितंबर सन् 2000 को भारत सरकार के राजपत्र में प्रकाशन के बाद 1 नवंबर सन् 2000 को छत्तीसगढ़ देश के 26 वें राज्य के रूप में अस्तित्व में आया और पुरुखों का सपना साकार हुआ।

वाजपेयी जी ने न सिर्फ राज्य निर्माण किया बल्कि राज्य के विकास की गतिविधियों में भी राज्य सरकार का साथ दिया। जनवरी 2002 में अटल जी के हाथों बिलासपुर जिले के सीपत में 1980 मेगावाट क्षमता के विशाल सुपर थर्मल पॉवर बिजली घर की बुनियाद रखी गई। अटल जी ने सन् 2004 में छत्तीसगढ़ में तीन विश्वविद्यालयों की नींव रखी:-

1. कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय रायपुर,
2. तकनीकी विश्वविद्यालय दुर्ग,
3. पंडित सुंदरलाल शर्मा मुक्त विश्वविद्यालय बिलासपुर।

सन् 1986-87 में जब अटल जी बस्तर दौरे पर आए थे तो वहाँ के वनवासियों और वन संपदा को देखकर बहुत प्रभावित हुए थे। उन्होंने तभी से मनसा बना ली थी की छत्तीसगढ़ को अलग राज्य का दर्जा देना है। वे इस बात को महसूस करते थे की छत्तीसगढ़ में प्रचुर वन संपदा, खनिज संसाधन पर्याप्त उपज तथा जल स्त्रोत होने के बाद भी यहाँ के लोग अत्यंत पिछड़े हुए हैं। छत्तीसगढ़ राज्य का निर्माण प्रदेशवासियों के लिए एक बड़ी सौगात थी। यह प्रदेश के जनता के संघर्ष का सम्मान था। वाजपेयी जी छत्तीसगढ़िया के स्वाभिमान को बेहतर तरीके से समझते थे। उनके इस महान कार्य के लिए छत्तीसगढ़ की संपूर्ण जनता उनका हमेशा कृतज्ञ एवं आभारी रहेगा तथा उनके मानस पटल में अटल जी चिरकाल तक ससम्मान स्मरणीय रहेंगे।

वाजपेयी जी का राजनीति से संन्यास तथा मृत्यु :- सन् 2005 में वाजपेयी जी ने सक्रिय राजनीति से संन्यास लेने की घोषणा कर दी। सन् 2007 में उनकी अंतिम सभा 25 अप्रैल को कपूरथला चौराहे पर भाजपा उम्मीदवारों के समर्थन में हुई थी लेकिन उसके बाद उनका स्वास्थ्य खराब होने पर कई दिनों तक वेंटिलेटर पर रखा गया था। ठीक होने पर उन्हें अस्पताल से छुट्टी तो दे दी गई किंतु उसके बाद के वर्षों में उन्हें स्वास्थ्य संबंधी गंभीर परेशानियाँ लगातार बनी रही। अंतत: वे 16 अगस्त सन् 2018 को समस्त देशवासियों को अटल शून्य में छोड़कर चिर निद्रा में विलीन हो गए।

सादा जीवन उच्च विचार :- सादा जीवन व्यतीत करने वाले अटल जी सादगी एवं सरलता के जीवंत प्रतिमा थे। बचपन से ही पढ़ने-लिखने के शौकीन थे। उन्हें खाली बैठना बिल्कुल पसंद नहीं था। जब भी समय मिलता वे अपनी मनपसंद पुस्तक हाथ में उठा लेते। भोजन बनाने में उन्हें काफी रूचि थी, अपने हाथों से परोसकर खिलाने में उनको अत्यधिक प्रसन्नता होती थी। वे खिचड़ी के शौकीन थे। हिंदी कवियों में महाप्राण निराला भोजन बनाने और खिलाने के लिए विशेष प्रसिद्ध थे।

अटल जी देश के महान नेता थे किंतु साहित्य प्रेमियों को उनका कवि रूप ही अधिक प्रिय है। राजनीति में रहते हुए भी वे अजातशत्रु थे। उन्होंने आजीवन अविवाहित रहकर राष्ट्र सेवा करने का संकल्प लेकर अपना सर्वस्व देश हित में समर्पित करने का प्रण लिया था।

उपसंहार :- 'भारत रत्न', राजनेता एवं कवि अटल बिहारी बाजपेयी का व्यक्तित्व श्रेष्ठ मानवीय गुणों की जीवंत प्रतिमा है। वे एक आदर्श राजनेता के रूप में दलीय मतभेदों से परे होकर राष्ट्र की सर्वोच्च हित में चिंता करते हैं, तो दूसरी ओर एक कवि के रूप में वे देश के सभी वर्गो को विश्वबंधुत्व का संदेश देते हुए कदम मिलाकर चलने की प्रेरणा देते हैं। कवि और राजनेता दोनों ही रूपों में उनके रग-रग में राष्ट्रभक्ति ही समाई हुई है क्योंकि मूलतः वे एक राष्ट्रपुरुष ही हैं।

संदर्भ सूची :

1. न दैन्यं न पलायनम् - सं. डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, किताबघर प्रकाशन 4855-56/24, बारहवाँ संस्करण, 2013, अंसारी रोड दरीयागंज, नयी दिल्ली।
2. हार नहीं मानुंगा - सं. विजय त्रिवेदी, हार्पर कालिंग पब्लिशर्स, ए-75, सेक्टर 57, नोएडा 201301, उत्तरप्रदेश, भारत।
3. नयी चुनौती नया अवसर - सं. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली।
4. विचार बिन्दु - सं. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, किताबघर प्रकाशन, अंसारी रोड दरीयागंज, नयी दिल्ली।
5. कुछ लेख कुछ भाषण - सं. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, किताबघर प्रकाशन, अंसारी रोड दरीयागंज, नयी दिल्ली।
6. बिन्दु-बिन्दु विचार - सं. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, किताबघर प्रकाशन, अंसारी रोड दरीयागंज, नयी दिल्ली।
7. शक्ति से शांति - सं. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, किताबघर प्रकाशन, अंसारी रोड दरीयागंज, नयी दिल्ली।

❑❑❑

हिन्दी- विभागाध्यक्ष, शास. दिग्विजय स्व शासी स्नातकोत्तर, महा. राजनादंगाँव, शोधकेन्द्र - शास. दिग्विजय स्वशासी, स्नातकोत्तर महा. राजनादंगाँव, छत्तीसगढ़, सम्पर्क - 9303482721

थारू लोक नृत्य-झमटा में वर्णित थरूहट क्षेत्र का ऐतिहासिक एवं भौगोलिक विवरण

—डॉ. नम्रता कुमारी

पश्चिमी थारु अवधी, मध्यवर्ती थारु भोजपुरी तथा पूर्वी थारु मैथिली भाषी है। सच यह कि ये जिस क्षेत्र में अंतरित होकर बसे वहाँ की बोली-भाषा, रहन-सहन को अपना लिया। लेकिन उनकी मूल जनजातीय पहचान उनकी दैहिक आकृति, प्रकृति, देवी-देवताओं की पूजा, भाषायी शब्द और कलात्मक परंपराओं में जीवित रही।

प्रकृति के सुरम्य वातावरण में बसने वाली बिहार के चंपारण क्षेत्र की थारू जनजाति का सबसे लोकप्रिय नृत्य-गीत है-झमटा। इस नृत्य के लिए कोई विशेष अवसर नहीं होता। जब भी मस्ती उमड़ी कि घंटे-डेढ़ घंटे का नृत्य शुरु। वे वक्त रोपनी के बाद वाले मौज भरे दिन हो सकते हैं या कटाई के बाद की आराम तलब रातें। वह पर्व-त्योहार भी हो सकता है या शादी की धूमधाम भी। ''झमटा'' बिना किसी ताम-झाम के, ढ़ोल-मंजीरे के बिना ही, हरे-भरे दिलवाले को झूमा सकता है, उन्हें संगीत की सरिता में बहा सकता है। झमटा नृत्य की शैली, इसमें नर्तकियों की भंगिमा मणिपुर के मेतेयीत जाति के प्रसिद्ध नृत्य ''लाहोरबा'' से काफी मेल खाता है।

नृत्य एवं संगीत जनजातीय समाज के अभिन्न अंग होते है जिनके सहारे वे अपने साहस और धैर्य की नैया को खेकर प्रकृति एवं मानव निर्मित विध्नों की नदी को पार कर जाते है। नेपाल एवं हिमालय की तराई में प्राचीन काल से निवास करती आ रही थारु जनजाति के पास नृत्य और गीतों का असीमित भंडार है। एक थरुइन के पास जीवन के प्रत्येक अवसर अवसर के लिए गीत उपलब्ध है, जो विरहनी, बारहमासा, पूर्वी, जतसारी, चइता, बरसाती आदि गीत के रुप में वर्गीकृत है। झुमरा, झमटा, पूर्वी, रसगुल्ला, रसधारी, कठधोरी जोगी, झारा, लौंडा आदि नृत्य थरुहट में प्रचलित है। झुमरा एवं लौंडा नाच पूर्णत: पुरुषों का नृत्य होता है जिसमें थारु युवक नारी परिधान पहनकर नृत्य करते है। रसगुल्ला, झारा एवं रसधारी नृत्य कृष्णलीला एवं रामलीला विषयवस्तु को प्रस्तुत करते है। जोगिया नृत्य हास्यव्यंग का नृत्यगान होता है तो कठघोरी नृत्य में पुरुष नर्तक काठ के हाथी, घोड़े और ऊँट पर चढ़कर ऐसे नाचते है जैसे वे उनकी सवारी कर रहें है। झमटा थरुहट का सबसे लोकप्रिय नृत्य है जिसमें केवल महिलायें ही भाग लेती हैं। आज भी थरुहट क्षेत्र में नरकटियागंज (जिला पश्चिम चम्पारण, बिहार)

से 50-55 किलोमीटर की दूरी पर स्थित सहोदरा माई स्थान पर रामनवमी के दिन इस नृत्य का आयोजन थारुओं द्वारा किया जाता है।

थारु जनजाति : एक परिचय -

भारत और नेपाल के सीमावर्ती क्षेत्रों में थारुओं की घनी आबादी है। ये सीमांत के उत्तर-दक्षिण, आर-पार के वन-प्रांतर, नदी-नाले तथा पहाड़ों के आसपास अधिक बसे है। ''बिहार के पश्चिमी सीमांत दोन-सोमेश्वर की घाटी (पश्चिम चम्पारण) से पूर्वी सीमांत मेची नदी तक के भैंसालोटन, बगहा, रामनगर, गौनाहा, मैनाटांड़, सिकटा, शिकारपुर, भिखनाठोरी, नरकटियागंज (चंपारण), मंसापुर (लौकही मधबुनी) आदि के भारतीय भूभाग में इनकी सघन आबादी है। जबकि नेपाल के लुम्बिनी, चित्तौन, सल्यान, दांग-देखुरी, बाँकेबरदिया, कैलाली - कंचनपुर, मोरंग, सुनसरी, सप्तरी, आदि क्षेत्रों में थारुओं की सघन आबादी है। उत्तराखण्ड एवं उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी बहराईच, गोंडा और कुमायूँ के क्षेत्र में थारु बसते है। इस संपूर्ण क्षेत्र को थरुहट या थारुआन कहा गया है।

भौगोलिक दृष्टि से थारु संस्कृति को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है:-

1. पूर्वांचल के थारु:- नेपाल के पर्सा जिले के आगे के मोरंग तक के थरुहट क्षेत्र।
2. मध्यांचल के थारु:- बिहार के पश्चिम चम्पारण तथा इससे सटे नेपाल क्षेत्र के थारु।
3. पश्चिमांचल के थारु:- उत्तर प्रदेश तथा नेपाल की गंडक नदी से पश्चिम में बसे थारु।

पश्चिमी थारु अवधी, मध्यवर्ती थारु भोजपुरी तथा पूर्वी थारु मैथिली भाषी है। सच यह कि ये जिस क्षेत्र में अंतरित होकर बसे वहाँ की बोली-भाषा, रहन-सहन को अपना लिया। लेकिन उनकी मूल जनजातीय पहचान उनकी दैहिक आकृति, प्रकृति, देवी-देवताओं की पूजा, भाषायी शब्द और कलात्मक परंपराओं में जीवित रही।

झमटा नृत्य-

रंग-बिरंगी साड़ियों में सजी भर-भर माँग सिंदूर लगाये थारु महिलाएँ गोलाकार खड़ी होकर हाथों की तालियों और कदमों की लयबद्धता के साथ जब झमटा करती है तो वहाँ का पूरा वातावरण झूम उठता है। थरुहट में इसे ''झमटा'' पारना'' कहते हैं। झमटा नृत्य में नृत्यागनाओं का अंग संचालन काफी सधा होता है। नृत्य सूरों के आरोह-अवरोह, लय-ताल के साथ, कभी विलम्बित में कभी द्रुत में अपने निराले ढ़ंग में जारी रहता है। एक समय था जब झमटा नृत्यागनाओं में नृत्य के लिए ऊर्जा और उत्साह इतना तेज होता था कि तालियों की आवाज एक गाँव से दूसरे गाँव तक पहुँच जाती थी।

झमटइयां टांरा (ग्राम-भजनी, तपा चौपारण):-

मान्यता है कि थरुहट के इस क्षेत्र में परियाँ आकर झमटा पारती थी जिस वजह से आज भी यहाँ के गोलाकार क्षेत्र पर जहाँ झमटा पाड़ा जाता था, घास नहीं उगता है। झमटइयां टांरा थारु संस्कृति का अहम हिस्सा है।

झमटइयां टांरा का वह गोलाकार क्षेत्र जहां झमटा करने के कारण घास नहीं उगता

पन्द्रह-बीस नृत्यांगनाएँ एक गोले में खड़ी होकर झुक-झुक कर सधी आवाज में तालियाँ बजाते हुए समेवत स्वर में एक-दूसरे से सवाल-जवाब करती है-

''कौन जइहें हाजीपुर, कौन जइहें पटना,
से कौन जइहें बेतिया नोकरिया।
बाबा जइहें हाजीपुर, भइया जइहें पटना,
से सइयाँ जइहें बेतिया नोकरिया।।
कौन अनिहे सुहा सारी, कौन अनिहें कंगना,
से कौन अनिहें, हिरदया दरपनवा।
बाबा अनिहें सुहा-सारी, भइया अनिहें, कंगना,
से सइयां, हिरदया दरपनवा।।[1]

(अर्थात् कौन जाएगा हाजीपुर, कौन जाएगा, बेतिया, कौन जाएगा पटना, जवाब देती हुई थारु ललनाएँ कहती हैं- बाबा जाएँगे हाजीपुर, भईया जाएँगे पटना, पति जाएँगे बेतिया नौकरी करने। पुन: थारु महिलाएँ आपस में सवाल करती है - कौन लाएगा सारी, कौन लाएगा कंगना और कौन हृदय का दर्पण लाएगा। बाबा साड़ी लाएँगी, भैया कंगन और हृदय का दर्पण तो पति ही लाएँगे। थारु कामिनियाँ वास्तव में कुछ ऐसे ही सलोने सपने मन में संजोती है। आधुनिक सभ्यता से अलग गाँव-गँवई की अल्हड़ बाते सुनने में तो उटपटांग लगती हैं, परन्तु इसमें वास्तविकता कूट-कूट कर भरा होता है।

झमटा करती थारु महिलायें

झमटा नृत्य गीत वास्तव में श्रंगार रस से सराबोर होता है। प्रकृति की ग्राम्य पृष्ठभूमि में चम्पारण की नदी में मछली मारती थारुनी के गले का हार चील लेकर उड़ गयी। वह भैंस चराते अनजान चरवाहे से निवेदन करती हैं कि पास के सेमल (एक पेड़) पर बैठी चील से हार छीन कर ले आए, फिर हम दोनों भोग-विलास करेंगे-

''झिहिर-झिहिर लदियाँ जे बहे, गोरी, तिरिया माछरि मारे,
झपटलि चिल्हिया हरदया लय गेलिया,
आरे-आरे भईया भइसि चरवहवा नाउना जानीले तोहार
सेमर डार से, हरइया, घिचिवे तू, तोरा, मोरा भोग विलास।''[2]

(लदिया-नदियाँ, थारु न को ल उच्चारित करते हैं।) हार के बदले भोग-विलास का प्रस्ताव। वनवासी थारुनी का उन्मुक्त जीवन अभिजात्यों के लिए ईर्याजन्य आकर्षण का विषय हो सकता है, लेकिन थरुहट में सब सहज है। यह गीत थारुओं के निवास क्षेत्र तथा उनके सामाजिक जीवन का संक्षिप्त किंतु सटीक चित्रक प्रस्तुत करता है। साथ ही थारुओं के मूल विचार पद्धति पर भी रोशनी डालता है। एक समय या जब थारु कुमारियाँ स्वयं अपना पति चुनती

थी। इस गीत में थारु सुन्दरी चरवाहें को चुनौती देती हैं कि यदि तुम सेमल की डाल पर जा बैठी चील के पंजे से हार को छुड़ा कर ला दोगे तो मैं तुम्हें अपना जीवन सखा बना लुँगी। थारुओं के जीवन में आखेट निपुणता की प्रतिष्ठा और प्रधानता इस गीत में दिखाई देती है।

पंडित गणेश चौबे इस गीत के संदर्भ में कहते है,

''संभवतः यह गीत उतना ही प्राचीन है जितनी की यह जाति। कितनी बार इस गीत ने सोमेश्वर तथा दोन की घाटियों को प्रतिध्वनित किया होगा, कितनी बार हरबोरा तथा पंडई की लहरों पर यह गीत थिरका, इसे कौन बता सकता है?''[3]

झमटा नृत्य करती थारु महिलायें

प्रकृति के सुरम्य गोद में बसे चंपाराण (बिहार) के थरुहट क्षेत्र की नैसर्गिक सुन्दरता एवं पौराणिक स्थल का बखान भी झमटा नृत्य-गीतों में मिलता है-

पूरब ठारिले सूरज के अरघवा, रे मदरिया पहाड़,
बीचहीं में बहे तीरबेनिया, जटाशंकर परिछन जाई (1)
उतर ठारिले भीम के अरधवा, रे मदरिया पहाड़,
बीचही में बहें तीरबेनिया, जटाशंकर परिछन जाई (2)
पक्छिम ढारिले देव के अरघवा, रे मदरिया पहाड़,
बीचही में बहें तीरबेनिया, जटाशंकर परिछन जाई (3)
दखिन ढ़रिले गंगा के अरधवा, रे मदरिया पहाड़,
बीचहीं में बहे तीरबेनिया, जटाशंकर परिछन जाई। (4)।[4]

अर्थात् पूरब में सूर्य भगवान को अर्ध्य ढालती हैं एक तरफ मदारी पहाड़ी है, बीच में त्रिवेणी नदी बहती है, वहीं जटाशंकर का मंदिर है, जिनकी आरती उतारने जाती हूँ। उत्तर में भीम के नाम पर अर्ध्य डालती हूँ। इधर मदारी पहाड़ है, बीच में त्रिवेणी नदी बहती है, पश्चिम में देवता के नाम पर अर्ध्य डालती हूँ। मैं जटाशंकर को परिछने जाती हूँ। दक्षिण में गंगा जी के नाम पर अर्ध्य चढ़ाती हूँ।

थरुहट के झमटा गीतों में इस क्षेत्र की ऐतिहासिक घटना चक्र की अनुगंज भी सुनायी देती है। निम्नलिखित झमटा गीत में संभवतः 1914 ई. में हुए बुटवल युद्ध का वर्णन है-

केकर बजले तुरहिया, केकर करताल,
केकर बजले घउसवा, लोग होखू न सहाय।
गोरख के बजले तुरहया, फिरंगी के करताल,
नेपालवा के बजले घउसवा, लोग भइले समतूल
नेपालहीं से राजा नामे हेठउड़ा भइले ठाठ,
हाथिन खम्भा गड़वे, तमुआ देले तान।[5]

अर्थात् किसकी तुरही बजी? किसका करताल बजा? किसका धौसा बजा? किसका आह्वान हुआ कि लोग सहायता के लिए तैयार हो जाएँ। गोरखें लोगों की तुरही बजी। फिरंगी लोगों का करताल बजा। नेपाल के लोगों का धौसा बजा। लोग सावधान हो गये। राजा नेपाल से नीचे उतरे (नामे) और हेथौड़ा (या इस जगह एहठौरा) आकर खड़े हो गये। हाथियों पर लदे खंभे हलवाने लगे और तंबुओं को तान दिया।

सुगौली की संधि (1816) ई0 के पूर्व तक थरुहट का अधिकांश क्षेत्र नेपाल अधिराज्य में पड़ता था। यह आक्रमण मई, 1814 ई. में हुआ। पर गोरखे इतने शक्तिशाली हुए कि ब्रिटिश लोगों की कोई भी कार्रवाई एक वर्ष तक कारगर साबित नहीं हुई। अंत में 1815 ई0 में ब्रिटिश जनरल ऑक्टर लोनी ने गोरखों के बहादुर नेता अमर सिंह थापा को हराकर मलाँव के किले को समर्पित करने के लिए बाध्य किया था, इस गीत से प्रतीत होता है कि थारु गोरखो की तरफ युद्ध में भाग लिए थे।

<u>ख' थ्पसम बवदजंपदे पदअंसपक कंजं द्य प्द.सपदमण्श्रऋ ',</u>

झमटा नृत्य करती थारु महिलायें

थारुओं के झमटा गीत में थरुहट क्षेत्र का खूबसूरत भौगोलिक क्षेत्र भी मिलता है।

उत्तर नेपाल देश अति भला सुनर।
दखिन ही भारत महान सखी री ।
बीचे ठइया थरुहट लागे ला जइसे
सिव माथे दुज के चाँद सखी री ।

पूरब दिशा शोभे गिरी अरुणाचल।
पश्चिम छपि होला भान सखि री ।
ममता के रसे-रसे बहेला पवनवा।
नेहिये के करे रसदम सखी री ।

तलवा-तलईया में पुरईन फुले ला।
चिरई कुलेल करे, तीरे सखी री।

वन पर्वटावा से निकसत सोता।
नदियन निर्मल निर सखी री ।

उगते सूरज देवा धजा फहराइले।
लहरे पतरखा आसमान सखी री ।
आम अमरईया के भिनती बियरिया।
मिली जुली करे गुणगान सखी री।

बौद्ध मुनी जी के जन्म के धरती।
गंडक नदिया गंभीर सखी री ।
जनकपुरी मइया सीता जन्म ली।
कुटिया में लव-कुश बीर सखी री ।

मइया यशोधरा सहोदरा कहाली।
कोखिया से देली भरदान सखी री।
सैया के नाम सुनी आँख भरी आवे।
तलफी तलफी रोये प्राण सखी री ।[6]

(छपित -अस्त होना, भान-सूर्य भगवान, पुरईन-कमल, फुलैला-खिलना, तीरे-किनारे, कुलेल-चहचहाना

अर्थात् उत्तर में नेपाल तथा दक्षिण में महान भारत के बीच शीर्ष मुकुट पर थरुहट क्षेत्र अवस्थित है। पूर्व दिशा में अरुणाचल प्रदेश है, पश्चिम में भगवान सूर्य अस्त होते है। ताल तलाब में कमल खिलता है। किनारे चिड़िया चह-चहाती है। सीताजी और लव-कुश की जन्म स्थल भी थरुहट ही भूमि है। माँ यशोधरा ही यहाँ सहोदरा कहलाती है। माँ के दरबार में संतान प्राप्ति की कामना (कोखिया के भरदान) निश्चित ही पूरी होती है। पर वर की कामना करने पर माँ की आँखे भर आती है। (थारु अपने को बौद्ध धर्म के उपासक बताते है और बुद्ध को थारु बालक क्योंकि बुद्ध की जन्म स्थली थरुहट क्षेत्र रही है। थारु माँ शुभ्रदा की पूजा बड़ी ही आस्था के साथ करते है। यशोधरा, गौतम बुद्ध की पत्नी को ही वे सहोदरा या शुभद्रा बताते है। चुँकि माँ यशोधरा स्वयं बुद्ध के घर छोड़ने के बाद पतिविहिन जीवन गुजारे इसलिए वर की माँग करने पर स्वयं उनकी आँखे भर आती है। तलफ-तलफी रोये (हृदय से रुदन)

ख' थ्यसम बवदजंपदे पदअंसपक कंजं द्य प्द.सपदमण्श्रच ', ख' थ्यसम बवदजंपदे पदअंसपक कंजं द्य प्द.सपदमण्श्रच ',

झमटा नृत्य के लिये पुरस्कार प्राप्त करती थारु महिलायें

समय के साथ-साथ आधुनिक समाज से जुड़ते जा रहे थारु अपनी परंपरागत नृत्य, गीत, संगीत, संस्कृति को भी भूलते जा रहे है। जरुरत है नई पीढ़ी को इन नृत्य-गीतों के प्रशिक्षण देने

की तथा इन नृत्यांगनाओं का उत्साह बनाये रखने के लिए राष्ट्रीय लोक झाकियों में इन नृत्य गीतों को स्थान दिया जाय।

संदर्भ सूची :

1. प्रवीर राकेश, "थारु : पहचान के लिए संघर्षरत जनजाति", बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 2004, पृ. 64
2. दूबे प्रकाशचन्द्र, ''थारु एक अनूठी जनजाति (सामाजिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन)", जेवियर इंस्ट्च्यूट ऑफ सोशल रिसर्च, पटना, 2009, पृष्ठ -168
3. चौबे पंडित गणेश, ''थारु लोक गीत'', बेतिया टाईम्स, जनजातीय विशेषांक, बेतिया, 1985, पृ. 14
4. श्रीमंत सिपाही सिंह, ''थरुहट के लोकगीत'', श्रीमंत प्रकाशन, मढौरा (सारण), 2002, पृ.-111
5. वहीं, पृ.-123
6. साक्षात्कार, कुसुम देवी, "वार्ड पार्षद", महादेवा हड़नाटांड़, पश्चिमी चंपारण, बिहार, दिनांक-11.08.2017।

❒❒❒

सहा. प्राध्यापिका, इतिहास विभाग, नेशनल कॉलेज, पटना विश्वविद्यालय, पटना मोबाईल नं0- 7004613645 E-mail: drnamratprakash@gmail.com; पता-3 डी, निशांत रीजेंसी, कैपिटल टावर के पीछे, फ्रेजर रोड़, पटना-800001

स्त्री-पीड़ा का अथाह स्वर: सुन्नर पांडे की पतोह

—डॉ. इंदू कुमारी

यह कैसी विडंबना है कि एक तरफ जिस समाज में स्त्रियाँ जननी, देवी और त्याग की प्रतिमूर्ति मानी जाती हैं, वहीं दूसरी ओर उनकी पहचान सिर्फ पुरुष से जुड़ी हुई है। विवाह से पूर्व जो स्त्री राजलक्ष्मी के नाम से जानी जाती थी, अब वही अपने ससुर के नाम से संबोधित होती है और उसका नाम पड़ता है- सुन्नर पांडे की पतोह।

अमरकांत नयी-कहानी दौर के महत्वपूर्ण रचनाकार हैं, परन्तु नयी कहानी के घोषित परिभाषा से अलग किस्म के कथाकार। नयी कहानी में शहरी मध्यवर्ग की प्रमुखता है। नयी कहानी के स्टारत्रयी (मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव) कथाकारों की कहानियों के केन्द्र में शहरी मध्यवर्ग का जीवन अभिव्यक्त हुआ है। शहरी मध्यवर्ग वाली कहानियों में संबंधों का विघटन, अजनबीपन, अकेलापन इत्यादि का वर्णन केन्द्रीय स्तर पर बार-बार उभरकर सामने आता है। नयी कहानी पर बात करते हुए राजेन्द्र यादव कहते हैं-''इस कथाकाल की सारी कहानियाँ नए संबंधों के बनने की कहानियाँ नहीं, संबंधों के टूटने की कहानियाँ हैं। सारे संबंधों से टूटा हुआ व्यक्ति अधिक- से- अधिक अकेला, अजनबी होता चला जाता है, पिछली पीढ़ी के प्रति अविश्वास, घृणा और आपस में अपरिचय, अनिश्चय यही यथार्थ नई कहानी के माध्यम से बार-बार सामने आता है।''[1] इस प्रकार नयी कहानी की घोषित कथा भूमि में निराशा, कुंठा इत्यादि का वर्णन विशद पैमाने पर किया गया है। अमरकांत की कथाभूमि शहरी मध्यवर्ग से अलग कस्बाई मध्यवर्ग है। अमरकांत के पात्रों में विघटन की जगह विसंगति और विडम्बना का भाव देखने को मिलता है, निराशा की जगह अदम्य जिजीविषा का भाव इसी विशेषता के कारण अमरकांत नयी कहानी के कथाकारों में सबसे अलग दिखते हैं।

अमरकांत की पहचान हिन्दी कथा साहित्य में कहानीकार के साथ-साथ उपन्यासकार के रूप में भी है। उन्होंने सूखा पत्ता, काले उजले दिन, कँटीली राह के फूल, ग्रामसेविका, सुखजीवी, बीच की दीवार, सुन्नर पांडे की पतोह, आकाशपक्षी और इन्हीं हथियारों से उपन्यासों की रचना की। कुछ आलोचकों के अनुसार अमरकांत एक श्रेष्ठ कहानीकार तो है, लेकिन एक उच्चकोटि के उपन्यासकार नहीं हैं। इस संदर्भ में अमरकांत ने बिना किसी संकोच के अपनी बातें रख दी है। वे कहते हैं कि ''साफ कहूँ तो उपन्यास मैंने आर्थिक जरूरतों की वजह से लिखे। 'सूखा पत्ता' नामवर जी को बहुत पसंद आया था। उसी समय श्रीलाल

शुक्ल का 'सूनीघाटी का सूरज' भी छपा था। किसी ने मेरे उपन्यास में क्रांतिकारियों के प्रति मजाक का भाव भी पाया। वैसे चन्द्रगुप्त विद्यालंकार ने 'सूखा पत्ता' का स्वागत किया। कृति में श्रीकांत वर्मा ने समीक्षा प्रकाशित की। उन दिनों ग्राम केन्द्रित उपन्यासों की धूम थी। आलोचकों को आंचलिकता ही आंचलिकता दिखती थी। मेरा कहना था कि गाँव पर लिखा गया ही अंतिम सत्य नहीं है।''[2] कुल मिलाकर, अमरकांत के उपन्यास सामाजिक यथार्थ के महत्वपूर्ण पक्ष को उजागर करने में सफल हैं। उनके उपन्यासों में रोमानियत का आरोप भी लगता रहा है। परन्तु उनके उपन्यासों में यदि कहीं रोमानियत आया भी है, तो उसके साथ ही एक महत्वपूर्ण सामाजिक पहलू भी देखने को मिलता है।

'सुन्नर पांडे की पतोह' अमरकांत का एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। इस उपन्यास के माध्यम से अमरकांत ने भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति पर प्रकाश डाला है। इस कृति में एक ऐसी स्त्री की दुर्दशा का चित्रण किया गया है, जो पति द्वारा परित्यक्त है। विवाह होने के कुछ वर्ष पश्चात् पति झुल्लन पांडे उसे छोड़कर कहीं चला गया है और राजलक्ष्मी पति के लौटने की उम्मीद में जिन्दगी जीने लगती है। बाद में अपने ही रिश्तेदारों और फिर पितातुल्य ससुर की बुरी दृष्टि से बचने के लिए उसे घर छोड़ना पड़ता है। इस उपन्यास में राजलक्ष्मी नामक उस स्त्री की कहानी कही गयी है, जिसका विवाह होते ही अपनी पहचान को खोना पड़ता है। उसकी पहचान अब सुन्नर पांडे की पतोह के रूप में होने लगती है। सामंती और परम्परागत भारतीय समाज में, जहाँ कि स्त्री सिर्फ पत्नी के रूप में ही ससुराल में स्थान पा सकती है , पति के न रहने पर, वही घर उसके लिए पराया हो जाता है। एक पति विहीन स्त्री की अस्मत लुटने के लिए सब मौके की ताक में लग जाते हैं। अंत में वह स्त्री घर छोड़कर चली जाती है और अपनी अस्मिता को बनाए रखने के लिए पूरी जिन्दगी संघर्ष में बिता देती है।

यह कैसी विडंबना है कि एक तरफ जिस समाज में स्त्रियाँ जननी, देवी और त्याग की प्रतिमूर्ति मानी जाती हैं, वहीं दूसरी ओर उनकी पहचान सिर्फ पुरुष से जुड़ी हुई है। विवाह से पूर्व जो स्त्री राजलक्ष्मी के नाम से जानी जाती थी, अब वही अपने ससुर के नाम से संबोधित होती है और उसका नाम पड़ता है- सुन्नर पांडे की पतोह। भारतीय समाज में जब तक शादी नहीं हुई रहती है, तब तक स्त्री पिता के नाम से जानी जाती है, शादी के बाद पति के नाम से और फिर पुत्र की पहचान के साथ ही स्त्री की पहचान जुड़ी होती है। चूँकि राजलक्ष्मी की शादी हो गयी है, उसका पति घर से भाग गया है, बच्चों की मौत हो चुकी है, इसलिए अब वह अपने ससुर के नाम से जानी जाती है। राजलक्ष्मी का पति माँ द्वारा प्रताड़ित होने के कारण घर छोड़कर कहीं भाग जाता है और कभी लौटकर नहीं आता। पूरी कहानी के अंत में पता चलता है कि वह मंदिर में साधु-सन्यासी का जीवन व्यतीत कर रहा होता है। पति के घर छोड़ने के बाद उसके दोनों बेटे भी कुछ समय बाद एक-एक कर चल बसे। दु:ख की ऐसी विकट घड़ी में भी वह पति की राह देखती रही। उसकी सास द्वारा दिए जाने वाले कष्ट को व्यक्त करते हुए लेखक ने लिखा है कि वियोग और एकाकीपन के उन पीड़ा-भरे दिनों में उसकी सास उससे न मालूम किस जन्म का बैर निकाल रही है। वह एक अन्य स्त्री पात्र से कहती है - ''बड़ी कुलच्छिनी है ए बीबी यह। मेरा तो करम ही फूट गया है। जब से आई है, हम एक दिन के लिए भी सुख से नहीं रहे। यही हीरा-मोती की तरह अपने दोनों बच्चों को खा गई और इसी के कारण हमारा लाल आँखों से दूर

चला गया। मेरे कलेजे में डाढा फूंका हुआ है, जब तक छुतही हांडी की दशा इसकी नहीं कर दूँगी मेरा कलेजा ठंडा नहीं होगा।''[3] यहाँ पर ध्यान देने की बात यह है कि स्त्रियों की दुश्मन खुद स्त्रियाँ ही होती हैं। पितृसत्ता सिर्फ एक जैविक अवधारणा भर नहीं है, वह एक मानसिक अवधारणा भी है। इस अवधारणा में अनुकुलित स्त्रियाँ दूसरी स्त्री के लिए पुरुषों से ज्यादा खतरनाक हैं। राजलक्ष्मी की सास इसी मानसिकता से ग्रसित है।

हालांकि तमाम विपरीत परिस्थितियों के बाद भी राजलक्ष्मी पति की बेसब्री से प्रतीक्षा करती है। वह भारतीय नारी के आदर्श को धारण करनेवाली स्त्री है। वह प्रतिदिन पति की प्रतीक्षा में आस लगाए बैठी रहती, किंतु ज्योंहि शाम होती, उसका मन दुखी हो जाता और वह निराशा से निर्जीव हो जाती। वह कभी भी क्रोधित होकर पति को भला-बुरा नहीं कहती, बल्कि उनकी चिंता ही करती रहती है। ''जब कभी वह सबेरे-सबेरे ही झुल्लन पांडे का सपना देख लेती तो आशाएँ और भी बलवती हो उठतीं। कारण और बहाने और भी उपस्थित हो जाते थे। कभी सबेरे कोयल या पंडुक का बोलना उसे बेहद उत्साहित कर जाता। आज जरूर आएँगे झुल्लन पांडे, नहीं तो ये पक्षी क्यों बोलते? आँगन में कौए का उच्चरना प्रीतम के आगमन की पूर्वसूचना देता है। जब सवेरे बाहर से किसी गदहे के बोलने की आवाज आती तो मन में एक अजीब खुशी की लहर दौड़ जाती। आज जरूर कोई-न-कोई खुशखबरी सुनने को मिलेगी। और इसी तरह जब वह बाहर अपने घर के सामने से गुजरने वाले किसी यात्री के मधुर कंठ का प्रभाती सुनती तो उसका हृदय भर आता और उसे लगता कि झुल्लन पांडे भी इसी तरह गाते हुए दूर से उसके पास चले आ रहे हैं।"[4] अमरकांत अपनी रचनाओं में लोकमिथ और लोक तत्व का इस्तेमाल बहुत ही सुंदर ढंग से करते हैं। सुबह का सपना सच होना, पंक्षियों का बोलना, गदहे की आवाज को शुभ मानना इत्यादि लोक में बसे वे विश्वास हैं, जिस पर जनता विश्वास करती है। इन लोकविश्वासों के बीच भारतीय जनमानस की त्रासद स्थिति भी उभरकर सामने आती है। जब उम्मीद और न्याय की कोई गुंजाइश नहीं रहती तो लोग ऐसे ही अंधविश्वासी और भाग्यवादी हो जाते हैं।

सुन्नर पांडे की पतोह एक स्वाभिमानी और अपने मान-सम्मान एवं गौरव की रक्षा करनेवाली स्त्री है। ससुराल में अपने अस्तित्व पर संकट आते देखकर वह घर छोड़कर कहीं दूर चली जाती है, क्योंकि अब उसे प्रतीत होने लगता है कि जिस घर को वह अपना समझ बैठी है, वहाँ तो उसके जीवन के साथ ही षड्यंत्र चल रहा है। एक रात जब उसने अपने सास-ससुर की बातें सुनी, तो उसके पांवों तले जमीन ही खिसक गई। उसे यह आभास हो गया कि जब घर में ही औरत की अस्मत असुरक्षित हो, तो कोई अकेली स्त्री भला क्या कर सकती है। रास्ते में बदमाशों से छुटकारा दिलाकर जब फौजी उससे पूछता है कि आप कौन हैं, इतने सुनसान और वीराने में कहाँ जा रही हैं, तो वह कहती है 'मैं विपत्ति की मारी हूँ ए दादा। हमारी तरह दुखिया कोई न होगा। इसके आगे कुछ न पूछे ए दादा।''[5] एक खास किस्म की दृढ़ता और तेज उसके व्यक्तित्व में विद्यमान है। पति और दो बच्चों को खोने के बाद वह टूट चुकी है, किन्तु अपने साथ अन्याय होते वह नहीं देख सकती। उसकी अपनी ही सास ससुर सुन्नर पांडेय को शारीरिक शोषण के लिए उकसाती है और सुन्नर पांडे तो इस मौके की ताक में रहता ही है। अपने सास-ससुर की बातें सुनकर वह क्रोधित हो उठती है, उसके धैर्य का संयम टूट जाता है। वह कहती है कि मैं आप दोनों की बात सुन चुकी हूँ। मैं नहीं जानती थी कि आप लोग इतना गिर जाएंगे। पर मैं कहे देती हूँ -

"मुझमें सती का तेज है। जिनके हाथों में मैंने अपना हाथ दिया था, उन्हीं के लिए में अभी जिन्दा हूँ। मैं अपनी तेज से आप दोनों को भस्म कर सकती हूँ। और कुछ नहीं तो मैं अपनी जान दे सकती हूँ।"[6] आजादी के इतने वर्षों के बाद भी आज का भारतीय ग्रामीण और कस्बाई समाज स्त्रियों की दशा में कोई सुधार नहीं कर सका है। स्त्रियाँ हर प्रकार से पुरुषों पर आश्रित हैं। उनकी अस्मिता और पहचान भी उसी पुरुष समाज से जुड़ा हुआ है। यह कैसी विडम्बना है कि जो पुरुष उसकी अस्मिता मिटाने की कोशिश करता है, उसी पुरुष से उसकी पहचान जुड़ी होती है। जब मन्नीलाल पेशकार की पत्नी उससे पूछती है कि तुम कौन हो और कहाँ की रहनेवाली हो, तो वह कहती है- "दुखिया हूँ, ए दादा। - 'यहाँ कैसे घूम रही हो? अभी बूढ़ी भी नहीं हुई और चेहरा-मोहरा भी ठीक है- कहीं मनबिगड़ी तो नहीं हो?' - अरे ना ए दादा। सुन्नर पांडे की पतोह हूँ।"[7] यहाँ पर ध्यान देने योग्य बात यह है कि राजलक्ष्मी अपना परिचय सुनर पांडे के नाम के साथ देती है, जो उसकी इज्जत लुटने के लिए तैयार था।

जब फिर मन्नीलाल की पत्नी उससे यह पूछती है कि तुम्हारे मरद कहाँ हैं, तो वह जवाब देती हुई कहती है-"वह कई साल पहले घर छोड़कर चले गए, ए दादा। फिर पता ही न लगा। दो बच्चे थे, मर गए। नैहर में भी कोई नहीं है।... लोगों की बातें सुनकर जी ऊब गया, तो घर से निकली थी, कहीं नदी-तालाब में डूब मरूँगी पर यह मन बड़ा पापी है, सोचने लगी, वह बिना कुछ बताए घर से चले गए थे, कुछ कहा भी नहीं, किसी दिन लौट आएँ तो मुझे न पाकर बड़े दु:खी होंगे।"[8] यहाँ यह बात उभरकर सामने आती है कि जो काम झुल्लन पांडे ने किया, यदि वही काम राजलक्ष्मी ने किया होता, तो वह कुल्टा के रूप में समाज में बदनाम होती। जब भी कोई उससे उसके पति के बारे में पूछता तो वह बड़े ही सम्मान और आदर के साथ पति से जुड़ी हुई बातें बताती। उसे इस बात की जरा-सी भी शिकायत नहीं कि वे बिना बताए क्यों गए। इस संदर्भ में स्त्री और पुरुष की मानसिक स्थिति पर प्रकाश डालते हुए लेखक कहता है कि "ऐसे सवाल पर मर्द और औरत के दृष्टिकोणों में बड़ा फर्क होता है। जहाँ यह बात मर्दों को ऊपर-ही-ऊपर से छूकर निकल जाती है, औरत को अंदर तक बेध जाती है। कोई पति यदि अपनी पत्नी को छोड़कर चला जाता है तो यह घटना दूसरी औरतों के अस्तित्व को झकझोरती है, झुठलाती है और नकारती है। उनके पराश्रय, मजबूरी और नि:सहायता को पुष्ट करती है। इस संबंध में मर्द लोगों का दृष्टिकोण उस धन्नासेठ की तरह होता है, जो लोभ, सुख और आराम से उत्पन्न नैतिकता एवं उदारता के क्षणों में उन लोगों के बारे में दयापूर्वक सोचता है, जिनका वह निरन्तर शोषण करता है।"[9] यहाँ रचनाकार की रचना दृष्टि पुरुष समाज की उस मानसिकता पर प्रकाश डालती है, जो सदियों से चली आ रही है। यह कितनी मार्मिक सच्चाई है कि एक पुरुष पत्नी के चले जाने के बाद दूसरी शादी कर सकता है, किंतु एक पत्नी, पति के जाने के बाद ऐसा नहीं कर सकती। यूँ कहें कि उसके हिस्से इंतजार, समर्पण, लाचारी जैसी बातें डाल दी जाती हैं, जिसमें वह अपनी पूरी जिंदगी नष्ट कर देती है। इस समाज में एक पुरुष के साथ जीवन जीना और सिंदूर लगा कर जिंदगी जीना एक जैसा है। यही कारण है कि त्याग की प्रतिमूर्ति राजलक्ष्मी के लिए सिंदूर ही उसका पति बन गया। लेखक कहता है कि - "सिन्दूर ही उसकी आशा-आकांक्षा, आत्मा और परमात्मा था। सिन्दूर ही ऐसा तिनका भी था, जिसके सहारे वह भयावह तरंगों से भरपूर संसार रूपी महानदी में धारा के विपरीत तैरती रही। आषाढ़-सावन की लम्बी और एकाकी

रातों में जब बादल गरजते और बिजली कड़कती और उसका हृदय हाहाकार कर उठता तो सिन्दुर ही उसे प्यार से पुचकारता, सहलाता और आशा, आश्वासन, सुरक्षा, हिम्मत और बल प्रदान करता है।''[10] यहाँ पर दो-तीन बातें ध्यान देने योग्य है। अगर पुरुष घर छोड़ता है तो वह वैरागी कहलाता है, समाज में उसका आदर कम नहीं होता। परंतु अगर स्त्री घर छोड़े तो वह चरित्रहीन कहलाती है तथा समाज में उसकी कोई इज्जत नहीं रहती।

बेमेल विवाह भारतीय समाज की एक बहुत बड़ी समस्या है। स्त्रियों की दुर्दशा में यह भी बड़ी त्रासद स्थिति है। यह समस्या इस कृति में भी दिखाई पड़ती है। यह कैसा संयोग है कि एक आर्यसमाजी पिता अपने उपदेश, अपने सिद्धांत और क्रांतिकारी बातों से अलग अपनी ही बेटी की शादी एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति के साथ कर देता है। ऐसे समाज के यथार्थ को चित्रित करते हुए लेखक कहता है कि ''यह सही है कि शारदा प्रसाद वर्मा की उम्र कुछ अधिक है, पर लड़के की अधिक उम्र भी हो तो चल जाता है। हाँ, लड़की की उम्र लड़के से अधिक नहीं होनी चाहिए। लड़की तो गऊ होती है, उसे जिस परिस्थिति में रखिए, वह निभा लेती है।''[11] यही स्त्री की विवशता है, जिसके हाथों वह जीने के लिए अभिशप्त है। जब तक सुन्नर पांडे की पतोह अपनी जिन्दगी को झेल रही होती है, उसे स्त्री जीवन के प्रति कोई शिकायत का भाव नहीं दिखता, किंतु जब वह बेनी प्रसाद की बेटी सुशीला को रोते-बिलखते हुए देखती है, तो उसे इस बात का आभास होता है कि ''स्त्री जाति की तरह कोई मजबूर नहीं है। फिर भी जब स्त्री निश्चय कर लेती है, तो वह बड़े-से-बड़े संकट का मुकाबला भी कर सकती है। किसी भी अन्याय से संघर्ष कर सकती है।''[12]

इस प्रकार निम्न मध्यवर्ग के जीवन की विडम्बनाओं और एक परित्यक्त स्त्री की जिजीविषा का अत्यंत ही प्रभावशाली ढंग से वर्णन अमरकांत की इस रचना में देखने को मिलती है। भारतीय समाज में स्त्री की समस्याओं की कितनी परतें हो सकती हैं, उसको बड़े ही स्पष्ट और सहज तरीके से अमरकांत अपनी रचनाओं में रखते हैं।

संदर्भ सूची :

1. एक दुनिया समानांतर, राजेंद्र यादव, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1993, पृ.सं. 31
2. कुछ यादें: कुछ बातें, अमरकांत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2005, पृ.सं. 132
3. सुन्नर पांडे की पतोह, अमरकांत, प्र. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2005, पृ. 29
4. वहीं, पृ. सं. 28
5. वहीं, पृ. सं. 48
6. वहीं, पृ. सं. 49
7. वहीं, पृ. सं. 34
8. वहीं, पृ. सं. 59-60
9. वहीं, पृ. सं. 24
10. वहीं, पृ. सं. 25-26
11. वहीं, पृ. सं. 66
12. वहीं, पृ. सं. 70

❑❑❑

एसोसिएट प्रोफेसर, माता सुंदरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110002, 9873405194, induvimal2013@gmail.com

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में नया क्या?

—प्रो. मीना यादव

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत अब प्रारंभिक बाल्यकाल अवस्था से ही बच्चों को आगे आने वाली शिक्षा दीक्षा के लिए तैयार किया जाएगा। इसके लिए सम्बंधित संगठनात्मक (बुनियादी) ढाँचे को और मजबूत बनाया जाएगा। जैसे की आंगनबाड़ी की कार्यकत्रियों/शिक्षकों को ट्रेनिंग देना तथा बाल सुलभ, हवादार भवन का निर्माण इत्यादि। 5 साल से कम आयु के बच्चों के लिए ''बालवाटिका'' का प्रावधान भी किया गया है।

शिक्षा व्यक्ति के संपूर्ण विकास के लिए बहुत आवश्यक है। हम शिक्षा व्यवस्था के बारे में चर्चा ना करें तो यह शिक्षा और शिक्षा क्षेत्र दोनों के प्रति अन्याय होगा। इस पर विस्तार से लिखने और चर्चा की आवश्यकता हमेशा ही रहेगी । आज हमें 75 वर्षो की शिक्षा व्यवस्था का आकलन करना चाहिए, मंथन करना चाहिए क्योंकि शिक्षा ही देश के भविष्य को दिशा देने वाली होती है, भविष्य के नागरिकों में देश प्रेम, राष्ट्रभक्ति, श्रम शीलता, नैतिकता और सदाचार का संचार करने वाली होती है। शासक और समय के अनुसार भारतीय शिक्षा व्यवस्था में सुधार और परिवर्तन होते रहे हैं। आजादी के बाद 1948 में राधाकृष्णन आयोग और 1953 में माध्यमिक शिक्षा आयोग का गठन हुआ ।1953 में ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, 1964 में कोठारी आयोग, 1968 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में नई शिक्षा नीति, 1992 संशोधित शिक्षा नीति के द्वारा शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन होते रहे हैं। जुलाई 2020 में भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को मंजूरी दी गई और यह नीति पूरे देश में लागू हो चुकी है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, भी समय की मांग और जरुरत के हिसाब से देश की शिक्षा व्यवस्था को प्रभावी बनाये रखने के लिए लाई गयी है

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में नया क्या है ?

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में पुरानी शिक्षा नीति की खामियों को हटाकर नए पाठ्यक्रम को लाया गया है। इस में इस बात का खास ख्याल रखा गया है कि पाठ्यक्रम सरल और सहज हो। जो विद्यार्थियों की समझ में आ सके व बेवजह का बोझ न बने। ऐसी शिक्षा प्रणाली हो जिससे विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास हो। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत पाठ्यक्रम को छात्रों के लिए रुचिपूर्ण बनाया गया है तथा तकनीकी ज्ञान और उसके प्रैक्टिकल / ट्रेनिंग को भी सम्मिलित किया गया है। नयी नीति में शिक्षा की गुणवत्ता का उच्चतर स्तर बनाये

रखने का प्रयास किया गया है। ज्ञान सिर्फ रटने व परीक्षा पास करने के लिए नहीं बल्कि उनकी तार्किक, रचनात्मक, नैतिक सोच आदि का विकास करने के लिए है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 तहत इसे अलग -अलग चरणों में लागू किया जाएगा। इसके कुल चार चरण होंगे। नयी नीति के तहत अब शिक्षण व्यवस्था 5 + 3 + 3 + 4 की प्रक्रिया में होगी। यह पुरानी प्रक्रिया 10 +.2 के आधार से अलग है।

फाउंडेशन स्टेज (5 वर्ष)

यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत आने वाला वाला पहला चरण है। पहले की शिक्षा नीति में 6 वर्ष तथा उस से बड़े बच्चों को ही एजुकेशन सिस्टम का भाग माना जाता था। पर अब प्री-प्राइमरी एजुकेशन को भी अब फॉर्मल एजुकेशन माना जाएगा। यानी की अब से 3 से 6 वर्ष के बच्चे भी शिक्षा व्यवस्था का भाग होंगे। इस उम्र तक बच्चों के मस्तिष्क का सही विकास और शारीरिक वृद्धि हो सके इस बात को ध्यान में रखकर नयी नीति में उनके लिए पाठ्यक्रम में खेल कूद व अन्य गतिविधियाँ रखी हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत अब प्रारंभिक बाल्यकाल अवस्था से ही बच्चों को आगे आने वाली शिक्षा दीक्षा के लिए तैयार किया जाएगा। इसके लिए सम्बंधित संगठनात्मक (बुनियादी) ढाँचे को और मजबूत बनाया जाएगा। जैसे की आंगनबाड़ी की कार्यकत्रियों/शिक्षकों को ट्रेनिंग देना तथा बाल सुलभ, हवादार भवन का निर्माण इत्यादि। 5 साल से कम आयु के बच्चों के लिए ''बालवाटिका'' का प्रावधान भी किया गया है। यहाँ खेल कूद के साथ-साथ संख्या ज्ञान आदि दे दिया जाएगा। साथ ही कक्षा दो तक कोई भी परीक्षा नहीं ली जाएगी। इस तरह बच्चों को बिना दबाव के शिक्षित किया जाएगा एवं साथ ही उनकी शिक्षा के प्रति रूचि बढाई जाएगी।

प्रेपरेटरी स्टेज (3 वर्ष)

अगले चरण को प्रिपरेटरी स्टेज नाम दिया गया है, जहाँ बच्चों को आगे के पाठ्यक्रम के लिए तैयार किया जाएगा। इस स्टेज में कक्षा 3 से 5 तक को शामिल किया गया है जिनकी उम्र 8 से 11 वर्ष के बीच हो सकती है। इन कक्षाओं के छात्र अपनी मातृभाषा तथा स्थानीय भाषा में भी पढाई कर सकते हैं। यही नहीं वो चाहें तो परीक्षा भी स्थानीय या मातृभाषा में दे सकते हैं। नयी शिक्षा नीति के तहत ये कदम यही सोच के उठाया गया है की अपनी भाषा में ज्ञान अर्जित करना ज्यादा रोचक व सरल होता है। इसके चलते विद्यार्थियों को दिया ज्ञान ज्यादा प्रभावी और कारगर होता है।

अंग्रेजी भाषा की अनिवार्यता को खत्म कर दिया गया है और इसे एक विषय के रूप में अब भी पढ़ाया जाएगा। हालाँकि जो अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने के इच्छुक हों उनके लिए भी ऑप्शन है। इस स्टेज में छात्रों को संख्यात्मक कौशल व भाषा का मूलभूत ज्ञान दिया जाएगा। कक्षा 3 से अब परीक्षा की शुरुआत हो जाएगी।

मिडिल स्टेज (3 वर्ष)

इस स्टेज में कक्षा 6 से 8 तक के विद्यार्थी आएँगे जिनकी उम्र 11 से 14 वर्ष के बीच हो सकती है। इस कक्षा से अब कंप्यूटर ज्ञान और कोडिंग की जानकारी दी जाने लगेगी। सभी को

आवश्यक रूप से रूचि के अनुसार व्यावसायिक प्रशिक्षण भी दिया जाएगा और उसके बाद इंटर्नशिप भी करवाई जाएगी। इसके लिए उन्हें मार्क्स भी मिलेंगे। इस तरह से प्रशिक्षण के साथ साथ उनमें व्यावहारिक समझ भी विकसित की जाएगी। इस चरण में बच्चों को बाकी सब्जेक्ट्स के साथ कोई भी एक भारतीय भाषा (जैसे क्षेत्रीय भाषा) का भी आवश्यक रूप से ज्ञान दिया जाएगा।

सेकेंडरी स्टेज (4 वर्ष)

इस स्टेज में कक्षा 9 से लेकर 12 तक के छात्र आएँगे जिनकी उम्र सीमा 14 से 18 वर्ष हो सकती है। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार अब कक्षा 9 से 12 तक के विद्यार्थियों को सेमेस्टर वाइज देना पड़ेगा। जबकि पहले परीक्षा सालभर में एक बार होती थी। जिस से बच्चे परीक्षा से पहले के तीन महीने पढ़कर परीक्षा में उत्तीर्ण होते थे। लेकिन अब ऐसा नहीं होगा क्यूंकि सालभर में दो परीक्षाएं होने से छात्रों को अध्ययनरत रहना होगा।

अब छात्रों को आर्ट्स साइंस और कॉमर्स में से किसी एक स्ट्रीम को ही पढ़ने की बाध्यता खत्म कर दी गयी है। छात्र चाहें तो साइंस, कॉमर्स के विषय के साथ आर्ट्स के विषय भी ले सकते हैं। हालांकि इसके लिए विषयों के पूल बनाये जाने की भी व्यवस्था की जाएगी।

मूल्यांकन

विद्यार्थियों का मूल्यांकन अब पहले की तरह नहीं किया जाएगा। नयी शिक्षा नीति 2020 के तहत अब उनका रिपोर्ट कार्ड नयी प्रक्रिया से तैयार होगा। किसी भी छात्र को फाइनल रिपोर्ट कार्ड पर अंक देते हुए उसके ओवरआल परफॉरमेंस को देखा जाएगा। उसका व्यवहार, उसकी एक्स्ट्रा करीकुलर एक्टिविटीज में भागीदारी व प्रदर्शन, तथा उसकी मानसिक क्षमताओं का भी ध्यान रखा जाएगा। अब से रिपोर्ट कार्ड 360 डिग्री असेसमेंट के आधार पर बनेगा, जिसमे विषय पढ़ाने वाले अध्यापक के साथ साथ छात्र अपना व अपने सहपाठियों का विश्लेषण कर खुद को और सहपाठियों को भी अंक देंगे।

क्रम स.	चरण		वर्ष संख्या	कक्षा	विद्यार्थी की उम्र
1	पहला	फाउंडेशन स्टेज	5 वर्ष	प्री प्राईमरी (3 वर्ष)कक्षा 1 व 2	6 से 8 वर्ष तक
2	दूसरा	-प्रीपेरटरी स्टेज	3 वर्ष	कक्षा 3 से लेकर कक्षा 5 तक	8 से 11 वर्ष
3	तीसरा	-मिडिल स्टेज	3 वर्ष	कक्षा 6 से लेकर कक्षा 8 तक	11 से 14 वर्ष
4	चौथा	सेकेंडरी स्टेज	4 वर्ष	कक्षा 9 से लेकर 12 कक्षा तक	14 से 18 वर्ष

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में परंपरागत प्राइमरी शिक्षा को बाजार में उपलब्ध ब्रांडेड प्रीस्कूल जैसे किड्जी, बचपन, यूरो किड्स, शेमरोक, लिटिल मिलेनियम आदि सिर्फ ब्रांडों के तुल्य

बनाने का प्रयास किया गया है ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में मुख्य है-

1. वार्षिक परीक्षा प्रणाली के स्थान पर सेमेस्टर सिस्टम लागू किया गया है जिसमें अंकों के स्थान पर परीक्षार्थी को ग्रेड प्रदान किया जाएगा।

2. NEP -2020 में प्रावधान है कि-

1 वर्ष के अध्ययन पर- सर्टिफिकेट

2 वर्ष के अध्ययन पर- डिप्लोमा

3 वर्ष के अध्ययन पर -डिग्री

4 वर्ष के अध्ययन पर-अश्नर्स उपाधि के साथ डिग्री.

मास्टर डिग्री प्रोग्राम

3 साल स्नातक की डिग्री वालों के लिए 2 साल।

ऑनर्स उपाधि के साथ 4 साल की स्नातक डिग्री वालों के लिए 1 वर्ष का स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का प्रभाव

- इसका सबसे पहला लाभ तो यही है की आज की शिक्षा व्यवस्था में पुरानी सभी खामियों को हटाने का प्रयास किया है। नई नीति के तहत इसे उत्कृष्ट और सार्वभौमिक बनाने पर ध्यान दिया गया है।
- इस नयी एजुकेशन पालिसी के तहत छात्रों के ज्ञान के साथ साथ उनके स्वास्थ्य और कौशल विकास पर भी ध्यान दिया जाएगा। विद्यार्थियों के स्वास्थ्य कार्ड भी बनाये जाएंगे। नियमित रूप से छात्रों की स्वास्थ्य जांच की व्यवस्था भी सम्मिलित है।
- नेशनल एजुकेशन पॉलिसी को लागू करने के लिए केंद्र व राज्य सरकार द्वारा जी डी पी का 6 प्रतिशत हिस्सा व्यय किया जाएगा।
- शिक्षा नीति के तहत अब छात्रों को अपने विषय का चुनाव स्वयं करने का अधिकार होगा। छात्रों को पहले की तरह आर्ट्स, साइंस और कॉमर्स में से किसी एक को नहीं चुनना पड़ेगा। वो चाहे तो इन तीनों ही स्ट्रीम्स से विषय चुन सकते हैं।
- इस नीति में बोर्ड परीक्षा का प्रारूप भी बदला गया है। अब से बोर्ड की परीक्षाएं साल में एक की बजाए दो बार कराई जाने की बात कही गयी है। इस से छात्रों पर पढाई का बोझ खत्म होगा। सालभर की बजाए आखिरी के दो या तीन माह पढ़कर परीक्षा देने की प्रवृत्ति भी खत्म होगी।
- शिक्षा नीति में अब छात्र अपनी भाषा में पढ़ पाएंगे और एग्जाम भी उसी भाषा में दे पाएंगे। भारत की अन्य प्राचीन भाषा जैसे संस्कृत को पढ़ने का भी ऑप्शन दिया गया है। अंग्रेजी की अनिवार्यता खत्म कर दी गयी है।
- अब से शैक्षिक सत्र में छात्रों को तकनीकी ज्ञान देने पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। उन्हें कक्षा 6 से ही कोडिंग आदि सिखायी जाएगी और इंटर्नशिप भी करायी जाएगी।

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में विद्यार्थियों का बोझ कम करने और पढाई में उनकी रूचि बढ़ाने के लिए ''अर्टिफिशियल इंटेलिजेंस सॉफ्टवेयर'' के माध्यम से शिक्षण प्रदान किया जाएगा, जिस से रटने की जगह उनकी समझ बढ़ाने पर ध्यान दिया जा सकेगा।
- स्वस्थ शरीर के साथ ही स्वस्थ मस्तिष्क होना भी जरुरी है इसलिए पाठ्यक्रम में पढाई के साथ ही खेल-कूद, कला इत्यादि ''एक्स्ट्रा करिकुलर एक्टिविटीज'' को भी अनिवार्य किया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत अब विद्यार्थी ऑफलाइन कक्षाओं के साथ साथ ऑनलाइन भी पढ़ सकेंगे। इस सम्बन्ध में उन्हें पढ़ने की सामग्री अब ऑनलाइन भी उपलब्ध कराई जाएगी।

शिक्षण प्रणाली में परिवर्तन

एडमिशन

राष्ट्रीय एजुकेशन पॉलिसी 2020 के तहत अब शिक्षा क्षेत्र में कॉलेज जाने वाले विद्यार्थियों के लिए भी नए प्रावधान बनाये गए हैं। अब से कॉलेज में एडमिशन के लिए अगर छात्रों को 12वी के मार्क्स के आधार पर (कटऑफ के बेस पर) मनपसंद कॉलेज में सीधे एडमिशन नहीं मिलता है तो वो छात्र CAT (कॉमन एप्टीटुड टेस्ट) एग्जाम दे सकते हैं। फिर 12 वी तथा कैट एग्जाम के अंक मिलाकर वे अपनी पसंद की यूनिवर्सिटी में एडमिशन लेने का अवसर पा सकते हैं।

''मल्टीपल एंट्री और मल्टीपल एग्जिट"

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत ग्रेजुएशन की पढाई को अब 4 और 3 साल के टाइम पीरियड में बांटा गया है। जिसमे अब ''मल्टीपल एंट्री और मल्टीपल एग्जिट'' की सुविधा दी गयी है। इसके तहत अगर कोई विद्यार्थी ग्रेजुएशन की डिग्री की पढ़ाई बीच में अधूरी छोड़कर जाता है या किसी कारणवश अपनी पढाई पूरी नहीं पाता तो उसे एक साल में सर्टिफिकेट कोर्स, दो साल में डिप्लोमा, और 3 साल में बैचलर्स की डिग्री मिलेगी। वहीँ अगर कोई 4 साल की पढाई पूरी करता है तो उसे बैचलर्स के साथ रिसर्च का सर्टिफिकेट भी दिया जाएगा। बीच में छोड़ने के बाद अगर कोई व्यक्ति अपनी पढाई पूरी करने का इच्छुक हो तो वो भी अपनी पढाई फिर से शुरू कर सकता है इसके लिए उसे फिर से ग्रेजुएशन के फर्सृट ईयर से शुरू करने की जरूरत नहीं होगी। जिस वर्ष की पढाई अधूरी रह गयी थी वहीं से शुरू कर सकते हैं। यहाँ भी छात्र अपनी पसंद से विषयों का चुनाव कर सकते हैं।

अकादमिक बैंक ऑफ क्रेडिट (ABC)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत अब छात्रों को अकादमिक बैंक ऑफ क्रेडिट की सुविधा प्राप्त हो सकेगी। अब से सभी छात्रों के अंक, रिपोर्ट, डाक्यूमेंट्स आदि ऑनलाइन या डिजिटल तरीके से सेव किये जाएंगे। पढाई के दौरान सेमेस्टर में क्रेडिट्स मिलेंगे जिसके अंतर्गत कोई भी छात्र जो किसी कारणवश अपने सेमेस्टर पूरे नहीं कर पाता है तो वो अपनी पढाई पूरी करने के

लिए इस अकादमिक बैंक में अपने क्रेडिट्स का प्रयोग करके पढाई बाद (एक निश्चित अवधि) में पूरी कर सकता है। इस बैंक में जमा क्रेडिट का उपयोग वो दूसरे संस्थान में जाने के लिए भी प्रयोग कर सकता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति से सम्बंधित महत्वपूर्ण तथ्य

वोकेशनल ट्रेनिंग को महत्व

नयी शिक्षा नीति के अंतर्गत 2025 तक वोकेशनल पढाई करने वालों का प्रतिशत 50% तक लाने का लक्ष्य रखा है जो अभी तक 5 प्रतिशत से भी कम है। कक्षा 6 से 8 तक के विद्यार्थियों को वोकेशनल ट्रेनिंग दी जाएगी जिसमे उन्हें बागबानी, मिटटी के बर्तन बनाना, बिजली का काम आदि सिखाया जाएगा।

एम फिल समाप्त और बी. एड. 4 साल का होगा – राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में एम फिल कार्यक्रम को खत्म कर दिया गया है। साथ ही अब बी एड प्रोग्राम को 2 वर्ष से बढाकर 4 वर्ष कर दिया गया है।

भारतीय भाषाओं को बढ़ावा देना : नयी नीति के तहत कक्षा 5 तक अंग्रेजी की अनिवार्यता हटा मातृभाषा तथा क्षेत्रीय भाषा में पढ़ने की सुविधा दी है।

विदेशी भाषा भी सम्मिलित : विद्यार्थियों को अब माध्यमिक स्तर से विदेशी भाषाएं भी सिखाई जाएंगी। इस तरह से छात्रों को कहीं भी किसी भी क्षेत्रों में पिछड़ने से बचाया जा सकता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत भाषाओं को जान ने वाले शिक्षकों की भर्ती रू भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाने वाली भाषाओं का ज्ञान रखने वाले शिक्षकों की भर्ती की जाएगी ताकि अपनी भाषा में छात्र बिना किसी समस्या के पढ़ सकें।

किसी एक स्ट्रीम के चुनाव की बाध्यता खत्म रू अब से स्कूल व कॉलेज में किसी भी एक स्ट्रीम को चुन ने की बाध्यता खत्म कर दी गयी है। छात्र अपने विषय अपनी पसंद से चुन सकेंगे। इसके लिए पाठ्यक्रम में विषयों का पूल बनाया जाएगा जिसमे छात्रों को अपने सब्जेक्ट्स का चुनाव करने में सुविधा होगी।

शिक्षा के साथ कौशल विकास पर भी ध्यान : नए राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अब छात्रों को शिक्षा के साथ अब कौशल विकास पर भी ध्यान दिया जाएगा। उन्हें शुरूआती कक्षाओं से ही संगीत, नृत्य, योग, मूर्तिकला आदि अन्य कलाओं में भी पारंगत किया जाएगा। विकलांग बच्चों के विकास के लिए भी नयी शिक्षा नीति में बदलाव किये गए हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में उच्चतर शिक्षा प्रणाली में आमूलचूल बदलाव और नए जोश के संचार के लिए इन चुनौतियों का समाधान भी प्रदान करती है ताकि सभी छात्र छात्राओं को उनकी आकांक्षा के अनुरूप, गुणवत्तापूर्ण, समान अवसर देने वाली समावेशी उच्चतर शिक्षा प्राप्त हो सके।

शिक्षक भर्ती एवं कैरियर

I. हर संस्थान में पर्याप्त, सक्षम एवं योग्य शिक्षकों की चयन।

ii. तदर्थ संविदा नियुक्तियों पर रोक।

iii. शिक्षक का निरंतर व्यावसायिक विकास।

iv. भारतीय भाषाओं में उच्च गुणवत्ता वाली सामग्री।

v. अकादमिक स्वतंत्रता के साथ संकाय को पाठ्यक्रम बनाने अनुसंधान कार्य को आगे बढ़ाने के लिए सशक्त बनाना।

उच्चतर शिक्षा

तीन प्रकार के उच्च शिक्षण संस्थान

1. अनुसंधान विश्वविद्यालय-- अनुसंधान और शिक्षण पर समान ध्यान केंद्रित (150-300)
2. शिक्षण विश्वविद्यालय अनुसंधान के साथ शिक्षण पर प्राथमिक ध्यान (1000-2000)।
3. स्वायत्त डिग्री देने वाले कॉलेज -शिक्षण पर विशेष ध्यान (5000 10000)
4. सभी उच्च शिक्षण संस्थान विषयों और क्षेत्रों में प्रशिक्षण कार्यक्रम के साथ बहु विषयक संस्थान बनाने के लिए।
5. वंचित भौगोलिक क्षेत्रों में उच्च गुणवत्ता वाले संस्थानों को प्राथमिकता
6. पर्याप्त सार्वजनिक निवेश।
7. मिशन नालंदा (MN)- समान क्षेत्रीय वितरण के साथ 2030 तक कम से कम 100 टाइम 1 और 500 टाइप 2 उच्च शिक्षण संस्थानों की स्थापना।
8. मिशन तक्षशिला (MT)- 2030 तक हर जिले में कम से कम एक उच्च गुणवत्ता वाले उच्च शिक्षण संस्थान की स्थापना।

अध्यापक और व्यवसायिक शिक्षा को उच्च शिक्षा में एकीकृत करना

शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम-

i. बहु विषयक संस्थानों में 4 वर्षीय एकीकृत शिक्षा स्नातक।

ii. वर्तमान 2 वर्षीय बीएड पाठ्यक्रम 2030 तक जारी रहेगा।

iii. 2030 के बाद केवल वही संस्थान 2 वर्षीय पाठ्यक्रम चला सकते हैं जो चार चार वर्ष के शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम चलाएंगे

iv. गैर स्तरीय और निष्क्रिय शिक्षक शिक्षण संस्थान बंद किए जाएं।

व्यावसायिक शिक्षा

i. व्यावसायिक शिक्षा उच्च शिक्षा प्रणाली का एक अभिन्न अंग होगी

ii. स्वचालित स्टैंड अलोन तकनीकी विश्वविद्यालय, स्वास्थ्य विज्ञान विश्वविद्यालय, विधि और कृषि विश्वविद्यालयों या इन क्षेत्रों अथवा अन्य में भविष्य में संस्थान स्थापित नहीं किए जाएंगे और यदि आवश्यक हुआ तो बंद भी किए जा सकते हैं।

iii. व्यावसायिक या सामान्य शिक्षा प्रदान करने वाले सभी संस्थानों को 2030 तक दोनों पाठ्यक्रम चलाने वाले संस्थानों को व्यवस्थित स्वरूप में विकसित किया जाना है।

नेशनल रिसर्च फाउंडेशन (NRF)

राष्ट्र में गुणवत्तापूर्ण अनुसंधान को सही रूप में प्रेरित और विकसित करने के लिए तथा सभी

प्रकार के वैज्ञानिक एवं सामाजिक अनुसंधानों पर नियंत्रण रखने के लिए नेशनल रिसर्च फाउंडेशन का गठन किया जाएगा। यह-

i. देश भर की शैक्षणिक संस्थानों में अनुसंधान क्षमता का निर्माण करेगा
ii. अनुसंधान विश्वविद्यालय के माध्यम से राज्य विश्वविद्यालयों में अनुसंधान क्षमता को प्रोत्साहित करेगा डॉक्टरेट और पोस्ट डॉक्टरेट फैलोशिप देगा।
iii. शोधकर्ताओं, सरकार और उद्योग के बीच लाभकारी संबंध बनाने में सहायता करेगा।
iv. विशेष पुरस्कार और सेमिनार ओं के माध्यम से उत्कृष्ट शोध को मान्यता देगा।
v. नेशनल रिसर्च फाउंडेशन प्रारंभ में 4 विभाग विज्ञान, प्रौद्योगिकी, सामाजिक विज्ञान, कला और मानविकी से प्रारंभ किया जाएगा।

भारतीय भाषाओं का प्रचार

i. भारतीय भाषाओं में भाषा, साहित्य, वैज्ञानिक शब्दावली पर ध्यान दिया जाएगा।
ii. देशभर में मजबूत भारतीय भाषा और साहित्यिक कार्यक्रम किए जाएंगे।
iii. भाषा शिक्षकों की भरती को प्राथमिकता दी जाएगी।
iv. भाषाओं पर केंद्रित शोध को बढ़ावा दिया जाएगा।
v. शास्त्रीय भाषा और साहित्य को बढ़ावा देने के लिए मौजूदा राष्ट्रीय संस्थानों को मजबूत किया जाएगा।
vi. पाली, फारसी और प्राकृत के लिए राष्ट्रीय संस्थान स्थापित किए जाएंगे।
v. विभिन्न भारतीय भाषाओं और विदेशी भाषाओं के बीच महत्व की सामग्री के उच्च गुणवत्ता वाले अनुवादों को करने के लिए इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन एंड इंटरप्रिटेशन की स्थापना की जाएगी।
vi. वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग का विस्तार किया जाएगा जिसमें सभी विषय और क्षेत्र शामिल होंगे।

व्यावसायिक शिक्षा का एकीकरण

i. व्यवसायिक शिक्षा उदार शिक्षा का अभिन्न अंग है।
ii. व्यावसायिक शिक्षा संस्थानों में एकीकृत स्थापित किया जाएगा।
iii. व्यावसायिक शिक्षक तैयार करने पर ध्यान दिया जाएगा।
iv. व्यावसायिक शिक्षा के एकीकरण हेतु राष्ट्रीय समिति गठित की जाएगी।
v. राष्ट्रीय कौशल योगिता को अधिक विस्तृत रूप दिया जाएगा।
vi. भारत में विकसित ज्ञान व्यावसायिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में एकीकरण के माध्यम से छात्रों के लिए सुलभ कराया जाएगा।
vii. प्रौढ़ शिक्षा के लिए शिक्षण सामग्री मूल्यांकन और प्रमाणन हेतु एनसीएफ का गठन किया जाएगा।
viii. प्रौढ़ शिक्षा केंद्र के कैडर और राष्ट्रीय वयस्क शिक्षा ट्विटर कार्यक्रम के माध्यम से प्रशिक्षक बनाया जाएंगे।

ix. जन जागरूकता अभियान के माध्यम से प्रौढ़ शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

x. महिलाओं की साक्षरता पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

वित्त पोषण शिक्षा

10 वर्षों में केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा सार्वजनिक व्यय का 20% से विशेष रुप से निम्न क्षेत्रों को प्राथमिकता दी जाएगी-

i. बाल शिक्षा का विस्तार और सुधार।

ii. मूलभूत साक्षरता और संख्यात्मकता सुनिश्चित की जाएगी।

iii. स्कूल परिसरों की पर्याप्त और उपयुक्त पुनर्स्थापना।

iv. नाश्ता और दोपहर का भोजन सुनिश्चित किया जाएगा।

v. शिक्षक शिक्षा और शिक्षकों का सतत व्यावसायिक विकास को प्राथमिकता दी जाएगी।

vi. कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में शोध को गति दी जाएगी।

vii. कायाकल्प, सक्रिय प्रचार और निजी परोपकारी गतिविधियों के लिए समर्थन का प्रयास।

viii. शिक्षा का व्यवसायीकरण बंद करने का प्रावधान।

ix. सार्वजनिक शिक्षा में पर्याप्त निवेश।

राष्ट्रीय उच्च शिक्षा आयोग (Higher Education Commission of India)

भारत उच्च शिक्षा आयोग को संपूर्ण उच्च शिक्षा के सर्वोच्च निकाय के रूप में गठित किया जाएगा इसमें मेडिकल और कानूनी शिक्षा को शामिल नहीं किया जाएगा। इसके कार्यो के प्रभावी निष्पादन के लिए 4 संस्थानों /निकायों का निर्धारण किया गया है-

i. राष्ट्रीय उच्चतर शिक्षा नियामकीय परिषद (National Higher Education Regulatory Counsil &NHERC)-विनियमन हेतु

ii. सामान्य शिक्षा परिषद (General Education Council & GEC) -मानक निर्धारण हेतु

iii. उच्चतर शिक्षा अनुदान परिषद (Higher Education Grants Council & HEGC)-वित्त पोषण हेतु

iv. राष्ट्रीय प्रत्यायन परिषद (National Accreditation Council &NAC)-प्रत्यायन हेतु

पुरानी शिक्षा व्यवस्था में स्नातक स्तर पर एक ही संकाय से तीन वैकल्पिक विषय और सामान्य हिंदी या सामान्य अंग्रेजी अनिवार्य विषय थे। माननीय उच्च न्यायालय के आदेश से फिजिकल एजुकेशन और पर्यावरण विषयों को अनिवार्य रूप से उत्तीर्ण करना होता था जो बहुविकल्पीय परीक्षा का माध्यम थे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के मुख्य बिंदु जो इसे पुरानी नीति से अलग करते हैं ।

मुख्य विषय अर्थात मेजर के रूप में अपने संकाय से दो विषय और अपने या अन्य संकाय से तीसरे मेजर के रूप में एक विषय चुना होगा चौथा माइनर होगा जो तीसरे मेजर से भिन्न संकाय का होगा। इस प्रकार यह तीन मेजर और एक माइनर मुख्य विषय कहलायेंगे।

नई व्यवस्था के अनुसार मुख्य विषयों के साथ साथ को-करिकुलर, व्यवसायिक पाठ्यक्रम/ स्किल डेवलपमेंट आदि को पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है। प्रत्येक सेमेस्टर में को-करिकुलर

के रूप में एक विषय को अनिवार्य बनाया गया है जिसमें प्रथम सेमेस्टर में खाद्य पोषण एवं स्वच्छता, द्वितीय सेमेस्टर में प्राथमिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य, तीसरे सेमेस्टर में शारीरिक शिक्षा एवं योग, चौथी सेमेस्टर में मानव मूल्य एवं पर्यावरण अध्ययन, पांचवें सेमेस्टर में विश्लेषणात्मक योग्यता एवं डिजिटल अवेयरनेस, छठे सेमेस्टर में संचार कौशल एवं व्यक्तित्व विकास शामिल किए गए हैं। यह पाठ्यक्रम तथा सह पाठयक्रम छात्रों के मन मस्तिष्क पर अमिट प्रभाव डालेगा और उच्च शिक्षा में ये प्रभावशाली भूमिका निभाएंगे।

अत: कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 छात्र आधारित शिक्षा नीति है यदि इसका क्रियान्वयन उचित ढंग से किया जाता है तो छात्र का सर्वांगीण विकास होगा उसमें एक अच्छे नागरिक के सभी गुण मौजूद होंगे और वह समाज और देश को ऊंचाइयों तक पहुंचाएगा तथा देश सामाजिक रुप में, आर्थिक रूप में, शैक्षणिक रूप में, औद्योगिक रूप में विकसित होगा। इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के इन नए बिंदुओं के सफल और उचित क्रियान्वयन से ही समाज और देश का यथोचित विकास होगा।वैसे तो संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था ही शिक्षक की नैतिकता पर निर्भर है यदि यदि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की ही बात की जाए जिसमें को- करिकुलर /स्किल डेवलपमेंट/ इंटरनल एसेसमेंट यह वह बिंदु है जिन का मूल्यांकन कॉलेज स्तर पर ही होगा और शिक्षक की नैतिकता पर निर्भर करेगा, उसकी अंतरात्मा पर निर्भर करेगा कि वह छात्र का मूल्यांकन कितनी पारदर्शिता से करता है। इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सफल क्रियान्वयन में छात्र की परीक्षा के साथ-साथ शिक्षक के एथिक्स और उसकी नैतिकता का महत्वपूर्ण योगदान होगा।

❑❑❑

विभागाध्यक्ष -हिंदी, बरेली कॉलेज, बरेली-243001, Email: meenaya1@gmail.com, मो. 9412486594

गांधी दर्शन का साहित्यिक परिदृश्य: कल, आज और कल (हिंदी कथात्मक साहित्य के विशेष संदर्भ में)

—भारती गोरे

जहां तक हिंदी के कथात्मक साहित्य का प्रश्न है, ठोस रूप में गांधी-विचार कहानी- सम्राट प्रेमचंद के कहानी-उपन्यासों में दृष्टिगोचर होने लगा या यूं कह सकते हैं कि आचार विचारों के स्तर पर गांधी जी जो लड़ाई राजनीतिक-सामाजिक क्षेत्र में लड़ रहे थे, वही लड़ाई प्रेमचंद ने साहित्य के क्षेत्र में छेड़ रखी थी। प्रेमचंद की मनोवृत्ति उसी भारतीय संस्कार से परिष्कृत हुई थी जिससे गांधीजी की मनोवृत्ति गठित हुई थी।

किसी भी समय का साहित्य, विचार एवं विचारधारा से मुक्त नहीं हो सकता. अपने समय की छाप अपने अंतस में समेटे हुए वह आगे बढ़ता है। अत: साहित्य को समसामयिक विचारधारा का जीवंत दस्तावेज कहा जा सकता है।

महात्मा गांधी संभवत: एकमात्र ऐसे नेता हैं, जिन्होंने महात्मा बुद्ध के बाद भारतीय विचारधारा को सर्वाधिक मात्रा में प्रभावित किया है। शतकाधिक समय से भारतीय जीवन-दृष्टि, व्यक्ति -मानस से लेकर समाज-मानस गांधी-विचार से प्रभावित रहा है। इसी गांधी-विचार को गांधीवाद भी कहा जाता है। 1915 में भारत लौटने के साथ ही गांधी-विचारों की खनक देशभर में गूंजने लगी। अहिंसा, सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा, मशीन संबंधी गांधीजी के विचार, ट्रस्टीशिप, अस्पृश्यता, स्त्री-दशा आदि के संबंध में उनके विचार, हृदय- परिवर्तन की अवधारणा आदि कई ऐसे मुद्दे हैं जिन पर गांधी जी ने बारीकी से विचार किया है। इन विचारों का प्रभाव इतना तगड़ा था कि साहित्य भी इससे प्रभावित हुए बिना रह नहीं पाया। बेशक यह प्रभाव केवल सकारात्मक नहीं रहा। गांधी विचारों का कई बार नकारात्मक चित्रण भी हुआ। कई बार उनकी ब्रह्मचर्य पाल , हृदय परिवर्तन, अहिंसा जैसी मान्यताओं का मजाक भी उड़ाया गया। लेकिन साहित्य पर गांधी छाए रहे इसमें कोई दो राय नहीं। कई बार गांधी-विचारों का प्रभाव प्रत्यक्ष रहा तो कई बार परोक्ष। लेकिन चाहे जिस तरह से हो, साहित्य गांधी-विचारों से अछूता न रह सका। गांधी जी के उपरोक्त संकेतित विचारों के आविष्कारक स्वयं गांधी नहीं थे। अहिंसा, सत्याग्रह, नैतिकता का आग्रह आदि कई ऐसे मुद्दे हैं जिनका भली-भांति परिचय भारतीय समाज को था ही और साहित्य के माध्यम से उनका पुरस्कार भी जारी था. उदाहरण के रूप में यहां हिंदी के प्रथम मौलिक उपन्यास 'परीक्षा गुरु' की चर्चा करना अनुचित न होगा। बीसवीं शताब्दी में गांधी जी ने जिस पश्चिमी सभ्यता के आक्रमण का

विरोध कर इस बात की चिंता जताई कि भारत औपनिवेशिक शासन के चंगुल में फंसकर अपनी समृद्ध विरासत को भूल न बैठे। यही चिंता बहुत पहले 19वीं शताब्दी में लिखे गए उपन्यास 'परीक्षा गुरु' का मूल प्रतिपाद्य रहा।

पश्चिमी सभ्यता के आक्रमण का प्रतिकार करता यह उपन्यास हिंदी में बहुत पहले आया, गांधी विचार बाद में। लेकिन नि:संदेह, इन संकटों को साहित्यकारों की तीक्ष्ण दृष्टि भले समझ पाती हों, वाणी दे पाती हों, इन संकटों का जन-जन तक रीसना केवल गांधी जी के कारण संभव हो सका। पुन: दोहराना होगा कि गांधी इन विचारों के आविष्कारक नहीं किंतु उन्होंने इन विचारों की इतनी अप्रतिम व्याख्या की, इन विचारों को इतनी अधिक सफलता मिली, इनका इतना अधिक प्रचार-प्रसार हुआ कि यह उनका आविष्कार लगने लगे। मूलत: गांधीवाद एक ऐसी विचारधारा है - गांधी जी का वैष्णव मानस जिस वेद, पुराण, गीता, कुरान ओ उपनिषद से गठित हुआ है उस मानस से उपजी विचारधारा। इन तत्वों की व्याख्या करते गांधीवाद से खांटी भारतीय अछूता नहीं रह सकता। स्वाधीनता संग्राम और राष्ट्रप्रेम ने इन विचारों के प्रभाव को कई गुना बढ़ा दिया और एक सुव्यवस्थित- सुगठित विचारधारा के रूप में गांधी- विचार सर्वदूर स्वीकार किया जाने लगा। हिंदी साहित्य पर पड़े गांधी-प्रभाव के संदर्भ में डॉ नगेंद्र कहते हैं -''गांधी का प्रभाव हिंदी साहित्य पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रीतियों से पड़ा। प्रत्यक्ष प्रभाव के माध्यम थे : क) व्यक्तित्व और व्यक्तिगत उपलब्धियां ख) नैतिक आदर्श, ग) सामाजिक- राजनीतिक सिद्धांत एवं कार्यक्रम। अप्रत्यक्ष प्रभाव का संधान दो प्रकार से किया जा सकता है- 1) जीवन और साहित्य के मूल्यों की नवीन व्याख्या के रूप में, 2) जीवन और साहित्य में लक्षित क्रिया - प्रतिक्रिया के रूप में

जहां तक हिंदी के कथात्मक साहित्य का प्रश्न है, ठोस रूप में गांधी-विचार कहानी- सम्राट प्रेमचंद के कहानी-उपन्यासों में दृष्टिगोचर होने लगा या यूं कह सकते हैं कि आचार विचारों के स्तर पर गांधी जी जो लड़ाई राजनीतिक-सामाजिक क्षेत्र में लड़ रहे थे, वही लड़ाई प्रेमचंद ने साहित्य के क्षेत्र में छेड़ रखी थी। प्रेमचंद की मनोवृत्ति उसी भारतीय संस्कार से परिष्कृत हुई थी जिससे गांधीजी की मनोवृत्ति गठित हुई थी। इसी कारण बीसवीं शताब्दी के पहले दशक में प्रकाशित 'सोजेवतन' में राष्ट्रभक्ति की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। 'सेवासदन' , 'प्रेमाश्रम' जैसे उपन्यासों से भी प्रेमचंद के मन पर पड़े और निरंतर बढ़ते गांधी- विचारों का अनुमान लगाया जा सकता है। जिस स्त्री समस्या को प्रधान जानकर गांधी जी ने उस पर बार-बार चर्चा की, उसी समस्या को केंद्र बनाकर 'सेवासदन' रचा गया था। इसमें गणिका हो चली सुमन को दाल मंडी के कोठे से निकालकर प्रेमचंद उसे सेवासदन की अध्यक्ष बना देते हैं। महात्मा गांधी के चंपारण सत्याग्रह ने उन किसानों -भूमिहीन मजदूरों की समस्याओं को वाणी दी थी जो अंग्रेजों के शोषण के फलस्वरूप खाद्यान्न छोड़कर नगदी फसलों की खेती करने के लिए बाध्य कर दिए गए थे। प्रेमचंद स्वयं स्वीकार करते हैं कि ''गांधीजी राजनीति के माध्यम से भारत के किसानों और मजदूरों के सुखचौन के लिए जो प्रयत्न कर रहे हैं, ''प्रेमाश्रम'' उन्हीं प्रश्नों का साहित्यिक रूप है।''

महात्मा गांधी ट्रस्टीशिप पर बल देते हुए मानते थे कि समाज में धनी लोग ट्रस्टी की भूमिका निभायें। उनका कहना था कि खेती पर स्वाभाविक अधिकार जोतदार का है। साथ ही गांधीजी हृदय -परिवर्तन में विश्वास करते थे। प्रेमचंद ने 'प्रेमाश्रम' उपन्यास में उपरोक्त तीनों बातों को कथा में ढालकर प्रस्तुत किया है। प्रेमशंकर की निस्वार्थ भावना देखकर माया शंकर अपनी जमीन किसानों में वितरित करता है और उसका हृदय-परिवर्तन होकर वह समाज के ट्रस्टी की भूमिका में आ जाता है।

हिंदी के कथा साहित्य में कई बार गांधी-विचारों के अनुरूप चरित्रों का निर्माण किया गया। उपन्यास कहानी में घटित घटनाओं में गांधीजी के जीवन में घटित घटनाओं को प्रतिबिंबित किया गया। कई बार तो गांधी जी के सिद्धांतों को आधार बनाकर ही कथा रची गयी। 'प्रेमाश्रम' में इन सभी की झलक देखी जा सकती है। 'प्रेमाश्रम' का लखनपुर गांधीजी के रामराज्य को साकार करता है। इस प्रकार गांधी-विचारों को केंद्र में रखकर ही 'रंगभूमि' का सृजन किया गया। 'रंगभूमि' का साहित्य -क्षेत्र में जब अवतरण हुआ, गांधी जी का प्रभाव अपने चरम पर था। 'रंगभूमि' का सूरदास शत प्रतिशत गांधी जी की भाषा बोलता है। उसकी नैतिकता, ईश्वर में प्रगाढ़ विश्वास, प्रचंड आशावाद, अपनी जमीन गांव के पशुओं को चरने के लिए देने के निश्चय में निहित ट्रस्टीशिप की भावना, निर्भयता आदि कई बातों के कारण वह गांधीजी का प्रतिरूप प्रतीत होता है। इसमें सूरदास साधन- शुचिता के लिए आग्रही है। वह मशीनी संस्कृति का विरोध करता है, अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए अपनी लड़ाई लड़ता है। साहित्यकार की दृष्टि संभवत: भविष्य भी देख लेती है। 'रंगभूमि' का सूरदास जिस प्रकार मृत्यु को प्राप्त होता है उसे देखकर लगता है कि संभवत: प्रेमचंद ने गांधीजी का भविष्य देख लिया था। प्रेमचंद के 'कायाकल्प', 'कर्मभूमि', 'गबन', 'निर्मला' जैसे कई उपन्यासों में भी गांधी -विचारों को स्पष्ट देखा जा सकता है सभी में विलासिता के स्थान पर त्यागमय जीवन को श्रेष्ठ बताया गया। गांधीजी के व्यावहारिक कार्यक्रमों - हरिजनोद्धार, अछूतों का मंदिर-प्रवेश, सूत-कताई, शराबबंदी का किया प्रचार, साफ-साफ देखा जा सकता है।

साहित्य के क्षेत्र में एक लोकप्रिय किंवदंती यह है कि 'गोदान' तक आते-आते प्रेमचंद का गांधीवाद से मोहभंग हो गया था और वे समाजवाद की ओर उन्मुख हो गए थे। 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' आदि संकल्पनाओं का प्रयोग कर इस विचार को बल प्रदान किया जाता रहा है। लेकिन 'गोदान' का बारीकी से अध्ययन किया जाए तो पाएंगे कि उसमें गांधी-दृष्टि बहुत स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित हो रही है। गांधी-विचार विशेषत: उनकी स्त्री संबंधी विचारों का दर्पण है- 'गोदान'। गांधीजी ने स्त्रियों को संबोधित करते हुए कहा था - ''यदि मैं स्त्री के रूप में जन्मा होता तो पुरुष के इस दंभ के विरुद्ध कि स्त्री पुरुष के मनोरंजन की वस्तु है, विद्रोह कर देता... अपने शौक और मन की वासना की गुलाम आप न बनें। इसी तरह पुरुषों की भी दासी बनने की कोई जरूरत नहीं। अपने इत्र फुलेल क्रीम पाउडर लैवेंडर और अन्य सौंदर्य प्रसाधनों को धता बताओ। आप अपनी सुगंध फैलाना चाहती हैं तो वह आपके हृदय कुसुम से ही निकलनी चाहिए।''

गांधी जी ने स्त्री हो या पुरुष सभी के संदर्भ में आत्म-बल को प्रधान माना है लेकिन स्त्रियों के संदर्भ में आत्म-बल की आवश्यकता अधिकता के साथ रेखांकित की है। 'गोदान' की मालती वास्तव में क्रीम -पाउडर आदि सौंदर्य प्रसाधनों को धता बताकर खादी के वस्त्र धारण कर लोककल्याण के लिए गांव-गांव घूमती है। तितली की तरह रंगीन मालती को प्रेमचंद गांधी-विचारों के अनुरूप ढाल कर आत्म-बल से परिपूर्ण सादगी की प्रतिमूर्ति के रूप में स्थापित करते हैं । यही नहीं, रूपा की शादी में वह चरखा भेंट देती है। मेहता और मालती का निर्विषय प्रेम और लोककल्याण के प्रति समर्पण भी गांधी विचारों के अनुरूप ही है।

गांधीजी के अछूतोद्धार को तो प्रेमचंद ने अक्षरश: अनुपालित किया है। उनका अछूत-विमर्श गांधी- विचारों का शत प्रतिशत अनुगमन करता है। गांधी जी ने कहा था-''हम चार करोड़ हिंदुओं को अस्पृश्य मानते हैं। इस कारण उनको अवश्य विशेष और असाधारण कष्ट भोगना पड़ता है। उनके लिए ना मंदिर है ना धर्मशाला है। औषधालय है ना पाठशाला है। उनको हमने ऐसा गिराया है जिससे वह अपने मनुष्यपन को भी प्राय: भूल गए हैं। ''प्रेमचंद के 'कफन' में घीसू- माधव का अमानवीय होना उन्हें सभ्य समाज द्वारा प्रदत्त ऐसी यातना का प्रतिफल है जिससे वे अपना मनुष्यपन तक खो चुके हैं। 'ठाकुर का कुआं' से लेकर 'सद्गति' तक प्रेमचंद की बीसियों कहानियों में उभरा दलित विमर्श निसंदेह गांधी-विचारों से प्रेरित एवं प्रभावित था। मात्र इतना ही नहीं, भविष्य में दलितों के आक्रामक रवैया अपनाने का संकेत भी महात्मा गांधी ने दिया था - ''डॉ आंबेडकर के प्रति मेरे मन में बड़ा सम्मान है। उन्हें कटु होने का पूरा अधिकार है। अगर वे हमारा सिर नहीं फोड़ देते तो इसी को उनका बहुत बड़ा आत्मसंयम मानना चाहिए। ''श्गोदान में मातादीन के मुंह में चमारों द्वारा हड्डी ठूँसवाकर प्रेमचंद गांधी जी के इसी संकेत को सृजनात्मक रूप प्रदान करते हैं कि यदि दलितों के प्रति अपना रवैया न बदला तो सवर्ण समाज को इसका दुष्परिणाम भुगतना पड़ेगा।

नि:संदेह, प्रेमचंद के साहित्य का बहुत बड़ा हिस्सा गांधी -प्रभाव ने व्यापा है लेकिन हिंदी साहित्य-क्षेत्र में प्रेमचंद इकलौते ऐसे रचनाकार नहीं जिन्होंने गांधी-विचार को शब्द-शिल्प प्रदान किया। गांधी जी के विचारों के प्रभाव से प्रसाद भी अछूते नहीं रह पाए। उनकी श्रद्धा के मन का अहिंसा-भाव, क्षमा-भाव, ट्रस्टीशिप, सूत कताई के प्रति उसकी आस्था, उसे गांधी-विचारों के बहुत निकट पहुंचाती बातें हैं। जहां तक प्रसाद के कथात्मक साहित्य की बात है, प्रसाद की कहानी 'विराम चिन्ह' में गांधी जी के अछूतोद्धार संबंधी विचारों का संपूर्ण समर्थन देखा जा सकता है। स्पष्ट कहें तो यह कहानी गांधी जी के मंदिर प्रवेश संबंधी विचारों को व्यक्त करती है। इस संदर्भ में प्रसाद की कई रचनाओं को गिनवाया जा सकता है। उनकी ध्रुवस्वामिनी द्वारा पति की लचर भूमिका का विरोध और अपने लिए सुयोग्य पात्र का वरण करने का निर्णय गांधी जी के इन विचारों से प्रभावित है- ''इस देश की सही शिक्षा यह होगी कि स्त्री को अपने पति से 'न' कहने की कला सिखाई जाए और बताया जाए कि अपने पति की कठपुतली या उसके हाथों की गुड़िया बनकर रहना उसके कर्तव्य का अंग नहीं है ..अपनी मौज मस्ती की गुलामी और पति की

गुलामी छोड़ो।''अलग-अलग विधाओं में लिखी रचनाओं को परखा जाए तो प्रसाद भी गांधीवाद से मुक्त नजर नहीं आते।

गांधी-विचार से प्रभावित हिंदी साहित्य की बात करें तो जैनेंद्र की बात करनी ही होगी। प्रेमचंद के युग में रहकर भी प्रेमचंद से अलग राह चलने वाले रचनाकार रहे हैं जैनेंद्र! गांधी-दर्शन से उनकी सहमति कितनी थी, यह बेशक विवाद का विषय है। लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि वे सनातन धर्म, अहिंसा, बुद्ध और जैन धर्म में गहरी आस्था रखते थे। इसी नाते गांधी-दर्शन की झलक भी उनके साहित्य में देखी जा सकती है। माना कि जैनेंद्र को रुढार्थ में गांधीवादी नहीं कहा जा सकता लेकिन जैनेंद्र के चरित्र विशेषत: स्त्री चरित्र गांधीवाद के अनुरूप ढले प्रतीत होते हैं। 'खेल', 'पत्नी' जैसी कहानियों की नायिकाएं हो या 'सुनीता', 'सुखदा', 'त्यागपत्र' जैसे उपन्यासों की नायिकाएं हों उन्हें व्यावहारिक अहिंसा में प्रगाढ़ विश्वास है। यद्यपि आचार्य नंददुलारे वाजपेई कहते हैं कि- ''सुनीता और बाद की रचनाओं में जैनेंद्र ने गांधीवाद और मनोविज्ञान का समन्वय करने का असफल प्रयास किया है ..''

लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि जैनेंद्र की नायिकाएं अहिंसा, सत्य, आत्म-बल और आत्मोत्सर्ग जैसे मूल्यों का शत प्रतिशत अनुपालन करती हैं। उपवास -उपोषण और खद्दर-धारण में भले ही वे विश्वास न करती हों, अपने जीवन में सत्याग्रह करती हैं और अपने सत्य को पाने के लिए हर प्रकार की पीड़ा सहने के लिए तत्पर रहती हैं।

'त्यागपत्र' की मृणाल ने अपने जीवन की भूमिका का निर्धारण कर लिया है। इस मार्ग पर चलते हुए समाज द्वारा दिए गए कष्टों को वह स्थितप्रज्ञ भाव से सहती है। डॉ नगेंद्र मृणाल के बारे में कहते हैं कि- ''कष्ट के कारणों से घृणा न करते हुए, कष्ट की अनिवार्यता से त्रास न खाकर, उसमें आनंद की भावना करना अहिंसा है और अहिंसा यही सिखाती है कि उन्मुक्त वासना का वितरण करना ही उसकी सफलता है।''

जैनेंद्र की सुनीता हरिप्रसन्न का 'इलाज' एक किस्म के सत्याग्रह और अहिंसा के माध्यम से ही करती है। 'सुनीता' का श्रीकांत तो आत्म-बल और सहजता के मामले में गांधी विचारों का अनुपालन करता नजर आता है।

विवाह, स्त्री-पुरूष संबंध आदि के मामले में गाँधी जी नैतिक दृष्टि और सांस्थानिक पवित्रता के आग्रही थे। यह आग्रह जैनेंद्र में नहीं पाया जाता। 'परख' की कट्टो के हाथ में सूत की वरमाला भी है और बिहारी का बिना औपचारिक विवाह के वरण भी है। गांधी के विचारों का प्रतिबिंब और प्रतिरोध एक साथ। 'दशार्क' की रंजना तो बकायदा कोठे से प्रेम बांटती है। इसके लिए वह अपना गृहिणी-धर्म त्याग देती है। वेश्या बनना उसके लिए एक प्रयोग है। वह स्पष्ट करती है - ''पर आपको मालूम होना चाहिए, यह दुकान नहीं, मेरी प्रयोगशाला है। चिकित्सालय है। ''श्लीलता-अश्लीलता, नैतिकता-अनैतिकता, पवित्रता-पवित्रता से परे जाकर वह प्रेम -प्रसार का कार्य करती है। यही कारण है कि 'दशार्क' कई मायनों में गांधीवाद से विपरीत होने के बावजूद गांधीवाद की पुनर्रचना है। जैनेंद्र की लेखनी, उनका मानस, स्त्री पुरुष संबंधों का विश्लेषण करने में जुटा है। उन्होंने अपने चरित्रों को पूरी छूट दे रखी है और गांधी जी ने जिस

हृदय परिवर्तन को राजनीतिक स्तर पर प्रतिष्ठित किया, जैनेन्द्र ने उसे पारिवारिक स्तर पर प्रतिष्ठित कर दिया। जैसा कि नंददुलारे वाजपेई कहते हैं - ''कदाचित जैनेंद्र ने यह तथ्य गांधी-दर्शन से ही ग्रहण किए।''

कुल मिलाकर जैनेंद्र की लेखनी और गांधी -दर्शन में वाद-प्रतिवाद-संवाद का अद्‌भुत रिश्ता देखा जा सकता है।

सियारामशरण गुप्त, विष्णु प्रभाकर, कई मायने में अज्ञेय गांधीवाद के प्रभाव को अपनी लेखनी के माध्यम से अभिव्यक्त करते रहे। समयांतर में जनसामान्य की आंखों में समाजवाद का जो सपना पला, उसमें एक न एक तार गांधी विचारों से जुड़ा रहा। इस क्रम में फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला आंचल' को कैसे भुलाया जाए? 'मैला आंचल' का बावनदास गांधीजी की साक्षात प्रतिमूर्ति है। वह गांधी विचारों को शत प्रतिशत जीता है। निर्भय होकर स्वाधीन भारत में चोरबाजारी रोकने की कोशिश करता है तो बैलगाड़ी से कुचलकर उसकी हत्या कर दी जाती है। हत्यारे इसी स्वाधीन भारत के मान्यवर हैं जो बावनदास को चेथरिया पीर बना देते हैं। मैनेजर पांडेय कहते हैं- ''प्रत्येक समाज का प्रभुत्वशाली वर्ग किसी क्रांतिकारी व्यक्ति और विचार को सामाजिक प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभाने से रोकने, हटाने और उसे प्रभावहीन बनाने के लिए उसकी या तो हत्या करता है या पूजा या फिर हत्या करके पूजा३ आजादी के बाद गांधी के साथ दोनों हुआ है।''

'मैला आँचल' में जिस तरह बावनदास को चेथरिया पीर बनाकर पूजा गया, उसी तरह स्वाधीन भारत में गांधी को महात्मा बनाकर राजघाट पर पूजा जाता है। किसी विचार, विचार-पुरुष को हाईजैक कर उसके विचारों को प्रभावहीन बनाने का तरीका भी इस समय अपनाया जा रहा है। गांधी जी को अपना बताकर उनके विचारों की हत्या करने का खेल रोज खेला जा रहा है। लगभग सन साठ से लेकर नई सहस्त्राब्दी के आगमन तक गांधीजी साहित्य पटल पर अदृश्य थे। इस दौरान मोहभंग अपने चरम पर पहुंचा और ९0 के बाद धीरे-धीरे भूमंडलीकरण निजीकरण और बाजारवाद ने अपने पैर पसारना शुरू कर दिया और देखते ही देखते भारत इनकी सर्वग्राही भूख का भोजन बना। अणुशक्ति की संहारक छाया ने विश्व को भयभीत बना दिया। उपभोक्तावाद की चकाचौंध में मनुष्य की जीवनाभिमुख दृष्टि क्षीण होने लगी। यंत्र के प्रकोप ने सामान्य आदमी को उसकी रोजी-रोटी से बेदखल कर दिया। पूंजीवाद के अतिरिक्त प्रचार-प्रसार ने पैसा पाने की अमर्याद लालसा ने ट्रस्टीशिप की भावना समाप्त कर दी। अब फिर से मनुष्यता करुण दृष्टि से अस्तित्व के लिए सबका मुंह जोहने लगी और नए सिरे से गांधीवाद की जरूरत महसूस होने लगी। भौतिकता का अतिस्वीकार ऐंद्रिय भोग अतिशयता, असीम धनलोलुपता, भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, यांत्रिकता और समृद्धि से पथराये मनुष्य का एकमात्र तारणहार गांधी दर्शन है, इस बात का एहसास सभी को होने लगा। अब इस बात के प्रचार-प्रसार की दरकार महसूस होने लगी कि गांधी विचार के बिना तरणोपाय नहीं। इस दृष्टि से गतिमान साहित्य कहलानेवाले सिनेमा ने गांधी जी को अपना नायक चुना। 'मुन्नाभाई एमबीबीएस' समेत मुन्नाभाई सीरीज की सारी फिल्में इसकी गवाह हैं। 'गांधीवाद''गांधीगिरी' बनकर पुनः लोगों तक पहुंचने लगा है। साहित्य

में भी 'पहला गिरमिटिया' जैसी रचनाएं मोहनदास करमचंद गांधी की संघर्ष- गाथा सुना रही हैं। 2019 में प्रकाशित कृष्णा सोबती का उपन्यास 'चन्ना' कई स्तरों पर गांधी- दर्शन से प्रभावित है। (माना कि इस का रचना- काल बीसवीं सदी का पांचवां दशक रहा है पर 2019 में इसे प्रकाशित करने की दृष्टि से इसमें प्रासंगिकता का पाया जाना भी तो नजरअंदाज नहीं कर सकते) कृष्णा जी ने 'चन्ना' को बहुत हद तक गांधीजी के रंग में रंग डाला है। वह कमल से कहती है- , ''कमल, मैं स्वयं ग्रामीण हूं। मैं वहीं पैदा हुई। वहीं पली और आज भी मैं अपने इन कपड़ों के अतिरिक्त जो कुछ हूं, ग्रामीण हूं। ''तो कमल व्यंग्य से कहता है - ''गांव -गांव क्या गांधी के प्रभाव में हो ?'' चन्ना उत्तर देती है - ''क्या गांधी के कहने से मैं अपने गांव को पहचान लूंगी ? कमल, अपने गांव को तो मैं अपनी आंखों से देख सकती हूं।'' माना कि कृष्णा जी चन्ना को गांधी-प्रभाव स्वीकार नहीं करने देतीं, लेकिन छुआछूत के लिए चन्ना का विरोध, उसका सत्याग्रह, तर्क और बुद्धि की बजाए हृदय की भावनाओं को अहम मानना, पराधीनता को लेकर दुख और यहां तक कि अपने नाना के हत्यारे भागे को घड़ी भेजने का निर्णय उसे गांधी विचारों का अनुगामी सिद्ध करता है।

प्रवासी साहित्य इस दौर की प्रधान साहित्य-धारा मानी जाती जाती है। इस साहित्य में भी गांधी जी का अवतरण बार-बार देखा जाता है। स्वाधीनता के पहले और स्वाधीनता के बाद भी देश छोड़कर परदेसी हुए लोगों के रचनाकार वंशजों द्वारा उसी गांधीयुगीन भारत को बार-बार याद किया जाता है। विमर्शों के अतिरेक में डूबते उतराते साहित्य में पुन: गांधी विचारों की दस्तक सुनाई दे रही है। ''सहितस्य भाव: साहित्यम'' का निर्वहन करने हेतु दृष्टा साहित्यकार पुन: गांधी दर्शन की ओर मुड़ रहा है, यह संकेत भी कम शुभ नहीं। यह शुभ-संकेत बता रहा है कि साहित्य के बीते कल पर गाँधी-दर्शन छाया था और साहित्य का वर्तमान व भविष्य भी नि:संदेह गांधी-दर्शन के आलोक से प्रकाशित रहेगा।

❑❑❑

प्रोफेसर एवम अध्यक्ष, हिंदी विभाग, डॉ. बा.आं.म.विश्वविद्यालय, औरंगाबाद- 431004, (महाराष्ट्र), मो. 9422347678

हिंदी साहित्य के हाशिये में भी हाशिए पर सिमटा हुआ किन्नर समाज

—डॉ. सत्येंद्र प्रताप सिंह

जैसा कि हम जानते हैं साहित्य समाज का दर्पण होता है पर प्रायः देखा जाता है कि यह दर्पण समाज के कुछ वर्गों को मुख्यता दर्शाता है या यूं कहें कि यह कुछ वर्गों को अपने यहां महत्वपूर्ण स्थान देता है और कुछ वर्ग इस साहित्य के दर्पण की परिधि के बाहर है या हाशिए पर स्थित दिखते हैं। इन्हीं हाशिए के समाज में एक महत्वपूर्ण समाज है किन्नर समाज जो इस हाशिए में भी हाशिए पर है। जो हमे इस पर विचार करने हेतु मजबूर करता हैं, कि क्या किन्नर समाज हमारे समाज का हिस्सा नहीं है, या हमारी संकुचित मानसिकता इन्हें अलग समाज बनाकर रहने को मजबूर कर देती है। बहुत कम ही सहृदय साहित्यकारों ने हमारे सामाजिक व्यवस्था में लगभग अ श्य बना दिए गए इस हाशिये के समुदाय के ऊपर अपनी स्याही खर्च की है और बहुत कम ही पाठक हैं जो अपनी ज्ञानचक्षु की परिधि में इन्हे शामिल कर पाये हैं और न अन्य कोई इनके विषय में जानना चाहता हैं।किन्नरों को सुप्रीम कोर्ट ने थर्ड जेंडर के रूप में मान्यता देकर उनके सभी अधिकार सुनिश्चित करने का फैसला दिया था लेकिन आज भी ये लोग अपने अधिकारों से वंचित हैं सुप्रीम कोर्ट ने तो न्यायिक और संवैधानिक अधिकार देने की बात कही थी जो कि एक मानव के रूप में व्यक्ति को गरिमापूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए एक महत्वपूर्ण अधिकार है। लेकिन पूर्ण अधिकार नहीं है पूर्ण अधिकार यानी समाज में गरिमापूर्ण जीवन जीने में उनकी मदद साहित्य ही कर सकता है या यों कहें उनकी स्वीकार्यता का दायरा साहित्य ही बढ़ा सकता हैं।हिंदी साहित्य में किन्नरों से संबंधित रचनाएँ मुख्यता कहानी और उपन्यास विधा में मिलतीं है। हिंदी उपन्यास साहित्य में किन्नर समाज या हिजड़ा समुदाय पर प्रमुख रचनाएं यमदीप, मैं भी औरत हूँ, किन्नर कथा, तीसरी ताली, गुलाम मंडी, पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नाला सोपारा, मैं पायल, किन्नर गाथा आदि उपन्यास मिलते हैं। वर्तमान में

पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नाला सोपारा में बिन्नी नामक पात्र संपूर्ण किन्नर समाज की तरफ से सभ्य समाज की सम्मुख एक विचारणीय या झकझोर के रख देने वाला प्रश्न उठाता है कहता है कि ''मस्तिष्क नहीं हो दिल नहीं हो धड़कन नहीं हो आंख नहीं हो तुम्हारे हाथ पैर नहीं है। है... है... है ...सब वैसे ही है जैसै औरों के हैं।

हिंदी साहित्य के हाशिए पर स्थित विमर्शो में जहाँ स्वानुभूत और सहानुभूति पर एक वैचारिक संघर्ष देखने को मिलता है, वही किन्नर समाज पर लिखी हुई रचनाओं में किन्नर समाज के संघर्षो को यथार्थ रूप में उभारने में उस हद तक सफलता नहीं मिली, जिस हद तक अन्य विमर्श के साहित्य को प्राप्त हुई है। फिर भी ये उपरोक्त उल्लेखित उपन्यास काफी हद तक किन्नर समाज की भावनाओं को संवेदना के स्तर पर काफी हद तक उभार कर सामने लाते है। इन उपन्यासों का सबसे महत्वपूर्ण योगदान हैं कि ये एक ऐसे समाज को साहित्य में स्थान देने का है जिसके बारे में हम बहुत कम जानते हैं ऐसे में किन्नर समाज की जीवन के कई अनछुए पहलुओं को हमारे सामने लाकर ये उपन्यास हिंदी साहित्य कि सामाजिक दर्पण होने के अभिप्राय को सशक्त करते है।जैसे यमदीप उपन्यास में एक प्रसंग आता है "अब कोई पूछनहार नहीं इसका तो क्या हम ही छोड़ जाएंगे ? अरे हम हिजड़े है, हिजड़े .....इंसान है क्या जो मुँह फेर ले''।[1] यह कथन मनुष्य की सामाजिक असंवेदनशीलता पर एक गहरा व्यंग्य करता है, साथ ही सभ्य लोगो से अधिक करुणा ममत्व भाव व सहायता भाव किन्नरों में दर्शाता है। एक किन्नर होना इस सभ्य समाज में आजन्म पीड़ा और अभिशाप को ढोने जैसा है जिसका दर्द बयां करते हुए किन्नर कथा उपन्यास में देखने को मिलता है।" बचपन से आज तक बस अपने आप में दर्द पीते रहते हैं। दूसरों को हंसाते आए हैं उनकी खुशियों और हिजड़ों के है में शरीक होते आए हैं, आशीष के सिवा कभी किसी को कुछ नहीं दिया, ईश्वर से बस एक शिकायत है आखिर क्यों उसने हमें ऐसा बनाया क्यों हिजड़ा होने का दंड दिया ? काश हम भी औरों की तरह स्त्री या पुरुष होते, हिजड़ा होना कितनी बड़ी सजा है, यह कोई हिजड़ा ही समझ सकता है दूसरा कोई नहीं, कोई नहीं, कभी नहीं।,"[2] माध्यम से उपन्यासकार ने हिजड़ों के जीवन की मार्मिकता अत्यंत संवेदनशीलता से उभारा है। एक किन्नर होने के नाते इस समुदाय को कितना कष्ट उठाना पड़ता है उसकी एक बानगी हमे दिखती है साथ ही यह बताती है, हिंदी साहित्य के हाशिये में स्थित अन्य विमर्शो की अपेक्षा इनकी पीड़ा ज्यादा घनीभूत है, और इनकी पीड़ा में विविधता बहुत अधिक है जिसका पूरी तरह से उभर कर सामने आना तभी संभव होगा जब कोई किन्नर खुद अपनी रचना लिखें चाहे वो कविता के रूप में या कहानी के रूप में या उपन्यास के रूप में या आत्मकथा के रूप में।

मुख्यधारा के समाज से किन्नरों के संबंध को स्पष्ट करते हुए किन्नर कथा उपन्यास में लेखक कहता है ''मेल जोल केवल वहीं तक जहाँ तक इनकी खुशी, शादी, ब्याह, बच्चों का जन्म हो या मुण्डन, हम ही बिन बुलाए बेशर्मी से तालियां पीटते पहुँच जाते हैं, बिन बुलाए मेहमान की तरह हमें हिकारत से देखते हैं , कोई नहीं चाहता हमारा साथ, दूर भागते हमारी छाया से जैसे हम इंसान न हो, कोई अजूबा हो अछूत की तरह व्यवहार किया जाता है हम हिजड़ों से।"[3] अपने पात्र के मुख से कहलवाई गई इन पंक्तियों में उपन्यासकार किन्नरों के जीवन में व्याप्त कष्ट स्पष्ट करता है।आज भी लोगों का रवैया किन्नरों व ट्रांसजेंडरों के प्रति संवेदनहीन ही नजर आता है। आज भी जब कोई किन्नर किसी के पास खड़ा हो तो लोग उसे हेय दृष्टि से ही देखते है। उनकी हँसी उड़ाते है। आए दिन इनके साथ तमाम बुरी घटनाएं होती रहती है।इतना ही नहीं इन्हें प्रशासनिक स्तर पर भी कोई मदद नहीं मिलती है।पुलिस भी इनकी रिपोर्ट नहीं दर्ज करती ।

पुलिस के आंकड़ों में इनके खिलाफ हुए अपराधों का कोई रिकॉर्ड नहीं मिलता है लिंगगत भेदभाव को झेलने वाली इस आबादी को सिर्फ शारीरिक व मानसिक रूप से ही परेशानी नहीं झेलनी पड़ती बल्कि इन्हें आर्थिक रूप से भी बहुत मुश्किलों का सामना करना पड़ता है यही कारण है कि आज रोजगार में इनकी भागीदारी अत्यल्प है। जैसा कि बच्चन सिंह जी लिखते हैं, "आज की दुनिया पहले से बहुत छोटी हो गई है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के कारण विचारों का पारस्परिक आधार प्रदान बढ़ चला है। ऐसी स्थिती में संसार के अन्य भागों के विचारों को आयात करने में कोई हानि नहीं है। उनसे बचा भी नहीं जा सकता लेकिन इसके साथ ही हमें अपनी अस्मिता को भी नहीं भूलना होगा।"[4] इन पंक्तियों के माध्यम से तो आज की दुनिया पहले से बहुत छोटी हो गई है से अभिप्राय एक दूसरे से संपर्क की सुविधा प्रगाढ़ होने से है। लेकिन आज भी हमारे खुद के समाज की विविधताओं में वृद्धि करने वाली बहुत सी अस्मिताएं हमारे संपर्क में न होने के कारण हासिये पर है। किन्नरों पर आधारित अधिकांश उपन्यासों में मुख्यधारा के सभ्य समाज के तथा कथित सब लोगों की पाश्विक प्रवृति को बाखूबी स्पष्टता के साथ दिखाया गया है।

पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नाला सोपारा में बिन्नी नामक पात्र संपूर्ण किन्नर समाज की तरफ से सभ्य समाज की सम्मुख एक विचारणीय या झकझोर के रख देने वाला प्रश्न उठाता है कहता है कि ''मस्तिष्क नहीं हो दिल नहीं हो धड़कन नहीं हो आंख नहीं हो तुम्हारे हाथ पैर नहीं है। है... है... है ...सब वैसे ही है जैसै औरों के हैं। यौन सुख लेने-देने से वंचित हो, तुम वात्सल्य सुख से नहीं। बच्चे तुम पैदा नहीं कर सकते मगर पिता नहीं बन सकते या किसी ने समझने दिया तुम्हें। सुनो- पहचानो। पहचानो। अपने श्रम पर जिओ। मनोरंजन की दक्षिणा पर नहीं। हिकारत की दक्षिणा जहर है, जहर। तुम्हें मारने का जहर।तुम्हें समाज से बाहर करने का जहर।"[5] इन पंक्तियों के माध्यम से उपन्यासकार वास्तविकता की स्पष्ट बयानी करते हुए समाज की वास्तविकता को उभारती है साथ ही किन्नर समाज के भीतर से एक संघर्ष की उम्मीद को धार देते हुए दिखाई पड़ती है।

इसी तरह किन्नरों के शोषण के सामाजिक कारण के अलावा आर्थिक कारण को स्पष्ट करते हुए प्रदीप सौरव अपनी तीसरी पाली में अपने पात्र के माध्यम से कहते हैं " माना मैं मर्द हूँ, लेकिन यह समाज मुझसे मर्द का काम लेने के लिए राजी नहीं है मुझे इस समाज ने मादा की तरह भोग की चीज में तब्दील कर दिया है। मैं मर्द रहूँ, औरत रहूँ या फिर हिजड़ा बन जाऊ, इससे किसी को कोई फर्क नहीं पड़ेगा पेट की आग तो बड़े -बड़ों को न जाने क्या क्या बना देती है।"[6] कहीं ना कहीं आर्थिक विपन्नता के लिए सामाजिक स्वीकार्यता ही जिम्मेदार है। क्योंकि सामाजिक स्वीकृति न होने के कारण इन्हें रोजगार के क्षेत्र में प्रवेश नहीं मिलता है मजबूरन समाज के लिए निकृष्ट समझी जाने वाली देह व्यापार जैसे व्यवसायों में इन्हें जूड़ना पड़ता है। किन्नरों के जीवन की सबसे बड़ी विडंबना इनका विस्थापन है विस्थापन का दंश इन्हे जीवन पर्यत झेलना पड़ता है। जैसे कि 'मैं पायल....' उपन्यास में लेखक विस्थापन के दंश को को स्पष्ट करते हुए कहता है। ''मैं पायल..... का आधार किन्नर गुरु पायल सिंह के जीवन संघर्ष की गाथा ही है। जिसमें

प्रत्येक किन्नर के अतीत के संघर्ष की झलक पर लक्षित होती है विस्थापन का दंश कष्टकारी होता है फिर चाहे वह परिवार समाज या अपनी मिट्टी से किया हो।"[7] विस्थापन का दंश न केवल व्यक्ति या समूहों को शारीरिक पीड़ा या मानसिक पीड़ा देता है बल्कि उसकी संपूर्ण अस्मिता से विस्थापित कर देता है, यदि विस्थापित समूह अपनी नई अस्मिता स्थापित करने का प्रयास करता है तो उसके लिए साहित्यिक विमर्श एक महत्वपूर्ण माध्यम होता है। वही समूह अपनी नई अस्मिता का विकास कर सकता है जिसके जिसके भीतर एक चेतना का निर्माण हो सका है। जैसा कि राम स्वरूप चतुर्वेदी हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास में लिखते हैं ''आधुनिक भाव-बोध के समग्र साहित्य की एक प्रमुख विशेषता उसका स्वचेतन होना है। परिवर्तन और विकास के बीच प्रधान अंतर चेतनता का हैं। परिवर्तन सहज है,विकास प्रयत्न-साध्य हैं, और आधुनिकता विकास का स्वच्चेतन प्रयत्न है।"[8] दुर्भाग्य से आज भी किन्नर समाज अपनी चेतना की स्थिती को नहीं प्राप्त कर सका है। किन्नर समाज हिंदी साहित्य के विस्तृत हाशिए में इसलिए सिमटा हुआ नजर आता है क्योंकि जो भी रचना है इन से संबंधित मिलती है वो भी इनकी पीड़ा को घनीभूत स्तर पर परलक्षित नहीं कर पाती है क्योंकि वो रचना है सहानुभूति के स्तर पर लिखी गई है इसीलिए स्वानुभूत जैसी वेदनात्मकता नही उभारकर ला पाती हैं।

हिंदी साहित्य में उपन्यास के अलावा केवल कहानियों में प्रमुख रूप से किन्नर समाज के बारे में वर्णन मिलता है कई कहानियों में नायक या मुख्य पात्र किन्नर समाज से साहित्य के वर्तमान परिपेक्ष में लिंग निरपेक्ष समाज बहिष्‌ त किन्नर अथवा थर्ड जेंडर समुदाय पर चिंतन और चर्चा तेज हुई। हिंदी के नई सदी में विमर्श प्रभावी रूप से सामने आ रहा है और किन्नर समाज के जीवन की दर्द भरी कहानियों को नया आयाम दे रहा है। इन कहानियों में 'बिन्दा महाराज' 'किन्नर' 'इज्जत के रहबर' 'पन्ना बा' 'नेग' 'बीच के लोग' 'त्रासदी' 'मुर्दन के गांव' 'हिजड़ा' 'संझा' माहुर आदि में किन्नर व्यथा का यथार्थ परिलक्षित हो रहा है। किन्नर समाज पर लिखी गई कहानी है उनकी पीडा की कहानी कहती नजर आती है।हिंदी साहित्य में अभी उतनी कहानियाँ इन पर नहीं लिखी गई है, जितनी अन्य विमर्शों पर लेकिन फिर भी जो कहानियाँ लिखी जा रही है, उससे इस समाज के स्वरूप को समझने में काफी मदद मिल सकती हैं।किन्नर वर्ग के प्रति सामाजिक तिरस्कार निश्चित तौर पर अत्यंत दुखदायी है। इस वर्ग से जुड़ें मनुष्य की उपेक्षा का आलम यह है कि एक सामान्य मनुष्य भी यदि कुछ कमी रह जाती है तो लोग उसे हिजड़ा कहकर संबोधित करने लगते हैं।इस वंचित समाज को लेकर गरिमा दुबे जी अपनी कहानी पन्ना बा में लिखती है। ''कोई काम पर रखे नहीं, कोई माता पिता इस अभिशाप को रखने को राजी नहीं, कोई नौकरी नहीं, कोई पढ़ाई नहीं, बेचारा मनुष्य जिए भी तो कैसे? कैसे देह से परे हो, फिर जी जाती है। एक अभिशप्त किन्नर की जिंदगी।"[9] ये पंक्तियाँ केवल किन्नर की केवल किन्नर की व्यथा नहीं व्यक्त करती बल्कि मानव के मन मस्तिष्क पर प्रभाव भी डालती है। किस तरह से समाज मानव मानव के साथ भेदभाव कर रहा है। किन्नर समाज हमारे समाज का एक अभिन्न अंग है फिर भी समाज का हर वर्ग इन्हें हिकारत से देखता है और मनोरंजन से अधिक और कुछ नहीं समझता है। सभी कहानियों में साहित्य समाज की परंपरागत कुछ सोच दिखाई देती है जो

सदियों से लेकर आज भी अपनी संकीर्ण सोच से उबर नहीं पायी इन कहानियों के पात्र का अध्ययन करते हुए एक बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि अधिकांश किन्नर घोर आस्तिक होते हैं। आस्तिक होना उनके मन में एक उम्मीद के प्रति आग्रह को दिखाता है। इन कहानियों में किन्नरों के कष्टप्रद जीवन का कटु यथार्थ हमारे सामने आता है। इन कहानियों के माध्यम से किन्नर समाज के सच को बाहर लाने या मुख्यधारा में लाने का प्रयास किया गया ताकि साहित्य के माध्यम से हम यह समझ सके कि किन्नर समाज का स्वरूप क्या है, और उसको किस तरह से नकारात्मक रूप से लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है क्योंकि जब तक हम इन कहानियों को नहीं समझ पाएंगे हम उनके बारे में उतना ही जानते हैं जितना हम देखते हैं, लेकिन वास्तविकता इससे कहीं अधिक भयावह है और दुखी कर देने वाली है यहाँ हम कहानी कहानियों के माध्यम से ही समझ सकते हैं और हमें जब भी समाज के स्वरूप को समझने की जरूरत पड़ेगी तब तब हमें साहित्य की इन कथाओं से जो अभी भी पर्याप्त रूप में नहीं लिखी गई है से दो चार होना पड़ेगा। यद्यपि साहित्य का उद्देश्य समाज को पूर्ण रूप से बदलना नहीं है। फिर भी वह संकीर्ण मानसिकता को बदलने में सहायक की भूमिका तो निभाता ही है। इस दृष्टि से ये कहानियाँ संख्या में कम होने के बावजूद एक सार्थक पहल कही जा सकती है हालांकि अभी भी समाज की बै चार की इन्हें स्वीकार करने में हिचक रही है फिर भी आज इनके विषय में साहित्य जगत में हाशिये में भी हाशिए पर ही चाहे चर्चा एवं हलचल दिखाई पड़ रही है संभवता यही हलचल एक दिन समाज के लोगों के मन मस्तिष्क को प्रभावित कर किन्नरों को समाज में या मुख्यधारा के समाज में एक सम्मानित स्थान दिलाएगी। जैसा कि रजनी प्रताप अपने एक लेख में लिखते हैं कि ''किन्नर अपने जीवनकाल में अनेक विसंगतियो का सामना करता है।३३३.. समाज की रोड मानसिकता के कारण किन्नरों की छवि ऐसी बन गई है कि माता पिता भी किन्नर के रूप में पैदा हुई अपनी संतान को अपनाने से कतराते हैं।जीवन के प्रथम पड़ाव पर ही किन्नर को इस चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। समाज में विचरने वाले सामान्य मानव की मानसिकता तो ऐसी है समाज के उच्च वर्ग राजा महाराजा आज भी इसी मानसिकता से ग्रस्त है।"[10] आखिर वो कौन सी परिस्थितियां रही होंगी जो एक माँ बाप को अपनी संतान को एक अंग विकसित न होने के कारण इस तरह त्यागना पड़ता है। आखिर ऐसी कठोर विवशता की निर्मति कितनी कठोर होगी सोच से परे हैं। किन्नर समाज के बच्चे के साथ ही उनके माँ बाप भी पीड़ा से व्यथित होते हैं लेकिन समाज में ऐसे बच्चों की शिव कार्यकता को लेकर भी चिंतित होते मुख्यधारा का तथाकथित सभ्य समाज ऐसे बच्चों को स्वीकार नहीं करता बल्कि अत्यंत घृणित नजरों से देखता है इसी अपमान से बचाने के लिए माता पिता भांति भांति से प्रयत्नशील रहते है। किन्नर कथा उपन्यास में उपन्यासकार प्राक्कथन में ही एक प्रश्न के माध्यम से किन्नर समाज की गंभीर समस्या की तरफ ध्यान आकर्षित करते हुए कहता है कि ''प्रकृति ने किन्नरों के साथ ३. किया? क्यों हम किन्नरों को मुख्यधारा में शामिल करने से बचते रहे हैं? क्यों यह माना जाता था कि वह हमारी तरह इंसान नहीं है? ये कुछ ऐसे जिंदा और ज्वलंत सवाल है जिसका जवाब समाज और सभ्यता को इस 21 वीं सदी में देना चाहिए। आखिर किन्नर भी हमारी तरह चलते फिरते

हंसते बोलते मनुष्य हैं केवल एक शारीरिक कमी के कारण न तो वह स्त्री और ना ही पुरुष के दायरे में रखे जा सकते हैं।"[11] वास्तविकता में देखा जाए तो व्यक्ति में कोई मानसिक शारीरिक कमी हो तो भी वो हर हाल में अपने माँ बाप को प्रिय होता है, परन्तु किन्नर बच्चा होने पर इज्जत और सामाजिक अवहेलना के कारण ऐसे संतानों से छुटकारा पाने का प्रयास किया जाता है। मानव के प्रति मानव जाति द्वारा किया गया यह एक घृणित और अक्षम्य अपराध है।

हिजड़ा होना प्राकृतिक है विज्ञान के अनुसार यह गुणसूत्रों के असंतुलन से आई एक विशेषता है। लेकिन सामाजिक दृष्टिकोण से इस गुणसूत्र विशेषता को कभी सम्मान की नजर से नहीं देखा गया। इसे हमेशा हीन भावना से देखा गया। किन्नरों का जीवन कैसा है, उन्हें कैसी सामाजिक आर्थिक स्वास्थ्यगत और व्यक्तिगत कठिनाइयां झेलनी पड़ती है उनकी परम्परा और रिवाज क्या है वह अपनी वंश परंपरा का निर्वहन कैसे करते हैं ? इन सब प्रश्नों से समाज का एक बड़ा हिस्सा अपरचित रहा है और हिजड़ों के जिससे सामाजिक जीवन से हम परिचित हैं। वह अत्यंत दयनीय है तथा उसे हम एक हिकारत की नजर से देखते हैं ,जैसा कि हम जानते हैं आधुनिक साहित्यिक विधवाओं में कथा साहित्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण विद्याओं में से एक है, उसमें भी उपन्यास को महाकाव्य का स्थानापन्न कहा जाता है। किसी भी समाज के विस्तृत अध्ययन का फल हमें उपन्यास के माध्यम से या कहानी के माध्यम से आत्म कथा के माध्यम से प्राप्त हो सकता है।किन्नर समाज के बारे में अन्य हाशिए के समाज की अपेक्षा बहुत अधिक भ्रम फैला हुआ इसलिए इनसे संबंधित रचनाओं के सहानुभूति के स्तर से उठकर स्वानुभूत के स्तर तक आना बहुत जरूरी है ,जहाँ बहुत सारे हाशिए के विमर्श इन्हीं विधाओं के माध्यम से समाज के मुख्यधारा यह साहित्य के मुख्यधारा में अपना स्थान बनाने में कामयाब हुए हैं। स्त्री पुरुष की संरचना प्र ति द्वारा निर्धारित होती है। जैविक आधार से स्त्री पुरुष और किन्नर को शारीरिक मानसिक भिन्नता प्रदान की है मानव समाज में परस्पर भिन्न लिंगी मनुष्य एक दूसरे के पूरक व सहयोगी रहे है। किंतु मानो सभ्यता के विकास से ही लिंग भेद के कारण दमन अन्याय शोषण और असमानता का लंबा इतिहास भी विद्यमान रहा है। विशेषकर किन्नर समुदाय को हाशिए पर धकेल दिया गया और किन्नर समाज अभी भी साहित्य के हाशिये में भी हाशिए पर स्थित है। या यों कहें की साहित्य के विस्तृत होते हाशिए में सिमटा हुआ सा हैं। पित्रसत्तात्मक भारतीय समाज में किन्नर समाज के लोगों को किस तरह बहिष्‌ त किया जाता है तथा उनके साथ मनुष्य की तरह व्यवहार नहीं किया जाता है बल्कि उनकी अस्तित्व को ही नकारते हुए उन्हें अत्यंत हेय ष्टि से देखा जाता अन्य हाशिये के समाज से इतर किन्नर समाज की की प्रमुख समस्या यह भी है कि उन्हें सामाजिक आर्थिक अधिकारों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों से भी वंचित होना पड़ा है। आज तक भारतीय समाज में किन्नर समाज का कोई भी व्यक्ति संविधान द्वारा प्रदत्त अपने राजनीतिक अधिकारों को हासिल करने में असफल रहा है उदाहरण के तौर पर भारतीय संविधान उन्हें चुनाव लड़ने की स्वतंत्रता प्रदान करता है किंतु देश के इतिहास में आजतक कोई किन्नर विधानसभा अथवा संसद की सदस्यता हासिल नहीं कर सका हैं। आजादी के छह दशक के बाद सर्वोच्च न्यायालय को उनके पक्ष में हस्तक्षेप करना पड़ा और अपने एक निर्णय के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय

ने किन्नरों को समाज में स्वीकारता देने का प्रयास किया। लेकिन मुख्यधारा का समाज अभी भी इन्हें पूर्ण रूप से स्वीकार्यता देने का कोई विचार करता हुआ नजर नहीं आता है। जिसका सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण हिंदी साहित्य के हाशिये में भी इनका अभी तक हाशिये में ही विद्यमान होना है। आज जहाँ हिंदी साहित्य के अन्य विमर्श से संबंधित रचनाओं की प्रमुखता दिखती है। वही किन्नर समाज से संबंधित रचना होगी संख्या में कोई उल्लेखनीय वृद्धि नहीं दिखती है। हालांकि समाज ने इंसानियत के जिंस तकाजे पर इस समुदाय को मनुष्यता के सामाजिक पैमाने से बाहर कर दिया है वही मनुष्यता मुख्यधारा के समाज से अधिक इनमें दिखती है। आज भी समाज इन्हें पीड़ित के रूप में नहीं पीड़ित के रूप में नहीं अपितु एक घृणित नजरिये से देखता है।ये घृणा समाज मैं इन्हें सम्मान पूर्वक जीवन जीने के लिए भी अवसर नहीं देती हैं।जिस को स्पष्ट करते हुए गरिमा संजय दुबे जी अपनी कहानी पन्ना बा में लिखती हैं कि ''कोई काम पर रखे नहीं, कोई माता पिता इस अभिशाप को रखने को राजी नहीं, कोई नौकरी नहीं, कोई पढ़ाई नहीं, बेचारा मनुष्य जी ये भी तो कैसे? देह से परे हो फिर इस तरह जी जाती है एक अभिशप्त किन्नर की जिंदगी।"[12] किन्नर समाज को जीते जी दुख तो सहना ही पड़ता है अपितु मरने के बाद भी कम दुर्गति उनकी नहीं होती हैं। पन्ना बा कहानी में एक किन्नर के मरने के बाद उसकी क्या स्थिति होती हैं को स्पष्ट किया गया ''वह किन्नर की मौत पर उसकी लाश की जूतों से पिटाई की खबर पढ़ ही रही थी कि पता चला पन्ना बाबा मर गया''।[13] इस तरह की वीभत्स दृश्य; एक सभ्य समाज में कल्पित नहीं किए जा सकते हैं। किन्नरों की इसी दयनीय स्थिति के बारे में स्पष्ट करती हुई कीर्ति मलिक लिखती हैं कि ''समाज में किन्नरों को अत्यन्त ही हैं और नकारात्मक दृष्टि से देखा जाता है धार्मिक दृष्टिकोण मैं इन्हें उच्च व पवित्र स्थान दिया जाता है, वही व्यावहारिक दृष्टिकोण में इनके साथ बहुत ही हेय व्यवहार किया जाता है। किन्नर, समाज में सिर्फ हाशिए पर ही नहीं है बल्कि समाज में इनके प्रति बहुत ही गलत धारणाओं को भरा जा रहा है। जिसके कारण लोग इनके प्रति काफी नकारात्मक विचार रखने लगे हैं।"[14] इस प्रकार हम देखते हैं, इनके प्रति समाज में बहुत सारी मिथ्या पर आधारित धारणाएं प्रसारित की जाती हैं, जिनका वास्तविकता से कोई लेना देना नही हैं। हिंदी साहित्य में अभी तक कोई सार्थक प्रयास नही हुए इनके उत्थान के लिए।

हाशिए मे हाशिए पर स्थित किन्नर समाज से संबंधित रचनाओं के माध्यम से किन्नर समाज से संबंधित कई महत्वपूर्ण विचारणीय प्रश्न और किन्नर समाज की समस्याएं उभर कर सामने आती है।एक किन्नर की सामान्य इच्छा होती है कि उसे भी एक सामान्य मनुष्य समझा जाए और उसकी इस इच्छा की पूर्ति में साहित्य एक महत्वपूर्ण रोल निभा सकता है।आज हिंदी साहित्य में उपलब्ध रचनाओं का अवलोकन करने पर पता चलता है कि बहुत सारे किन्नर वेश्यावृत्ति नशे की तस्करी व न जाने कितने अनैतिक कार्यो में लिप्त रहते हैं। जिसका प्रमुख कारण है कि शिक्षा का अभाव, तकनीकी अकुशलता, आर्थिक असमर्थता, बेरोजगारी व परंपरागत पेशे का अज्ञान और इन सब कमियों का मुख्य कारण है उनकी समाज में अस्वीकार्यता। ये अस्वीकारता

कहीं न कहीं साहित्य से किन्नर समाज के प्रति और गंभीर भूमिका के निर्वहन की अपेक्षा करती हैं।

संदर्भ सूची :

1. नीरजा माधव, यमदीप, सुनील साहित्य सदन-2009, पृ.12
2. महेंद्र भीष्म, किन्नर कथा, सामयिक प्रकाशन -2011, पृ.66
3. वही पृ.66
4. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन -2018 पृ.514
5. चित्रा मुद्गल, पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन-2017, पृ. 50
6. प्रदीप सौरभ, तीसरी ताली, वाणी प्रकाशन -2013, पृ.57
7. महेन्द्र भीष्म, मैं पायल ३.अमन प्रकाशन-2016, प्रस्तावना पृ.11
8. रामस्वरूप चतुर्वेद, हिंदी साहित्य संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन-2018 पृ.268
9. एम.फिरोज (संपा.), पन्ना बा -गरिमा संजय दुबे, वांग्मय (त्रैमासिक) महेंद्र भीष्म, किन्नर कथा, सामयिक प्रकाशन -2011 पत्रिका, जनवरी -मार्च-2017 पृ.120
10. प्रताप, रजनी, किन्नर समाज की चुनौतियाँ समसमयिक सरस्वती, अप्रैल-2018. पृ.54
11. महेंद्र भीष्म, किन्नर कथा, सामयिक प्रकाशन -2011, प्राक्कथन
12. एम. फिरोज (संपा.), पन्ना बा- गरिमा संजय दूबे, वांग्मय (त्रैमासिक) हिंदी पत्रिका, जनवरी-मार्च 2017, पृष्ठ 120
13. वही पृष्ठ 121
14. सरस्वती वर्ष अंक 13-147 अप्रैल- सितंबर -, 2008 पृष्ठ 70

❒❒❒

डॉ. सत्येंद्र प्रताप सिंह, असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी), लाजपत राय महाविद्यालय, साहिबाबाद, गाजियाबाद (यू.पी.), पिन-201005, मो. 9818834864

मध्यकालीन युग में संत जाम्भोजी

—सोनम डेहरिया

मध्यकालीन युग में पाखण्ड और आडम्बरों में उलझी हुई थी, जनता आर्थिक मानसिक सुख-शान्ति की तलाश में आपस में अशान्ति फैलाए हुए थी। हिन्दू अपने झाड़ा-फूंका में पड़े थे, मुस्लिम काजी-मौलवियों के चक्कर में पड़े थे। यानि साम्प्रदायिक भावना बड़ी प्रबल थी, हिन्दू समाज में धार्मिक भावना का अभाव था। जाम्भोजी ने अपनी वाणियों में इस प्रकार व्यक्त उन्होंने उस समय के आडम्बरकारी-पाखण्डी साधुओं को भी पथ-प्रदर्शन किया है, ताकि वो भोली-भाली, विश्वास करनेवाली जनता को भ्रमित ना करे।

भारतीय इतिहास में मध्यकाल अनेक कारणों से संक्रमण काल माना जाता है। यह काल राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक दृष्टि से ह्रास का काल था। इस काल में भारतीय धर्म एवं संस्कृति का भवन डांवाडोल हो गया था और चारों ओर अशान्ति का वातावरण फैला हुआ था। हर तरफ हर सम्प्रदाय को हताशा और निराशा के काले बादलों ने घेर लिया था। मानो ऐसा लग रहा था कि भारतीय संस्कृति और भारतभूमि भी घोर चक्रव्यूह में घिर गई थी। जब ऐसा समय भारतभूमि पर आया है तो कभी वीर सपूतों तो कभी ईश्वर के अवतारों ने अपनी वाणियों से सभी जन को जाग्रत किया है। मध्यकालीन युग को स्वर्णकाल कहा गया है शायद, इसलिए भी कि लगभग सभी सन्तों रूपों स्वर्ण का जन्म इस काल में भारतभूमि की सन्तान को उल्लास, हर्ष, दिशा व दशा देने के लिए हुआ है। 'सन्त' शब्द का प्रयोग प्रायः बुद्धिमान, पवित्रात्मा, सज्जन, परोपकारी, सदाचारी आदि के अर्थ में किया जाता है। कभी कभी इसे भक्त, साधु एवं महात्मा जैसे शब्दों का भी पर्याय मान लिया जाता है।''[1]

जहाँ तक शब्द की व्युत्पत्ति का प्रश्न है, कुछ लोग इसे शान्त शब्द का रूपान्तर मानते हैं, तो कुछ अन्य लोग इसे 'संति' या 'सत्य' का वि त रूप मानते है।[2]

'सन्त शब्द से अभिप्राय जो सदैव शान्त रहते हैं, जो आचरण से भी और मन के विचरण से भी, उसे सन्त कहते हैं।[3]

आचार्य मुरारी पाण्डेय के अनुसार सदैव सत्य और शक्ति का आचरण करते हैं, सन्त कहलाते हैं।[4]

हिन्दी की आधुनिक परिभाषिक मर्यादा को ध्यान में रखकर विचार करने वाले सन्त शब्द में अंग्रेजी के 'सेंट' शब्द की अर्थछाया का भी स्पष्ट अनुभव करते हैं।[5]

मध्यकालीन युग अनेक सन्तों की जननी का भी युग रहा है। राजस्थान, जोधपुर के नागोर के पीपासर गाँव में सन् 1451 ई. में सन्त जाम्भोजी का अवतरण हुआ। वे जाति से परमार दवार

राजपूत थे। जम्भोजी के पिताजी का नाम लोहित तथा माता जी का नाम हांसा देवी या गुर की। जब केवल सात वर्ष के थे तो उनका व्यवहार सामान्य बालकों के समान नहीं था। वे अधिकांश मौन रहते थे। माता-पिता उनके सम्बन्ध में चिन्तित रहते थे-

हासा लोहट न कहें, सुनो बात चित्तलाय।
बालक मोटो, बोले नहीं, कोई जतन कराय।[6]

मध्यकालीन युग धार्मिक दृष्टि से बहुत पिछड़ गया था, सभी लोग अन्धविश्वासों से बहुत जकड़ गए थे। सभी धर्म सम्प्रदाय के लोग अपने धर्म-समुदाय के धार्मिक बाबाओं के चक्कर में पड़ गए थे। अन्धविश्वास और आडम्बर का बोल बाला भी था। उस युग में लगभग सारी जनता अन्धविश्वासों के घेरे में कसी हुई थी। तब उन्होंने नागौर से एक पुरोहित को बुलाया, जिससे बालक के ऊपर पड़ी हुई किसी की छाया उतर जाए, परन्तु वह बालक तो पूर्व जन्म के ज्ञानी थे। वे स्वयं पुरोहित से कहते हैं कि-

''गुरु चीह्नों गुरु चीह्न पुरोहित।
गुरुनुख धर्म बखाणी।''[7]

जम्भोजी ने गुरु का महत्व और परिचय देते हुए जब बताया तो पुरोहित बालक का अलौकिक स्वरूप देखकर वहाँ से खिसक लिया। जम्भोजी ने गुरु के बारे में बताया कि-'गुरु आप सन्तोषी अवरां पोखी। तन्त महारस वाणी।''[8]

जैसे-जैसे गुरु जम्भोजी बड़े हुए तो गाय चराने लगे और पर्यावरण के बारे में अपने मित्र-बन्धुओं को बताने लगे। यानि जो महाभारत ष्ण लीलाओं में गोकुल वृन्दावन का गाय चराने वाला और पर्यावरण, प्रकृति प्रेम पौराणिक ग्रन्थों में मिलता है वो आचरण जम्भोजी के कृतित्व में मिलता है। साथ में यह सन्देश भी मिलता है कि भारतभूमि पर गोधन का सबसे बड़ा धन और धार्मिक परम्पराओं आस्था, मान्यताओं में गाय को माँ तुल्य माना है, जिसमें देवताओं का वास होता है। आधुनिक काल में इसी गोधन का अपमान होता है जो अपने अस्तित्व की तलाश पाने के लिए आवाज दे रही है। गुरु जम्भोजी गायों के रक्षक रहे। गुरु जम्भो जी ने कर्नाटक के शेख सद्यों से गौ-हत्या बन्द करवाई थी। उन्होंने कहा-

''सुणि रे काजी सुधि रे मुल्ला, सुणियौ लोग लु गाई।
म्हे नर निरहारी एकलवाई जिणिओ राह फरमाई।।
जोर जरब करद जो छाड़ौ, तो कलमां नाप खुदाई।
जै हक साच सिदक ईमान सलामति, जिणि अभिसत ज पाई।''
पुन: उसे एक सबद फारसी में कहा-
'हस चिदारी सरफ कुं दर राह कु:।
लुकत ना कुल वेरह तात तुलफ कुं:।[9]

आज जब पूरा विश्व पर्यावरण के संरक्षण के लिए नित्य कोई न कोई उपाय कर रहा और पर्यावरण भी सुरक्षा, को लेकर चिन्तित है। मध्यकालीन युग में गुरु जम्भोजी ने पर्यावरण संरक्षण का बोध कराया था, जो उनकी दूरदर्शिता दश्ष्टि का परिणाम है। वे जन्मजात ब्रह्मज्ञानी और ब्रह्मयोगी सन्त थे। उनका व्यक्तित्व अलौकिक था, जिसे देखकर जोधपुर नरेश जोधा जी के भ्राता कान्हाजी व पुत्र उधव जी भी आश्चर्यचकित हो गए। उधाजी कहने लगे कि मैंने आपके चारों ओर प्रकाश देखता हूँ तथा आपके मुखरविन्द की ज्योति दृष्टिगोचर होती है। यह बड़ा रहस्य है। वे उत्तर देते हैं-

"मोरे छाया न माथा लो ही न मांसू,
रक्तूं न धातूं मीरे माईन बापू।।"[10]

हर सम्प्रदाय का कोई ना कोई विशेष धार्मिक स्थान होता है जिसको वो मोक्ष की तरह मानते हैं। जीवन में एक बार वहाँ जाकर पवित्र मानते हैं कि उन्हें कई जन्मों में नहीं भटकना पड़ेगा। सांसारिक प्राणी परमात्मा की खोज तीर्थ स्थानों में करने का प्रयत्न करते है, परन्तु जम्भोजी का इस सन्दर्भ में रहस्यपूर्ण कथन है-

"अड़सठ तीरशु हिरदा भीतर बाहर लोकाचारू"[11]

इसी बात को सन्त कबीरदास जी ने भी व्यक्त किया है-

बन्दे कहाँ ढठि मैं तो तेरे पास में।
ना मैं मस्जिद, ना काबा कैलास में।।[12]

मध्यकालीन युग में पाखण्ड और आडम्बरों में उलझी हुई थी, जनता आर्थिक मानसिक सुख-शान्ति की तलाश में आपस में अशान्ति फैलाए हुए थी। हिन्दू अपने झाड़ा-फूंका में पड़े थे, मुस्लिम काजी-मौलवियों के चक्कर में पड़े थे। यानि साम्प्रदायिक भावना बड़ी प्रबल थी, हिन्दू समाज में धार्मिक भावना का अभाव था। जाम्भोजी ने अपनी वाणियों में इस प्रकार व्यक्त उन्होंने उस समय के आडम्बरकारी-पाखण्डी साधुओं को भी पथ-प्रदर्शन किया है, ताकि वो भोली-भाली, विश्वास करनेवाली जनता को भ्रमित ना करे। साधु-सन्तों का कार्य समाज की जनता को शान्ति और सत्य का सन्देश देने का होता है, बाकि धार्मिक माध्यम से जनता, आस्था के माध्यम से बहुत सीखती है, विश्वास रखती है और साधु-सन्तों को जनता का विश्वास और आस्था को मजबूत करते हुए आपसी प्रेम, समाजकल्याण राष्ट्रहित की भावना का सन्देश देना चाहिए। उन्होंने तत्कालीन भ्रमित साधुओं का भी पथ-प्रदर्शन किया और कहा-

"पार ब्रह्म की सुध न जाणी,
ते नागे जोग न पायो।"[13]

इस युग में पशु-बलि दी जाती थी, बाकि पशुओं की हिंसा होती थी। जिसका विरोध समाज-सुधारक सन्तों ने अपनी वाणियों में सूब किया, कबीरदास जी ने ऐसे लोगों को खूब फटकार लगाई। कुछ पाखण्डी साधु-सन्त पशु की सम्पम्नन किया करते थे। जम्भोजी दिग्भ्रमित हिन्दु, पाखण्डी साधुओं को फटकारते थे तो कभी मुसलमानों मुल्लाओं और काजियों की भी भर्तस्ना करते थे-

"सुणरे काजी सुणरे मुल्ला सुणरे
बकर कसाई।"[14]

जम्भोजी का मत सभी जीवों को एक समान समझना या, सभी में जीवात्मा है, सभी जीव परमात्मा का परमात्मा यानि ऊपरवाले का अंश है।

गुरु जम्भोजी की दशष्टि में मानव जीवन केवल भगवान की भक्ति करके भवसागर से मुक्ति प्राप्त करने के लिए हुआ है। यह अज्ञानी पुरूष तीन अवस्थाओं में बँधा हुआ है। इस मानव योनि में भी यह भगवान विष्णु की भक्ति नहीं करता। यह बहुत बड़ी हानि है। मानव जीवन क्षणभंगुर है। जीवन का समय निरन्तर घटता जाता है। इस सन्दर्भ में जम्भोजी मानव को सावधान करते हुए कहते हैं - अहनिश आव घटंती जावै, तेरे श्वासभी कास वारूं।" इसी सन्दर्भ में सन्त कबीर ने भी कहा है -पानी केरा बुदबुदा अस मानस की जात। देखत ही छिप जाएगा ज्यों तारा प्रभात।

मानव अज्ञान से ओतप्रोत है। वह जीवन के उद्देश्य से भटक गया है। जम्भोजी ने जीवन के मूल मन्त्र को अपनी वाणी में इस प्रकार व्यक्त किया है - **विष्णु विष्णु भण अजर जरीजै, यह जीवन का मूलूं।।**'' सच्चे ज्ञान और अक्षर ज्ञान में अन्तर है। व्यक्ति हो या समाज दया-धर्म बहुत जरूरी है। अन्यथा समाज में वि तियां, विसंगतियां और अराजकता उत्पन्न हो जाएँगी। जैसे आजकल समाज में भ्रष्टाचार और अराजकता का बोलबाला है। जाम्भोजी ने इस भाव को अभिव्यक्त करते हुए लिखा है-**जां जां दया न धर्मूं, तां तां बिकरम कर्मूं।**

जैसा कर्म करोगे वैसा ही फल मिलेगा। उन्होंने खेती को उत्तम बताया है। वर्षा के जल को महत्त्व प्रदान किया है। उस युग में अनेक प्रकार के गुरु होते थे। सतगुरु होना बड़ा कठिन था। उन्होंने सतगुरु की महिमा बताई, जो समाज के लिए बड़ी हितकारी है। **सतगुरु मिलियो सतपंथ बताओ, भ्रान्त चुकाई, मरणे बहु उपकारी करै।** इसी सन्दर्भ में आधुनिक सन्त ब्रह्मानन्द सरस्वती ने भी कहा है-**यह तन विषय की बेल है, गुरु अमश्त की खान। तन-मन-धन दिये गुरु मिले, फिर भी सस्ता जान।।**[15]

जाम्भोजी का महत्त्वपूर्ण युगबोध था कि उच्च कुल और जाति में जन्म लेने से कोई बड़ा नहीं होता। सुकर्म से व्यक्ति बड़ा होता है-**उत्तम कुली का उत्तम न होयबा, कारण किरिया सारूं।।**[16] मनुष्य का आचरण ही प्रधान होता है। कोरे उपदेश नहीं। जाम्भोजी आचरण को प्रधान मानते हुए लिखते हैं-पहलै किरिया आप कमाईए, तो औरा न फरमाइए। तुलसीदास ने भी कहा है-**पर उपदेश कुशल बहुतेरे। जो न आचरहे ते नर फक्केरे।।**[17] स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती ने भी लिखा है-बदल दे सारी दुनिया को बदलना ही तेरा काम है। सबसे पहले आप बदल जा इसी में तेरा नाम है।[18]

जाम्भोजी ने भगवान श्रीकृष्ण जी की लीलाओं का अनेक स्थानों पर वर्णन किया है-**जां जां बाद बिबादी अति अहंकारी, लबद सबादी कृष्ण चरित बिन नाहिं उतरिबां पारूं।।** उन्होंने सत्संग को भवसागर की नौका कहा है-**उत्तम रंग सुरंगू, उत्तम संग सुरगूं लंग सुलंगू।**[19] सत्संग की महिमा और कुसंग की हानि का वर्णन प्राचीनकाल से ही होता आ रहा है। आज समाज में सत्संग की अपेक्षा कुसंग का बोलबाला है। समाज में कलह, हिंसा, भ्रष्टाचार और अशान्ति व्याप्त है। गुरु शिष्य परम्परा वैदिककालीन है। गुरु कल्याण पथ का प्रदर्शक है और निगुरा भटकता है।

उस युग में नाथ सम्प्रदाय में अनेक प्रकार की भ्रान्त धारणाएँ फैली हुई थी। योग साधना के स्थान पर अन्य साधनाएँ प्रचलित थी। जाम्भोजी ने उनको भी सन्मार्ग प्रदान किया। उन्होंने दान की महिमा का भी वर्णन किया है, क्योंकि कलियुग में दान को धर्म का चौथा चरण माना गया है। दान सुपात्र को देना चाहिए, कुपात्र को नहीं। बीज उपजाऊ धरती में बोने चाहिए, बंजर भूमि में नहीं, तभी अच्छी फसल होती है-**दान सुपाते बीज सुखेते, अमश्त फूल फलीजैं।** उन्हें पशुपालन के अतिरिक्त खेती बाड़ी का भी बड़ा बोध था। इसलिए अनेक प्रतीक कृषि व कृषक वर्ग से सम्बन्धित है। समाज के अपराधों के प्रति भी उनका बोध था। उन्होंने परोपकार को बड़ा महत्त्व प्रदान किया है। सांसारिक प्राणी राग-रंग और भोग विलास में ही प्रसन्न रहते हैं। जाम्भोजी राज महलों, मन्दिर, मठों में निवास नहीं करते थे, वे तो प्र ति की गोद में आनन्द मग्न रहकर लोककल्याण करते थे-हरी कंकहड़ी मंडप मैड़ी, जहाँ हमारा बासा।। उनके प्रकृति प्रेम और विश्व पर्यावरण का अनुपम उदाहरण है।

जाम्भोजी को कलियुग का भी अद्भुत बोध था। उन्होंने भगवान विष्णु की **भक्ति** पर विशेष बल दिया है और मनुष्य जीवन को रत्न के समान अनमोल माना है। भगवान की भक्ति से सभी भय मिट जाते हैं-**विष्णु विष्णु तू भणरे प्राणी पैंके लाख उपाजूं। रतन काया बैकुंठे बासो, तेरा जरा मरण भय आजू।।**[20]

निष्कर्ष

सन्त जाम्भोजी के विचार, वाणियाँ आज भी समाज को सकारात्मकता और ऊर्जा भरी दिशा व दशा देकर मार्गदर्शक बनती है, ताकि जनकल्याण हो। जो सदैव ही विश्व में प्रासंगिक बनी रहेगी। मानव आज भौतिकवादी, विज्ञानवादी घोर आधुनिकतावादी और स्वार्थसिद्धि वादी होता चला जा रहा है, जो शारीरिक सुख-सुविधाओं, आराम का भोग, तो भोग रहा है, किन्तु उसकी मानसिक सुख-शान्ति लुप्त होती जा रही हूँ। मानव सुख-शान्ति और सन्तुष्टि के लिए सदैव सन्तों की वाणियों और विचारधाराओं ने समाज का कल्याण किया है। वैश्वीकरण के इस दौर में भी सन्तों के विचार और विचारधारा लोक-कल्याण का सफल कार्य करती है। मध्यकालीन सन्त गुरु जम्भोजी ने लोक कल्याण, लोकहित, जीवहित, प्रकृति हित के लिए अपनी वाणियों से विश्व को जागृत किया है, जिनकी वाणियों की गूंज पूरे विश्व को सन्देश देती है।

संदर्भ सूची :

1. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, उत्तरी भारत सन्त परम्परा, पृष्ठ-4
2. डॉ. कमल सुनश्त वाजपेयी, मेरी मातृभमि मेरा गान, पृ-64
3. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, उत्तरी भारत सन्त परम्परा, पृ-5
4. आचार्य मुरारी पाण्डे, संस्कृति एक सफर, पृ-52
5. डॉ. राजदेव सिंह, सन्तों की सहज साधना, पृ-21
6. टीकाकार आचार्य कृष्णनन्द, शब्दावली जम्भसाभर, पृष्ठ-15
7. वही, पृ-17
8. वही, पृ-18
9. स्वामी रामानन्द गिरि, जम्भसार, सबद-106
10. परमानन्द जी का पोथा, जम्भसागर, सबद-122
11. टीकाकार आचार्य कृष्णानन्द, शब्दावली, जम्भसागर, पृ-21
12. वही, पृष्ठ-24
13. डॉ. श्यामसुन्दर दास, कबीर ग्रन्थावली
14. टीकाकार आचार्य कृष्णानन्द, शब्दावली, जय सागर, पृ-37
15. श्री सतगुरु ब्रह्मानन्द पचासा, पद 446, पृ-47
16. टीकाकार आचार्य कृष्णानन्द, शब्दावली, जम्भ सागर पृ-79
17. गोस्वामी तुलसीदास, रामचरित मानस, पृ.
18. श्री सतगुरु ब्रह्मानन्द पचाला, पद 229, पृ-26
19. टीकाकार आचार्य कृष्णानन्द, शब्दावली, जम्भसागर पृ-105
20. वही, 324

❐❐❐

डी-25, 74 बंगलो, तुलसीनगर, आनंद विहार स्कूल के पीछे, भोपाल, मध्य प्रदेश, पिन-462003, मो. 9424684608

कुषाण कला में केश विन्यासः विदेशी प्रभाव का पुनर्विलोकन

—डॉ. मीना सिंह

भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश अर्थात् कुषाण कालीन गान्धार कला केन्द्र से जो मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं वे विदेशी और भारतीय लक्षणों से युक्त हैं। प्राप्त मूर्तियों में केश सज्जा के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वे विविध प्रकार यथा-लम्बे केश, 'विग' जैसा आभास देने वाले घुँघराले बाल, शिखण्डक केश, जटाजूट, गांठ युक्त केश आदि रखते थे।

कुषाण कालीन साहित्यिक साक्ष्यों, यथा-**दिव्यावदान, मिलिन्दपन्हो, बुद्धचरित** एवं भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में तत्कालीन स्त्री-पुरूष के केश-विन्यास एवं शिराभूषणों की पर्याप्त चर्चा है।

कुषाण काल आते-आते केश-विन्यास लटों, गुच्छों तथा शिखारूप में प्रचलित होने के साथ-साथ सुश्रुत द्वारा चौबीस कलाओं में परिगणित किया जा चुका था। साथ ही भारत के विभिन्न प्रदेशों की स्त्रियों की पहचान उनकी केश-सज्जा के आधार पर सम्भव था।

कुषाण काल आते-आते स्त्रियों के केश संरचना में विकास दिखाई देता है। प्रारम्भिक केश-संरचना के साथ-साथ कुछ नये केश-विन्यास का उद्घाटन भी इस काल में देखने को मिलता है। भरत के नाट्यशास्त्र[1]। में देश के विभिन्न भाग में प्रचलित केश-विन्यास की शैली का वर्णन किया गया है। उल्लेख है कि मालवा की नवयुवतियाँ घुँघराले केश रखती थी[2]। आभीर युवतियों के विषय में चर्चा है कि वे दो वेंणिया धारण करती थीं और उसे कभी-कभी अपने सिर पर लपेट लेती थीं[3]। पूर्वोत्तर देश की स्त्रियाँ 'मयूरपिच्छ' के समान उठी हुई केश-रचना करती थीं। दक्षिण भारत की महिलाओं की केश-सज्जा 'कुम्भीपदक' (गोल-जूड़े) कहलाती थीं। तमिल युवतियाँ पाँच वेंणियाँ बनाती थीं। अश्वघोष ने सौन्दरानन्दम्[4] में एक विशेष प्रकार के केश-विन्यास का वर्णन किया है जिसमें झीनें श्वेत रेशमी वस्त्र में से कोकिल के समान केशपाष झाँकता है। इसे 'शुक्लकांषुकाट्टाल' शैली की केश रचना कहा गया है। जिसका उदाहरण-मथुरा, अमरावती यहाँ तक की पश्चिमोत्तर प्रदेश के कला केन्द्रों की भारतीय प्रभाव की मूर्तियों में देखा जा सकता है।

दक्षिण भारत की स्त्रियाँ प्राचीन काल से ही अपने सुन्दर लम्बे घने केशों के लिए प्रसिद्ध हैं जो तत्कालीन युग में भी थी।

दक्षिण की स्त्रियाँ अपने केश को विभिन्न प्रकार से सुवासित करती थीं। शिल्लपाद्दिकारम् की नायिका माधवी द्वारा अपने काले और पुष्पों के समान कोमल केशों को जल में भीगे हुए दस प्रकार के पौष्टिक पदार्थो, पाँच प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों और बत्तीस प्रकार के जड़ी-बूटियों से बने सुगन्धित जल से धोने एवं तत्पश्चात् केशों को सुगन्धित धूप से सुखाकर भृगकस्तूरी का लेप चढ़ाने और उससे सुवासित करने का उल्लेख है[5]।

केशों को संवारने की जो एक अन्य प्रचलित शैली थी, वह एक वेंणी प्रकार की केश-रचना थी[6]। कुछ उदाहरणों में दो वेंणियां सिर के एक तरफ झूलती दिखाई गयी हैं। ऐसे उदाहरणों में गान्धार की मूर्तियों के समान पुष्पों की माला सिर के चारों तरफ लपेटी गयी है।

भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश अर्थात् कुषाण कालीन गान्धार कला केन्द्र से जो मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं वे विदेशी और भारतीय लक्षणों से युक्त हैं। प्राप्त मूर्तियों में केश सज्जा के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वे विविध प्रकार यथा-लम्बे केश, **'विग'** जैसा आभास देने वाले घुँघराले बाल, शिखण्डक केश, जटाजूट, गांठ युक्त केश आदि रखते थे। कुछ आ तियों में पुरुषों के घुँघराले बाल ऊपर उठे जो देखने में **'विग'** के स श दिखाई देता है। इस प्रकार की केश विन्यास हेलेनिस्टिक सभ्यता में सामान्य रूप से दिखाई देती है। गान्धार से प्राप्त एक मूर्ति में पुरुष के कन्धों तक लटके केश सीमन्त के दोनों तरफ संवारे गये हैं[7]। यहीं से प्राप्त ब्रह्मा की मूर्ति में भी केश को आगे से पीछे तक संवारा गया है। कुछ मूर्तियों में लम्बे केश में कुछ दूरी पर गांठ लगाकर उसे माथे के चारों तरफ लपेटा गया है जो सम्भवत: ग्रीकी केश विन्यास था। गान्धार से प्राप्त राजकुमार सिद्धार्थ का केश सिर के ऊपर अंडे (Egg-Shapted Ball) की आकृति का निर्मित है जिसे **'शिखण्ड'** शैली कहा गया है।

मथुरा से प्राप्त मूर्तियों में केश-सज्जा के विभिन्न शैलियों के दर्शन होते हैं। एक पुरुष प्रतिमा में केश को साधारण ढंग से आगे से पीछे की तरफ बिना किसी विभाजन अथवा सीमन्त के संवारा गया है[8]। मथुरा से प्राप्त एक उपासक का केश विन्यास कुछ भिन्न प्रकार का है जिसमें केश को कनपटी से उठाकर सिर के मध्य ले जाया गया है और माथे पर गांठ आ ति की सज्जा की गयी है। कुछ विदेशी प्रभाव से युक्त मथुरा से प्राप्त मूर्तियों में घुँघराले केश प्रदर्शित हैं। एक पुरुष मूर्ति में छोटे घुँघराले केश प्रदर्शित है। एक अन्य इसी प्रकार की दूसरी मूर्ति में घुँघराले केश को आगे की तरफ माथे पर एक आभूषण से अथवा पीछे से लपेट लिया गया है। इस प्रकार का केश विन्यास नागार्जुनकोण्डा एवं गान्धार की मूर्तियों में भी प्रदर्शित है, जो कालान्तर में गुप्तकाल आते-आते काफी प्रचलित हो गया था।

पुरुषों में मुंछ तथा दाढ़ी रखने की भी प्रथा थी[9]। नाट्यशास्त्र में चार प्रकार की दाढ़ियों-शुक्ल, श्याम, विचित्र और रोमश का उल्लेख हुआ है। शुक्ल का अर्थ शुद्ध माना गया है। संन्यासियों, मंत्रियों, पुरोहितों तथा मध्यम श्रेणी के व्यक्तियों की दाढ़ी साफ बनी होती थी। चित्रों और मूर्तियों में इस श्रेणी के लोगों में ऐसी ही दाढ़ी मिलती है। श्याम दाढ़ी कुमारों को होती थी। राजा, श्रृंगारी, नागरक और तरूण राजपुरुष विचित्र दाढ़ी रखते थे। असंस्कृत दाढ़ी को रोमश दाढ़ी कहते थे। बच्चों के केश बहुधा घूँघरदार रहते थे किन्तु कुछ उदाहरण में उनके केश कटे हुए भी हैं।

कुषाण कालीन शिल्प और साहित्य में हमें स्त्री-पुरुषों के शीर्षभूषणों के विविध प्रकार दिखाई देते हैं। जिसको अध्ययन की सुविधा हेतु कुषाणयुगीन दो प्रमुख कला शैलियों-मथुरा एवं गान्धार कला केन्द्रों से प्राप्त शिरोभूषणों का भिन्न-भिन्न अध्ययन करना अपेक्षित है-

मथुरा शिल्प में स्त्रियों के जिन शिरोभूषणों का अंकन मुख्य रूप से हुआ है-

(1) ललाटिका (मांगटीका)

(2) रत्नजाल

(3) ईरानी प्रकार का आयताकार मुकुट

(4) शिरोबन्ध

सिर से चिपकी टोपी एवं मुकूट के भी कुछ अंकन स्त्री आकृतियों में प्राप्त होते हैं। यह उल्लेखनीय है कि साहित्यिक साक्ष्यों में स्त्रियों के संदर्भ में मुकुट के उल्लेख अप्राप्य हैं। लखनऊ संग्रहालय में सुरक्षित एक शालभंजिका के मूर्ति[9] में चौकोर मुकुट अकित है, जिसमें पूरी सतह को तिर्यक रेखाओं से अलंकृत किया गया है।

मथुरा से प्राप्त कुछ स्त्री आकृतियों में शक स्त्रियों का अंकन भी है। यहां की एक वेदिका स्तम्भ पर दीपदान लेकर खड़ी शक स्त्री के केशों को पीठ पर खुला अंकित किया गया है। ललाट के चारों तरफ केशों को यथास्थान रखने के लिये मोटी, गोलाई में उभरी बद्धी का प्रयोग हुआ है। इस बद्धी या केशबन्ध (Fillet) के ऊपर दुहरी खड़ी रेखाओं का अंकन हुआ है। गान्धार कला से प्रभावित कुछ स्त्री आ तियों में भी इस प्रकार के केशबन्ध अंकित मिलते हैं। ये सभी उदाहरण इस प्रकार के आभूषण की विदेशी उत्पत्ति इंगित करते हैं।

मथुरा से प्राप्त कुषाणयुगीन पुरुषा तियों में हमें अनेक प्रकार के शिरोभूषण दिखाई पड़ते हैं, जो निम्नलिखित हैं।

(1) ईरानी आकर के चौकोर टोपीनुमा मुकुट

(2) तिकोनी टोपी के आकार के मुकुट

(3) चिपटी टोपी आकार के मुकुट

(4) पदक युक्त उष्णीष अथवा अर्द्धमुकुट

(5) शिरोबन्ध

ईरानी आकर के चौकोर टोपीनुमां मुकुट मथुरा की विष्णु, पंचेन्द्र व इन्द्र आदि की प्रतिमाओं में अंकित मिलते हैं। इन चौकोर प्रकार के मुकुट में मध्य में अर्द्धचन्द्राकार पदक, पुष्पपदक संलग्न मिलते हैं, जिनसे मुकुट की शोभा द्विगुणित होती है। इन मुकुटों पर स्वर्णिम तारों व रत्नों से सज्जा की गयी है।

मथुरा शिल्प में कुछ प्रतिमाओं में शक- कुषाण जातियों की 'कुलाह-टोपी' का अंकन हुआ है। यथा-मथुरा से प्राप्त एक पुरुष मस्तक में नुकीली टोपी का अंकन है। इस टोपी के मध्य में एक लम्बी धातु पट्टिका लगी है और इस पट्टिका पर मणियाँ या मनके जड़ित हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि कुषाण काल में उष्णीष को अनेक आकार के रत्नजटित धातु पदकों से सज्जित

करने की परम्परा का प्रारम्भ हुआ। गुप्त युग में हम देखते हैं कि तीन-चार शीर्ष पट्टों को परस्पर संलग्न करके मुकुट बनाये जाने लगे, जो पूर्णतया धातु एवं रत्नों से निर्मित होते थे।

गान्धार शिल्प में स्त्रियों ने निम्न प्रकार के शिरोभूषण धारण कर रखे हैं-

(1) रत्नजटित धातुमय मस्तक पट्टिका

(2) हेममणि व मुक्ता लड़ियों से निर्मित किरीट

(3) ललाटिका

(4) मुक्ता व हेममणि, रत्नों से निर्मित मस्तक पट्टिका

रत्नजटित मस्तक पट्टिका गान्धार शिल्प में स्त्री-पुरुष दोनों ने धारण की है। इस प्रकार की मस्तक पट्टिका को धातु की पतली पट्टिका द्वारा निर्मित किया जाता था, जिस पर रत्नों की जड़ावट होती थी। यथा- अमोरीनी (Amorini) व एक स्त्री की मस्तक पट्टिका में दो पंक्तियों की रत्नों की जड़ावट है। एक श्य में मल्ल के प्रधान ने, एक अन्य दृश्य में राजकुमार सिद्धार्थ ने मस्तक पट्टिका पहनी है। इसमें एक पंक्ति में रत्नों की जड़ावट है[10]।

गांधार शिल्प के अन्तर्गत पुरुषों ने अपने मस्तक पर '**शीर्ष-पट्टिका**' धारण की है। जिसका निर्माण अत्यन्त पतली धातु पट्टिका द्वारा होता था। जिस पर रत्नों की जड़ावट एक. दो या तीन पंक्तियों में मिलती है। 'बुद्ध का कपिलवस्तु में प्रकट होना' नामक दृश्य राजकुमार सिद्धार्थ ने मस्तक पट्टिका पहनी है। इसमें एक पंक्ति में रत्नों की जड़ावट है।

इसी प्रकार एक दृश्य में मल्ल के प्रधान ने एक अन्य दृश्य में उपासक या दानदाता ने तथा बोधिसत्व सिद्धार्थ की मस्तक पट्टिका में दो पंक्ति में रत्नों की जड़ावट मिलती है[11]। मैत्रेय और बोधिसत्व सिद्धार्थ की प्रतिमाओं में अंकित मस्तक पट्टिकाओं में तीन पंक्तियों में रत्नों की जड़ावट दिखती है। कुषाणकालीन साहित्यिक साक्ष्यों में भी तत्कालीन समाज में स्त्री-पुरुषों द्वारा धारण किये जाने वाले आभूषणों का वर्णन है।

'**नाट्यशास्त्र**' में पुरुषों की योनियों के आधार के अनुसार उनके शिराभूषणों का वर्णन है। उदाहरणार्थ -देव, गन्धर्व, यक्षादि के मुकुट को 'पार्श्व मौलि' कहा गया है। उत्तम श्रेणी के शिरोभूषण को 'शीर्षमौलि' कहा गया है। राजाओं का शिरोभूषण 'मुकुट' कहलाता था। विद्याधर, चारण आदि 'केशमुकुट' धारण करते थे। अमात्य, श्रेष्ठ, कन्चुक आदि 'वेष्ठन', 'बन्धपट्ट' आदि का प्रयोग करते थे। जिसका उदाहरण - मथुरा शिल्प से प्राप्त धातु पदक लगे हुए मुकुट हैं। **नाट्यशास्त्र** में स्त्रियों के शिरोभूषण के अनेक नाम प्राप्त होते हैं। इनमें 'शिखापाश', 'शिखाजाल', 'पिण्डपात्र', 'शिखिपात' तथा 'वेंणीगुच्छ' आदि वर्णित है[12]। इनमें से अधिकांश नाम यथा-शिखापाश, शिखाजाल, मुक्ताजाल, शीर्षजाल, शिखापात्र आदि रत्नों एवं मुक्ताओं की लड़ियों से निर्मित आभूषण थे जिनको सिर पर जूड़े या वेंणी में अनेक प्रकार से लगाया जाता था। मथुरा शिल्प में अंकित अधिकांश मूर्तियों में इस प्रकार की मुक्ता लड़ियों से केश-सज्जा मिलती है। मुक्ताजाल प्रकार के आभूषण भारत वर्ष में अत्यन्त प्राचीन काल से चले आ रहे थे। सूत्र साहित्य में 'जालम' का प्रयोग शिरोभूषण के रूप में हुआ है।

'पिण्डपात्र' नामक आभूषण कुषाणयुगीन स्त्रियों की विशिष्ट केश-संरचना की आवश्यकतापूर्ति हेतु कल्पित नवीन आभूषण माना जा सकता है, क्योंकि इसका उल्लेख न तो कुषाणकाल के पहले और न ही बाद के किसी ग्रन्थ में प्राप्त होता है। कुषाणयुगीन शिल्प में स्त्रियों के सिर पर सामने की ओर 'पिण्ड' सदृश छोटा जूड़ा अंकित मिलता है। यह केशसज्जा न तो शुंगकाल में दिखती है और न ही उत्तरोतर काल में। कुषाण शिल्पगत अनेक साक्ष्यों में इस प्रकार के जूड़े के ऊपर वृत्ताकार उभरा हुआ अलंकरण अंकित मिलता है। इसे हम पिण्डपात्र के रूप में वर्णित कर सकते हैं। इसी प्रकार '**चूड़ामणि- मकरिका**' से तात्पर्य मकरमुखों से अलं त पदक से रहा होगा, जिसके मध्य में चूड़ामणि या बहुमूल्य वृहदाकार मणि संलग्न रहती थी। नाट्यशास्त्र से '**आवर्तललाटिका**' और '**ललाट तिलक**' का भी उल्लेख मिलता है[13]। मस्तक पर स्वतंत्ररूपेण तिलक की तरह पहना जाने वाला आभूषण '**आवर्तललाटिका**' से समीकरणीय है। इस साक्ष्य के आलोक में शुंग-सातवाहन युगीन साक्ष्यों में अंकित ललाट के आभूषण को 'ललाटतिलक' कह सकते हैं, क्योंकि उनमें जंजीर या सूत्र का अंकन अप्राप्य है। पुष्पा ति अभिप्राय में निर्मित ललाटिका को ही नाट्यशास्त्र में '**कुसुमानुकृति**' कहा गया है। गांधार शिल्प में हारिती व शालवृक्ष के नीचे खड़ी स्त्री ने इसी प्रकार की कुसुमानु ति ललाटिका पहनी है। प्राकृत भाषा के जैन-ग्रन्थ '**अंग-विज्जा**' में आभूषणों की दीर्घसूची प्राप्त होती है। शिरोभूषण के प्रसंग में किरीट, मुकुट आदि पुरुषों के शिरोभूषण उल्लिखित हैं। इसके अतिरिक्त 'गरूढ़क', 'मगरक', 'वृषभक', 'सिंहक' 'चक्रवाक मिथुन' आदि आभूषण मुकुट की विशिष्ट सज्जा के रूप में प्रयुक्त होते थे। वासुदेवशरण अग्रवाल ने इनकी व्याख्या करते हुए लिखा है- ''सिंहक वह सुन्दर आभूषण था, जिसमें सिंह की आकृति बनी रहती थी''। सिंहमुख से मोतियों के झुग्गे लटकते हुए दिखाये जाते कुछ मूर्तियों में सिंह मुख युक्त मुकुट मिलते हैं। गरूड़क, मगरक भी मथुरा कला में पहचाने जा सकते हैं। कुछ मुकुटों में गरूड़ की आकृति वाला आभूषण पाया जाता हैं। दो मकरमुखों की आ तियों को मिलाकर 'मगरक' नामक आभूषण बनते थे, इनके मुख से मुक्ताजाल लटकते हुए दिखाये जाते थे। इसी प्रकार बैल की आ ति वाला 'वृषभक', हाथी की आकृति वाला 'हत्थिक' एवं चक्रवाक मिथुन की आकृति वाला 'चक्रकमिथुनक' नामक आभूषण होता था।

अंगविज्जा में स्त्रियों के आभूषण में 'मत्थक-कण्टक' 'पिंडामासक' 'तिलक' 'मुंहफलक' 'विसेसक' आदि का वर्णन है। इनका समीकरण हम बिन्दी सदृश्य आभूषणों से कर सकते हैं। नाट्यशास्त्र में भी बिन्दी के लिये 'ललाट तिलक' का प्रयोग किया गया है। आचार्य वासुदेवशरण अग्रवाल ने 'पदिविणद्धक' एवं 'सीसावक' को शिरोभूषण माना है, किन्तु इन दोनों का स्वरूप कैसा था, इस विषय में वे पूर्ण मौन हैं। 'मत्थकण्टक' केशबन्ध से समीकरणीय है जिसमें कण्टक सदृश अलंकरण लगा होता था। स्त्रियाँ 'मकरिका' नामक आभूषण पहनती थी जो शिरोभूषण में संयुक्त होता था। इस प्रकार अंगविज्जा में तत्कालीन जनसामान्य में प्रचलित आभूषणों के नाम प्राप्त होते हैं, क्योंकि अंगविज्जा प्राकृत भाषा में उल्लिखित ग्रन्थ है और इसका सम्बन्ध समाज के सभी वर्गो से था। अत: इस ग्रन्थ में उल्लिखित आभूषण जनसामान्य में प्रचलित आभूषण माने जा सकते हैं।

अश्वघोष के ग्रन्थों में भी कुषाणयुगीन (मुख्यत: राजवर्ग एवं नगर के) आभूषणों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। **बुद्धचरित** में सिद्धार्थ के महाभिनिष्क्रमण के प्रसंग में उनके द्वारा सारथी छन्दक को शिरोभूषण उतार कर दिये जाने का वर्णन आया है, ''सिद्धार्थ ने सर्वप्रथम अपने से देदीप्यमान रत्न निकालकर 'छन्दक' को दे दिया। तदुपरान्त रत्नजटित तलवार मुकुट लेकर बहुअलंकृत मुकुट को उसके अन्दर स्थित केश के साथ काटकर फेंक दिया जिससे उसका बहुमूल्य रेशमी वस्त्र हवा में उड़ने लगा। छन्दक द्वारा इस वश्तान्त को सुनने के उपरान्त गौतमी ने शोक सन्तप्त होकर कहा कि सिद्धार्थ के जो केश राजाओं के योग्य मौलि से परिवेष्ठित थे उन केशों को सिद्धार्थ ने काट कर भूमि पर फेंक दिया''। यह विवरण सिद्ध करता है कि मौलि व मुकुट पर्यायवाची शब्द थे। बुद्धचरित से विदित होता है कि मौलि व मुकुट दोनों को ही मुक्तामालाओं, नानाविध रत्नों से सज्जित किया जाता था। बुद्धचरित में राजाओं के प्रसंग में ही 'मणि प्रदीपोज्वल चित्र मौलय:' का उल्लेख आया है। इन सभी उदाहरणों से मौलि की समानता मुकुट के साथ स्थापित की जा सकती है। **सौन्दरानन्द** नामक ग्रंथ में मुकुट एवं मौलि दोनों का उल्लेख हुआ है।

इस प्रकार **नाट्यशास्त्र,** अश्वघोष के ग्रन्थ, **दिव्यावदान** एवं **अंगविज्जा** के सम्मिलित साक्ष्य यह स्पष्ट करते हैं कि कुषाणकालीन शिल्प में अंकित शिरोभूषण समाज में प्रचलित वास्तविक शिरोभूषणों की अनु ति पर अंकित थे जिस पर विदेषी के प्रभाव के साथ-साथ देषी सामन्जस्य भी दिखाई देता है।

संदर्भ सूची :

1. **नाट्यशास्त्र**, 23/148.
2. **नाट्यशास्त्र**, 23/63.
3. **नाट्यशास्त्र**, 23/64.
4. **सौन्दरानन्दम**, 7/7.
5. **शिल्लपादिदकारम्**, पृ. 95
6. फर्ग्युसन, जे. **ट्री एण्ड सर्पेन्ट वर्शिप**, लन्दन, 1873. फ. 11, आ. 2.
7. मार्शल, जॉन, **द बुद्धिस्ट आर्ट ऑफ गान्धार**, कैम्ब्रिज, 1960, फ. 38, चि. 68.
8. स्मिथ, ए, विसेंट, **द जैन स्तूप एण्ड अदर एन्टीक्वीटीज ऑफ मथुरा**, फ. ग्ब्ग.
9. मार्शल, जॉन, **दि स्तूपाज एण्ड मोनास्ट्रिज एट जौलिया**, आ. 41, 96.
10. मथुरा संग्रहालय, सं.-एम-4.
11. मार्शल, जॉन द बुद्धिस्ट आर्ट ऑफ गान्धार, फ. 84, चि. 119.
12. **नाट्यशास्त्र** (सम्पा. पं. केदारनाथ), अध्याय-21, पृ. 344,
    देवगंधर्वयक्षाणां पन्नगानां सरक्षसाम्।
    कर्तव्या नैकविहिटा मुकुटा: पार्श्व मौलिन:।।
13. **नाट्यशास्त्र**, तत्रैव, अध्याय 21, पृ. 332.
    शिखापाश: शिखाजालं पिण्डपात्रं तमैव च।
    चूड़ामणिर्मकरिका मुक्ताजालं गवाक्षकम्।।

❑❑❑

सहायक क्षेत्रीय निदेशक (वरिष्ठ वेतनमान), इग्नू क्षेत्रीय केंद्र, दिल्ली-2 आ.ए. .ए.हॉउस, 17-बी, इंद्रप्रस्थ स्टेट, महात्मा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-110002

गांधी का ईश्वरीय दर्शन

—राजीव गुप्ता

दर्शनशास्त्रियों का मानना है कि दर्शनशास्त्र की शुरूआत आश्चर्य के भाव से होती है। मनुष्य, ईश्वर, विश्व और अपनी सत्ता पर आश्चर्य करता है। प्राचीन यूनानी चिंतकों के लिए दर्शन मुख्य रूप से अपने चारों ओर विद्यमान ब्रह्मांडीय सत्ताओं के बारें में आश्चर्य प्रकट करना था। मध्यकालीन युग में दर्शन का मुख्य लक्ष्य ईश्वर हो गया जबकि आधुनिक युग के प्रमुख भारतीय दार्शनिक 'गांधी ने सत्य को ही ईश्वर कहा'।

सार-संक्षेप

प्रकृति पारिस्थितिकी का सिद्धांत सृष्टि के सिद्धांत से बहुत अधिक प्रभावित है। इस सिद्धांत के अनुसार, विश्व का प्रत्येक तत्व, वस्तु और जीव की सृष्टि एक ही परमात्मा द्वारा बनाई हुई है और मनुष्य का प्रकृति पर कोई विशेष अधिकार नही है। भारतीय चिंतन में प्रकृति की कल्पना किसी भौतिक निर्जीव तत्व के रूप में नहीं की गई है अपितु इसे एक जीवित संसार माना गया है और मानव बहुत से जीवित प्राणियों में से एक है। भारतीय दार्शनिकों के अनुसार, बुद्धि संपन्न होने के कारण प्रकृति की सुरक्षा मनुष्य का मूल कर्तव्य है। भारतीय चिंतन यह स्पष्ट करता है कि समस्त प्रकार के जैविक या अजैविक पदार्थों में प्राण है। परस्पर सहयोग और निर्भरता पर विशेष बल दिया गया है और माना गया है कि मनुष्य का अकेला रहना संभव नही है। साथ ही यह भी माना गया है कि प्रकृति से मित्रतापूर्ण व्यवहार रखने से वह सबकी जरूरतें पूरी कर सकता है।

भारतीय दर्शन में ईश्वर की गई चर्चा को गांधी अपेक्षाकृत अधिक गूढ तरीके से न केवल वें समझते थे अपितु उन्होंने भारतीय दर्शन में ईश्वर की गई व्याख्या को विस्तारपूर्वक मानव समाज में क्रियांवित करने का प्रयास भी किया। साथ ही उन्होंने अपनी ईश्वरीय कल्पना को भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष से जोड दिया। गांधी ने प्रकृति एवं ईश्वरीय व्याख्या की व्यापकता को भलीभांति समझा तथा स्वतंत्रता पूर्व वें अपने भारत भ्रमण की यात्रा से भारत की तात्कालिक समस्या से भी अवगत हो चुके थे। परिणमात: गांधी भारतीय समाज को धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक स्तर पर जोडने की व्यापक योजना बनाकर अपने उस कार्य में लग गए। ध्यान देने योग्य है कि गांधी का उदय एक ऐसे समय में हुआ जब सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक प्रतिरोधात्मक क्रिया समाज में ब्रिटिश शासकों द्वारा तेज हो रही

थी। ऐसे समय में भारत को एक पथ प्रदर्शक की आवश्यकता थी जिसकी पूर्ति गांधी ने किया। धार्मिक स्तर पर गांधी की सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि ईसाई, मुसलमान, जैन धर्म समेत अनेक धर्मो के मतावलंबी उन्हें अपने अपने धर्म का अनुयायी मानते थे। इसी आलोक में हमें गांधी के इस चिंतन 'ईश्वर ही सत्य है' और 'सत्य ही ईश्वर है', में हुए परिवर्तन को भी समझना चाहिए। गांधी के द्वारा राजनीतिक मंच पर आने के बाद भारत में राष्ट्रीयता की एक नई चेतना आयी। एक ओर तो उससे भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष को बल मिला दूसरी ओर गांधी के आह्वान से सदियों से रूढ़ियों और बंधनों में जकड़ी भारत की जनता भी राष्ट्रीय आन्दोलन में अपनी भूमिका के प्रति सजग हुई।

प्रमुख शब्द

सत्य - अहिंसा, ईश्वरीय दर्शन, राष्ट्रीय आन्दोलन, कौमी - एकता।

भूमिका

गांधी ने राष्ट्रीय आन्दोलन को केवल अंग्रेजों से राजनीतिक मुक्ति तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि उसे सामाजिक - आर्थिक तथा धार्मिक आयाम भी दिया। 'सत्य को ईश्वर' कहकर गांधी ने भारत के सभी धर्मो के अनुयायियों को भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन से सहजतापूर्वक जोड़ दिया। गांधी ने सर्वप्रथम भारत का दौरा कर यह जाना - समझा कि भारत के अधिकांश लोग धार्मिक संकुचिता, सामाजिक कुरीतियों और आर्थिक विपन्नता में जकडे है जिसके कारण आम जनता की भागीदारी भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में नही हो पा रही थी। ऐसी विकट परिस्थिति में एक ऐसे कार्यक्रम की जरूरत थी जो स्वतंत्रता आंदोलन में जन भागीदारी तो बढ़ाये ही, साथ ही साथ वह धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक दुर्बलताओं पर भी प्रहार करे।

गांधी सत्याधारित एक अहिंसक समाज की रचना करना चाहते थे जिसके लिए कुछ रचनात्मक कार्य करना अनिवार्य था। गांधी संरचनात्मक परिवर्तन चाहते थे और इसके लिए जरूरी था कि जन - जन को राष्ट्रीय आंदोलन से जोडा जाय। परिणामत: उन्होंने भारतीय समाज के समक्ष रचनात्मक कार्यक्रम के रूप में एक नवीन कार्यक्रम को प्रस्तुत किया। गांधी द्वारा संचालित राष्ट्रीय आंदोलन का उद्देश्य केवल राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति ही नहीं वरन् एक नवीन और सभी दिशाओं में उत्थानकारी भारत का अभ्युदय भी था। उन्होंने भारतीय जनता की सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक स्थिति का गहन अध्ययन किया और अपने स्तर पर इन क्षेत्रों में उसे उन्नत करने का प्रयास किया। इस हेतु उन्होंने कई रचनात्मक कार्यक्रम चलाये, जैसे - कौमी एकता, अस्पृश्यता उन्मूलन, खादी एवं ग्रामोद्योग, आर्थिक समानता, किसान - मजदूर - विद्यार्थी उत्थान, नारी जागरण, वनवासी एवं कुष्ठ रोगी सेवा, मद्यनिषेध, प्रौढ़ एवं बुनियादी शिक्षा आदि। गांधी का मानना था कि यदि रचनात्मक कार्यक्रम को अपनाया गया तो पूर्ण स्वराज्य, जिसमें राजनीतिक स्वराज्य भी शामिल है, स्वत: आ जायेगा। असहयोग आंदोलन के दौरान गांधी ने आश्वासन दिया था कि यदि इन रचनात्मक कार्यक्रमों पर पूरी तरह अमल हुआ तो एक वर्ष के भीतर ही भारत को अंग्रेजों से आजादी मिल जायेगी। उस समय की परिस्थिति के अनुरूप गांधी का मानना था कि भारत जैसे बहुपंथी देश में साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष की सफलता देश के दो

बड़े धार्मिक समुदायों हिन्दू तथा मुस्लिम एकता पर निर्भर करती है। इसलिए गांधी शुरू से ही कौमी - एकता के लिए प्रयासरत थे और उन्हीं के सफल प्रयासों के कारण हिन्दू - मुस्लिम भारतीय स्वाधीनता आंदोलन की मुख्य धारा के करीब आते गये।

गांधी का ईश्वरीय दर्शन

दर्शनशास्त्रियों का मानना है कि दर्शनशास्त्र की शुरूआत आश्चर्य के भाव से होती है। मनुष्य, ईश्वर, विश्व और अपनी सत्ता पर आश्चर्य करता है। प्राचीन यूनानी चिंतकों के लिए दर्शन मुख्य रूप से अपने चारों ओर विद्यमान ब्रह्मांडीय सत्ताओं के बारें में आश्चर्य प्रकट करना था। मध्यकालीन युग में दर्शन का मुख्य लक्ष्य ईश्वर हो गया जबकि आधुनिक युग के प्रमुख भारतीय दार्शनिक 'गांधी ने सत्य को ही ईश्वर कहा'। गांधी के अनुसार, मनुष्य की सारी प्रवृत्तियों का केन्द्र सत्य होना चाहिए क्योंकि सत्य के बिना जीवन में किसी भी सिद्धांत या नियम का पालन करना संभव नही है। इसलिए सभी मनुष्यों को अपने - अपने ज्ञान के अनुसार सत्य का पालन करना चाहिए। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि गांधी की ईश्वरीय परिकल्पना किसी सांचे में ढालकर बनाई हुई कोई देवी-देवता की मूर्ति भर नहीं है अपितु उनके ईश्वर का अर्थ है सत्य का आचरण करते हुए जीवन जीना।

गांधी का ईश्वर न तो मूर्तियों तक सीमित था, न मंदिरों, मस्जिदों और गिरिजाघरों तक। गीता के नायक पार्थ-सारथी के अनुसार, ''उत्तम कोटि का ज्ञानी भक्त मुझ वासुदेव को सभी भूतों में देखता है'' तो गांधी भी प्रत्येक जीव में उस ईश्वर का दर्शन करते थे। उनका मानना था कि उस ईश्वर की इच्छा के बिना एक पत्ता भी नही हिलता। उन्हीं के शब्दों में, ''मेरा ईश्वर तो सत्य और प्रेम है। नीति और सदाचार ईश्वर है। निर्भयता ईश्वर है। ईश्वर अंतरात्मा ही है। वह तो नास्तिकों की नास्तिकता भी है। हम कुछ नहीं है, सिर्फ वही है और अगर हम हैं, तो हमें सदा उसके गुणों का गान करना चाहिए और उसकी इच्छानुसार चलना चहिए। आइए, उसकी वंशी की धुन पर हम नाचें। सब अच्छा ही होगा''।

'सत्य को ईश्वर' कहने के पीछे का एक प्रमुख तर्क यह भी है कि मनुष्यों के विचारों में ईश्वर एक हो सकता है, अनेक हो सकता है। साथ ही मनुष्य ईश्वरवादी, एकेश्वरवादी व सर्वेश्वरवादी भी हो सकता है परंतु सत्य तो सिर्फ 'सत्य' ही हो सकता है और उससे ऐसी विभिन्नताएं सूचित नही होती हैं। गांधी आगे कहते हैं कि 'ईश्वर' पर मनुष्य अपनी बौद्धिकता से एक बार संशय तो कर सकता है, इसका निषेध व खंडन भी कर सकता है किंतु 'सत्य' का निषेध करना किसी भी मनुष्य के लिए संभव नही है और न ही 'सत्य' का खंडन किया जा सकता है। अत: गांधी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि ईश्वर समर्थकों और ईश्वर विरोधियों के मध्य यदि कोई एकता बन सकती है व उनके विचारों पर यदि कोई सहमति बन सकती है तो वह 'सत्य' ही हो सकता है क्योंकि नैतिकता के मूल में सत्य विद्यमान है और सभी मानवीय मूल्य सत्य से उत्पन्न हुए हैं। अर्थात् सत्य ही वह धुरी है जिससे पूरी सृष्टि संचालित होती है। गांधी बहुत ही सहजता से कहते थे कि यदि किसी निरीश्वरवादी मनुष्य से कहा जाता था कि वह 'ईश्वर' से डरता है तो वह लडने पर उतारू हो जाता था परंतु यदि उसी निरीश्वरवादी मनुष्य से कहा जाता था कि वह 'सत्य'

से डरता है तो वह उसे सहजता पूर्वक स्वीकार कर लेता था। सत्य की इसी विशिष्टता से गांधी इसे प्राथमिक बना देते है। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि गांधी ने अपने इस वाक्य 'ईश्वर ही सत्य है' को बहुत चिंतन-मनन करके 'सत्य ही ईश्वर है' से परिवर्तित कर दिया। हालांकि इस परिवर्तन में गांधी को समय तो अवश्य लगा लेकिन अपने इस वाक्य-परिवर्तन मात्र से उन्होंने समाज के अनेक बुद्धिजीवियों व ईश्वर की विभिन्न धाराओं में विश्वास रखने वाले व्यक्तियों को भी अपने साथ जोडकर उन्हें अपने ढंग से भारत के राष्ट्रवाद की धारा से बहुत ही सहजता के साथ जोड दिया।

गांधी यह मानते थे कि ब्रह्माण्ड में एक व्यवस्था है। दूसरे शब्दों में, ब्राह्माण्ड में एक ऐसा नियम है जो प्रत्येक वस्तुओं और प्राणियों का नियमन कर रहा है। यह नियम कोई अंधा और विवेकशून्य नही है क्योंकि कोई भी अंधा और विवेकशून्य नियम सजीव प्राणियों के आचरण का नियमन नही कर सकता है। इसी बात को वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बसु ने भी सिद्ध किया है कि पदार्थ भी जीवमय हैं। गांधी कहते हैं कि इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि संसार के सभी जीवों का नियमन करने वाला नियम ही ईश्वर है। इसलिए ईश्वर के अस्तित्व को नकारा नही जा सकता है बल्कि उसे अनुभव तो किया ही जा सकता है। ऐसा अनुभव अटूट आस्था के आधार पर ही प्रतिफलित हो सकता है । जो भी व्यक्ति ईश्वर के अस्तित्व का स्वयं अनुभव करके देखना चाहे, वह जीवंत आस्था के बल पर ही ऐसा कर सकता है। चूँकि आस्था को किसी भी बाह्य प्रमाण के आधार पर सिद्ध नही किया जा सकता है, इसलिए संसार के नैतिक नियमन को सत्य तथा प्रेम का नियम मानकर उस पर आस्था रखना चाहिए।

गांधी कहते थे कि सभी धर्म ईश्वर प्रदत्त हैं लेकिन वें मनुष्य की कल्पना के धर्म हैं और मनुष्य उनका प्रचार करता है, इसलिए वें अपूर्ण हैं। ईश्वर का दिया हुआ धर्म मनुष्य के धर्म की पहुंच से परे है। मनुष्य उस धर्म का अर्थ और उसकी व्याख्या अपनी समझ के अनुसार अपनी-अपनी भाषा में करता है। सभी अर्थ सही हैं अथवा गलत हैं, यह कहना भी नामुमकिन है। इसलिए सभी धर्मो के प्रति मनुष्य को समभाव रखना चाहिए। इससे अपने धर्म के प्रति हमारे अंदर उदासीनता का भाव नही आता है, लेकिन अपने धर्म के लिए हमारा जो प्रेम है वह अंधा न होकर ज्ञानवाला है इसलिए अपेक्षा त वह ज्यादा सात्विक और निर्मल है। सब धर्मो के प्रति हमारा यदि समभाव होगा तभी हमारे दिव्य चक्षु खुलेंगे। धर्मांधता और दिव्य दर्शन में उत्तर-दक्षिण का अंतर है। गांधी के धर्म की व्याख्या कोई परंपरागत धर्म की व्याख्या नही है और न ही गांधी का धर्म, विभाजन की कोई दीवार खड़ी करता है अपितु गांधी के धर्म का सीधा सा अर्थ है -ईश्वरमय जीवन जीना। गांधी इस बात को मानते थे कि विश्व के विभिन्न धर्मो को मानने वाले भले ही अन्य चीजों में अंतर रखते हों परंतु विभिन्न धर्मो के सभी अनुयायी इस बात पर एकमत हैं कि संसार में सत्य को छोड़कर कुछ भी जीवित नही रहता है। संभवत: यही कारण है कि सत्य को प्रत्येक मानव स्वीकार करता है ।

गांधी का स्पष्ट मानना था कि दूसरों की सेवा करके मानव स्वयं को अधिकाधिक जान सकता है एवं स्वयं को ईश्वर के समीप पाता है। इसके साथ-साथ गांधी ने अहिंसा को परिभाषित

करते हुए कहा कि बेशक, किसी प्राणी को चोट न पहुंचाना अहिंसा का एक भाग है परंतु वह तो एक बहुत ही न्यून चिन्ह मात्र है। जबकि अहिंसा का सिद्धांत तो बुरे विचार से, अनुचित जल्दबाजी से, झूठ बोलने से, घृणा से और किसी के बारें में बुरा सोचने भर से भी भंग होता है। और तो और अहिंसा के सिद्धांत का भंग तो संसार के लिए जरूरी वस्तु पर अधिकार जमाने से भी होता है। गांधी का स्पष्ट मानना था कि अहिंसा के बिना सत्य की खोज और उसकी प्राप्ति असंभव है। सत्य और अहिंसा आपस में शरबत की तरह इतना अधिक घुले-मिले हुए है जिसे अलग करना असंभव-सा है। सत्य को साध्य करने के लिए अहिंसा एक साधन है और साधन तभी तक साधन है जब वह मनुष्य की पहुंच के भीतर हो। इसलिए गांधी ने अहिंसा को सर्वोपरि कर्तव्य माना है।

निष्कर्ष

गांधी का तात्कालिक उद्देश्य था-अंग्रेजों से भारत को स्वतंत्र करवाना। इसलिए गांधी ने तात्कालिक परिस्थिति के अनुसार अपने आपको एक वैचारिक धुरी बनाया जिससे सभी विचारों और धर्मो के असंख्य लोग जुड़ते गए। परिणामत: भारतीय समाज में एक व्यापक जन-जागरण हुआ जिसके कारण स्वत: ही राष्ट्रवाद के अंकुर का प्रस्फुटन हो गया। गांधी ने अपने काल में भारत को अंग्रेजों से स्वाधीन करवाने के लिए सत्य-अहिंसा पर आधारित असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा, भारत छोडो जैसे आन्दोलन चलाए तथा उन आन्दोलनों में समाज की सहभागिता बढाने हेतु चरखा चलाकर सूत कातने, खादी पहनने, स्वदेशी अपनाने जैसे विभिन्न आर्थिक उपक्रमों की शुरूआत भी किया तथा लोगों को आत्म शुद्धि एवं ब्रह्मचर्य का पालन करने जैसे सदविचारों का पालन करने हेतु लोगों को शुचितापूर्ण जीवन जीने के लिए प्रेरित किया। कालांतर में, गांधी ने ईश्वरीय दर्शन की परिभाषा को केन्द्र में रखकर उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता की आवश्यकता की बात कहना शुरू किया। हालांकि गांधी आजीवन जिस हिंदू-मुस्लिम एकता की आवश्यकता और संभावना को मानते रहे हैं, उसमें वह पूर्णत: विफल रहें क्योंकि उनके न चाहने के बावजूद भारत और पाकिस्तान दो स्वतंत्र राष्ट्रों का निर्माण हो गया था।

हालाँकि तात्कालिक भारतीय समाज का चिंतन करते हुए गांधी ने अपने ईश्वरीय चिंतन में परिवर्तन किया और ''ईश्वर ही सत्य है'' कहने की बजाय ''सत्य ही ईश्वर है'' कहने लगे थे। गांधी ने अपने इस ईश्वरीय चिंतन में परिवर्तन इसलिए किया था क्योंकि 'सत्य' ही एकमात्र ऐसा भाव था जिसके अंतर्गत सभी धर्मो को भी, यहाँ तक कि निरीश्वरवादी विचारकों को भी एकत्रित किया जा सकता था, वास्तव में यही एक ऐसा 'भाव' था जो सभी भेद, सभी प्रकार के विवादों के परे था।

संसार परिवर्तनशील है परंतु इस सतत परिवर्तनशील और नाशवान संसार के पीछे कोई न कोई ऐसे अचेतन शक्ति अवश्य है जो कि अपरिवर्तनशील है। साथ ही यह अचेतन शक्ति सर्वदा मंगलकारी लगती है तथा मृत्यु के वातावरण में जीवन, असत्य के घमासान में सत्य और अन्धकार की चपेट में प्रकाश अपना अस्तित्व बनाए हुए है। इसलिए गांधी की परिभाषा में ईश्वर जीवन, सत्य और प्रकाश-रूप है। वह प्रेम और शिव-तत्त्व है।

गांधी के इस वैचारिक परिवर्तन ''ईश्वर ही सत्य है'' की जगह ''सत्य ही ईश्वर है'', का असर स्वतंत्रता आंदोलन में देखने को भी मिलता है। वास्तव में गांधी त्रिगुण योगी अर्थात् कर्मयोगी, ज्ञानयोगी और भक्तियोगी एक साथ थे। गांधी ने सभी धर्मो को न केवल सामान्य नैतिक आदर्शों में बदल दिया था बल्कि उन्होंने अपने नीतिशास्त्र द्वारा परम्परा और आधुनिकीकरण के बीच एक संबंध स्थापित कर दिया। जैसे, 'अहिंसा' की अवधारणा को गांधी ने भारत के आध्यात्मिक दर्शन के अनुकूल इसे यथावत स्वीकार करते हुए इसके तत्व को प्रेम के तत्व और कष्टों से छुटकारा दिलाने वाले तत्व के रूप में ढाल दिया था। उन्होंने 'अनासक्ति' के माध्यम से सत्तामूलक सत्य को भी तात्कालिक सत्य में रुपांतरित कर दिया था। गांधी के आह्वान पर भारतीय राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन से सभी धर्मो के मानने वाले लोग और वैचारिक मतभेद रखने वाले विभिन्न विचारक भी जुडते चलते गए थे। यहीं गांधी की सफलता थी कि उन्होंने तात्कालिक समाज की भावना के अनुरूप अपने विचार में परिवर्तन कर बहुसंख्यक समाज को भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन से जोडकर उसके फलक को व्यापक बना दिया था। हमें यह समझना चाहिए कि भारतीय संदर्भ में गांधी ने हमेशा ही एक भाषा, एक संस्कृति, एक धर्म की बजाय भारत की बहुलतावादी संस्कृति, भाषा और धर्म को मानने वाले लोगों को एक सूत्र में बाँधने का कार्य किया। वर्ष 1909 में गांधी ने हिंद स्वराज में लिखा कि भारत का वास्तविक शत्रु अंग्रेजी राज नहीं है अपितु समग्र आधुनिक सभ्यता है क्योंकि मात्र राजनीतिक स्वराज पा लेने का अर्थ होगा 'अंग्रेजों के बिना अंग्रेजी राज'। संक्षेप में, अपने सत्य-अहिंसा के व्यापक ईश्वरीय दर्शन के कारण ही गांधी ने अपनी दूरदर्शिता एवं सूझबूझ से धार्मिक जैसी संवेदनशील बातों को मानने वाले विभिन्न मतावलंबियों के मध्य एकता स्थापित कर उन्हें भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन से सफलतापूर्वक जोड़ दिया था।

❒❒❒

शोधार्थी, इतिहास विभाग, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, मध्य प्रदेश, मोबाईल: 9811558925 ईमेल : vision2020rajeev@gmail.com

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और वर्तमान परिदृश्य

—डॉ. अंजू रानी

वर्तमान परिदृश्य में न्याय संगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास की महती आवश्यकता है। राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा मिले यह भी वर्तमान की मूलभूत आवश्यकता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा एवं उसकी सार्वभौमिक पहुँच, व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व के कल्याण का विचार वर्तमान की आवश्यकता है।

अतीत, वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताएं एवं चुनौतियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं, जिनकी पूर्ति के लिए ज्ञान-विज्ञान, विभिन्न प्रकार की नीतियाँ और योजनाएं अस्तित्व में आती हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा भी आरंभ से ही अतीत, वर्तमान और भविष्य के अनेक सूत्र प्रदान करती रही है। ''वेद'' समूची ज्ञान परंपरा के आदि स्रोत माने जाते हैं। विद्वानों ने वेद का निर्वचन किया- विद्यन्ते ज्ञायन्ते लभ्यन्ते एभिर्धर्मादि पुरुषार्थः इतिहास वेदाः। उसके चिंतन का मूल है- ''मनुर्भव'' अर्थात् मनुष्य बनो। वेदों में मनुष्य को ज्ञानवान और शिक्षित होने का विस्तार से विचार मिलता है। शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित करते हुए ऋग्वेद के मंडल संख्या 01 के 53वें सूक्त में कहा गया है-''दुरो अश्वस्य... गृणीमसि।[1] अर्थात् परमेश्वर के तुल्य धार्मिक विद्वान के बिना किसी के लिए सब पदार्थ वा सब सुखों को देने वाला कोई नहीं है परंतु जो निश्चय करके सबके मित्र शिक्षाओं को प्राप्त किए हुए मनुष्य हैं वे ही इन सब सुखों को प्राप्त होते हैं, आलसी मनुष्य नहीं। इसी श्रंखला में सुक्त संख्या 73 में विज्ञान के महत्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा है- त्वे अग्ने ...च स धुः।[2] अर्थात् परमेश्वर की सृष्टि के विज्ञान के बिना कोई मनुष्य पूर्ण विद्वान होने को समर्थ नहीं होता। जैसे रात्रि-दिवस भिन्न-भिन्न रूप वाले हैं वैसे ही अनुकूल और विरुद्ध धर्मादि के विज्ञान से सब पदार्थों को जानके उपयोग में लेवें। वहाँ स्त्री शिक्षा, सर्व शिक्षा, ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों की चर्चा, शिक्षा एवं परीक्षा आदि विषयों पर भी विस्तार से विचार मिलता है। यहाँ संक्षेप में वैदिक चिंतन में शिक्षा के विषय की चर्चा से यह स्पष्ट है कि शिक्षा के महत्व को समझे बिना विकास संभव नहीं है। आज भारत सहित समूचे विश्व का परिदृश्य तेजी से बदल रहा है, वर्तमान की आवश्यकताएं एवं चुनौतियाँ सबके सामने हैं, मानवता हाशिए पर है, व्यक्ति-व्यक्ति का शत्रु बन रहा है। निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए

प्रकृति एवं पर्यावरण का दोहन और उससे उत्पन्न चुनौतियाँ भी सबके सामने हैं। अनेक प्रकार की बीमारियाँ और प्राकृतिक आपदाएं मानवता के लिए काल बन रहे हैं। परमाणु शक्ति और भिन्न भिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों की होड़ लगी हुई है। विस्तारवाद की इच्छा में व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्रों का उचित-अनुचित का विवेक खोता जा रहा है। अलगाववाद और आतंकवाद समूचे विश्व के लिए चुनौती बनते जा रहे हैं, ऐसे में भारतीय ज्ञान परंपरा और उसमें दीक्षित नागरिक ही समूचे विश्व का कल्याण कर सकता है, क्योंकि उसकी निर्मिती के मूल में परहित की भावना और सर्वे भवंतु सुखिन: की कामना है।

शिक्षा नीति किसी भी राष्ट्र की मूलभूत आवश्यकता होती है, जिसमें अतीत का विश्लेषण, वर्तमान की आवश्यकताएं- आशाएं तथा भविष्य की आकांक्षाएं निहित होती हैं। वह कुछ पाठ्यक्रमों में अदल- बदल की योजना भर नहीं है अपितु व्यक्ति के माध्यम से राष्ट्र निर्माण की एक विधि है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 हम सबके सामने है और वर्तमान परिदृश्य से भी हम सब भलीभांति परिचित हैं, ऐसे में यह प्रश्न उठना बहुत स्वाभाविक है कि वर्तमान परिदृश्य में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 कितनी और किस प्रकार महत्वपूर्ण है? इस विषय पर विवेचन- विश्लेषण से पूर्व शिक्षा के विषय में कुछ महत्वपूर्ण विचार जानना आवश्यक है। ऋग्वेद के प्रथम मंडल की सूक्त संख्या 79 में सर्व विद्यावान पुरुष को बिजली,अग्नि और सूर्य के समान प्रकाश करने वाला बताया गया है-''स इधानो वसु... दीदिहि।[3] अर्थात् जैसे बिजुली, प्रसिद्ध पावक, सूर्य, अग्नि सब मूर्तिमान द्रव्य को प्रकाश करता है वैसे ही सर्वविद्या वित्पुरुष सब विद्या का प्रकाश करता है। संस्कृत में भी एक सुभाषित है, जिसमें कहा गया है- साहित्य संगीत कला विहीन: साक्षात्पशु: पुच्छ विषाणहीन:। अर्थात् जो मनुष्य साहित्य, संगीत और कला आदि से वंचित होता है वह बिना पूंछ तथा बिना सींग वाले साक्षात पशु के समान है। सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय समुल्लास में लिखा है- जन्म से 5वें वर्ष तक बालकों को माता, 6 वर्ष से 8वें वर्ष तक पिता शिक्षा करें और 9वें वर्ष के आरंभ में द्विज अपने संतानों का उपनयन करके आचार्य कुल में अर्थात् जहाँ पूर्ण विद्वान और पूर्ण विदुषी स्त्री शिक्षा और विद्या दान करने वाली हों वहाँ लड़के और लड़कियों को भेज दें।[4] उपर्युक्त उद्धरणों से यह भी स्पष्ट है कि भारतवर्ष में शिक्षा एवं ज्ञानार्जन की समृद्ध परंपरा रही, किंतु विदेशी शासकों के शासनकाल में वे सारी श्रेष्ठ शिक्षा व्यवस्थाएँ धीरे-धीरे हाशिए पर चली गई। इतिहास के मध्यकाल तथा आधुनिक काल में जैसे-जैसे भारतवर्ष पर विदेशी शासकों का शिकंजा कसता गया वैसे- वैसे भारतीय ज्ञान परंपरा को भी नष्ट करने का प्रयास किया गया। कभी पुस्तकालयों को जलाया गया, कभी विदेशियों द्वारा अपने ढंग से ज्ञान परंपरा की नूतन व्याख्या प्रस्तुत की गई, तो कभी यहाँ की सामाजिक-सांस्कृतिक तथा धार्मिक परंपराओं को तोड़ मरोड़ कर व्यर्थ सिद्ध किया गया। अवशेष स्वरूप आज भी तक्षशिला, नालंदा, उदंतपुरी, सोमपुरा, नागार्जुनकोंडा, कांचीपुरम, पुष्पगिरी तथा शारदा पीठ आदि विश्वविद्यालय तथा शिक्षा पीठ विद्यमान है, जिनमें देश-विदेश से हजारों छात्र शिक्षा प्राप्त करने आते थे। मैक्समूलर जिसे भारत में एक उदार पाश्चात्य वैदिक विद्वान के रूप में स्वीकार किया जाता है, ने लिखा है- ''वैदिक सुक्तों की बहुत बड़ी संख्या नितांत बचकाना, जटिल, घटिया और साधारण है।''

मैकाले हिंदू संस्कृति और शिक्षा को बहुत घृणा की दृष्टि से देखता था। उसका कहना था कि- ''संस्कृत भाषा में जो पुस्तकें लिखी गई हैं, उन सबका समस्त ऐतिहासिक ज्ञान इंग्लैंड के प्रेप स्कूल में पढ़ाई जाने वाली छोटी संक्षिप्त पुस्तिका से भी कम है।'' इस प्रकार के विचारों के उत्तर स्वरूप मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखित भारत भारती में दिए गए उद्धरण को यहाँ उद्धृत करना उचित होगा। वहाँ ''हिंदुओं के देवताओं की वंशावली'' नामक पुस्तक के रचयिता कौन्ट जार्न्स जेर्ना का मत उद्धृत है। वे लिखते हैं- आर्यावर्त केवल हिंदू धर्म का ही घर नहीं है वरन् वह संसार की सभ्यता का आदि भण्डार है। हिंदुओं की सभ्यता क्रमश: पश्चिम की ओर इथोपिया, ईजिप्त और फैनेशिया तक; पूर्व दिशा में स्याम, चीन और जापान तक; दक्षिण में लंका, जावा, सुमात्रा तक और उत्तर की ओर परशिया, चाल्डिया और कोल्विस और वहाँ से यूनान और रोम हियर वोरियन्स के रहने के स्थान तक पहुँची।''(5) इसी प्रकार वहाँ एक अन्य उद्धरण भी मिलता है। वहाँ 20 फरवरी 1884 के डेली ट्रिब्यून नामक पत्र में विदेशी विद्वान डी.ओ. ब्राउन का वक्तव्य लिखा है- ''यदि हम पक्षपात रहित होकर भली-भांति परीक्षा करें तो हमको स्वीकार करना पड़ेगा कि हिंदू ही सारे संसार के साहित्य, धर्म और सभ्यता के जन्मदाता हैं।''(6) प्रस्तुत उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था और ज्ञान परंपरा समूचे विश्व की जननी रही है। आज यह भी विचार करने की आवश्यकता है कि क्या स्वतंत्रता के बाद बनी राष्ट्रीय शिक्षा नीतियां इस प्रकार के विचारों अथवा मूल्यों को अपने अंदर समाहित कर पाई? क्या नीति निर्धारकों ने इस दिशा में ईमानदारी से प्रयास किए? क्या भारतवर्ष के नागरिक मैकाले की भारतीयता विरोधी स्वार्थपूर्ण सोच वाली शिक्षा पद्धति से निकल पाए? क्या उन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों में भारतीय चिंतन, भारतीय मूल्य बोध की संकल्पना को समाहित करने का प्रयास किया?

भारतवर्ष में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की दृष्टि से पहली शिक्षा नीति 1968 में और दूसरी 1986 में आई। दोनों ही नीतियों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय ज्ञान और भारत बोध की संकल्पना इनमें कहीं पीछे ही छूट गई। यद्यपि 1986 की शिक्षा नीति शिक्षा के आधुनिकीकरण पर केंद्रित कही जाती है, जिसमें देश में शिक्षा के विकास के लिए व्यापक ढांचा, शिक्षा के आधुनिकीकरण और बुनियादी सुविधाएं मुहैया कराने पर जोर देने की बात कही गई थी, किंतु 1990 के दौर में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र की आवश्यकताओं में आमूलचूल परिवर्तन किए। ज्ञान-विज्ञान तथा तकनीकी में तेजी से बदलाव आया, जिन्हें पूरा करने में यह शिक्षा नीति पूरी तरह से सक्षम नहीं रही। निरक्षरता की दर निरंतर बढ़ती रही, ग्रामीण क्षेत्र उपेक्षित ही रहे। बढ़ती जनसंख्या के कारण विद्यालय-महाविद्यालयों तक पहुँच से जनसंख्या का बड़ा हिस्सा वंचित ही रहा। विद्यालय तथा महाविद्यालयों में अध्ययन- अध्यापन से जुड़ी हुई तमाम परेशानियाँ अभी तक भी देखी जा सकती है। वर्ष 2014 में बहुमत में आई मोदी सरकार के समक्ष राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक बड़ी चुनौती एवं आवश्यकता के रूप में सामने थी। इसे देखते हुए जून 2017 में पूर्व इसरो प्रमुख डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। समिति ने मई 2019 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप प्रस्तुत किया, शिक्षा मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक ने एक व्यापक, दूरदर्शी और लोकतांत्रिक दृष्टिकोण अपनाते हुए

राष्ट्रीय शिक्षा नीति से संबंधित सभी से सुझाव लेने का महत्वपूर्ण निर्णय लिया। देश के कोने कोने से सभी वर्ग के लोगों की राय ली गई। राष्ट्रीय शिक्षा नीति की संकल्पना का विस्तार हुआ। भारतवर्ष के इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ कि शिक्षा नीति बनाने के लिए देश में व्यापक जन संवाद हुआ। देश की लगभग 2.5 लाख ग्राम पंचायतें, 6600 ब्लॉक और 650 जिलों से विचार लिए गए। इसमें शिक्षाविद, अध्यापक, अभिभावक, जनप्रतिनिधि, समाज जीवन के सामान्य लोग एवं व्यापक स्तर पर छात्र आदि सभी सम्मिलित थे। जन आशा-आकांक्षाओं के अनुरूप एवं राष्ट्रीय आवश्यकता और चुनौतियों के अनुरूप केंद्रीय मंत्रिमंडल ने नई शिक्षा नीति 2020 को मंजूरी दी। यही राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 कही जाती है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने इस शिक्षा नीति के विषय में कहा- ''यह शिक्षा के क्षेत्र में बहुप्रतीक्षित सुधार है जिससे लाखों लोगों का जीवन बदल जाएगा। एक भारत- श्रेष्ठ भारत पहल के तहत इसमें संस्कृत समेत भारतीय भाषाओं को बढ़ावा दिया जाएगा।''[7] राष्ट्रीय शिक्षा नीति को प्रस्तुत करते हुए शिक्षा मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक ने भी कहा-''देश के प्रधानमंत्री ने एक नए भारत के निर्माण की बात की है... उस नए भारत के निर्माण में यह नई शिक्षा नीति 2020 मील का पत्थर साबित होगी... यह ज्ञान-विज्ञान, अनुसंधान, नवाचार, प्रौद्योगिकी से युक्त, संस्कारक्षम और मूल्यपरक, हर क्षेत्र में, हर परिस्थिति का मुकाबला करने वाली होगी। पूरी दुनिया के लिए भारत में ज्ञान की महाशक्ति के रूप में यह शिक्षा नीति उभर करके आएगी।''[8]

वर्तमान परिदृश्य में न्याय संगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास की महती आवश्यकता है। राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा मिले यह भी वर्तमान की मूलभूत आवश्यकता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा एवं उसकी सार्वभौमिक पहुँच, व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व के कल्याण का विचार वर्तमान की आवश्यकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 परिचय में ही स्पष्ट करती है कि-''शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने, एक न्यायसंगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए मूलभूत आवश्यकता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तथा सार्वभौमिक पहुँच प्रदान करना वैश्विक मंच पर सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण और सांस्कृतिक संरक्षण के संदर्भ में भारत की सतत प्रगति और आर्थिक विकास की कुंजी है। सार्वभौमिक उच्चतर स्तरीय शिक्षा वह उचित माध्यम है, जिससे देश की समृद्ध प्रतिभा और संसाधनों का सर्वोत्तम विकास और संवर्धन व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की भलाई के लिए किया जा सकता है।''[9] यूनेस्को के सतत विकास एजेंडा के अंतर्गत सभी को शिक्षा का लक्ष्य निर्धारित किया गया है, लेकिन वर्तमान परिदृश्य में भारतवर्ष अभी उससे काफी पीछे है, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में सतत विकास एजेंडा 2030 के लक्ष्यों के अनुसार वर्ष 2030 तक सभी के लिए समावेशी और सामान गुणवत्ता युक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवन पर्यंत शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा दिए जाने की योजना है। वर्तमान परिदृश्य में बिग डाटा, मशीन लर्निंग, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, कुशल कामगारों की आवश्यकता, जलवायु परिवर्तन, बढ़ता प्रदूषण, घटते प्राकृतिक संसाधन, मातृभाषा अथवा स्थानीय भाषाओं में शिक्षा, महिला शिक्षा, मूल्यपरक शिक्षा, बस्ते के बोझ से मुक्ति, समग्र विकास आदि अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जो गंभीर आवश्यकता एवं

चुनौतियों से भरे हैं। हाल ही में गुजरात के केवड़िया में ''मिशन लाइफ'' अभियान की शुरुआत की गई है, जिसमें वैश्विक कार्य योजना बनाते हुए जलवायु परिवर्तन के विनाशकारी असर से धरती को बचाने के लिए गंभीर चिंतन हुआ है। इस अवसर पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरस ने जलवायु परिवर्तन की समस्या और उसके समाधान विषयक अनेक प्रयास शुरू किए हैं। इस अवसर पर यूएन प्रमुख गुटेरस ने कहा कि- ''जलवायु परिवर्तन विश्व की सबसे बड़ी समस्या है, इसके संरक्षण के लिए हमें सामूहिक प्रयास करना होगा। कुदरत के संसाधनों का हमें विवेकपूर्वक उपयोग करना चाहिए।'' राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 वर्तमान के इन विभिन्न मुद्दों पर गंभीरता से विचार करती है। नीति के परिचय में ही कहा गया है- ''ज्ञान के परिदृश्य में पूरा विश्व तेजी से परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है, बिग डाटा, मशीन लर्निंग और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस जैसे क्षेत्रों में हो रहे बहुत से वैज्ञानिक और तकनीकी विकास के चलते एक और विश्व भर में अकुशल कामगारों की जगह मशीनें काम करने लगेंगी और दूसरी ओर डाटा साइंस, कंप्यूटर साइंस और गणित के क्षेत्रों में ऐसे कुशल कामगारों की जरूरत और माँग बढ़ेगी जो विज्ञान, समाज विज्ञान और मानविकी के विविध विषयों में योग्यता रखते हैं। जलवायु परिवर्तन, बढ़ते प्रदूषण और घटते प्रा तिक संसाधनों की वजह से हमें ऊर्जा, भोजन, पानी, स्वच्छता आदि की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए रास्ते खोजने होंगे और इस कारण भी जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, कृषि, जलवायु विज्ञान और समाज विज्ञान के क्षेत्रों में नए कुशल कामगारों की जरूरत होगी।''[10] वर्तमान परिदृश्य में ज्ञान-विज्ञान, सूचना- तकनीक पल-पल बदल रही है, ऐसे में एक बार सीखा हुआ ही जीवनपर्यंत अथवा लंबे समय तक चलता रहे यह संभव नहीं है, इसलिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 सतत सीखते रहने की कला को भी विकसित करने पर बल देती है। वह इस बात पर भी बल देती है कि बच्चे समस्या समाधान और तार्किक एवं रचनात्मक रूप से सोचना सीखें। वर्तमान की आवश्यकताएं बदल रही हैं, इसलिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस विषय पर गंभीरता से विचार करती है। उसमें स्पष्ट रूप से लिखा है- ''यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, 21वीं शताब्दी की पहली शिक्षा नीति है जिसका लक्ष्य हमारे देश के विकास के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करना है... राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रत्येक व्यक्ति में निहित रचनात्मक क्षमताओं के विकास पर विशेष जोर देती है। यह नीति इस सिद्धांत पर आधारित है कि शिक्षा से न केवल साक्षरता और संख्या ज्ञान जैसी बुनियादी आवश्यकताओं के साथ-साथ उत्तर की तार्किक और समस्या समाधान संबंधी संज्ञानात्मक क्षमताओं का विकास होना चाहिए, बल्कि नैतिक, सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर भी व्यक्ति का विकास होना चाहिए।[11]

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अध्ययन- विश्लेषण से यह भी स्पष्ट होता है कि यह नीति प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार परंपरा से पोषित हुई है। भारतीय ज्ञान परंपरा से संबंधित वैदिक साहित्य, योग, दर्शन, संस्कृति आदि विविध विषय एवं पक्ष इसमें अनेक रूपों में समाहित किए गए हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के मूलभूत सिद्धांतों को लगभग 20 बिंदुओं में विश्लेषित किया गया है, जिसमें प्रत्येक बच्चे की विशिष्ट क्षमताओं की स्वीकृति, पहचान और

उनके विकास हेतु प्रयास करना, बुनियादी साक्षरता, लचीलापन, सभी प्रकार के ज्ञान की एकता और अखंडता, अवधारणात्मक समझ पर जोर, नैतिकता, मानवीय और संवैधानिक मूल्यों को समाहित करना, बहुभाषिकता, जीवन कौशल, तकनीकी के यथासंभव उपयोग पर जोर, उत्कृष्ट शोध को बढ़ावा देना, भारतीय जड़ों और गौरव से बंधे रहना आदि पक्ष महत्वपूर्ण हैं। नीति के विजन में यह स्पष्ट किया गया है कि- ''इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति का विजन भारतीय मूल्यों से विकसित शिक्षा प्रणाली है जो सभी को उच्चत्तर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराकर और भारत को वैश्विक ज्ञान महाशक्ति बनाकर भारत को एक जीवंत और न्याय संगत ज्ञान समाज में बदलने के लिए प्रत्यक्ष रूप से योगदान करेगी। नीति में परिकल्पित है कि हमारे संस्थानों की पाठ्यचर्या और शिक्षा विधि छात्रों में अपने मौलिक दायित्व और संवैधानिक मूल्यों, देश के साथ जुड़ाव और बदलते विश्व में नागरिक की भूमिका और उत्तरदायित्व की जागरूकता उत्पन्न करे। नीति का विजन छात्रों में भारतीय होने का गर्व न केवल विचार में बल्कि व्यवहार बुद्धि और कार्यों में भी और साथ ही ज्ञान, कौशल, मूल्यों और सोच में भी होना चाहिए जो मानवाधिकारों, स्थायी विकास और जीवनयापन तथा वैश्विक कल्याण के लिए प्रतिबद्ध हों, ताकि वे सही मायने में वैश्विक नागरिक बन सकें।''(12)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह भारत केंद्रित होने के साथ-साथ विद्यार्थी केंद्रित भी है। इस नीति के प्रत्येक बिंदु में व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की आवश्यकताएं, चुनौतियाँ एवं उनके समाधान दिखाई देते हैं। वर्तमान परिदृश्य में स्कूली शिक्षा में बच्चे का प्रवेश,उसका शारीरिक विकास, बस्ते का बोझ, उसके सीखने का माध्यम आदि अनेक ऐसी गंभीर बातें हैं, जिन पर दशकों से विचार होता रहा, लेकिन उनके समाधान नहीं मिल पाए। विद्यालय में प्रवेश की आयु घटती गई और बस्ते का बोझ बढ़ता गया, परिणामस्वरूप न तो बच्चा शारीरिक रूप से मजबूत हो सका और न ही मानसिक रूप से। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 स्कूल शिक्षा के ढांचे में परिवर्तन के विचार के साथ आई है। यह वर्तमान की 10+2 वाली स्कूली व्यवस्था को 3 से 18 वर्ष के सभी बच्चों के लिए पाठ्यचर्या और शिक्षण शास्त्रीय आधार पर 5+ 3+ 3+ 4 की एक नई व्यवस्था में पुनर्गठित करने की बात करती है और इसे प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा- सीखने की नींव के रूप में परिभाषित करती है। प्रारंभिक स्तर पर शारीरिक स्वास्थ्य पर अधिक ध्यान दिया जाना, खेल खेल में सीखना एवं बस्ते के बोझ को हटाना राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का महत्वपूर्ण पक्ष है। ध्यातव्य है कि वर्ष 1993 में यशपाल समिति ने शिक्षा व्यवस्था को लेकर अपनी रिपोर्ट सौंपी थी, जिसका शीर्षक था- शिक्षा बिना बोझ के अथवा बिना बोझ के सीखना। बस्ते के बोझ को कम करने के लिए बनी इस समिति ने शिक्षा व्यवस्था में विभिन्न विसंगतियों की ओर इंगित करते हुए कई महत्वपूर्ण सुझाव दिए थे, लेकिन ढुलमुल नीयत और निर्णयों के कारण वह आज तक भी लागू नहीं हो पाए। इसी प्रकार वर्ष 1977 में ईश्वर भाई पाताल समीक्षा समिति, 1984 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद की समिति, 1990 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति समीक्षा समिति के सुझाव और फिर आचार्य राममूर्ति समिति आदि की शिक्षा से संबंधित विभिन्न सिफारिशें आज तक भी अधर में लटकी हुई हैं।

आचार्य राममूर्ति समिति ने शिक्षा में बुनियादी सुधारों की सिफारिश करते हुए 9 बिंदुओं के अंतर्गत शिक्षा के उद्देश्य, सामान्य स्कूल प्रणाली,व्यक्तियों का कार्य हेतु सशक्तिकरण, परीक्षा सुधार, मातृभाषा को स्थान, स्त्रियों की शिक्षा आदि सुझाव दिए थे, लेकिन वे फाइलों में ही बंद होकर रह गए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 उन विभिन्न समितियों के महत्वपूर्ण विचारों को समाहित करते हुए सामने आई है। पूर्व की विभिन्न समितियों ने आरंभिक शिक्षा में मातृभाषा को स्थान देने अथवा मातृभाषा में शिक्षा का विचार दिया था, लेकिन वह आज तक भी लागू नहीं हो पाया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 बहुभाषावाद और भाषा की शक्ति शीर्षक में इस विषय पर स्पष्ट करती है- ''यह सर्वविदित है कि छोटे बच्चे अपने घर की भाषा अथवा मातृभाषा में सार्थक अवधारणाओं को अधिक तेजी से सीखते हैं और समझ लेते हैं। घर की भाषा आमतौर पर मातृभाषा या स्थानीय समुदायों द्वारा बोली जाने वाली भाषा है...जहाँ तक संभव हो कम से कम ग्रेड 5 तक लेकिन बेहतर यह होगा कि यह ग्रेड 8 और उससे आगे तक भी हो। शिक्षा का माध्यम घर की भाषा अथवा मातृभाषा अथवा स्थानीय भाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा होगी।''[13] आज भिन्न-भिन्न रूपों में अंग्रेजी का वर्चस्व बना हुआ है। सामान्य से सामान्य अवधारणाएं भी अंग्रेजी माध्यम के कारण कठिनाई से समझ में आ पाती हैं। शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर विचार करते हुए आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वती ने अपने सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रंथ में बहुत पहले ही देवनागरी और देशीय भाषाओं के प्रयोग की बात कही थी, उन्होंने लिखा है- जब पाँच वर्ष के लड़का लड़की हों तब देवनागरी व अन्य देशीय भाषाओं के अक्षरों का अभ्यास करावें। उसके पश्चात जिनसे अच्छी शिक्षा, विद्या, धर्म, परमेश्वर, माता-पिता, आचार्य,विद्वान, अतिथि,राजा, प्रजा, कुटुंब, बंधु, भगिनी, भृत्य आदि से कैसे-कैसे वर्तना इन बातों के मंत्र, श्लोक, सूत्र, गद्य, पद्य भी अर्थ सहित कंठस्थ करावें।''[14] ''मेरे सपनों का भारत'' नामक पुस्तक में ''मेरा अपना अनुभव'' नामक शीर्षक में गांधीजी लिखते हैं- ''बारह बरस की उम्र तक मैंने जो भी शिक्षा पाई वह अपनी मातृभाषा गुजराती में ही पाई थी... जिल्लत तो चौथे साल से शुरू हुई। अलजबरा (बीजगणित), केमिस्ट्री (रसायनशास्त्र), एस्ट्रोलॉजी (ज्योतिष), हिस्ट्री (इतिहास) ज्यॉग्राफी (भूगोल) हर एक विषय मातृभाषा के बजाय अंग्रेजी में ही पढना पडा। कक्षा में अगर कोई विद्यार्थी गुजराती, जिसे कि वह समझता था, बोलता तो उसे सजा दी जाती थी।... अंग्रेजी के माध्यम ने तो मेरे और मेरे कुटुम्बियों के बीच, जो कि अंग्रेजी स्कूलों में नहीं पढ़े थे, एक अगम्य खाई खड़ी कर दी...।''[15] संभवत: यह स्थिति आज भी लाखों बच्चों के साथ यथावत् बनी हुई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इससे मुक्ति देती है। विद्यार्थी अपनी भाषा में, अपनी प्रांतीय भाषाओं में ज्ञान- विज्ञान के विभिन्न विषय पढ़ सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 तेजी से क्रियान्वयन की प्रक्रिया में है। महत्वपूर्ण यह है कि देश के कई प्रदेशों में मातृभाषा में चिकित्सा एवं इंजीनियरिंग जैसे तकनीकी विषयों की पढ़ाई आरंभ हो चुकी है। मातृभाषा में विभिन्न विषयों की पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध करवाई जा रही हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मानव को संसाधन के रूप में नहीं, अपितु मनुष्य के रूप में देखती है। विद्यार्थी उसके केंद्र में है, इसलिए उसमें लचीलेपन का प्रावधान है। शोध और अनुसंधान के कार्यों को बढ़ावा देने के लिए अनेक अवसर विद्यमान

हैं। अनुभव के आधार पर बालक अधिकाधिक सीखे, इसके लिए भ्रमण और परियोजना कार्य पाठ्यक्रम के हिस्से बनाए गए हैं।

वर्तमान परिदृश्य में नया भारत, समर्थ भारत, कौशल युक्त भारत, आत्मनिर्भर भारत और अब विकसित भारत का संकल्प प्रस्तुत किया जा चुका है। भारत पुन: विश्व गुरु बने इसके लिए निरंतर आवाह्न एवं योजनाएं सामने आ रही हैं, ऐसे में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 विद्यार्थियों में कौशल की क्षमताओं को विकसित करने का प्रावधान करती है, जिससे वे न केवल आत्मनिर्भर होंगे, अपितु राष्ट्रीय एवं वैश्विक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में भी सक्षम बनेंगे। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखित भारत भारती नामक पुस्तक में छान्दोग्योपनिषद् का उद्धरण दिया गया है, जहाँ महर्षि सनत्कुमार ऋषि नारद से पूछते हैं कि उन्होंने कौन-कौन सी विद्याएँ पढी हैं, तब ऋषि नारद उत्तर देते हैं- ''हे भगवान! मैंने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, वेदों के अर्थविधायक ग्रंथ, पितृविद्या, राशिविद्या, देवविद्या, निधिविद्या, वाकोवाक्यविद्या, एकायनविद्या, देवविद्या, ब्रह्मविद्या, भूतविद्या, क्षत्रविद्या, नक्षत्रविद्या और सर्पदेवजनविद्याओं का अध्ययन किया है।''[16] प्रस्तुत उद्धरण से पुन: यह स्पष्ट है कि हमारा अतीत विभिन्न प्रकार की विद्याओं से समृद्ध था, जिसे धीरे धीरे विस्मृत कर दिया गया। स्वतंत्रता के बाद बनी दोनों शिक्षा नीतियाँ भी गौरवपूर्ण अतीत के विषय में उदासीन रही, क्या यह वर्तमान की महती आवश्यकता नहीं थी? राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के ''नवीन राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन के माध्यम से सभी क्षेत्रों में गुणवत्तायुक्त अकादमिक अनुसंधान को उत्प्रेरित करना'' शीर्षक के अंतर्गत यह लिखा है कि- ''भारत में विज्ञान और गणित से लेकर कला, साहित्य, स्वर विज्ञान और भाषा से लेकर चिकित्सा और कृषि तक के विषय में अनुसंधान और ज्ञानसृजन की एक लंबी ऐतिहासिक परंपरा रही है, अब समय की मांग है कि भारत जल्द से जल्द एक मजबूत और प्रबुद्ध ज्ञान समाज के रूप में अपनी खोई हुई स्थिति को शीघ्र ही पुन: प्राप्त करे और मजबूत और प्रबुद्ध ज्ञान समाज तथा दुनिया की तीन सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में से एक के रूप में 21वीं सदी में अनुसंधान और नवाचार का नेतृत्व करने के लिए तैयार रहे।''[17] देश और दुनिया में तेजी से हो रहे परिवर्तनों के कारण अनुसंधान और नवाचार आज की बड़ी आवश्यकता है, राष्ट्रीय शिक्षा नीति अनुसंधान और नवाचार के विभिन्न प्रावधानों के साथ उपस्थित हुई है। स्वच्छता, शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन आदि जैसी बुनियादी आवश्यकताएं वर्तमान परिदृश्य में चुनौती के रूप में भी हमारे सामने हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इन सब चुनौतियों का विश्लेषण करते हुए उनके समाधान की ओर बढ़ने का मार्ग दिखाती है। अनुवाद, ज्ञान-विज्ञान एवं संस्कृति का संरक्षण- संवर्धन, प्राचीन एवं नवीन का समन्वय, मातृभाषा का महत्व आदि अनेक ऐसे बिंदु हैं जिन पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 गंभीरता से विचार करती है। नीति की पूरी संरचना में ''व्हाट टू थिंक'' पर फोकस के स्थान पर ''हाउ टू थिंक'' को महत्व दिया गया है।

संदर्भ सूची :

1. ऋग्वेद- मंडल संख्या 1
2. ऋग्वेद- मंडल संख्या 1

3. ऋग्वेद- मंडल संख्या 1
4. सत्यार्थ प्रकाश, द्वितीय समुल्लास
5. भारत भारती
6. भारत भारती
7. वर्ष 2019 में केंद्रीय मंत्रिमंडल से मंजूरी के बाद मीडिया के सम्मुख बोलते हुए
8. वर्ष 2019 में केंद्रीय मंत्रिमंडल से मंजूरी के बाद मीडिया के सम्मुख बोलते हुए
9. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020
10. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020
11. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020
12. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020
13. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020
14. सत्यार्थ प्रकाश
15. मेरे सपनों का भारत
16. भारत भारती
17. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

❒❒❒

कहानीकार एवं स्वतंत्र लेखक, 9818999032, anjuved298@gmail.com

मानवता के कल्याण का विचार है एकात्म मानवदर्शन

—गुंजेश गौतम

व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध के विषय में दीनदयाल उपाध्याय उदार विज्ञानवादी हैं। उनके अनुसार व्यक्ति और समाज के बीच कोई संघर्ष नहीं है। यदि कहीं है तो वह विकृति का लक्षण है। वे कहते हैं, ''समष्टि हित के लिए व्यक्ति की स्वतंत्रता को प्रतिबन्धित करने की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में स्वैराचार में व्यक्ति का विकास नहीं, विनाश है। समष्टि के साथ एकात्मता ही व्यक्ति की पूर्ण विकसित अवस्था है।

प्रस्तावना

आधुनिक भारत के प्रेरणादायी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक चिंतकों में पंडित दीनदयाल उपाध्याय का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारतीय चिंतन परंपरा में उनकी महत्ता इसलिए है कि उन्होंने पश्चिम के खंडित दर्शन के स्थान पर भारत की गौरवमयी व कालजयी संपन्न संस्कृति के अनुरूप सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विचारों को एक सूत्र में पिरोकर एकात्म मानवदर्शन को प्रस्तुत किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरंत बाद जब भारत का राजनैतिक और बौद्धिक जगत् पाश्चात्य विचारों से पूरी तरह आच्छादित था। तब पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने हस्तक्षेप करते हुए भारतीय प्रज्ञा को झकझोरा तथा आह्वान किया कि हम विदेशी परिस्थिति एवं विदेशी चित में उत्पन्न विचारों का अध्ययन तो करें, लेकिन स्वतंत्र भारत की विचारधारा का स्त्रोत तो भारतीय चित ही होना चाहिए। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने विचारधारा के क्षेत्र में व्यक्तिवाद (पूँजीवाद), समाजवाद और साम्यवाद के विचारों को चुनौती देते हुए, 'एकात्म मानव दर्शन' का प्रणयन किया।

अभी तक प्रचलित सामाजिक एवं राजनैतिक दर्शनों- पूँजीवाद, समाजवाद एवं साम्यवाद को देखें तो हम पाते हैं, कि उनमें से सभी ने जीवन के एकांगी पक्ष को लेकर ही अपने जीवन-दर्शन की स्थापना की। जहाँ पूँजीवाद केवल पूँजीपतियों के हितों का ही ध्यान रखता है, वहीं समाजवाद एवं साम्यवाद केवल श्रमिकों के हितों को ही समाज का हित समझते हैं। महात्मा गाँधी के सर्वोदय की कल्पना जीवन के समग्र भाग का ध्यान तो अवश्य रखती है, पर वह इतनी आदर्शवादी और विज्ञानवादी है कि उसे जीवन में चरितार्थ करना कठिन ही नहल्र, वरन् असम्भव भी है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने एक ऐसे ही समग्र जीवन-दर्शन देने की चे टा की थी जो हमारी भौतिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक सभी आवश्यकताओं की तृप्ति कर सके।

एकात्म मानवदर्शन का अर्थ

पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने एकात्म मानव दर्शन के विचार को सर्वप्रथम (22 से 25 अप्रैल) 1965 में मुंबई में चार व्याख्यानों के रूप मे प्रस्तुत किया। अपने सतत अध्ययन, चिन्तन और मनन से जन्मे एकात्म मानवदर्शन को उन्होंने सूत्र रूप में लिखा भी और अनेक विद्वानों और विचारकों से इस पर विचार-विनिमय भी किया। जनसंघ ने इसे सिद्धान्त के रूप में अपनाया।

एकात्म की अवधारणा को समझाने के लिए दीनदयाल उपाध्याय संबधों का एक उदाहरण दिया करते थे। वे कहते थे कि एक ही व्यक्ति एक साथ कई सम्बन्धों को निभाता है। वह एक साथ ही पिता है, भाई है, बेटा है। ये सभी संबध एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। यही मानव प्रकृति की एकात्मता है। मनुष्य शिशु होता है, फिर जवान होता है और अंत में बूढ़ा होता है, लेकिन मनुष्य की ये तीनों अवस्थाएँ एक सम्पूर्ण इकाई बनाती हैं। पश्चिम ने शायद मानव की इस सम्पूर्णता को अनदेखा किया और उसे खंडित नजरिये से देख कर विकास के मॉडल तैयार किये। दीनदयाल उपाध्याय ने इन्हीं मॉडलों के विकल्प में मानव विकास का भारतीय मॉडल दिया जिसे बौद्धिक समाज में एकात्म मानवदर्शन के नाम से जाना जा रहा है।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानवदर्शन को नया नहीं वरन् वैदिक काल से चले आ रहे सनातन प्रवाह का ही युगानुरूप प्रकटीकरण है। जिसमें व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और समष्टि को एक माला की कड़ी के रूप में देखा गया है। एकात्म मानवदर्शन अर्थात एक ऐसा समग्र जीवन दर्शन जिसमें शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा, व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व तथा अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष सभी की युगपद सिद्धि सम्भव हो सके। दीनदयाल उपाध्याय कहते हैं- ''मानव केवल एक व्यक्ति मात्र नहीं है। शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा का समुच्चय है। व्यक्ति केवल एकवचन 'मैं' तक सीमित नहीं, उसका बहुवचन 'हम' से भी अभिन्न संबंध रखता है।''[1]

संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'एकात्म मानव दर्शन जड़ से लेकर चेतन तक, व्यष्टि से समष्टि तक, जीवन के प्रत्येक पहलू का विकास और विचार करने वाला, भारतीय जीवनदर्शो के चार पुरूषार्थो पर आधारित पूर्णतया भारतीय विचारधारा है। जो मानव के आध्यात्मिक, मानसिक, भौतिक, शारीरिक, समग्र पूर्ण विकास की आधारशिला तैयार करता है।

एकात्म मानवदर्शन और समाज व्यवस्था

पंडित दीनदयाल उपाध्याय समग्रतावादी विचारक थे। वे व्यक्ति और समाज के विषय में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों दृष्टियों से सामंजस्यपूर्ण दृष्टिकोण रखते थे। वे प्राचीन वर्णाश्रम-व्यवस्था व धर्म के उपर समाज की व्यवस्था स्थापित करना चाहते थे। वे धर्म को रिलीजन के पर्याय के रूप में प्रयोग करने के विरूद्ध थे। उनके अनुसार धर्म का अर्थ किसी मजहब, संप्रदाय या पूजा-पद्धति से नहीं है। ''धर्म का वास्तविक अर्थ है- वे सनातन नियम, जिनके आधार पर किसी सत्ता की धारणा हो और जिनका पालन कर व्यक्ति अभ्युदय और निःश्रेयस की प्राप्ति कर सके। (यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः।) धर्म का मूल तत्त्व सनातन है, किंतु उनका विवरण देश-काल-परिस्थिति के अनुसार बदलता है। इस संक्रमणशील

जगत् में धर्म ही वह तत्व है, जो स्थायित्व लाता है। इसलिए धर्म को ही नियंता माना गया है। प्रभुता उसी में निहित है।''[2] दूसरे शब्दों में धर्म शब्द किसी विशेष संप्रदाय, पंथ, मजहब का वाचक नहीं है। जिंदगी में हमें जो धारण करना चाहिए, वही धर्म है। नैतिक मूल्यों का आचरण ही धर्म है। धर्म वह पवित्र अनुष्ठान है, जिससे चेतना का शुद्धिकरण होता है। धर्म वह तत्व है, जिसके आचरण से व्यक्ति अपने जीवन को चरितार्थ कर पाता है। दीनदयाल उपाध्याय ने धर्म को अत्यंत महत्त्वपूर्ण अवश्य माना लेकिन उन्होंने किसी भी पुरूषार्थ को कम महत्त्वपूर्ण नहीं माना। वे कहते हैं- ''धर्म महत्वपूर्ण है, परंतु यह भी नहीं भूलना चाहिए कि अर्थ के अभाव में धर्म भी नहीं टिक पाता। एक सुभाषित है कि 'बुभुक्षित: किं न करोति पापम्' अर्थात भूखा व्यक्ति हर पाप कर सकता है। अत: हमारे यहाँ आदेश है कि अर्थ का अभाव नहीं होना चाहिए, क्योंकि वह धर्म का द्योतक है। अर्थ के अभाव के समान ही अर्थ का प्रभाव भी नहीं होना चाहिए, क्योंकि अर्थ का प्रभाव भी धर्म पर घातक होता है।''[3]

व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध के विषय में दीनदयाल उपाध्याय उदार विज्ञानवादी हैं। उनके अनुसार व्यक्ति और समाज के बीच कोई संघर्ष नहीं है। यदि कहीं है तो वह विकृति का लक्षण है। वे कहते हैं, ''समष्टि हित के लिए व्यक्ति की स्वतंत्रता को प्रतिबन्धित करने की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में स्वैराचार में व्यक्ति का विकास नहीं, विनाश है। समष्टि के साथ एकात्मता ही व्यक्ति की पूर्ण विकसित अवस्था है। व्यक्ति ही समष्टि की पूर्णता का माध्यम और माप है। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और समाजहित अविरोधी है।''[4]

दीनदयाल उपाध्याय ने व्यक्ति और विभिन्न प्रकार की जो बड़ी इकाइयाँ हैं, उनके बीच आपस में क्या सम्बन्ध हैं उसको वृहद रूप में समझाया। उन्होनें कहा कि व्यक्ति एकांगी नहीं है, वह बहुअंगी है। व्यक्ति का परिवार के साथ, जाति के साथ, संस्था के साथ और देश के साथ अलग-अलग तरह के संबंध रहते हैं। फिर उन्होंने पश्चिम से तुलना करते हुए कहा कि पश्चिम में भी इकाइयों, संस्थाओं एवं कल्पनाओं का विचार पृथक्-पृथक् आधार पर किया गया पर पश्चिम में व्यक्ति का व्यक्ति के नाते, परिवार का परिवार के नाते, समाज का समाज के नाते और मानवता का मानवता के नाते विचार, किया गया। किन्तु इन समस्त इकाइयों में कुछ संबंध है इसका विचार नहीं किया गया। व्यक्ति का विचार करते समय अन्य सामाजिक अवयवों को भुला दिया गया। यही बात परिवार, समाज और मानवता का विश्लेषण करते समय हुई। पर पश्चिम के सम्बन्ध और हमारे संबंध में अंतर है।

दत्तोपंत ठेंगड़ी ने दीनदयाल उपाध्याय के उपरोक्त विचार को समझाते हुए दो चक्रीय रचनायें प्रस्तुत की हैं।[5] पहले प्रकार की चक्रीय रचना में पश्चिमी कल्पना का चित्रण किया गया है, जिसमें व्यक्ति का एक चक्र है वह अपने आप में पूर्ण है, उसको आवृत्त करने वाला उससे बड़ा घेरा परिवार का है, वह भी अपने आप में पूर्ण है, उसके बाद क्रमश: समुदाय, राष्ट्र और मानवता का चक्र है जो सब अपने आप में पूर्ण है। इस व्यवस्था में सभी घेरे एक दूसरे को आवृत अवश्य करते हैं, किन्तु एक-दूसरे से असम्बद्ध हैं, एक दूसरे से अलग हैं और एक दूसरे से निर्गमित नहीं होते। इस व्यवस्था में एक की संवेदना दूसरे के साथ जुड़ी हुई नहीं है और यही

समाज के लिए बड़ा संकट का कारण है। देश के एक हिस्से में उत्पात होता है, लेकिन मुझे दर्द क्यों नहीं होता? क्योंकि उस हिस्से के साथ मैं अपना कोई सम्बन्ध मानता ही नहीं। वह अलग प्रांत है और मेरा अलग प्रांत है, ऐसी भावना मन में बैठ गयी है। यह पश्चिम की समाज व्यवस्था है।

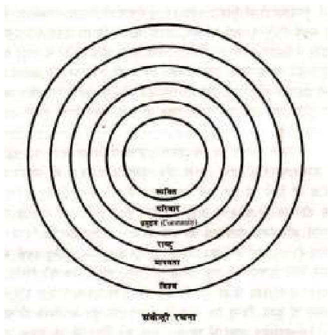

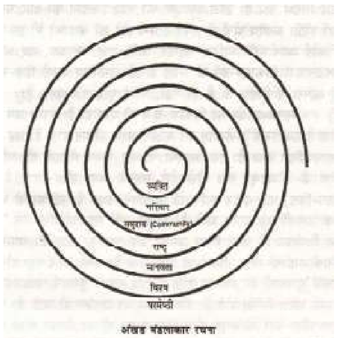

अखंड मंडलाकार रचना

दूसरी तरफ भारतीय दृष्टिकोण में जो सम्बन्ध बताया गया है, वह इस प्रकार का चक्र है, जैसे सर्प कुण्डली मार कर बैठता है। इसे कुण्डलित, सर्पित या उत्तरोत्तर वृद्धि करने वाली अखण्ड मण्डलाकार रचना कहा जाता है। इसका प्रारंभ व्यक्ति से होता है। और व्यक्ति को लेकर व्यक्ति से सम्बन्ध न तोड़ते हुए उसी से सम्बन्ध कायम रखते हुए अगला घेरा परिवार का है। उसे खण्डित न करते हुए उससे बड़ा घेरा समाज का है। उसे खण्डित न करते हुए उसी से सम्बद्ध दूसरा घेरा राष्ट्र का है। सातत्य रूप से उससे ऊपर का घेरा मानवता का है। और चरम शिखर पर चराचर विश्व का घेरा है। इसमें सभी चक्र एक दूसरे के साथ जुड़े हुये हैं। किसी भी एक हिस्से पर चोट करने पर पूरा समाज खड़ा हो जायेगा, जिस प्रकार से सर्प कुण्डली मार कर बैठा हो और उसकी पूँछ पर चोट मारी जाए तो सम्पूर्ण सर्प खड़ा हो जाता है। दीनदयाल उपाध्याय ने कहा अगर इस प्रकार का सम्बन्ध मानेंगे तो समाज के किसी भी हिस्से पर कहीं भी दुख-दर्द आयेगा तो सम्पूर्ण समाज की संवदेना जगेगी। पहली प्रकार की रचना (पाश्चात्य जीवन रचना) से संवदेनाशून्य समाज खड़ा होता है और एकात्म मानववाद के आधार पर जिस रचना की कल्पना की गई है, उसमें से संवदेनशील समाज खड़ा होता है।

एकात्म मानवदर्शन और राजनीतिक व्यवस्था

दीनदयाल उपाध्याय की राजनीतिक विचारधारा में भी हमें स्वदेशी तथा राष्ट्रप्रेम की झलक देखने को मिलती है। वे कहते हैं कि राष्ट्र प्रेम एक जन्मजात मूल-प्रवृति है और इसलिए सबके भीतर पायी जाती है। यदि किसी व्यक्ति के पास इसकी न्यूनता है, तो यह 'विकृति' है और धर्म द्वारा उसका संशोधन होना चाहिए। उनके अनुसार राष्ट्र-प्रेम एक एकात्म निष्ठा की वस्तु है। यह विवाद और तर्क की वस्तु नहीं है। यह स्वयं-सिद्धियों की भाँति अनिदर्शनीय है। यह विश्वास की वस्तु है। राष्ट्रीयता पुरस्कार की भी वस्तु नहीं है। यदि कोई व्यति राष्ट्र-प्रेम के लिए मूल्य या कीमत मानता है तो वह राष्ट्रद्रोही है। जहाँ तक राष्ट्र के अर्थ का प्रश्न है, उपाध्याय राष्ट्र को एक आध्यात्मिक वस्तु मानते थे। राष्ट्र को परिभाषित करते हुए उन्होंने लिखा है, ''भूमि, जन और संस्कृति के संघात से राष्ट्र का निर्माण होता है।[6] राष्ट्र एक जीवमान इकाई है। वर्षो-शताब्दियों

लम्बे कालखण्ड में इसका विकास होता है। किसी निश्चित भू-भाग में निवास करने वाला मानव समुदाय जब उस भूमि के साथ तादात्म्य का अनुभव करने लगता है, जीवन के विशिष्ट गुणों को आचरित करता हुआ समान परम्परा और महत्त्वाकांक्षाओं से युक्त होता है, सुख-दु:ख की समान स्मृतियाँ और शत्रु-मित्र की समान अनुभूतियाँ प्राप्त कर परस्पर हित सम्बन्धों में ग्रथित होता है, संगठित होकर अपने श्रेष्ठ जीवन-मूल्यों की स्थापना के लिए सचेष्ट होता है और इस परम्परा का निर्वाह करने वाले तथा उसे अधिकाधिक तेजस्वी बनाने के लिए महान् तप, त्याग, परिश्रम करने वाले महापुरूषों की श्रृंखला निर्माण होती है, तब पृथ्वी के अन्य मानव समुदायों से भिन्न एक सांस्कृतिक जीवन प्रकट होता है। इस भावात्मक स्वरूप को ही राष्ट्र कहा जाता है। जब तक यह राष्ट्रीयता अस्मिता बनी रहती है राष्ट्र जीवित रहता है। इसके क्षीण होने से राष्ट्र क्षीण होता है और नष्ट हो जाता है। इस प्रकार राष्ट्र एक स्थायी सत्य है।''[7]

दीनदयाल उपाध्याय भारतीय परंपरा के अनुसार राष्ट्र को एक स्वयंभू, सावयव और जीवमान सत्ता मानते थे। वे कहते थे समाज केवल व्यक्तियों का समूह अथवा समुच्चय नहीं, अपितु एक जीवंत सावयव सत्ता है। भूमि विशेष के प्रति मातृभाव रखकर चलने वाले समाज से राष्ट्र बनता है। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी एक विशेष प्रकृति होती है, जो ऐतिहासिक अथवा भौगोलिक कारणों का परिणाम नहीं, अपितु जन्मजात है। इसी जातिगत वैशिष्ट्य या भावना को **'चिति'** कहते हैं।[8] यही राष्ट्र का केंद्र-बिन्दु है। 'चिति' ही राष्ट्रत्व का द्योतक है। उन्होंने **'चिति'** की तरह ही **'विराट'** की अवधारणा को दिया है। उन्होंने कहा है कि **'विराट'** का जागरण करें। विराट राष्ट्र की धारणा शक्ति है। उसको जागृत किये बिना हमारे मन की जो कुछ कल्पना है, उसका क्रियान्वयन नहीं हो सकता। समाज की संगठित शक्ति का नाम ही 'विराट' है। दीनदयाल उपाध्याय ने जो कुछ कहा उसे एक वाक्य में कहा जाये तो अतीत के गौरव, वर्तमान के स्वाभिमान और भविष्य के विश्वास को लेकर 'चिति' के प्रकाश में 'विराट' को जगाकर नव रचना खड़ी करने का प्रयास करें।

दीनदयाल उपाध्याय के राज्य की कल्पना भारतीय राज्य का आदर्श **'धर्मराज्य'** रहा है। यह एक असांप्रदायिक राज्य है। सभी पंथों और उपासना पद्धतियों के प्रति सहि‍ष्णुता एवं समादर का भाव भारतीय राज्य का आवश्यक गुण है। अपनी श्रद्धा और अंत:करण की प्रवृति के अनुसार प्रत्येक नागरिक का उपासना का अधिकार अक्षुण्ण है तथा राज्य संचालन अथवा नीति-निर्देशन में किसी भी व्यक्ति के साथ मत या संप्रदाय के आधार पर भेदभाव नहीं हो सकता। 'धर्मराज्य', थियोक्रेसी अथवा मजहबी राज्य नहीं है। 'धर्मराज्य' किसी व्यक्ति अथवा संस्था को सर्वसत्ता-संपन्न नहीं मानता। सभी नियमों और कर्तव्यों से बँधे हुए हैं। कार्यपालिका, विधायिका और जनता सबके अधिकार धर्माधीन हैं। स्वैराचरण कहीं भी अनुमत नहीं। विधि के अनुसार शासन, धर्मराज्य की कल्पना को व्यक्त करने वाला निकटतम शब्द है। निरंकुश और अधिनायकवादी प्रवृत्तियों को रोकने तथा लोकतंत्र को स्वच्छंदता में विकृत् होने से बचाने में धर्मराज्य ही समर्थ है। राज्यों की अन्य कल्पनाएँ अधिकारमूलक हैं, किंतु धर्मराज्य कर्तव्य-प्रधान है। फलत: इसमें अपने अधिकारों के हनन की आशंका, असीम अधिकार प्राप्ति की लालसा, सीमित अधिकारों से असंतोष, अधिकारारूढ़ होने पर कर्त्तव्यों की उपेक्षा; अधिकार-मद, विभिन्न अधिकारों के बीच संघर्ष इन सबके लिए कोई गुंजाइश नहीं है। उपाध्याय के 'धर्मराज्य में जनाधिकारों को समाप्त नहीं किया जा सकता। जनता का इन मूलभूत अधिकारों के प्रति जागरूक रहना कर्त्तव्य है।

दीनदयाल उपाध्याय संविधान के बारे में एक सूत्र वाक्य कहते हैं ''हमें संविधान संघात्मक नहीं एकात्मक चाहिये, जिससे सामाज एक बना रहे, समरस बना रहे, उसमें टुकड़े न हो और न भेद उत्पन्न हो।'' शासक की नीति कैसी हो अर्थात प्रशासन कैसा हो? इस विषय में उनका कहना है कि ''शासक न उग्र दण्ड हो और न ही क्षीण दण्ड, अपितु मृदु दण्ड चाहिए अर्थात शासक बिल्कुल ही आतंकी भी न बन जाय और ढ़ीला प्रशासन भी न हो कि कोई बात ही न माने।''

राज्य को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि राज्य राष्ट्र का एजेन्ट है, जैसे कम्पनी का एजेन्ट होता है। राष्ट्र के लिए राज्य चाहिए, राज्य के लिए राष्ट्र नहीं। लेकिन आज उल्टा हो रहा है। आगे इसी बात को समझाते हुए उन्होंने कहा कि ''राजनीति के लिए राष्ट्रीयता नहीं राष्ट्रीयता के पोषण के लिए राजनीति होनी चाहिए। वह राजनीति जो राष्ट्र को क्षीण करे अवांछनीय है।'' आज के समय में इसका मनन करना बहुत ही आवश्यक है।

एकात्म मानवदर्शन और आर्थिक व्यवस्था

पंडित दीनदयाल उपाध्याय के आर्थिक विचार सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। वे अर्थनीति में भी 'स्वदेशी' भावना अर्थात 'अर्थनीति के भारतीयकरण को महत्व देते थे। उनका मानना था कि पश्चिम का आर्थिक दृष्टिकोण सर्वथा एकांगी हैं। पूँजीवाद केवल उत्पादन पर ही अधिक बल देता है। इस वृद्धिगत उत्पादन के कारण ही नवीन यन्त्रों का आविष्कार किया गया और इन यन्त्रों के स्वामी ही उत्पादन के स्वामी भी बन गये। लाभ में जब श्रमिकों को यथेष्ट भाग नहीं मिला, तब उनमें प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई जिसके परिणाम स्वरूप एक नई प्रणाली समाजवाद या साम्यवाद उत्पन्न हुई। समाजवाद भी एकांगी है, क्योंकि यह केवल वितरण की ही प्रणाली हो सकती है, उत्पादन की नहीं।

पूँजीवाद और समाजवाद दोनो ही आर्थिक प्रणालियाँ उपभोगप्रधान है, क्योंकि दोनों ही अर्थ और काम- उपभोग को ही मानव-जीवन का लक्ष्य मानती है। साधारणतया इच्छाओं और आवश्यकताओं के अनुसार उत्पादन किया जाता है, पर अब उत्पादन के अनुसार इच्छाओं की कृत्रिम उत्पत्ति की जा रही है, जिससे की उत्पादित वस्तुओं को बेचा जा सके। दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार यह अप्राकृतिक एवं अमर्यादित आर्थिक व्यवस्था है। प्रकृति की भी एक मर्यादा होती है। उसका अतिक्रमण करने से प्रकृति अपना कार्य बन्द कर देती है। अत: आर्थिक नीति का आधार शोषण नहीं, दोहन होना चाहिए। वे संयमित उपभोग के समर्थक थे। वे कहते थे कि अधिकाधिक उपभोग का सिद्धान्त ही मनुष्यों के दु:खों का कारण है। उपभोग की इच्छा को कभी भी तृप्त नहीं किया जा सकता। वर्ग-संघर्ष जिसके उपर समूचा साम्यवाद खड़ा है, ऐसे उपभोग के कारण ही उत्पन्न होता है।

जहाँ पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों के मनुष्य की कल्पना '**आर्थिक मनुष्य**' की कल्पना है, जो अर्थ और काम को ही जीवन का एकमात्र पुरूषार्थ मानती है। वहीं उपाध्याय जी अपनी अर्थनीति में अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष चारों पुरूषार्थो को महत्त्व देते थे। वे '**सम्पूर्ण मानव**' को इकाई मानकर चलते थे। उनके अनुसार जब तक एक-एक व्यक्ति की विशि टता-विविधता को ध्यान में रखकर हम उसके विकास की चिंता नहीं करेंगे, तब तक मानवता की सच्ची सेवा नहीं हो सकती। समाजवाद और पूँजीवाद दोनों ने मनुष्य को व्यवस्था के निर्जीव यन्त्र का एक पूर्जा

मात्र बना डाला। 'एक स्वतंत्र जुलाहे को समाप्त कर उसे विशाल कारखाने का मजदूर बना दिया गया। वे आर्थिक लोकतंत्र तथा विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था के पक्षधर थे। **आर्थिक-लोकतंत्र** का आशय है हर वयस्क को कार्यावसर। किसी भी अर्थव्यवस्था के अच्छे होने का मापदण्ड है कि वह अपने आने वाली पीढ़ियों को कार्यावसर देती है या नहीं। दीनदयाल उपाध्याय कहते हैं कि- ''मानव को पेट और हाथ दोनों मिले हुए हैं। यदि हाथों को काम न मिले और पेट को खाना मिलता रहे, तो भी मनुष्य सुखी नहीं रहेगा। अत: प्रत्येक को काम अर्थव्यवस्था का आधारभूत लक्ष्य होना चाहिए।''[9]

विकेंद्रित अर्थव्यवस्था आर्थिक-लोकतंत्र का अनिवार्य परिणाम है। दीनदयाल उपाध्याय विकेंद्रीकरण को अर्थव्यवस्था का केंद्रीय मुद्दा मानते हैं। वह बड़ी-बड़ी उत्पादन इकाइयों एवं बड़े-बड़े उद्योगों के सहारे ही अर्थव्यवस्था चलाने के पक्षधर नहीं थे, क्योंकि इससे देश में केंद्रीकरण पनपता है, जो विषमता और बेरोजगारी को बढ़ाता है। उनके अनुसार- ''हमें व्यक्ति और परिवार आधारित लघुयंत्राधिष्ठित (कुटीर और छोटे-छोटे उद्योग आधारित) आर्थिक विकेंद्रीकरण की प्रणाली विकसित करने पर जोर देना चाहिए और श्रम-प्रधान विकेंद्रित ग्रामोद्योगों को सुदृढ़ करना चाहिए।''[10] आर्थिक दृष्टि से उन्होंने एक और परिकल्पना की है, वह है '**अर्थायाम**'। यह अर्थायाम क्या है? इस संबंध में उन्होंने कहा कि अर्थायाम समाज की ऐसी अर्थ रचना है, जिसमें न अर्थ का अभाव हो और न ही प्रभाव हो। उत्पादन वितरण और उपभोग इन तीनों के बीच संतुलन बिठाने वाली अर्थ रचना को उन्होंने अर्थायाम कहा। यदि दीनदयाल जी के अर्थ-चिन्तन को सरल भाषा में कहना हो तो तीन डाइरेक्शन निकलते हैं, हरपेट को रोटी, हर हाथ को काम और हर खेत को पानी। इस प्रकार 'अर्थ का अभाव एवं अर्थ का प्रभाव' के माध्यम से उन्होने दुनिया की सारी समस्याओं को अनुठे अंदाज में समेट दिया। उनके अनुसार सारी समस्याएं या तो धन की कमी के कारण हैं या धन की अधिकता के कारण। इसलिए उन्होने जो आदर्श व्यवस्था दी उसका लक्ष्य हर लिहाज से संतुलनकारी व्यवस्था बनाने का था। इसके लिए उन्होने साध्य-साधन विवेक तथा आर्थिक स्वातंत्र्य की ऐसी व्यवस्था बनाने का आग्रह किया जो भारतीय द्वारा दिए गए चार पुरूषार्थों- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के सामन्जस्य से निर्मित हो।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय देश की मानवीय शक्ति और बेकारी देखकर लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास के पक्षपाती थे। वे बड़ी-बड़ी उत्पादन इकाइयों एवं बड़े-बड़े उद्योगों के सहारे ही अर्थव्यवस्था चलाने के पक्षधर नहीं थे। वो ऐसी औद्योगिक व्यवस्था के पक्षधर थे, जो कृषि के साथ सुसंबद्ध हो सके और कृषि से जनसंख्या का भार कम कर सके। उनका मानना था कि बढ़ती जनसंख्या का खेती पर से भार घटाने, कृषि से उत्पन्न कच्चे माल का उपयोग करने और कृषि को आवश्यक साधन सामग्री, यंत्र औजार प्रदान करने, रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने, देश की निर्यात क्षमता बढ़ाने, स्वावलंबन आदि कई दृष्टियों से औद्योगिकीकरण अत्यंत आवश्यक है, किंतु वे कुछ विशेष क्षेत्रों एवं विशेष वस्तुओं के उत्पादन को छोड़कर शेष सबके लिए बड़े उद्योगों के स्थान पर श्रम-प्रधान लघु एवं कुटीर उद्योगों के अधिक पक्षधर थे।

दीनदयाल उपाध्याय अत्यधिक यान्त्रिकीकरण के विरोधी थे। वे कहते थे यन्त्र मानव का सहायक है, प्रतिस्पर्धी नहीं, किन्तु जहाँ मानव-श्रम को एक विनिमय की वस्तु समझकर उसका मूल्यांकन रूपयों में होने लगा, वहाँ मशीन मानव की प्रतिस्पर्धी बन गयी। यह पूँजीवादी

दृष्टिकोण का दोष है। वे आगे कहते हैं- ''राजनीति में व्यक्ति की रचनात्मक क्षमता को जिस प्रकार तानाशाही नष्ट करती है, उसी प्रकार अर्थनीति में व्यक्ति की रचनात्मक क्षमता को भारी पैमाने पर किया गया औद्योगिकीकरण नष्ट करता है। ऐसे उद्योगों में व्यक्ति स्वयं भी मशीन का एक पुर्जा बनकर रह जाता है। इसलिए तानाशाही की भांति ऐसा औद्योगिकीकरण भी वर्जनीय है।''[11] दीनदयाल उपाध्याय भारी उद्योगों के प्रतिकुल नहीं थे, पर वे उन्हीं भारी उद्योगों को चाहते थे, जो लघु उद्योगों के चलाने के लिए आवश्यक हैं या सुरक्षा सम्बन्धी है। उनके अनुसार पूँजी और श्रम में कोई आत्यन्तिक भेद नहीं है। श्रम भी एक प्रकार की पूँजी है और पूँजीपति भी एक प्रकार का श्रमिक हैं, क्योंकि वह व्यवस्था करने में श्रम करता है। अत: दोनों में सहयोग हो सकता है। उद्योगों में पूँजीपतियों और श्रमिकों दोनों के सहकारीकरण से पूँजीवाद और समाजवाद दोनों की अच्छाइयों को सुरक्षित एवं उनकी बुराइयों को दूर किया जा सकता है। उनका मानना था कि देश की सम्पत्ति का स्वामित्व जनता के हाथ में, न कि सरकार के हाथ में होना चाहिए। सरकार का कार्य उद्योगों का मार्गदर्शन करना व आर्थिक सहायता देना है, नियंत्रण करना नहीं।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि एकात्म मानवदर्शन अर्थात एक ऐसा समग्र जीवन दर्शन, जिसमें शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा, व्यक्ति, समाज, राष्ट्र, विश्‍व, प्रकृति एवं परमात्मा तथा अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष सभी की युगपद सिद्धि सम्भव हो सके। आज जब भोगवादी विकास के सिद्वांतों से दुनिया भर में सुख क्षीण हो रहा है, संसाधनों के अनुचित प्रयोग से मानव के अस्तित्व पर ही संकट आ गया है, तब पंडित दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानवदर्शन की प्रासंगिकता और भी बढ़ गई है।

संदर्भ सूची :

1 उपाध्याय, दीनदयाल (2014), 'एकात्म मानववाद : विवेचन' (संपादक- डॉ. महेश चन्द्र शर्मा), प्रभात प्रकाशन, नई-दिल्ली, पृष्ठ. 35

2 उपाध्याय, दीनदयाल (2014), 'एकात्म मानववाद : सिद्धांत' (संपादक- डॉ. महेश चन्द्र शर्मा), प्रभात प्रकाशन, नई-दिल्ली, पृष्ठ. 08

3 उपाध्याय, दीनदयाल (2010), 'एकात्म मानववाद', अर्चना प्रकाशन, भोपाल, पृष्ठ. 30

4 उपाध्याय, दीनदयाल (2014), 'राष्ट्र चिन्तन', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, पृष्ठ. 50

5 ठेंगड़ी, दत्तोपंत (2009), 'एकात्म मानवदर्शन: एक अध्ययन', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, पृष्ठ. 31-35

6 उपाध्याय, दीनदयाल (2014), 'राष्ट्र चिन्तन', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, पृष्ठ. 130

7 उपाध्याय, दीनदयाल (2010), 'राष्ट्र जीवन की दिशा', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, पृष्ठ. 37-38

8 उपाध्याय, दीनदयाल (2014), 'एकात्म मानववाद : सिद्धांत' (संपादक-डॉ. महेश चन्द्र शर्मा), प्रभात प्रकाशन, नई-दिल्ली, पृष्ठ. 09

9 गुप्ता, बजरंगलाल (2018), 'हिन्दू अर्थ-चिंतन : दृष्टि एवं दिशा', प्रभात प्रकाशन, नई-दिल्ली, पृष्ठ. 75

10 उपाध्याय, दीनदयाल (2010), 'राष्ट्र जीवन की दिशा', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, पृष्ठ. 128

11 उपाध्याय, दीनदयाल (2014), 'राष्ट्र चिन्तन', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, पृष्ठ. 73

❑❑❑

शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्‍वविद्यालय, वाराणसी, ईमेल:- gunjeshgautam@gmail.com, सम्पर्क सूत्र:- 09026028080

हिंदी कथा साहित्य में नारी संवेदना का उदय

—डॉ देबश्री सिन्हा

महिला लेखन नारी विषयक समस्याओं से जुड़कर भी सामाजिक सरोकारों से अछूता नहीं रहा है। इसमें मानवीय संबंध ों को जाँचने और परखने की सूक्ष्म दृष्टि निश्चित रूप से विद्यमान है और सामाजिक यथार्थ के अंकन की कोशिश भी स्पष्ट दिखायी देती है। कृष्णा सोबती की संपूर्ण कथा कृतियाँ सूरजमुखी अंधेरी के ये बिछुड़िया अनारों और बेघर की पाशों अनारों और संजीवनी पुरुष की रूढ़िवादी संकीर्णताओं का भाव उनमें नहीं है।

महिला लेखन ही यह अन्यतम उपलब्धि है कि उसने एक ओर नारी हृदय को विविध कोणों से परखकर ईमानदार अभिव्यक्ति प्रदान की ओर दूसरी ओर नारी को परंपरा पोषित मान्यताओं के पास से मुक्त करके 'मानवी' के रूप में प्रतिष्ठित किया। भारतीय आदर्शों में रची-बसी सती नारी के स्थान पर उस नारी का चेहरा सापने आया जिसे अपनी महत्ता और अस्मिता पर गर्व था। महिला लेखन पुरुष की बँधी-बँधायी पूर्वाग्रह से संचित दृष्टि को त्याग कर नारी को व्यक्ति रूप में देखने का पक्षहार है जहाँ पुरुष सापेक्ष भूमिकाओं की सीमित पनिधि से मुक्त होकर एक विशुद्ध नारी के रूप में उसकी पहचान सम्भव हो। वह नारी जिसके मन में अपनी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आर्थिक दुर्बलताओं के प्रति दया का भाव नहीं उपजता, देह संस्कार, संवेदना और विवेक किसी भी स्तर पर वह अपना मूल्यांकन परम्परागत पुरुष निर्मित प्रतिमानों के आधार पर नहीं करती।

स्त्री-लेखन के वैकल्पिक मानदंडों के निर्माण की जब कोशिशें शुरू की गई तो उन्हें 'खास' या 'विशिष्ट' या 'स्पेशल केस' के रूप में देखा गया। फलत: स्त्री लेखन हाशिए पर चला गया या 'स्त्री अध्ययन' से 'स्त्री लेखन' को जोड़कर विशेष पाठ्यक्रम बनाकर मुख्य धारा के साहित्य से अलग करके पेश किया गया। साहित्य में व्याप्त इस लिंगभेद को समाप्त करना आवश्यक है। स्त्री लेखन को केवल स्त्री समस्याओं से जोड़ना एक प्रकार से केंचुआ प्रवृत्ति ही है। इस संकुचित तथा लिंगभेदीय वृत्ति से हिंदी साहित्य मुक्त होना चाहिए। रचना, रचना होती है, उसे स्त्री या पुरुष रचना के रूप में बॉटकर नहीं देखा जाना चाहिए,परंतु आज तक महिला लेखन को केवल स्त्री-विमर्श तक ही मर्यादित करके उसका अध्ययन-अध्याय एवं अनुसंधान किया जाता रहा है। इस वृत्त को तोड़ने की दृष्टि से यह प्रस्तुत ग्रंथ मौलिक है। इसमें

महिला उपन्यासकारों के बहुआयामी लेखन का अध्ययन किया गया है।

महिलाओं ने ज्यादातर कथा साहित्य में ही अपनी कलम चलाई हैं। महिला लेखिकाओं ने समाज के प्रत्येक स्तर के लोगों के जीवन की पीड़ा, त्रासदी, वेदना, आज वैश्वीकरण के दौर में महिला लेखिकाओं की अभिव्यक्ति महत्वपूर्ण उपलब्धि है। महिला लेखन पर आरोप लगाया जाता है कि वह परिवार तक ही सीमित है, परंतु प्रस्तुत ग्रंथ के द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि महिला लेखन बहुआयामी है। उसमें परिवार ही नहीं पूरा समाज समाहित है। समाज का परिवेश, हाशिए का समाज समाविष्ट है। साथ ही अनेक समस्याओं को बहुत संवेदनशीलता एवं सूक्ष्मता से महिला उपन्यासकारों ने उजागर किया है।

जगदीश्वर चतुर्वेदी ने कहा है, **'साहित्य' के माध्यम से सामाजिक विषमताओं एवं लिंगभेदीय असमानताओं के उद्घाटन में महत्वपूर्ण मदद मिलती है, बशर्ते कि साहित्य स्वयं में लिंगभेदीय पूर्वाग्रहों से मुक्त हो। हकीकत यह है कि पुरुष निर्मित साहित्य रूप में पुरुष पाठ का निर्माण हुआ है और तद्नुरूप पुरुषवादी साहित्यिक मानदंडों का भी निर्माण हुआ है। पुरुष का पाठ, मानदंड और रूप-तत्व सभी आमतौर पर साहित्य के पर्याय के रूप में स्वीकृत कर लिए गए हैं।** पुरुष लेखन से भिन्न स्त्री लेखन को आमतौर पर साहित्य की मुख्य धारा में सम्मानजनक दर्जा नहीं मिला है। समकालीन शब्द कालीन विशेषण में सम उपसर्ग जोड़ने से बना है। कालीन का अर्थ है काल में या समय में। सम उपसर्ग का प्रयोग प्राय: एक ही या एक साथ के अर्थ में होना है। अत: समकालीन शब्द समय की धारणा से संबंध एक विशेषण है जो सामान्यता एक ही समय में रहने या होने वाले रचनाकारों का बोध कराता है। नालेदा अद्यतन कोश में भी समकालीन फाब्द का प्राय: सही अर्थ दिया गया है। इस कोश के अनुसार समकालीन फाब्द सम उपसर्ग को कालीन काल की अवधारणा से जुड़ा हुआ एक विशेषण में लगाकर बनता है,जिसका अर्थ है जो एक ही समय में हुआ है। आजकल यह देखने में आ रहा है कि इन दिनों आधुनिक, समकालीन, अत्याधुनिक, समसामयिक, सांप्रतिक और फिलहाल जैसे शब्दों के प्रयोग में पूरी सावधानी नहीं बरती जाती हैं। विशेषकर आधुनिक, समकालीन और सामयिक में अर्थ का काफी अंतर है।

आधुनिक का अर्थ काल-सापेक्ष भी है जबकि समकालीन का अर्थ केवल काल-सापेक्ष है। इसीलिए आधुनिक और समकालीन एक-दूसरे के पर्याय नहीं है।जो आधुनिक है वह भी समकालीन हो सकता है और समकालीन के लिए यह आवश्यक नहीं कि वह आधुनिक हो। अर्थात् आधुनिक हुए बिना भी कोई समकालीन हो सकता है। आज के अधिकतर साहित्यकार वचन प्रवीण होकर ही संतुष्ट हैं। कलम के दायित्व बोध से विमुक्त अधिकतर समकालीन साहित्यकार बिना सिद्धि के प्रसिद्धि के आखेट में निकला हुआ अंध अहेरी बनकर रह गया है। भीड़ के बीच चारों ओर से घिरा हुआ आज का व्यक्ति एकाकी है। जबकी सर्व विदित तथ्य यह है कि वह अकेले में भीड़ के भीषण दबाव को झेलता हैं। आज मनुष्य की स्थिति बहुत ही विचित्र है।

साहित्य में एक ओर तो सिद्धांतों की बड़ी-बड़ी और सूक्ष्म बातें विमर्श और बहस के केन्द्र में रहा करती है। तो दूसरी ओर पद, पैसा, प्रतिष्ठा, संपर्क, जाति-बिरादरी, गोत्रादि के विभिन्न संदर्भों से समीकरणों के आधार पर मूल्यांकन की तथाकथित प्रक्रिया का यज्ञ भी निर्भीक भाव से जारी रहता है। हमें यह ध्यान में रखना होगा कि साहित्य की पहली और अनिवार्य शर्त का तुक केवल पीड़ा से नहीं मिला है। बल्कि उसमें जीवन की सुखात्मक झाँकियाँ भी सम्मिलित होती है। साहित्य में अंकित मनुष्य जीवन को अगर समझना है, तो वह जिस समाज में रहता है उस समाज को, समाज जीवन को समझना अत्यावश्यक बन जाता है। जिसे समझने के लिए पहले हमें समाज का अध्ययन करने के शास्त्रीय मानदंडों को समझना आवश्यक बन जाता है। इन मानदण्डों का शास्त्र याने समाजशास्त्र कहा जाता है। तो साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन से पहले समाजशास्त्र को समझना आवश्यक हैं।

महिला लेखन नारी विषयक समस्याओं से जुड़कर भी सामाजिक सरोकारों से अछूता नहीं रहा है। इसमें मानवीय संबंधों को जाँचने और परखने की सूक्ष्म दृष्टि निश्चित रूप से विद्यमान है और सामाजिक यथार्थ के अंकन की कोशिश भी स्पष्ट दिखायी देती है। कृष्णा सोबती की संपूर्ण कथा कृतियाँ सूरजमुखी अंधेरी के ये बिछुड़िया अनारों और बेघर की पाशों अनारों और संजीवनी पुरुष की रूढ़िवादी संकीर्णताओं का भाव उनमें नहीं है। महिला लेखन बहुआयामी होने के कारण लोकप्रियता के जिस सोपान तक पहुँचा संभवत: इसका कारण स्वानुभूति, संघनता, विचारों की गहनता और विषय की रोचकता है।

सह लेखन अतीत को ध्वस्त वर्तमान से संघर्ष और सुखद भविष्य के सपने संजोने के लिए नारी को प्रेरित करता है। नारी सपस्याओं को नहीं अपितु स्वयं नारी को कैनवास पर उतारकर पूर्णत: अंतरंग होकर उस पुरुष के समकक्ष लाने की यह कोशिश वस्तुत: सत्य है। नारी की वर्तमान स्थिति को लेकर आज की लेखिका के मन में असंतोष एवं आक्रोश है। सामाजिक वैशम्य से जन्मी पीड़ा को लेकर छटपटाहट है और मुक्ति की उत्कंठा उसके रोम-रोम में परिव्याप्त है। सुधीश पचौरी का मत था कि साहित्य में भी स्त्रीवाद एक ग्लोबल आंदोलन है इसीलिए यह लेखन से अधिक एक राजनीतिक संघर्ष है, निर्मल वर्मा ने कहा कि स्त्री संवेदना का होना एक बात है, पर नारीवाद का झंडा उठाए घूमना दूसरी बात। केदारनाथ सिंह ने दूसरी भाषाओं के महिला लेखकों की रचनाओं के हिन्दी अनुवाद के खराब स्तर पर दुख प्रकट किया।

डॉ. चमनलाल ने कहा कि **जब तक समाज में असमानता है तब तक साहित्य में भी रहेगी। हिन्दी की वरिष्ठ लेखिका कृष्णा सोबती ने सदा की तरह स्त्री लेखन शब्द पर एहसान जताते हुए कहा कि लेखन एक बड़ा अनुशासन है इसे महिला लेखन के छोटे चौकटे में कैद नहीं किया जा सकता। महिला लेखन करने से हर कोई हमें दलित समझने लगता है। उन्होंने पूछा, आप यदि लेखक हैं तो मैं महिला लेखक क्यों हूँ, उन्होंने कहा कि हमारी दिलचस्पी शब्द संस्कृति को बचाने से अधिक साहित्य में राजनैतिक कारोबार करने में है। कहते है साहित्य में रंग वर्ण, जाति सम्प्रदाय का भेद नहीं होता। पर मै कहती हूँ होती हैं। जो लिख रहा है, उसे वर्षो से अपने संस्कार, इतिहास, परिवेश से जो सोच मिली**

है, जो मानसिकता मिली है, उसे वर्षों से अपने संस्कार, इतिहास, परिवेश से जो सोच मिली है, जो मानसिकता मिली है वह सब उसके साहित्य में परिलक्षित होता है। इसीलिए वही कथानक जब चित्रा मुद्‌गल के हाथ में आता है तो उसका ट्रीटमेंट बिल्कुल भिन्न होता है।

इस समय की लेखिकाएं स्त्री की नयी छवि गढ़ने की कोशिश कर रही हैं। वहीं स्त्री जब 'एक जमीन अपनी' में आती है, तो वह संतुलित, पूरी मानवीय गरिमा के संग, क्या उसको चुनना है, क्या छोड़ना है इस मानवीय बुद्धि के संग, क्षमता के संग आती है। अन्ततः एक रास्ता भी बताती है कि लड़की का क्या अभीष्ट होना चाहिए, क्या नहीं होना चाहिए। इस दशक का कथा-साहित्य समस्याओं की प्रस्तुति का साहित्य है। जीवन के अनुभवों को बाँटना सर्वांगीण सन्दर्भों में बिम्बों को तलाशता तथा स्त्री विमर्श जैसी अलगाती मुद्राओं में क्षत-विक्षत चेहरे वाली सोच को हटाता, रातनीतिक विद्रूपताओं का पर्दाफाश करता है यह कथा-साहित्य। आतंकवाद, हिंसा, धर्मांध संकीर्णताओं के बीच संरचनावाद और पूँजीवादी खतरों में यह साहित्य टुकड़ों-टुकड़ों में विभक्त मानवीय चेतना को समग्रता में सुरक्षित करके इतिहास के नए मानदण्ड भी स्थापित कर रहा है।

अतः इस दशक के कथा कथा-साहित्य में अप्रासंगिक रूढ़ियों को ध्वस्त करने तथा नये मूल्यों को स्थापित करने की छटपटाहट दिखाई देती है। यद्यपि इस दशक में भीष्म साहनी,उदय प्रकाश, राजकमल चौधरी, रवीन्द्र कालिया, चंद्रकांता, कृष्णा सोबती, चित्रा मुद्‌गल, महीप सिंह, काशीनाथ सिंह, राजेन्द्र यादव तथा नासिरा शर्मा आदि साहित्यकार उल्लेखनीय है। वास्तव में लेखन की कसौटी पुरुष एवं महिला लेखन की अलग-अलग नहीं हो सकती। प्रत्येक लेखक सत्य की तलाश, सम्भावनाओं की तलाश अपनी संवेदनात्मक आवश्यकता के अनुरूप करता है। इस तरह से हर लेखक हर दूसरे लेखक से भिन्न होता है। ऐसी स्थिति में एक वर्ग के रूप में उनके लेखन को विभाजित कर उसकी करना उन्हें खाँचों में सीमित करने का प्रयास ही दिखायी देता है। खाँचे में विभाजित कर उसकी चेतना की अभिव्यक्ति को परखने,मूल्यांकित करने का अर्थ होगा इसकी सामाजिक उपस्थिति को प्रति-संसार के रूप में स्वीकृति देना काव्य मीमांसा में राजशेखर भी इस विभाजन के पक्षधर नहीं हैं। महत्वपूर्ण प्रश्न इस संदर्भ में यह है कि उनके लेखन को इस पुरुष प्रधान व्यवस्था में रचे बसे आलोचक किस कोटि का दर्जा देते है। महिला लेखन के प्रति उनका दृष्टिकोण पूर्वाग्रह ग्रस्त एवं दोयम दर्जे का है। उस पर यह आरोप आसानी से लगा दिया जाता है कि उनका लेखन सीमित अनुभव संसार से सम्बन्ध है और इसी कारण वे कालजयी रचनाएँ नहीं रच पातीं। प्रत्येक लेखक, आलोचक, विचारक, शब्दशिल्पी, सचेतन या अर्द्धचेतन रूप से स्त्री पुरूष के बौद्धिक स्तर की भिन्नता को स्वीकार करके ही चलता है।

वह स्वयं को स्त्री से श्रेष्ठ मानता है। अतः पुरुष लेखक का अपने आपको स्त्री लेखक से ज्यादा श्रेष्ठ मानना स्वाभाविक ही होगा। अधिकतर पुरुष लेखकों की दृष्टि में महिला लेखन जड़, नीरस, भावुक, लिजलिजा तथा आत्म केन्द्रित है और उसका सारा सामाजिक मूल्यांकन सबसे पहले शरीर का मूल्यांकन है। नारी लेखन में पुरुष के निगाह में अपना विसर्जन एक विशेष पुरुष रवैये या रूढ़वादी दृष्टिकोण का अनुमोदन है। यह अनुमोदन वादी साहित्य लेखन रूढ़ियों

के आस पास ही घूमता हैं। दयनीय विद्रोह का भ्रम देता हुआ। प्रभा खेतान इस संदर्भ में स्त्री की अपनी भाषा का प्रश्न उठाती हैं, क्योंकि किसी भी समुदाय का अनुभव जगत उस समुदाय के भाषायी अभ्यास द्वारा ही निर्मित होता है और उसके अभाव में उसे परम्परा से प्राप्त पुरुषों की भाषा में ही अपने अनुभवों को सम्प्रेषित करना पड़ता है। और शायद यही कारण है कि प्रचलित वर्चस्ववादी भाषा स्त्री की वाणी नहीं बन पाती हैं और बहुत कम लेखिकाएं स्त्री की निजी भाषा खोजने की चिंता करती है तो वस्तु से व्यक्ति के रूप मे पहचान बनाने को तत्पर स्त्री क्या इस पुरुष सत्तात्मक परिवेश में यह मानने को बाध्य हो जाए कि चिंतन की प्रक्रिया से उसका कोई सरोकार नहीं है, तर्क की भाषा उसे नहीं आती तथा बड़ी राष्ट्रीय, सामाजिक समस्याओं से निपटने में वह सक्षम नहीं। बहुत से कारण है। जिससे स्त्री लेखन में बहुत कुछ अनकहा रह जाता है या अतिसंक्षिप्तीकरण का शिकार होकर टिप्पणी मात्र रह जाता है। लेखन की कसौटी पुरुष एवं महिला लेखन की अलग-अलग नहीं हो सकती।

आधुनिक काल में पहुचकर तो हिंदी साहित्य के लिए नारी सर्जकों का योगदान बहुत बढ़ गया है। काव्य और गद्य दोनों क्षेत्रों में नारिया समान स्तर पर सक्रिय रही हैं। पूर्व प्रेमचंद या छायावादी युग के जिस 'बंग' महिला नामक कहानी लेखिका का नाम मिलता है उसके बारे में सन्देह है कि वह नारी ही थी अथवा कोई छद्मनामी पुरूष। जो भी हो इतना स्पष्ट है कि वहाँ मान्यता और प्रतिष्ठा इस नारी नाम को ही प्राप्त हो सकी। इसके बाद गद्य सर्जना की दृष्टि से प्रेमचंद युग के साहित्यकारों में श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान का नाम आता है। वे जितनी अच्छी लेखिका और कहानीकार थीं, उतनी ही सफल कवियत्री भी थी।

इन्हीं के समकालीन नामों में अन्य दो नाम भी विषेष उल्लेखनीय एवं महत्वपूर्ण हैं। एक नाम तारा पाण्डेय, छायावादी युग के कवि-कवियोगियों में यह नाम महत्वपूर्ण माना जाता है दूसरा और अब तक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण नारी नाम है, श्रीमती महादेवी वर्मा यह हिंदी साहित्य में दूसरी मीरा कही जाने वाली कवियत्री हैं। छायावाद हिंदी साहित्य का प्रमुख युग माना जाता है। इस युग को हिंदी साहित्य में लाने का श्रेय जिन कवियों को है महादेवी वर्मा का उनमें प्रमुख स्थान है। काव्य और गद्य के विभिन्न विधात्मक क्षेत्रों में इनके योगदान को आने वाली शताब्दियों तक कौन भुला सकता है? हमारे विचार में काव्य की चर्चा हो या गद्य के विधात्म रूपों को श्रीमती महादेवी की चर्चा के बिना से अपूर्ण ही समझा जाएगा। महादेवी छायावादी काव्यधारा के चार स्तंभों में से एक प्रमुख स्तंभ तो हैं ही, गद्य-सर्जना के क्षेत्रों में उन्हे एक प्रमुख शैलीकार का मान और महत्व प्रदान किया जाता है।

निहार, रष्मि, नीरजा, सांध्यगीत, दीपशिखा, संघिनी उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। पद्य के साथ-साथ गद्य में भी उनका प्रमुख योगदान रहा है। उनकी रचनाओं में संवेदनशीलता, कौतूहलमिश्रित वेदना की प्रधानता है। उन्होंने चैतन्य बोध स्पर्ष कर भावनिष्ठ हृदय से वेदना का घूँट पीकर प्रेम साधना की है। आधुनिक काल के साहित्य जगत में नारी की प्रतिभा विद्वता एवं गतिमा को अक्षुण्ण बनाए रखने में उनका विशेष योगदान है उन्होंने हिंदी साहित्य को छायावाद,

रहस्यवाद, प्रतीक योजना, वेदना, गीतिकला, प्रकृति चित्रण का अनुपम उपहार दिया। उनके कारण हिंदी साहित्य उनका हमेशा ऋणी रहेगा।

आज कई नवयुवतियाँ हिंदी काव्य-साहित्य के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दे रही हैं। आज का युग गद्य-रचना का युग ही प्रमुख स्वीकारा जाता है। गद्य के विधात्मक रूपों विशेषकर कहानी उपन्यास के क्षेत्र में कई नारी सर्जकों का नाम बड़े ही सम्मान के साथ लिया जाने लगा है। आज नारी ने साहित्य के क्षेत्र में सक्रिय भागीदारी निभाते हुए जीवन और समय के जटिल प्रश्नों से जूझती समाज को दस्तावेजी कृतियाँ दीं, मन्नू भंडारी जैसी कुछ ऐसी कहानी लेखिकाएँ भी हैं कि जिनकी कहानियों के अनेक फिल्मी एवं नाटय रूपान्तर सफलता और धूम-धड़ाके के साथ प्रस्तुत किये जा चुके और आज भी होते रहते हैं। कृष्ण सोबती का 'जिन्दगीनामा' दिलोदनिश मन्नू भंडारी का 'महाभोज' महाश्वेता देवी का 'जगल का दावेदार' प्रभा खेतान का 'तालाबंदी' मृदुला गर्ग का 'अनित्य' आदि अनेक रचनाएँ हैं अनेक कृतियों के माध्यम से लेखिकाओं ने संबंधों के घात-प्रतिघात घर-बाहर के दोहरे दायित्व निभाते हुए भी दुय्म दर्जे की स्थिति भोगने वाली नारी की विवशता, सामाजिक तथा संवैधानिक अधिकारों के होते हुए दफ्तर, खेत, कारखानों में भेदनीति की शिकार होने की विडम्बना आदि सामाजिक प्रश्नों पर विचार किया है।

बीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं ने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश कर पुरूषों के लिए वर्चस्व एवं एकाधिपत्य को बखूबी तोड़ा है और हर क्षेत्र में बराबरी की हिस्सेदारी निभाते हुए अपनी एक पृथक् छवि और पहचान निर्मित की है। संयुक्त राष्ट्र संघ एवं राष्ट्रीय मानवाधिकारों ने महिलाओं के आगे बढ़ने और विकास करने का मार्ग प्रशस्त किया है।

भूमण्डलीकरण-वैश्वीकरण तथा उदारीकरण के चलते आधुनिकीकरण की वैचारिकी एवं कार्य-शैली ने महिलाओं में हर क्षेत्र में प्रवेश करने की जो स्वतंत्रता और चाह उत्पन्न की है, उससे वे आत्मनिर्भर और निडर बनी हैं। अभी भी भारतीय समाज में सामन्ती अवशेष बचे हैं। जिन्हें इन महिलाओं को मिलजुलकर विनष्ट करना है। यह सच है कि भारत में अमेरिका और फ्रांस जैसे देशों की तरह नारी आंदोलन नहीं हुए, लेकिन उसकी गूंज यहाँ तक अवश्य पहुँची जिससे भारतीय महिलाओं में समान अधिकार और स्वतंत्रत होने की इच्छा बलवती हुई। परिणामस्वरूप साहित्य-लेखन में भी उनकी घुसपैठ बढ़ी। वे कविता, कथा-साहित्य, आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण आदि साहित्यिक विधाओं में इतनी तेजी से आगे बढ़ीं कि पुरूषवाची लेखक पीछे रह गये। इनके लेखन में मूल रूप से नारी की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विसंगतियों, विडम्बनाओं और समस्याओं तथा स्थितियों को यथार्थ परक दृष्टि से रेखांकित किया गया है। ये सभी विषय नारी विमर्श से जुड़े हुए हैं। इसी को आधार बनाकर नारी-विमर्श का साँचा तैयार कर लिया गया और उसमें महिला-लेखन को शामिल कर लिया गया। इस प्रकार महिला-लेखन स्त्री-विमर्श का आधार बन गया।

अमृता प्रीतम, चंद्रकिरण, उषादेवी मित्र की 'रचना यात्रा', उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, शशि प्रभा शास्त्री, मृणाल पाण्डेय, सूर्यबाला, राजी सेठ, मृदुला गर्ग, मंजुल भगत, नमिता सिंह, नासिरा शर्मा, कुसुम अँचल, मणिका मोहिनी, मैत्रेयी पुष्पा, ऋतु शुक्ला, शिवानी, तस्लीमा आदि अनेकानेक रचनाकारों की सशक्त कृतियों से समृद्ध होती हुई आज नारी चेतना संपन्न ठोस धरती पर पहुँच गई है, लेखिकाओं ने जहाँ जीवन के छोटे-बड़े, सच सुख-दुख, रचनाओं में उकेरे हैं, वहीं समय के ज्वलंत प्रश्नों से भी वे टकराई, आज भी नारी हिंदी साहित्य में सक्रिय भागीदारी निभा रही है तथा अपनी विशेष भूमिका द्वारा साहित्य में स्थान बनाते हुए जगत में पुरूष के समांतर पहुँच रही है। हिंदी साहित्य को नारी ने हर युग में उभारा है आदिकाल से आते-जाते 20वीं शताब्दी के अंतिम वर्ष तक नारी साहित्यकारों ने अपनी प्रतिभा से सृजनात्मक कार्य करके विश्व में स्थान, प्रतिष्ठा स्थापित की है।

सन् 1947 में हमारा भारत स्वंतंत्र हुआ और इस राष्ट्रीय स्वतंत्रता ने कई महिलाओं के बँधनों को भी स्वतंत्र कर दिया। शिक्षा का स्तर बढ़ाने से महिलाओं का शैक्षिक विकास होता गया और महिलाओं के लिए विभिन्न क्षेत्र खुल गए। उन्हें हर जगह सम्मान दिया गया, भला साहित्य का क्षेत्र इससे कैसे छूटता और साहित्य में भी इन महिला लेखिकाओं ने अपनी कलम का जादू दिखाया। स्वयं महिला लेखिका द्वारा महिला लेखन के अंतर्गत उनकी पहचान का विरोध वस्तुत: नारी मुक्ति का ही आंदोलन है।

जिससे अब मानकर चला जाता है कि कोई क्षेत्र महिलाओं के लिए वर्जित नहीं है। उस संविधान का भी अंग है जिसमें किसी प्रकार का भेजभाव किए बिना हर काम के लिए स्त्री और पुरूष के समान समझे जाने की बात की गई है। संविधान ने नारी को अधिकार दिये, कानूनी संरक्षण भी मिला मगर सामाजिक अन्तर्धाराओं के अन्तर्विरोधों में अहंग्रस्तता बढ़ती चली गई। आज नारी ने स्वतंत्रता को ही नारी मुक्ति आंदोलन का रूप स्वीकार कर लिया और स्वच्छंदता से विहार करने लगी है। नारी की इस ;स्वतंत्रता के अनेक दुष्परिणाम और प्रतिक्रियाएँ सामने आते दिखाई दे रहे हैं। घर से बाहर निकलने वाली नारी आज अधिक यौन-शोषण और बलात्कार की शिकार हो रही है।

अपहरण और स्त्रीत्व हरण के साथ-साथ शिक्षित लड़कियों को भी दहेज की बलिवेदी पर चढ़ना पड़ता है। एक ओर विद्रोह है दूसरी ओर कुंठा और समाज व्यवस्था का यह दानवी आक्रामक रूप। पुरूष की लोभी मानसिकता जहाँ उसकी अकर्मण्यता और अधिकार की भावना को उकसाती है, वहाँ भौतिकता की होड़ ने भी नारी को ही शोषित बनाया है। अधिकारों की बढ़ती माँग, स्वार्थ लिप्सा और उसी अनुपात में घटती हुई जिम्मेदारी की भावना, घटती हुई सहनशीलता और निरंतर घटती हुई त्याग-वृत्ति के कारण भी तथाकथित आजाद नारी की आज यह दुर्दशा है।

निष्कर्ष-इन सारे विवेच्य एवं विष्लेषण के बाद यह बात कहने की कोई अधिक या विशेष आवश्यकता नहीं रह जाती कि हिंदी साहित्य को नारियों की देन क्या और कितनी है। वास्तव में भारतीय नारियों ने जीवन के अन्य सभी क्षेत्रों के समान साहित्य क्षेत्रों को भी अपनी सृजनात्मक और जागरूक प्रतिभा से समृद्ध एवं प्रशस्त किया है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं। उन्होंने साहित्य

के हर युग के हर रूप को अपनी कोमल कान्त भाव-प्रवणता से प्रभावी बनाया है। उसे भाषा शैली और नवीन शिल्प तो दिया है, भावी विचारों का अजस्न मानवीय स्त्रोत भी विधात्मक तटबन्धों में प्रवाहित किया है। उसमें स्वर संगीत की सरिता भी बहाई है और नव निर्माण के ज्वार भी उभारें हैं। साहित्य के माध्यम से नारियों ने माँ की ममता, बहन का स्नेह, प्रियतम का प्यार सभी कुछ दिया। संबंधों की चर्चा जितनी गहराई से नारी सर्जकों की रचनाओं में मिलती है। अन्यत्र कहीं सुलभ नहीं है। इस सारे विवेचन का सारांश यह है कि नारी जीवन ने हमारे स्थूल जगत के समान ही साहित्य जगत को भी तप:पूत। कालात्मक प्रतिभा से ऊर्जस्वी और अनवरत गतिक्षील बनाया है- यह देन कम करके रेखांकित नहीं की जा सकती।

संदर्भ सूची :

1. समकालीन महिला लेखन–डॉ. ओमप्रकाश शर्मा, पूजा प्रकाशन दिल्ली
2. अन्तिम दशकों का हिन्दी साहित्य, मीरा गौतम, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001
3. स्त्रीवादी साहित्य विमर्श–जगदीश्वर चतुर्वेदी, अनामिका प्रकाशन, नई दिल्ली संस्करण 1998
4. आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध रूपों का चित्रण–डॉ. मोहम्मद अजहर ढेरीवाला, चिन्तन प्रकाशन, 22.ए, मछरिया रोड, कानपुर, संस्करण 1999
5. अन्तिम दशक की लेखिकाओं के उपन्यासों में नारी, डॉ. रामचन्द्र माली, विद्या प्रकाशन सी–449, गुजैनी कानपुर संस्करण 2009
6. स्त्री–विमर्श समकालीन चिन्तन, संपादक ऋचा शर्मा, मध्य प्रदेश राज्य हिन्दी साहित्य सम्मेलन, सतना, संस्करण 2009
7. महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में नारीवादी दृष्टि, डॉ. अमर ज्योति, अन्नापूर्णा प्रकाशन, कानपुर–संस्करण 1999
8. समकालीन महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में नारी–विमर्श, डॉ. मुक्ता त्यागी, अमन प्रकाशन, रामबाग, कानपुर, संस्करण 2012
9. स्त्री–सशक्तीकरण के विविध आयाम, संपादक–डॉ. ऋषभ देव शर्मा, गीता प्रकाशन, प्रथम तल, 4–2–771, गीता भवन, हैदराबाद, 2004
10. अन्तिम दशक की हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों में नारी–डॉ. सय्यद अमर फकिर, समता प्रकाशन, कानपुर, संस्करण प्रथम 2016

❑❑❑

हिंदी अध्यापिका, अधरचाँद, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, सिलचर-788004 , (असम)

Research Article

A study of Gender Prejudice in a Haryanvi Folk Song

–Preeti

The mass population of Haryana has preserved their classical social traditions in the form of folk songs and they participate in these songs with an unparalleled delight. Also, the celebration of different festivals with boundless enthusiasm and traditional fervor represents the significant influence of cultural history on its subjects.

Abstract:

Haryana, as a distinct and hybrid state in terms of its folk culture, is tremendously a renowned land with the magnetic and stupendous cultural heritage. It has always been a state of disparate cultures, faiths, beliefs, customs and traditions that are significant in making Haryana a land of traditional folk music, folk dances, folk songs, *Saangs* and *Raagnis*. The folk songs of Haryana are undoubtedly the looking glass of its high-spirited cultural history and people participate in these songs with an unparalleled delight. The practice of listening to folk songs can be considered a corporeal commotion that easily engages people in multiple courses of action. This paper is a modest attempt to deal with the intricacies of the gut-wrenching issue of gender discrimination which is widely rampant and could easily be known to have deeply embedded in some of the folk songs of Haryana. These folk songs have targeted women's social and cultural space in order to determine the lifestyle in a particular patriarchal structure. Throughout the history, women have been incessantly fighting for equality in the male- centric world but to their utter disappointment even today they are at the receiving end of the society. So, this paper exclusively focuses on a folk song which is extremely close to women in Haryana and has played a decisive role in the construction of social and cultural identities and also analyses remarkably dim continual and excruciatingly painful reality of gender discrimination faced by women in Haryana by analyzing a few *Haryanvi* folk songs.

Keywords: Folk Songs, Gender Discrimination, Folklore, Social Identity, Cultural Construct

Introduction:

"We have had the morality of submission, and the morality of chivalry and generosity, the time has now come for the morality of justice."

(John Stuart Mill, *The Subjection of Women)*

Since times immemorial women across the whole world have been the helpless victims of patriarchal society. A very deep dale was created by our society for The Second Sex who even today are treated so brutally in the society that it would not be misleading to see them as helpless victims of the cultural construct. Chandra Talpade Mohanty declares,"…the assumption of women as an already constituted coherent group with identical interests and desires, regardless of class, ethnic, or social location, implies a notion of gender or sexual difference or even patriarchy which can be applied universally and cross-culturally" (Mohanty, qtd in Colonial Discourse and Postcolonial Theory: A Reader 1994).

Simone De Beauvoir, a French existentialist in her widely renowned book *The Second Sex* argues that women are always considered to be the "other". Even today, they happen to be the miserably marginalized group of the society. They have been incessantly shouting out loudly for the equality, freedom, love, care and success that they deserve but their voices end up echoing in the valley and there is no one to acknowledge their rights. According to Gayatri Chakraborty Spivak, they are the most "vulnerable subalterns" in the society who are no less than the caged birds and infelicitously "we think that the caged birds sing, when indeed they cry" (from John Webster, The White Devil, Act 5, Scene 4). Spivak feels that women are the most oppressed, subjugated and exploited section of the society, who are doubly marginalized whose voice is never heard by the hegemonic dominant group (male section of the society). According to Chandra Talpade Mohanty, "Women" are defined as "Others" and "Peripherals" and this is what makes it possible for the "men" to represent themselves as the "Centre". Women have always struggled for their existence and individuality. Their dreams, desires, hopes are also entrapped by the dingy and pitiless patriarchal society and despite that they are relentlessly trying to find a niche for themselves, a space that they can call their own, a voice of their conscience. Women have always had a deepening inner urge to break her predestined role in the society and find a true essence of her life where she could be respected by the society if not as a woman then at least as a living human. Women in Haryana are in no better condition as they have been constantly fighting the evil of discrimination not only in society but also within their families. This paper is an attempt to show how cultural norms are extremely influential in shaping the behavior of an individual and analyses the assumed perpendicular susceptibility of women in the discourse of society.

Haryana is renowned all across the north-western states of Indian subcontinent and consists of a developing economy and a developed culture. This land of

Raagnis and folk songs fluently depict rainbow like colors with joys and sorrows in enchanting ways and melodious tunes. The transformative popularization of Haryanvi musical folk theatre forms *Saangs* and *Raagnis* lay in the hands of Pandit Lakhmi Chand who was also known as 'Kalidasa of Haryana'. Other prominent figures in this area include Mange Ram, Dada Mehar Singh, Sudesh Sharma, Pale Ram and many others who flourished this folk culture among masses of Haryana.

As Raymond Williams defines Culture as a way of life, it is also referred to as a cumulative deposit of knowledge including the mass production of experiences, beliefs, values, attitudes, meanings, hierarchies and so on. The notions of time, spatial relations, as well as the concepts of the universe, are constantly acquired by a group of people in the course of generations through individual and group striving. Paul Friedrich states that through poetry and songs, "one is often given the gist of the culture in a way that would be difficult or impossible to infer" (Friedrich 1996, 39). The culture of Haryana is enormously entrenched in a multifarious climate of revered history providing natural expression and value sustenance to many communities. Every region manifests different cultural features and folk songs are a traditional feature of any particular region. In this context the folk songs of Haryana are undoubtedly the looking glass of its high spirited cultural history that are deeply embedded and fabricated into the make-up of folk traditions of Haryana. The folk songs are an indispensable gem and jewels of traditions handed down from multiple generations. They imbibe novel influences and at the same time also by maintaining the wide continuity promote traditional and value based structure. According to the Concise Oxford Dictionary of Literary Terms folk song is:

"…a song of unknown authorship that has been passed on, preserved, and adapted (often in several versions) in an oral tradition before later being written down or recorded. Folk songs usually have an easily remembered melody and a simple poetic form such as the quatrain. The most prominent categories are the narrative ballad and the lyric, love-song, but the term also covers lullabies, carols and various songs to accompany working, dancing, and drinking" (99).

The mass population of Haryana has preserved their classical social traditions in the form of folk songs and they participate in these songs with an unparalleled delight. Also, the celebration of different festivals with boundless enthusiasm and traditional fervor represents the significant influence of cultural history on its subjects. In *Haryanvi* culture most historic folk songs represent the women's socio-cultural status in the society. In this sense, folk songs play an ultra extensive and decisive role in the construction of social identity. They not only help in apprehending the socio-cultural life of a particular group of people or a community but they also present the human psychology that is deeply embedded in the socially and culturally constructed world of humans. Folk songs are usually naive and gullible by nature

because they reflect the ultimate social reality. They reflectheterogeneity of folk emotions and folk thoughts of the entire social system. Folk songs play a very significant and vital role in influencing the psyche of people and shaping the collective social and cultural consciousness.

The notion of gender roles refer to the constructed set of norms which dictates the types of behaviors which is generally acceptable from a person based on their perceived sex and the notion of gender performativity refers to the ways how individuals do or perform their gender identity while interacting with others (Holmes and Meyerhoff). So, this act of singing folk songs can be considered as the gender performance that takes place in the sphere of society and has a very generic relevance. These folk songs ultimately shape the sensibilities of the listeners in society. No doubt these songs help us in understanding the cultural tradition of any society and also provide the space to women to express themselves but their degrading role as the carriers of gendered discourse where one gender is preferably superior and other inferior can never be overlooked. "It is important to understand that this representation of the identity of men and women, girls and boys, that is constructed in a particular way becomes more essential" (Jassal 2012).

Research Question:

How do folk songs as an indispensable part of culture disseminate and broadcast the encompassing gender ideologies and how does this cultural transmission via folk songs play a significant role in the production of gender identity?

Research Objectives:

The sole purpose of this paper is to identify the pattern of gender discrimination in the folk songs of Haryana. It also highlights the crucial role played by these folk songs in fabricating and refabricating the gender asymmetry. So, the study aims to locate the unmediated influence of these folk songs in unearthing the cultural construction of gender and how they lay a very productive land of investigation in unfolding women's consciousness. This study of a folk song also confirms the existence of probable contradictions in the sphere of gender and questions the accustomed understanding of this gender identity.

Research Methodology:

The study adopted a qualitative research methodology which followed an analytical approach where a folk song also known as lokgeet was collected as primary data from the secondary sources. The selected folk song was first chosen by asking a few women in rural Haryana and immediately after the collection of this song, it was translated and then a close content analysis was done. The chosen song for this study is distinctly relevant to the sullen and distressed condition of women in Haryana. Moreover, Feminist lens has been used to unravel the multiple layers of the folksong.

Analysis:

The selected folk song is related to the completion of all kinds of marriage ceremonies or when the bride is ready to leave her parental home. This song is important in terms of its instructions or an advisory environment for a bride, given by her parents and other family members. The instructions in the song are solely meant for the bride. The song follows the scene of howthe whole burden of managing the relationship lies on the shoulders of the bride alone. There is not a single folk song which gives such kind of instructions to the bridegroom or his family. The song thus, correctly represents the condition of women in Haryana. It shows that she has to adjust with every family member in her new house, sacrificing her own ambitions and desires. It shows that her in-laws' family should be more important to her than anything else. She is burdened with the expectations and responsibilities. But the important question that arises here is why these limitless expectations are always only from women and not men? Why he is not asked to take care of his wife after their marriage? Why he is not told to treat his in-laws as his own family? Why is there nobody to question the bridegroom? Leela Dube and Prem Chowdhry (1994) argue that the:"Contrasting fortunes of daughters and sons is a common theme in the wailings at the send off of a bride from her natal home and also in subsequent visits and departures of a married daughter." (Dube 2001, 93).

The song begins with these words being addressed to a daughter by her mother:

Apne khan-dan ki aan na bhool jana beti,
Na bhool jana beti, na bhool jana beti,
Hey tu ghar saajan ke ja rhi, ude choti badi sari,
Unka krna samman na bhool jana beti,
Do not forget the honor of your family.
Please don't forget it daughter,
Your husband has a big family,
Do not forget to respect them all,
Oh daughter. (Trans. Mine)
Jo samdhi kavaya mera, vo dharam pita se tera
Uski pagdi ki shaan,na bhool jana beti,
Sasu tere laad ladave, teri jad me baith btlave,
Uska rakhna aadar maan na bhool jana beti,
My *Samdhi* is your godfather now,
Sustain the pride of his turban, oh girl,
Your mother in law loves you and talks to you,
Don't forget to give her reverence, oh daughter. (Trans. Mine)

Na jethe te khunshaiye, na devar ne muh layiye,
Hey nandi ka bhi rakhna khyal, na bhool jana beti,
Tera saajan rahe akad mai, batlaiye baith tu jadd mai,
Hey izzat ka rakhna khyal,na bhool jana beti,
Never displease your brother's in-law,
Also, take best care of your sister in law,
Sit near your husband and try to please him
If he is angry or unhappy with you.
Don't forget the dignity of your family girl. (Trans. Mine)
Na roos ghara tu aayiye, apne bhai ne bulwaiye,
Hey bhai ki jhukaiye na naad, na bhool jana beti,
Na maa ka doodh lajaiye, na baap ka naam duboiye,
Apne kul ki rakhiye laaj, na bhool jana beti,
Don't ever disappoint your brother by coming back
To his house after having a fight with in laws,
Don't bring shame to your mother or your father's honor,
Don't forget the dignity of your family, oh daughter. (Trans. Mine)

So, this particular song purposely expects a girl to save the honor of her family by taking care of all the sets of rules established by the society for her to follow after her marriage. So, she has to live her life according to those norms which are already set for her. Women are always expected to have certain monolithic traits and characteristics to determine their social character. While treating them as the weaker sex, the male oriented society undoubtedly expects them to be soft, domestic, caring, homely, obedient, chaste, and subservient. This universal and all pervasive most demanded image of women has cruelly exploited the unparalleled potential of women across the whole world. They are expected to behave in a set pattern and they are merely treated as bodies with no feelings, emotions, desires, dreams and skills. Giving advice to her to be responsible and caring after her marriage is never wrong advice but asking her to sacrifice herself in this process of pleasing others every time seems to be very demanding and wrong. Advising her to love her new family is not wrong but why is the same advice not for the husband? Why is there not a single folk song which advises a husband to be responsible towards his wife and her family? Why does our culture shape this gender bias?

CONCLUSION:

So, this article discussed the numerous external obstacles, internal turmoil, hard handed and grim realities of life that a woman has to encounter in a patriarchal world. They some times suffer from a psychic sunder but eventually decide to fight the circumstances and the discrimination they face in society and overcome all the situations. It also discussed that in *Haryanvi* culture most historic folk songs

represent the everyday lifestyle by determining the socio-cultural surroundings of the society. It can undoubtedly be concluded that the folk songs reproduce patriarchal ideology and this gender bias deeply embedded in the songs end up propagating gender stereotypes and shaping the hollow gender consciousness. The way gender is cultivated through this folk culture is very degrading towards women.

So, it is high time we realized that the folk songs which tell girls to be girls must not be given any credence by people in the society. These songs which have a very corrupting influence on the minds of the people in society must be expunged from the storehouse of folk culture.

References:

Baldick, Chris. *The Concise Oxford Dictionary of Literary Terms*, Oxford University Press, 2008.

Beavoir Simone, de. *The Second Sex*, Trans H.M. Parshley, London: Vintage, 1997, Print.

Butler, Judith. Gender Trouble, Great Britain, Routledge, 1990, Print.

Chowdhry, Prem. *The Veiled Women: Shifting Gender Equations in Rural Haryana,1880-1990,* Delhi: Oxford University Press, 1994, Print.

Dube, Leela. *Anthropological Explorations in Gender: Intersecting Fields,* New Delhi: Sage, 2001, Print.

Friedrich, Paul. "The Culture in Poetry and the Poetry in culture", *InCulture/Contexture. Explorations in Anthropology and Literary Studies,* edited by Jeffrey M. Peck and Daniel E. Valentine, Berkeley: University of California Press, 1996.

Holmes, J.& Meyerhoff, M. *Handbook of Language and Gender,* Victoria, Australia: Blackwell publishing, 2003, pp. 1-17.

Jassal, T.S. *Unearthing Gender: Folksongs of North India*, Durham: Duke University Press, 2012.

Jawan, Studio, HD. *"Apne khandaan Ki Aan"* Online video clip, YouTube, 30 Nov, 2020, Web, 15 July 2021, #Jawan Studio HD.

Mill, John Stuart. *The Subjection of Women*, London: Longmans, Green, Reader, and Dyer, 1878.

Mohanty, Chandra Talpade. "Under Western Eyes: Feminist Scholarship and Colonial Discourse" *Colonial Discourse and Post colonial Theory: A Reader* by Laura Chrisman and Patrick Williams eds. England; Harvester, 1994.

Morris, Rosalind C, Gaytri C. Spivak. "Can the Subaltern Speak?", *Reflections on the History of an Idea,* 2010, Print.

Webster, John, and Christina Luckyj. *The White Devil, London:* Methuen Drama, 2008.

❑❑❑

1. Assistant Professor, Akal University, Talwandi Sabo, Bathinda, 151302, Mob. 7988310159, Email: preeti_eng@auts.ac.

An Alternative Approach to Ramakatha: *The Forest of Enchantments*

–Yengkhom Sushma Devi

"Raama's graceful frame and virile beauty, his strength, his courage, the purity of his heart, his perfect life, his compassion, his sweetness of speech, his serenity, his deep wisdom, and his statesmanship were admired by the people and made them eagerly look forward to his becoming king" and he goes on, "He is an expert in administration and statecraft, and he is unequaled in valour" (52)

Abstract

Mythology is closely associated with one's culture and society. Epics like the *Ramayana* and the *Mahabharata* from Indian Mythology still hold strong influence within Indian society. The righteousness of Rama and the ideals of Sita are being held as examples to follow. There are numerous versions of Ramayana, the original Sanskrit Ramayana being attributed to the sage Valmiki, who is referred to as Adi Kavi (first poet). The greatness of the epic is still lauded with its teachings of values, righteousness, ideals, etc. however, the passivity and side-lining of female characters and their strange absence from major parts of the epic gave rise to the subversive versions of the epics as retellings. The diverse variants on Ramkatha followed the story of Rama glorifying his righteousness and achievements. The question of the gendered narrative of the epic is brought forth in the re-visionist texts- rejecting the mere focus on female physicality and traditionally idealised virtues of Sita as an embodiment of endurance, patience, and suffering. Furthermore, the contemporary renderings of the ancient epics give voices to the marginalised and the oppressed- the lower class in the social formation of class/caste and the women in the hierarchical structure of patriarchy. Chitra Banerjee Divakaruni's *The Forest of Enchantments* is a retelling of the *Ramayana* from Sita's perspective. The author refers to the novel as Sitayana- a story of Sita who narrates her own story from the time of her birth to her final return to mother earth. The paper will study how the novel subverts the tradition of ramkatha (story of Rama) by focussing on Sita, her

happiness, ability, achievement, suffering, etc., and the voices of other women who were left unheard in the traditional narrative.

[Keywords: Ramkatha, Mythology, Retelling, Feminism, Sita]

Introduction

Mythology has become an important genre in modern literature. It is closely associated with one's society and cultural identity. It has an important role in the moulding of one's literary heritage. Of the importance of mythology, Rajagopalachari writes in his preface to the third edition of his book *Ramayana*, "Mythology is an integral part of religion. It is as necessary for religion and national culture as the skin and the skeleton that preserve a fruit with its juice and its taste" (Raja xiii). So, re-reading and re-interpretation of mythological stories have become a trend. In a country like India, with its stronghold on spiritual faith, the two most important epics from Hindu Mythology- the *Ramayana* and the *Mahabharata*, are a lot more than historical texts. Their teachings on dharma, duty, morality, truth, virtues, etc., have been passed down over the centuries with the same strong influence through oral narratives, folk songs, written works, and visual adaptations.

Why Retelling?

There are numerous versions of the *Ramayana*, the original Sanskrit *Ramayana* being attributed to the maharishi (great sage) Valmiki, who is referred to as Adi Kavi (first poet). The other variants- *Ramavataram* written by the Tamil poet Kamban in Tamil in the twelfth century; *Ram Charit Manas* by Tulsidas written in the sixteenth century in Awadhi; or abridged versions of the epic in English - *Ramayana* by C. Rajagopalachari published in 1951 based on Valmiki's, *The Ramayana* by R.K. Narayan published in 1995 based on Kamban's follow the same path of ramkatha, the story of Rama glorifying his truth and righteousness, his victory and achievements.

However, in the contemporary renderings, by keeping their main narratives intact, the epics have been retold with fresh perspectives on class issues and gender identity. The marginalisation of the female characters, their visible absence from the major parts of the epics, and the mistreatment and injustice done to them all together gave way to alternate narratives by providing them a voice and giving them due justice.

Apart from the adaptations and translations, there are many other versions adopted from the *Ramayana* and the *Mahabharata* to reanalyse the issues of class/caste, gender, etc. Devdutt Pattanaik's *Sita: An Illustrated Retelling of Ramayana* (2013), Kavita Kane's *Karna's Wife: The Outcast's Queen* (2014), *Sita's Sister* (2014), *Lanka's Princess* (2017), *Ahalya's Awakening* (2019), etc. highlight the capability and potential of the characters and discuss the theme of gender, class, and subalternity. They were repressed for more than one reason-

for they were women, some because of their class, and their sufferings were always overlooked in the dominant narrative of Ram and Sita. Re-visionist texts provide alternative discourse on the mythical characters that, be it Satyavati, Kaikeyi, or Surpanakha, though villainous they were in their actions, were as much a victim of the social politics.

Adrienne Rich, in her essay "When We Dead Awaken: Writing as Re-Vision," writes:

> Re-vision – the act of looking back, of seeing with fresh eyes, of entering an old text from a new critical direction – is for women more than a chapter in cultural history: it is an act of survival… this drive to self-knowledge, for women, is more than a search for identity: it is part of our refusal of the self-destructiveness of male-dominated society". (Rich 35)

And thus, the feminist renderings of the epics challenge the traditional andro-centric portrayal of mythological women like Sita, Savitri, etc., with counter-narratives by giving them the agency of voice and resistance.

A Sitayana

Chitra Banerjee Divakaruni's *The Forest of Enchantments (2019)* is a new approach to re-reading female characters. It is a retelling of the epic *Ramayana* from Sita's point of view. Divakaruni calls the novel a "Sitayan," which tells the story of Sita- from her childhood as King Janaka's daughter, her healing ability, her marriage to Ram, the exile in the forest, abduction by the demon king Ravana, Rama's rejection of her and how it torments her, the fire trial, her role as the Queen of Ayodhya, the banishment by her husband based on a rumour, her life in the forest with her children, the final rebellion against Rama's injustice and authority. It is also the story of other women – Kaikeyi, Urmila, Mandodari, Surpanakha, Sarama, Ahalya, Tara, etc. who "have been pushed into corners, trivialized, misunderstood, blamed, forgotten- or maligned and used as cautionary tales" (Divakaruni 4).

In her interview with Sharin and Anuya, she mentions that Sita is no doubt a character who has been held over the centuries as an icon of female virtues. However, she believes that the idealisation has been done for all the wrong reasons where selfless, sacrificing, obeying, silent, enduring, and forgiving are the values expected out of a woman. The author further says that the actual portrayal of Sita has been moulded over the years in a way that would fit the patriarchal mindset and that the depiction of the character in the popular narratives is a by-product of patriarchy. Meghnad Desai writes in her essay about Sita, "…a strong woman with a will of her own. However, that is not what she is worshipped for" (Desai 5). The author considers Sita as a strong character who overcomes immense hardships

that come to her with patience and dignity. And that is how she is portrayed in the novel.

Rama is the "ideal man" who is virtuous, truthful, and the perfect King who held his raj dharma (duty of the King) above everything; Sita is the archetype of female virtues- beautiful, silent, enduring, suffering, forgiving. In his description of Rama, Rajagopalachari writes thus, "Raama's graceful frame and virile beauty, his strength, his courage, the purity of his heart, his perfect life, his compassion, his sweetness of speech, his serenity, his deep wisdom, and his statesmanship were admired by the people and made them eagerly look forward to his becoming king" and he goes on, "He is an expert in administration and statecraft, and he is unequaled in valour" (52). Of Sita, he says, "The beauty of the Goddess Earth mortal eyes cannot see in its fulness, but we get glimpses of it as we gaze with grateful hearts on the emerald green or golden ripeness… This loveliness was Seeta in its entirety" he mentions how Kamban wrote, "Seeta's beauty threw into the shade Lakshmi herself" (28-29). Such is the conventional depiction of men and women in the mythological narratives: the descriptions of the men are focused on their strength (mental/spiritual/physical), their valour, and their achievements- be it Rama, Ravana, or sage Vishwamitra, or King Dasharatha. For women, their physical beauty defines their identity- Sita, Ahalya, Kaikeyi, etc.

Divakaruni's Sita is a healer- she has the ability to heal plants, knows their medicinal purposes, and attends to sick people. She has "the healing house" at her father's palace and serves the people (7). She continues to help people in Ayodhya when she becomes the queen, and also at Valmiki's ashram during her banishment. She is a trained fighter not with "the use of weapon," but she learned "how the body itself could become a weapon, and how the opponent's body… could be used against him" (10). Calmness and endurance are the mental weapons she learned and used to face her challenges.

Women are often pawns within the set rules of traditions. Sita, with her bride price being ordained by the higher authority, becomes an object to be won in a contest of male power. Sally Sutherland expresses the paradoxical nature of swayamvara in mythology, "The svayamvara, "self-choice", most frequently in the Dharmasastras is considered a type of gandharva marriage or a marriage by mutual consent without parental approval or benefit of clergy," she further comments that "Sita and Draupadi both were given to heroes who won them through feats of strength" (Sutherland 64).

Arshia Sattar, in the essay "Valmiki's Ramayana," writes, "the way to a more complete understanding of the Ramayana, especially for contemporary women, has to be through an inclusion rather than a rejection of Rama and his questionable behaviour" (11). Divakaruni, in her recreation of a Sitayan, does not exclude Rama,

his virtues and glory. She portrays Ram as he is- the truthful King devoted to his dharma. As Arshia further explains, “Rama’s rejection of Sita is based in his adherence to dharma” (11-12); it is this same dharma Divakaruni questions as a woman writer and demonstrates how women are often exploited within its rigid structure. Rama’s rejection of Sita, which led to the fire trial, is his raj dharma, his banishment of Sita to the wild while she was pregnant with his children based on gossip is his dharma to his people, Lakshman’s abandonment of his wife for fourteen years in his commitment to his brother is his dharma. On the other hand, Kaikeyi’s demand for the boons so that his son can become the future King is adharma; Surpanakha’s avenge is a villainous act. At a time when it was very much a tradition to contest for women and win them, the rakshasa princess’ declaration of her desire was a sin for which she was punished. She was mutilated, insulted, and humiliated ‘for loving a man in front of Rama who was “maryada purushottam, the living embodiment of noble virtues” (Vijay 21).

Polygamy was a part of the tradition, and yet the dharma dictates a penalty for a woman for a mere doubt on her chastity. Dasharatha had many wives; it was allowed by the custom, and Sita was punished for being abducted by a man and for the questions raised on her purity. Both Sita and Surpanakha became tokens in the fight for male honour. There is another Sita in the character of Sarama who suffered her kingdom’s destruction, her son’s death, and her people’s death in Vibheesan’s commitment to dharma- “…righteousness and the scared responsibility of kingship…For the sake of these, Vibheesan had told Ram how to kill his only son Taranisen, who could have been too strong to defeat otherwise” (Divakaruni 248).

Women are always blamed for causing battles. Be it kaikeyi who demanded the boons to crown her son as the King and to exile Rama in the forest. Sita for giving in to the temptation of the golden deer and for crossing the line drawn by Lakshmana. Kaikeyi’s villainous act is blamed as the root cause of the great war, not Dasaratha’s submission to his lust. Sita’s submission, not the two brothers’ insult of Surpanakha, gave way to the abduction “The devastation started before that, with a young woman being toyed with and then repulsed, her nose and ears cut off” (Divakaruni 242).

Another female figure who is completely exploited by man’s power is the character of Ahalya- tricked by a man, cursed by another man, and finally freed by another man. The story of Sita’s encounter with Ahalya in *The Forest of Enchantments* is weaved as a foretelling of Sita’s tragedy. Sita emphasises that Ahalya never took the alleged vow of silence; it is her avenge to her husband for the injustice done to her “Was it then she made the decision that she’d punish him the rest of her life by never speaking to him again, so he’d always remember what he’d done?” (Divakaruni 136).

Devdutt Pattanaik, in his essay "Sita as Gauri, Or Kali," states that

The Earth can be wild or domesticated. Wild, she is the forest. Domesticated, she is the field… In Hindu mythology, wild Earth is visualized as Kali, an unclothed goddess, fearsome, naked, bloodthirsty, one with hair unbound. Domesticated Earth is visualized as Gauri, the goddess of civilization, gentle, demure, beautiful, draped in cloth. (18)

The traditional Sita is Gauri, but Pattanaik illustrates that "she is Kali but clothed; draped in cloth, she acts out her role as Gauri (18-19). Divakaruni also highlights the Kali in Sita- her separate longing for the forest, how she loves the freedom it gives in contrast to the domesticity of the kingdom, when she questions the dharma and its injustice to her and to women, and in her final act when she rejects the King's command.

The act of forgiving is always held as a female virtue in our society. Divakaruni discusses the different layers of love throughout the text- how it makes one stronger or weaker and how it makes one see or unsee things. Forgiving is, again nature of love, not a fixed notion of virtue a woman should always possess. After the Agni Pariksha, she knew she became an object of trial to fulfill Rama's duty, but she forgave him out of love, when Mandodari forgave Raavana after all his wrongdoings- for bringing destruction to their magical land despite her repeated warnings, for causing her son's death it was out of love.

Towards the end of the novel, Sita asks:

> …for I've been a citizen of Ayodhya too: Did you act justly when you sent me away to the forest, knowing I was innocent of what gossip-mongers whispered? Did you stop to think- as a wise king would- that there would always be people who gossip… Were you compassionate, the way a king is meant to be, when you banished me without telling me what you were about to do, without allowing me to defend myself or choose my destiny? Were you fair to your unborn children when you sentenced them to a life of hardship, perhaps even death, in the wilderness? And if you were not, shouldn't someone be judging you today? (Divakaruni 356).

Sita's final return to mother earth is shown as a rebellion against Rama's injustice. She questions his dharma towards her, his commitment as a husband to his wife and children, and his dharma as a king to her, for she was one of his people.

Conclusion

Divakaruni modifies the portrayal of Sita as a mere wife of her husband. Divakaruni asserts that "Sita's choices and reactions stem from courage, though often it is a quiet courage, easy to mistake for meekness. It is the courage of endurance, of moving forward in spite of obstacles, of never giving in." (ix) During

the fire trial, when the fire God saved her, he pointed out her purpose, and Divakaruni writes thus, “He has come to teach the men, but you have come to teach the women. The lesson you teach will be a quieter one but as important” (264).

By refuting the victimisation of character, Divakaruni recreates Sita as an embodiment of strength, endurance, resilience, and, most importantly, with a voice that questions dharma, its biased notion, and the authority, its injustice. It is a subversive narrative to the story of Rama by giving their deserved space to the other women in the epic who were suppressed, insulted, and exploited in the social conditioning of restricted female values.

References:

Desai, Meghnad. “Sita And Some Other Women From The Epics.” *In Search of Sita: Revisiting Mythology*, edited by Malashri Lal and Namita Gokhale. Penguin Books, 2009, pp. 3-9.

Divakaruni, Chitra Banerjee. *The Forest of Enchantments*. HarperCollins, 2019.

Pattanaik, Devdutt. “Sita As Gauri, Or Kali.” *In Search of Sita: Revisiting Mythology*, edited by Malashri Lal and Namita Gokhale. Penguin Books, 2009, pp. 18-20.

Rajagopalachari, C. *Ramayana*. Bharatiya Vidya Bhavan, 2019.

Rich, Adrienne. “When We Dead Awaken: Writing as Re-Vision.” *On Lies, Secrets* and *Silence: Selected Prose 1966-1978.* W.W. Norton & Company, 1979. *Internet Archive*, https://archive.org/details/onlinesecretssil00adri

Sattar, Arshia. “Valmiki’s Ramayana.” *In Search of Sita: Revisiting Mythology*, edited by Malashri Lal and Namita Gokhale. Penguin Books, 2009, pp. 10-17.

Sharin and Anuya. “Interview with Chitra Banerjee Divakaruni by Sharin and Anuya.” *Books on toast*. *You Tube*, https://youtu.be/IZiOn3s0mMo

Sutherland, Sally J. “Sita And Draupadi: Aggressive Behavior And Female Role-Models in the Sanskrit Epics.” *Journal of the American Oriental Society*, Vol. 109, no.1, 1989, pp. 63-79. *JSTOR*, https://www.jstor.org/stable/604337

Vijay, Tarun. “Janaki: The Fire And The Earth.” *In Search of Sita: Revisiting Mythology*, edited by Malashri Lal and Namita Gokhale. Penguin Books, 2009, pp. 21-25.

❐❐❐

1. Research Scholar, Department of English and Cultural Studies, Manipur University, Email: ysushma10@gmail.com, Contact no. 9366204696

Research Article

Counter-Narrative Voices: A Case of Study of Meitei Folktales

–Leimayou Laishram

Amidst the study of countless discourses, it is now evident that along with the emergence of every concept is the existence of its opposition. The term "counter-narrative" is defined by D. Umadevi in her article entitled "Counter Narrative Tradition" as "a narrative that takes on meaning through its relation with one or more other narratives".

Abstract

Folklore is an integral part of society which is also used as a political and social tool to inculcate social values within the community. Folktales are the mediums used by society to perpetuate the values and norms through the past and the present. They carry the stories of the common people told and retold among society. They are used as a method of cultural communication, a clash of diverging norms and behaviours. The pedagogic nature of folktales is used to instil the moral values of what is right and wrong in the younger generation. Whilst gaining pleasure in listening to folktales, they also learn of their community's cultural practices, values, and beliefs through these narratives. The paper aims to look into the Meitei folktales of Manipur to analyse the counter-narratives within these folktales representing the voices of the marginalized. A study of these counter-narratives of the Meitei folktales will explore the social identity with respect to society's narratives.

Keywords: Narrative, Counter narrative, Meitei folktales, Gender, Power politics.

Introduction

The term 'narrative' has been used and reused in multiple disciplines and has become a staple in cultural studies. It has also cemented itself as an essential part of Folkloristics through the term 'folk narratives' or 'oral narratives'. Various critics and authors have tried their hand at defining the term, but there still exists a space for doubts due to its static nature and dependence on the content of the object of their respective discipline. Many definitions have linked 'narrative' to its partial synonym, story. According to Gerard Genette, "one will define narrative without

difficulty as the representation of an event or of a sequence of events" (1982: 127). Another critic, Gerald Prince brings forth the element of logical relation by stating that "narrative is the representation of at least two real or fictive events in a time sequence, neither of which presupposes or entails the other" (1982: 2). In their *Narratology: An Introduction*, Onega and Landa evaluated causality as the power behind turning sequences of events into stories by opining that "the semiotic representation of a sequence of events, meaningfully connected in a temporal and causal way" (1996: 3). H. Porter Abbott also gave his definition by delving into the structural aspect, "narrative is the representation of events, consisting of story and narrative discourse, story is an event or sequence of events (the action), and narrative discourse is those events as represented." (2002: 16).

In these constructions of the concepts of the term, it is easy to identify folk literature, particularly folktales, legends, and myths, as 'narratives' as they tell stories of the people and the culture. In *The Literary Mind*, Mark Turner proclaimed, "narrative imagining – story – is the fundamental instrument of thought . . . It is a literary capacity indispensable to human cognition generally" (1996: 4-5). He believes that the construction of stories begins by noticing objects or events in our environment. In order to fully develop a vivid story, the objects of interest object must be detached or distinguished from their unreportable background. An unassuming must be able to stand out and become the protagonist of the story. With this viewpoint, even the mere act of observation can initiate the process of storytelling or narrative act. Here, the question of how folktale(s) can tie into this aspect of narration comes into play. According to William Bascom, folklore is a part of the culture;

> It is a part of man's learned traditions and customs, a part of his social heritage. It can be analysed in the same way as other customs and traditions, in terms of form and function, or of interrelations with other aspects of culture. (1953: 283)

Through folklore and folk narratives, experiences are shared within the society as they are the stories told and retold of the lived memories of the people. Thus, folk literature can be rightfully defined as 'narratives' as they embody the criteria presented within the above definitions.

Amidst the study of countless discourses, it is now evident that along with the emergence of every concept is the existence of its opposition. The term "counter-narrative" is defined by D. Umadevi in her article entitled "Counter Narrative Tradition" as "a narrative that takes on meaning through its relation with one or more other narratives". It can be seen as an aspect to counter or a means of opposing socially accepted narratives or master narratives, which are usually normative or oppressive. They can also be narratives focusing on marginalized or

excluded perspectives. Another critical role played by counter-narratives is giving a voice to critique and protest towards the established ideologies and social structures built by the master narratives. Thus, D. Umadevi proclaimed that counter-narratives carry "the stories people tell and live which offer resistance, either implicitly or explicitly, to dominant cultural narratives". In a similar vein, another term 'counter story' has been illustrated by Hilde Lindemann in her article "Counter the Counterstory: Narrative Approaches to Narratives" as

> a story that is told for the purpose of resisting a socially shared narrative used to justify the oppression of a social group. The socially shared story enters the tissue of stories that constitute the group's identity, damaging that identity and thereby constricting group members' access to the goods on offer in their society. The counterstory sets out to uproot some part of the oppressive story and replace it with a more accurate one. In this way, it can sometimes repair the damage to the identity. (2020: 286)

Thus, an important question arises whether we should present the young audience with ideas countering those we allege to believe. To this, the answer is that a counter-narrative can be deemed an essential aspect in developing a culture and society as a whole. With the change in time and shift in collective rationality, it is acknowledged that a stagnant culture will stay embedded in the past. In the context of folktales of Manipur, specifically the Meitei community, this paper will delve into the counter-narratives embedded within them to seek the presence of a voice that will enhance the reflexivity of these narratives to present the consciousness of contemporary times. It will also highlight changes within a society and the need to change certain aspects of culture and tradition to keep up with the ever-expanding field of knowledge. It will further help in indicating the social identity with respect to other cultures, which will be developed and enhanced through interaction with narratives of other cultures.

Conflict with the Didactic Voice in Folktales

Folklore is an integral part of society and is also used as a political and social tool to ingrain social values within a community. Folktales are the mediums used by society to perpetuate the values and norms through the past and the present. Folklorist Stith Thompson, in his book *The Folktale*, states that 'folktale' broadly includes "all forms of prose narrative, written or oral, which have come to be handed down through the years" (1951: 4). They carry the stories of common people told and retold within a society. They are used as a method of cultural communication, a clash of diverging norms and behaviours.

The pedagogic nature of folktales is used to instil the moral values of what is right and wrong in the younger generation. Thus, it can be said that folktales are the traditional medium or structure used to 'construct' children in their childhood.

While children gain pleasure in listening to folktales, they also learn of the cultural practices, values, and beliefs of their community through these narratives. The older generation narrates these folktales to the children to teach them the behavioural pattern and social norms accepted within the community. Since childhood, members of the society are expected to conform to these norms to maintain social stability. These tales are their earliest means of acknowledging who they were in the community.

Narratives such as folktales, fairy tales, myths, and legends are some of the earliest forms of education where socially accepted behavioural patterns are learned through imitation. They are the entrance to the cultural cradle of society. These folk narratives further serve as a vehicle to propagate social structures and stereotypes, which are then ingrained into the unconscious minds of people. The power dynamics between man-woman, young-old, strong-weak, etc. are scattered throughout these narratives which are subconsciously memorized through constant telling and re-telling. However, narratives that counter or overthrow these dominant power dynamics also exist within the societies.

When fairy tales such as *Cinderella, Snow White, Sleeping Beauty*, etc. are analysed, the prevailing theme is a sweet and soft princess, a damsel-in-distress, waiting for her 'prince charming'. However, on the other end of the spectrum, there are narratives such as *Mulan, Frog Prince, Rapunzel, The Little Mermaid*, etc., with elements countering or rejecting the established notions. In recent years, there has also been a rise in retellings and reinterpretations of classic folktales and fairy tales. These reinterpretations are mostly counter-narratives whose primary purpose is to reject or subvert the predetermined spaces.

Counter-narrative Voice in Meitei Folktales

In the vast majority of folktales of Manipur, an idealized utopian society is portrayed as desired by the social collective. In these narratives, good is always rewarded by its virtue while evil is punished. Justice is always there in varied forms at the end of every narrative. It is also essential to observe how the social structures are shown to know what is the collectively accepted behavioural pattern and what is not. On the other hand, counter-narrative elements are also present within the folk narratives juxtaposing themselves against the established structures or projecting the repressed voices. These narratives and counter-narratives are studied from the lens of various disciplines to explore and expose the intricate relations present within society.

Gendered spaces are an integral part of the social norm. Members of the society have been assigned and confined within their spaces since birth. As stated by Ruth B. Bottigheimer in her article "Introduction: Gender and Folk Narrative", the roles are ingrained within the social consciousness as "gender assignments are

culturally and socially powerful and produce fundamental differences in the world view for women and men, girls and boys" (1999: 2). In most of the Meitei folktales, the predetermined spaces of the society can be seen as this worldview is assimilated into the narratives. Various folktales depict men as the 'protector' and women as 'nurturers'. This depiction was the socially accepted norm. However, the rendering of weak men in folktales such as *Sanagi Nga* (A Golden Fish), *Ningol Mawa Apangba* (A Foolish Son-in-law), *Katan na Enak Khunba* (A Lazy Man Becomes Rich), *Apangba Manao* (A Foolish Younger Brother), etc. counters this norm. The protagonist in *Sanagi Nga* remained a passive participant in the story while getting the rewards born from the efforts of others' hard work. Similarly, Katan in *Katan na Enak Khunba* is the opposite of a responsible person, a trait usually found in male protagonists. Rather than taking responsibility, he would hand over the authority to his wife. These characters are projected as anti-heroes and serve as a foil to their counterpart, strong female protagonists.

Although they are typically passive in the presence of male protagonists, the women in Meitei folktales are usually portrayed as strong and witty characters. These counter-narratives challenge the norms of the Meitei society and the universally acknowledged role of women found in narratives of other cultures. The wife in *Katan na Enak Khunba* and the mother-in-law in *Ningol Mawa Apangba* have to take on the role of active participants to make up for the shortcomings of the male characters. Katan's wife is portrayed as an independent and outspoken woman in a male-dominated space, which is rare. A woman in society is expected to stay under the protection of her father, husband, or son throughout her life. However, the wife does not deny her voice and refuses to suppress her opinion, thereby opposing the wishes of her father, the king. Likewise, Nongdungnu goes against her father's wishes and turns into a hornbill in *Uchek Langmeidong* (The Hornbill). This illustration is another example of a character going against the fixed roles. She surrenders herself to her desire for freedom disregarding the constraining social expectations. Such characters paint a contrasting picture to the normative image of an ideal woman in Meitei society.

Another social norm perpetuated by folk narratives is stereotypes. Augoustinos and Walker define them as "ideological representations which are used to justify and legitimize existing social and power relations". The folktales *Sandrembi Chaishra* and *Uchek Langmeidong* show the stereotype of a stepmother. In these two tales, the father figure is absent either by death or working away from home, and the stepmothers step up as the sole authoritative figure in the family. They are shown either tormenting their stepdaughters or abusing them. The suffering ends when the prince in *Sandrembi Chaishra* punishes the stepmother and stepsister. Unable to bear the torments further, the stepdaughter finally left her home in *Uchek*

Langmeidong. The stepmothers in both tales refuse to regard them as their own children.

It is interesting to note that the stereotype of a stepmother is always portrayed as an evil character, not only in Meitei folktales but in narratives from other cultures. The audience is warned of their cruel nature through these narratives. This is done intentionally by the collective consciousness to highlight the social disapproval of the practice of polygamy. The evil nature of the stepmother and step-sibling stands in stark contrast with the heroine of the story. The polarization between the two is necessary to further accentuate the goodness of the protagonists which helps in influencing the younger audience to side with them. The concept of evil step-parents and step-siblings is present in folktales of many cultures worldwide. The tales of *Cinderella* and *Snow White* are the most famous examples. Another observation is how the stereotype is always a woman and never a stepfather in Meitei folktales. This can be explained by the assumption that even the mere thought of a woman remarrying is not taken into consideration by the normative.

Widows are a commonly occurring character in Meitei folktales. The idea of women remarrying is not entertained by society in these narratives, even if they have to live alone. Thus, it can be seen that they become easy targets for thieves and other evil forces. This aspect is contradictory to the earlier elements of counter-narratives. They are discouraged from remarrying even though they remain insecure and are always presented in a disadvantageous position. The widows in *Lukhrabi Macha Chandrakangan* (The Widow's Child, Chandrakangan), *Nupi Macha Amadi Lai-Phadibi* (The Little Girl and the Doll), *Mi Makok* and *Hangoi Porobi* have to raise their children all by themselves. These characters evoke pity and sympathy from the audience, who could only visualize a dark future for them. Thus, in a strongly patriarchal background and hegemonic structure, women without husbands are always susceptible to being victimized while those that choose to remarry are subjected to being villainized. It cannot be denied that women are most of the time placed in a vulnerable position in these narratives. Consequently, a study of these characters highlights the opposition to the previous counter-narrative.

The folk narratives act as a didactic voice for the young audience to share moral values embedded within them. In almost every story, a lesson of obeying parents and the elderly is present to ingrain such lessons into the behaviour of the children. The character of a child is rarely seen in Manipuri folktales, and those that exist are largely voiceless and peripheral, as seen in *Tapta* and *Lai Khutsangbi*. In these narratives, the mother, the adult, takes on the dominant role and acts as the voice directing what the child should or should not do. In society, children are advised not to object or raise questions against their elders and do as they are told

until they are old enough to take independent decisions otherwise, they remain being labelled as disobedient children. Thus, the child in these narratives mostly remains a silent listener representing the dynamic relations in society. Many folktales stress the need for children to grow beyond their parents' support, decisions and consent. It should be noted that although the child is a passive participant, the tales emphasize the safety and care for the child to be raise as a good individual with moral values.

However, these folk narratives also show the ugly side of parenting, as seen in the stepmother tales. Although the narratives are structured with the belief that children may face various struggles and difficulties, they should never be abused. Only severe punishment awaits those who break these beliefs, which were depicted in *Sandrembi Cheishra* and *Uchek Langmeidong.* In *Sandrembi Cheishra*, the stepmother and stepsister ultimately face their ends as retribution for their evil deeds. In the folktale *Uchek Langmeidong*, it can also be seen how the girl transformed into a bird through her will to leave home in order to escape the torments from her stepmother in the absence of her father. Even when the father returned and begged her not to leave him, she still made up her mind and joined a flock of hornbills. Her decision to go against her father's pleas goes against the social conventions of always obeying the words of the elders. The existence of contradicting voices in these narratives sheds light on the shifting aspects of society.

Conclusion

Therefore, more than serving to validate or signify institutions, beliefs, and attitudes, all these folktales or narratives also relay different messages with social and cultural significance. Some forms of folklore are essential to apply social pressure and exercise social control. It also didacts the people to refrain from breaking social and cultural conventions that have been collectively accepted over the years. Since folktales are considered a "Mirror of Culture", studying these dynamics within the narratives provides a picture of people and their relationships in the community. However, it is also to be kept in mind that the folktales do not simply represent these traditional norms, especially in the case of patriarchy and traditionally designated gender roles. The folktales tend to show tension in some aspects of social structure and social norms. So, while the folktales transmit the traditions of Manipuri society and reinforce them, they challenge certain norms through counter-narratives. Thus, folktales play the dual role of both perpetuating and challenging societal norms.

References:

Abbott, H. Porter. *The Cambridge Introduction to Narrative*. Cambridge: Cambridge University Press, 2002.

Augoustinos, Martha, and Iain Walker. "The Construction of Stereotypes within Social Psychology: From Social Cognition to Ideology - Martha Augoustinos, Iain Walker, 1998." SAGE Journals, https://journals.sagepub.com /doi/ 10.1177/ 0959354398085003.

Bascom, William Russell. “Folklore and Anthropology”. Journal of American Folklore. 1953.

Bottigheimer, B. Ruth. “Introduction: Gender and Folk Narrative”, Lalita Handoo and Ruth B. Bottigheimer, ed. *Folklore and Gender*. Mysore: Zooni Publications, 1999.

Genette, Gerard. *Figures of Literary Discourse*. Translated by Marie-Rose Logan. New York: Columbia University Press, 1982.

Haobam, Dr. Bilashini. *Folktales of Manipur Vol-I*. Imphal; R.S. Publications Private Limited. 2009.

Lindemann, Hilde. “Counter the Counterstory: Narrative Approaches to Narratives”. Journal of Ethics and Social Philosophy. 17. 10.26556/jesp.v17i3.1172. 2019.

Phungawari Singbul: A collection of Manipuri Folktales and Fables compiled and edited by B. Jayantakumar Sharma. New Delhi: Sahitya Academy. 2018.

Prince, Gerald. *Narratology: The Form and Functioning of Narrative*. Berlin: Mouton. 1982.

Onega, Susana and Jose Angel Garcia Landa, “Introduction.” In Onega and Landa (eds.) *Narratology: An Introduction*. London: Longman, 1996.

Soram, Sanatombi. *Manipuri Phungawari*. Manipur: Cultural Research Centre. 2018.

Thompson, Stith. *The Folktale*. New York: The Dryden Press. 1951.

Turner, Mark. *The Literary Mind*. Oxford: Oxford University Press, 1996.

Umadevi, D. “Counter-Narrative Tradition”. International Research Journal of Tamil. 3. 97-102. 10.34256/irjt21313. 2021.

❒❒❒

1. Research Scholar, Department of English and Cultural Studies, Manipur University, Canchipur, 795003, Email: leimayon@manipuruniv.ac.in

Research Article

Disabled Bodies: The Double Jeopardy of Aging Women

–Zothanchhingi Khiangte

Feminist film theory has focused upon the female body as the object of the masculine gaze (Mulvey 629). Laura Mulvey, in her seminal essay "Visual Pleasure and Narrative Cinema" says that the cinema offers a number of possible pleasures, one of which is the presence of a desirable young female body which becomes an indispensable element of spectacle as she becomes the object of gaze of both the male characters within the screen and the spectators watching the screen.

Abstract

The focus of my paper is on the connections between gender, body politics and disability. I draw much of my argument from an experiential observation of living in a highly competitive cut-throat world that celebrates youth and ability; a social order that views body modification as regular routine, and how being a woman with a disabling aging body situates one in an unfriendly social environment. Demi Moore's memoir Inside Out (2019), which shall provide a textual basis for this paper, provides an insightful understanding of how a female body is subjected to different modes of control.

Robert N. Butler coined the term ageism in 1968 and defined it as a "deep and profound prejudice against the elderly," manifested in "stereotypes and myths, outright disdain and dislike, or simply subtle avoidance of contact; discriminatory practices in housing, employment and services of all kinds; epithets, cartoons and jokes". He holds that that the prejudice against old people was similar to the racist and sexist attitude towards blacks and women but it was not until the 1980s that aging was seen as a feminist problem. Old age was believed to be predominantly a male problem since feminists felt that the central problem of old age was a struggle for power and therefore concerned men (Beauvoir, 1972; Beeson, 1975). The gendered aspect of aging and the double jeopardy of ageing women's bodies failed to draw much attention of feminists that led to Lewis and Butler question "why is women's lib ignoring old women?"[1] in their essay with the same name. Although the 1980s saw women and aging as a growing academic subject of social gerontology and feminism, it had however failed to

be one of the central issues of feminism since "most of the earliest contributions were generally a direct response to the androcentrism underlying much gerontological work, taking as their starting point the tendency to ignore old women (most commonly) or else to regard them as of interest only insofar as they differed from the dominant". (Gibson 433)

The focus of my paper is on the connections between gender, body politics and disability. I draw much of my argument from an experiential observation of living in a highly competitive cut-throat world that celebrates youth and ability; a social order that views body modification as regular routine, and how being a woman with a disabling aging body situates one in an unfriendly social environment. Demi Moore's memoir *Inside Out* (2019) provides an insightful understanding of how a female body is subjected to different modes of control.

Margaret Ann MacQuarrie and Barbara Keddy's seminal work on the subject of women and aging in their essay "Women and Aging: Directions for Research" published in 2008 points out at the weaknesses of traditional research methodology like statistical demographic survey that suffer from its failure to quantify lived experiences of aging women. Such analyses tend to ignore "intangible components" like "negative social images and prejudice" many elderly fall prey to and therefore, such lack of information on the "intangible components" precludes an understanding of the power hierarchy at play. MacQuarrie and Keddy are of the opinion that "much of the available gerontological literature does not address the issue of gender in relation to the aging process as a serious epistemological or methodological issue" and therefore demand that "women and aging need to be the focus of sensitive research which will convey the totality of their lived situations". It is in this sense that Disability Studies has much to offer in conveying the lived experience of women and aging.

The marginality of aging women bodies stem from a historical justification in representing them as disabled. Women's body has been perceived in multiple ways and one of the most dominant ways of seeing woman's body is as a fertile womb and as such, an aging female body is perceived as disabled because it is seen as lacking sexuality and fertility. In his study about the ways in which ageism is embedded in the society, R.N Butler says that "Perhaps the ultimate manifestation of age prejudice is the extent to which older people are considered incapable of intimate sexual experiences" (2005, p.86). When women's bodies are seen in terms of their productivity and as sites of pleasure for man's benefit, they are represented as "rejected bodies" in their disability. To further develop this idea of the female body as a site of pleasure and fertility in the cultural imagining, Susan Bordo's reference to Barbara Omolade's description of the slave woman may be reproduced: "Her vagina, used for his sexual pleasure, was the gateway to the

womb, which was his place of capital investment— the capital investment being the sex act and the resulting child the accumulated surplus, worth money on the slave market".[2]

Whereas aging is disabling in many ways, it is the social stigmatization of an old body that is the most disabling. The feeling of inferiority as a disabled body becomes internalized rather than being imposed upon through an external force. As Siebers points out, "Disability marks the last frontier of unquestioned inferiority because the preference for able-bodiedness makes it extremely difficult to embrace disabled people and to recognize their unnecessary and violent exclusion from society"[3]. When the whole concept of ability relies on the abled body's reproductive ability that establishes its humanness, the notion of the "sexlessness"(Butler 84) in aging women robs them of their human value. Therefore in the ableist ideology, absence of ability or lesser ability devalues a person. Siebers maintains that "sex is the action by which most people believe that ability is reproduced, by which humanity supposedly asserts its future, and ability remains the category by which sexual reproduction as such is evaluated. As a result, sex and human ability are both ideologically and inextricably linked." [4]

Although the problem of aging is not particular to women, it is also true that women age differently than men (MacQuarrie and Keddy 24) because of the double jeopardy of being woman and being old. As women, they are forced into society's pre-determined roles which are already oppressive and being old in an ableist society that celebrates youth and denigrates old age is doubly disabling. The contemporary consumer culture, by promoting certain body types as beauty ideals, sets standards to which "normal" bodies belong and to differ from these set standards of normal bodies is to be seen as a lack.

Over different historical periods of human culture, women's bodies have been moulded to fit into different ideals of beauty that have, over the years, kept women enslaved in a sort of metaphorical bondage. In the name of fashion, a woman's body has been subjected to different ways of self-regulated torture, from getting her feet broken and shaped into "lotus feet" to letting her waist straitlaced into a fourteen-inch corset (Bordo 22) and to being subjected to what Bordo calls the twentieth-century "tyranny of slenderness" that forces women into self-starvation. In the twenty-first century contemporary culture, the female beauty ideal promoted by popular media is the thin, taut and youthful body type and in order to adhere to that ideal, women are forced to discipline their bodies. The strict adherence to the body ideal is ensured through discursive practices that stigmatize deviants. A non-adherence to set standards can result in being perceived as defective or disabled. Naomi Wolf describes how, even until the last decade of the 20th century, it was considered almost heretical to challenge the ideal of beauty: "Women who

complained about the beauty myth were assumed to have a personal shortcoming themselves: they must be fat, ugly, incapable of satisfying a man, "feminazis," or—horrors—lesbians" (introduction).

The United Nations defines disability as "Any restriction or lack (resulting from an impairment) of ability to perform an activity in the manner or within the range considered normal for a human being"[5]. But because this definition presumes that there is some universal, biologically or medically describable standard of structure, function, and human physical ability, it is found to be problematic[6]. When disability is seen not solely as a biological issue but with its social and political components, the social implications of being disabled can be more discernible. The emerging field of disability looks at disability as a symbolic network in which a disabled body is a product of social injustice. Unlike the medical field of disability that looks at disability as an individual defect that requires treatment or cure, disability studies does not look for a cure but rather studies the "social meanings, symbols, and stigmas attached to disability identity and asks how they relate to enforced systems of exclusion and oppression" (Siebers 4). Susan Bordo famously declares that our bodies are necessarily cultural forms and whatever may be the role of anatomy and physiology, they always interact with culture[7] and as such, it is pertinent to acknowledge how the grip of culture produces disabled bodies.

In this sense, disability or disablism has more to do with assumptions that promote biases, stigma or differential treatment of people who differ from set standards of a normal body (Mitchell and Snyder, 1997; Tobin Siebers, 2008; Fiona Kumari Campbell, 2009). According to Siebers, disability is not a physical or mental defect but a cultural and minority identity and the very fact that it is an identity makes it a social category subject to social control and capable of effecting social change. Within the same parlance, aging, fatness, homosexuality and other such positions can be treated as disabling. Therefore, stigmatization of disability goes beyond those Siebers terms as the "classically disabled". The fat body, for instance, is disabled because it is discriminated against in two ways: first, fat bodies are excluded; second, fat bodies are perceived with either hatred or pity (See Bordo, 2003; Wann, 1998). David Mitchell and Sharon Snyder argue that "stigmatized social positions founded upon gender, class, nationality and race have often relied upon disability to visually underscore the devaluation of marginal communities" (21).

Wendell had famously asserted that aging is disabling and that "unless we die suddenly, we are all disabled eventually"(18). Though agreeing with Wendell that aging is disabling in so far as the physical disability is concerned, I would like to look at an aging body from a gendered politics of appearance. While aging bodies, both male and female, are discriminated in a contemporary culture that celebrates

and promotes able-bodiedness, older female body is disabled because it is viewed with contempt and fear through the thanatophobic gaze, and also because it does not fit in to the popular stereotypes of a desirable woman's body.

Although studies on disability have concerned themselves with the gendered aspect of disability (Butler, 1975, 2005; Wendell, 1996; Siebers, 2008; Campbell, 2009), the inextricable link between the politics of appearance, women and disability has not found much attention. This has probably much to do with the idea that disability is seen more of an individual issue and that body modifications, done to meet standards of appearance, inhabit the private and therefore the silenced zone.

Whereas limitations in bodily functioning may be said to be the core experience of disability, the most stigmatizing aspect of disability is concerned with appearance. Bodies whose visual appearances deviate from social expectations become targets of discrimination. Adjectives used for such bodily appearances that depart from "normal" standards of beauty like, ugly, fat, grotesque, deformed, shriveled or odd qualify them as socially disabled. This attitude is what justifies the modern craze for "body modifications". Perhaps the best evidence is found in the ways in which female bodies are "aesthetically reconstructed" so that they do not depart from the standards of the "normal" and "beautiful" set by the dominant social order. Such configurations of beauty discriminate aging female bodies by promoting youth while representing old bodies as disabled.

In our capitalist consumer culture of today, the female body is commodified and objectified to meet its marketability. Not only does the consumerist culture promote ideals of feminine beauty but also concomitantly suggests the requirement to modify, correct or transform the deficient body. According to Lupton (1996, p. 140) one of the reasons the overweight female body is stigmatised is because it is perceived as unattractive and therefore unmarketable. Studies on female body image indicate that a commonly shared attitude among women in the modern world is their dissatisfaction with their appearance (Wolf, 2002; Bordo, 2003; Piennar and Bekker, 2007) and this dissatisfaction, which sometimes ends up in self-loathing, results in attempts to modify or transform their bodies. United States of America records as the country with the highest number of plastic surgeons with a total revenue of 9.3 Billion USD in 2020 from cosmetic procedures[8]. Through continual cosmetic surgery, the surface of the female body ceases to look old while the body does not cease to grow older (Bordo, 2003; Pienaar and Bekker,2007).

Demi Moore, who created a sensation with her photo session in 1991 by challenging old conventions that pregnant bodies had to be hidden from public view because a pregnant female body was regarded as "grotesque and obscene"[9], seems to be unable to come to terms with her aging body twenty years down the

line. Her young pregnant body that was seen as a "startlingly dramatic symbol of female empowerment"[10] no longer had the same positive reaction when the fifty-eight year old was walking the Fendi runway at Paris fashion week in 2021 with a facial makeover in an attempt to make herself look younger. It is quite disconcerting to realize how deep the fear of rejection seems to have been internalized by women.

In her memoir, *Inside Out*, Demi Moore confesses to have always been obsessed over her body which she had tried to dominate all her life[11] and she says that though it sounds crazy, it is no less real and that it was like a sickness that ultimately wears you out. The idea that the dominating or controlling capacity over their body rests in women themselves is misplaced; in order to fulfill what culture assigns to female body as an object of male gaze, the need to discipline their bodies in order to fit in to the cultural concept of beauty becomes internalized until they become what Foucault calls "docile bodies". This is especially true of celebrities who are so used to being under constant surveillance of the public gaze that they become enslaved by their desire to preserve, using Mary Wollstonecraft's words, "personal beauty, woman's glory!" which condemns them and enslaves them to their bodies, a "gilt cage that seeks only to adorn its prison".

Demi Moore's obsessive need to control her body can be best understood in relation to her identity as a movie star. In a media culture that sees woman's body as an object of desire and valued only in terms of its "*to-be-looked-at-ness*" (using Mulvey's phrase), an aging body is disabling because it has the tendency to be seen as what Wendell calls "rejected bodies".

The female body has always occupied a central place in the western cultural imagination (Soleiman, introduction). The woman, who represents the body, is an object of display and feeds fantasy in the patriarchal cultural imagination.

Feminist film theory has focused upon the female body as the object of the masculine gaze (Mulvey 629). Laura Mulvey, in her seminal essay "Visual Pleasure and Narrative Cinema" says that the cinema offers a number of possible pleasures, one of which is the presence of a desirable young female body which becomes an indispensable element of spectacle as she becomes the object of gaze of both the male characters within the screen and the spectators watching the screen.

It is no wonder then that the *Striptease* star, whose fame and identity is based on her desirability on screen should find it essential to hold on to her youthful body for her survival and aging will necessarily lead to a change of identity. When disability is seen from the subject position of ableism, it has the potential to induce an internalization or self-loathing that devalues a person. The ordeal of making herself acceptable takes a person into a grueling battle all her life, which has the tendency to produce depression and other psychological inhibitions.

Notes:

1. This essay was published in 1972 in *International Journal of Aging and Human Development*, 3, 223-231 and was re-published in 1984 in *Readings in the political economy of aging.*
2. qtd in Susan Bordo, *Unbearable Weight*. Berkeley, LA, London: Uiniversity of California Press, 1993, 22.
3. Tobin Siebers, *Disability Theory*. USA: University of Michigan Press, 2008. introduction
4. Siebers, 6
5. see Wendell, *The Rejected Bodies* (1996:12-13). See also Campbell's definition of disablism.
6. Wendell, 13.
7. Susan Bordo, 16.
8. Data taken from statista.com
9. Demi Moore, *Inside Out*, NY: Harper, 2019, p.69
10. —-. *Inside Out*, p. 69
11. —., *Inside Out*,p.78

References:

Beauvoir, Simone De. 1972. *The Coming of Age*. Trans. Patrick O'Brian. New York: Putnam.

Beeson, Diane. "Women in Studies of Aging: A Critique and Suggestion". *Social Problems* 23, (1975): 52-9

Bordo, Susan. *Unbearable Weight*. Berkeley, LA, London: Uiniversity of California Press, 1993

Butler, R. N. *Why survive? Being old in America*. New York: Harper & Row, 1975

—-. "Ageism: Looking Back Over My Shoulder." *Generations: Journal of the American Society on Aging*, vol. 29, no. 3, 2005, pp. 84–86,

Butler, Sandra, and Barbara Rosenblurn. *Cancer in Two Voices. San Francisco*. USA: Spinsters Book Company, 1991.

Campbell, Fiona Kumari. *Contours of Ableism : The Production of Disability and Abledness*. Palgrave, Macmillan, 2009.

Conable, C. W. *Aging and the global agenda for women: Conversations in Nairobi*. Washington, DC: American Association for International Aging, 1988.

Eisenstein, Hester. *Contemporary Feminist Thought*. Sydney: Allen, 1984

Friedan, Betty. *The Fountain of Age*. New York: Simon & Schuster, 1993

Gibson, Diane. "Broken down by Age and Gender: 'The Problem of Old Women' Redefined." *Gender and Society*, vol. 10, no. 4, Sage Publications, 1996 Inc., 1996, pp. 433–48. www.jstor.org/stable/189680.

Lant, Kathleen Margaret. "The Big Strip Tease: Female Bodies and Male Power in the Poetry of Sylvia Plath". *Contemporary Literature*, Vol. 34, No. 4, Winter, 1993, pp. 620-669.

Lewis, Myrna I., and Robert N. Butler. "Why is women's lib ignoring old women?" In *Readings in the political economy of aging,* edited by Meredith Minkler and Carroll L. Estes. New York: Baywood, 1984

Lupton D. *Food, the Body and the Self*. London: Sage, 1996.

MacQuarrie, Margaret Ann, and Barbara Keddy. "Women and Aging". *Journal of Women & Aging* Vol. 4, no.2,1992, pp. 21-32.

McRuer, Robert. *Crip Theory: Cultural Signs of Queerness and Disability*. New York and London: NYUP, 2006.

Minkler, M., and Stone R. "The feminization of poverty and older women." *The Gerontologist,* vol. 25, 1985, pp. 351-357.

Mitchell, David T and Sharon Snyder. *Corporealities: Discourses of Disability*. USA: The University of Michigan Press, 2008.

Moore, Demi. *Inside Out: A Memoir*. USA: Harper Collins, 2019

Morris, Jenny. "Feminism and Disability". *Feminist Review*, vol.43, 1993, pp.57-70

Mulvey, Laura. "Visual Pleasure and Narrative Cinema." *Screen*, vol.16, no.3,1975, pp 6-18.

Payne, Barbara and Frank Whittington. "Older women: An examination of popular stereotypes and research evidence". *Social Problems* , Vol.23, 1976, pp. 488-504.

Pienaar, Kiran and Ian Bekker. "The body as a site of struggle: oppositional discourses of the disciplined female body". *Southern African Linguistics and Applied Language Studies,* vol. 25, no. 4, 2007, pp. 539–547.

Pitts, Victoria L. "Reclaiming the Female Body: Embodied Identity Work, Resistance and the Grotesque". *Body & Society,* Vol.4, no.67, 1998.

Robert N. Butler. "Ageism: Looking Back over my Shoulder". *Journal of the American Society on Aging* , Vol. 29, no. 3, 2005, pp. 84-86

Siebers, Tobin. *Disability Theory*. USA: University of Michigan Press, 2008.

Striptease. Directed and produced by Andrew Bergman. Castle Rock Entertainment, 1996.

Suleiman, Susan Rubin. "Introduction." *The Female Body in Western Culture: Contemporary Perspectives*. Ed. Susan Rubin Suleiman. Cambridge: Harvard UP, 1986. Pp 1-4

Wann, Marilyn. *Fat! So? Because You don't have to apologize for your size!* Berkeley: California Ten Speed Press, 1998.

Wendell, Susan. *The Rejected Bodies*. N.Y, London: Routledge, 1996.

Wolf, Naomi. *The Beauty Myth*. 2nd Ed. NY: Harper Collins, 2002

Wollstonecraft, Mary." A Vindication of the Rights of Woman," in Alice Rossi, Ed., *The Feminist Papers.* Boston: Northeastern University Press, 1988.

❑❑❑

---

1. Assistant Professor, Department of English, Coordinator, Centre for Women's Studies, Bodoland University, Kokrajhar, Assam

Effect of Replacement of expression "Reason to believe" by "Information" under Section 148 of the Income Tax Act, 1961?

–Sanjay Bansal
–Dr. Annu Bahl Mehra

The Finance Act, 2021 overhauled the provisions of reassessment by substituting various earlier provisions of the Income Tax Act, 1961.The expression 'reason to believe' does not find a place in the new scheme of reassessment and instead the expression 'information' prominently finds mentioned which is a condition precedent for initiation of reassessment proceedings and enquiry for issuing notice for reassessment under Section 148 of the Act.

INTRODUCTION

The Finance Act of each year imposes the obligation for the payment of a determinate sum for each year calculated with reference to the machinery provided under the Act.. By the Finance Act, 2021, the condition precedent for the exercise of power of reassessment on the ground of "reason to believe" has been replaced by the expression "information"; and therefore, the question of scope of power of the Assessing Officer as a result thereof, in initiating reassessment proceedings assumes importance. At the very outset it would be useful to notice the reassessment provisions under the Income Tax Act, 1961 (in short, the 'Act') replacing the said expressions by the Legislature and the interpretation rendered by the Hon'ble Supreme Court in respect thereof.

LEGISLATIVE AMENDMENTS

Section 147 of the Act as on 01.04.1962 reads as under:

"Income escaping assessment

147. If—

148. (a) the Income-tax Officer has reason to believe that, by reason of the omission or failure on the part of an assessee to make a return under section 139 for any assessment year to the Income-tax Officer or to disclose fully and truly all material facts necessary for his assessment for that year, income chargeable to tax has escaped assessment for that year, or

(b) notwithstanding that there has been no omission or failure as mentioned in clause (a) on the part of the assessee, the Income-tax Officer has in consequence of information in his possession

reason to believe that income chargeable to tax has escaped assessment for any assessment year,

he may, subject to the provisions of section 148 to 153 assess or reassess such income or recompute the loss or the depreciation allowance, as the case may be, for the assessment year concerned (hereafter in section 148 to 153 referred to as the relevant assessment year)." (Emphasis supplied)

The aforesaid provisions makes it clear that the expressions 'information' and 'reason to believe' constitutes the essential requisite and the basic condition for setting in motion the action of reassessment. By the Direct Tax Laws (Amendment) Act, 1987, provisions of Section 147 of the Act was substituted with new provisions reading as under:

> "147. Income escaping assessment.—If the Assessing Officer, for reasons to be recorded by him in writing, is of the opinion that any income chargeable to tax has escaped assessment for any assessment year, he may, subject to the provisions of sections 148 to 153 , assess or reassess such income and also any other income chargeable to tax which has escaped assessment and which comes to his notice subsequently in the course of the proceedings under this section, or recompute the loss or the depreciation allowance or any other allowance, as the case may be, for the assessment year concerned (hereafter in this section and in sections 148 to 153 referred to as the relevant assessment year)."

Thus, the Amending Act of 1987 made following significant changes:

(a) Separate provision contained in clauses (a) and (b) of the old section i.e., Section 147 of the Act as existed earlier have been merged into a single new section, which provides that if the Assessing Officer is of the opinion that income chargeable to tax for any assessment year has escaped assessment, he can assess or reassess, the same after recording in writing the reasons for doing so.

(b) The requirements in the old provisions that the Income-tax Officer should have 'reason to believe' or 'information' in possession before taking action to assess or reassess the income escaping assessment, have been dispensed with.

Still further by the Amending Act of 1989, Section 147 of the Act was recast and the same read as under:

> "147. Income escaping assessment.—If the Assessing Officer has reason to believe that any income chargeable to tax has escaped assessment for any assessment year, he may, subject to the provisions of sections 148 to 153 , assess or reassess such income

> and also any other income chargeable to tax which has escaped assessment and which comes to his notice subsequently in the course of the proceedings under this section, or recompute the loss or the depreciation allowance or any other allowance, as the case may be, for the assessment year concerned (hereafter in this section and in sections 148 to 153 referred to as the relevant assessment year)."

From the aforesaid provisions, it is clear that prior to Direct Tax Laws (Amendment) Act, 1987, re- opening could be done under two conditions and fulfilment of the said conditions alone conferred jurisdiction on the Assessing Officer to reassess the back assessments, but in Section 147 of the Act [with effect from 01.04.1989], the conditions were given a go-by and only one condition remained, i.e., that where the Assessing Officer has 'reason to believe' that income has escaped assessment, assessment could be reopened under the Act.

Amendments brought in by Finance Act, 2021 in reassessment provisions:

The Finance Act, 2021 overhauled the provisions of reassessment by substituting various earlier provisions of the Income Tax Act, 1961.The expression 'reason to believe' does not find a place in the new scheme of reassessment and instead the expression 'information' prominently finds mentioned which is a condition precedent for initiation of reassessment proceedings and enquiry for issuing notice for reassessment under Section 148 of the Act. The substituted provisions of reassessment at the same time makes it obligatory for the Assessing Officer – (a) to conduct an enquiry in terms of Section 148A of the Act on the basis of information in his possession; (b) to afford an opportunity of being heard to the assessee; and (c) on consideration thereof pass an Order under Section 148A of the Act and on the basis thereof still further proceed to issue the Notice of reassessment under Section 148 of the Act to the assessee's.

CASE REVIEW OF THE WORD 'INFORMATION':

The word 'information' includes judicial decisions on the basis of which reassessment was held to be justified in the case of Maharaj Kumar Kamal Singh v. Commissioner of Income-tax.[1] The Court held that the word information cannot be given a narrow construction by including information on facts only but would include information as to the true and correct state of the law and would also cover information as to relevant judicial decisions, which would justify the reopening of assessment.

In *Commissioner of Income-tax v. A. Raman & Co.*,[2] the Court laid down the following principles governing the concept of information:

a) The expression 'information' in the context in which it occurs must means instruction or knowledge derived from an external source concerning facts or particulars, or as to law relating to a matter bearing on the assessment;

b) Information in possession of ITO that income chargeable to tax has escaped assessment furnishes a starting point, for assessing or reassessing income;
c) The High Court in exercise of its powers under Article 226 of the Constitution of India, ascertain whether the ITO had in his possession any information;
d) The High Court may also determine whether from that information the ITO may have reason to believe that income chargeable to tax had escaped assessment. But the jurisdiction of the Court extends no further; and
e) Information must have come into the possession of the ITO after the previous assessment, but even if the information be such that it could have been obtained during the previous assessment from an investigation of the materials on the record, or the facts disclosed thereby or from other enquiry or research into facts or law, but was not in fact obtained, the jurisdiction of the ITO to reassess is not affected.

In *Kalyanji Mavji & Co. v. CIT,*[3] while considering the question as to whether the ITO would have complete jurisdiction to reopen the original assessment where no subsequent information is obtained but the ITO merely proceeds to reopen the original assessment without any fresh facts or materials or without any inquiry into the materials which form part of the original assessment, following tests and principles were laid down:

(a) where the information is as to the true and correct state of the law derived from relevant judicial decisions;
(b) where in the original assessment the income liable to tax has escaped assessment due to oversight, inadvertence or a mistake committed by the ITO. This is obviously based on the principle that the taxpayer would not be allowed to take advantage of an oversight or mistake committed by the taxing authority;
(c) where the information is derived from an external source of any kind. Such external source would include discovery of new and important matters or knowledge of fresh facts which were not present at the time of the original assessment; and
(d) where the information may be obtained even from the record of the original assessment from an investigation of the materials on the record, or the facts disclosed thereby or from other enquiry or research into facts or law.

The judgment in the case of *Kalyanji Mavji & Co. (supra)* was adversely commented by the larger Bench of the Supreme Court in Indian & Eastern Newspaper Society v. CIT[4] whereupon the proposition that in a case where income had escaped assessment due to the 'oversight, inadvertence or mistake' of the ITO, power of reassessment could be exercised as the case would be covered under the scope of 'information' was discarded and therefore, an error discovered on a reconsideration of same materials (and no more) would not

empower the ITO to reopen the assessment as the same would result in change of opinion thereby no constituting a valid ground for reopening the assessment was upheld.

PRINCIPLES GOVERNING THE CONCEPT OF 'REASON TO BELIEVE':

The expression 'reason to believe' has has been judicially interpreted. . After considering the entire law as to what would constitute 'reason to believe', the following significant principles were laid down by H. R. Khanna J., speaking for the Supreme Court in *ITO v Lakhmani Mewal Das*[5]:-

(a) The powers of the Assessing Officer to reopen an assessment, though wide, are not plenary.

(b) The words of the statute are "reason to believe" and not "reason to suspect".

(c) The reasons to believe must have a material bearing on the question on escapement of income. It does not mean a purely subjective satisfaction of the assessing authority; the reason be held in good faith and cannot merely be a pretence.

(d) The reasons to believe must have a rational connection with or relevant bearing on the formation of the belief. Rational connection postulates that there must be a direct nexus or live link between the material coming to the notice of the Assessing Officer and the formation is belief regarding escapement of income.

Thereafter, the Supreme Court in the case of *Commissioner of Income-tax, Delhi v. Kelvinator of India Ltd.*,[6] observed that:

> "However, one needs to give a schematic interpretation to the words "reason to believe" failing which, we are afraid, section 147 would give arbitrary powers to the Assessing Officer to reopen assessments on the basis of "mere change of opinion", which cannot be per se reason to reopen. We must also keep in mind the conceptual difference between power to review and power to reassess. The Assessing Officer has no power to review; he has the power to reassess. But reassessment has to be based on fulfilment of certain preconditions and if the concept of "change of opinion" is removed, as contended on behalf of the Department, then, in the garb of reopening the assessment, review would take place. One must treat the concept of "change of opinion" as an in-built test to check abuse of power by the Assessing Officer."

Thus, after 01.04.1989 the Assessing Officer acquired jurisdiction to reopen an assessment provided there is 'tangible material' to come to the conclusion that there is escapement of income. The Judgment in *Kelvinator of India Ltd. case (supra)* apart from emphasising on the aforesaid aspects governing the power of

exercise of reassessment further pronounced that there could be no review of an assessment in the guise of reopening and that a bare review without any tangible material would amount to abuse of power.

REASSESSMENT ONLY ON THE BASIS OF 'INFORMATION':

The meaning of the expression 'information' occurring in Section 148 of the Act which has replaced the expression 'reason to believe' stands explained by an Explanation appended to the said provisions w.e.f. 01.04.2021, which reads as under:

> "Explanation 1.—For the purposes of this section and section 148A, the information with the Assessing Officer which suggests that the income chargeable to tax has escaped assessment means,—
>
> (i) any information flagged in the case of the assessee for the relevant assessment year in accordance with the risk management strategy formulated by the Board from time to time;
>
> (ii) any final objection raised by the Comptroller and Auditor General of India to the effect that the assessment in the case of the assessee for the relevant assessment year has not been made in accordance with the provisions of this Act."

The aforesaid Explanation is proposed to be recast by Finance Bill, 2022. The new Explanation proposed would read as under:

> "Explanation 1.—For the purposes of this section and section 148A, the information with the Assessing Officer which suggests that the income chargeable to tax has escaped assessment means,—
>
> (i) any information in the case of the assessee for the relevant assessment year in accordance with the risk management strategy formulated by the Board from time to time;
>
> (ii) any audit objection to the effect that the assessment in the case of the assessee for the relevant assessment year has not been made in accordance with the provisions of this Act; or
>
> (iii any information received under an agreement referred to in section 90 or section 90A of the Act; or
>
> (iv) any information made available to the Assessing Officer under the scheme notified under section 135A; or
>
> (v) any information which requires action in consequence of the order of a Tribunal or a Court.";"

As to what would constitute information for reopening of the assessment, the expression 'information' has got varied meaning at the hands of the Courts from

time to time. Recently the High Court of Orissa in the case of Stewart Science College Vs. Income Tax Officer [2022] 143 taxmann.com 80 (Orissa) while dilating on the scope of expression "Information" pronounced :

- The expression 'information' means instruction or knowledge derived from an external source concerning facts or parties or as to law relating to and/or having a bearing on the assessment.
- A mere change of opinion or having second thought about it by the competent authority on the same set of facts and materials on the record does not constitute 'information'.
- The word "information" used in the aforesaid Section is of the widest amplitude and should not be construed narrowly. It comprehends not only variety of factors including information from external sources of any kind but also the discovery of new facts or information available in the record of assessment not previously noticed or investigated.
- Assessment proceedings can be reopened if the audit objection points out the factual information already available in the records and that it was overlooked or not taken into consideration. Similarly, if audit points out some information or facts available outside the record or any arithmetical mistake, assessment can be re-opened.

However, information for the purposes of reassessment, in the form of tangible material, had to pass the test on the parameters of 'reason to believe' as interpreted by the Courts from time to time. The Explanation 1 appended with substituted provisions of Section 148 of the Act including the proposed amendments vide the Finance Bill, 2022 specifically provides, as to what would mean 'information' for the purposes of Sections 148 and 148A of the Act. The amendment incorporating the meaning to the expression 'information' by the Legislature would mean that judicial meaning given to the word 'information' earlier by the Courts would have no relevance to the construction of the word 'information' used vide the Finance Act, 2021 in the provisions of Sections 148 and 148A of the Act for the reason that Explanation specifically defines as to what would constitute an information for the purposes of Section 148 of the Act. All the judgments rendered on the law that stood existed prior to 01.04.2021 have been rendered otiose.

CONCLUSION:

Thus, the concept of checks and balances on the power of the Assessing Officer to re-open the assessment has now been obliterated by the Finance Act, 2021 by the Legislature and unbridled power of review which was specifically discarded by way of an interpretative process by the Supreme Court in the case of Kelvinator of India Ltd. case (supra), has been bestowed on the Executive for reopening the concluded assessments by dispensing the requirement of 'reason to

believe' on the anvil of any information in possession of the Assessing Officer that suggests income has escaped assessment. All the judgments laying down the aforesaid principle with regard to reopening of the assessment on the basis of material coming in possession of the Assessing Officer having a direct nexus with the formation of belief are no longer significant as the concept of 'reason to believe' no longer exists and only one condition has remains, *viz.,* any 'information' Therefore, post 01.04.2021, power to reopen is a power of review, which is indeed unfair and no more a shield for the taxpayers. There is an imperative need for an amendment in the provisions of Sections 148 and 148A of the Act by incorporating the word 'reason to believe' along with the expression 'information' which will prevent not only the abuse of power by an Assessing Officer but also a check on assumption of jurisdiction while reopening the concluded assessment.

References:

[1] [1959] 35 ITR 1 (SC).
[2] [1968] 67 ITR 11 (SC).
[3] [1975] 102 ITR 287 (SC).
[4] [1979] 119 ITR 996 (SC).
[5] [1976] 103 ITR 437 (SC).
[6] [2010] 187 Taxman 312 (SC)/[2010] 320 ITR 561 (SC).

❒❒❒

1. Research Scholar, MUIT, Noida. e-mail: bansalsenioradvocate@gmail.com
2. Associate Professor, Deputy Dean, Maharishi Law School, MUIT, 9210303690, e-mail:annubahl@gmail.com

Research Article

Stephen Greenblatt's New Historicist Concept of Social Energia in William Shakespear's *Henry IV Part I*

–Dr. T.S. Ramesh
–P. Yogapriya

The Tavern allows Harry to learn so many things about all classes of society in England. Here this Boar's head tavern taking as a Social Energy because it teaches so many things to Harry and this Social Energy (Tavern) gives knowledge (power). By putting Harry in the tavern, Shakespeare relates him to the common man of the English society, and elicits audience sympathy.

Abstract

Energia mentions the figures of speech that produce an image evocative in the mind of the listener, and in Aristotle's *Rhetoric* it is described as bringing something 'before your eyes', which is, making the hearer see things. In terms of artworks, the interest in this for Greenblatt lies mostly in literary works or those instant within artworks which appears to keep the power to move someone, to anxiety or anger, tears or laughter, beyond the incarcerates of a given cultural movement, permitting the literary texts to be effective in other times or places. For Greenblatt, this power comes not from the literary writers or artist but, instead, from the strings of negotiations, movements, and exchanges.

Keywords: Social energy, appropriation, purchase and symbolic acquisition.

What Greenblatt calls 'social energy' is the force that an artifact or text takes on, its volume to have an effect on the mind of the reader or hearer. Obtained by Greenblatt from the rhetorical term energia, this form of energy

> Is manifested in the capacity of certain verbal, aural and visual traces to produce, shape, and organize collective physical and mental experiences. It is associated with repeatable forms of pleasure and interest, with the capacity to arouse disquiet, pain, fear, the beating of the heart, pity, laughter, tension relief, and wonder. (6)

Shakespeare's *Henry IV Part I* as an historical play, it reflects so much of historical or socio cultural facts from the particular era. From this literary play, there are so many chances to understand the real

factors of the play's contemporary period. This is a general way of understanding fixed history from the events of literary text. But when it comes to New Historicism, understanding the literary text is differs. New Historicist readers derives meaning from a series of negotiations and according to this process, perspective on the literary text will be based on the individual readers.

According to Greenblatt Social Energy (characters, events, objects and cultural codes of the given literary texts) should inspire and evoke the feelings of the readers and gives a clear understanding of the literary text through social energy and vice versa. When looking into the Shakespeare's historical play *Henry IV Part I*, the object of Boar's head tavern is considering as a Social Energy. Because, the tavern events serve not only means of including the poor class to make a richer history, but to portray the dichotomy of the classes in England. Values at the tavern are very dissimilar from values in the War field or royal place. Shakespeare explores by having Harry be familiar with both.

The Tavern allows Harry to learn so many things about all classes of society in England. Here this Boar's head tavern taking as a Social Energy because it teaches so many things to Harry and this Social Energy (Tavern) gives knowledge (power). By putting Harry in the tavern, Shakespeare relates him to the common man of the English society, and elicits audience sympathy. By spending time in general pursuits, Harry earns support from his future subjects and the audience. The knowledge (power) about the people of all the classes, which he learned from the tavern, serves him well when he is campaigning in France. Because with this learned knowledge, he can vanish into the crowd, and he can mask of the commoner and fusing with his soldiers to evaluate how they perceived him. His tavern training or the Knowledge which he learned, allowed him to interact to the common men as a brother, and get them to do his will with love and not coercion.

> HARRY. I am so good a proficient in one quarter of an hour
> That I can drink with any tinker in his own language
> During my life. (Shakespeare 2.4 55- 57)

The next example of Social Energy from King Henry IV Part I is the comic character Sir John Falstaff. He is a fat, old, selfish, dishonest and thieving personality, but, the most popular of all of Shakespeare's comic characters. Falstaff as a Social Energy, reflecting the fifteenth century peoples' mind set about their lifestyle. Shakespeare used Falstaff's language and his way of attitude as a Social Energy which is portraying the English society. When considering King Henry IV period 1399-1413 which is not fruitful because he gained the power of a king by usurpation, and, also he is unable to overcome the fiscal and administrative weakness that leads to the eventual downfall of the Lancastrian dynasty. From 1401 to 1406 English parliament continuously accused him of fiscal management,

so as a king he is unable to take care of his country people. Instead of look into his country's growth, he has collecting more taxes from the people, so the people started to hate Henry as a king. During his ruling period there is so much of robberies and fiscal problems are emerged like Falstaff's activity and may understand the people's mind set through the literary words of Shakespeare's character (Social Energy) Falstaff.

> FALSTAFF. Can honour set-to a leg? No.Or an arm? No.
> Or take away the grief of a wound? No
> Honour hath no skill in surgery.
> What is honour? A word. (Shakespeare 5.1 132- 135)

Falstaff perceives honour as a mere word, an empty concept that has no connection to practical matters. Like Falstaff, King Henry also doesn't want to look into his duties to the people or honour. As a king, he should work for his country's welfare instead of that he is looking for his luxuries and struggling with fiscal issues. Like Falstaff, for King Henry IV more than honour money is very important for him, so this leads to misruling of his country.

Greenblatt recommends that the central issue is one of exchange. Theatrical companies and literary writers take ideas, object, narratives, and figures of speech that are already in survival and carry them to the stage and script or writing. Such exchanges could take numerous forms in the early modern period, but incorporate appropriation, in which objects are facilely taken from the public realm, including language, and nothing need be given in pay back. Purchase, in which, objects is bought, like properties, costumes and literary texts used as sources, and the artist is paid. The last one called as symbolic acquisition, commonly, the portrayal of social energies and practices, where the trade-off would be the celebration or vilification of that which is represented.

In *Henry IV Part I* language is considering as an exchange, and it is handled with what Greenblatt called as appropriation. One of the features that sets *Henry IV Part I* apart from many of Shakespeare's other literary work is the ease with it changes between scenes populated by commoners and scenes populated by nobility. The result of these changes is that the play includes different manners of expression and language. In addition to the low speech and high speech, there is prose and poetry, as well as different accents of Britain's various locales. The varied nature of this drama's language suits the multiplicity of its setting.

Shakespeare, proves that he can capture the speech of warriors on the way to battle and courtiers in the royal place (bombastic language) and speech of common thieves on a dark night (low level of language). Shakespeare uses different formal and rhetorical strategies to differentiate his various types of dialogue without sacrificing his unifying style; generally, for example well- born characters tend to

make conversation in verse, while commoners tend to speak in prose. Here the 'exchange' is language and while exchanging Shakespeare using the tool called appropriation.

In this play, Prince Harry playing both high and low level of character. When he is with Falstaff and other friends, especially when he is at Boar's Head Tavern Shakespeare giving him lower level of language that is even understand by the bartenders of the Tavern. For instance, the below dialogue is by Prince Harry in the low language at the Boar's Tavern with his friend Poins.

> HARRY .With three or four loggerheads amongst three or four
> score hogsheads. I have sounded the very
> base-string of humility. Sirrah, I am sworn brother
> to a leash of drawers; and can call them all by
> their christen names, as Tom, Dick, and Francis. (Shakespeare
> 2.4 80- 84)

The below dialogue is the conversation between Prince Harry and his father at royal court. For this conversation Shakespeare 'appropriating' very bombastic or higher level of language because to show the contrast between lower and higher class of language. Here Shakespeare appropriating the two-different levels of language for the same character, Prince Harry.

> HARRY. So please your Majesty, I would, I could
> Quit all offenses with as clear excuse
> As well as I am doubtless I can purge
> Myself of many I am charged withal.
> Yet such extenuation let me beg . (Shakespeare 1.2 18- 22)

Analyzing both the above dialogues the readers may easily feels the language different. When analyzing the conversation of Prince Harry with Poins, Shakespeare 'appropriating' lower -class vocabularies like 'loggerheads' and 'hogsheads' but when it comes to the conversation between Harry and his father at royal court Shakespeare' appropriating' the polite level of lexical like 'majesty', 'excuse 'and 'beg' .

The second one from the exchange is the term called 'purchase' in which objects are bought like costumes, properties and books used as source and the writer is paid. It includes any kind of written materials, actors for the ply and clothes and cosmetics for the acting purpose. To write a literary text the writer has to purchase from the society, objects like cultural codes, religious rituals, political events and history of saints and king and queens. In this kind of purchase, the writer need not pay back anything. For staging the play, the acting companies in need to purchase objects like properties, clothes, cosmetics and the literary text as a source for acting, all these objects they have to pay and even they have to pay

for the actors who are going to act for their companies. Writers purchasing information or knowledge from the place called society. For the play *Henry IV Part I*, Shakespeare purchased information from the chronicle called as Holinshed and also from the real lives of the king, queen, soldiers, and other social energies from the fifteenth century.

The third one from the exchange of social energy is 'symbolic acquisition' which is about celebration or denigration of any social energy in the given literary text or acting. Applying this symbolic acquisition on Shakespeare's *Henry IV Part I*, may take Prince Harry and his friend Sir John Falstaff as a symbolic acquisition. Shakespeare celebrating the symbolic acquisition called Prince Harry and denigrates Sir John Falstaff. Prince Hall is celebrating because of his simple nature to even mingle with the lower class of people without any partiality and his willingness to learn about his society people. As prince, he is out his country duties and spending his most of the time with his lower- class friend like Poins and Sir John Falstaff at the Boar' Tavern but when the time arrives for the war Prince Harry showing his another nature of hardworking and courage for these kinds of qualities the audience celebrating Prince Hall. As a symbolic acquisition, Shakespeare and the audience denigrates Sir John Falstaff because of his qualities of thieving and senseless.

In every case, a connection between the aesthetic practice of the theatre and other social practices is entrenched. This connection is seen to be dynamic, in which the theatre not only buys or borrows objects from the broader culture, but in performing so also permits for a re-conception of the practices or object presented. As the result, the theatrical presentation might draw force from presenting social rituals, like the investiture of a king, but the ritual might additionally be held up for mockery, scrutiny or reverential. Theatrical presentation thus opens up a critical distance betwixt the practices and objects that it present and the viewer's response. Just like a sense of the theatricality of everyday life, and especially political life, permitted Thomas More to keep a dubious fascination for the mechanics of power in Renaissance Self- Fashioning, so the literal staging of social practices permits the theatrical dimension of their real performance in everyday life to be judged and seen.

In elucidating theatrical practice, Greenblatt proposes strings of principles that should govern the critic's reaction:

> There can be no autonomous artifacts.
> There can be no art without social energy.
> There can be no spontaneous generation of social energy.
> There can be no transcendent or timeless or unchanging representation. (12)

What is once more stressed here is the combine nature of aesthetic production. No individual and no object stands outside the social system and dynamic of exchange. Artistic practices inhabit a particular place within this structure, and rules are generated both by theatrical groups and other authorities that govern how it functions. The theatre is differentiated from other facets of culture, but it is every time in relation to them, and this connection is fluid and free to renegotiation. Artifacts like painting, music, dance and the literary works of the writers is not an autonomous because these artifacts are the reflection of the cultures of the contemporary era. And sure the aftifacts cannot be created without any social energy which is called as objects, culture and history. The meaning of the text is not a fixed one instead of that which is dynamic and Greenblatt declares, the meaning of these artifacts should change, and it should not be fixed, and this changes is not coming from the artifacts but from the readers' or audience's interpretation and these interpretations of the meaning may change according to the reader's or the individual's experience. For instance, as a historical play *Henry IV Part I* give so many details about its setting year, culture, political and economy. The characters of this play such as, Prince Harry, Falstaff and the objects like the Boar's Tavern and so on acting as a social energy of their contemporary time. And the work of these social energies is to mirror the political, economical and cultural facts of their era. For all these principles of Greenblatt's, William Shakespeare's historical play *Henry IV Part I* is the best example ever.

References:

Barry, Peter. *Beginning Theory : An Introduction to Literary and Cultural Theory*. Crane Library At The University Of British Columbia, 2011.

Bennett, Andrew, and Nicholas Royle. An Introduction to Literature, Criticism and Theory. 5th ed., Routledge, 2016.

Greenblatt, Stephen. *Renaissance Self-Fashioning: From More to Shakespeare*. University Of Chicago Press, Cop, 2005.

Robson, Mark. *Stephen Greenblatt*. Routledge, Cop, 2008.

Shakespeare, William, and Claire Mceachern. *Henry IV, Part 1*. Penguin Books, 2017.

❒❒❒

---

1. Associate Professor of English, National College (Autonomous), (Affiliated to Bharathidasan University), drtsramesh@gmail.com
2. Full-Time Research Scholar, National College (Autonomous), (Affiliated to Bharathidasan University), yogaammu97@gmail.com

Research Article

Evil Portrayed in the Select Novels of Graham Greene and Iris Murdoch

–Rachna Tuli

Greene advocates platonic love- a love without sexual desires. But he realizes that this form of love is plausible only in childhood. Kate and Anthony, the twins' love is based on two extreme poles-conviviality and fear of loneliness, isolation and the forbidden sex. In this novel, Greene also co-relates the collapse of personal affinities with the rottenness of social referents. Isolation looms large. Krogh is unable to achieve sense of belonging with the building he works in.

Abstract

Iris Murdoch (1919-1999) and Graham Greene (1904-1991) are the colossal writers of the twentieth century who portray evil in their own distinguished ways. Both writers made their appearance in the literary arena when the world was experiencing a poignant collapse of love and compassion. Harrowing experiences of two World Wars had produced novel ways of imposing cruelty on people belonging to different religions and nations. Heart-rending experiences in concentration camps and gas chambers squeezed goodness even from the lives of the prudent and sensible people. No doubt, evil was prominently focused and delineated in the fiction of the era. Graham Greene presents a grotesque and sombre fictional world and his characters display the palpable force of evil in their disposition. Both, Iris Murdoch and Graham Greene are occupied with the concept of sin and moral frailties. Violence, corporeal punishment, and danger are prevalent in their novels. Greene endeavours to highlight the internal strife and religious struggle of individuals in the context of socio-political scenario of the era. While negating the existence of God, she reflects on the imperishable extent of evil in the universe and proposes to her readers to mark the consequently antagonistic power of good and evil. The present paper endeavours to highlight the problem of evil delineated in the fictional works of these two eminent writers of the twentieth century. It seeks the difference in their perspective on evil.

Keywords:- Evil, goodness. socio-political, context, metaphysical.

The situation of our times
Surrounds us like a baffling crime ((Auden, *New Year Letter* 1941).

While contemplating on evil, Graham Greene in his novels expresses fascism and battles, political revolutions, and social upheavals. All tribulations lead to a social set up where people are not either saints or sinners, but sinners only. Only faith in God can redeem them. This establishes the degree of evil his fiction depicts. Iris Murdoch attempts to deal with evil in the context of human psyche. Her philosophy affirms faith in human deeds as the 'continuum between good and bad' (*Metaphysics as a Guide to Morals* 507). In her published books on philosophy and fiction, Murdoch engages herself with the complex nature of evil. In her interviews and letters, she invariably deliberates on the cognitive and doctrinal dimensions of evil. Her attempt to accommodate righteousness and wickedness in its varied aspects is apparent in the adjacency of 'transcendent' good and 'seductive' evil. Graham Greene, on the other hand, gives upper hand to evil asserting that the goodness is short-lived and it gives birth to more evil. Iris Murdoch totally rejects the role of God in her struggle with good and evil whereas Greene turns out to be devoted Catholic while delineating evil in the later stage of his writing.

For Graham Greene, the world is a horrible place to live in. His obsession with evil find expression in his portrayal of cruelty, betrayal and injustice in his novels, namely, *It's a Battlefield* (1934), *England Made Me* (1935), and *Brighten Rock* (1938). In his later novels, man is shown a puppet in the hands of supernatural objects who unleashes evil on the earth. In *It's a Battlefield* (1934), evil prevails in the form of class struggle. The old social set up caves in, and anarchy is formidable. How does individual life is controlled and deformed by socio-political forces beyond human control is displayed through unbridled violence and gross injustice meted out on the people of London. Various characters are engrossed in their personal battles and are thrown into disarray. Evil is both social and personal here. The murder committed by Jim Drover can neither be justified nor ignored at. Drover does not bring any harm to society, but demand for his death is incomprehensible. Justice is denied here and there is no hope for any mercy or compassion due to "the incomprehensibility of those who judged and pardoned, rewarded and punished"(39). The evil that coerces Drover to die is an evil of the fragmentation of society. In the novel, on psychological level, loneliness generates evil. Every person fights his own battle for money and love and it leads to treachery and savagery. Love and urge for sex is a synonym for despair and suffering. Conrad's death brings hopelessness and the role of harsh destiny to the forefront. Everybody fights for his own survival and tries to annihilate other's existence. Even mercy that converts death sentence into eighteen years of prison is more dreadful. Greene wants to assert in the novel that no comfort can be found by humans in this world.

Greene's *England Made Me* (1935) focuses on the evil of erotic love-a love that brings "the brief ecstasy and lengthy pain." Physical love is villainous for Greene. Incestuous longings of Kate and Anthony are bestial in nature and lead to violence and sin. Iris Murdoch accommodates sexual aberrancy in her fiction and does not consider it sin or evil. But for Greene, it cannot be consummated without guilt or sense of disgust. Incest is outrageous. The contemplation of Minty sets the tone of the novel:

> Yes, it was ugly, the human figure, Man or woman, it made no difference.... the body's shape, the running nose, excrement, the stupid postures of passion"(86).

Greene advocates platonic love- a love without sexual desires. But he realizes that this form of love is plausible only in childhood. Kate and Anthony, the twins' love is based on two extreme poles-conviviality and fear of loneliness, isolation and the forbidden sex. In this novel, Greene also co-relates the collapse of personal affinities with the rottenness of social referents. Isolation looms large. Krogh is unable to achieve sense of belonging with the building he works in. It lacks personal affiliation and "like an untrustworthy man, emphasized its transparency... and has Arctic isolation" (49). Characters like Krogh spread evil in society as they alienate people from each other. These amoral characters undervalue society and introduce unhappy experiences in the lives of individuals. Hence the future is cold, impersonal and amoral. Society here lacks innocence.

While portraying evil in fiction, Greene introduces the role of the supernatural in spreading evil on earth. In *Brighten Rock* (1938), he addresses metaphysical issues of the battle between the Good and evil and the impact of the Roman Catholic Church on the lives of his character. The novel revolves around the theme of good and evil, right and wrong in the form of a detective story. Pinkie, one of the main characters, nurtures evil and affirms faith in Hell, "Heaven was a word: hell was something he could trust" (228). Ida tries to judge things in the frame work of right and wrong. Pinkie and Rose deal with the mysteries of mercy, redemption and sin. And hence, the narrative assumes the form of a religious drama. Pinkie rebels against Catholicism, conceives the world as a supernatural battleground between good and bad, and is a brutal and heartless creature. Nelsen Place is a place for breeding evil like Pinkie and the good like Rose. Pinkie's determination to remain alone, finding "other people's feelings bored at his brain"(202). His pride, egotism, scorn for sexual intimacy-all are his evil acts that drive his girlfriend to commit suicide. Jeff Roy in "The Problem of Evil in Brighten Rock" writes:

> Throughout the story, not only does Pinkie not show any capacity for remorse, but he also commits his crime gratuitously. Moreover, he even seems thrilled by performing evil. Such motiveless and readily done evil cannot but baffle and frighten human beings. In

examining a character such as Pinkie, the reader enters the heart of the mystery.

Iris Murdoch discusses the concept of evil exhaustively in *Metaphysics as a Guide to Morals* (1992):

> A picture of humanity must portray its fallen nature. We must keep in view the *distance* between good and evil, and the potential *extremity* of evil. We are ineluctably imperfect, goodness is not a continuously active organic part of our purposes and wishes. However good a life is, it includes moral failure (509).

Such a binary vision of evil also puts under question the authority of God. It further leads to lay focus on the nature of human evil and natural evil. As opposed to natural evils, human evils are inflicted by human beings. They demonstrate man's capacity to unleash immense cruelty. The philosophers and thinkers who have suffered the pain of the aftermath of the holocaust deliberate on the horrendous sufferings from human perspective and do not seem anxious about the role of God in evil. Iris Murdoch belongs to the creed of such philosophers. She is interested in the dialectical reality of morality. Her emphasis on the continuous fight with evil to attain goodness is quite significant. In her novels-*The Bell* (1958), A *Fairly Honourable Defeat* (1970), and *Nuns and Soldier* (1980) -she is concerned with an imperishable extent of evil in the universe and proposes to her readers to mark the consequently antagonistic power of good and evil. She invariably deliberates on the cognitive and doctrinal dimensions of evil. Her attempt to accommodate righteousness and wickedness in its varied aspects is apparent in the adjacency of 'transcendent' good and 'seductive' evil. Following the tradition of Simone Weil and Dame Julian of Norwich, Murdoch affirms an implacable role of evil and agony in the lives of her saints- those who strive to establish a solid moral order. Michael Meade, Dora Greenfield, Anne Cavidge, Tallis, Hilda, and Daisy Berret are a few examples to quote. Daniel Read (2019) comments:

> While Murdoch may praise goodness, her complex engagement with evil reveals a dialectical task for the moral agent in which they have to appreciate the complexity of the moral life, with its inherently ambiguous mixtures of emotion and rationality, the saintly and the psychopathic, and goodness and evil (185).

Murdoch's portrayal of evil is complex and complicated. Her 'demon' characters like Nick Fawley, Julius King, Morgan, beautiful Joe, and Carel whom she addresses as 'enchanters' dissipate inexorable evil on others. In *The Bell* (1958), Nick Fawley, endowed with a considerable beauty creates trouble in Michael's life. Many times, her sages like Michael Meade, Anne Cavidge, Dora Greenfield, and the Count also reveal strong inclinations for escapades. Anne Cavidge in *Nuns and Soldiers* (1980) faces the dilemma:

I am back in the hell of the personal, the very place I ran away from to God, back in the criminal mess I got myself out of when I thought I would seek and find innocence and stay with it forever. I am mad, I am a danger to myself and others (308).

Anne who thought of herself as an embodiment of innocence and goodness, realizes that she could not be "empty and clean like an amoeba carried by the sea"(309).

Such a realm of ambiguities signifies Murdoch's sinister universe. It compels Murdoch to ruminate over various problems like the ineluctable habitation of evil, arguments in the favor of the imposition of evil over others, varied forms of wickedness and juxtaposition of evil with goodness. Evil is the shared experience of her characters.

Varied perspectives of evil have been rendered in her novels. *The Bell* (1958) and *Nuns and Soldiers* (1980) primarily deal with the intrinsic evil. Paul Greenfield, though a marginal character in *The Bell* (1958), stands for the internal evil like false sense of pride and philautia with which he plays havoc with the life of Dora, resulting in making Dora destructive. Michael Meade, who is supposed to exude goodness finds himself in "a region where power was evil, and where he could not honourably find the means to strip himself of it completely" (86-87).

In Nuns and Soldiers (1980), she successfully delineates evils like jealousy, anger, possessiveness, and hedonistic tendencies. These psychological flaws result in bringing turmoil in the lives of Anne, The Count, and Daisy Barret. But the most significant book that explores the multi-dimensional problem of evil is *A Fairly Honourable Defeat* (1970) where obtrusive evil gets the upper hand till the end and the good has to face a debacle. But the defeat is honourable. Elizabeth Dipple in *Iris Murdoch: Work for the Spirit* (1982) writes:

> *A Fairly Honourable Defeat* is arguably her most significantly entitled novel; its human failures involve a repeated pattern of defeat of good by evil in spite of the enormous moral and spiritual energy her characters expend in their attempts to become better or to push themselves towards a wished-for, shared categorical imperative in the social order (197).

Murdoch has poignantly argued that before pronouncing judgment on the cruel deeds of others and giving a verdict on what is dubbed as ostensible wickedness, one has to recognize his own devil. One must be accustomed to his own devils or evil propensities. Inability to comprehend and accept one's evil is a defeat of moral values. Larrimore's writing on evil "Introduction: Responding to Evils" seems apt while dealing with the multifaceted aspects of it:

> Evil is a practical problem. Even the person who is a witness to evils finds her sense of agency challenged. In explaining or

> consoling, narrating or exorcising, praying or raging, we reassert human agency in the face of the apparent malevolence or indifference of the cosmos or our human fellows.

Murdoch accords some of Simone Weil's thoughts regarding evil. For her, evil flourishes in the world due to the masochistic nature of human beings. The person who has suffered will get satisfaction in inflicting pain on those who can become his prey due to their moral weaknesses. Evil can be entailed only by the person who like Christ can absorb evil and suffering into himself. He is not lured by the desire of making others undergo the hell of sufferings he himself has undergone. No doubt, he remains unappreciated by others even though he does his maximum for them. Various Murdochian characters are metaphors for intrinsic evils like egocentricity, narcissism, self-conceit, and lack of empathy. Together, they become a mechanism for multiplying evil in the lives of others.

It is apparent that Murdoch provides a realistic picture of evil. Her realistic picture of morality is reflected in her alliance with St. Paul's 'principalities and powers' and Plato's figure of Eros. Peter Foster's argument in *A Fairly Honourable Defeat* (170) "What this age needs is a dynamic morality" is to be reckoned with. An individual has to comprehend the peril of evil, overcome its horrendous reality, and then move in the direction of the good. For Graham Greene, isolation gives birth to evil. Sexual acts are evil acts. He seems more attuned to the presence of evil than of goodness in human life.

References:

Auden, W.H. "New Year Letter." *The Double Man.* 1941.

Dipple, E. *Iris Murdoch: Work for the Spirit.* London: Matheun, 1982.

Greene, Graham. *Brighten Rock*. Publisher: William Heinemann Ltd.1938

…. *England Made Me.* Publisher: William Heinemann Ltd.1935.

…. *It's a Battlefield.* Publisher: William Heinemann Ltd. 1934.

Larrimore, M. "Introduction: Responding to Evils." *The Problem of Evil.* Blackwell Publishing (2000).

Murdoch, Iris. *Nuns and Soldiers.* London: Chatto & Windus, London: Chatto & Windus, 1980.

…. *The Bell.* London: Chatto &Windus, 1958.

…..*Metaphysics as a Guide to Morals.* Vintage, 1992. https://books.ggogle.co.in

…. *A Fairly Honourable Defeat.* London: Chatto &Windus, 1970.

Read, D. *The Problem of Evil and the Fiction and Philosophy of Iris Murdoch.* Diss. School of Art, Kingston University, June, 2019.

Roy, Jeff. "The Problem of Evil in Brighten Rock." *Jeff's Literature Cafe.* https://sites.google.com>the...

❒❒❒

1. Associate Professor, Department of English, Guru Nanak Khalsa College, Daroli Kalan, Jalandhar, Punjab, rachnatuli8@gmail.com

Research Article

An Eco Critical Approach to Anita Desai's *Fire On the Mountain*

–Radhika. J
–Dr. T.S Ramesh

Mountains wontedly allow us to pause and be in awe of the world's natural beauty. One can escape the rush and pollution of modern life and change one's outlook on life. Speck less air in the mountain has proven to have numerous health benefits, which makes mountain a great place to dwell in. Adding to this, spending time in an elevated region promotes health, happiness, and a longer lifespan. Science has many substantial evidences to proves that mountains have been shown to improve a person's emotional health by subsiding stress and anxiety levels, as well as plummet the risk of depression.

Abstract

The predominant understanding between Nature and human, in the last century, has been witnessed in the literature in an efficient way. The characteristics of human being and its association with Nature are evident in many contemporary researches. This connection between humans and nature goes so far, as to make people believe they are a part of Nature. The conceptualization of 'Ecocriticism' comes from the idea of 'Tinnai' in the Sangam Literature centuries ago. The notion of tinnai, which translates to "land," is based on the interaction between human beings and the physical surroundings of the world. This essay explores how people interact with nature and how they find comfort in it during times of suffering. Anita Desai's *Fire on the Mountain*, which recounts the life of Nanda Kaul, who lives in a place called Kasuali in her old age since she was unable to achieve serenity in her early years, is the topic chosen for discussion. Mountains which are known as Kurinji Tinnai in the Sangam literature is the setting of this book. It is called after the Kurinji flower, which only blooms on mountain slopes every 12 years. The central idea of tinnai literature is not only Nature but it also deals with the intimacy of relationship which is one of the vital aspects of the book. Nanda Kaul, the protagonist who wishes to live alone and is estranged from her family, is made to live with her great-granddaughter, Raka. She was initially hesitant after which she starts spending time with Raka. Their bond as grandmother and granddaughter deepens as Nanda Kaul notices many parallels between them, including a shared love of solitude and Nature.

Key Words: Nature, Human-Nature relationship, Kurinji, Solace, Serenity, Solitude.

Mehmet Murad Ildan an eminent Turkish playwright and thinker says that, “The mountain is calm when there is a storm; the mountain is calm when there is fog; the mountain is calm when there is sun! Calmness is the wisdom of the mountains! Those who have lived everything are always calm!” (12). The despondency and disquietude of man is forgotten in the serene ambience of the mountains. A noteworthy phrase enounces that Nature is the ultimate giver, even by wrecking itself for the well-being of the human beings. This phrase is proved right when one looks back at the formation of the mountains. As the factuality can never be denied that mountains are created when fragments of the Earth’s crust known as plates collide with one another in a process known as plate tectonics and buckle up in the impact. Similar to this, Nanda Kaul, the protagonist, who was smashed and crushed like a mountain when she was younger, wishes to dwell in the mountainous region of Carignano, free from her hectic household and surrounded by nature. In the mountain’s summit, she has begun to live alone. Her happiness comes from living with and becoming one with nature. This is observed in the following lines:

> Everything she wanted was here, at Carignano, in Kasauli. Here, on the ridge of the mountain, in this quiet house. It was the place, at the time of life, that she had wanted and prepared for all her life – as she realized on her first day at Carignano, with a great, cool flowering of relief – and at last she had it. She wanted no one and nothing else. (3)

Mountains wontedly allow us to pause and be in awe of the world’s natural beauty. One can escape the rush and pollution of modern life and change one’s outlook on life. Speck less air in the mountain has proven to have numerous health benefits, which makes mountain a great place to dwell in. Adding to this, spending time in an elevated region promotes health, happiness, and a longer lifespan. Science has many substantial evidences to proves that mountains have been shown to improve a person’s emotional health by subsiding stress and anxiety levels, as well as plummet the risk of depression. In the novel, Nanda Kaul, who has been suffering from anxiety for a longer time, decides to spend the rest of her life in the mountains, away from the prying eyes of others. Raka her great grand- daughter has arrived for her convalescence and her arrival has perturbed her composure which is maintained so far “All she wanted was to be alone, to have Carignano to herself in this period of her life when stillness and calm were all that she wished to entertain”(18). The arrival of her great grand-daughter Raka reminds her of her miserable past from which she longs to be free from.

According to Nirmal Selvamony "habitat comprising the spirits, humans, and Nature in particular. A typical Oikos could be regarded as a nexus in which the sacred, the humans, Nature and the cultural phenomena stood in a relationship"(134). This clearly states the relationship between human and Nature. Nature is depicted as a tool for describing human feelings and emotions, and humans dance to the tune of Nature. Desai clearly employs this technique in her novel. There is a bounteous use of Nature imagery and interior monologues to demonstrate Nanda Kaul's inner conflict towards everything around her; firstly, towards Raka "to Nanda Kaul she was still an intruder, an outsider, a mosquito flown from plains to tease and worry her" (44). Raka is compared to a mosquito in the preceding line as she looks thin and weak. The arrival of Raka left Nanda Kaul frustrated which made her complain about everything starting from her name. The name Raka means 'moon' which Nanda feels is a misnomer for her as she is neither bright as the moon nor she has a round face like the moon. "Raka— what an utter misnomer, thought Nanda Kaul, under the apricot trees with her hands pressed…Raka meant the moon, but this child was not round-faced, calm or radiant" (43). Raka on the other hand, sees Nanda as a pine tree that is constantly murmuring. She also refers to Nanda as a "rock" when she is dressed in a "grey sari," because she embodies bareness and stillness, and she has always ignored her "But Raka ignored her. She ignored her so calmly, so totally that it made Nanda Kaul breathless" (69).

The story powerfully portrays man's relationship with Nature by using nature as a metaphor numerous times. The representation of nature highlights the intense feelings of the characters in the tale. The predominant part of the book is that the wise usage of many trees to explain the intensity of the characters. In other parts of the book, these symbols reveals Nanda Kaul's inner self, along with her contentment. She thinks that having fresh flowers in her yard makes her life happier and more vibrant. Nanda Kaul's ideals represent not only her transcendence to find contentment in the lap of mother nature, but also her escape from the city life. Nanda claims that withdrawing from society makes her happy. Her atomistic existence on the mountain, far from her family's gathering, allows her to be recognised as a part of nature, where her body and mind can experience complete relaxation.

There is a most famous quote by Einstein which states that "Look deeper into Nature you will understand everything better" (120). Likewise, deep ecology also states that when one is attached to Nature one can understand life better and also lead a better life. As mentioned earlier, Nanda wants to escape to the mountain is not only to be free from all her responsibilities but, also to be one with the Nature "she had suffered from the nimiety, the disorder, the fluctuating and unpredictable

excess" (32). Though, she was said to be a wife of a vice chancellor who always wears silk and enjoys the rich life. The reality is different as she is never satisfied with her role. Nanda's displacement is not a mere migration from one place to another for her fulfilment. Irrespective of climate and cultures one's settlement in a new place, in a certain way, may be regarded as rehabilitation rather than displacement. Desai has beautifully vocalized the requisites of Nanda Kaul in the following lines:

> When all she wanted was the sound of the cicadas and the pines, the sight of this gorge plunging, blood-red, down to the silver plain. Then a cuckoo called, quite close, here in the garden, very softly, very musically, but definitely calling – she its domestic tone (21).

The literature of the Sangam is renowned for its veneration of nature as a divine force. All components of nature are revered and treated on a par with God. The three varieties of tinnai include hierarchical tinnai, in which nature was revered as God and regarded as special and significant. Similar to this, Anita Desai does not depict any romantic aspirations of nature in her book. People are drawn closer to themselves by nature because of its glimpses of god. To feel relieved and satisfied, every character in the book draws nearer to the Nature. Not only Nanda Kaul, but also her granddaughter Raka, who has been traumatised by her surroundings, wants to get past all of her unpleasant previous experiences. She adores nature and longs to be alone and free from everyone's grasps, especially from Nanda, so she can explore and take in Carignano's natural beauty. This is observed in the following lines:

> Carignano had much to offer—yes, she admitted that readily, nodding her head like a berry – it was the best places she'd lived in ever. Yet it had in its orderly austerity something she found confining, restricting. It was dry and clean as a nut but she burst from its shell like an impatient kernel, small and explosive (99)

Raka is also against the idea of schools and hostels rather, she wants to spend her time in the wilderness "rejecting outright the very thought of school, of hostels, of discipline, order and obedience" (65). Perhaps she wished to think about the purpose of life alone, surrounded by Nature. Additionally, Kasauli concurs with her desire to go unseen and unbothered. It is clear that her love of the natural world inspired her to explore the area near Kasauli. Despite being a newcomer to Kasauli, she is more familiar and knowledgeable about the community than any other resident in the village.

Nanda and Raka yearn for the most exciting aspect of living in Kasauli—loneliness and silence. Kasauli itself serves as a metaphor for nature throughout

the book. Desai depicts Nanda and Raka as not wanting to be together at the beginning of the book, but as the plot develops, nature brings the two of them together. Nature itself is not only cited as an inspiration but also aids in Raka and Nanda's mental health recovery.

The book not only depicts Kasauli as being lovely and idyllic, but it also shows how the city's progressive degradation of nature due to pollution and extensive human interference with it. Due to scientific incursion, the area has become less remote, and many people who have migrated from the plains have taken the site's peacefulness. When Nanda Kaul first arrived in Kasauli, she describes it to Raka as being nothing short of a heaven. But now that the area has been defiled and spoiled, she is dissatisfied. Nanda also says that she has seen so many forest fires in Kasauli due to the human intrusion, industrialization, pollution and so on. The natural world is self-sufficient the human intervention corrupts the sanctity and its order.

These natural destructions are related to lives of the characters in the novel. One such character which the author introduces is Ila Das who is the friend of Nanda Kaul who travels in the novel from the beginning. Ila Das is the only friend of Nanda Kaul who is aware of all the struggles that Nanda has faced during her young age. Whenever Ila Das converses over the phone she shares her happiness with Nanda and Nanda always wanted to end her conversation as soon as possible. The character of Ila Das is represented in the following lines:

> I'm lunching at sanatorium with the matron, my dear,' screamed Ila Das,' and I thought, how nice, now I can make a few phone calls and get in touch with my friends. You know, I hardly ever get away from my village—it keeps me *sooo* busy, I never get a minute…' she babbled on and Nanda Kaul turned her head this way and that in an effort to escape. (23)

This conversation with Ila Das makes Nanda tremored and disturbed as she reminds her of her past life. Nanda also shares her grief only with Ila Das. Ila Das portrays herself to be happy from the beginning of the novel. But the reality is revealed at the end of the novel. Ila Das once visited Nanda Kaul and on her way home she is raped and murdered in the dark in forest. Hearing this news Nanda is devastated and Nanda realises that she has been lying about her husband all these years. The dryness in the forest in Kasauli represents Nanda Kaul. The violation and death of Ila Das is the representation of conflagration of the forest fire. This is symbolically represented in the end of the novel and thus justifying the title *Fire on the Mountain* and is also highly vital from the thematic point of view. Thus, the mountain symbolizes Nanda and the fire symbolises the wild nature of Raka.

To conclude, the mountain Kasauli is represented as a symbol of natural principles and orders that exist. In the ecological perspective, Nature has the capability to metamorphoses the old into new, this is symbolically represented by Raka setting fire. This is

a purgatory effect to set a new order of life "Down in the ravine, flames spat and crackled around the dry wood and through the dry grass, and the black smoke spiralled up over the mountain" (159). The novel represents the significance of the natural land over the urban world. The central idea of the novel revolves around the theme of natural world and the human position in it. Throughout the novel, Nature runs as a stand to regulate the function of all the characters. Nature helps reshape the lives of Nanda and Raka. Desai has projected the interaction between the protagonist and Nature as the vision of her life. She has also projected the human intrusion in Nature and the modern human and Nature relationship. The novel also equates the picture of human equating their life with the silence of Nature which is eternal.

References:

Bourdeau, Ph. *The Man- nature Relationship and Environmental Ethics*, The Journal of Environmental Radioactivity 72 (2004) p. 9-15.

Desai, Anita. *Fire on the Mountain*. Random House India, 2008, Print.

Garrard, Greg. 2007. Ecocriticism. London: Routledge.

Selvamony, Nirmal. *Oikopoetics with Special Reference to Tamil Poetry*. International Institute of Tamil Studies, 2003.

Selvamony, Nirmal, editors, et al. *Essays in Ecocriticism*. Sarup & Sons & OSLE, 2007.

Ney Sara, *Towards a Happier and Peaceful world.* 2018.

https://www.thewildlingscamp.com/post/look-deep-into-nature-and-then-you-will-understand-everything-better-albert-einstein. Accessed on 1 September 2022.

❑❑❑

1. Ph.D. Research Scholar (FT), (j.radhika06@gmail.com), PG & Research Department of English, National College (Autonomous), Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli, TN
2. Associate Professor and Research Supervisor, (drtsramesh@gmail.com), PG & Research Department of English, National College (Autonomous), Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli, TN

Research Article

A Reading of B.M. Maisnamba's *Imasi Nurabee* as a Magic Realist Text

–Dr. Ph. Jayalaxmi
–Elangbam Priyokumar Singh

The common peculiarity of "Magic Realism" is strong imagination and inducing the narrative style that inculcates the reality with unforeseen fantastic elements of fairy tales or mythology, blending it with the mundane reality. The unfeigned reason for blending such elements into a realistic scene is to decrypt the differentiation between real and fantasy.

Abstract

The origin and development of magical realism in literary fiction has given a profound impact on the narrative technique due to amalgamation of numerous elements incorporating history, myths, fantasy and social reality. The proliferation of magic realism in Manipuri Literature is palpable in the novel of B.M. Maisnamba's *Imasi Nurabee* (2012) in which he explores the fantasy, dreams, history and myth of the Meitei culture in the narrative style which has a closed affinity to the magic realist mode. The present paper will examine the description of magical realism in *Imasi Nurabee* by drawing upon the magical elements, the assimilation of mythical elements and the dream-like narrative technique which often intermingle with the reality in the local context of *Lai Haraoba* of Meitei Culture. It will also highlight the historicity of Meitei settlement in Bengal during the 16th to the late 19th century. The use of imageries along with the myths and fantastical elements will be analyzed meticulously in this paper.

Keywords: History, Myths, *Lai Haraoba,* Fantasy, Magic Realism, Dreams

Introduction

The late twentieth century witnessed the rise of "Magic Realism" in the literary mode. The term *Magischer Realismus* was first coined in 1925 by the well-known German art Critic Franz Roh in his book *Nach-Expressionismus, Magischer Realisms: Probleme der neuesten Europäischen Malerei (Post-expressionism, Magical Realism: Problems of the latest European Painting)* and extensively referred to the techniques of writing using magical as well as supernatural and mythical events, a combination of

dreams and realities. The central concern was with the tendencies in the works of certain painters of Munich, somewhat fantastic and dream-like quality but later on, this term came to be associated with the literary fictions. The magic realist writers, by their manifestation of many disparate themes like myths, cultural beliefs, folkloristic elements and political history of a nation have sought to escape from the earlier literary tradition.

The common peculiarity of "Magic Realism" is strong imagination and inducing the narrative style that inculcates the reality with unforeseen fantastic elements of fairy tales or mythology, blending it with the mundane reality. The unfeigned reason for blending such elements into a realistic scene is to decrypt the differentiation between real and fantasy. The concept is troubled to be applied to literature. In recent years the term "magical realism" has become popular as "alternative approaches to reality to that of Western philosophy, expressed in many postcolonial and non-Western works of contemporary fiction" (Bowers 2004:1), specifically in the writings of Gabriel Garcia Marquez's *One Hundred Years of Solitude,* Tony Morrison's *The Bluest Eye* or in Salman Rushdie's *Midnight Children.*

Though magical realism was started in Latin America, its relevance could not be confined to a particular location, "it is after all a narrative mode, or a way of thinking in its most expansive form, and those concepts cannot be 'kept' in a geographical location" (Bowers 2004: 31). It is fascinating enough to find out the works of magic realism in the context of Manipur which is in the farthest corner of the Northeast India. The writer B.M. Maisnamba endeavours to incorporate the elements of magic realism in his novel *Imasi Nurabee* (2012). The paper intends to highlight the fantasy, dreams, legend, history, reality and myth of the Meiteis in Chittagong in the narrative style which has a proclivity to the magic realist technique of narration. The use of magic realism can be defined in two ways: it can be merely used as "a technique in telling the story" or as "a method for narrating a story based on a particular attitude towards reality". Thus, it cannot be taken "merely as a technique, but rather a kind of belief in reality, a reality that is more complex and mysterious than technique what appears in the first place." The infusion of dream-like events, myths and folklore into a realistic event is common in the magic realist text (Rajabi: Azizi: Akbari 2020: 4).

B.M Maisnamba, the prominent writer of Modern Manipuri Literature, has the dexterity of recreating the fictional historical past in which the entire generation of Ningthem Puthiba, the migrant Meitei King in Chittagong was killed by merging it with the real war for Sonar Bangla. With his *Imasi Nurabee,* he has offered a genre of magical realism to the Manipuri literary tradition in which he blends the magical in what seems to be the ordinary narrative. He shows how fantastical elements can operate on the actual historical events and culture pertaining to the

Meitei community. The novel centres on the Manipuri Lai Haraoba Culture against the background of the royal family.

Imasi Nurabee (2012) is a critique in the fictional form to narrativize the Lai Haraoba tradition, an ancient worshipping of local Gods by the Meitei communities, and to bring out the severe consequences of *Lai Nupi Thiba* part in *Lai Haraoba*. From the very beginning, *Imasi Nurabee*, deals with Dr Surmila Sen and Ningthem Mangangsana in Bengal searching for the "lost island" and in the voyage, endless series of unbelievable events unfold, which reflect the blending of the magical and real elements thereby evading the commonplace incidents. In a magical text, we often find the conflict between the world of reality and fantasy and the consequences of magic on the ordinary existence of the characters. The mundane existence of Mangangsana was disturbed when he started having dreams of his past life which constantly invaded his actual existence with something which is strange and bizarre.

A Critique of Meitei Lai Haraoba

Numerous critics of magic realism have drawn their attention to the relevance of the local context in the magic realist works. Brenda Cooper also maintains that "local context is of central importance in magic realist writing" (Kluwick 2011: 1). In *Imasi Nurabee,* Maisnamba demonstrates how a magic realist technique can be constructed by using cultural and religious tradition. The idea of Meitei culture foregrounds *Imasi Nurabee* as it critiques the ritual of Lai Haraoba, which is the main component in facilitating the readers to extract the underlying meanings of such ritualistic performance in understanding the cultural lives of the Meitei community.

Lai Haraoba, which literally means 'pleasing the god' (Parratt, 2013: 53), is a festival celebrated by many Meitei people as part of the Meitei ritual and culture. As E. Nilakanta Singh observed:

> The Lai Haraoba mirrors the entire culture of the Manipuri people. It reveals its strength and weaknesses, the beliefs and superstitions, and perhaps also the charm and happiness of the Manipuri people. It reflects the people at their intensest. (qtd. In Parratt 2013: 53)

"Lai Haraoba" is the grand ceremony to pay respect and show the commemoration of the supreme almighty who created the universe and all the beings, accompanied with ancestral worship. Dhiren claims that "the Lai Haraoba incorporates the original source of many rites and rituals. Literature, culture, philosophy, ballet, dance, music, art, riddles, folk tales etc., have also been originated from Lai Haraoba (qtd. in Singh 2018: 70). The term "Lai Haraoba" has many derivatives. However, it is taken from the phrase "Lai-Hoi-Laoba" (shouting of hoi) of the Leisemba (creation) myth' (Nganbi 2014: 43) of the Meitei. When we carefully observe this ceremony, we can see every aspect of Meitei culture.

As part of this festival, there is a ritual called *Lai Nupi Thiba* or searching for the bride of *Lai* (God), in which the God or *Lai* searches for his bride on the last night of the *Kanglei Haraoba*. In this ritual, the *maibi* (female shaman) becomes possessed as the *lai* enters her. She then utters oracles. The actual choosing of the girl is done by the *maibi,* who points her out with the aid of a hockey stick. The selected girl will join the *maibi* in *leishi jagoi* and after that become a *maibi* (Parratt 2013: 65), and she is not allowed to get married. However, in the later period, such rituals created fear among the girls who were unwilling to become a bride for the God. This tradition was later on banned in the 1950s.

Maisnamba has incorporated this ritual of *Lai Luhongba* (searching for a bride for *Lai*) in the narrative to highlight how the main characters—Surmila Sen, Sukumar Sen, Ningthem Labasana and Lalitabi—ensnare in their lives which altogether change the destinies of these characters. Ningthem Puthiba who migrated to Chittagong, had continued the ritual of his forefathers and started the system of *Kanglei Haraoba* (another type of *Lai Haraoba*) performed explicitly in the Imphal Valley customarily in the Royal palace. As the woman chosen as the bride of *Lai* (God) became *Lainubi* (Wife of a *Lai*), she was not allowed to have a normal life and would be worshipped in a separate house. Ningthem Puthiba was against such tradition in which chosen women were not allowed to get married. Consequently, he started a ritual in Chittagong Haraoba which involved the performances of *Laipakhang Phaba* (catching a man) and *Lainubee Kotpa* (searching for a woman). In this ritual, a *maibi* with her eyes blindfolded under the spell of God would select a man from *Pakhang Shanglen* (a place where men are kept) and a woman from *Leisha Shanglen* (a place where women are kept). After the selection, they were kept together for seven days inside the shanglen of *Lainurabee* and they were not even allowed to interact with the people. Accordingly, they were considered husband and wife.

In Chittagong Haroaba, there was a specific ceremonial which allowed the man and the woman to get married to live happily even after the end of the ritual. Unfortunately, this peculiar ritual changed the destinies of Lalitabi and Labasana who were madly in love with Sukumar Sen and Surmila Sen, respectively. Lalitabi was always a sister to Labasana but due to this observance, they were forced to become husband and wife. Despite the resistance, people shouted in unison that the rule of the land should not be broken. Labasana knew that Sukumar was in love with Lalitabi so he insisted his father Pabung Sagarsana to discontinue this ritual or else "this will create more problems than good in the future. Let there be only worship" (111). But his father, despite knowing the truth, could not do anything against the convention so sacred to the Meitei culture and said "What can we do now? This is the will of God… The traditions of our forefathers will be observed

without fail" (111). After this incident, Lalitabi decided to live in the shrine as Lainurabee living her whole life as a virgin and promised to stop this ritual of Lai Luhongba afterwards. When the door was opened on the eighth day of the ritual, Labasana holding his sword in his hand, ran towards the port, sailed through the sea in his boat, and never returned after that. Lalitabi narrated to Mangangsana that he was the reincarnation of Labasana and said, "One day, Ningthem and Nurabee will meet at Nurabee Island in Nurabee Sagar" (115).

Consequently, the aspect of "*Lai Luhongba*" foregrounds the narrative structure. The simplicity of the thematic content may beguile the audience, but metaphorically, it criticizes many aspects of rituals, ways of life and conventions entrenched in this specific ceremony. The author vehemently critiques the tradition of Lai Haraoba, specifically the *Lai Nupi Thiba,* which has severe implications for the people's lives.

Dreams and Mythical Elements in *Imasi Nurabee*

The amalgamation of illusion and realism is an essential aspect of magical realism. From the novel's beginning, the mystery woman Imasi Nurabee dominates the whole scene in the form of dreams and visions. The magical question of reincarnation weaves into the fantastical story. The story expands from the shores of West Bengal to Wheeler Island in Utkal. Mangangsana, the incarnation of Labasana, has been encumbered by the burden of searching not only for the lost island in Chittagong but also for the woman who frequents his dreams. The woman who is believed to be *Pakhang phabi* (a goddess who catches a man) to Meiteis living in Chittagong. But in Bengal, she is called the goddess of Bangasagar and is the goddess of love. She is also Notun Devi or Notun Maa or Sagar Devi who is revered by the boatmen before going to the sea. To Mangangsana, she is *Lai Nurabee* (Virgin Goddess) or *Taibang Nurabee* (Virgin Woman). The secrets behind the *Lai Nurabee* are kept under suspense and her identity is unravelled through the dreams and visions of Mangangsana. She revealed that, "It's me, your Nurabee. Your *imasidabi*. Your beloved from a previous life" (43). Moreover, she divulges that Mangangsana is incarnated from a previous life, and she has been waiting for him for many years to meet him. She informs him that she will wait for him at *Nurabee Dweep* of *Nurabee Sea*, an imaginary sea. The secrets about the relationship between Dr Surmila Sen and Mangangsana, the purpose of the incarnation and of searching for the lost island have been revealed through dreams.

Another appearance of magic realism surfaces when Lalitabi becomes pregnant without a man. It calls into question the legitimacy of the transmigration of soul called "*thawai mirel*" or "*thawai maru*" ascends from the body after death to enter another body. After spending seven days together in separate rooms, Lalitabi was still a virgin as Labasana and Lalitabi decided not to have any physical proximity.

On the eighth day, Labasana escaped and defied the ritual and never returned. Later, it was believed that his soul was transmigrated as a spirit to the womb of Lalitabi. In a religious perspective, there is a belief that a child born after his father's death is assumed to be the father's reincarnation. When Labasana left he shouted, "Ishanou Nurabee. We will meet again in another life. Death is my last resort. I have to go down. Go down […]" (130). Thus, Mangangsana was always considered the reincarnation of Labasana by Surmila Sen.

Many religions believe in reincarnation belief and the afterlife when an individual is born again to perform the unfinished project of his earlier life. After death, the soul leaves the body searching for another physical form to enter to serve the ultimate purpose of the past life which remains unfulfilled. The incarnation belief is also very much prevalent in the Meitei myth. What is the purpose of reincarnation of Mangangsana? He is constantly reminded of his being a living reincarnation of the great Ningthem Labasana of Chittagong dynasty. When the soul of Labasana reincarnated to Mangangsana, Surmila Sen felt that they had known each other for ages. They seemed they could read their minds and their hearts and talked to each other. As magic realism is a consolidation of dreams and realities, her dreams and mental pictorial memories highlight the imaginative power of Surmila that foregrounds this novel as a magic realist text.

The idea of holy trinity of Mangang, Luwang and Khuman of Meitei culture is entrenched in the story of reincarnation of Mangangsana. The infusion of local myth is of paramount importance in magic realist techniques. Ayyub Rajabi *et al* believe that symbol and myth as the important component of magic realism relies on "the extraordinary events and supernatural deities, and from these symbols and myths, people create creatures beyond the scope of ordinary imagination and reason" (2020: 5). Dreams and myths often intertwine in the story of how Mangangsana was born which is beyond certain reason and imagination. Twenty years ago, Surmila narrated that she had a dream and in that dream "a bright light in the shape of a lotus emerged from the sea where my "He Bird" sank. Inside the flower there was an embryo within a seed" (101). In that dream, something whispered to her ears, "Surmi, Ishanou Nurabee. Goodbye, my love. I will return and we shall meet in another birth. I will be reborn as Ningthem of Nurabee. My soul is going back to my soul" (102). The soul in the form of star flew into the *Lainurabee Temple* in Chittagong, where Lalitabi stayed. The soul of Labasana took permission of Lalitabi to accept the seed of the despairing soul and "the bright figure of the man covered the body of Lainurabee… she embraced the light and held it tightly with her hands" (102). These incidences happened in the dreams of Surmila Sen. It may be noted that in magic realism, the extraordinary event is often presented in the form of fantasy and imagination to counter conscious and subconscious state.

Maisnamba has taken account of dream-like narrative in this novel to escalate the magic realist aspect by integrating extraordinary plot and magical happenings. Not only Surmila, Mangangsana also is ensnared in dreams related to his birth and also the identity of the lady whom he often saw in his dreams. His dilemmas intensified when he was nearer to the reality describing the mystery of lost love. He says, "I cried out. The next moment I came back to the real world and what was left with me was only the painful memory" (29). Mangangsana has some eerie feelings toward dreams and conscientiously believes that most dreams come true. Thus, Maisnamba uses dream fantasies and myths to explore the characters' inner turmoil about lost love and narrate the history of the Ningthem family.

Linkage with History of Meitei Dynasty in Chittagong

According to Elleke Boehmer, the postcolonial writers primarily draw on

> …the special effects of magic realism…to express their view of a world fissured, distorted, and made incredible by cultural displacement […] [T]hey combine the supernatural with local legend… to represent societies which have been repeatedly unsettled by invasion, occupation, and political corruption… (qtd. in Bowers 2004: 92)

The narrative of *Imasi Nurabee* interweaves the history of Meitei dynasty in Chittagong. The Meitei communities dispersed and migrated to neighbouring Bangladesh in the past. Many Meiteis fled their homeland for many reasons. Maisnamba took references from historical facts tracing the record of the "Meiteis" settlement in Bengal (before partition) during the period from 1562 to 1819 AD. The history of migrant Meiteis in Bangladesh is crucial to the text. *Imasi Nurabee* is constructed exclusively on the symbolic connection between the main protagonist Mangangsana and the political histography of Ningthem dynasty which is indeed a major element of magic realism. Accordingly, Ningthem Puthiba and his wife Laisna Puthibi migrated to Chittagong in 1750, and he ruled as a king in Chandrapur of Chittagong. King Puthiba was on good terms with the British. However, when his eldest son Ningthem Chittagongsana came to power, the British refused to accept him as the King. The British defeated Chittagongsana, and he escaped from the clutch of the British. It was believed that he "lived on an island and his descendants went on to settle again in Chittagong, Dhaka and Sylhet. This is a historical fact and not merely a fairy tale" (84). Mangangsana is the descendent of the Meitei ruler in Chittagong. His grandfather Ningthem Sagarsana and his father Ningthem Labasana belonged to the Chittagong royal family. The Sen family and the Ningthem family became close when Ningthem Puthiba settled in Chittagong for the first time. Ningthem Puthiba had built the port of Chittagong. Mangangsana was separated from Imasi Nurabee when there was a Bangladesh war, and the entire Chittagong Ningthem family vanished in this war. Through his dreams, Mangangsana

was often guided by a veiled woman to search for the Nurabee Dweep which was also the last remnant of the Ningthem dynasty.

Imasi Nurabee (2012) is the confluence of two different stories—searching for a "*lost island*" which is the concept of retracing originality and root concerning the political history of the "*Meiteis*" in Bengal. Moreover, Kapler Sindoor is the story of "*lost love*", a story of a woman looking for her lover who drowned in the sea. The themes of the two stories converge in rivers to meet together in Bangasagar. Maisnamba has heightened the inexplicable nature of history when he merges the realistic aspect of history of the Meitei settlers in Chittagong by referring to many historical incidences like the Battle of Plassey after which the British attempted to take over Puthipur, the Bangladesh War. In order to make it more realistic and palatable to the audience, the author refers that Ningthem Puthiba and Chittagongsana being mentioned in the book *History of Migration.*

The inclusion of many real events and places in the narrative endorses the claim to reliability, which has intensified the claim to history of the Meitei settlers in Chittagong. It ends with the discovery of the "*lost Island*" (Nurabee Dweep) which is linked to the family history of Mangangsana who is the last of the Ningthem family to be alive. The remnants of "*He Bird*" (the boat of Labasana) and "*Nurabee Pareng*" (the gold chain of the Chittagong Ningthem dynasty) were also found. Ultimately, the copper plate which contained the names of the kings of the Chittagong dynasty was also retrieved which completed the search. And after analyzing the symbols, those engraved words and clues Mangangsana could find the location of the "*lost Island*".

Conclusion:

The interweaving of magical realism is quite prominent in *Imasi Nurabee.* Maisnamba has infused magical elements into this novel by including myths, folklore and political history. The magic in *Imasi Nurabee* is interwoven with dreams and imagination of the unconscious minds with the unfulfilled desires of the characters. The dream represents the fundamental element of the novel through which the author integrates many other issues concerning culture, myths, legends and history of the Meitei community in Chittagong. The Meitei mythological or religious elements are merged in disclosing the truth beneath the history of Ningthem family in Chittagong. No doubt, there are lots of influences from other literatures in Maisnamba's *Imasi Nurabee.* For instances, the dreams interpretation of Sigmund Freud, the stylistic techniques of Salman Rushdie and the narratology of Marquez. *Imasi Nurabee* narrates briefly how magic realism escapades into a work of art. The novel not only belongs to multiple genres but also deals with various themes such as romance, death, historical allegory, identity and culture. Drawing on the special effects of magic realism, the author expresses his view of a world made

distorted and cultural displacement through this novel. The fictional world of Maisnamba signals the abundant usage of allusions to Meitei myths and culture, conjuring up the mysterious aspect of the text. *Imasi Nurabee* has many consolidated themes fundamental to the magic realist text—for instance, the history of the lost Meitei dynasty in Chittagong, the Meitei myth, convention, and culture to highlight the mundane reality of Mangangsana and Dr Surmila, thereby unveiling how their lives are entangled in magic and reality.

References:

Bowers, Maggie Ann. Magic (al) Realism. Taylor & Francis Group, 2005.

Chanu, Nganbi. "Ritual Festival for Appeasing Ancestral Gods: A Study of Kanglei Lai-Haraoba Festival of Manipur." *Journal of North East India Studies.* Vol. 4(1), Jan-Jul. 2014, pp. 43-54. Web. *http://www.jneis.com*.

Kluwick, Ursula. *Exploring Magic Realism in Salman Rushdie's Fiction*. New York: Routledge, 2011.

Maisnamba, B.M, *Imasi Nurabee (2012).* Translated by Dr. Chirom Kamljit (2021). Imphal: Cultural Research Centre.

Parratt, Saroj Nalini Arambam. *The Religion of Manipur*. 1980. Guwahati: Spectrum Publications, 2013.

Rajabi, Ayyub, Majid Azizi, and Mehrdad Akbari. "Magical Realism: The Magic of Realism." *Rupkatha Journal on Interdisciplinary Studies in Humanities*. Vol. 12, No.1, January-March, 2020. 1-13. https://rupkatha.com/V12/n2/v12n218.pdf

Singh, Naorem Naokhomba. "Religious Ceremonies and Festivals among the Meiteis of Manipur". *Anthropology Today: An International Peer Reviewed Neira Journal.* VOL., 4 (December 2018).

❒❒❒

1. Assistant Professor, Department of English and Cultural Studies, Manipur University, Canchipur, Email: phjayalaxmi@manipuruniv.ac.in, Contact: +918974045267

2. Research Scholar, Department of English and Cultural Studies, Manipur University, Canchipur, Email. pkelangcha98@manipuruniv.ac.in, Contact. +919612056098

The Impact of Cultural Factors and Relocations of Female Protagonists Selina and Avey in Paule Marshall's Novels 'Brown Girl, Brownstones' and 'Praise Song for the Widow'

–G. Vimala

Marshall reveals Selina and her mother Silla's character in a similar way. Silla falls in love with her husband Deighton, who is a dreamer and does not work to reach his dreams. On the other hand, Selina falls in love with Clive, her lover who is unable to fulfil his dreams because he is knotted to his mother.

Paule Marshall is a revolutionary writer in many respects. She is a feminist, womanist and Reconstructionist. Her fiction explores the black diasporic women's quest for wholeness, for integration of the various parts of one's self-race, gender, historical process, ethnicity and the exploration of the specific individual in the community.

As the Jamaican American writer Michelle Cliff (1993) says in her interview with Meryl F. Schwartz, "the Caribbean doesn't exist as an entity; it exists all over the world. It started in the diaspora and continues in the diaspora"

African Caribbean literature crosses beyond the constructs of race, class, and gender oppression infusing it into spiritual, psychological, and cultural elements. Travels, social networks, relocations, and global black diasporic cultural inventions have led to the formation of the Caribbean cultural world in Britain, the United States, and Canada. Though located outside the geographical boundaries of the Caribbean, many African Caribbean writers, intellectuals, and theorists crossed the borders and established connections with their island homes and the homeland of their African ancestors.

whether consciously or unconsciously in all the travel Marshall's protagonists do carry those particular diasporic foundations with them. Through the practice of the collective past, African family traditions, community building and responsibility, her characters suffer transformation by the recognition of their connection to a communal culture.

Before the arrival of Paule Marshall on the scene of literature, most writers project major themes like history, colonialism, slavery, racism and gender issues. Paule Marshall is considered the first black woman writer who treated these issues from a black feminist

point of view and stood out as a pioneer of the black women's renaissance. The common and recurring themes in Black American fiction are identity crisis, racial problems like color, caste and class, protest, the importance of tradition for Black American culture. Need for meaningful relationships and quest for identity, which all get beautifully reflected in the works of black writers of the present century. Paule Marshall is one of the writers whose novelistic tradition goes beyond the realistic images of different models of black womanhood.

Paule Marshall attempts to capture the network of sentiments, motivations and misfortunes. By presenting black women as social, political and cultural actors, Marshall captures the diversities and difficulties of their experiences and informs that her women are not sufferers. She was influenced by the conversations overheard between her mother and other women from their community.

In all her works, Paule Marshall is concerned with the recovery of self. women are the center of all activities. Her novels reveal her identity as a part of her community. Her protagonists discover the identity or make self-recovery by becoming enclosed in a more supreme community and culture.

The female characters use different cultural tools to maintain their identity. Marshall's investigation of her young protagonist's return to the Caribbean reflects wider issues of diasporic identity and cultural fitting connected to ancestral lands, regions and origins. The concept of home, the consequences of dislocation and cultural tensions spread all through the Caribbean diaspora.

The quest for home and the process of growing up Marshall is clearly informed in her interview with Pettis (1992),

One of the things that were talked a lot about among the women was the nostalgic memory of home as they called it, home. It was very early that I had a sense of a distinct difference between home, which had to do with the West Indies, and this country, which had to do with the United States. (p. 117)

Brown Girl, Brownstones (1959) is based on Marshall's own life experiences. The very first novel of Paule Marshall took a giant hop into the world of black women's practical conditions in America. The story is based on Brooklyn-born Selina, the daughter of Barbadian immigrants Silla and Deighton.

The novel maps the growth and maturation of the heroine, Selina Boyce, the black girl born to Silla and Deighton Boyce. Silla Boyce is a combination of soft nature and hard nature, attracting and troublesome to family members and she is lovable and dreadful, whose journey into the exploration of self, and identifies her essential link to her Caribbean homeland.

The book ventures the different stages of Selina's development as her journey from guiltlessness to experience, from unawareness to knowledge, testing doubts, fears, hopes and conflicts of a typical adolescent girl. Selina realizes to familiar with her parent's homeland, determined to go to Barbados. Marshall conserves the tradition, folk culture, and language as part of her community. This novel is also

an acknowledgment of the women in her household and community who taught her power. Marshall's mother and her neighborhood women gathered around the kitchen table and had a conversation on the issues of their own community rituals.

Caribbean descent people born outside of the Caribbean articulate a Caribbean homeland within the city and stick to longing recalls of their island stories, food, music, traditions, customs, language and landscapes. At the core their "return to ancestral homelands has symbolically occurred via re-creation of homeland in new home spaces, fusing past with the present" (Gadsby, 2006, p. 12).

Silla secretly sells her husband's land in Barbados to buy a brownstone. Her resolution, her age, her devotion to the dollar and property and her determination to survive in this man country is theirs.

As a child, Marshall herself had left without her West Indian heritage. The protagonist Selina in "Brown Girl Brownstones", reflects Marshall's attitude and she had "long hated her (self) for her blackness" (BGBS, p. 89).

Marshall reveals Selina and her mother Silla's character in a similar way. Silla falls in love with her husband Deighton, who is a dreamer and does not work to reach his dreams. On the other hand, Selina falls in love with Clive, her lover who is unable to fulfil his dreams because he is knotted to his mother. Selina understood the importance of her native culture, she changed her appearance, character and begins her journey toward her West Indian roots.

According to Davies (1994): Migration creates the desire for home, which in turn produces the rewriting of home. Home can only have meaning once one experiences a level of displacement from it. Still, home is a contradictory, contested space, a locus for misrecognition and alienation. (BGBS, p.113)

Selina fully identifies the dangers of community membership and gradually turns and grows independent from them. In fact, rituals offer a space for communities or groups to shape a place for themselves retaining their rich culture and heritage in spite of being physically dislocated or forcibly uprooted from their native land.

Ritual is a bridge by which those of us who have almost forgotten and those of us who know can cross over into remembering who we were, who we are, and who we are intended to become. Rituals can assist us by naming and validating the essential worth of our experience. In our collective search for meaning, relatedness, worth, and assurance, we are anchored by ritual. (Hyman 1993, p. 174)

As Selina moves outside the protecting attachment of the Barbadian community, issues of racism and gender teach and awaken her to the realities of the outside world. Selina confronts for the first time the racism of the white world in a fellow dancer's house. Her awareness of the outside world is crushed.

Marshall allows her protagonist the space to challenge familial struggles, her honour to reclaim her voice and specify herself, by observing herself from her parents and the Bajan community. Selina holds her identity cultivated in her ethnic home environment but maintains her determination by visiting the Caribbean region. Selina's lived experiences and the past incidents in her imagination about the home

island help her design to connect with her roots. Selina's individuality directs her to re-locating Barbados, the island of her ancestors, and most importantly the home of her immigrant parents left.

Selina holds her Barbadian culture crossing across various geographic borders to travel her roots and improve to understand of her Barbadian brothers and sisters. The quest for knowledge of her Caribbean homeland, Selina's determination to move off on a journey of self-discovery, beginning with Barbados.

Marshall reveals her heroine initiate as the sole survivor amid the wreckage ready to chart a new life. Selina's story opens new opportunities for framing the meaning of home and identity creation.

Marshall describes this with Selina's appearance: She wanted suddenly to leave something with them. But she had nothing… Then she remembered the two silver bangles she had always worn. She pushed up her coat sleeve and stretched one until it passed over her wrist, and, without turning, hurled it high over her shoulder. The bangle rose behind her, a bit of silver against the moon, then curved swiftly downward and stuck a stone. (BGBS, p. 310)

In the novel Praisesong for the widow, Marshall reveals a black woman achieving wholeness by grasping and using her individual and collective past in terms that redefine nation.

Zora Neale Hurston signals the important work done by storytellers in Mules and Men by noting that they are "lying up a nation" (19).

At the beginning of the novel, Avey Johnson appears totally departed from her rich culture and does not even seem to be aware of that rich heritage. During the journey, she recalls other important cultural journeys which make her attachment to her physique and soul. There is a plan for the trip made night from her childhood journey upon the Hudson River to South Carolina. She starts to search for identity;

Their eyes also banished the six suitcases at her side. and placing a small overnight bag like the ones they were carrying in her hand. they were all set to take her along wherever it was they were going. (PSW, p. 72)

Avey's cycle of spiritual death and rebirth begins when she decides to leave the cruise. Avey decides in the middle night, to leave her friends, the women she always travels with, and go ashore to catch a plane home.

The landscape seems to indicate her return to innocence. Avey's trial began with the move to North White Plains but she only knows the obstacles that were placed in her path once she lands in Grenada, a tropical island covered with forest.

Marshall and her contemporaries use the Sea Islands as a bridge, a sacred space from which to do this work.

Pauline Amy De La Breteque says, "Marshall's novel, therefore, highlights the role of collective and subaltern memory in identity building, and it particularly stresses the necessity of creating relations in the process of memorial recovery. Marshall's writing can be seen as rhizomatic, creating links between different times

and spaces. The real and imagined continuities between African and American cultures allow the construction of creolized identities that resist again exclusivism.”

Lebert Joseph leads her to Carriacou, the site of the Big Drum dances and the Beg Pardon, and Joins an annual trip to this island off the coast of Grenada. Through separation and reunification with her body, Avey creates a whole self built on the small rituals of her history. Having found what she needed in her individual past, Avey is ready to admit a collective past.

She recalls a group involvement of Afro-Americans. The removal of Africans from Africa to America blows of strength and the recall proves how Avey had undergone the physical shock drilling her entire physique:

”Her body under the sheet covering her head had remained motionless. Flat, numb, emptied-out, it had been the same as her mind when she awoke Yesterday morning, unable to recognize anything and with the sense of a Yawning hole where her life had once between” (PSW,p. 214).

In the final section of the novel the dance on Carriacou, occurs and marks Avey’s success as a geographer of the diaspora, cultural and geographical territory in Praisesong for the Widow. The dance, the “Beg Pardon,” asks ancestors to forgive the mischiefs of the dancers.

The resurrection is complete when she is able to ask forgiveness at the Beg Pardon “Lord have mercy, Christ have mercy. Lord have mercy”’. and she adopts her new and old name: Avey. short for Avatara.

She promises to return to Tatem, bring her descendants there and keep on telling the story of Ibo Landing. This cultural and geographical space born of women’s work makes room not only for Avey but offers a homeland for Marshall and her readers as well. Following Avey’s travels, the reader too has “made it across” to find a home space that offers an identity rooted in individual and collective memory and a model for how we might rethink nation.

At the end of Praisesong for the Widow, Avey has become the kind of woman Barbara Christian means when she writes, “As we move into another century when Memory threatens to become abstract history. they remind us that if want to be whole. we must recall the past, those pans that we want to remember, those plans that we want to forget” (Christian 1990. p. 341).

Marshall’s commitment to the nation of islands and waters over the continent of Africa is clear in much of her fiction, as in The Chosen Place, The Timeless People. The Barbados of Brown Girl, Brownstones, the Bournehills of The Chosen Place, Tatem and Carriacou of Praisesong for the Widow, and Triunion in Daughters illustrate Marshall’s use of both planned and invented islands in her fiction. Just as Marshall’s characters draw on the past and innovate new routes of identification to describe home, community, and nation. So Marshall depend on both existing and invented islands to construct her map of her homeland.

The bond between the protagonist to home is identified in these novels. Home, relocations, and movements capture the various migratory strategies and trips.

Home identifications occur in one's spiritual and psychological space, the characters struggle with diverse understandings of what home is and intentionally move away from fixed groups of defining home, self, and identity. Home is neither a fixed geographical, sentimental or imaginative location are the identities on the move.

But always an emotional space, home is among the most emotionally complex and resonant concepts in our psychic vocabularies, given its associations with the most influential, and often most ambivalent, elements of our earliest physical environment and psychological experiences as well as their ripple effect throughout our lives. (Rubenstein, 2001, p. 1-2)

In many ways, Paule Marshall has helped to unite generations and bridge African offspring throughout the diaspora. Marshall's commitment to African roots and varied forms of battle has established her as a major writer in African Caribbean women's literature. Marshall's characters do not function as sufferers or psychologically wounded, powerless or speechless beings but they are self-defined, powerful, courageous and reflective individuals who set out to define new limitations in African Caribbean Women's writing.

Abbreviation

BGBS - Brown Girl, Brownstones

PSW – Praisesong for The Widow

References

Marshall, Paule. Brown Girl, Brownstones (Random House, 1959; The Feminist Press, 1981) —. Praisesong for the Widow (Putnam, 1983)

Barbara Christian (ed.), Black Feminist Criticism: Perspectives on Black Women Writers (New York: Pergamon Press, 1985), pp. 103-115.

Cliff, M. (1993, Winter). An Interview with Michelle Cliff Conducted by Meryl F. Schwartz. Contemporary Literature, 34 (4), 595-619.

Davies, C. B. (1994). Black Women Writing and Identity: Migrations of the Subject. London: Routledge.

Gadsby, M. M. (2006). Sucking Salt: Caribbean Women Writers, Migration, and Survival. Columbia: University of Missouri Press.

Hurston, Zora Neale. Mules and Men. New York: Harper Perennial, 1990.

Hyman, A. E. (1993). Womanist Ritual. In L. A. Northup (Ed.), Women and Religious Ritual (pp. 173-182). Washington, DC: Pastoral.

Pauline Amy De La Breteque, Memorial Excursion and Errancy in Paule Marshall's Praisesong for the Widow https://journals.openedition.org/babel/7759

Pettis, J. (1992). A Melus Interview: Paule Marshall.

Rubenstein, R. (2001). Home Matters: Longing and Belonging, Nostalgia and Mourning in Women's Fiction. New York: Palgrave.

❒❒❒

1. P.G.Asst. (English), Ph.D, Research Scholar, Cell: 9362820525; Address: 35, Jaya nagar, (Muthaliyar thottam), Kuruvampatty main road, Gori medu, Salem- 636 008, Salem (District), Tamil Nadu, India.

Research Article

Impact of IT Rules, 2021 Vis-à-Vis OTT Platforms- An Analytical Study

–Mini Srivastava
–Prof. (Dr.) A.P. Bhanu
–Rakshit Dhingra

Due to the large amount of unregulated content, some regulations for content on OTT were the need of the hour. These regulations have brought them on level-playing field with Print, Television and Cable TV regulation mechanisms. The unchecked creative liberty of publishers exposed public to a large amount of either illegal or harmful but legal content. It caused many legal and psychological impact on the minds of viewers.

When the whole entertainment industry got majorly restricted during pandemic, the OTT Platforms came as a blessing in disguise for people locked in their homes. The OTT sector saw an unprecedented growth of 28.6% in India during 2020 highlighting its huge potential. However, some concerns were also raised regarding the nature of content. It led to demands from different quarters for regulating the platforms. Hence, the Government of India brought IT Rules 2021 with one of the aims being regulating the content on OTT platforms. There have been mixed reviews from experts about these rules flagging concerns like Freedom of Speech and Expression of the creators, Right to Privacy of users, Censorship etc. The paper underlines the interaction between OTT platforms in India and governmental response to it.

Introduction

Over-The-Top ("**OTT**") Platforms have witnessed a sudden growth in terms of users in the past few years in India and Worldwide. These platforms have revolutionized the working of entertainment industry. OTT Platforms, in its simplest meaning, are those that provide content such as web-series, movies, shows, music, etc., over the internet through a subscription model (on yearly or monthly basis). Once the customer subscribes, he gets access to unlimited unique content for a limited period.

OTT vis-à-vis Other forms of entertainment

The OTT platforms have challenged the traditional mediums (like cinema, theater, cable TV etc.) by their new-age user friendly ideas. These platforms are getting popular because of the advantages like easy

to use, cost effective, provide greater variety of content, and convenience to use anywhere and at any time. Another key factor for growing popularity of these platforms is that these are accessible anywhere and anytime from devices such as mobile phones, tablets, laptops or even the Television. Hence, it has emerged as 'entertainment on-the-go'. Further, these platforms use Artificial Intelligence to suggest users the kind of content they would like to see based on their watching habits. In short, these platforms, by keeping users' choice at the center, have truly democratized the idea of entertainment.

Growth and Development of OTT Sector during Pandemic

The onset of Covid-19 also contributed majorly to the growth of the popularity of these platforms. When people all around the world were stuck inside their homes due to lockdowns and other restrictions, people found a very convenient medium of entertainment right in the comfort of their homes through OTT Platforms. [1] As per IBEF, during the months of March and July 2020, the OTT industry in India saw a 30% increase of paid subscribers resulting from 22.2 million to 29 million within 3 months of lockdown. Even the older generation that is not necessarily a tech-savvy generation understood what these platforms offer and got a hold of them. In India, the cheap data prices and easy availability of cost- effective mobile phones also helped in increasing the size of audience. The attractive prices providing the comfort to the consumer also proved as a potent strategy for widening the audience. A recent study of 2022 underscores seven robust strategies of OTT platforms to be: competitive low pricing, enhancing customer experience, launching innovative service plans, content localization, strategic collaboration, flexibility in technology adoption and proactive sales promotion. [3] Their sales pitches have convinced the users about their ease and quality content. An estimate suggested that the OTT platforms would create up to 4.8 times added income. Currently, India has 76.1 crore smartphone customers, and KPMG had predicted that the number of OTT platform consumers will reach 6.2 crore by 2022. [4]

Viewers' Concerns

With the rise in viewers and almost unregulated landscape to operate, some of the OTT Platforms published content which was either patently illegal or legal but harmful or against the norms of societies. It hosted some controversial content dealing with hate speech, drugs, depicting and inciting highly violent crimes, abusive language, obscenity, soft pornography, hurtful to religious sentiments of communities or otherwise detrimental to the moralistic norms of Indian society. In the absence of specific regulations, much of such shows did not face any legal issues. However, some shows like Tandav, Mirzapur, Pataal Lok, etc. got entangled in several controversies for hurting the religious sentiments of certain sections of society. Tandav controversy led to filing of multiple FIRs against the makers, actors and

even Amazon as well as a ministerial enquiry followed by unconditional apology from makers as well as removal of certain objectionable parts of series. [5] The Supreme Court while hearing the bail plea of Aparna Purohit, in the famous 'Tandav' case remarked that some platforms even show pornographic content and there needs to be a screening system.

Thereafter, many more controversies arose with regards to numerous shows on matters of nudity, misinformation and hurting social and religious sentiments. Many FIRs were registered against the creators and the producers. All this raised the question on creative freedom of the creators on one hand and interest of viewers on the other hand. Hence, Ministry of Information and Broadcasting ("**MIB**") echoed the need for regulating OTT Platforms. They even held talks with certain stakeholders but no result came out of it in the past. [6] Subsequently, on 25th February, 2021 the Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Ethics Code) Rules, 2021 ("**IT Rules**") were notified by Ministry of Electronics and Information Technology in collaboration with the MIB. Part III of the IT Rules i.e., Code of Ethics and Procedure and Safeguards in relation to Digital Media is supervised by the MIB. It deals with the regulations relating to the OTT Platforms. [6]

Some Salient Features of IT Rules, 2021 *Qua* OTT Platforms

The highlights of Part III i.e. Digital Media Ethics Code are as follows: [7]

1. The Code of Ethics, dealing with Online Curated Content, provide certain general principles for non-publishing of any illegal content on OTT Platforms.
2. The platforms need to take due care about content that affects sovereignty and integrity of India, threatens security of the State, harms India's friendly relations with foreign countries, incites violence and against maintenance of public order, and features activities, beliefs, practices, or views of any social or religious group.
3. Another important feature is classification of content for different age groups on the basis on nature and type of the content.

Fig.1: Age-wise ratings of content by OTT Platforms

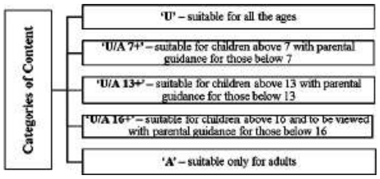

4. Another categorization is based on nature of content and recommending discretion of the viewer apart from the age ratings.
5. These platforms must ensure proper child-locking facilities to restrict children from accessing 'A' rating content.

6. Another requirement has been to make efforts to these platforms more accessible for persons with disability. A welcome result of this requirement has been that many shows now have an option of 'Audio-Description' included for persons with disability.
7. Grievance Redressal Mechanism
   This is the most important aspect with regards to the OTT Platforms under IT Rules 2021. Under *Rule 9 (3),* there is a provision for Three Tier structure for addressing grievances (Fig. 2):

Fig 2: Grievance Redressal Mechanisms under Part III of IT Rules, 2021

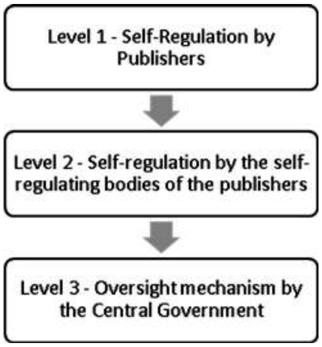

- *Level I*- Self-regulation by the Publishers – Any person having an objection with the content can raise grievance to the Grievance Officer appointed by every publisher of online curated content. The officer is a nodal point of interaction amongst the complainant, self-regulation body and the MIB. Every grievance must be acknowledged with receipt within 24 hours. The complainant must be informed of decision within 15 days, otherwise the complainant can approach the self-regulation body at Level II, of which the publisher is a part of.
- *Level II*- Self-regulation by the self-regulating bodies of the publishers – The body shall be headed by a retired Supreme Court or a High Court Judge or an eminent person from the field of media, broadcasting, entertainment, child rights etc. with not more than six other members. The body can have maximum of 6 such members. It will have three primary functions:
  1) ensuring adherence to code of ethics by publishers
  2) address grievances not resolved by publishers in 15 days
  3) hear appeals filed by complainants against decisions by publishers
  4) issue guidance or advisories like warnings, censures, admonish or reprimanding the publishers
  5) requiring apology from publisher
  6) requiring publisher to include disclaimer

7) directing publisher to make appropriate changes to relevant content.

If the complainant is not satisfied with the decision of self-regulating body, it can file appeal within 15 days.

Consequently, two such bodies have emerged namely Digital Publishers Content Grievances Council under IAMAI and Digital Media Content Regulatory Council under IBF (to be renamed as IBDF). [7]

- *Level III* - Oversight mechanism by the Central Government – It comprises of MIB and Interdepartmental Committee. A designated officer, of level of Joint Secretary, will be heading the Inter-Departmental Committee. It consists of representatives of various ministries concerned. It is an appellate body that hears the complaints against Level I or II or referred by the MIB and in the cases where the complainant did not get the satisfactory response. The committee has various powers against the publishers and bodies to make them adhere to the IT Rules. In case of immediate emergency, the Secretary can give approval to block such content for public access as an interim direction which can later be revoked.

Challenges to IT Rules 2021

Due to the large amount of unregulated content, some regulations for content on OTT were the need of the hour. These regulations have brought them on level-playing field with Print, Television and Cable TV regulation mechanisms. The unchecked creative liberty of publishers exposed public to a large amount of either illegal or harmful but legal content. It caused many legal and psychological impact on the minds of viewers. However, there rules, allegedly, have several legal concerns. Hence, they have been challenged by many publishers at various high courts and Supreme Court in the very first year.

It must be underlined that supervisory frameworks on digital media may differ from traditional media due to specific challenges associated with them such as: (i) Definition of 'publisher' because an individual and an entity that publishes content online cannot be governed in an identical way, (ii) The amount of content that has to be regulated, (iii) Its implementation because of the ubiquitous nature of digital media is such that publishers may not have a physical existence in the country. [8]

The new mechanism has numerous shortcomings.

1) To start with, the dominant degree of control provided to the MIB to determine what can be shown and what has to be blocked qua content on OTT platforms and the news content. It may have an undesirable impact on the freedom of speech and expression of the creators. 2) It is also a possibility that the decisions of the MIB could take a pro-government stance due to the political objective, making it an obstacle to the fundamental rights of the citizens and creators especially. 3) The government can also block some anti-government policies content citing it

against the security of the state. This puts digital creators at the mercy of the government. [9]

Conclusion

The IT Rules, although necessary, can be misused against the creators and audience. The Supreme Court in an order in Aparna Purohit v. State of Uttar Pradesh stated, "*A perusal of the Rules indicate that the Rules are more and more in the form of guidelines and have no effective mechanism for either screening or taking appropriate action for those who violates the guidelines"*.(emphasis supplied) [10] Also, the three-tier mechanism is not very clear and it is complicated for general users having no specific knowledge. Further, the mechanism also endangers the creators' liberty to freely create content as the whole process put them under a lot of pressure to manage to stay out of legal hurdles. There is a need for proper consultation of all the stake holders to establish a co-regulation system where neither the government nor the platforms become autonomous and they co-exist, both by putting on their own regulations to safeguard the users while simultaneously providing them with all type of content to choose from. Neither complete control nor complete freedom can be granted to the platforms and the way forward is that of public enjoying quality content and the OTT platforms making their business grow with having a creative liberty to depict the realities of the society provided they stay within the boundaries of law and social norms of the country.

References

[1] (2021). Kshamali Sanjay Sontakke. Trends in OTT Platforms Usage During COVID-19 Lockdown in India. *Journal of Scientific Research of The Banaras Hindu University, Vol. 65, Issue 8, 2021*. https://bhu.ac.in/research_pub/jsr/Volumes/JSR_65_08_2021/23.pdf (Accessed on 5th July, 2022)

[2] (2020). India's OTT Market: Witnessing a rise in number of paid subscribers. IBEF. https://www.ibef.org/blogs/india-s-ott-market-witnessing-a-rise-in-number-of-paid-subscribers (Accessed on 6th July, 2022)

[3] (2021). Kavita Sharma, Emmanuel Elioth Lulandala. OTT platforms resilience to COVID-19 – a study of business strategies and consumer media consumption in India. *International Journal of Organizational Analysis.* https://www.emerald.com/insight/content/doi/10.1108/IJOA-06-2021-2816/full/html?skipTracking=true (Accessed on 5th July, 2022)

[4] (2022). Complete List Of OTT Platforms In India - 2022. *Selectra.* https://selectra.in/blog/list-of-ott-platforms-india (Accessed on 1st July, 2022)

[5] (2021) Tandav a case study for OTT censorship under IT Rules, 2021 https://internetfreedom.in/tandav-case-study/

[6] (2021). Indian OTT Platforms Report 2021. *MICA Center for Media and Entertainment Studies*. (Last Accessed on 3rd July, 2022)

[7] (2021) Digital Media Ethics Code FAQs issued by Ministry of Information and Broadcasting

[8] (2021). Aarya kumar Jha, Ishika Prasad. IT Rules 2021: Regulations on OTT Platforms. *Jus Corpus Law Journal Vol. 1 Issue 3.* https://www.juscorpus.com/wp-content/uploads/2021/03/13.-Aarya-Kumar-Jha-Ishika-Prasad.pdf (Accessed on 3rd July, 2022)
[9] (2022). OTT platforms a divided house on self-regulation. *The Mint.* https://www.livemint.com/opinion/columns/ott-platforms-a-divided-house-on-selfregulation-11622664879112.html (Accessed on 5th July, 2022)
[10] (2021). The Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Ethics Code) Rules, 2021. *PRS Legislative Research*. https://prsindia.org/billtrack/the-information-technology-intermediary-guidelines-and-digital-media-ethics-code-rules-2021#_edn31 (Accessed on 4th July, 2022)
[11] (2021). Ronica S. Dass. A Review On IT Rules 2021: A Positive Or A Negative Restriction On Digital Media And OTT Platforms? *LiveLaw*. https://www.livelaw.in/law-firms/law-firm-articles-/it-rules-2021-digital-media-ott-platforms-186065 (Accessed on 4th July, 2022)
[12] Special Leave Petition (Crl.) No. 1983/2021 (Supreme Court of India).

❑❑❑

1. Research Scholar, Amity Law School Noida, Amity University Uttar Pradesh
2. Acting Director, Amity Law School Delhi, Amity University Uttar Pradesh
3. 3rd, Year Law Student, Amity Law School Noida, Amity University Uttar Pradesh

Impact of Leadership Styles on Job Satisfaction: A Special Reference to Higher Education Institutes

–Maj Gen. Kulpreet Singh
– CDR (Dr.) Avikshit

The standardized coefficients were used for determining the variable that contributed most in predicting the dependent variable. The transformational leadership has the strongest contribution in predicting the intrinsic job satisfaction with a β coefficient = 0.30. The β value for transactional leadership was lower (0.23), this indicates that this particular variable contributed less in predicting the intrinsic job satisfaction.

Introduction

The survival of many organizations is threatened by an ever-changing and rapidly evolving environment. As the world becomes more complex and convoluted, the need for effective leadership, for the success of an organization's future, has become even more critical and challenging. There are several forces which control individuals and organizations at all times, chief among them being the advent of globalization, liberalization, and privatization, making changes inevitable and unavoidable. The main areas where change is needed in an organization include leadership styles and organizational culture. The changes may be radical or gradual but the manner of adopting and adapting to them has to be varied and flexible. Increasing competition makes it imperative on the part of the organizations whether in business or in education to keep pace with the change.

Job satisfaction or employee satisfaction is one of the key goals of all HR personnel, irrespective of what their individual KRAs are. A satisfied employee is not just a retained employee but an ambassador for the brand, internally and externally. Happy employees are more loyal to their company and its objectives, they go the extra mile to achieve goals and take pride in their jobs, their teams and their achievements.

Higher Education Scenario in India

Education is the key parameter in the growth strategy of any developing nation and has rightly been accorded an important and venerable place in the society. Higher education is of vital importance to the country, as it is a powerful tool to build knowledge-based society of the 21st century. Higher Education

means education imparted to students beyond schooling to say study beyond the level of secondary education. Often the term is assumed as education imparted by the colleges or the universities. In fact, the institutions of higher education include not only colleges and universities but also professional schools in the field of law, theology, medicine, business, music, and art. Higher education also includes institutions like teachers training schools, community college and institutions of technology. The term higher education also has in its fold, training of highly skilled specialists in the fields of economics, science, technology and culture at various types of institutions of higher education, who accept the candidates having completed secondary general education. In simple words, the term higher education generally refers to education at degree level and above.

According to a recent survey (2018) done by the HRD ministry, the Gross Enrollment Ratio (GER) for Higher Education has shot up from 12.4 to 20.2. By 2030, the number of youth vying for university education will touch 400 million, the size of the population of the USA. The number of students enrolling in higher education has increased by 65 per cent in four years, according to sources in HRDC.

Importance of Leadership in Higher Education

Today, higher education is confined not only to the development of the individuals- physically, mentally, intellectually and spiritually, but it is also required to equip them with necessary skills for their wellbeing as well as for the socio-economic development of the society at large. Thus, the main goals of higher education are the dissemination of knowledge, use of information networks and mass media technologies, helping in the improvement of productivity, which may be defined as a way of ensuring the prospect of employability and employment. The need to expand the system of higher education; the impact of technology on the educational delivery; the increasing private participation in higher education and the impact of globalization have necessitated marked changes in the Indian Higher Education system and the role of its leaders is constantly changing.

Leadership in Higher Education has to evolve at a fast pace in order to keep up with the changing demands on Higher Education. The maintenance and improvement, of the quality of Higher Education Institution, must be the responsibility and full commitment of institutional leadership. To survive in the twenty-first century, we need a new generation of leaders - leaders not managers. The distinction is an important one. Leaders conquer the context - the volatile, turbulent, ambiguous surroundings that sometimes seem to conspire against us and will surely suffocate us if we let them - while managers surrender to it. The tide is turning in research on educational leadership. After 15 years of focus on the effective management of schools, the spotlight is now on the leadership roles of teaching

and learning. The researchers highlighted that leadership means building vision, aligning people, communicating and inspiring them. Managers are people who do things right and leaders are people who do the right things. Thus, management is about coping with complexity, by seeking order and stability, whereas leadership is about coping with change, by seeking adaptive and constructive change. Robin Sharma (2011) considers leadership to be a philosophy, an attitude, a state of mind and it is available to each one of us. Leadership has nothing to do with the title on the business card or the size of the office. It is not about how much money one makes or the clothes one wears. Leadership is a lot more than just dreaming up big idea. It's about acting on them.

Review of Literature

Dr Ashok Panigrahi (2016), carried out a study of job satisfaction and its implications for motivating employees at Infosys to determine the job satisfaction of employees in Infosys. The employees at Infosys valued work relationships and healthy working conditions the most when it came to job satisfaction. Closely followed were salary, other benefits and opportunities to learn new skills. Regarding working conditions, the employees were satisfied with the number of hours spent at office, current location, sick and paid leaves but were dissatisfied with the flexibility at the job. The nature of organization significantly effects on job satisfaction and turnover intentions. The organizational culture is important element which highly influences the employee commitment, job satisfaction and retention *(Salman Habib, Saira Aslam, Amjad Hussain, Sana Yasmeen, Muhammad Ibrahim,* 2014). *Raimonda Alonderiene, Modeska Majauskaite (2016),* revealed significant positive impact of leadership style on job satisfaction of faculty where servant leadership style had been found to have the highest positive significant impact on job satisfaction of faculty while controlling autocrat leadership style had the lowest impact. There is a significant relation between leadership styles of principals as perceived by the staff and their level of job satisfaction. The findings show that leadership styles and socio- economic variables did have an impact on job satisfaction *(Shyji P D G Santhiyavalli, 2014). Henry Kiptiony Kiplangat (2017)* discussed the relationship between leadership styles and lecturers job satisfaction in institutions of higher learning in Kenya and found out that benevolent authoritarian leadership style was dominantly used. However, the study recommended practice of participative leadership style. There are various types of leadership styles being used by the leaders in accordance with the organizational environment to deal with the employees in accordance. The present study intends to identify the relationship between leadership styles and employee job satisfaction.

Objectives of the Study

This study aims to examine the impact of leadership style on job satisfaction in higher education institutions in District Mohali, Punjab with the following objectives:

(a) To study the impact of leadership styles on job satisfaction in higher education institutions in District Mohali.
(b) To suggest suitable measures to enhance the level of satisfaction among the respondents.

Based on the theoretical background discussed above, the following hypotheses are proposed:

Hypothesis 1: Transformational leadership promotes intrinsic job satisfaction of employees better than transactional leadership.

Hypothesis 2: Transformational leadership promotes extrinsic job satisfaction of employees better than transactional leadership.

Research Methodology

The population of this research included the employees from higher educational institutes of Mohali. Purposeful sampling is used in this research. In other words, the individuals who were relevant for understanding the phenomenon taken under consideration were selected intentionally for this study. The participants of the study included full time employees such as teaching and the administrative staff. 200 surveys were sent to the individuals selected from these institutes. The response rate of the survey was 60.5 %. As a result, a final sample of 121 respondents was obtained. F test was performed for determining the statistical significance of the regression models of this study.

Results and Findings

H1: Transformational leadership promotes intrinsic job satisfaction of employees better than transactional leadership.

Table 1 shows the correlation among transactional, transformational leadership style and intrinsic job satisfaction. There was a significant positive correlation among the transformational leadership, transactional leadership, and intrinsic job satisfaction ($p < 0.001$). The table 1 also indicates the Pearson correlation between the two leadership styles. The correlation was 0.53 between the independent variables. The two independent variables were retained in the model of multiple regression because the correlation is less than 0.7 (Pallant, 2016).

Table 1: Correlations between Leadership and Intrinsic Job Satisfaction

Variable	IS	TF	TS	P (1-tailed)
IS		0.40	0.37	<0.001
TF	0.41		0.53	<0.001
TS	0.37	0.53		<0.001

Source: Primary Data

Table 2 indicates that the value of R2 was 0.20 indicating that there is a variance of 20% in the model and the intrinsic job satisfaction.

Table 2: Model Summary of Multiple Regression Analysis

Model	R	R^2	Adjusted R^2	Std. error of the estimate
1	0.46	0.20	0.19	0.40

Source: Primary Data

Table 3: ANOVA for Transformational and Transactional Leadership and Job Satisfaction

Model	Sum of Squares	df	Mean Square	F	P
Regression	5.73	2	2.85	16.42	<0.001
Residual	20.59	116	0.174		
Total	26.33	118			

Source: Primary Data

The standardized coefficients were used for determining the variable that contributed most in predicting the dependent variable. The transformational leadership has the strongest contribution in predicting the intrinsic job satisfaction with a β coefficient = 0.30. The β value for transactional leadership was lower (0.23), this indicates that this particular variable contributed less in predicting the intrinsic job satisfaction. Further, the t value was also evaluated for each variable. It was found that the variables (transformational and transactional leadership style) made significant contributions in prediction of the dependent variable as the significance value of the variables were >0.05. Further, for each variable, the value of t was determined. The significant levels of the two variables of the study were > 0.05. This indicates that the variables (transformational and transactional leadership) have made significant unique contributions in predicting the dependent variable of the study (job satisfaction) as for the transformational leadership p =0.03 and for transactional leadership style p = 0.018.

H2: Transformational leadership promotes extrinsic job satisfaction of employees better than transactional leadership.

The Table given below displays the correlation between transformational and transactional leadership style and extrinsic job satisfaction. Significant positive correlations were found between the transformational and transactional leadership and extrinsic job satisfaction as the (p < 0.001). The Table below also displays the Pearson's correlation between the two leadership styles. The correlation between variable = 0.53 (less than 0.7), therefore the independent variables were retained.

Table 4: Correlations between Leadership and Intrinsic Job Satisfaction

Variable	IS	TF	TS	P (1-tailed)
IS		0.57	0.55	<0.001
TF	0.57		0.53	<0.001
TS	0.55	0.53		<0.001

Source: Primary Data

The table given below indicates that the value of R2 = 0.41. This indicates that the there is 41% variance in the model and the extrinsic job satisfaction. The model is significant statistically (F =42.92, p <0.001).

Table 5: Model Summary of Multiple Regression Analysis

Model	R	R^2	Adjusted R^2	Std. error of the estimate
1	0.63	0.41	0.40	0.48

Source: Primary Data

Table 6: ANOVA for Transformational and Transactional Leadership and Extrinsic Job Satisfaction

Model	Sum of Squares	df	Mean Square	F	P
Regression	20.24	2	10.12	16.42	<0.001
Residual	27.83	116	0.24	42.92	
Total	48.07	118			

Source: Primary Data

Standardized coefficients were used for determining the contribution of the variables that are included in the model. The transformational leadership has a unique contribution in predicting the extrinsic job satisfaction as the β coefficient = 0.40. The value of β for the transactional leadership was lower (0.34), this indicates that transactional leadership made less unique contribution. For each variable, the t value was also determined. The significant levels of the two variables of the study were > 0.05. This indicates that the variables (transformational and transactional leadership) have made significant unique contributions in predicting the dependent variable of the study (job satisfaction) as p < 0.001 for the variables.

Discussion

This particular study was conducted so as to explore the relationship between the leadership styles and job satisfaction of employees in the selected Higher Educational Institutes in Mohali. According to the results of Pearson's correlation the two leadership styles positively and significantly correlated with the intrinsic job satisfaction. The standardized coefficients β for the transformational and transactional leadership indicated that transformational leadership contributes more in the model rather than the transactional leadership style. The findings of study indicate that transformational leadership better predicts the intrinsic job satisfaction rather than transactional leadership. The findings of study suggest that the intrinsic job satisfaction of the employee can be increased if the transformational leadership style is used. The findings of this study are consistent with the findings of past studies. According to Shibru and Darshan (2011) the transformational leadership style is one of the important factors that help in improving the job satisfaction level of the employees. The findings of the study indicated that the transformational leadership style can increase the job satisfaction of the employees (Darshan, 2011).

Conclusions, Limitations, Further Research and Practical Implications

This particular study has provided evidences regarding the association between the scales of transformational, transactional leadership style and job satisfaction. Educational institutes should focus on using the transformational leadership style for improving the job satisfaction among their employees. One of the major limitations of this research is the small sample size, because of which the findings of the study cannot be generalized. Another limitation of this research is associated with the issue of truthfulness of the respondents involved in the study. This can have a potential impact on the results of the survey. The future researches can focus on examining the relationship between the elements of transformational leadership and job satisfaction.

References:

1. Aziri, B. (2011), 'Job satisfaction: A literature review,' Management Research and Practice,3 (4), 77-86.
2. Bass, B. M. (1985) Leadership and Performance Beyond Expectations, Free Press.
3. Bektaş, C. (2017), 'Explanation of intrinsic and extrinsic job satisfaction via mirror model,' Business & Management Studies: An International Journal, 5 (3), 627- 639.
4. Berson, Y. & Avolio, B. J. (2004), 'Transformational leadership and the dissemination of organizational goals: A case study of a telecommunication firm,' The Leadership Quarterly, 15 (5), 625 646.
5. Bhatti, N. et al. (2012), The Impact of Autocratic and Democratic Leadership Style on Job Satisfaction,' International Business Research,5 (2), 192-201.
6. Burns, J. M. (1978) Leadership,Harper & Row.
7. Darshan, G. (2011), 'Effects of transformational leadership on subordinate job satisfaction in leather companies in Ethiopia,' International Journal of Business Management & Economic Research, 2 (5), 284-296.
8. Goetz, K. et al. (2012), ,The impact of intrinsic and extrinsic factors on the job satisfaction of dentists,' Community dentistry and oral epidemiology,40 (5), 474- 480.
9. Javed, H. A., Jaffari, A. A. & Rahim, M. (2014), 'Leadership Styles and Employees' Job Satisfaction: A Case from the Private,' Journal of Asian Business Strategy,4 (3), 41- 50.
10. Khan, J. A. (2011) Research Methodology,APH Publishing.
11. Naidu, J. & Walt, M. S. v. d. (2005) 'An Exploration Of The Relationship Between Leadership Styles And The Implementation Of Transformation Interventions,' SA Journal of Human Resource Management, 3(2), 1-10.
12. Northouse, P. G. (2015) Leadership: Theory and Practice,7th ed. USA: SAGE Publications.
13. Pallant, J. (2016) SPSS Survival Manual: A Step by Step Guide to Data Analysis Using IBM SPSS, 6th ed. London: McGraw Hill/Open University Press.
14. Ramos, N. (2014),'Transformational Leadership and Employee Job Satisfaction: The Case of Philippines Savings Bank Batangas Branches,'Asia Pacific Journal of Multidisciplinary Research, 2 (6), 6-14.
15. Richter, A. et al. (2016),'iLead—a transformational leadership intervention to train healthcare managers' implementation leadership,'Implementation Science,11 (1).

16. Saleem, H. (2015),' The impact of leadership styles on job satisfaction and mediating role of perceived organizational politics,'Procedia - Social and Behavioral Sciences,172, 563-569.

17. Sarwar, A., Mumtaz, M., Batool, Z. & Ikram, S. (2015),'Impact of Leadership Styles on Job Satisfaction and Organizational Commitment,'International Review of Management and Business Research, 4 (3), 834-844.

18. Valentine, Godkin, Fleischman & Kidwell (2011),'Corporate Ethical Values, Group Creativity, Job Satisfaction and Turnover Intention: The Impact of Work Context on Work Response,' Journal of Business Ethics,98 (3), 353-372.

19. Voon, M., Lo, M., Ngui, K. & Ayob, N. (2011),'The influence of leadership styles on employees' job satisfaction in public sector organizations in Malaysia,'International Journal of Business, Management and Social Sciences,2(1), 24- 32.

20. Weiss, D. J. & Dawis, R. V. (1967)Manual for the Minnesota satisfaction questionnaire, Minneapolis, MN: University of Minnesota Press.

❒❒❒

1. Rayat and Bahra School of Management

2. Professor and Dean, Rayat and Bahra School of Management

Research Article

Mobile Phone App Technology: New Innovative Learning Instrument

–Manoj Kumar Gupta
–Dr. Sudhir Sudam Kaware

The m-learning mobile app contains various modules such as registration, login, department selection, topic selection and content reading. The registration module takes the student's data such as matriculation number, name, department, age, etc. and provides a user name and password. The login module authenticates the student by obtaining the username and password.

Abstract

Technology has drastically improved the existing education system over the past fifteen years. Self-learning via online platforms has replaced traditional rote learning. The umbrella of the technology-based education system includes a variety of learning app. The article deals with the use of mobile technologies of mobile educational applications to support teaching and learning. The analysis of current trends in app technologies arouses the students' interest in the possibility of using mobile devices in the educational information system. The mobile ICT policy provides additional direction in building information systems to support learning. Conflicting opinions on development should favour the benefits of innovation, as prototyping cannot be clearly identified from mobile innovation. The implementation of this innovation has many pitfalls and problems such as economic evaluation, but these should not be the application's main success criteria. The use of this tool in education is very effective and represents a new way to support teaching and learning. By using, the educational app students receive a comprehensive overview of the topic subject which is discussed, and they are provided with other teaching-learning support, which would be impossible without mobile apps. They have continuous access to material as well.

Keywords: Mobile App, Learning, M-Learning, E-learning, Teaching-Learning

Introduction

The world is withering, now the world is isolated a few clicks away. The educational system is more advanced and dynamic. M-learning applications, the

use of handheld electronic devices to approach and share information. M learning began and shows the opportunities to the student as well as professional also (Rossing, et al.). The current form of education through apps is already commonplace and adapts to today's times. Mobile learning apps are a complementary form of e-learning for the use of mobile devices. The concept of mobile devices you can think of are PDAs, cell phones, communicators as well as notebooks or netbooks and tablets. These can be connected via Wi-Fi or a mobile network. Students use this when they ride the bus or train or wait in different ways. m-Learning apps use a number of supporting applications, such as LMS. which are learning management systems. The difference between these systems for eLearning and m-Learning is to ensure an adequate display for smaller mobile devices and adapt the functionality of most portable devices to a lower need for data transmission.

m-Learning and e-Learning

The term m-learning or mobile learning has different meanings for different communities, which refers to a subset of e-learning, educational technology, and distance learning that focuses on learning through contexts and learning with mobile devices. Mobile learning has many different definitions and is known by many different names. Such as m-learning, u-learning, personalized learning, mobile learning, ubiquitous learning, anytime, anywhere learning, and portable learning. One definition of mobile learning is, "any sort of learning that happens when the learner is not a fixed, predetermined location, or learning that happens when the learner takes advantage of the learning opportunities offered by technologies" (MOBIlearn.,2003). In another words, with the use of mobile devices, learners can learn anywhere and at any time (Crescent and Lee, 2011).

Mobile devices are not suitable for intensive learning due to their small size, but their great advantage is their portability. The importance of using advanced technologies in the learning environment thus offers unlimited possibilities through mobility studies. One of the most common forms of accessing education remotely from outside of school is undoubtedly e-learning. E-learning can be understood as a complex educational process, but also as a supporting activity. E-learning is defined as an educational process that supports information technologies. M-learning can then be viewed as an extended form of e-learning, using this form of education to support mobile computing and communication devices. Mobile learning applications are the ability to use mobile devices to support teaching and learning.

Augmented reality

Augmented Reality is one of the latest trends. It allowed the rapid start of growth in the production and quality of smartphones, cameras connected to mobile platforms, in particular Apple IOS and Google Android. Augmented reality is the image that the user sees directly (through a mobile device's camera), supplemented

with additional information. This information can be aggregated through image analysis, which processes the image directly and looks at certain elements of it, based on image processing, or more generally through GPS location and data obtained via the Internet.

Mobile applications for m-Learning

The m-learning mobile app contains various modules such as registration, login, department selection, topic selection and content reading. The registration module takes the student's data such as matriculation number, name, department, age, etc. and provides a user name and password. The login module authenticates the student by obtaining the username and password. The subject area selection module allows students to select the subject area under which they would like to read the content. The subject choice module enables students to select the subject that belongs to the chosen subject area. The content reading module makes it easy to read the contents compartments. One of these special apps is SMS Quiz Authoring, which evaluates quiz results. However, this is only a partial solution for the selected area as opposed to a comprehensive solution for eLearning and m-Learning called CERTPOINTVLS. This means is offered primarily in the creation of business education. This solution comes with most applications for Android, iOS, Symbian, WebOS, BlackBerry, and Windows Mobile on mobile platforms

Challenges of m-Learning

Table - 1

Technical challenges	Social challenges	Educational challenges
Connectivity Battery life Screen size and Key size (Mainar and et al.2008) No of file support specific devices Copyright issue Multiple operating system Limited memory (Elias, 2011) Risk of sudden obsolescence (Crescente and Lee, 2011)	Accessibility and cost barriers for end user Frequent Changes in device models Personal and private information and content No demographic boundary Tracking of results and proper use of this information Content security or pirating issue Risk of distraction (Crescente and Lee,2011)	How to assess learning outside the classroom How to support learning across many contexts Design of technology to support a lifetime of learning (Moore, 2009) Developing an appropriate theory of learning for the mobile age No restriction on learning time table Disruption of students' personal and academic lives (Masters, K 2007)

Barriers to practical use of m-Learning

In additional to these challenges, there are some barriers. In practice, m-Learning encounters several problems that, in contrast to eLearning, stand in the way of coverage. Some problems are specific to some sites only, other problems are inherent to m-Learning as a whole, and in general, m-Learning can work without major problems, especially in developed countries. One of those obstacles is the need to use a better mobile device instead of eLearning, which is enough even if you rent an older PC and computer. Others can be cited as lower system availability or mobile broadband availability and cost.

Current capabilities and comparison of other learning method

Table 2 Compare Approach

Subject	e-Learning	m-Learning	traditional learning
Opportunity to learn anywhere	No	Yes	Yes
Pedagogical Change use of multimedia and interactive tool	Yes	Yes, with some restriction	Limited
The need to connect internet	Mostly	Mostly	No
Assignment &test	Yes, Dedicated time, Standard test	Yes, 24/7 Instantaneous, Individualized tests	Limited
Automatic evaluation test	Yes	Yes	No
Contact with teacher and other student	Limited	Limited	Yes
Feedback to student	Yes, Paper based	Yes, Less paper	Yes, More paper
Communication	Yes, Asynchronous	Yes, Synchronous	Yes, Face to Face

The table shows that m-learning and e-learning correspond in many aspects, and that m-learning is opposed to classic learning in other identical aspects. In particular, eLearning and m-learning have in common the ability to conduct a self-assessment test with no or minimal intervention from the teacher, the ability to assess and monitor the learning progress of either a specific student or all course participants, and comparing it to traditional classroom instruction and limited contact with teachers and other students, limited to communicating through different communication channels and using collaborative tools. However, when it comes to using multimedia and interactive. Pedagogical change tools alongside eLearning, it is due to higher performance, a larger screen, and the ability to transfer more data than most mobile devices. In contrast to classic teaching, m-learning is a common learning option wherever m-learning not only allows you to study teaching

materials but also to write exams, obtain materials, and other interactive options in addition to classic learning. Classical learning is therefore an advantage, especially in direct exchange with the teacher and other students. This advantage is significant enough, but many students can be the reason for using eLearning or m-learning also many situations where electronic teaching methods are difficult to replace, such as language teaching and various methods, where it is better to test the case directly under the supervision of the teacher.

Conclusion

M-learning is emerging as one of the solutions to educational challenges. With a variety of tools and resources always available, mobile learning offers more options for personalizing learning. M-learning is certainly an interesting approach to learning, which unfortunately has not yet been properly implemented in many countries and is basically an unknown concept. Although there is a technical background and the corresponding equipment and technology are offered without any problems, there can still be problems, especially financial ones. Purchasing facilities and environments suitable for m-learning could offer someone a relatively large amount and therefore is not expected to be a big boom at the moment. Despite all the difficulties, a further expansion of m-learning can be expected in the future, but it will probably take a few more years before mobile end devices develop and perform e-learning functionality**.**

References:

1. Carmigniani, J., & Furht, B. (2011). Augmented Reality: An Overview. In B. Furht (Ed.), *Handbook of Augmented Reality* (pp. 3–46). Springer New York. https://doi.org/10.1007/978-1-4614-0064-6_1
2. Chiu, P.-S., Kuo, Y.-H., Huang, Y.-M., & Chen, T.-S. (n.d.). *The Ubiquitous Learning Evaluation Method Based on Meaningful Learning*. 9.
3. Crescente, M. L., & Lee, D. (2011). Critical issues of m-learning: Design models, adoption processes, and future trends. *Journal of the Chinese Institute of Industrial Engineers*, *28*(2), 111–123. https://doi.org/10.1080/10170669.2010.548856
4. Dalgarno, B., & Lee, M. J. W. (2010). What are the learning affordances of 3-D virtual environments?: Learning affordances of 3-D virtual environments. *British Journal of Educational Technology*, *41*(1), 10–32. https://doi.org/10.1111/j.1467-8535.2009.01038.x
5. Elias, T. (2011). Universal instructional design principles for mobile learning. *The International Review of Research in Open and Distributed Learning*, *12*(2), 143. https://doi.org/10.19173/irrodl.v12i2.965
6. Hans, G., & Sidana, H. (2018). *Mobile Learning Application And Its Usage Among Students In Education*. *5*(1), 15.
7. Huet, J.-M., & Tcheng, H. (2010). *What If Telecoms—Were the Key to the Third Industrial Revolution?* Pearson Education France.
8. *ILearning: The Future of Higher Education? Student Perceptions on Learning with Mobile Tablets*. (n.d.). 27.
9. Maniar, N., Bennett, E., Hand, S., & Allan, G. (2008). The Effect of Mobile Phone Screen Size on Video Based Learning. *Journal of Software*, *3*(4), 51–61. https://doi.org/10.4304/jsw.3.4.51-61

10. Masters, K., & Ng'ambi, D. (2007). *After The Broadcast: Disrupting Health Sciences' Students' Lives With Sms*. 5.

11. Mehdipour, Y., & Zerehkafi, H. (n.d.). *Mobile Learning for Education: Benefits and Challenges*. 9.

12. Moore, J. P. T., Oussena, S., & Zhang, P. (n.d.). *A Portable Document Search Engine To Support Off-line Mobile Learning*. 7.

13. Nguyen, L. M. T., & Hoang, T. S. (2020). Mobile technology to promote education 4.0 in Vietnam. *Vietnam Journal of Education*, *4*(4), 1–6. https://doi.org/10.52296/vje.2020.73

14. O'Malley, C., Vavoula, G., Glew, J., Taylor, J., Sharples, M., Lefrere, P., Lonsdale, P., Naismith, L., & Waycott, J. (n.d.). *Guidelines for learning/teaching/tutoring in a mobile environment*. 84.

❒❒❒

1. Research Scholar, Department of Education, Guru Ghasidas Vishwavidyalaya, Bilaspur, C.G., 495009 Email - rnkmanoj@gmail.com

2. Assistant Professor, Department of Education, Guru Ghasidas Vishwavidyalaya, Bilaspur, C.G., 495009 Email - sudhirkaware1981@gmail.com

Research Article

Multiracial Space in Zadie Smith's *NW;* A Study

–Lakhibai Yumnam

Abstract

In today's globalized world, the discourse on race is an indispensable part of our daily social functioning. The need to be cognizant of the concept of race as a part of our social construct and not just as an isolated term is increasingly stipulated. Dialogue on race is not a new phenomenon. Nonetheless, in a progressively multicultural society propelled by globalization and informed by social media the need to understand the dynamics of race, class, and identity, emphasizing an amicable social coexistence, is imperative. The social dynamics of the contemporary pluralistic world emphasize the need to rethink and reimagine the traditional concept of race, class, and identity. From such a dimension, the novel *NW* (2012) by contemporary writer Zadie Smith which revolves around the immigrant communities of the council estate of North-West London, can be studied to highlight the various correlations between race, class, and identity. This paper intends to analyse Smith's fourth novel *NW* (2012), which tells the stories of multiple characters engaged in their personal struggles that are entangled with the spatial space they are located within. The North West council estate of London is the neighbourhood with which Smith herself is familiar. This familiarity allows her to dissect the social class and spatial identity configuration, which tie up to the very notion of race. From such a dimension, the character Natalie (Keisha) Blake is an interesting case study. The portrayal of Natalie gives an insight into articulating the dynamics of race, class, and identity in societal space in contemporary fiction.

Keywords: Race, Class, Identity, *NW*, Council estate.

There are also significant characters like Leah's husband Michel, a French-African hairdresser, her mother Pauline, Natalie's husband Francesco De Angelis (Frank), a half-Italian and half-Trinidadian of the elite class, her mother Marcia, and Felix's British lover Annie. All these multitudes of multiracial and multi-ethnic groups are connected to each other and to the racially assigned space of North West London.

Introduction

The process of migration has been ongoing since time immemorial. Nevertheless, with the advancement of science and technology, the transformation of our societal space is rather palpable. As a result of diverse cultural contact, an outcome of migration, colonization, and economic globalization the contemporary society is increasingly becoming multiracial, multicultural, and pluralistic. Globalization, primarily regarded as an economic process, has played a significant aspect in mass migration. It has undoubtedly accelerated mass displacement of individuals in search of better opportunities. As Pieterse stated, "Power and hierarchy influence the process of globalization, resulting in the uneven integration of human life and contributing to the emergence of diaspora and migration" (4). This in turn challenges the notion of race and nation. In the post-millennial state, the increasing cultural interconnectedness demands for a need to rethink and redefine the existing notion of the individual and the society. For Benedict Anderson the nation is an "imagined communities":

> It is *imagined* because the members of even the smallest nation will never know most of their fellow-members, meet them, or even hear of them, yet in the minds of each lives the image of their communion. (6)

Nevertheless, in present contemporary society the sense of oneness is challenged by the increasingly pluralistic society. After all, diaspora, which initially applies to historical dispersion, is the norm of the present society. Diaspora questions the very notion of the nation-state as it is, "... implicitly designated as key socio-cultural formations capable of *overcoming* the constrictions of national boundaries – the means through which people can imagine and align themselves *beyond* the nation." (Ang 143). As such, there arises the need to re-examine the various correlations between the communities and the societal space they occupied. After all, the individual is no more a fixed subject but a product of social and cultural transformation. In such a scenario, identity is always in flux. Kathleen Kerr in the essay "Race, Nation, and Ethnicity", traces the discourses on identity with its linkage to the concepts of race, nation, and ethnic group or community from its gradual formation in the eighteenth and nineteenth century as homogenous to the more subjective appeal in the twentieth century. Thereby highlighting the fast-changing equation of the states and the citizens in world politics from "monoculturalism," which "presupposes and centralizes the notion of the singularity and universality" based on Western philosophy, to "multiculturalism," a more "pluralistic of disciplines, practices, themes, debates, and approaches" which began to articulate in both USA and in Britain (Waugh 382). In particular with the immigrant communities, the notion of hybridization needed to be accountable. Though Homi Bhabha is credited for the concept of the "third space" and "hybrid identity" in post-colonial studies, "hybrid identity" has acquired a characteristic of its own. For, Du Bois hybridization is the result of a dual consciousness. Dual

consciousness is distinct because it clearly expresses multiple identities instead of crossing identity group boundaries. The groups or individuals occupying this space experience a kind of 'two relationships', as two identities try to exist in one person. While for Robertson, the local and the global interact to create a new identity that is distinct in each context. As such, the creation of a hybrid identity is a "twofold process involving the interpenetration of the universalization of particularism and the particularization of universalism" (100).

Zadie Smith's illustration of the council estate of North West London in her fourth novel *NW* (2012) is a presentation of the social dynamics in contemporary urban space which she is rather familiar with. Smith's belief in the fluidity of identity and the confounding nature of race and nation is somewhat transparent from her debut novel, *White Teeth* (2000). Even her well-known critic, Philip Tew, has pointed out the "*aspects of transcendent identity*" (Allen and Simmons 297) in her works. A decade later, Smith expands on these issues with her experimental novel, *NW* (2012). The novel *NW* (2012) of Zadie Smith provides a kaleidoscopic view on the present discourses on race, class and identity linkage in contemporary society. Filled with varied multiracial characters, the novel problematizes the issues of race, class, and identity of those living in an assigned social space, i.e., the council estate of North West London.

This paper is an attempt to analyse Zadie Smith's formulation of the social class and spatial identity configuration which is tied to the very notion of race in the novel *NW* (2012). The novel encapsulates the personal struggles of the various characters which are entangled in the spatial space they are located within. Smith's familiarity with the North West London neighbourhood allows her to dissect the race, class, and identity dynamics in such a multiracial space. From such a trajectory, the portrayal of the character Natalie (Keisha) Blake can be studied to examine the articulation of the dynamics of race, class, and identity in societal space in contemporary fiction.

Study of Multiracial Space in *NW*

The notion of multiculturalism is very much a norm in contemporary society. With globalization the world is evolving into a multiracial space where various multi-ethnic groups need to coexist while negotiating their own socio-cultural position. S A Hasan and R M Hassan in their paper "Urban Multicultural Space" states that "…the concept of multiculturalism has become a societal value and is a guiding value that will provide a kind of roadmap for the social, cultural, and institutional organisation of our contemporary societies" (1). Set in the multiracial and multicultural backdrop of Northwest London, *NW* examines the social class and spatial identity configuration. The novel is filled with multiracial characters positioned in Smith's childhood locality, the North West London. In fact, the title itself is a derivative of the postcode of London. The novel narrates the stories of multiple characters engaged in their own personal struggles that seem entangled

with their lives in the North West London council estate. Leah Hanwell is the barely existing white Irish descent. Natalie (formerly Keisha) Blake, Leah's childhood best friend, is a very ideological class-conscious Jamaican descent. Felix Cooper, who too belongs to the council estate, is of Caribbean descent and a former drug addict. He is on the path to recovery and is looking forward to a happy future with his Half-Jamaican- and half-Nigerian girlfriend, Grace. Then there is Nathan Bogle, a former classmate of Leah and Keisha's. He is Leah's teenage crush but is now a drug dealer, a possible pimp, and the suspected murderer of Felix Cooper.

There are also significant characters like Leah's husband Michel, a French-African hairdresser, her mother Pauline, Natalie's husband Francesco De Angelis (Frank), a half-Italian and half-Trinidadian of the elite class, her mother Marcia, and Felix's British lover Annie. All these multitudes of multiracial and multi-ethnic groups are connected to each other and to the racially assigned space of North West London. Smith's problematization of the spatial space identity configuration is reinforced in *NW*. The council estate of North West London is central to the story. This neighbourhood is where Smith herself grew up. Such familiarity allows her to dissect the social class and spatial identity configuration of the immigrant communities of this locality. The multiracial aspect of the location is rendered in the multiple narrative voices of the novel. Unlike *White Teeth's* (2000) humoristic satirical expansive narrative, *NW*, which came out more than ten years later, takes on an experimental form of narrative. It is less comic and is more grounded on the harsher reality of the lives in the council estate. In fact, Smith states that "… [It] is the first book that I've really written as an adult… I knew my own mind a bit more. And I stopped trying to please people." (Bollen).

The beginning of the novel, where Leah Hanwell agrees with the commentary from the radio, "I am the sole author of the dictionary that defines me." (3), is somewhat ironic. After all, none of the characters can free themselves from the oppressive council estate of their childhood; even when they are physically displaced to some better neighbourhood. Felix's tragic death while being mugged by those two he encountered on the train synthesized the racial landscape and its dubious lifestyle, which is cognate with the social class in contemporary society. Though each character seems to live a life of their own disposition, they are never free from the spatial position they occupy. Even the self-confident, intellectually competent Natalie turns out to live a double life as Natalie, the successful lawyer with a marriage that fulfilled her ambition of class mobility, and then there is the alter ego, Keisha with the Gmail: KeishaNW@gmail.com, a sexual explorer, belonging to Caldwell of North West London.

Natalie, aka Keisha Blake, is a prime example of the second-generation identity fluidity while carrying the anxiety of her race, which is intertwined with the social class they are assigned. Leah and Natalie's childhood friendship overlooked their

racial identity but worked in association with the social class they occupied. Their connection seemed superficial in most parts of the novel. Which is contradicted by the novel ending, where both of them find comfort in each other arms. Unlike Leah, the white migrant, Natalie carries the anxiety of her racial identity. She shed the name Keisha, associated with the council estate of her childhood, and took the name Natalie during her college years. She is driven by the urge to climb the social ladder and successfully transforms herself into an intelligent lawyer with a "perfect" family that is part of the elite group. However, Natalie transformation is rather fragmented; she did not truly leave the council estate of her childhood. Thus, she kept on living the secret life of Keisha, a sexual explorer from Caldwell, free of all the responsibilities. Literary theorist Mikhail Epstein, defined transculturalism as 'the freedom from one's culture', and is different from 'the *political* right to freely choose one's place of living… only a small number of people, when acceding to two or several cultures, succeed in integrating them and thus are able to keep their freedom from any of them' (330). From such a perspective Smith's characters, whether it is Irie Jones from *White Teeth* or Natalie from *NW*, failed to undergo transcultural transformation. Instead, Smith gives a living fragments of individuals from the locality she is quite familiar with. Those individuals are in the process of transformation and are navigating through their fragmented identities and confused selves. The Keisha Blake of the council estate of North West London is accepted into the elite class through her marriage and by playing the role of the well-educated, refined Natalie. Nonetheless, a more significant part of her existence still remained in North West London. Thus, resulting in the formulation of fragmented identities that neither genuinely belong to the elite circle nor to the assigned space of the immigrant communities.

Many considered Smith's debut novel *White Teeth* as a positive outlook on multiculturalism. However, the anxiety of the second generation, which Smith laid out in the novel, gave a contradictory picture. It became apparent that multiculturalism as a policy programme failed in Britain with the 7th July 2005 bombing of the London transport system by young British Muslim. *NW*, which came out five years later is a sober critique of the pluralistic society of Britain. Here, Smith localized the notion of multi-ethnic pluralistic existence, which is a global concerned in contemporary society. In essence the concept of 'glocalization', a term popularized by the sociologist Roland Robertson is significant to Smith's projection of the race, class and identity linkage to the spatial space they occupied. Noted that the term was influenced by Japanese business studies, specifically with the concept of *dochakuka*; meaning "global localization" or "indigenization" (Robertson 6). The underlying notion of the universal and the particular seems rather applicable to Smith and her works. The need to study Smith from the lens of glocalization arises from the notion that glocalization had strong cultural connotations. On the other hand, globalization had a strong sense of cultural

homogenization (Robertson 3). Smith herself is a product of the space she occupied. Her stories are in the backdrop of the suburban space, mainly on the North West London landscape, the place where she grew up. *NW* and its polyphonic narrative bring another dimension to the discourse on race, class and identity dynamics in contemporary society. Natalie Blake's fragmented self represents the individual in the contemporary urban space where the notion of 'rootedness' is challenged by the ever-transforming social identity configuration.

Conclusion:

Thus, in *NW* Zadie Smith problematizes on the dynamics of race, class, and identity in a multiracial space like the North-West London Council estates. The multiple characters in the narrative expose the stories of their personal struggles which are entangled with the spatial space they occupied. Among them, the character Natalie and her struggle with identity configuration open a discourse on the individual and the social class dynamics which is linked to race and the localization of their social space. Through the portrayal of Natalie, Smith engages in the contemporary dialogue of the younger generation of immigrant descent whose notion of identity is rather fluid and fragmented as their 'imagined homeland' is more of a myth than a bygone past.

References:

Anderson, Benedict. *Imagined Communities: Reflections on the Origin and Spread of Nationalism*. Revised ed., Verso, 2006.

Ang , Ien. "Together in Difference: Beyond Diaspora, Into Hybridity." *Asian Studies Review*, 27(2), 2003, pp. 141-154.
doi: 10.1080/10357820308713372

Bollen, Christopher. *Zadie Smith*. Interview, 24th August 2012, www.interviewmagazine.com/culture/zadie-smith

Du Bois, W.E.B. "Of Our Spiritual Strivings." *The Souls of Black Folks*. A.C. McClurg & Co, 1903.

Hasan, SA and RM Hassan. "Urban Multicultural Space" IOP Conference series: Materials Science and Engineering. 2020. doi: 10.1088/1757-899X/737/1/012196

Keer, Kathleen. "Race, Nation, and Ethnicity." *Literary Theory and Criticism*, edited by Patricia Waugh. Oxford UP, 2007, pp. 365-384.

Pieterse, Jan Nederveen. "Shaping Globalization." *Global Futures: Shaping Globalization*, edited. Zed Books, 2000, pp. 1-19.

Robertson, Roland. *Glocalization: Social Theory and Global Culture*. Stage Publication, 1992.

—. "Glocalization." *The International Encyclopedia of Anthropology*, edited by Hilary Callan, John Wiley & Sons, 2018. *Wiley Online Library*.
doi: 10.1002/9781118924396.wbiea2275

Smith, Zadie. *N-W*. Penguin Books, 2012

Tew, Philip. *Zadie Smith*. Palgrave Macmillan, 2010.

Waugh, Patricia, editor. *Literary Theory and Criticism*. Oxford UP, 2007.

❑❑❑

1. Research Scholar, English and Cultural Studies Department, Manipur University, Manipur-795003, India. Email ID: lakhiyum9@manipuruniv.ac.in

Offences Relating to Marriage: An Analysis

–Dr. Pankaj Dwivedi
–Dr. Pramod Kumar

According to section 497 IPC Whoever has sexual intercourse with a person who is and whom he knows or has reason to believe to be the wife of another man, without the consent or connivance of that man, such sexual intercourse not amounting to the offence of rape, is guilty of the offence of adultery, and shall be punished with imprisonment of either description for a term which may extend to five years, or with fine or the both.

Abstract

The word "offence" denotes a thing punishable under this Code, or under any special or local law as hereinafter defined. The offence of bigamy is provided against in Sections 494 & 495, but those provisions had to be made necessarily elastic so as to provide for the diverse customs of the various races inhabiting the peninsula. The third offence of adultery is a departure from the English law under which adultery is not a crime, but merely a misconduct against which the aggrieved party has no redress against the adulterer or adulteress except in damages awarded in a suit for divorce or a judicial separation. The offence of seduction of a married woman is one closely cognate to the offence of adultery, so that, really speaking, there are only three offences constituted.

Key words: Offence, Adultery, Criminal elopement, Cruelty and Domestic Violence.

Introduction

According to most recent surveys Gender Inequality Index Rank of India is 135[1] among all the other countries.[2] Despite the obtainable data on gender-based violence, there is no precise information on gender-based violence in India. Therefore, in this paper, author has tried to discuss offences relating to marriage in detail such as meaning of offence and cruelty, adultery etc.

Meaning of offence

Section 40 of Indian Penal Code 1860 defines the term offence according to the section offence denotes "a thing made punishable by IPC and it also denotes a thing punishable under this Code, or under any special or local law as hereinafter defined. In addition to this the word "offence" has the same

meaning when the thing punishable under the special or local law is punishable under such law with imprisonment for a term of six months or upwards, whether with or without fine."

Section 493- 498 of IPC, deals with offences concerning marriage. All these offences deal with infidelity within the institution of marriage in one way or another. In addition to it, section 498A is dealing with cruelty to a woman by her husband or his relatives to coerce her and her parents to meet the material greed of dowry, was added to the IPC by the Criminal Law (Second Amendment) Act 1983.[3]

"The following are the main offences relating to marriage under this chapter:

- Mock or invalid marriages;[4]
- Bigamy;[5]
- Adultery;[6]
- Criminal elopement;[7]
- Cruelty by husband or relatives of husband.[8]

It consists of six sections (See 493 to 498), penalizes conjugal infidelity and other offences connected therewith in a manner materially different from the English Law. It punishes four principal offences relating to marriage, these being cohabitation obtained by fraudulently inducing a belief in the women that she is the accused's wife[9] allied to which is the mock marriage punishable u/s. 496. The offence of bigamy is provided against in Sections 494 & 495, but those provisions had to be made necessarily elastic so as to provide for the diverse customs of the various races inhabiting the peninsula. The third offence of adultery is a departure from the English law under which adultery is not a crime, but merely a misconduct against which the aggrieved party has no redress against the adulterer or adulteress except in damages awarded in a suit for divorce or a judicial separation. The offence of seduction of a married woman is one closely cognate to the offence of adultery, so that, really speaking, there are only three offences constituted in this chapter."[10]

Cohabitation By Deceitful Assurance of Marriage

Every man who by deceit causes any woman who is not lawfully married to him to believe that she is lawfully married to him and to cohabit or have sexual intercourse with him in that belief, shall be punished with imprisonment of either description for a term which may extend to ten years, and shall also be liable to fine"[11] What is required is that by deceitful means, the accused must induce a belief of lawful marriage and then make the woman cohabit with him. It is obvious that a form of marriage which is not valid must have been gone through with a fraudulent intention. If all the forms of the valid marriage have been gone through even with an unwilling bride or bridegroom, the marriage cannot be said to be invalid, nor can the subsequent disclaimer of a marriage validly performed make it invalid or fraudulent. It is essential that the deceit and fraudulent intention

contemplated should be found to have existed at the time the ceremony of marriage was gone through.[12] As such, unless the practice of such deception on the woman by the accused is established, the offence would not be taken to have been committed.[13]

Bigamy"

Sec. 494 IPC provides that *whoever, having a husband or wife living, marries in any case in which such marriage is void by reason of its taking place during the life of such husband or wife, shall be punished with imprisonment of either description for a term which may extend to seven years, and shall also be liable to fine.[14]*

The section makes bigamy an offence is case of all person living in India irrespective of religion of either sex, namely, Hindus[15] Christian,[16] Parsis, except Muslim males. However, if a Muslim man marriage under special marriage Act, 1954 he would be guilty of bigamy under section 494, IPC, if he enters into another marriage under Muslim law, In *Radhika sameena V. SHO habeeb Nagar Police Station*.[17] The Andhara Pradesh High Court held that when the respondent's marriage with the petitioner had taken place not under Muslim law, but under special marriage Act, the provisions of the special Act would be applicable and not of the Muslim Law.

The phrase whoever having a husband or wife living, "marries" means whoever marries validly or whoever marries and whose marriage is a valid one. In case either of the marriage is not valid according to the law applicable to the parties," it will not be a marriage in the eyes of the law that will attract section 494 IPC.

"To repel the charge imposed under this section the accused may plead the following facts in his defense:

(i) That his first marriage was null and void even though he had not obtained a declaration to that effect under sec. 18, of the Divorce Act.
(ii) Absence of other spouse for a period of seven years should be established. If the second marriage takes place on the expiry of seven years under a *bonafide* belief based on reasonable grounds that the other spouse is dead, no offence under this section shall be deemed to have been committed.
(iii) If it is established that the accused and his first wife are living separately for preceding seven years, then it will be duty of the accused to establish that during that period he was aware of her existence. In absence of such a proof from the prosecution, second marriage of the accused shall be regarded as valid.
(iv) That at the time of second marriage, he informed the fact of his first marriage to the other party. If these facts are established by the accused, he or she shall be protected from the offence of bigamy"

Fraudulent (Unlawful) Marriage"

Whoever dishonestly or with a fraudulent intention, goes through the ceremony of being married, knowing that he is not thereby lawfully married shall be punished with imprisonment of either description for a term which may extend to seven years, and shall also be liable to fine."[18] Sometimes men entrap unsuspecting women by going through the ceremony of being married dishonestly or with fraudulent intentions, knowing fully well that he is not thereby lawfully married. Such cases are covered by section 496 IPC. It applies to all cases in which a ceremony is gone through but such ceremony in no case constitutes a marriage and in which one of the parties is deceived by the other into the belief that it does not constitute a marriage, or in which effect is sought to be given by the proceeding to some collateral fraudulent purpose"

This section applies to those situations where a fake ceremony is gone through pretending it to be a valid marriage. The offence of bigamy is different from that of offence under 496.

Adultery

According to section 497 IPC Whoever has sexual intercourse with a person who is and whom he knows or has reason to believe to be the wife of another man, without the consent or connivance of that man, such sexual intercourse not amounting to the offence of rape, is guilty of the offence of adultery, and shall be punished with imprisonment of either description for a term which may extend to five years, or with fine or the both. In such case the wife shall not be punishable as an abettor. Adultery is a flagrant violation of a woman's dignity. The law became defunct on 27 September 2018 by Supreme Court of India.[19] Where in the Supreme Court ruled that "*Adultery can be treated as civil wrong for dissolution of marriage, but not criminal offence"*. "While pronouncing its judgment, the apex court said" "*Equality is the governing principle of a system. Husband is not the master of the wife".*[20]

The court further said that" *"There can't be any social license which destroys a home*". "The former Chief Justice Dipak Misra said the beauty of the Constitution is that it includes" "the I, me and you". The court also quashed Cr.PC.

a. Section 497 is held to be unconstitutional as adultery is manifestly arbitrary: SC
b. Section 497 destructive of women's dignity, self-respect as it treats women as chattel of husband: SC
c. Adultery is not a crime in countries like China, Japan and Australia: CJI
d. Adultery dents individuality of women: CJI
e. Adultery might not be cause of unhappy marriage, it could be result of an unhappy marriage: CJI"

The apex court is dealing with section 497 of the 158-year-old Indian Penal Code says: Whoever has sexual intercourse with a person who is and whom he knows or has reason to believe to be the wife of another man, without the consent or connivance of that man, such sexual intercourse not amounting to the offence of rape, is guilty of the offence of adultery.[21]

Enticing, Taking Away or Detaining with Criminal Intent to Married Woman

Sec. 498 reads that, *"whoever takes or entices away any woman who and whom he knows or has reason to believe to be the wife of any other man, from that man, or from any person having the care of her on behalf of that man, with intent that she may have illicit intercourse with any person, or conceals or detains with that intent any such woman, shall be punished with imprisonment of either description for a term which may extend to two years, or with fine, or with both."*

The provision of this section like those of the proceeding S. 497, are intended to protect the rights of the husbands, and not those of the wife. The gist of the offence under this section appears to be the deprivation of the husband of his custody and proper control over his wife the object of having illicit intercourse with her.[22] It would not be within the ambit of this section to hold the woman guilty of abetment. In spite of the absence of express exemption, she must be treated as exempt because this offence is, as compared to adultery under the preceding S.

497 a minor offence and it would be inconsistent to exempt her from the one without exempting her from the other.[23]

Matrimonial Cruelty

"Section 498-A was introduced in the year 1983 to protect married women from being subjected to cruelty by the husband or his relatives. A punishment extending to 3 years and fine has been prescribed. The expression "cruelty" has been defined in wide terms so as to include inflicting physical or mental harm to the body or health of the woman and indulging in acts of harassment with a view to coerce her or her relations to meet any unlawful demand for any property or valuable security. Harassment for dowry falls within the sweep of latter limb of the section." "Creating a situation driving the woman to commit suicide is also one of the ingredients of" "cruelty".[24]

Section 498-A IPC was introduced with the avowed object to combat the menace of dowry deaths and harassment to a woman at the hands of her husband or his relatives. Nevertheless, the provision should not be used as a device to achieve oblique motives.[25] The complaint under Section 498-A may be filed by the women aggrieved by the offence or by any person related to her by blood, marriage or adoption. And if there is no such relative, then by any public servant as may be notified by the State Government in this behalf. The essence of the offence

in Section 498-A is cruelty. It is a continuing offence and on each occasion on which the woman was subjected to cruelty, she would have a new starting point of limitation.[26]

Every harassment does not amount to "cruelty" within the meaning of Section 498-A. For the purpose of Section 498-A, harassment simpliciter is not "cruelty" and it is only when harassment is committed for the purpose of coercing a woman or any other person related to her to meet an unlawful demand for property, etc. that it amounts to "cruelty" punishable under Section 498-A IPC.[27]""Cruelty can either be mental or physical. It is difficult to straitjacket the term cruelty by means of a definition because cruelty is a relative term. What constitutes cruelty for one person may not constitute cruelty for another person,"[28] "The concept of cruelty and its effect varies from individual to individual, also depending upon the social and economic status to which such person belongs.[29]

Dowry demand is included in the "unlawful demand" as contemplated under Explanation (b) of Section 498-A; however, it need not be the only demand." The Supreme Court in Modinsab *Kasimsab Kanchagar v. State of Karnataka*,[30] held that a demand of Rs 10,000 towards repayment of a society loan, though not a dowry demand, was an unlawful demand sufficient to attract Section 498-A. Even before a criminal court where a case under Section 498-A is pending, if allegation is found genuine, it is always open to the appellant to ask for reliefs under Sections 18 to 22 of the Domestic Violence" Act[31] "and interim relief under Section 23 of the said Act.[32]"

Many instances have come to light where the complaints are not bona fide and have been filed with oblique motive. In such cases acquittal of the accused does not in all cases wipe out the ignominy suffered during and prior to trial. Sometimes adverse media coverage adds to the misery. By misuse of the provision a new legal terrorism can be unleashed. The provision is intended to be used as a shield and not as an assassin's weapon. However, a mere possibility of abuse of a legal provision does not invalidate it. Section 498-A is constitutional.[32]"

Domestic Violence Against Women

Domestic violence is the chiefly widespread form of gender-based violence. It typically occurs when a man beats his better half. Physical, sexual and psychological violence against women within the family, consists of battery, sexual abuse, female genital mutilation and other conventional practices harmful to women and girls, marital rape, dowry-related violence, incest, non-spousal violence like a son's violence in opposition to his mother and violence related to exploitation and deprivation of freedom."

Domestic violence is defined under section 3 of the protection of Women from Domestic Violence Act of 2005. Domestic violence is one of the crimes touching women which are linked to their detrimental arrangement in the society.

Domestic violence is defined by the Act, 2005 as physical, sexual, verbal, emotional, and economic abuse against women by a partner or family member residing in a joint family, plagues the lives of many women in India. The experience of violence undermines the empowerment women and unquestionably is a barrier to the socio-economic and demographic development of the country.

Conclusion

Consequently, it has been said that there are several kinds of offences against women. Offences relating to marriage is one of them. Offences relation to marriage are various kinds such as adultery, cruelty, domestic violence and etc. All kind of offence are defined and given under various codes and enactments. These days the offences relating to marriage are increasing and because of this, divorce cases are increasing. Further, domestic violence is known as the considerable barriers of the empowerment of women, with consequences of women's health, their health-seeking behavior and their implementation of small family standard. The Background of women such as education, age, marital duration, place of residence, caste, religion, sex of the head of the household, standard of living, work status of women, spotlight to mass media and the autonomy of women with respect to decision making, freedom of movement and access to money are linked to domestic violence.

(Footnotes)

[1] Gender Gap Report 2022: India ranks low at 135th globally for gender parity; worst for health & survival - *The Economic Times Video | ET Now (indiatimes.com)* *Accessed on 15th September, 2022.*

[2] The Global Gender Gap Index benchmarks national gender gaps on economic, political, education and health criteria. Source: World Economic Forum, the Global Gender Gap Report 2016. Retrieved from http://evaw-*globaldatabase.unwomen.org/en/countries/asia/india#5* *Accessed on 9th day of September 2022.*

[3] Act No. 46 of 1983.

[4] Section 493 and 496 *Indian Penal Code 1860.*

[5] Section 494 and 495 *Indian Penal Code 1860.*

[6] Section 497 *Indian Penal Code 1860.*

[7] Section 498 *Indian Penal Code 1860.*

[8] Section 498A *Indian Penal Code 1860.*

[9] Section 493 *Indian Penal Code 1860.*

[10] Dr. H.S. Gaur: Penal Law of India, P. 4601.

[11] section 493 Indian Penal Code, 1860

[12] *K.A.N. Subramaniyam Vs. J. Ramalaxmi* (1971)2 Andh. W.R. 278 at PP. 280-281.

[13] *A. Gadita Vs. T. Pradhan*, 1993 O.J.D. (Cri.) 21 at P. 22.

[14] Section 494 *Indian Penal Code 1860.*

[15] Section 17, *Hindu Marriage Act 25* of 1955 makes bigamy an offence for Hindus, *State of Bombay V. Narsu Appa* AIR 1952 Bom. 84

[16] *Christian marriage Act XV of 1872*

[17] Hari Singh Gour, *Penal Law of India* 11th edn Vol IV p. 4605

[18] According to section 496 of *Indian Penal Code 1860.*
[19] ABP News: *Supreme Court quashes Section 497*, says 'Adultery not a criminal offence Retrieved from https://www.abplive.in/india-*news/adultery-can-be-treated-as-civil-wrong-but-not-criminal-supreme-court-760349 Accessed on 25th day of September 2022.*
[20] *Joseph Shine vs Union Of India*, Writ Petition (Criminal) No. 194 Of 2017 Electronic Copy of the Judgemet available at https://www.sci.gov.in/supremecourt/2017/32550/32550_2017_Judgement_27-*Sep-2018.pdf Accessed on 25th day of September 2022.*
[21] supra
[22] *Alamgirv. State of Bihar* AIR 1959 SC 436.
[23] *BasirMohd. v. Peer Khan* 1972 WLN 139.
[24] Tejaswi Pandit:*Cruelty toWomen [S. 498-A IPC andalliedsections]* Retrieved from https://www.scconline.com/blog/post/2018/12/03/law-*for-laymen-section-498-a-ipc-and-allied-sections-cruelty-to-women/ Accessed on 30th day of September 2022.*
[25] *Onkar Nath Mishra v. State (NCT of Delhi),* (2008) 2 SCC 561.
[26] *Arun Vyas v. Anita Vyas*, (1999) 4 SCC 690.
[27] State of A.P. v. M. Madhusudhan Rao, (2008) 15 SCC 582.
[28] *G.V. Siddaramesh v. State of Karnataka*, (2010) 3 SCC 152.
[29] *Gananath Pattnaik v. State of Orissa*, (2002) 2 SCC 619.
[30] (2013) 4 SCC 551
[31] *Domestic Violence Act, 2005* provide for a remedy under the civil law which is intended to protect the women from being victims of domestic violence occurring within the family and to prevent the occurrence of domestic violence in the society. It makes provision for a protection order under Section 18, residence order under Section 19, monetary relief under Section 20, custody order under Section 21, compensation under Section 22 and interim relief under Section 23
[32] *Juveria Abdul Majid Patni v. Atif Iqbal Mansoori*, (2014) 10 SCC 736.
[32] *Sushil Kumar Sharma v. Union of India*, (2005) 6 SCC 281.

❑❑❑

1. Associate Professor, Department of Law, Chhatrapati Shahu Ji Maharaj University, Kanpur, UP
2. Assistant Professor, Department of Law, Chhatrapati Shahu Ji Maharaj University, Kanpur, UP

Research Article

Overcoming Collywobbles of War: A Glance at David Malouf's *The Great World*

–R. Suriya

Abstract

David Malouf's *The Great World* revolves round the events that co-occurred with World War II and its aftereffects on the Australian society. The collywobbles of war are echoed in almost all spheres of life including one's identity, family life, industry, production, trade and so on. The characters in the novel travels back and forth to the scenes from World War I to the Stock Market Crash of 1988 and thus covers almost three generations. The cruelties of war, fear, damage, destruction, displacement, psychological trauma, post-war stress, humanitarian crisis and so on is portrayed in the novel. This paper glances at how the central characters Digger Keen and Vic Curran attempt to overcome the collywobbles of war.

Keywords: *Collywobbles of war, Destruction, Mateship, Tormented relationships.*

Introduction

krodhadbhavati sammoha% sammohâtsm[tivibhrama%|
sm[tibhraCúâd buddhinâúo buddhinâúâtpraGaœyatie||

- Bhagavad-Gita

Translation

From anger there comes delusion; from delusion, the loss of memory; from the loss of memory|
the destruction of discrimination; and with the destruction of discrimination, he is lost||

The Great World, by Australian writer David Malouf, is centered on the events that went cheek by jowl with World War II and its repercussions on the Australian society. The collywobbles of war is mirrored in almost all spheres of life including one's identity, family life, industry, production, trade and so on. The fiction is centered around two major characters Digger keen and Vic Curran who turn out to be friends in the

Vic starts looking at himself from a different perspective. The chain of events he witnessed, especially Pa's death led to the quest of his own-self, 'What does it mean to be without, he thought, 'Except to be known?' (287). All the strength in him begins to deteriorate. Pa's death makes him feel that he has been orphaned.

war-field. Both of them ept in World War II. The psychological trauma they experience in the war-field has an impact throughout their lives.

1. Collywobbles of War

Digger Keen's father evince a nonchalance attitude towards life. This is perceptible through his detachment from his family. His participation in the First World War leaves a deep impression in his heart. His wife Marge is sangfroid and endeavours to "inculcate in Digger, and in Jenny too, so far as she was capable of it, her own view of things". (19). She is remorseful for she does not have any evidence, inherited by her husband to bequeath her children. She is queazy about the part of Billy's life foregone in war, Billy "had no tales of his childhood to tell. He might never have had one. He was born with the war" (19).

Digger during his battle with malaria, imagines his mother talking to him, and use her strength and authority over him to command him to breathe. With her typical stubborn nature, 'she wouldn't let him off the hook.' Vic who meets Digger at that time, motivates and help him regain his mental strength. After much torment Digger finally awakes 'feeling refreshed and fed' and finds the will to keep living.

Vic Curran, whom Digger befriends in the war-field has a tormented relationship with his father which is apparent from his tragic-childhood. Vic feels that he should have born in some better place and these early events help shape him into an ambitious, yet insecure man that he becomes. Though his father was indifferent and unkind, his mother is very affectionate. "You're a good kid, Vic,' she would whisper as he settled her pillow. It was grey and stiff with dirt. You' re all a mother could wish for" (72).

After his parent's death his life took a different direction. According to his father's will he decide to stay with Mr. Warrender's family. He travels to Sydney with him in train and starts a new life there. Mrs. Warrender and the girls (there were two of them) had been told about him and were looking forward to his arrival, to having another man in the house.' (85) As days went on, he strengthens his relationship with Mr. Warrender. Vic finds that he has bafflement pertaining to taking decisions and discovered that he is into business not out of interest but because of the situations which forced him.

2. Mateship

Digger Keen and Vic Curran become friends while they held as prisoners in Japan. Digger is sensitive, honest and unambitious, whereas Vic is boastful and strives to be an entrepreneur. 'There was an affinity between them that was almost comical.' (134) Malouf exposes the repercussions of war not only in his own country but also on the entire world. He presents it clearly through Digger. Thousands of soldiers participate in the war. Each of them carried a heavy luggage with them. Water bottles, rations, rifles, books, sweaters, socks, pen-knives

screwdrivers, bottle-openers, medicine etc. They knew that whatever place they are seeing now would not be the same.

They looked less like the remains of a military enterprise…. a world that had exploded in fragments around them and would have now, in the spirit of improvisation, to be reconstructed elsewhere- on the move if that's what it came to. But they were experts at that. They were Australians. As good many of them had been training for it all the lives. (44)

After the culmination of war, Vic takes a break for six months and isolates himself. But occasionally, in a panic would need the comfort of a familiar voice. 'He would shakily go out and ring someone.' He decides to go home. He informs Mrs. Warrender of his arrival. He calls her Ma. Whenever he is in despair, she consoles him, 'after all, Vic, you're not a stranger' (99). The entire family is prepared to welcome him. When he had left home, he was a Self-conscious and Self-important boy who was eighteen years. Now at twenty- three, he is a mature man carrying too many experiences and enters home with a feeling that is difficult to explain.

3. Tormented Relationships

Malouf believes that there are certain excruciating facets in Australian history that have been untold. While Vic drew strength from his ambition, his harsh childhood leads to ruthlessness and lack of empathy which extends towards his son and their troubled relationship. Vic starts realising that he is slowly getting defeated in his business. As time progresses, he faces many catastrophes in his life. It did make a difference; not so much as the level he moved in, the moves he made there and the amount of interest people took in him.

Digger in fact was being dis ingenuous. He knew Vic. You could trust him with your life. On the other hand, you couldn't trust him with tuppence. He had been surprised at first but some fellow he knew, and knew well, should be getting on in the world. But after a time it was naïve. (36)

Vic starts looking at himself from a different perspective. The chain of events he witnessed, especially Pa's death led to the quest of his own-self, 'What does it mean to be without, he thought, 'Except to be known?' (287). All the strength in him begins to deteriorate. Pa's death makes him feel that he has been orphaned.

Vic feels that he's not achieved anything out of all his ups and downs in his business. He had shown him to the world as a totally different, an arrogant man most of the time hiding himself even from his own family. He is emotionally as well as often economically down-and-out. His mind is occupied with this childhood memories. He thinks about the 'long distance', he has travelled so far. He longs to meet Digger, because Digger knew what he expects from him.

He was to be one of the businesses to his life. Not to his achievements, anyone could see those, which is why he hadn't bothered to draw Digger's attention to

them; but to those qualities in him that would the balance on the other, the invisible side. (251)

Conclusion

Vic comes to the realization, when dying, that he had lived a wrong life, and that "none of it had been intended for him… what had been intended was something quite different, and he had wrenched himself, by sheer will power, out of the way of it" (16) implying that the tragic start his life, his involvement in war and relationship with his father have set upon the wrong course. Thus, war has psychological implications on the lives of the people unwontedly the veterans who directly lend their hands.

Malouf avoids the simplistic view, as clearly neither did Digger nor Vic's life is completely dependent upon the past experience, and they each have their own successes and failures. However, the stable and dependent nature of Digger seems to draw from the relationship with his mother, while Vic's own instability begins in his childhood and is fully understood in his death. To quote:

jātasya hi dhruvo m[tyurdhruvaC janma m[tasya cad
tasmādaparihārye'rthe na tva śocitumarhasie

Translation

Death is certain for the born, and re-birth is certain for the dead; therefore you should not feel grief for what is inevitable.

References:

Barry, Peter. (2007). Beginning Theory: An Introduction to Literary and Cultural Theory. New Delhi.

Malouf, David. (1982). Fly Away Peter. New York, Random House.

Randall, Don. (2007). David Malouf. Manchester University Press.

https://resanskrit.com Accessed on 27.03.2022

❒❒❒

1. (suriyar.english@dsuniversity.ac.in), Assistant Professor of English, Dhanalakshmi Srinivasan University, Samayapuram, Tiruchirappalli, TN

Research Article

Temsula Ao's *Laburnum for My Head:* An Ecofeminist Critique

–Sima Nath

When Lentina's husband dies a sudden death, she announced that she will also accompany her husband on his last journey. Usually only men take part in the last rites at the gravesite. Everyone was therefore taken aback by her announcement, yet at that moment, no one opposed her.

Abstract

Ecofeminism is a branch of feminism that integrates feminist philosophy with ecological ideas and environmental ethics. It views the environment's degradation and the oppression of women as being closely related. Environmental feminists concur that the environment is a feminist issue and there is a strong connection between women's dominance and nature's dominance, and understanding this connection is essential to both feminism and environmentalism. Ecofeminists claim that most environmental problems can be linked to the global prioritising of masculine values and individuals in positions of power. This ideology also looks at how literary works express the intersections of sexuality, gender, and the natural environment. Ecofeminism considers how literary works depict women's relationships with the natural world. A promising female writer from Northeast India, Temsula Ao, in her short story collection *Laburnum for My Head* emphasises how female subjugation and environmental exploitation are both aspects of societal injustice and power. Her stories demonstrate a deep understanding of the human condition and depict numerous facets of men and women's lives. Through her stories, Temsula Ao establishes the need to protect nature, as well as recognize the significance of women in society. The examination of her female characters would be incomplete unless we recognise how strongly they are tied to nature. In some of her stories, nature becomes an objectification of women's unspoken joys and sorrows. This study aims to provide an ecofeminist critique of Ao's short story collection *Laburnum for*

My Head, focusing on analogies of exploitation of the natural world and oppression of women.

Keywords: ecofeminism, nature, woman, exploitation

Ecocriticism is the study of the relationship between nature and the human world. The majority of ecocritical works focus on how human actions affect the systems that support life on Earth. According to this philosophy, the portrayal of nature and the landscape in cultural texts has a great influence on how a generation views and treats the environment. The premise that human civilization is entangled with the natural world serves as the foundation for ecological criticism. As a theoretical discourse, ecocriticism examines how the human and the non-human are negotiated. In *The Ecocriticism Reader: Landmarks in Literary Ecology* Cheryll Glotfelty comments:

> Ecocriticism takes as its subject the interconnections between nature and culture, specifically the cultural artifacts of language and literature. As a critical stance, it has one foot in literature and the other on land; as a theoretical discourse, it negotiates between the human and the non-human. (xix—Cheryll Glotfelty)

Ecofeminism examines the connection between the exploitation of nature and the oppression of women. With the goal of showing the parallels between nature and women as well as how patriarchal society oppresses both, ecofeminism conbines the fundamental principles of ecology and feminism. As an ideology, ecofeminism sees male dominance in society as a root cause of issues like gender equality, climate change, and social injustice as well. It contends that the global prioritisation of male values may be traced to many environmental problems. This philosophy also examines how literary works depict the confluences of sexuality, gender, and the environment.

Ecofeminism deals with the exploitation of environment and the subjugation of women as related issues. It establishes a link between environmental concerns, women, and non-human animals. It examines how oppressive practices associated with patriarchal society exert pressure on environment and gender. It demonstrates how man's cruelty, and dominance lead to both environmental destruction and suffering of women's lives. Thus, it illustrates the connection between nature and woman as well as their victimization. Numerous ecofeminist viewpoints support a number of theoretical, moral, and political linkages between women and nature. All ecofeminist critics argue that comprehension of feminism and environmental critique require an awareness of the relationship between women and nature. The dualism of mind/body, culture/nature, human/nature, and reason/emotion is common in the society ruled by men when it comes to how women and nature are constructed. Emotion, body, nature, and woman are viewed as inferior in this dichotomy, whereas reason, mind, culture, and men are viewed as superior.

Temsula Ao is a renowned author who belongs to the Indian state of Nagaland. Through her writing, Ao expresses the emotions and taditions of her own people. Her collection of short stories, *Laburnum for My Head*, eloquently captures a profound awareness of the human condition and highlights various dimensions of the everyday lives of ordinary men and women. In her short stories, Ao skillfully portrays women as they struggle with challenging social and psychological issues. An examination of the female characters in her works reveals the resilience of women in many complex social situations.

The first story of this collection, "Laburnum for My Head" is about the life and character of a woman, called Lentina, and her desire for some laburnum bushes in her garden. The laburnum flowers appealed to Lentina for what she called the 'femininity' of these flowers. "The way the laburnum flowers hung their heads earthward appealed to her because she attributed humility to the gesture" (Ao, 2). So, she decided to grow these flowers in her garden. However, she was unable to successfully cultivate the flower saplings in her garden despite her best efforts. First time, the new gardener pulled out the small saplings along with the weeds growing around them. Next time, some stray cows rushed to garden and destroyed her laburnum saplings along with other plants. Lentina persisted nevertheless, and she made the decision to replant some more saplings. Her hopes were dashed again this time. One day, a health department employee sprayed DDT along the garden's edge. That evening, a huge downpour inundated the garden, killing all the plants, including the laburnums, and causing all the flowers to wither and wilt. Nevertheless, Lentina persisted and decided to replant some additional saplings. Here, the fact that Lentina persists after failing three times demonstrates her tenacity because it is clear that with each setback, she grows more determined to try again and plant the flower.

For the husband and her children, Lentina's strong desire for the flower is quite peculiar and in their family gatherings they talked openly about her "unhealthy fetish for laburnum" (Ao, 3). She was upset as the family members did not try to comprehend the intense desire of Lentina for planting a laburnum tree in her garden. "She could not understand their concern and was inwardly hurt by their seeming insensitivity to beauty around them. But she never gave up her hope of having a full-grown laburnum tree in her garden someday" (Ao, 3-4).

When Lentina's husband dies a sudden death, she announced that she will also accompany her husband on his last journey. Usually only men take part in the last rites at the gravesite. Everyone was therefore taken aback by her announcement, yet at that moment, no one opposed her. Here, Lentina is challenging the societal conventions established by the patriarchal society with this action. Standing among the tombstones in the cemetery, she started reflecting about man's feeble attempts

to conquer death, as if erecting these monuments would bring the deceased back to life. She hoped that when her time would come there would be no such "attempt at immortality" and she "experienced an epiphanic sensation: why not have a laburnum tree planted on her grave, one which would live on over her remains instead of a silly headstone?" (Ao, 4). She made the decision that no headstones would be placed at her final resting place. She preferred to plant a laburnum tree there. Before she passed away, she wanted to make sure the tree bloomed. She says: "…I do not wish to be buried among the ridiculous stone monuments of the big cemetery. I need a place where there will be nothing but beautiful trees over my grave" (Ao, 9). Lentina's desire to have a laburnum tree planted on her grave symbolises her desire to be at one with nature. "She seems to reject the idea of placing artificial headstones on human graves as it symbolizes human conceit and pretentiousness. Her action calls for a change in our perception towards our environment and ecology" (kumar, 2). Moreover, Lentina is emancipating herself from the patriarchal structure of the society by selecting her own gravesite. Her attempt to have a laburnum as her headstone on her grave calls into question prevailing social norms.

The story "Death of a Hunter" is about the conflict between man and animal. It narrates the various hunting expeditions of Imchanok. The first one was the hunting of an elephant who destroyed the agricultural land of the villagers, destroying houses and killing people. The duty of eliminating the wild elephant was given to Imchanok. After shooting the elephant, Imchanok watched the unblinking eye of the elephant and he also saw "tears in those beady eyes and something else: it was as though the dying animal were trying to convey some message to his destroyer which remained frozen in time; this was to haunt Imchanok for a very long time. (Ao, 29) Although by killing the elephant Imchanok performed his duty for the safety of the villagers and their paddy fields, he couldn't feel a sense of pleasure after this 'successful' expedition. The sense of triumph was missing. There was something that disturbed him and he questions himself after killing the beautiful creature: "But why did it have to be *he* who was placed, in this particular instance, at the centre of the eternal contest between man and animal for dominion over the land?" (Ao, 29). Imchanok even resolved in his mind not to undertake such task in future.

The conflict between man and Nature is also highlighted in the killing of the leader of a group of monkeys by Imchanok. Imchanok is performing his duty as the family's defender by killing the monkey and thus he secures the paddy for his family. But while protecting his own family he abandoned the group of monkeys without a defender. This control over nature, "dominating/subjugating it with force and then justifying such acts through specious arguments, happens to be the *modus*

operandi of how patriarchy, and in turn anthropocentrism, functions." (Gogoi, 4) After killing the leader of the monkeys Imchanok says:

> So, you wanted to destroy me by stealing my paddy, did you? Look at you now. You scared and bullied my womenfolk; where are yours now? Another male will take them over while I cut up and feed my people with your flesh. (Ao, 32)

However, Imchanok is depicted in a different light after killing the boar. He is really restless after killing the boar. His mental disturbance made him dependent on his wife for support and comfort. He began to whimper in Tangchetla's arms, "I am afraid, woman…" (17) Tangchetla plays an important role in bringing her husband back to reality. Moreover, she has a great impact on Imchanok, the fearless hunter, by bringing about transformation in his life. Imchanok had never experienced fear in his life, let alone felt the need for solace from his wife. However, this time, Tangchetla is consoling and encouraging her husband and is able to make him realize his guilt.

"Three Women" is the story of Martha, her mother Medemla and her grandmother, Lipoktula. All these three women represent three different generations. Medemla fell in love with a boy called Imsutemjen, son of Merensashi. When Lipoktula, her mother, came to know about this affair it becomes a great shock for her. This is because Lipoktula was raped by Merensashi and Medemla was born as the result of that incident. So, the marriage of Medemla and Imsutemjen would imply an incestuous relationship and Lipoktula somehow succeeds to break it up without the outer world knowing the real cause. Medemla boldly accepts the rejection of her lover but remains unmarried. Martha is Medemla's daughter by adoption. Martha was abandoned by her father at the hospital railing against "a cruel God who had denied him a son." (Ao, 68) Martha's father refused to take her to his house and instead he handed his baby girl over to the hospital staff and said: "What will I do with another girl? Do whatever you want..." (Ao, 68) Medemla subsequently adopted this abandoned infant. Martha had to face discrimination due to her skin colour and being a member of the tea-tribe. When she was a little girl, the other children used to laugh at her "dark complexion and strange features." (Ao, 63) She was kept in the dark about her parentage by Medemla and her mother. In class IV, Martha's classmates irritated her by claiming that she didn't belong to their village and that Medemla was not her real mother. Such comments from her classmates confused Martha, and she began to wonder about her true identity. "Where did I belong and who were my people?" she wondered. (Ao, 65) Despite knowing that Medemla is not her biological mother, she feels the same emotional bond with Medemla and her mother whom she thought to be her grandmother because they have consistently demonstrated love and concern for her.

"A Simple Question" is the story of a village torn between the demands of the underground and those of the government. It focuses on Imdongla – an illiterate village woman – rattles an army officer by her simple question and forces him to set her husband free. Imdongla was illiterate but she was a worldly-wise woman knowledgable about the history and politics of the village. When hostilities broke out between the Nagas and the Indian state, the elders of the village became the most vulnerable ones. The double tax of rice from the underground came during a bad year. The villagers became helpless and idecisive what to do in this complicated situation. When Imdongla tries to gives advice in this regard Tekeba tried to hush her "Keep quiet woman, you know nothing." (Ao, 85) Then addressing the elders of the village Imdongla says, "Are you vulnerable elders, where is your wisdom? Your courage? Can't some of you go to the jungle and talk to the leaders? ....We can do without meat but we cannot live without rice. Don't you see what's happening to our children and women?" (Ao, 85) Later we find that Imdongla is able to rescue her husband from the military camp. The courage showed by this illiterate woman astonished the captain. Imdongla proved herself to be an empowered woman, who, was able to unsettle the military confidence of the captain "by challenging the validity of his own presence" in the alien terrain. (Ao, 87) In the story, we find the courage and ability of an illiterate woman who exhibit bravery in a situation where men failed.

The story "Sonny" is about a girl who loses her lover in his fight for the motherland. The retaliatory measures of the government forces to control the armed rebellion led to the suffering of the local people. "Families were separated, women were raped and killed…" (Ao, 97) Such happenings turned Sonny into a rebel and he enters into an "estranged" world. The conflict was no longer a conflict between "an armed resistance against an identifiable adversary" but it became an ideological battle "posing new dangers from fellow national workers supposedly pursuing a common goal." (Ao, 91) The narrative demonstrates how a girl's dreams and feelings are lost in the midst of a larger ideological conflict.

The story 'Flight' is about the interaction between man and his natural surrounding. The story centres particularly on a boy and a caterpillar. The story highlights the life of a butterfly "in the wide open spaces of a vast cabbage field" and its subsequent imprisonment by a boy called Johny for pleasure. Johnny found him beautiful and decided to imprison him in his shoebox. The caterpillar's prior existence in wide-open expanses and brilliant sunlight ended as a result, and a new one in intermittent light and darkness began. As inside the shoebox, the insect felt as if somebody was forcibly carrying it to another world. Once, a woman came to Johnny's room and she glanced at the pitiable condition of the poor creature and "stifled a heart rending sob" (Ao, 105). Johny's father told her

to be "strong" and not to worry about the caterpillar as it does not "feel the pain now." (Ao, 105) It demonstrates how insensitive people are to the animals that are a part of our natural world. Johnny, who "lovingly" kept the caterpillar in the box, was responsible for its declining health. Inside the "darkness of the limited space" the creature was looking for freedom in the "open spaces" of his earlier life. Once out of the container, the caterpillar was able to feel the 'bright and airy' atmosphere. For no other reason than their own joy and satisfaction, Johnny and his family tortured the caterpillar. They treated this small creature as an object without any feeling. "This detachment of animals from human being either for pleasure or for scientific experimentation performed upon lab animals justifies their exploitation by man." (5, Kumar)

To conclude, *Laburnum for My Head* by Temsula Ao emphasises the importance of women and the environment. The short stories in her collection *Laburnum for My Head*, are centred on the self-assertion of women. Her stories redefine woman identity and provide readers a glimpse into the world from a female perspective. The stories also impart to us the importance of non-human animals in our biological environment.

References:

Ao, Temsula. *Laburnum For My Head*, New Delhi: Penguin Books India, 2009. Print.

Kumar, Kailash. "Role of Women and Environment in Temsula Ao's *Laburnum for My Head*" *Bulletin of Advanced English Studies* (*BAES*), 5(1)2020, 1-7. https://www.refaad.com/Files/BAES/BAES-5-1-1.pdf

Gogoi, Sikhamoni. "An Ecofeminist Reading of Temsula Ao's *Laburnum for My Head*". *The Criterion: An International Journal in English*. Vol. III. Issue. I March 2012. https://www.the-criterion.com/V3/n1/Gogoi.pdf

Glotfelty, Cheryll and Harold Fromm. Eds. *The Ecocriticism Reader: Landmarks in Literary Ecology*. Athens and London: University of Georgia Press. 1996.

Kerridge, Richard. " Environmentalism and Ecocriticism" in *Literary Theory and Criticism*, ed. 6 Patricia Waugh, 530-543. New Delhi: OUP, 2006.

Nayar, Pramod K. *Contemporary Literary and Cultural Theory: From Structuralism to Ecocriticism.* New Delhi: Pearson, 2011.

❒❒❒

1. Assistant Professor, Department of English, Jhanji Hemnath Sarma College, PO: Jhanji District: Sivasagar Pin: 785683 (Assam)

Research Article

Spatial Construction of Ideology in Ernest Hemingway's *For Whom the Bell Tolls*

–Subhash. S
–Dr. T.S. Ramesh

Both the books revolve around alienation and leisure, through the appreciation and articulation of bullfighting. The novel, For Whom the Bell Tolls, *imbibes the tensive nature of confrontations and conflicts between natives and foreigners, who coexist for a common cause. The protagonist Robert Jordan, an instructor of Spanish in the United States, leaves his job to champion the Republican cause during the Spanish civil war.*

Abstract

A blend of memory, trauma, and geography dominates the works of Hemingway; so much that empirical literature on the author, and his works, have never stopped pouring. The construction of ideology in fictional spaces is critical to the historical understanding of ideological evolution. Having been published in 1940, the book contains elements that illustrate the making of postmodernism. The study intends to understand the structures of ideology in the novel through a spatial approach. The study intends to investigate the articulation of topophrenia and topophilia in the novel. The first part of the study establishes the elements of spatiality, and its representation in literature, and the significance of space-centered approach towards the novel. The second part of the study explicates the idea of topophrenia and topophilia. The third part of the study investigates the permeation of ideology by positing it as a spatially-constructed phenomenon. The findings are summarised in the final part of the study.

Keywords: Spatiality, ideology, topophrenia and topophilia.

> To speak of 'literature and ideology' as two separate phenomena which can be interrelated is … in one sense quite unnecessary. Literature … has the most intimate relations to questions of social power. But if the reader is still unconvinced, the narrative of what happened to literature in the later nineteenth century might prove a little more persuasive (Eagleton, *Literary Theory*, 19, 20).

The notion, that literature is a source of ideological propaganda, is widely considered a cliché amongst academic circles. The way in which ideology is

produced and propagated, through various forms of media is a problematic arena that requires consistent deliberation. Despite the existence of multiple perspectives in approaching ideology, Marxism has been the dominant framework in empirical literature on the subject. From a Marxist perspective, the justification of the dominant culture is the raison d'etre of ideology. Ideology and its manifestations have been evolved in academia through philosophers such as Tracy, Althusser and Zizek.

Terry Eagleton, in his book *Criticism and Ideology: A Study in Marxist Literary Theory*, explains three kinds of ideology in a work of literature viz General Ideology, Authorial Ideology and Aesthetic Ideology. Discourses of values, beliefs and morals, according to Eagleton, produce the dominant ideology that aid existing modes of production, thereby representing, in literature, the contemporary social relations (54).

Understanding the spatial construction of ideology in a literary work involves, in addition to taking into account the author's geography, a sensitive attention to the practices like making-sense of the spaces, and mapping of characters in the novel. The spatial construction of ideology involves the conflicts between dominant ideology and the rebellious ones. The manifestation of the conflict is not merely as in republicanism and fascism, but also as a whole which contains numerous substructures aiding the dominant powers. For Slavoj Zizek, ideology requires a concrete component to propagate and establish itself firmly. He asserts that ideology, through wholeness and exclusion, makes human society. Despite its secrecy and positive dimensions, the role of ideology in shaping an individual is inescapable.

Spatial representations of Hemingway play a role more critical than being mere visual compositions through words. His spaces, which encompass their cultural history, are not devoid of material intricacies. The dialectical relationship between the cultures of specific spaces, and the subjects' point of view towards the materiality of existence, forms a significant aspect in illustrating, and defending ideology. In Hemingway's works, spatial consciousness "mixes close representational observation with acquired place-knowledge and personal reverie" (Godfrey 4).

The palpability of ideology as an evolving entity, which remains under production and reproduction all the time, is obvious. Fictio can demonstrate the evolution of ideology in different spaces through the narratives. The study investigates the evolution of ideology, through the trajectory of its construction by the characters. Topophrenia is characterized by disorder and anxiety, intertwined with space-consciousness. It includes consciousness of places that commonly occurs during displacement and replacement. Topophilia refers to a subjective bond and affection one possesses towards one's spatial arena. Topophrenia and Topophilia are rarely found in subjects exclusively, because manifestations of both continue exert themselves in an individual at different points of time (Tally 17).

The publication of the novel was at a time, when the entire world was waging a war of ideologies against one another. There were multiple alliances engaged in wars transcending national boundaries. *For Whom the Bell Tolls* illustrates the production of dominant ideology through the war of ideologies in the Spanish arena. The dominant ideology is manifested by the centrality of characters, their affective spaces, and the author's leaning towards the spatial ideology.

The second world war involved the participation of American soldiers around the globe. The act was critical to keep the surge of fascism and communism under check. To do so, the US government sent soldiers from military and non-military backgrounds to fight for their ideologies. Fascism was on its rise with the aid of Benito Mussolini during the Spanish Civil War, which was considered to be a "prelude to the second world war" (National Geographic Society). Despite his opposition to the intervention of United States in the Spanish Civil War, Hemingway became an active proponent of the nation-state, by being a War correspondent in Spain. He termed the involvement of the United States in a European war as "mistaken idealism" (Notes). He asserted the futility in fighting for any other country but one's own; similar sentiments have been expressed by republicans as popular as Donald Trump. A study of ideology in the novel using the tools of 'literary geography' could contribute towards a comprehensive understanding of 'American Exceptionalism' in cultural representation. Hemingway's interest in the Spanish culture has occupied the forefront in books such as *The Sun Also Rises* and *Death in the Afternoon*.

Both the books revolve around alienation and leisure, through the appreciation and articulation of bullfighting. The novel, *For Whom the Bell Tolls*, imbibes the tensive nature of confrontations and conflicts between natives and foreigners, who coexist for a common cause. The protagonist Robert Jordan, an instructor of Spanish in the United States, leaves his job to champion the Republican cause during the Spanish civil war. The comrade General instructs him to bomb a bridge to aid the republicans, so that the mobility of fascists is prevented. By bringing the prevention of spatial mobility to the forefront, the plot unravels its geo-centered illustration.

The novelist infers the poem, "No Man is an island", in the beginning of the novel as an epigraph. The implication that a man is never isolated, and that he is always a part of the whole, signifies the tragedy of death. The novel contradicts the idea through nihilistic characters, and reconciles the idea by highlighting the coexistence of love and war. In addition to the geographical metaphors that contradict reality, the opening chapter presents the use of an actual map.

> He lay flat on the brown, pine-needled floor of the forest, his chin on his folded arms … The mountainside sloped gently where he lay … There

> was a stream alongside the road and far down the pass he saw a mill beside the stream … He spread the photostated military map out on the forest floor and looked at it carefully. The old man … was breathing heavily from the climb and his hand rested on one of the two heavy packs they had been carrying (Hemingway 3).

Robert Jordan's guerilla warfare gets aided by the routes known by Anselmo, the old guerilla fighter. Anselmo feels a sense of unease when Robert Jordan lays his military map, for that makes the old man feel useless. Added with a heavy breathing aided by the treks, geographical landscape is represented as affective and psychological. 'American exceptionalism' manifests itself in multiple parts of the plot, through the third person narrative and the characters' words. The dominant ideology, in the novel, manifests itself through a hierarchical representation of characters. Robert Jordan, effectively, stays on top of everyone, thereby benefitting from their actions. For more than half of the plot, Robert Jordan remains accepted by everyone but Pablo. Pablo's views remain unaccepted even by his own wife. Pablo is afraid that the bombing of the bridge could later lead to the destruction of his family by the fascists. For Pablo, the defeat of the republicans in the civil war was not uncertain, yet he puts up with the fight against the fascists assisting the American soldier.

Anselmo, Pablo and Pilar constitute the significant characters in Segovia, Spain, who aid the operation planned by the Republicans. Robert Jordan, throughout the novel, remains intent on bombing the bridge. Pablo, on the other hand, assumes ownership of the mountains in the first chapter, and states that the operation is his business if it happens in his territory. Pablo remains afraid of the consequences because he knows that the troops of Franco are extremely powerful, and that they are aided by advanced weaponry, vehicles, and aircraft (Hemingway 17). The loss of the republicans becomes a foregone conclusion when the sense of betrayal is smelled by the third-person narrator. Pablo, throughout the novel, remains a manifestation of topophrenia and topophilia. His affection towards his country makes him feel a sense of anxiety, when the foreigner enters the area for an operation. He remains unwilling to be detached, because of his support towards the republican ideals.

The sense of place for Roberto remains alien, despite being portrayed as the one for which he would remain loyal. He remembers the time he had visited Estemadura and shares it with his fellow soldiers to feel at ease with them. Within Pablo, there is a sense of distrust towards Robert Jordan, because he feels that Jordan could never entirely understand whether putting up the fight is worth the loss. The protagonist, due to his Hispanophilia, feels a sense of duty to protect the people of Spain from the forces of fascism. The inherent need, felt by Robert

Jordan, can be explained by the permeation of dominant ideology which has been pervasive in the United States since the end of the First World War. The consistent propaganda by the United States, in favor of liberal democracy, finds its manifestations in multiple acts of the protagonist. It is conspicuous that the topophilia of Robert Jordan towards Spain is accompanied by a sense of affiliation towards the exceptionalism of US-born political and economic ideologies.

The structures of hierarchy amongst characters act inherently in favor of Robert Jordan. The Spaniards themselves at a certain point wish to kill Pablo (Hemingway 65), because he consistently interferes in the works and conversations of Robert Jordan. Robert Jordan, on the other hand, hardly makes any move to eliminate Pablo from the team, despite the support of everyone including Pablo's wife, Pilar. Jordan's topophrenia continues to exist, despite his ideological ambitions in the region. The internal discourses in the novel continue to favor Jordan's actions, which leads him finally to execute the operation with minimum resources. The impact of Jordan's spatiality exerts itself into the European country primarily due to technological literacy. Jordan's knowledge of weaponry, vehicles and air crafts posits him in a place superior to the Spaniards.

The distance between the leaders and the guerillas remains a consistent point of conflict in the war which eventually leads to the loss of communication. The movements of the fascists are consistently noted by the colleagues of Robert Jordan. He eventually learns that it is impossible to stop the fascists by merely blowing up the bridge, for their air crafts are far more advanced. So, Robert Jordan decides to send one of his comrades, Andres to the republican leaders, to extract information on whether to continue the attack. The bureaucracy remains an obstacle for Andres throughout the course of action. He is helped by a few, yet blocked by many. The ideological construction of the republicans weakens eventually, primarily due to the distance between the guerillas and their leaders. Their actions account for a moral failure, in-terms of protecting their own soldiers. One of the officers goes to the extent of saying, "All of you should come in to the Republic and join the army…There is too much of this silly guerilla nonsense going on. All of you should come in and submit to our Libertarian discipline. Then when we wished to send out guerillas, we would send them out as they are needed" (Hemingway 392).

The aforementioned quote by the officer makes case for the existence of arrogance of the officer due to the overpowering significance of American exceptionalism. The dominant ideology, for the privileged officer, continues to exert its force transcending spatiality, unlike the guerilla soldier. The energy of Jordan, unlike Andres's reduced spirits, increases due to his interactions with the physical spaces. The observation of Jordan during the time he starts the operation is referred to as a "calculating, precise military sensibility" (Godfrey 163). Godfrey

infers the narrative, which focuses on the sharpened vision of Jordan. The narrative, involving the spatiality, also intensifies the dedication of Robert Jordan to fight for the cause of his ideology, which could keep him in a superior stance.

To summarize the findings, the idea of preventing spatial mobility, occupying the forefront in warfare, suggests that the novel unravels its geo-centric illustration of ideological conflicts in the beginning. The space-consciousness begins with geographical metaphors used by the author directly, and through the usage of John Donne's poem as an epigraph to the novel. Hierarchical representation of characters, with Jordan being on the top, manifests the dominant ideology. The ideological construction, which inherently involves spatial differences between the soldiers and the leaders, weakens the republican cause as illustrated by Andres. The plan of the republicans ends up as a failure, along with the failure of Jordan's affair with Maria, ending with the tragic demise of Jordan (Iqbal et al 261). The existence of 'thirdspace', in the novel, as defined by Soja, aids the topophrenia of Jordan, but it does not impinge on his battles. Topophilia and topophrenia coexist in the case of Pablo, because he refuses to give up his ownership of the country, but a sense of anxiety continues to exist within him, due to the rise of Franco's influencing fascist ideals in the country.

References:

Eagleton, Terry. *Criticism and Ideology: A Study in Marxist Literary Theory*. Verso Books, 2006.

—. *Literary Theory: An Introduction*. 2nd ed., Wiley-Blackwell, 2008.

Godfrey, Laura Gruber. *Hemingway's Geographies: Intimacy, Materiality, and Memory*. Palgrave Macmillan, 2018.

Hemingway, Ernest. *For Whom the Bell Tolls*. Arrow Books, 2004.

—. "Notes on the next War." *Esquire | The Complete Archive*, https://classic.esquire.com/article/1935/9/1/notes-on-the-next-war. Accessed 12 Sept. 2022.

Iqbal, Nasir, et al. "The Ethos of War Literature in For Whom the Bell Tolls." *Global Language Review*, vol. VI, no. I, 2021, pp. 254–263, https://doi.org10.31703/glr.2021(vi-i).28.

National Geographic Society. "Jul 18, 1936 CE: Spanish Civil War." *Nationalgeographic.org*, https://www.nationalgeographic.org/thisday/jul18/spanish-civil-war/. Accessed 12 Sept. 2022.

Tally, Robert, Jr. *Topophrenia: Place, Narrative, and the Spatial Imagination*. Indiana University Press, 2018.

❒❒❒

1. Ph.D Scholar, (subashsankar61@gmail.com), Department of English, National College (Autonomous), Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli, TN

2. Associate Professor, (drtsramesh@gmail.com), Department of English, National College (Autonomous), Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli, TN

Research Article

T.S. Eliot's "The Waste Land": A Journey from Death to Life

–Dr. Ravindra Kumar
–Sanjna Plawat

The "Waste Land" is unanimously considered to be the finest literary creation of the twentieth century society. It is a long poem of about four hundred forty lines divided into five sections entitled "The Burial of the Dead," "A Game of Chess," "The Fire Sermon," "Death by Water," and "What the Thunder Said." The poem presents a bleak and gloomy picture of the twentieth century Europe, the disillusionment of a generation. The poem, perhaps, presents the spiritual death of Europe.

Abstract

T. S. Eliot's magnum opus "The Waste Land" is aptly called the modern epic because it offers an array of images and myths that showcase the degradation of modern human life and values. The classical myths running rampant in the poem offer a contrast to the earlier golden times where hope of redemption was embedded in sacrifice and suffering but the modern life leaves no scope for penance in this jungle of materialism. The present paper aims to discuss the issues of disillusionment, boredom, sexual perversion, and hopelessness in modern society in T. S. Eliot's "The Waste Land" along with providing a ray of hope in the form of teachings of the Hindu scriptures. The five sections of the poem are life-in-death literary symbols of the journey of the modern man from death/perversion to life/salvation.

Keywords: Disillusionment, Idiosyncrasies, Modernism, Mythology, Redemption, Religious Ointment

T. S. Eliot was a multidimensional personality who tried his hand in poetry, drama, criticism, and journalism and due to his wide authority and influence over other artists of his time he came to be called the Pope of Russell Squire. A Classicist in literature, a Royalist in politics, and an Anglo Catholic in religion, he is supposed to be the central pillar upon which the edifice of the twentieth century literature rests. The two great poets of his time were W. B. Yeats and Ezra Pound – Yeats remained busy in the stuff of dreams, Pound to his idiosyncrasies about art and politics. Eliot is the first poet who said that English literature must be viewed as a part of that literary tradition which has produced the intellectual giants

like Homer. Reacting against the romantic notion of poetry, he observes in "Tradition and the Individual Talent": "Poetry is not a turning loose of emotion, but an escape from emotions; it is not the expression of personality, but an escape from personality" (Eliot 33). To him poetry is not merely inspiration, it is also organization. He is one of those creative artists of his time who have scrutinized the spiritual crisis of the time and whose works present a view of life, a philosophical or religious ointment to the bruised soul of the agonized humanity. His view of life is primarily existential and then religious. At a number of points in his poetry, he seems to be one with Søren Kierkegaard's idea that life has no meaning; it should be lived for the sake of living only and nothing else: "to love God is to live" (Kierkegaard 200). Life is after all suffering. This is why he rejects the Utopian idea of man's perfection. To Eliot man is imperfect and this imperfection gives way to evil and suffering. The roots of this imperfection are closely connected to the Biblical myth of the original sin committed by Adam and Eve who disobeyed the God by eating the forbidden fruit of knowledge. Thus, in "The Waste Land," man is not portrayed as a picture-perfect creature who does not have any flaws but someone who is inherently endowed with sin but ultimately may gain redemption by following the path of God's guidance and suffering. Hence, the life-in-death symbolism is significant throughout the poetry as the cycle of sin and salvation is representative of one's spiritual journey from being a parched soul to a nourished self drenched in the rain of classic wisdom.

Eliot's poetry is a curious amalgamation of the traditional and experiment, of the old and the new – it is complex and many sided. To him the duty of a poet is to maintain the pattern of tradition and redesign it by his own creation. His attempt is a continuous search to discover again what has been found before. He strives to bring back what has been lost in the noise of the city life. Eliot rejects rationalism and sees life in its naked form, without coating it with any layer of beautiful imagination. That's why he gives way to the commonplace sights like the heavy thud of cars and trams, rattling noise of trains, squalor, corruption in day-to-day life, and fret and fever of the modern life guided by machines. His poetic output can give way to a discussion – what should be the subject matter of poetry? Should it be confined to something that is beautiful only or it can be the other aspect of life that is ugly and terrifying? Eliot feels that it is absolutely wrong to suppose that poetry is concerned with beautiful, the subject of poetry is life with all its horrors, boredom, and glory. It deals with the predicament of human life which has been the same in all the ages. Perhaps this inspired him to write "The Waste Land," an epic of the modern society, which has no majesty like epic of classic times but epic in terms of disgust and perversion that no society has ever witnessed and thus the modern man needs to take a round turn as only classicism can save the humanity in this dreadful civilization.

The "Waste Land" is unanimously considered to be the finest literary creation of the twentieth century society. It is a long poem of about four hundred forty lines divided into five sections entitled "The Burial of the Dead," "A Game of Chess," "The Fire Sermon," "Death by Water," and "What the Thunder Said." The poem presents a bleak and gloomy picture of the twentieth century Europe, the disillusionment of a generation. The poem, perhaps, presents the spiritual death of Europe. Eliot Started writing this poem in the autumn of 1921 in Lausanne, where he was recovering from his own break-down in health, the death of his wife in a mental hospital, and the nerve-wracking impacts of the first World War. The poem was first published in a serial form in *The Criterion* in 1922. Before publishing the poem, the poet gave its rough draft to Ezra Pound and finally the poem was reduced to half of its original length. The publication of the poem invited much criticism but with the passage of time it came to be called an epic of the modern age. The poem, as Eliot himself said, has been influenced by two books – *From Ritual to Romance* by Jessie Weston and *The Golden Bough* by James Frazer. Eliot adopted the legend of the Grail and the Fisher King from Miss Weston's book. The Golden Bough supplies the myth of Attis, Adonis, and Osiris. Though the poem raises issues like boredom, ennui, rootlessness, degradation, sexual perversion, disillusionment, and disgust in the modern society but the aim of the present paper is to show how Eliot has presented the panorama of the modern life in a naked form and how the poem presents a journey from death to life. The first four sections present the triviality and a life-in-death like situation of human beings in the modern society. It is only in the last section that the author provides a ray of hope through three Das – Datta, Dayavdham, and Damyata.

The first section "The Burial of the Dead" begins with the month of April stating it as the cruelest month:

April is the cruellest month, breeding[1]
Lilacs out of the dead land, mixing
Memory and desire, stirring
Dull roots with spring rain. (1-4)

April, which was once the gayest month in Chaucer's "Prologue to the Canterbury Tales" has turned into the cruelest month for the modern Waste Landers. The section presents humans' attraction for death, or their difficulty in rousing from the death like situation. Men do not like to face the reality and April, the month of growth and rebirth, is no more the joyous season but the cruelest one. In the winter season the earth remains covered with snow with no stirrings of life and thus the need for action is almost forgotten. Spiritually people have become as dead as dried tubers. The theme of the section develops through Marie, a German princess who remembers her love experiences and sexual pleasures with the Duke

during the winter season. The section presents the theme of degradation through their journey to the mountains where one feels free for sexual enjoyment. The idea runs through the reverie resumed later in the section:

What are the roots that clutch, what branches grow
Out of the stony rubbish? (19-20)

The protagonist answers:

Son of man,
You cannot say, or guess, for you know only
A heap of broken images, where the sun beats,
And the dead tree gives no shelter, the cricket no relief;
And the dry stone no sound of water. (20-24)

The theme of degradation is further elaborated through the illicit love story of Tristan and Isolde quoted from Wagner's opera. The song from Wagner's opera, "fresh blows the wind," is sung by a young sailor aboard the ship which is bringing Isolde to Cornwall. The lover is hopeless, ill, and is on the verge of death. The guilty love of Tristan and Isolde results in spiritual deadness. The same story has been illustrated by the episode of Hyacinth girl as she came back from the Hyacinth garden after indulging in illicit love:

… my eyes failed, I was neither
Living nor dead, and I knew nothing,
Looking into the heart of light, the silence. (39-41)

The degradation is further elaborated through madam Sosostris, the famous fortune teller who tells the fortune of people with the help of tarot cards. In the ancient time the tarot cards were originally used to measure the rising of the water, an event of the highest importance to the people. But in the modern society the function of the tarot pack of cards has degenerated as the lady is engaged merely in vulgar fortune telling. But the symbols of the tarot cards are still unchanged. Different pictures are carved on the cards with the help of which she foretells the future of her customers. Unfortunately she is not able to find the card with the picture of the hanged man, who represents the hanged god of Frazer or Jesus Christ because she is blind to spiritual truths.

After the madam Sosostris passage, Eliot proceeds to address the unreal city which may be any city in the modern waste land – London, Paris, Athens, or Vienna. All the cities possess the same spiritual desolation. Then the poet finds a crowd of people moving over London Bridge, they all seem to be spiritually dead, with their eyes fixed on their feet and producing sighs as if they are in acute pain:

I had not thought death had undone so many. (63)

The reference of Stetson whom the protagonist addresses his friend and one who fought with him in the Punic War is giving the idea that all the wars are one

war; all experience one experience. Stetson is every man, including the reader and the author himself.

The second section "A Game of Chess" focuses on the failure of sexual relationships in the modern society. The section presents a contrast between two kinds of life – life in a rich and magnificent setting and life in the low and vulgar setting of a London pub. In both the classes sex has become a matter of moves and counter moves between men and women. Sexual perversion has become a common phenomenon in the modern society. The title of this section has been taken from Thomas Middleton's *Women beware Women* where a game of chess is used as a device to keep the widow occupied while her daughter-in-law is seduced by the Duke. The section begins with the description of a lady whose chair can be compared to the throne of Cleopatra, her dressing table reminds of the toiletry of Belinda in "The Rape of the Lock," and the well ornamented ceiling reminds that of Dido's festal hall in "The Aeneid":

The Chair she sat in, like a burnished throne,
Glowed on the marble, where the glass
Held up by standards wrought with fruited vines
From which a golden Cupidon peeped out (77-80)

The transformation of the raped woman into a nightingale through suffering points out further difference between the past and the present. Transformation was possible in the past as people believed in suffering but at the present time it is not possible as people do not believe in suffering. Even the voice of nightingale is not that which filled the entire desert with inviolable voice. To them it is merely "Jug Jug" sound (103). Further the theme of life-in-death is stated specifically in the conversation between the man and the woman. The woman's questions like, "Are you alive, or not?", "Is there nothing in your head?" (126), "Why do you never speak?" (112), and the answer of the man, " I think we are in rat's alley / Where the dead men lost their bones" show that not only life but death of modern man is also without any significance (115-116). The section ends with the conversation of Lil and her friends about Albert reflecting the hollowness and artificiality of the modern society. Thus the entire section displays a vulgar game of sexual relations everywhere.

The third section "The Fire Sermon" originates from the fire sermon of Lord Buddha where the world is shown burning with evils like lust and hatred. It also brings to mind one of the confessions of Saint Augustine where he represents lust as a burning cauldron. The dirty game of lust has gripped both the East and the West. The section opens with a description of the bank of the Thames River and the poet presents a dichotomy between how the river bank was used in the past and how it is being used at the present. In Spenser's "Prothalamion" the scene

described is that of the bank of the Thames River, which is used for marriage of nymphs and their paramours. But now the paramours are the loitering heirs of city directors and their beastly copulation with unnamed girls:

The nymphs are departed.
And their friends, the loitering heirs of city directors;
Departed, have left no addresses.
By the waters of Leman I sat down and wept …
Sweet Thames, run softly till I end my song (179-183)

Then the poet proceeds to depict the squalor and sordidness of the modern society through a rat creeping through the vegetation and dragging its slimy belly on the bank. Eliot further proceeds to link the waste land symbol to that of Shakespearean *Tempest*, by quoting one of the lines spoken by Ferdinand, prince of Naples. We find more degradation in the ironic contrast between Diana and Mrs. Porter and her daughter who wash their feet in soda water in order to make them look fairer. Hotels like Canon Street and Metropole have been portrayed as hot beds of corruption and homosexual activities. More ironic contrasts are presented through the typist and the lovely woman in *The Vicar of Wakefield*. The typist, even after committing the adultery, is not ashamed of her fallen action; she seems to be concerned for her face and hair rather than the loss of chastity whereas the lovely woman in *The Vicar of Wakefield* commits suicide when betrayed by her lover. Even the relationship between man and woman in the modern waste land has become sterile. The incident between the typist and the carbuncular young man is a picture of degraded love. The degradation reaches its zenith with the description of the three Thames daughters molested cruelly on different places. The molestation of the first Thames daughter is sufficient enough to show beastly copulation in the modern waste land:

… By Richmond I raised my knees
Supine on the floor of a narrow canoe. (294-295)

The agony reaches its climax when we come across the plight of the third Thames daughter:

On Margate Sands.
I can connect
Nothing with nothing.
The broken fingernails of dirty hands.
My humble people who expect
Nothing. (300-305)

The section ends with the lines of both Augustine and Lord Buddha:

To Carthage then I came
Burning burning burning burning
O Lord Thou pluckest me out

O Lord Thou pluckest
Burning. (307-311)

The fourth section "Death by Water" elaborates how water, a traditional symbol of purification, has lost its value in the modern waste land. The Phoenician sailor who was once known for his navigation skills has drowned of water:

Phlebas the Phoenician, a fortnight dead,
Forgot the cry of gulls, and the deep sea swell
And the profit and loss. (312-314)

The idea represented through the sailor is that man in the modern society is lost in a mundane world of profit and loss without any spiritual pursuit. The reference may be linked to Osiris, the god of vegetation who was supposed to pass various stages of life in reverse order before his final resurrection. Unfortunately such resurrection is not possible for the Phoenician sailor who represents the modern degraded humanity. Man can be saved only if he is guided by moral principles.

The final section "What the Thunder Said" provides a ray of hope for salvation and redemption. The section begins with the arrest of Jesus Christ from the garden of Gethsemane followed by his crucifixion on the behest of Pontius Pilate, the Roman Governor. People forgot his teachings and preaching after his death:

He who was living is now dead
We who were living are now dying
With a little patience (328-330)

The plain implication is that Christ kept living in thousands of bosoms even after his death as people moved on the path shown by him. But in the modern waste land people have killed him simply because they have no faith in his teachings and ideas. Then the poet shows how the path of truth is replete with difficulties and torturous experiences through the journey of Parcifal and his men. The seekers of truth and spiritual salvation suffer terribly on the way of their journey in search of the Holy Grail. The description on the sterility of the waste land and the lack of water which follows needs special attention:

Dead mountain mouth of carious teeth that cannot spit
Here one can neither stand nor lie nor sit
There is not even silence in the mountains
But dry sterile thunder without rain (339-342)

The horror built up in this passage is an apt preparation for the description on the chapel perilous which follows it. The journey has not been only an agonized walk in the desert; it is also the journey to the perilous chapel of the grail story. Then the poet shows the journey of two Disciples of Christ on their way to Emmaus: "Who is the third who always walks beside you?" (360). Christ has resurrected but his disciple travelers cannot tell whether it is really He or mere illusion induced

by their delirium. The poet then depicts the murmur of maternal lamentation which symbolizes the lamentation of Eastern Europe with her inhabitants moving over endless plains, stumbling in cracked earth. Falling towers symbolize old values coming down in all the cities – Jerusalem, Athens, Alexandria, Vienna, or London. All these cities present the decay of Eastern Europe as they all are unreal cities. The woman drawing her long black hair tight represents the neurosis of modern humanity and bats with baby face in the violet air demonstrate its desolation and decay. As soon as the searchers reach near the chapel, where they can find the Holy Grail, we hear the cock's sound along with a flash of lightening, an indication of the possibility of rain.

Finally we come to know about the three possible ways to achieve salvation and redemption through three Das spoken by the Prajapati. The Almighty suggests three solutions to the problems of the modern waste landers – Datta, Dayavdham, and Damyata. The poet's answer to the first question, "What have we given?" (402) is:

The awful daring of a moment's surrender
Which an age of prudence can never retract
By this, and this only, we have existed (404-406)

The lines show that devotion is possible only in moments of intense surrender, which is not possible keeping worldly wisdom in mind. People capable of having such devotion or Daya are martyrs whose accounts are not to be found in obituaries or in memories draped by the beneficent spider. The second solution Dayavdham means self-sacrifice, which is like coming out of self and entering the problems of others. The surrender to something outside the self is an attempt to transcend one's essential isolation. Modern humanity is self-centered where each of us is living in complete spiritual isolation from others. We must learn the lesson of spiritual oneness if we have to achieve spiritual resurrection. The third statement made by the thunder, Damyata means the logical condition for control. The poet compares human life with a boat that can sail smoothly only if it is in skilled hands. One must be disciplined that does not mean the loss of freedom; it rather implies spiritual discipline that means control over one's desire. The journey of life can be smooth and happy only if one has self-control over one's desires.

The poem ends with a bundle of quotations from "Purgatario", "PervigiliumVeneris," and "El Desdichado", indicating the themes of suffering, salvation, and transformation. Dante's "Purgatario" reminds that suffering is essential for purification and salvation. The story of Philomela also renders the message that transformation is possible through suffering only. "El Desdichado" by Nerval puts emphasis on the need of absolute detachment for spiritual salvation and "Pervigilium Veneris" also conveys the message that suffering can lead to salvation and redemption.

Thus throughout the poem we come across degradation, disillusionment, boredom, ennui, rootlessness, decay, desolation and, sexual perversion. The poem presents a bleak vision of life in its naked form. It seems as if the world is trying the experiment of manufacturing a civilized but non-Christian mentality. But the experiment has failed drastically resulting in world-weary cry of despair and disillusionment. Cleanth Brooks' idea that the basic theme of "The Waste Land" is life-in-death seems to fit the entire poem as people in the modern society are physically alive but spiritually they are dead. Theirs is a death-in-life like situation (Brooks 137). The Epigraph of the poem which is taken from "Satyricon" by Petronius also conveys the idea of death-in-life like situation through the story of the Sibyl of Cumae. As Sibyl answered to the question of boys, "I want to die," this exactly is the situation of human beings in the modern society. They feel so lost and alienated that their wish, like that of the Sibyl of Cumae, is to die. Man in the modern society feels that he belongs to nobody and nobody belongs to him. Ultimately he nurtures a wish to die. But Eliot ends the poem on an optimistic note where he shows the way to salvation through the statements of the Prajapati. If we follow the ways suggested by the Prajapati, there is a certain possibility for regeneration and salvation. The poem ends finally on a promise of life and resurrection provided we give our life to some noble cause, we sympathize and we develop self control. Then there will be "shantih, shantih, shantih" (434).

References:

Brooks, Cleanth. *Modern Poetry and the Tradition*. University of North Carolina Press, 1967. Print.

Eliot, T. S. *The Waste Land, Prufrock and Other Poems*. Dover Publications, 2012. Print.

Eliot, T. S. "Tradition and the Individual Talent." *The Sacred Wood and Major Early Essays*, Dover Publications, 1997, pp. 27-33. Print.

Kierkegaard, Søren. "All Things Must Serve Us For Good – *When We* Love God." *Kierkegaard's Writings, XVII, Volume 17*, Princeton University Press, 2009, pp. 177-88. Print.

(Footnotes)

[1] All quotations have been taken from T. S. Eliot's poem "The Waste Land" published in *The Waste Land, Prufrock and Other Poems*, Dover Publications, 2012. Print.

❒❒❒

1. Professor, Department of English, Chaudhary Charan Singh University, Meerut, U.P., 250001, India, e-mail: kumar_ravindra8@yahoo.co.in
2. Research Scholar, Department of English, Chaudhary Charan Singh University, Meerut, U.P., 250001, India, mob: 7838581907, e-mail: sanjnaplawat261@gmail.com

Women in the Indian Parliament: Access Matters for Success

–Bipin Kumar Thakur

In order to ensure women's presence in decision making and governance, the Committee recommended, "reservation at all levels; gender sensitization of political parties and Government bodies at the National and State levels; changing role and obligations of political parties; positive role of the women's study centres and research". Regarding the reservation, the Committee recommended, "to ensure at least 50 percent reservation of seats for women in the Local bodies, State Legislative Assemblies, Parliament, Ministerial levels and all decision-making bodies of the government.

"The *Preamble of the Indian Constitution strives to secure 'equality of status and opportunity' as one of its solemn resolves for all its citizens. But even after seventy-five years of India's independence, women have not been adequately represented in the Indian Parliament at par with the existing global trend. The study seeks to investigate the reasons responsible for the marginal representation of women in the Parliament and suggests a few important policy recommendations to boost the same."*

KeyWords*: Representation; Inclusive Parliament; Parliamentary Democracy; Women Empowerment; Legislation; Transformation of Society.*

Introduction

The Indian Parliament is bicameral consisting of the President and two Houses known as the Council of States (Upper House) and the House of the People (Lower House) both being elected democratically except for the twelve seats in the former being nominated by the President. The election to the Lower House is based on adult suffrage; that is to say, every person who is a citizen of India and who is not less than eighteen years of age and is not otherwise disqualified by the Constitution or any law made by the appropriate Legislature on the ground of non-residence, unsoundness of mind, crime or corrupt or illegal practice, shall be entitled to be registered as a voter at any such election (Article 326). The minimum age is to enter the House of the People and the Council of States is twenty-five and thirty years respectively (Article 84).The Preamble of the Indian Constitution

strives to secure 'equality of status and opportunity' as one of its solemn resolves for all its citizens.

Women in the Lok Sabha (House of People)

Over the seventeen parliamentary elections (general elections) held so far in India, women have not got adequate representation in the Indian Parliament. According to the *UN WorldPopulation Prospects 2019*, the share of women and men in the total population of India is about 48.04 percent and 51.96 percent respectively[1].

According to the Inter-Parliamentary Union (IPU), the global percentage of women in parliaments is around 26.40[2]. The number of elected women members in the Indian Parliament since 1952 is depicted in Tables1&2. Ironically both the Houses of Indian Parliament are quite behind the global average of women's representations in the Parliaments around the world. It becomes clear that the representation of women in the Indian Parliament has never exceeded 15 percent of the total strength of the House of People and that of 13 percent of the Council of States. Table1 shows women's representation in the Lok Sabha. The present Lok Sabha has the highest representation of women members [78(14.36%)] while that of the sixth in 1977 had the lowest women members [19(3.5%)]. It is also clear that although the number of women contestants have been increasing over the years, it is very less in comparison of that of males. According to ECI, in 2019 general elections, the highest number of women contestants so far [726(9.91%)] participated while the number of male contestants was 7322 and the total seats in the House was 543.

Table1: Representation of Women in Lok Sabha (1952-2019)

Election Year	Women Contestants		Women Elected	
	Number	Percentage	Number	Percentage
1951-52	——-	———	24	——
1957	45	3.0	22	4.5
1962	66	3.3	31	6.3
1967	68	2.9	29	5.6
1971	61	2.2	29	5.6
1977	70	2.9	19	3.5
1980	143	3.1	28	5.3
1984	171	3.1	42	8.2
1985	09	5.0	01	3.7
1989	198	3.2	29	5.5
1991-92	330	3.8	39	7.3
1996	599	4.3	40	7.4
1998	274	5.8	43	7.9

1999	284	6.1	49	9.0
2004	355	6.5	45	8.3
2009	556	6.9	59	10.9
2014	668	8.0	62	11.4
2019	726	9.91	78	14.36

Sources:i. *Electoral Statistics Pocket Book 2017*, p. 47. Election Commission of India. (Data for 1951-52 to 2014); ii. ECI, https://www.eci.gov.in (For 2019 data)

Note: Election was held separately for states of Punjab and Assam in 1985 and for Punjab in 190-91; Women Contestants' data is not available for 1951-52.

Table 2 depicts women's representation in the Rajya Sabha since 1952. Average number of women members in Rajya Sabha is 22.36 while the average percentage of their representation is about 9.38. Article 83 of the Indian Constitution provides,"Rajya Sabha shall not be subject to dissolution, but as nearly as possible one-third of the members thereof shall retire as soon as may be on the expiration of every second year in accordance with the provisions made in that behalf by Parliament by law." The highest representation of women members [31(12.8%)]was recorded in 2014 while in 1970, it was the lowest [14(5.8%)].

It is interesting to note that during 1962-2014, a span of more than five decades, the Lok Sabha could not double the average percentage of women parliamentarians. In 1962, it was 6.3 percent women membersin the House, in 2014, it rose to that of 11.4. There has been a slight increase in 2019 Lok Sabha elections but equal representation of women in Parliament has a long way to go.

Table 2: Women Members Elected/ Nominated in Rajya Sabha (1952-2020)

Year	Women Members		Year	Women Members		Year	Women Members		Year	Women Members	
	No.	%		No.	%		No.	%		No.	%
1952	15	6.9	**1970**	14	5.8	**1988**	25	10.2	**2004**	28	11.4
1954	16	7.3	**1972**	18	7.4	**1990**	24	9.8	**2006**	25	10.2
1956	20	8.6	**1974**	17	7.0	**1992**	17	6.9	**2008**	24	9.8
1958	22	9.5	**1976**	24	9.8	**1994**	20	8.2	**2010**	27	11.0
1960	24	10.2	**1978**	25	10.2	**1996**	19	7.8	**2012**	24	9.8
1962	17	7.6	**1980**	29	11.9	**1998**	19	7.8	**2014**	31	12.8
1964	21	8.8	**1982**	24	9.8	**1999**	20	8.2	**2016**	27	11.0
1966	23	9.6	**1984**	24	9.8	**2000**	22	9.0	**2018**	28	11.5
1968	22	9.2	**1986**	28	11.5	**2002**	25	10.2	**2020**	27	11.2

Sources:i. *Electoral Statistics Pocket Book 2017*, p. 16. Election Commission of India (Data for 1951-52 to 2016);
ii. ECI, https://www.eci.gov.in (For 2018-2020 data)

The remarkable increase in women's representation in the upper House seen in 2014 could not continue further. It remained slightly more than 11percent for the period 2016-2020. The present strength of Rajya Sabha is 245 (233 members are elected while those of 12 are nominated by the President).

Critical Evaluation and Policy Recommendations

About the ideals of the Indian Constitution, Granville Austin says,

the Constitution was to foster the achievement of many goals. Transcendent among them was that of social revolution, this social revolution would bring about fundamental changes in the structure of Indian society—a society with a long and glorious cultural tradition but greatly in need, of a powerful infusion of energy and nationalism (Austin, 1966: xv).

He further says that the Constituent Assembly was able to draft a constitution that was both a declaration of social intent and an intricate administrative blueprint because of the extraordinary sense of unity among the members. Highlighting the achievements of the Indian Constitution, Rajeev Bhargava says,

It is no mean achievement to have committed ourselves to universal franchise, especially amidst widespread belief that traditional hierarchies in India are congealed and more or less ineliminable and when the right to vote has only recently been extended to women and to the working class in stable Western democracies (Bhargava, 2008: 15-16).

Sadly, the spirit of gender equality enshrined in the Indian Constitution has not resulted into adequate representation of women in the Parliament. Although there is reservation of seats for scheduled castes (SC) and scheduled tribes (ST) members in Lok Sabha but there is no reservation of seats for women as a separate category.

The demand for greater representation of women in political institutions in India was not taken up in a systematic manner until the setting up of the *Committee on the Status of Women in India* (CSWI) (Hewitt & Rai, 2010). The Committee published its report in 1976. It had two tasks: one, to examine the constitutional, legal and administrative provisions that have bearing on the social status of women, their education and employment; two, to assess the impact of these provisions. The Committee concluded that there was an increase in the marginalization of women in the economy and society (GoI, 2015:3).

In 1988, *the National Perspective Plan for Women* focussed on upliftment of the status of women by recommending new initiatives for multiple sectoral plans, for example, rural development; employment & training; education; health & family welfare; political participation & decision-making; legislation; media & communication etc. For increasing political representation of women, it recommended, "government should effectively secure participation of women in decision making process at the National, State and local levels." It suggested use

of special measures for recruitment of women candidates. Some prominent among them were: i. more women to be inducted in ministries at the Centre and State governments; ii. 30 percent representation of women in all Government Committees or Commission; iii. 50 percent of all grassroots functionaries to be women; iv. 30 percent reservation for women in local self-government units both in the rural and urban areas; v. all political parties must be urged to ensure that at least 30 percent contestants are women.

In May 2013, the GoI (Ministry for Women and Child Development), based on the recommendation of the Committee of Governors constituted by the President of India, established a High-Level Committee on the Status of Women in India. It submitted its report in 2015 and maintained, "5 P's—patriarchy, property, power, prosperity and physiology are major barriers with increasing criminalization of politics and violence against women, that play a distinct role in keeping women out of political process and governance". It observed further that gender parity in governance and political participation is a pre-requisite to the realization of gender equality. Thirty three percent reservation for women is ensured through Constitutional Amendments in Panchayats and in some of the states, it is fifty percent. However, there is nothing 'natural transition' from the Panchayats to the State Assemblies and to the Parliament, where the representation of women continues to be dismal.

In order to ensure women's presence in decision making and governance, the Committee recommended, "reservation at all levels; gender sensitization of political parties and Government bodies at the National and State levels; changing role and obligations of political parties; positive role of the women's study centres and research". Regarding the reservation, the Committee recommended, "to ensure at least 50 percent reservation of seats for women in the Local bodies, State Legislative Assemblies, Parliament, Ministerial levels and all decision-making bodies of the government. It also recommended State funding of elections".

An analysis of 2019 Lok Sabha elections shows that out of 29 States, women M Ps were elected from 22, leaving seven states with no female representation in the Parliament. The seven States are Arunachal Pradesh, Jammu and Kashmir, Manipur, Mizoram, Nagaland and Sikkim (Dantewadia, 2019). Among the union territories, only Delhi has its share in female representation.

The Ministry of Law & Justice, on the issue of reserving seats for women in legislatures said, "Gender justice is an important commitment of the government. The issue involved needs careful consideration on the basis of the consensus among all political parties before a Bill for amendment in the Constitution is brought before the Parliament" (Chawla, 2021). The bill to reserve seats for women in Parliament and State legislatures was passed in the Rajya Sabha in 2010, but it was never introduced in the Lok Sabha. As has been observed by Tara Krishnaswamy,

unlike many democracies, only 13 percent of parliamentarians in India are women. This problem will not be resolved until parties decide to field more female candidates. This paucity of women's voice in the uppermost echelons of lawmaking is not a matter of pride for the nation. In other democracies like South Africa, Australia, Sweden, Germany and the UK, political parties have acknowledged this skew and course-corrected to enable a democracy that hears diverse voices on legislation and policy. Parties self-enforce with voluntary quotas or minimum limits of 33 percent or 50 percent women in their candidates lists and party leadership roles. (Krishnaswamy, 2020).

Constitutional sanction was accorded to reservation of seats for women in the units of local self-government at the rural and urban areas (Article 243D & Article 243T) in 1992-93. We have miles to go to achieve the same at the levels of State legislatures and Union Parliament.

Conclusion

Women representation in the Indian Parliament has gradually increased over the years—in Lok Sabha, it reached 14.36 percent in 2019 from that of 4.5 percent in 1957. Similarly, in Rajya Sabha, from 6.9 percent in 1952, it has reached to 11.2 percent in 2020. But we are nowhere around the global average of women representation in Parliament, 26.40 percent (As per *IPU*data on 04 October, 2022). Out of 193 countries, India ranked 147 in matters of women representation in the Parliament (As per *IPU* data on 01 November, 2021). This is definitely not a matter of pride and needs immediate correction.

We require multi-dimensional approach and strategy to achieve women's adequate representation in our democratically elected bodies. At the political leadership level, we need the prudent political will for ensuring fifty percent reservation of seats for women; at the political parties' level we need necessary adjustments in distribution of tickets for women contesting elections and at the general electorates' level, we need a paradigm-shift in the mindset to be ready on priority basis to elect more women candidates during the popular elections leading to their access to democratic institutions. Women's adequate access to democratic bodies will definitely catalyze the success of parliamentary democracy in India. It would make it more representative and inclusive fulfilling the basic goals and spirit of democracy. Moreover, it will help in empowerment of women leading towards transformation of the society.

Notes

[1].*The UN World Population Prospects 2019*, Available at https://population.un.org/WPP/ (Accessed: January 16, 2021).

[2]. *The IPU in Numbers*, Available at https://www.ipu.org . (Accessed: October 4, 2022).

References:

Austin, Granville. (1966). *The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation* (p. xiii). Bombay: Oxford University Press.

Bhargava, Rajeev. (2008). *Politics and Ethics of the Indian Constitution* (pp 15-17). New Delhi: Oxford University Press.

Chawla, Akshi (2021). 'On women's representation in Parliament, Modi government has nothing to show', *The Indian Express*. Available at https://www.indianexpress.com/article/opinion/parliament-women-bjp-government-7470802/ (Accessed: January 1, 2022).

Dantewadia, Pooja. (2019). '17th Lok Sabha will Have a Record 78 Women Parliamentarians. But equal Representation is Still Far from Reality', *News 18*, 25 May. Available at https://www.news18.com/news/india/17th-lok-sabha-will-have-a-record-78-women-parliamentarians-but-equal-representation-is-still-far-from-reality-2159337.html. (Accessed: January 1, 2022).

GoI (1988). *National Perspective Plan for Women 1988-2000 A.D.*
(pp. 164-167). Available at https://feministlawarchives.pldindia.org/category/?s=National+Perspective+plan+for+women+1988 (Accessed: January 1, 2022).

GoI (2015). *High Level Committee on the Status of Women in India*. Ministry for Women and Child Development. Available at https://feministlawarchives.pldindia.org/category/towards-equality/hlc2015/ (Accessed: January 7, 2022).

Hewitt, Vermon. & Rai, Shirin M. (2010). Parliament. In Niraja Gopal Jayal and Pratap Bhanu Mehta (Eds.) *The Oxford Companion to Politics in India* (pp. 28-42). New Delhi: Oxford University Press.

IPU (2021). 'Women in parliament', Inter-Parliamentary Union, Available at https://www.ipu.org/our-impact/gender-equality/women-in-parliament. (Accessed: January 1, 2022).

Krishnaswamy, Tara. (2020). 'Female Parliamentarians at a Historic High, but Parties Must Do More', *The Wire*, 11August. Available at https://thewire.in/women/women-parliament-lok-sabha-rajya-sabha-political-parties. (Accessed: January 1, 2022).

Lok Sabha Secretariat. (2016). *The Constitution of India*, New Delhi, pp. 38-56.

Radhakrishnan, Sruthi. (2019). 'New Lok Sabha has highest number of women MPs', *The Hindu*, 27 May. Available at https://www.thehindu.com/news/national/new-lok-sabha-has-highest-number-of-women-mps/article 27260506.ece. (Accessed: January 1, 2022).

❑❑❑

---

1. Associate Professor, Department of Political Science, Sri Guru Tegh Bahadur Khalsa College, University of Delhi, Delhi-110007, E-mail: bkthakur1510@gmail.com

Henry Green: The Hero of the Mundane

–Joanna Pauline C.
–Dr. P. Santhi

Following Green's careful distinction between his literary and non-literary selves, it seems appropriate to refer to him by his pseudonym when discussing his work and by his real name, Henry Yorke, when discussing his life. In 1905, Henry Vincent Yorke was born. His father was the owner of a large Gloucestershire estate and the chairman of H. Pontifex & Sons, the Birmingham engineering works where Henry would become managing director.

Abstract

Henry Green is one of the literary enigmas of the 20th century. Twenty years after his passing, it appears that historians are still attempting to assess his modest body of work, which consists of nine novels and a memoir that were all written between 1926 and 1952, when he ceased writing at the age of 47. Though he continued to live for more than twenty years, becoming more and more eccentric and reclusive, he told an interviewer, "I find it so exhausting now I simply can't do it anymore." For the last seven years of his life, he wouldn't even leave his London home, and he also objected to being shot in any other way than from the rear. He passed away in 1973 at the age of 68. This paper aims to portray how Green managed to woo his readers by transforming the mundane into greatness despite the reclusiveness and eccentricity that predominantly held him back as a person, but not a writer.

Keywords: Green, Enigma, Fiction, Mundane

Henry Green didn't find commercial success or unwavering support from critics, but he did inspire passion in some readers, including a strangely diverse group that included W. H. Auden, Elizabeth Bowen, Terry Southern, Eudora Welty, and John Updike. He revealed the ambiguity that pervaded every position he ever took in regard to his readership. He said, "I write for about six people (including myself) whom I respect and for no one else," yet he never abandoned the naive, one might the say delusional, hope that his work might one day bring in a respectable living. Although Green himself criticised Joyce and the later Henry James for allowing the excesses of their styles to obstruct communication between author and

reader, Terry Southern notes that Green's style is so indirect and subtle that he has been called not just a writer's writer but a writer's writer's writer.

Green's working aesthetic was delicate, allusive, and cryptic, which stood in mysterious contrast to his anti-intellectualism. He preferred flirtation and gossip over literary conversation. According to his son, Sebastian Yorke, he read about eight books per week,

> the standard of the novels never seemed to matter… . He rarely praised a book; there were some American authors he would admit to liking, but he seemed to admire no contemporary English writers. He never re-read a book or selected one from his small library of 'classics' collected in his Oxford days. Nor can I recall him reading anything by his professed idols: Gogol, Turgenev, [C. M.] Doughty [the author of Travels in Arabia Deserta], Céline or Faulkner. He only liked novels—he would not read poetry or biography. He loved thrillers and magazines, particularly Time magazine.

This most artistic and self-conscious writer was clearly uneasy in the role of artist. When one considers that Green never rejected his decidedly philistine background, the discomfort was perhaps unavoidable.

Following Green's careful distinction between his literary and non-literary selves, it seems appropriate to refer to him by his pseudonym when discussing his work and by his real name, Henry Yorke, when discussing his life. In 1905, Henry Vincent Yorke was born. His father was the owner of a large Gloucestershire estate and the chairman of H. Pontifex & Sons, the Birmingham engineering works where Henry would become managing director. Yorke led a fairly ordinary life aside from his writing. He was not as academically gifted as his father and older brothers; despite being a published novelist while still an undergraduate, he graduated from Oxford without a degree. He then started working for Pontifex, where he spent his first year on the shop floor with the men before joining the management team in London.

Green's refusal to pontificate on aesthetics has resulted in widespread critical scepticism about his actual significance as a writer. His books are rarely in print and while he receives a few passing glances from the academy, a fondness for Green is now regarded as evidence of specialized, even arcane, tastes. People hesitate to commit to his work, usually saying that he is an interesting writer because, while it is difficult to swallow Green's demanding, often precious prose style, it is also impossible to dismiss him and the extraordinary breadth of his talents is reflected in the fact that there is almost no repeat material among the nine novels; each novel tries something entirely new. Green was not the type to develop a style or theme

over time, adding to it with each new book. Rather, he approached each novel with reckless confidence, as if it were his first.

Green never tried to take the easy way out in his writing. He was always drawn to the extremes, and his desire to avoid the elegant and the Augustan became laboured at times. Carlyle and Doughty were lifelong passions, and his admiration for James and Woolf is unsurprising. Green had already begun seeking the limits of the possibilities of English syntax in his first novel, *Blindness*, which he began and mostly finished while still at Eton, and in his second novel, *Living*, he found those limits and began to stretch them.

Of course, some failure was unavoidable, and the breadth of Green's accomplishments is matched by a corresponding breadth of quality. He will hit the target with a magnificent felicity of phrasing in one paragraph, then overreach himself and produce very bad prose in the next. He could paint a vivid picture with few words, and Green was always at his best when dealing with the concrete, whether in descriptive prose or dialogue. In *Nothing*, for example, a young couple walks into a French restaurant without having made a reservation: "They were standing before Pascal, close together in an attitude of humility while Gaspard sneered in their faces. It was plain they were not known." Green's stylistic efforts, on the other hand, can be disastrous. His omission of the definite article in many of his early stories, including *Living*, is an example. "I wanted to make [my prose] as taut and spare as possible to fit the proletarian life I was then leading," he later explained. The trick works occasionally, producing scenes of great beauty, as in this passage from *Living*:

> Mr Craigan smoked pipe, already room was blurred by smoke from it and by steam from hot water in the sink. She swilled water over the plates and electric light caught in shining waves of water which rushed off plates as she held them, and then light caught on wet plates in moons. She dried these. One by one then she put them up into the rack on wall above her, and as she stretched up so her movements pulled all ways at his heart, so beautiful she seemed to him.

Green stated in 1958 that he would not use this technique again, citing the fact that "it may now seem, I'm afraid, affected." And it does, especially when he insists on the principle too vigorously:

> Sang birds. They lay, arms round each other. Waved ferns in the wind and they were among them, lying silently. Above trees hung a cloud against blue sky and leaves clustering from branch above and tall ferns hid these two deep in the wood from anyone and the sky. Soft the air.

The quantity of Green's fiction decreases as he ages, but its quality increases immeasurably. While the early work was rhapsodic, the cool, restrained tones that suited Green so well now appear, and one very short story, "*The Great I Eye*" (1947), is as good a piece of fiction as Green ever wrote, a combination of haunting fantasy and drab realism. A hungover husband awakens the morning after a party, trying to recall what exactly happened the night before: it is a masterful, surrealistic story that grazes the mysterious and obscure origins of marital guilt, a subject to which the later Green returned repeatedly.

> We go about our daily lives, in great cities, thinking entirely about our personal affairs; perhaps every now and again sparing a thought for our partners, that is, the person we live with, and of course with even greater guilt, of our children. After a time, in married life, it becomes the other partner's fault that they have married one, but the only child, or, as chance may have it, the many children, have had no choice, they are ours, and this is what fixes the guilt on us.

Green the novelist never completely followed Green the theorist's advice. His art was too delicate and ambitious to succumb to formulae, and the reader who still seeks Green out does so for his mysteries and illogic as much as for the frequent beauty of his style.

> A man falls in love because there is something wrong with him. It is not so much a matter of his health as it is of his mental climate; as, in winter one longs for the spring. He gets so that he can't stand being alone. He may imagine he wants children, but he doesn't, at least not as women do. Because once married and with children of his own, he longs to be alone again. A man who falls in love is a sick man, he has a kind of what used to be called green sickness. Before he's in love he's in a weak condition, for which the only prognosis, and he is only too aware of this, is that he will go on living. And, in his invalidism he doesn't feel he can go on living alone. It is not until after his marriage that he really knows how wrong or sick he has been…The love one feels is not made for one but made by one. It comes from a lack in oneself. It is a deficiency, and therefore, a certifiable disease. We are all animals, and therefore, we are continually being attracted. That this attraction should extend to what is called love is a human misfortune cultivated by novelists. It is the horror we feel of ourselves, that is of being alone with ourselves, which draws us to love, but this love should happen only once, and never be repeated, if we have, as we should,

learnt our lesson, which is that we are, all and each one of us, always and always alone.

There can be no doubt that this magnificent and uncompromising declaration is genuine. But we cannot deny that Green was sincere when he said, around the same time, that all of his books are love stories, "inspired by the belief that love is the most absorbing human experience of all and therefore the most hopeful." Green himself passionately blends darkness and light, and his work must always appeal to readers who, like him, are unafraid of life's inevitable contradictions.

Even when Green writes about seemingly mundane topics like office life or simply strolling through a park, there is an immediacy, an intensity at the sentence level that makes Green's writing enjoyable to read. The delightful oddity of everyday existence for all of us is captured in Green. Green described fiction as being as nebulous and open to multiple interpretations as life itself, and it is this giving up of self, this enmeshing of opinions and personalities in the intensity of witnessing life itself with its web of misunderstandings, trivial misunderstandings, fitful and skewed communications, and passing but genuine revelations that strike us as momentous in Green's example, even as heroic, in the way that great dogmas are. It is not an exaggeration to conclude Green embraces the ordinary with all of his being and is a saint of the mundane.

References:

1. Green, Henry. *Blindness.* London, J.M. Dent & Sons Ltd, 1926
2. Green, Henry. *Living.* London, J.M. Dent & Sons Ltd, 1929
3. Green, Henry. *Nothing.* London, Viking, 1950
4. Yorke, Matthew (edited by) *Surviving*: *The Uncollected Writings of Henry Green*. London, Viking, 1992

❒❒❒

1. Ph.D Research Scholar, G.mail: joan.chelladurai@srec.ac.in
2. Associate Professor, Coimbatore Institute of Technology, Coimbatore

The Mastery of Narrative Craft in Alice Munro's Short Stories

–M. Rahman Khan
–Dr. M. Shajahan Sait

The vast majority of Munro's characters make their voices on every page in the story. They supplant the conventional way of life that one obtains from the centre of the community. As a result, they create new opportunities, quite literally creating spaces between dichotomies in which novel events can take place. Irony serves as a device that Munro employs to deconstruct and undermine the conventional understanding of what constitutes reality and the norm.

Abstract

Articles that Munro has written herself, as well as interviews with her that have been conducted by other authors and critics, provide insight into her perspectives on the craft of narrative and the methods of story writing. It is clear that she is not a conventional writer; instead, she focuses on feelings and emotions in her work. In her short stories, Munro never describes any actual events. She is more concerned with conveying the emotions that his characters are experiencing. The written form of the short story is where Munro's particular interest in the genre lies. Short stories written by Alice Munro are excellent examples of narratives. She is a well-known Canadian short story writer, and her skills as a narrator have earned her a lot of praise. Her topics are rife with life experiences and writing about life. The short stories written by Alice Munro make use of a variety of narrative techniques, which are demonstrated in this article.

Keywords: language, Style, metaphor, setting, paradox

Munro has been the accomplished writer since the beginning of his career. She has a vision of life from the very beginning of her literary career. She intends to illustrate her vision by expressing it in a work of fiction. Craftsmanship and a distinct sense of creating characters are very important aspects of the best writers. In her short stories, she employs a peculiar paradoxical method of self-annihilation, which is one of the defining features of her work.

Her short stories contain tales or episodes that are strikingly similar to her own experience and take place in a world that she is familiar with. During an interview with Geoffrey Hancock, she makes the following admission, "In most of my stories, I like to investigate aspects of human behaviour that other people find

puzzling. What we don't understand. What we believe to be taking place, compared to what we understand to be taking place later, and so on." (90)

She says that her stories are based on the concept of isolation. There are ongoing efforts to bring together human beings who live in relative isolation from one another. She tends to write stories that are gloomy or pessimistic. It seems that many of her protagonists feel like they don't belong anywhere. They have the attitude that they are outsiders. The voice of Canada's rural communities can be found in Munro. The author Alice Munro set a number of her short stories in Huron County, which is located in Ontario. The strong regional focus that can be found throughout Munro's fiction is one of the author's most notable characteristics. In her short stories, she often employs the omniscient narrator's voice. It helps to explain things and make sense of the world.

The setting of Munro's stories in a small town is frequently compared to that of the works of authors such as Thomas Hardy, William Faulkner, and R.K. Narayan. Her ability to create characters and stories that are intensely moving has garnered a lot of critical attention, and it is just one of the many aspects of her writing that has done so. She speaks in a manner that is easy to understand and uncomplicated. Her method of writing focuses not on the story's plot or the events that take place in it, but rather on the characters, the setting, and the time. Her tales provide insights into the lives of regular folks through their various characters. The short stories written by Munro captivate the readers not only due to the wealth of emotional detail that they contain, but also due to the variety of techniques, artistry, language, and different concepts that they contain. She employs each of these methods in her story in order to give it a unique flavour. The short stories that she writes have a lot of depth, beauty, and honesty.

The use of language in Munro's works generally occurs on two different levels. The language used by older and more mundane characters makes up the first level of the language. The artist's contextual language is considered to be the second level of language. Munro gives a different colour to her dialogue and texture to her stories by using a variety of jargon and dialectal phrases, particularly Canadian Irishisms. This helps her to create stories with a Canadian Irish flavour. Insofar as Munro's artistic personality is concerned, it is distinguished by paradox and ironic proximity, which makes it possible to view the tension between the extraordinary and the commonplace, as well as between romance and realism. It would appear that the use of languages such as irony and paradox, romance and realism is a part of the struggle of female writers to create a language and artistry which is perfectly suited for the female characters.

The protagonist of "Lives of the Girls and Women," Del Jordan, has the opinion that language is not only an aesthetic problem but also a problem with regard to philosophy. Del is a creative person who has the drive to uncover the underlying structure of things. It is to create order out of disorder and to give the world new

forms through the artistic language that she employs. Not only Del is an excellent reader, but also she is an excellent listener. She establishes connections between the words that are spoken and the ultimate reality of the situation. Uncle Craig suffers a fatal heart attack in the episode "Lives of the Girls and Women."

Del starts to develop a female language. She has come to the conclusion that the social environment is a communicator that cannot be trusted, and that the presumed objective facts do not support the realities. On the other hand, her subjectivity, which she developed through her study of language and literature, is what enables her to bring some order into the world. In later years, she came to the realization that the subjectivity and limitations of language made it potentially harmful. Through her intimate connection with Garnet French, she comes to the realization that the words they speak have the power to destroy.

According to Munro, one of the most important uses of language is to "pierce" characters and the circumstances through which they find themselves entangled. The language that she uses in her short stories conveys the gradations of thought and the profound movements of feeling. The irony, the literary device is used by Munro to depict the implied nature of the characters. It gives her the ability to challenge the dominant culture. Irony serves two purposes simultaneously. The first approach is destructive, while the second is constructive. Her comic characters take the ordinary facts of society and dissect them in order to construct a more accurate perspective of what constitutes the normal and the abnormal in actuality. According to Linda Hutcheon, the deconstructive function is "a kind of critical stance that works to distance, undermine, unmask, relativism, and destabilize" (30). The primary mode of criticism is embodied in this function. It is always concerned with positions that are internally opposed to one another.

The vast majority of Munro's characters make their voices on every page in the story. They supplant the conventional way of life that one obtains from the centre of the community. As a result, they create new opportunities, quite literally creating spaces between dichotomies in which novel events can take place. Irony serves as a device that Munro employs to deconstruct and undermine the conventional understanding of what constitutes reality and the norm.

The protagonists of Munro are able to avoid being exploited and become more detached from the actual experience. The narrators are able to shift their perspective from a victim to an ...observer as a result of this. The short stories "An Ounce of Cure," "Office," "Children Stay," and "Carried Away," among others, all contain a variety of examples of this phenomenon. In "An Ounce of Cure," Munro makes a remark about one of the characters. When the girl's life seems to be spiraling out of control and nothing good is going to happen to her, she finds a way out of the situation by shifting her perspective from one of an active participant to that of an observer and watching how events unfold. This is what it means to be a writer. The scream episode is also recounted through the use of an external focalization, as though the narrator were

attempting to emotionally retreat from a disturbing scene. Alice Munro writes the following about one of the characters in her story "An Ounce of Cure":

> When the girl's circumstances become hopelessly messy, when nothing is going to go right for her, she gets out of it by looking at the way things happen – by changing from a participant to an observer. This … is what a writer does. … I made the glorious leap from being a victim of my own ineptness and self-conscious miseries to being a godlike arranger of patterns and destinies, even if they were all in my head. (Ross 34)

In Munro, the significance of death is something that almost every character must face on a regular basis. It is common to express regret over the loss of a parent, as seen in works such as "Peace of Utrecht," "Images," "Walker Brothers Cowboy," "Ottawa valley," and so on. Mourning those who have been betrayed or abandoned is common. Munro expresses his feelings through words. She maintains her emotional distance from the unfolding events. This is done with the goal of achieving a cathartic release from the burden. A modern sense of personal loss and dispossession and a unique kind of sadness that validates the belief that one's life has been a series of missed opportunities are also characteristics of Munro's gloomy fiction, which may also be defined as those works that manifest a modem sense of personal loss and dispossession.

Munro makes use of irony as a means of coming to terms with the past, knowing that he is on a quest for knowledge and for his own sense of identity. It is accomplished by thinking back on times gone by and then detailing those events in a narrative form within a piece of lamentation writing.

The image of birds is yet another symbol that Munro employs in his work. It has been observed that, in general, female authors have a soft spot in their hearts for all kinds of animals, including cats, flowers, and insects. They employ them in a symbolic capacity for their own sexual activities. When describing the role that women play in society, Munro frequently makes use of metaphors. Through the use of metaphor, she gives the women characters in her stories the ability to define themselves either by the torment they endured as young girls or by the allure of being beautiful and exotic creatures before the eyes of men.

In "Lives of Girls and Women," Munro makes use of the metaphor of birds. After Del in "Lives of Girls and Women" loses her virginity, she begins to observe herself in the mirror as if she were a bird. She stares at the spot in the early morning light where she was seduced and where the peonies, a shrubby plant that is known as a symbol of romance and prosperity, have been broken. The peonies are on the ground, and she can see her blood dropping there. She briefed her mother on the situation involving the blood. I looked over there and saw a cat ripping a bird to pieces. It was a large tiger with stripes, and I have no idea where it came from (LGW 189). The short stories by Munro contain a significant number of examples of images that are typically utilized by female authors. These images celebrate and

evolve as a result of the enlargement of a female anatomy and the function of child bearing. These images include the bell, the egg, the shell, or the funeral director's bier, which has been described as having interiors resembling a womb. Other images include a precious box similar to a jewel case as well as a few small or appealing objects such as a jewel, a pebble, a coin, etc., all of which are utilized by Munro in the most effective manner possible.

The use of particular images and the patterns they create by Munro is very organic. They are an extension of the female anatomy in a very real sense. Her use of landscapes gives the impression that she is physically present. The landscapes in Munro's photographs evoke associations with the female form through the use of alluringly dark and densely bushy areas. The setting of Del Jordan's novel "Lives of Girls and Women" is described as being dark, hot, overgrown with thorny bushes, and crawling with insects that appear to be spinning in galaxies. Munro demonstrates, through her use of images, that the only way the external world can be explained is through a combination of one's physical condition and their internal state.

Her short stories have a very intricate thematic pattern that runs through them all. They are encrypted with a combination of allusions, symbols, and language. They are in competition with visionary moments and are constantly expanding within the confines of the short story form while incorporating gender implications. Within the confines of the format of the short story, Munro's short stories incorporate a number of layered meanings and perspectives from the author's life. She elevates it to the level of a delicate art." It is well known that female authors frequently use the strategy of presenting the interior spaces of women as a physical reality in their fiction, and she does the same thing.

Munro is an experimental writer in the same vein as other contemporary authors. It is clear that the act of writing is keeping her occupied at this moment. She makes use of a variety of facets of self-reflexive narrative, the linguistic pattern of the text, and sometimes even the game-like feature that is characteristic of the genre. It is said that experimental writing is conforming to the restlessness, discontent with the past, and a hostility to the conservative authority, beliefs, values, and conventions that are clearly presented by Munro through her stories. This is said to be the case because experimental writing is said to be in conformity with these feelings.

References:

Ross, Catherine Sheldrick. Alice Munro: A Double Life. Toronto: ECW, 1992. Print.

Geoff Hancock, Canadian Writers at Work: Interviews with Geoff Hancock. Oxford University, 1987.

Hutcheon, Linda A Poetics of Postmodernism: History, Theory, Fiction. Routledge, 2003.

❒❒❒

1. Assistant professor of English, Jamal Mohamed College, (Affiliated to Bharathidasan University), Tiruchirappalli-620020
2. Associate professor, Department of English, Jamal Mohamed College (A), (Affiliated to Bharathidasan University), Tiruchirappalli-620020

Research Article

Mukerjee's Desired Daughter, Tara–In Trishanku's Heaven, to the Pursuit of Home, Identity and Culture in *'Desirable Daughters'*

–P. Vimal Raj
–Dr. N. Ramesh

Being a migrant, she had a strong hold that her migration to the other country could not sever her familial ties with her motherland. The most concerned things we have to see regarding Bharati Mukherjee is, though she has been confessing she is an American, to her interior heart she knows that people from America hadn't have them as their natives.

Abstract

The novel "*Desirable Daughters*" is both lyrical and insightful, sharing observations about family that apply to almost all cultures. Tara, eponymous character of the novel is a self-possessed curious woman, parades a keen quest for identity and space of her own.Being an immigrant and living a traditionally folded Hindu Indian life, she was in a pursuit between two cultures, two homes and two identity andshe felt that are not her own. So inorder to make her own culture, home and identity, rather than given to her by her father and her husband. She enforces as a self-propelled woman by applying her own will and decision about her life. She has made a brave march towards her identity, home and culture in San Francisco. But, her quest of her family made her to realize that, she is neither a better Indian Native nor a hyphenated American as assimilated. Her attempts of assimilating in America is a failure. She was webbed as 'Trishanku's - Heaven' in Hindu Mythic. Likewise, Tara is in the middle of her Dream land 'America' andher desire to be an American and not to be an Indian are neither possible. This is well justified by Bharati Mukherjee in the novel and seems to believe that there are no facile solutions for Tara's quest.

Key Words: Hyphenation – a dual identity, Assimilation – adopting to the new culture and new way of life, Trishanku's heaven – means middle ground or limbo between one's goal or desires and one's current state or possessions.

While defining what Literature is? It may state us as, the study of imaginative works that relate certain aspects of human experience. Literature is, thus, a peculiar discipline because it involves in recreating of

human experience in contemporary content. It is the art of life. “Literature brings us back to the realities of human situation, problems, feelings and relationships”. In a literary script, the real face of the names (real characters names) may be changed by the writer by changing their names but the eyes (theme) content of the work will not be so. The content of the writer may be that, which is performed around his reality, heard, experienced, gathered, attained or animated or represented may be a little altered but a good text will definitely bringout the outcome that a writer preoccupied. The work makes the readers to understand “studying literature gives them insight into real life possibilities”. That is where the quest of every writer’s vision is getting fulfilled in his writing and it is what every literary work is marching for and the writers are heading towards. But the quest won’t be fill in, until the readers souls are full out (satisfied). That is the essence of literature…

In contemporary literary term, the word ‘Migrant’ has become a fancy word in most literary and other fields. Innumerable studies have been attempted to comprehend the term, Migrants, Immigrants and Immigration. The writers and their works are trying to convey their ambivalent position in the world and their oscillating condition between the homeland and host land. Therefore, all the above mentions represent the struggles of immigrant mainly focus on the protagonist’s identity, belongings (Home), cultural conditions that they are with before in homeland and at present with their host land. This Immigrant literature synonymously called with the terms such as Diaspora, exile, expatriate, migrant, transnational, refugee, guest-worker, overseas community and ethnic community. The above terms itself associated with negative connotations like forced displacement, victimization, alienation and loss.

Bharati Mukherjee, an expatriate of Indian origin lived in America, a renowned writer who has contributed much to South Asian literature. She has explored the transformation of immigrant undergoes leaving the physical, cultural and mental space that is the homeland. In *Desirable Daughters*, Tara desires to live in the fantastical world called “The United States”. Therefore, she voluntarily ejects herself out from her traditionally and culturally bounded family and husband, all these where done attain the third world, America – The Dream World. She crosses her cultural bounds, family heritage and homeland’s traditions to become a part in being and becoming “American”.

Being a migrant, she had a strong hold that her migration to the other country could not sever her familial ties with her motherland. The most concerned things we have to see regarding Bharati Mukherjee is, though she has been confessing she is an American, to her interior heart she knows that people from America hadn’t have them as their natives. That is well expressed by Bharati Mukherjee herself in an interview with Bookreporter.com’s Sonia Chopra that,

> I maintain that I am an American writer of Indian origin, not because I'm ashamed of my past, not because I'm betraying or distorting my past, but because my whole adult life has been lived here, and I write about the people who are immigrants going through the process of making a home here… I write in the tradition of immigrant experience rather than nostalgia and expatriation. That is very important.

In the "*Desirable Daughters*", there is a strong fusion of Indianness and Americanness. Through Tara, Mukherjee tries to pin the anxiety of many other immigrants who share a similar kind of feeling like her. Bharati Mukherjee deliberately expressing the possibility of creating a 'third space' into the life of Tara by showing the 'difference' from others in the family. She had a strong desire to remake her life and live it alone.Bharati Mukherjee has attempted to highlight her longingsfor 'Third space', between hyphenation and adaptation through the immigrant protagonist Tara Chatterjee. Tara express her anguish over the subjugation and subordination in her dream country, America.

The story takes place in modern day San Francisco where Tara, the namesake of the Tree-bride,entered into the marriage life with Bishwapriya Chatterjee at 19. She is the youngest of the three beautiful sisters in an affluent family of Bengali Hindu family in Kolkata. Within few years Tara realizes that, she is living in a gated traditional community in Silicon Valley. Bish as a traditionally demanding husband. He hectors and threatens his dreamy and artistic son Rabi. Tara is embraced and felt lack of independence due to her Hindu husband's notion that a woman should not work. which made her to seek divorce. So, Tara divorced her billionaire husband Bish Chatterjee and is raising her fifteen-year son, Rabi (Rabindranath), who is a gay. She started living with a white American lover, Andy who always talks about Hungarian Buddhist maxims.Tara is most removed from her family traditions after her marriage.

Tara, who lives with American dream, her dreamsis restricted by her husband by cultural customs of Brahmanical idea of dharma. But Tara in contrast unable to fulfill the cultural demands on her as a dutiful mother and wife, she tries to pull herself out of it so, she seeks divorce from Bish and has started livingwith a Hungarian lover. In fact, the central theme of the novel is this quest of her, as her traditional Brahmin roots and present American life and its struggle for supremacy. As an individual, she administers her identity as a self-propelled one by applying her own will on decisions about her life.

Tara's two sisters and their respective lifestyles represent the two extremes of the immigrant dream.Tara has two sisters; one is Parvati, the middle sister, had also rebelled in her youth. Her rebelliousness was not unorthodox, as she had

chosen Aurobindo Banerji, a Bengali Brahmin as her lover and married him. Then she relocated to India and established a typical upper-class background to raise her two children. Her life revolved around her two sons, visiting in – laws and her aging parents, devout Hindus who are in ill health. Parvati and her husband Aurobindo calledTara back to India, she jokes, "They thought my 'American adventure' was over. I wonder if it was my beginning" (66). Tara is unwilling to set free her cultural roots and holds on to it strongly and those ideas came in her revelation in the school where she started teaching as a kindergarten teacher as a volunteer.

> "I am not 'Asian' which is reserved for what in outdated textbooks used to be called 'Oriental'. I am all things "(78)
> "I thrive on this invisibility" (78)
> "I feel not just invisible but heroically invisible, a border -crashing claimant of the people's legacies" (79)

The second sister, Padma, elder 'Didi' who lives in New Jersey and she is well known in East Indian artistic circles. She lives a better life in America but with the tradition and culture of India. All these were before Tara's meeting with Chris Dey. Padma had a love affair when she was sixteen with a friend's brother, Ron Dey in Calcutta. As a token of love, she has beard a child of that affair. Ironically, Padma is now the most conventional of the sisters, always dressed in Indian type, eating Indian foods and working at Indian American TV station. She refuses to acknowledge her misalliance.Padma Tara's sister, who also facesthe same sense of migration which brings about a change to the identity of Padma, who finally made New Jersey her home, her land of choice.

Thus, migration plays a crucial role in restructuring individual identities and cultural attitudes and perceptions. Padma has reacted to the clash cultures in a manner essentially different from the path taken by Tara, who says on Padma: "She and Harish socialize almost exclusively with Indians. In the nearly twenty – five years that she has been in the United States, she has become more Indian than when she left Calcutta". (*DD* 94). Bharati rightly opines that, "… Movement involves the remapping of cultural identities (Gender, Identity and Place)". Movement here confronts immigration that has made a drastic change in the life of family of Gangooly. But Tara is in the state of inter-mediatory as "Trishanku's heaven" (middle ground or limbo between one's goal or desires and one's current state of possessions) who cannot assimilate like Padma. Inorder to emphasize her femininity and to reconstruct and redefine her identity, Tara leaves her husband for a life of her own. chosen a school for her son which is 'slanted to arts' (153), a way further shared her room with her Hungarian lover, Andy.

Bharati is crashed into a balance of the past and the present through a blend of cultural tradition and modernity. She can espouse and lodge herself in both to her traditional Indian way of life and to her newly adopted American tenet. But she does not twig to the value systems of the neither of these ways of life. She moves on both the lives as – the Indian and the American. She vacillates between two lives: "maybe I really was between two lives…" all the above was well achieved over her character Tara, who outwardly severed her links with traditionbut still remain tied to her native country. She is influenced by cultural customs and traditions but also rooted most to the modern zeitgeist. That so what Bharati Mukherjee calls 'Tara a cosmopolitan character without focus'. The charm of Tara was well expressed by Rashmi Gaur as,

> Tara represents the dilemma of an average immigrant. The demands of tradition and their hold on one's psyche are never ultimately rejected… she tries to create a personal space for herself through compromise. Reje-ction of her husband and associated security is a bold step for an Indian girl of Tara's background… Despite an obvious diffidence, she questions, at least for some time, traditional notions and shuns the cliched answers provided by conventions. She wants to redefine herself and create fresh gender relations. (Indian Journal of English Studies: 209)

But in the case of Bish Chatterjee, Tara's husband it is different, he is an upholder of culture and tradition. He prefers the values of an imagined past than the contemporary life. He was a successful business man in Silicon Valley and economically possessed in the country to survive. He wants a wife to be stick with his culture and tradition of life and a son of traditional outlook: "Bish could not tolerate a son who was not perfect replica of himself; hardworking, respectful, brilliant, soberly, sociable. Effortlessly athletic" (154) but very contradict to his expectations, his wife divorced him and his son has become a gay that shocks him. After his five years of departing with his wife and son. Tara and Rabi have changed beyond recognition. But Bish had not changed at all. Through the above Mukherjee represents the demarcation of Bish Chatterjee. As a Brahmin, he is incapable to hold his dharma (way of life according to Hindu mythology). According to Psychoanalyst Sudhir Kakar, "Dharma is the means through which man approaches the desired goal of human life" (Kakar 37). Bish sense the failure as a husband and a father, becausehe has not played his role of householder by looking after his wife and son. So, it seems to be his failure to his Hindu dharma.

Tara, as an eponymous character and with a sense of history and a long-nurtured observation on the Indo-American community, has created the absorbing tale of two rapidly changing cultures and the flash points where they intersect. She

states the issues of culture, identity and familial loyalty in its honest portrayal of the American immigrant experience, all the able daughters of desire, follow the diverging paths in the changing world. Through Tara and other female characterizations Bharati Mukherjee reveals a fine equilibrium between Indian traditionalism and the concept of western freedom. As a voice of Bharati Mukherjee, Tara reconsiders the idea of spilt between desire and reason, dependent security and autonomy, social and psychic identity.

All her family secrecy revealed in the episode of Chris Dey. The real Chris Dey was murdered by a criminal gang member Abbas Sattar Hai and he came as Chris Dey to meet Tara. Through which Tara started to investigate all the actualities that she really does not know about her sisters and all the discoveries of her family members left her into pandemonium and elevatednumerous questions such as,could her sister have a child out of wedlock? Were her parents instrumental in keeping the entire affair secret? Is she the only one who doesn't know all these secrets? Tara gears in finding the truth, where she explores the nature of familial relationships and learns that even in the closest relationships, humans are often true only to themselves, they will never untie their entire truth. Bharati Mukherjee does not shy away to portray her characters as three-dimensional human beings with frailties, needs and desires. These makes Tara was left in the Limbo state, "Trishanku's - Heaven".

Tara is not completely free from her long deep-seatedpreconceptions regarding the culture and tradition. She tries to come out of the mindset gradually and wish to live an American life. For which she made many contradictory moves, she shocked at her sister's doubtful adultery, called her husband's name after divorce, as an Indian mother she knows, she can't slap her son, she is quite comfortable while mentioning her lovers (in plural) names, and knowing her son being a gay, preferring western clothes and food. Later by finding her family's mysteries, she abled her identity is a construct that is largely shaped by her Indian affiliations although mediated through her acquired American consciousness. Through Tara, Bharati Mukherjee is voicing the readers that, identity cannot be achieved by serving her Indian filiations and affiliations. Tara at the end seems to believe that there are no facile solutions to her quest. This proves Mukherjee's Tara is in "Trishanku's – Heaven", limbo between one's goal or desire and one's current state or possessions.

When Tara's post- divorce home is destroyed in a terrorist bombing, Bish, Rabi and Tara fortunately survived. Bish was badly injured and need months of treatment to recover. The Bomb blast signifies the end of Tara's Californian free-spirited life style. Bish carried Tara through the flames, although of his serious burn injuries on his legs and feet. Tara's realization of their cultural bond reawakens

Tara's love for Bish. Tara's life led her to realize that, one cannot totally cut oneself off from one's traditions. Tara's chapter of revolt came to an end and she had returned to the fold. Tara, visits her parents at their home on the banks of the sacred river Ganga at Rishikesh. Though her mother has Parkinson's disease, she refused to treat her in U.S. instead her mother wants to stay his last days with her husband and home. Through her parents Tara learns the wisdom of agreeing in tradition and following to Hindu Dharma.

'Bharati Mukherjee intends her writings will change America. So, she adds the minority point of view, not clear-cut assimilation but transformation, a fluid interaction between origin and modernity (hyphening and assimilating in literal point) she had a belief that if a nation accepts and acknowledge immigrants as their native nationals, then there will be no hyphenation but assimilation, she accepts assimilation because it provides a sense of belongings and satisfaction on having achieved the transformation. But she neglects hyphenation because it senses the feeling of alienation, "I am sick of feeling an Alien" the statement of Bharati means everything of her to us.

References:

Meer, Ameena. Interview. October 1, 1989. https://bombmagazine.org/articles/bharati - mukherjee/

Chopra, Sonia. Interview. March 28, 2002. http://www.bookreporter.com/authours/au-mukherjee-bharati.asp

Mukherjee, Bharati. The Desirable Daughters. New Delhi: Rupa & Co, 2002.

"American Dreamer." Mother Jones. Jan/Feb 1997http:/www.motherjones.com/ commentatary/columns/1997/01/mukherje e.html >Panicker, Ayyappa. "Vivela Differences! Imperialism, Colonialism, Post-Colonialism: Challenges to Cultural Plurality. Lit Crit:XXXI. Number1, June 2005."

Gaur, Rashmi. "Gender Relations and Cross Cultural Transactions in Bharati Mukherjee's Desirable Daughters", Indian Journal of English Studies, Vol, XLI, 2003Kane, P.V. History of the Dharmasastra. Poona: Bhandarkar Oriental Research Institute, 1941.

❏❏❏

1. Ph.D. Scholar, Government Arts and Science College, Pappireddipatti, Dharmapuri (DT), Tamilnadu.
2. Asst Prof. Department of English, Government Arts and Science College, Pappireddipatti, Dharmapuri (DT), Tamilnadu.

Research Article

Female Sensibility and Her Struggle for Existence

–S. Lilly
–Dr. Sivachandran

In* Cry the Peacock*; Desai has clearly emphasis Maya, as the most sensitive woman suffering from neurotic fears and marital disharmony. Her psychosis growth, development and crisis are depicted in all the three parts of the novel. Maya has developed a father - fixation and after her marriage finds Gautama, a poor substitute.

Abstract

Indian writing in English emerged in the mid-nineteenth century Raja Ram Mohan Roy (1774-1833), who was the first major Indian to write in English. He attracted the notice of both Indians and Englishman. After this, English language in India became a powerful medium of expression and various forms of literature began to flourish. Many books already existing in the regional languages were also translated into English. Ancient India's religious and social thoughts were put in the foreign language. Some of the famous writers won worldwide recognition through English language. Indian writing in English is gradually creating its own dominant way among the world literature after the independence of the country. Post-colonial Indian English writers are emerging with their new idea which makes Indian literature as a prominent literature. These Indian English writers can be simply called by the term Indo-Anglian writers. Indian writers have proved themselves particularly in the field of fiction. A novel contains close imitation to human life. Novel has many advantages. Novel does not expect the reader to devote so much attention like epic or philosophy or history or religious books. This is what the novel deals with contemporary life scenes and characters of ordinary life.

The novel, *Cry the Peacock* depicts the life and death struggle of Maya with her neurotic personality. The thematic nexus of the novel is in Maya's neurosis arising out of several reasons such as her growth and development without maternal love. Her neurosis increases as a result of her father's conflict with her brother, Arjuna. As a child, she does not play with the children of her age group. This too enhances her neurosis. Another strong reason of her neurosis is her

encounter with the albino in the temple and his horoscope reading about her marriage.

Key Words: Feminine Sensibility, Love and Marriage**,** Psychological Imbalance and Female Impersonation.

Introduction: Anita Desai's one of the much acclaimed novel *Cry the Peacock* successfully attracts the curiosity of the readers. The novel opens with the death of the protagonist Maya's dog, Toto. The dog and its death are both symbolic in many ways. The end of the dog symbolizes the constant presence of death in human life. The proximity to death terrifies Maya, and she is obsessed with it. She is childless, and her dog stands for a child to her, fulfilling her need for the love of a baby and her eco-feminine emotional response. When her husband - Gautama returns home, he sends away the dog's body in the Municipal van. The cold indifference showed by him to the death of the dog symbolizes his unawareness of his wife's feminine feelings. It also shows the lack of genuine understanding and communications between the husband and the wife where the real struggle have started.

The Main Theme: In *Cry the Peacock*; Desai has clearly emphasis Maya, as the most sensitive woman suffering from neurotic fears and marital disharmony. Her psychosis growth, development and crisis are depicted in all the three parts of the novel. Maya has developed a father - fixation and after her marriage finds Gautama, a poor substitute. Gautama is not a loving husband but a father substitute. He proves a medium to connect with her father in her unconscious mind. Clearly there is very little in common and they simply maintain matrimonial bonds. To Maya, freedom is impossible unless she removes her impression of Gautama in her inner feminine consciousness. Maya strikes at Gautama's reflection in the mirror and tries to kill him. This shows a gradual transformation of her character into a criminal. Nevertheless the novelist dramatizes the character and the situation only to give a clear shape to the inner self of Maya and hence she proves a medium for refracting experience. Maya seems to be self-seeking for a change in life. She connects her present with the past and tries to go into a sheltered life. Efforts by Gautama to heal up her internal wounds fail as her consciousness gives it a dramatic turn. Her continuous longing for something fails to be establish total communication with reality in life. Maya continues to suffer from the feeling of suffocation and dissociation of her inner self even after the sugarcoated pills of relief given to her by Gautama.

Maya is preoccupied with the prophecy of disaster and in the very beginning longs for the company of her husband soon after the death of Toto; "She sat there, sobbing, and waiting for her husband to come home. Now and then she went out into the verandah and looked to see if he were coming up the drive which lay shriveling, melting and then shriveling again, like molten lead in a grove cut into earth." Maya wants to revert to her childhood memories to escape her present. In this crisis, she usually resorts to crying and bursting into a lot of pillow beating. In

her such efforts her consciousness grabs sensations of colour, smell or sound. The message of loneliness and the spell of darkness separate both Maya and Gautama. Even the sky does not seem to give her an inescapable fact of life; she seeks meaning in a dark universe. The Urdu couplet quoted by Gautama does not heal up her wounds. This does not redeem her loneliness; it simply goes underlines the irony of her position still longing for something. Her experience of love appears to be short - lived and her hopes evaporate.

The cry of Maya frustrates her within the world appears to her 'like a toy specially made for me, painted in my favorite colours, set moving to my favorite tunes.' Similar to the monsoon peacock dancing madly and crying for its lover and finally killing itself in a frenzy of love, Maya's heart cracks up with the presumption of some hopelessness. She admits: "When heard one cry at the stillness of night, its hoarse, heart-torn voice pierced my white flesh and plunged in its knife to my palpitating heart." "Lover, I die. Now that I understand their call I wept for them, and wept for myself, knowing their words to be mine (23)." Even then Maya controls herself and watches her other self which dominates at the end. The dance within her becomes more and more feverish. She is no longer sane bound by doubts and dread and the atmosphere around her indicates sub-human existence.

Maya's hopelessness spreads and becomes universal. Her neurosis is a somewhat collective and poses a definite danger to the identity of woman altogether. The mental agonies and the tensions in her mind show miseries of her existence and narrow down the poetic beauty of her life. She continues to lead an explosive life and comments on her unsuccessful married life: "It was discouraging to reflect on how much in our marriage was based upon a nobility force upon as from outside, and therefore, neither true not lasting. It was broken repeatedly, and repeatedly, the pieces were picked up and put together again as of a sacred icon, with which, out of the pettiest of the superstition, we could not sear to part." Whenever she discloses her mind to Gautama he does not appreciate her, he does not understand her, on th contrary he rejects the things outright. He calls her neurotic, a spoiled baby and her life a fairy tale.

Maya remains a lonely creature. Her loneliness, her aching heart and slow relapse of psyche make her an existentialist character. Maya herself admits the Torture, guilt, dread, imprisonment, these were the four walls of my private hell one that no one could survive in long death was certain and on her style Anita Desai says: "My writing is an effort to discover, underline, and convey the significance of things" (41).

For conveying the significance of things some Indian writers use irony, metaphysics, humanism and heroic postures, but Desai probes the psychic dimensions of her characters. With this existential dimension, her overall vision is one of morbidity. Maya's predicament is the prediction of the astrologer. Though she is a creature of song, dance and flower, she goes beyond her control and as a

result becomes mad. Therefore, R.S. Sharma is of the view that "most of her problems as a fiction writer started with her insistence on too much style on too small a canvas." In almost all her novels Anita Desai uses words for their own sake. She displays her skill in using words for music and magic.

The rhetoric in this novel contains lyricism and its repetition of words. Desai looks like a poet while describing the scorching and oppressive odour of Toto: "once sweet, once loved, then suddenly, rotten and repulsive" The light in the verandah is compared with "an inward glow as of marble at sunset," to Maya "star - like flowers that had been pink and red in day light" appear at night "white and strongly scented." There is nothing abstract and everything is concrete with images. Sometimes Maya deviates from her thoughts of anguish which rose, every now and then, like words and awake from dreams and rise out of their trees amidst great commotion circle a while, then settle again, on their branches.

The expression is forceful, violent, diseased and evil and the structure of the sentences is abrupt and broken. There are exclamatory and interrogatory phrases. The mode of narration is indirect. In a similar way, the mental makeup of Gautama and Maya find expression: "Not at all, like my family or myself, Maya.

Generally Desai uses the device of interior monologue. In such case the sentences are not logically linked. They are incoherent and disjointed:

> "Are you certain of your beliefs - their rightness? I am not. After all, what if we are wrong, we Hindus? What if there is a Christian hell? Oh, I do hate to think of it," "I babbled, crazed by fear." "I should not like to die and find myself in purgatory, should you, Gautama?" Desai use the device of repetition to achieve the rhythmic beauty of a lyric: "of course you are still so young, so very young." For giving Immediacy and dramatic effect Desai deploys third person narration. The past events appear to take place in present time "…he closes his eyes because he cannot bear the flat, flat lawn, the white, white house, the many, many people …a jugged line of azure blue amidst coils of silver mist…quiet winter." Desai uses native words to create purely Indian atmosphere: "Pia, Pia, they say, Lover, Lover, Mio, Mio, 1 die, I die" (61).

Thus, *Cry, the Peacock* has a number of good images and metaphorical expressions. Desai has nowhere in the novel a sense of humour or irony as such her prose style degenerates here and there, and it appears stereotyped. Structure is one of the important constituents in fiction. It is as important as the backbone to a human body. Structure is supposed to lend unity to a work of fiction. The critic Miriam Allott discusses structural problems under three heads - unity and coherence, plot and story and the time - factor. It is defined story as a narrative of events arranged in their time sequence and the plot is also a narrative of events, the emphasis falling on casualty. Here is a study of the 'pattern' of *Cry, the Peacock*:

It is a psychological novel of a hypersensitive, childhood, young woman, Maya. She is obsessed with a childhood prophecy of disaster. She tries to kill her husband in a fit of frenzy. She goes mad and finally kills herself.

This novel is divided into three parts dealing with origin, development and the end of her neurosis. Part I and Ill are very brief and part II forms the core of the novel. The opening and the concluding parts describe Maya's excited conditions and are rendered in third person narration. In part I she is overwhelmed with sorrow on the death of her dead dog, Toto and as such she is unable to express her inner feelings. In part II she is lost in herself and is not able to tell her story. Through stream of consciousness she discloses the origin and development of her miseries in first person narrative. The past and the present are so mixed up that shows the temperamental incompatibility of the couple. The couple's alienation is at the root of the tragedy, which is the indicative in the opening section. The death motif is built in the very structure of the novel.

Conclusion: This image of the albino astrologer creates a sense of fear and void in her. The cry of the peacocks deepens her anxiety and she goes on with her agonized soul chapter after chapter. Her neurosis goes on mounting like waves till she has no hold on her. In this fit of insanity she argues with her brother Arjuna that her own death was not necessary and it might be Gautama's as "the man had no contact with the world or with me." At once she decides to get rid of him and gets him agreed to have a stroll with her on the roof. There she engages him and hurls him over the parapet down to death. Her insanity takes her own life when she jumps off the balcony of her ancestral house in Lucknow three days after the death of Gautama.

The action conducted in two places - Delhi and Lucknow. There are references to other localities, but the inner space preoccupies the novelist's attention. The novel is sound from the structural point of view right from the beginning to the end. *Cry, the Peacock* thus, is something a technical triumph. Desai's ability to use the English language in a uniquely individual fashion is amply demonstrated by this novel. Her careful artistry is illustrated by her intelligent mixing of the first person narrative with third person rendering of the story for the purpose of contrast.

References:

Jotiyan, Zamba. Alienation is the Root of Tragedy: Predicament of Women in the Typical Indian Society, New Delhi: Creative Books, 2000.

Almadi, Mala. Desai's Novels and Her Interior Monologue, New Delhi: Creative Books, 1997.

Anita Desai's Psychological Imbalanced Characters, New Delhi: Prestige Books, 2002.

❒❒❒

1. Ph. D. Scholar P/T, Edayathangudi G. S. Pillay Arts & Science College, Nagapatinam (Dt), (Affiliated to Bharathidasan University), Tamilnadu

2. Research Supervisor and Assistant Professor of English, E. G. S. Pillay College (Affiliated to Bharathidasan University), Trichirapalli Edayathangudi Nagapattinam Tamilnadu India.

Research Article

Feminism and Theatre in Alice Childress's *Trouble in Mind*

–R. Sridevi
–Dr. V. Kundhavi

According to Hornby, there are five different sorts of melodrama. These include the ceremony inside the play, role playing within the play, liturgy and real-life reference, self-reference, and the play within the play. The play within the play is one of the dominating symbols in Trouble in Mind. The writer has an incredible ability that enables him to produce a melodrama that is successful. Childress sheds light on the manner in which both white men and black men treat black women in a culture that is controlled.

Abstract

The Black man was victimized by racism and inequality and he was a white enslaved worker. Black women faced racism, sexism, social subjugation, and humiliation in the American society which was patriarchal. A racist and sexist society ensnared the black woman and often the White men exploited her. Working in the fields with men, the black woman faced subjugated. Black woman was tortured, starved, and flogged. African Americans have been in American popular culture and theatre from the early years of the republic. But they played servants and farcical characters. Alice Childress, Sonia Sanchez, Ntozake Shange, and Lynn Nottage have portrayed black heroines onstage. They shattered the preconceived notions of what a black African woman should look like, which had been developed by their male counterparts. This paper scrutinizes how the black women was marginalized personally and professionally in the society through Alice Childress's Trouble in Mind.

Keywords: black women, marginalized, patriarchal society, theatre

Alice Childress is an African American woman who has utilized her talent as a Playwright to influence the change that has occurred around the globe and to adjust the image of the human being as being either black or white. During the 1940s, Childress established herself as a successful actor, dramatist, writer, essayist, columnist, speaker, and theatrical consultant. Childress was a pioneer in the field of black women's playwriting in the United States and is considered an experienced veteran playwright. Over the course of her playwriting career, which spans over

forty years, she has tried her hand at writing plays that are sociopolitical, romantic, historical, and feminist in nature. Childress, who has devoted her life to writing, has made several earnest attempts to uncover the 'truth' about black people in general and black women in particular, which has been concealed, repressed, and ignored for a long time.

Women, and more specifically women of colour, have historically been barred from participating in the dramatic heritage of the American theatre. These women, in contrast to their male counterparts, have produced a number of different depictions of black heroines on the stage in the United States. According to what Elizabeth Brown-Guillory writes in her book, "Their Place on the Stage," says, "The portraits of black life simply are not complete without the unique perspectives of women peopling their plays with heroines who are challenging, innovative and multidimensional, Childress, Hansberry and Shange frontrunners in the development of black playwriting and, thus, warrant serious critical study." (28)

In fact, Childress' own background resembles that of her heroine in *Florence, Mojo, Trouble in Mind, Wedding Band* and particularly *Wine in the Wilderness*. In her essay, "Knowing the Human Conditions" Childress reveals, "I was raised in Harlem by very poor people. My grandmother, who went to fifth grade in the Jim Crow school system of South Carolina, inspired me to observe what was around me and write about it without false pride or shame" (10). Despite the fact that she portrayed her protagonists as destitute and hopeless, she created characters that are morally strong, fragile, yet resilient. The truthful representation of these women by Childress demonstrates that they are subject to 'double marginalization' within the context of both the white and the black communities. These women are forced to battle not just their own group but also the white population in their own countries.

The narrative of *Florence* is continued about twenty years later in the novel titled *Trouble in Mind*. According to Sue-Ellen Case's observations, "In two plays, Florence and Trouble in Mind, Alice Childress dramatizes the oppression the black actor endures within her profession"(101). The main character of this drama is an African American woman called Wiletta Mayer, and she is in her middle years. Her way of thinking is quite similar to that of Mama Whitney. In the same vein as *Florence*, the play *Trouble in Mind* deals with issues such as "Racial stereotyping both, in and outside of the theater, the presumptuousness and insensitivity of white liberals, and blacks' struggle for equality"(28).

Childress created both plays during her time spent as an active member of the American Negro theatre, where she participated as a writer, actor, director, and advocate for equitable standards. During this time period, she was subjected to the so-called "double marginalization" because of the fact that she was both a woman and a person of colour, which can be seen mirrored in both of these plays.

She had several challenges during her career as an actor, including challenges connected to her gender as well as challenges connected to her race. Childress examines in this passage the connection that exists between the theatre in its capacity as a professional place and racial performances.

Childress names William Shakespeare as her favourite writer, and she models her own play-within-the-play manipulation after the way Shakespeare did it. Like Shakespeare's "The Mousetrap" in Hamlet, Childress uses the 'inset' type of a play within a play, one in which the performance is set apart from the main action with the cast of the primary play recognizing the existence of a secondary play. In her play, *Trouble in Mind*, she used melodrama as the vehicle to shed light on the subjugation of women, and more notably of black women.

According to Hornby, there are five different sorts of melodrama. These include the ceremony inside the play, role playing within the play, liturgy and real-life reference, self-reference, and the play within the play. The play within the play is one of the dominating symbols in Trouble in Mind. The writer has an incredible ability that enables him to produce a melodrama that is successful. Childress sheds light on the manner in which both white men and black men treat black women in a culture that is controlled. It is expressive of its society's profound cynicism about life, and the play inside the play is employed as a means to expose the reality. In the play, *Trouble in Mind*, a group of white and black performers are seen working together in a Broadway theatre to perfect their performance of an anti-lynching play titled "Chaos in Belleville." Therefore, the play inside the play continues to exist as a symbol of the struggle of black people in the United States. Childress hopes that the audience will have a better understanding of the extent of racism, misogyny, and poverty in the United States. This play inside a play is referred to be a 'secret symbol,' and it illustrates the position of African Americans in American culture as the 'step children.'

Melodrama is the vehicle through which Childress demonstrates how black women manage to make it in the racist and sexist American culture. The first performance of the play took place on November 4, 1955, in New York City, at the Greenwich Mews Theater. It was her first play, and it was played Off-Broadway for the first time. A total of ninety-one performances were given. Childress was given the chance to produce a play on Broadway, but with the condition that the producer allows her to alter the screenplay. Childress encountered a great deal of opposition in putting on the play, including the following:

> Though *Trouble in Mind* was award-winning and a hit with critics and audiences at the time, the production was plagued with problems, including a clash between the original director and cast that prompted Childress to take his place. This is ironic, considering Trouble in Mind is about the

troubled production of a fictional, anti-lynching Broadway play, Chaos in Belleville.(19)

In the United States, white people had a monopoly on the theatrical industry. Childress faces discrimination from the mostly white culture due to the fact that she is both a woman and a person of colour. The action of the play takes place at a theatre on Broadway in New York City in the year 1957. It shows a group of white and black performers practicing a play called "Chaos in Belleville," which is an anti-lynching drama. This is a made-up story about a play. A person of white ethnicity is the creator of this work. A black slave by the name of Job was put to death in the story "Chaos in Belleville" for exercising his right to vote. As Judge Willis was transporting him to the prison so that he could vote, he was shot down and killed. As a result of Job's passing, the Judge comes to the conclusion that the whole white community is to blame for Job's passing. They come to the conclusion that 'lynching is bad' as a result of this.

A person or an entire group of people can be politically marginalized when they are denied equal access to the formal political control structure as well as the right to participate in the decision-making process in accordance with the law. This deprives them of the ability to fully exercise their democratic rights. Because of this, they are forced into a position of subordination and dependence on the politically dominant group or groups in society. Because of this, they are excluded from the political structure that is generally accepted. They are pushed to the margins of society and given a negligible voice in politics, both of which are primarily designed to serve the interests of those already in power or those who have influence. Blacks are denied voting rights. And even black males receive right of voting, but black women do not. As a result, black women have significant political disadvantages. Childress demonstrates in this way how black women are denied access to political power.

Wiletta Mayer, who is a middle-aged actress, enters on the stage at the beginning of Scene I of Act I with a handbag and a screenplay. Her attitude is described as being spacious, and she exudes attractiveness. She is approached by Henry, an old black doorman, who inquires, "You singin' in this new show?" (50). This demonstrates that, much like Mrs. Carter in Florence, Henry believes that black women can only sing in the play, and that he cannot expect her to succeed in the profession of acting because of this belief. Even though he is black, he does not consider a black woman to be an actor since he lives in a world that is dominated by men. It indicates that he disregards the needs of black women. Wiletta responds, "Well, I'm not going to tell you my age," after Henry reveals to her that he is seventy years old. "A lady who is willing to reveal her age is willing to reveal everything." (51) This demonstrates that a woman only has significance in the

acting profession when she is a young actress. People consider her nothing more than a commodity. They see her as something that can provide them with sexual gratification. Women are often reduced to the role of decorative elements or attractive objects in television shows, films, plays, and other forms of entertainment. She has not played any significant roles in any productions. She is portrayed in a manner that would pique the audience's sexual interest and make them want to have sexual relations with her.

When a woman reaches a certain age, she is no longer considered for acting roles. This industry gives older women less consideration than younger ones. Childress has never disclosed her age; one of the reasons she has given for her decision is the following:

> I have tried with all I have within me to fight against several aspects in society..." In particular, I believe that women are discriminated against based on their age. It is being utilised against males more so today than it was in the past, but women in especially, and if you are black in this culture, and if you are a woman in this society, you will discover that too much of society is pitched against you, you know, stacked against you. (XI)

Childress faced what is known as "double marginalization" due to the fact that she was both a woman and a person of colour. According to her, women are discriminated against based on their age. She claims that the fact that she is both a black lady and an elderly person makes society biased and prejudiced against her. The black women battle against this form of 'double marginalization,' much as Wiletta does in *Trouble in Mind*. Wiletta is conscious of the disrespect shown to black women by white liberals and is prepared to fight against the dominant white ideology that is now in place. Wiletta, who is well aware of the challenges faced by blacks in the entertainment business, tries to urge John to pursue a career in a different field, such as medicine or the practice of law, rather than entering the acting field. Wiletta is aware of the facts that theatre is nothing more than "show business," and that it is very difficult for a black performer to achieve popularity.

Childress' characters face adversity and suffering, yet they are never rendered helpless or broken. Instead, they emerge as self-assured, positive, and proud individuals. Millie Davis is a fashionable lady, but she has to perform the role of a nanny despite the fact that she is 35 years old. Wiletta is also made to play the character of a subservient woman. They have no choice but to embrace it if they want to continue living. Millie suffers at the hands of both the whites and the blacks in the community. When he says so, the white director Manners implies that he does not think her to be worthy of paying attention.

The character of Wiletta seems to have a dual personality. When she is with John, she considers theatre to be a business, but when she is among other people,

she considers it to be an art. She makes misleading statements in order to get the approval of the white management. She maintains her close relationship with Manners by berating him for being careless about his physical wellbeing. However, she erupts in anger if Manners belittles the black woman that she is. When Manners takes Judy into the dressing room to provide advice when she repeatedly makes errors, but when he reproaches Wiletta in front of everyone for her abrasive acting, this reveals that Manners marginalizes black women like Wiletta. It is an illustration of Gayatri Spivak's subalternity theory. Judy, who is white and a woman, is able to, to a greater or lesser extent, enjoy the freedom from the patriarchal rule that Wiletta and Millie, who are black, are unable to.

Childress agrees with Spivak that not all women are the same, and she cites her as an influence. Even within women, there are many differences that may be seen with reference to social position, skin colour, and religious belief. Wiletta is not given any encouragement by Sheldon; rather, he encourages her to 'take low' and functions as a catalyst. Therefore, the black woman is seen to be 'double ostracized' by both the white community and the black community simultaneously. By contrasting the lives of the actual persons with the parts they play in "Chaos in Belleville,"

Childress aims to demonstrate the pitiful predicament of black people in general and black women in particular. She does this by comparing the two sets of characters. She exposes the emptiness that both white and black men have in their conceptions of what black women are like. Manners, Sheldon, and John humiliate Wiletta, whilst Millie is humiliated by Wiletta herself due to the fact that she is financially less successful than Wiletta. Wiletta's conduct toward those who are below her in terms of race, class, or gender does not become more mellow or moderate as a result of the insults and humiliations meted out to her by those who are higher up in the social hierarchy than she is. Thus the paper concludes that the concept of double marginalization' is brought up throughout the play *Trouble in Mind* by Childress.

References:

Brown-Guillory, Elizabeth. *Their Place on the Stage: Black Women Playwrights in America*

Greenwood , 1988.

Case, Sue-Ellen. *Feminism and Theater*. Methuen, 1988.

Childress, Alice. "Knowing the Human Condition," Black American Literature and Humanism, ed., R. Baxter Miller. The UP of Kentucky, 1981.

"Trouble in Mind". Drama for Students. Encyclopedia.com. Web.19 Aug. 2018

❐❐❐

1. Ph. D Part-time Scholar, Department of English, Govt. Arts college (A), Salem-636007

2. Rtd. Associate Professor, Guide and Supervisor, Govt. Arts College (A), Salem-636007

Struggle Towards Empowerment in Hanan al-Shaykh's *Women of Sand and Myrrh*

–S. Farhana Zabeen

Rashid took care of Tamr and her son and did not permit her to go to the institute to study and the reason she realised later that: "The car was one of the reasons why at first I hadn't been allowed to go to the institute to learn how to read and write" (84). He did not want to hire a car to take Tamr to go the institute and allow her to go in her friend's car.

Abstract

For centuries, women all over the world have been subjected to patriarchy and gender discrimination in the name of culture, custom, or religion. Even before 1400 years ago, the introduction of Islam improved the position of women by granting them right to property, the right to education, and other privileges. They continue to encounter challenges and strive for their freedom in various ways. Hanan al-Shaykh, a Lebanese novelist brings out the plight of Arabian women who were given every luxury except freedom and their urge to break their golden cage and spread their wings. One such novel is *Women of Sand and Myrrh* (1989). All the four women protagonists - Suha, Tamr, Suzanne and Nur, describe their loveless lives inside their families. Women are solely considered as objects of sex and are confined to their houses. This article attempts to throw light on Tamr's struggle towards empowerment and success.

Keywords: Patriarchy, Freedom, Educational Rights, Financial Rights, Property Rights

Women in Arab countries have throughout history experienced gender discrimination and have been subject to various restrictions pertaining to their freedom and basic rights. In the earlier days the new born girl child is buried alive. By the birth of Islam, the status of women got improved and seen as individuals. Marriage is fixed as contract and the consent of women is mandatory. Bride price became a nuptial gift which the women has right to keep it as her personal property. As years passed, there is rise of patriarchy and women were oppressed.

An American psychologist Julian Rappaport introduced the concept of empowerment into social

work and social psychiatry. It is said about him as: "Julian Rappaport (1981) developed the concept theoretically and presented it as a world-view that includes a social policy and an approach to the solution of social problems stemming from powerlessness" (Sadan 73). In September 2020 also it is seen that "Citizens gather in Cotonou to march for the rights of women and girls" (Gender). Especially women have limitations everywhere in a patriarchal society and their thirst to break the chains from which the family and society had bounded them that prevails everywhere.

Hanan al-Shaykh's *Women of Sand and Myrrh* is based on the four women protagonists – Suha, Tamr, Suzanne and Nur. All the characters narrate their loveless life within the family in the unnamed desert where women are seen only as the object of sex and they are confined to their homes. Living with her husband Basem and son Umar, Suha is not happy and wanted to return to her home country Lebanon as she feels lonely. Suha is the connecting chord to all the characters. Living with her husband David and three children, Suzanne has affairs with Maaz, a local man. Being an American, she wants to stay in the desert and does not want to return to her country with her husband when he lost his job.

Nur, being a native of desert, is very much interested in travelling abroad and leaves all the responsibility to the servants to take care of everything which her husband Saleh does not like. Once she could not find her passport and understands that Saleh must have kept her passport hidden so that she could not travel. Tamr, being a native of the desert, divorced twice, living under the care of her brother Rashid who wishes Tamr to remarry but she dreams of something else. All look for certain freedom in their lives. As we see Suha, Suzanne, Nur and Tamr belong to different background and in need of independence irrespective of their religion. Tamr is different from other three protagonists who does not want to leave the country but struggles to gain financial freedom. It is right to quote,

> The process of empowerment is incremental and involves changes to multiple aspects of a woman's life. Furthermore, women are not a homogenous group, but a diverse group of people who experience empowerment and gender relations differently based on the context in which they live, their social relations (i.e., class, age, marital status), and their socially designated identities (i.e., wife, daughter, co-worker). (Sebstad 2)

This paper focusses on the character of Tamr.

Tamr was just twelve years old and did not even attain puberty when she got married to Ibrahim. The consent of woman is mandatory for her wedding and the following verse number 19 in chapter 4 make it clear for men: "O ye who believe! Ye are forbidden to inherit / Women against their will. / Nor should ye treat them

with harshness,…" (Holy Qur'an 213). Tamr does not even know it was her wedding and was scared when she comes to know about it: "'Mother, mother!' I cried. 'Are you marrying me off? I'm not even a woman yet!'" (Al -Shaykh 117). It did not matter to anyone. She was frightened when she was left alone with Ibrahim. She screamed and tried to run away from the room every time she was left with him but found all the rooms were locked.

Tamr was playing with the neighbour's daughters forgetting she was married. She was not allowed to play: "My husband's mother, Reehan, disapproved of my game and frowned into the faces of the little neighbours" (122) so they did not visit to amuse her. She did not want to live or adapt with the new family leaving her own mother and aunt. Tamr says, "Reehan and her daughter wore stiff expressions and I didn't once see them laughing" (123). On attaining puberty, she did not reveal it until it was found out that Ibrahim had few headcloths, torn sheets and stains in clothes. When Tamr became pregnant and was taken to her aunt's home, there was singing and dancing. She was waiting to return to her aunt's home. When she felt labour pain, she did not want Reehan to see her in labour pain. She fled to her aunt's home and gave birth to her son, Muhammad. On returning to her husband's place, she decided to run away from there with the child and never to return. She told her cousin Awatef: "'He's my child and they don't even let me hold him. I want to take him and leave….'" (128). With the help of Awatef she left the home and the condition is her mother-in-law and husband did not want Tamr to return as she said "Ibrahim's family wouldn't even try and fetch me back" (128) but they tried to kidnap her child.

Tamr was married for the second time to a rich sheikh having a big house like a palace with servants, cars and drivers and her mother and family members were happy. The groom was nearly fifteen years older to her. He treated her like a daughter. One day she was astonished to hear from Rashid that the Sheikh had divorced her. In chapter 2 verse 229 "A divorce is only / Permissible twice; after that, / The parties should either hold / Together on equitable terms, / Or separate with kindness. It is not lawful for you, / (Men), to take back / Any of your gifts (from your wives), / Except when both parties / Fear that they would be / Unable to keep their limits Ordained by Allah…" (Holy Qur'an 99). Tamr does not even know that she was divorced. Only the previous day he was convincing Tamr not to be afraid of Ibrahim who threatened to steal her son Muhammad. The Sheikh told Tamr, "'Nobody's going to harm a fingernail of yours while you're my wife'" (Al-Shaykh 106). After a few days she realised that she was "pleased to be divorced. The Sheikh was a drunkard, with a bottle to hand twenty-four hours a day" (107). Tamr began to sell her jewellery and clothes in order to buy things which her son desired. Years passed.

Rashid took care of Tamr and her son and did not permit her to go to the institute to study and the reason she realised later that: "The car was one of the reasons why at first I hadn't been allowed to go to the institute to learn how to read and write" (84). He did not want to hire a car to take Tamr to go the institute and allow her to go in her friend's car. When the mother and aunt tried to convince, Rashid told: "'No, Aunt. […] But who gave her a roof over her head and supported her and her son? And who snatched Muhammad away from his father? It was me, no one else. […] it doesn't bother me having her to live with me. But she must think of her future'" (84-85). She cried and began hunger strike to study but Rashid wants her to think about her marriage. Tamr's mother and Batul, Rashid's wife tried hard to feed her forcefully but in vain. Batul shouted, "'My God, you don't love anyone except yourself. I thought you and I were like sisters'" (87). Fourth day Tamr was very weak without eating but determined to study. At last, her mother told Tamr, "'O Tamr, O Tamr, you're going to the institute by car and you'll come back reading and writing'" (87).

Tamr connects to Suha when she joined in an institute to study where Suha teaches. Tamr is impressed by Suha's dressing sense:

> I didn't hear a single word of the lesson. I was looking at Suha so intently that I was staring into her face, at her hair, her clothes, her shoes and her hands…. I couldn't imagine that a woman like her would be able to go about the streets in her tight-waisted, low-cut dress, wearing that broad gold belt, long purple ear-rings and purple shoes with open toes which revealed her long toenails painted purple. And the hair. I couldn't find words to describe its colour and style: it fell in trousled disarray over her forehead and ears and neck. (89)

During the break Tamr noticed other teachers and young girls. They were under the abayas. When she returned home and shared what she had seen, her mother insisted her to take her to the institute to see Suha but she refused fearing about the stories her mother would tell. She looked at the mirror trying to find out whether she could speak English: "…or was it just that English didn't go with a woman who wore an abaya and whose hair reeked of incense?" (89-90). Tamr's relationship with Suha goes beyond the relationship of a student and teacher as days passed.

Without depending on her brother or son, Tamr went alone to the government building in order to get permit to open a dressmaking shop. It is distinct that "the capacity of individuals, groups and/or communities to take control of their circumstances, exercise power and achieve their own goals, and the process by which, individually and collectively, they are able to help themselves and others to

maximize the quality of their lives" (Adams xvi). The officials wanted Tamr's divorce certificate and her guardian could bring them the lease to examine and they also suggested Tamr to stay in the car while the driver could bring them the papers. Even in the bank she must be the first woman to enter. The next day Tamr had to stay at home when his son asked, "'you're coming with me to the bank? And waiting in the car? Have you gone mad?'" (104). As a typical male mentality in a patriarchal society where the woman is confined to home and her share of amount was in the account of her son. In the chapter 5 verse 33: "To (benefit) everyone, / We have appointed / Sharers and heirs / To property left / By parents and relatives…. Give their due portion…" (Holy Qur'an 218 - 219). Tamr was wondering why Rashid had entered the money in Muhammad's name who was five years old when Tamr's father expired. Muhammad was not even sixteen years then and had to show his identity card to receive Tamr's twenty-five thousand which was left for her by her dead father.

Tamr wanted Suha to accompany her in order to get her divorce certificate from sheikh with the purpose of opening a workshop especially for women. Using her available opportunities, Tamr attempts to move on step by step in the path of freedom to have control over her life as it is mentioned by Rappaport about empowerment "as the interdependent process at the individual (psychological), organizational, and community levels, which focuses on how individuals (and groups) obtain and utilize resources to assert control and change their environmental circumstances" (Powell). The reason she stated for becoming a dress maker was: "…everyone complains about the shortage of dressmakers. Women weren't allowed to be measured. There isn't even any consultation between a dressmaker and his customer…" (al-Shaykh 94-95). They went to sheikh's house, met sheikha, the first wife of sheikh and asked for the divorce certificate. As sheikh was not there, she asked Tamr to write down the dates of their marriage and divorce so that sheikha could get it ready for her. Suha wanted to know how Tamr felt seeing her house after fifteen years. Though she laughed and answered, Tamr's answer was pathetic: "'It wasn't my home. I was like a guest in it'" (94).

Tamr started climbing the ladder of success as Kennath Blanchard said that empowerment is not giving people power, people already have plenty of power, in the wealth of their knowledge and motivation, to do their jobs magnificently and it defined that empowerment as letting this power out. Rashid agreed to the plan of opening the workshop on seeing the permit which was registered under her name. Her dream of having Filipino seamstress at her shop was also agreed by Rashid on condition that Filipinos must sleep in the shop only and should not cross the threshold except in Tamr's company and Batul must be her partner. Tamr's happiness was expressed thus: "My thoughts revolve happily, busy with images of

the workshop: the reception, the sewing room, mirrors, cupboards, the fashion photographs in Suha's magazines, the Filipino seamstresses – one of whom would have to be a hair stylist" (al-Shaykh 108). Women came into her shop in the afternoon and at sunset with their children and relatives and also brought dress materials and fashion magazines to show the cuttings and designs to stitch. Tamr was busy attending on them. Her mother and aunt came to visit her at the shop for the first time and glad to see her with customers and her speaking English. Her mother exclaimed, "'You have got a place of your own and you speak English? God is great, Tamr of Tamrs' (132). The shop owners and neighbours look for some kind of evidence to use it against women who owns a business or shops to shut it down. They came in to her shop to verify any male member's presence and she answered, ""Can't you read what's written on the door?" but they asked me again…. "If you like I'll open the door for you. Wait a minute while we get veiled." But they didn't come in.'" (137).

Tamr told her mother and aunt enthusiastically, "'Reehan, Ibrahim's mother, and with her granddaughters" (137) came to the shop as they were going to attend a wedding. Their clothes were silk, wore Italian jewellery and handbags were pure leather. She asked the price for henna and told it was high and asked to use henna which she had brought but Tamr refused to use it. Filipino seamstress gave her grand-daughter a facial. Tamr said that Reehan was still mean "for a whole hour Reehan didn't stop cursing and complaining that the prices were too high while the girl tried to make her quiet. Anyhow, those are days I'd rather forget" (137). Tamr was happy thinking about "renting a second flat now that there was no longer room for my clients, in spite of the objections raised daily by my son" (152) and suddenly her aunt expressed her wish to congratulate her soon about finding her a life partner.

Marriage plays a major role in a woman's life irrespective of class, caste, religion, and it is strongly believed that her life is not complete without having a spouse or a child. The women continue to strive hard to get financial freedom and security in a patriarchal society even in the twenty-first century. It is rightly said that "the relation between access to interventions and the development of women's empowerment on the personal, relational, and societal dimension may be time-dependent" (Huis). Thus the struggle of Tamr made her independent and strong enough to take care of herself, still the expectation of her getting married continues in the society.

References:

Adams, Robert. *Empowerment, Participation and Social Work*. Palgrave Macmillan, 2008.

al-Shaykh, Hanan. *Women of Sand and Myrrh*. First Anchor Books Edition, 1989.

Blanchard, Kenneth H., et al. *Empowerment Takes More than a Minute*. Berrett-Koehler, 1996.

"Gender Equality and Women's Empowerment: Benin." *U.S. Agency for International Development*, 2 Sept. 2020, www.usaid.gov/benin/gender-equity.

The Holy Qur'an. Edited by The Presidency of Islamic Researchers, IFTA, King Fahd Holy Qur-an Printing Complex, 1411 H.

Huis, Marloes A., et al. "A Three-Dimensional Model of Women's Empowerment: Implications in the Field of Microfinance and Future Directions." *Frontiers*, Frontiers, 28 Sept. 2017, www.frontiersin.org/articles/10.3389/fpsyg.2017.01678/full.

Powell, Kristen Gilmore, et al. "Measuring Youth Empowerment: An Item Response Theory Analysis of the Sociopolitical Control Scale for Youth." *American Journal of Community Psychology*, 2021, doi:10.1002/ajcp.12540.

Sadan, Elisheva. *Empowerment and Community Planning*. Translated by Richard Flantz, Hakibbutz Hameuchad, 1997.

Sebstad, Jennefer, et al. "Women's Economic Empowerment: Pushing the Frontiers of Inclusive Market Development." *www.acdivoca.org/Leo*, USAID, www.enterprise-development.org/wp-content/uploads/WEE_in_Market_Systems_Framework_final.pdf

❒❒❒

1. Ph.D Research Scholar (Part-Time), Government Arts College, Salem-7

"A Dream" of the Liberated Women according to Virginia Woolf's" A Room of One's Own"

–A Anchiristilla Priya Dharsini
–Dr. Anita

Men look better than women while typing. while women are portrayed as very simple and modest in nature. Reading Virginia Woolf's A Room Of Her Own, a woman as a writer can easily decipher and even relate to the pain points Mrs. Woolf raised.

Abstract

The cognitive power of women has the highest ratio when we compare men, yet they are unfortunate to excel in life because of their economic status. They need space and money to get the best out of their writing. Money is dependent on parents and husband. Most of their lives portray a fish out of water. Their birth brings only partial happiness to the family. The growth of women and their needs are increasing day by day as compared to men. They need to suffer for lack of love and are unwelcome to follow their desires and fail to overcome the obstacles of life. Ironically, men's attitudes towards women are reflected in the circumstances of where and how they are raised and how we think about them. Their feelings claim superiority over women. The position of women in society is very poor and visualizes a tragic element. Enslavement is very real and is in practice in today's society as well.

Keywords: Discrimination, priority, patriarchal, peace, money, enslavement, insensitivity.

Introduction

This title may sound very familiar, as you saw it in an essay by feminist author Virginia Woolf, who elaborated on the need for privacy, leisure, and financial independence that women had in the twentieth century.

A Room of One's Own is a lengthy novel by Virginia Woolf that was first published in September 1929. The novel exposes many social injustices and comments on the lack of opportunities for women to win over men and be creative in the realm of literature. Women have always been unhappy and disadvantaged in all circumstances for a long time.

Therefore, Virginia Woolf examines the history of women. Specifically, in the literary tradition, they are deprived of the basic necessities needed to write fiction. Women were oppressed in all walks of life. They were only pressed to work and not helped to become independent, to earn money and devote themselves to their growth.

As a woman, every woman is treated differently than a man. The author is told not to walk on the grass but rather on the gravel by the lake when she is told that she cannot go to the library without a man and it is something to think about how difficult it is for women to get an education. Compared to how easy it is for him. Women are generally treated differently due to gender discrimination, which is prevalent even in the premises of women's colleges. As he talks to his aunt Mary Seton, he hears her say, "Mr. — won't give a penny... How can we get a fund to pay for the offices (p. 22)? In terms of education, it is quite normal in society to pay less attention to the needs of women than men.

However, the fact that Virginia Woolf says it makes us wonder if she thinks women should be able to do the things men do. But her argument soon seems to change when she starts talking about how women can't work to save money that could go down the drain because they are the bearers and caretakers of their children. It is obvious that the mother pays much more attention to the growth of children than the father in the family. So the author talks about how long a mother has to stay with her child and how it prohibits her from working. "First, it was impossible for [women] to earn money, and second, if they could, the law denied them the right to own the money they earned" (Pg. 26). Men feel inferior when women earn and own a salary with them. Although men and women are equal in this profession, society forces or expects men to be the owners of money and women should only rely on men. Whether women will work for income will depend on men's willingness. It is not justice, yet this practice is alive not only in India but also in developed countries. As a result, women lose the power to use money for their own purposes.

As Virginia Woolf says, women absolutely need money to write fiction. In everyday life, it must be practical that women must be independent to thrive in life. Woman is intellectually strong, but inferior to men only in their economic status and brute strength. The narrator refers to the Manx cat as somewhat absurd – a poor tailless animal in the middle of the lawn. While he speaks of the best woman as intellectually inferior to the worst man. (Pages 15 and 53). She depends on her parents for needs and education and soon after marriage, even if she earns, she is dependent on her husband's money and other expenses. A girl's education is an effective investment for the next generation. Educating girls in society is like educating the whole society. whereas gender discrimination is widespread in education.

Illiterate parents prefer boys to girls. In India, female literacy rates are much lower compared to their male counterparts. (Pg. 31 – Gender issues and issues)

Eventually, everyone will know. Men think so little of women, and the text states that she is denied admittance to the library unless "accompanied by a Fellow of the College, or furnished with a letter of introduction." (Wolf, 8). It shows a sense of male dominance and insensitivity to the needs of women. We also find an unclear picture of gender discrimination. Negligence towards women in the family and society was found to be alive. Remarriage on the occasion of a girl's puberty is a traditional ritual in Assamese society. As a result, this holiday ritual can have a negative effect on the minds of these girls at the crucial time of their entry into adolescence, which is an injustice done to the female folk. Additionally, women are treated as untouchables and are prohibited from doing any domestic or religious work. People in the family and neighbors treat her differently, otherwise they won't let her enter their houses.

In addition to the river and the fish, Woolf especially uses the symbolism of the Manx cat as an example to point out her ideas about the position of women in society. The way she checks out the cat is a mirror image of how men generally scrutinize women as being of little importance when trying to be creative in their work. Superstitious belief depicts a cat as a sign of bad omen. Even the modern world believes and practices this belief. That the cat is submissive and scary reflects the life of women in many families.Women are exploited by men in various fields. They have rarely been the subject of research and little attention has been paid to female-dominated activities (eg housework). Men control women's productivity and expect women to provide all kinds of free services to their husbands, children, and other family needs throughout their lives.

Moreover, differences had arisen over the course of the previous century. On a serious note, it is commonly believed that gender scholars have paid more attention to women than to men. The position of women is worse than that of men. They were less privileged. The author specifically states that the British Library did not allow women and considers it a male institution. Men fill every role in politics and sports and women are belittled. Frankly, in some patriarchal societies, female patients are not given more priority for proper treatment unless they are very serious. We also find a bleak picture of gender discrimination. Neglect of women is found to be a common phenomenon in every society.

Men look better than women while typing. while women are portrayed as very simple and modest in nature. Reading Virginia Woolf's A Room Of Her Own, a woman as a writer can easily decipher and even relate to the pain points Mrs. Woolf raised. Yes, she made everyone realize that a fictional character, say, Shakespeare's sister, Judith, wouldn't have made it in this world with her writing

talent as great as Shakespeare's because she didn't have A Room Of Her Own. She argues the importance of women having their own room and money if they are to write fiction. What she is really pointing out is the fact that we women are not even given a space as small as our own room in this society. Having space and control over the economy are two very important factors in whether women write fiction or do anything else they want.

When a woman is not married and lives with her parents, it often discourages her from going out and living on her own, even if she has everything she needs to earn money. At the same time, she is often reminded that "this whole home" is not her own, that when she marries and leaves with her husband, it will be her "real" home. She is very easily denied not only a room, but also her own home. Women were not allowed to enjoy their freedom.

For example: "Wash the clothes on Monday and put them on a stone pile; wash colored clothes on Tuesday and hang them on the clothesline to dry" (Kincaid, 1339). The text allows us to see an adult character teaching a little girl how to become a woman. This is how you set the table for tea; this is how the table is set for dinner; this is how you set the table for dinner with an important guest; thus the table is set for breakfast" (Kincaid, 1340). This girl keeps learning "how to set the table" for different occasions and not once is she given time to think or even explore her curiosity because she was learning how to be a "housekeeper".The girl is trained to set the table for different occasions, so it will be ready for breakfast, lunch and dinner. When she became a woman, she never wished to fulfill her own desire. Once she finds a suitor to marry, she is told all kinds of lies about what marriage will bring her, and for once she thinks very deeply about her own peace that marriage might bring. However, once married, she often shares a room with her husband and an entire household with her husband's family. A room full of patriarchal influences becomes suffocating for her, as she constantly sees the presence of her husband and the expectations of her in-laws in the house.

Again and again she is reminded of the fact that she has given birth to this room and can call it her own only because of her union as a wife with her husband. This often takes away any hopes she had for marriage; to have your own room, your own freedom, your own space for your thoughts and emotions. She wakes up feeling betrayed that she has been handed over to one. Men control the productive power of women. In many societies, women cannot decide how many children they want to have and when to have them.

Psychologists often suggest that in order to stay mentally and physically healthy, we need to have our own space where we can sit, introspect, think, feel our own emotions, keep them all under control, understand what causes us anxiety, and therefore the space , which we own for ourselves, can keep us healthy.A study

revealed the shocking fact that 40% of all female suicides in the world happen in India! Most of these women are married women. For most women in India, the idea of having this space, a place where they can relax, flourish, listen to their inner voice and create a strong sisterhood, is never a given. It is more of a political and cultural movement because a woman is supposed to be conditioned by slavery and having her own space would lead to her having her own realizations, thoughts, talents and expressions.

Realizing the power of peace scares the patriarchy because it knows it will not be able to survive if women have their own peace, think things through and come to the revelation that it is male supremacy, conducted through men and women (who have to share space with men) that it will trap them forever and shatter their hopes and dreams. After reaching the point of this realization, women prefer to choose to break free. At the end of the day, when we talk about women gaining space, their own agency and empowerment outside the home, we also ask, do most of us have our own room? Precisely because they don't have space for themselves, even strong and independent women, earning a salary, slowly develop into pawns of the patriarchy, but they can't figure out why. Societal expectations saw women as mere domestic child bearers and ignorant.

Lack of time and space keeps them out of literature because women are deprived of basic, basic needs for privacy and quality time of their own. The fate of brilliant women is not the fate of ordinary women; her plea is that we create a world in which Shakespeare's sister can survive her gift, not a world in which the miner's wife can have her property rights. Education and experience are necessary conditions for a woman's cultural and intellectual life, and are also part of her sociology of culture, in which the environment and the social sphere become far more important determinants of literary capacity and production than any conception of creativity as a purely personal property. Woolf, or rather her narrator, points to the discussion with two questions: women and fiction; could they lead somewhere or nowhere? The bottom line is that a woman must have money and a room of her own if she is to write fiction and develop fully and freely. If she needs to educate herself, money is the primary resource. If it needs value, it is the primary source of status that reflects a family that has the courage and freedom to work and come up with valuable work. There is therefore a close connection between the future of women and future fiction. This idea will make everyone realize the necessity of money and space to realize their literary work.

Mankind is man, and man defines woman not by herself, but as a relation to him; she is not considered an autonomous being-Beauvoir.

From time immemorial, this autonomous position of women has continued to remain secondary to patriarchal society. The subordination of women is enforced

by social traditions and the educational system, which are controlled and women are shunned by society. They remain timid and helpless, leading to compelling social evils. At this point, women took a stubborn stand to show themselves as liberated beings.

Conclusion

Women have temporary jobs and homes. They are strangers to the world. Their journey is full of ups and downs and many twists and turns, making it a turning point for many and an end point for some. Many women are born and die without meaning because of the family they marry into. Women were not given the opportunity to express themselves or the time to learn because their role in society was to cook, clean and take care of the children. In light of the novel A Room of One's Own, women need to be independent in order to play a vital role in society, otherwise the life they live will be without address or trace. When women were considered less important in society, she explores her path. Life ends in absolute silence. "Room" figuratively means an opportunity for women to publish their work and express to the public that they have been empowered.

References:

Das, Lipishree (2019), *Gender Inequality in Education in India*: *A Perspective*, Best Publishing House, New Delhi: 2019.Print.

Saikia, Prasad Jyoti (2017) *Gender Themes and Issues*, Concept Publishing Company (P) Ltd., New Delhi-Print.

Beauvoir, Simon de, *The Second Sex*,Harmonds, Worth: Penguin, 1987. Print.

Dass Veena Noble Ed., *Feminism and Literature*. New Delhi: 1995, Prestige Books. Print.

Marcus Laura,*Writers and their work:* Woolf Virginia Atlantic Publishers & Distributors (P) Ltd.1997.Print.

WEBLINK

https://youtu.be/eag-R1H1TAU

https://youtu.be/ijEspjI_ox8

https://youtu.be/DcMLkce_BLg

https://youtu.be/L2-FOBvPjEE

http://www.un.org/en/events/endviolenceday/

❒❒❒

1. PHD Scholar English, Nirmala College for Women, Coimbatore.
2. Assistant Professor, Research Supervisor, Nirmala College for Women, Coimbatore

Research Article

Elements of Dystopian Fiction in Station Eleven

–D. Ronald Hadrian
–Dr. Anita

After the flu has wiped out all modern inventions and technology, the beauty of art will remain as an important part of society. The first scene of the book and the first scene after the collapse both feature Shakespeare's famous play King Lear. One is a performance and the other is a rehearsal.

Abstract

It has been twenty years since the "Georgian Flu" pandemic, which almost wiped off the entire human population Large cities have been left in ruins. Electricity can only be produced using techniques that even Michael Faraday would consider rudimentary since all gasoline has expired. Emily St. John Mandel's dense and captivating dystopian book, Station Eleven, is mostly set in this gloomy era. Although Madel's theory is not novel, she does a wonderful job of putting it into practise. Station Eleven effectively distinguishes out from the other post-apocalyptic films because of its strong use of high language and earnestly written subplots. This paper talks about the dystopian elements in Station Eleven. It explains the ideals of the people.

Keywords: Dystopian, Station Eleven, The End of the World.

Introduction

Dystopian fiction has become a major force in the publishing industry. For example, Suzanne Collins's *The Hunger Games* trilogy has sold over 26 million copies worldwide. In a world consumed by dystopian literature, one must ask if there is still room for originality. Station Eleven, a science fiction dystopian book by Emily St. John Mandel, is set in a future where the bulk of the population has been wiped off by the spread of the Georgia-flu. The story is told from the perspective of Kirsten Raymonde, a woman traveling with a theater troupe. She and the other actors travel from settlement to settlement, performing Shakespeare plays. But the troupe's future is insecure,

and the book explores the ways in which they maintain hope amidst the seeming hopelessness of their situation. The Georgia Flu disruption and civilizational collapse are described in the book as occurring 20 years in the future. While she grieves over Arthur's passing by collecting magazine clippings of him from abandoned homes, Kristen really feels a connection to him. The book demonstrates how the characters are somehow associated with Arthur. Numerous factors, including hunger, challenges to communities, and loneliness, might support the notion that the world has fallen. More than anything else in the book, Mandel seeks to convey the concepts of survival and death, nostalgia, memory, and art. The novel frequently makes me think back to my past life and all the technology that was available before this post-apocalyptic world emerged. The need to live is now the most crucial aspect for these individuals. The characters, for the most part, are good-hearted, clinging onto memories and evoking the past. In this dystopian novel, Mandel is able to examine the concepts of death and survival, fait and faith, memory, art, and civilization.

The book Station Eleven is a prophecy. The slogan of this whole work is that survival is not sufficient, which is alarming considering that this book was written a few years before the coronavirus swept the globe. If so, this book may be used as a survival manual for the grim situation that the planet is in right now. The crucial question that the book addresses is speculative. How will the world change after the terrible plague is over? Will the world's systems last, or will the old methods persist? Will the Internet eventually disappear? In the book, all of the gadgets—including cell phones, computers, and other electronic devices—become a part of a museum or the memories of a different world. Even education's purpose would appear absurd to these survivors. The voyage before the pandemic and thereafter is connected through a number of individuals in the book. How much of an influence the media can have on a story seems to be a reoccurring theme in the book. In this study, the life and legacy of a person are also studied. This book's primary goal, in my opinion, is to discuss the value of art in post-pandemic society. In a world where science has failed, where the Internet is a thing of the past, energy is a fiction, and art is the only thing that holds any hope for the future. Humans can only comprehend the universe by engaging in artistic endeavours. Shakespeare has a significant role in the story. Shakespeare's conception of the universe is subtly related to the pre-pandemic or post-pandemic reality. (This could be due to the fact that Shakespeare lived during an epidemic.) The intersections between the characters are extremely well constructed, and it's intriguing to see how they go from the old world to the new. The backdrop narrative of the book and how a fictitious figure might define fresh beginnings in a new universe seems to resemble the comic book Station Eleven. The author examines the evolution of religion, the modern world, optimism for the future, and the inherent tenacity of people.

Dystopian Elements

Dystopia is the opposite of utopia: a state in which the conditions of human life are extremely bad as a result of deprivation, oppression, or terror (or all three). A dystopian society is characterized by human misery in the form of squalor, oppression, disease, overcrowding, environmental destruction, or war. There are many dystopian elements in the novel.

The characters in the book try to avoid dying, but the theme of the book is that death and survival are inextricably linked in this world. Arthur passes away right away at the beginning of the book, and shortly after that, the global flu has killed 99.9% of the population. Mandel examines death on a global and personal level. The characters are all impacted in some way by Arthur's death on stage. Some characters, like Kristen and Jeevan, are affected by the fact that they saw it, while others, like Miranda, are affected because they had a significant and close relationship with him. This allows the book to examine how various characters respond to Arthur's passing. The main characters who have survived are also given physical and psychological attention in the book, in addition to the dead. The characters often ponder why they lived when others perished. Tyler and Elizabeth, in particular, are very curious as to how they survived and what it means. The characters in the book encounter obstacles and challenges as they try to figure out how to survive. "Being alive is a danger," it says on page 66. This phrase suggests that the world is hazardous and no longer subject to law and order following the collapse. "All three caravans of the Traveling Symphony are labelled, such as, THE TRAVELING SYMPHONY lettered in white on both sides, but the lead caravan has an extra line of text: Because survival is inadequate," is a highly significant phrase that can be found on page 58. The Symphony's slogan and Kristen's second tattoo both include this phrase. This quotation expresses the notion that it is unfair for people to struggle to survive. To survive is insufficient. We need to take additional action as breathing humans. Something bigger and more significant. We must live meaningful lives. That "something more" for the travelling symphony is an artistic performance. The underlying idea is that people should strive to live, not just to exist. It conveys love and beauty as ways of really living. The full meaning of our lives is how we perceive what we do. People do not know what is truly happening around them, but when you look into the details, there is an underlying meaning that connects everything together.

The state regulates art in dystopias like Brave New World and Nineteen Eighty-Four in order to control society. Consider Mustapha Mond's magnificent declaration in Huxley's book "You must decide between pleasure and what was formerly referred to be high art. We gave up fine art." Additionally, in A Clockwork Orange, art—in the shape of Beethoven's Ninth—is used as a tool for torture and social

control. Through both present-day scenes and flashbacks, Station Eleven analyses art in a variety of mediums.

In the novel, the author tries to connect survival and art in a very consequential way. Kristen reflects on her thoughts after the collapse; "what was lost in the collapse: almost everything, almost everyone, but there is still such beauty". Mandel points out that even after the loss of civilization and of almost every human, the world is still full of extraordinary beauty. Focusing on Kristen's performance in the role of Titania, Mandel tries to make a connection with the creation of humanity and art while trying to deliver her message to the readers about beauty. During the production of A Midsummer Night's Dream in St. Deborah's by the water, surviving beauty is emphasized. "I stood looking over my damaged home and tried to forget the sweetness of life on Earth" is a line spoken by Dr. Eleven in one of Miranda's "Station Eleven" comic books. In the comic book, there's an image of Dr. Eleven next to his dog looking at the broken space station, trying to forget how sweet it was to live on Earth. Dr. Eleven's memory of Earth while being stuck can be related to those living in the collapse on Earth with nostalgic memories of the world before the Georgia Flu. Part of moving on is forgetting what the old life had to offer and adapting to the new circumstances of the present. When expressing this section in the novel, Mandel tries to create a feeling of nostalgia for a past life. In addition, she expresses the idea of forgetting and how important it is that the primary characters adapt to the new world and how that will help them survive.

After the flu has wiped out all modern inventions and technology, the beauty of art will remain as an important part of society. The first scene of the book and the first scene after the collapse both feature Shakespeare's famous play King Lear. One is a performance and the other is a rehearsal. The message the author is trying to send is that even after the collapse of civilization and the death of billions, art remains. Art is powerful enough to survive the outbreak because it doesn't really rely on technology or modernity. The novel implies that art survives because it is so vital and extremely connected to humans. Art offers people a way to understand the world and a way to connect to a world that is completely gone. It offers a way to connect to each other, artist to audience and audience member to audience member. Through art, Miranda seems to explore, process, and escape from her own life. Lastly, art connects people to the shared history of humanity. People can feel connected to King Lear after the collapse, despite the hardships of their lives and the world they know they've lost. Art may not be necessary to basic survival, but the novel is trying to focus on the idea that for humans, "survival is insufficient." That means that the human instinct to create and celebrate art makes us human. Therefore, art will exist as long as humanity does, and as long as humanity exists, so will art.

References:

Alter, A 2014 The World is Ending, and Readers Couldn't Be Happier: Station Eleven Joins Fall's Crop of Dystopian Novels. New York Times, 5 September. Available athttp://www.nytimes.com/2014/09/06/books/station-eleven-joins-falls-crop-of-dystopian-novels.html [Last accessed 24 October 2018].

Arthur C Clarke Award 2015 2015 Winner. Available at: https://www.clarkeaward.com/2015-winner/ [Last accessed 24 October 2018].

Chute, H L 2016 Disaster Drawn: Visual Witness, Comics, and Documentary Form. Cambridge: The Belknap Press of Harvard University Press. DOI: https://doi.org/10.4159/9780674495647

Coupland, D (2010) 2011 Player One. London: Windmill.

De Cristofaro, D 2013 The Representational Impasse of Post-Apocalyptic Fiction: The Pesthouse by Jim Crace. Altre Modernità, 9: 66–80. DOI: https://doi.org/10.13130/2035-7680/2987

Hicks, H J 2016 The Post-Apocalyptic Novel in the Twenty-First-Century: Modernity Beyond Salvage. Basingstoke: Palgrave. DOI: https://doi.org/10.1057/9781137 545848

Hoberek, A 2011 Cormac McCarthy and the Aesthetics of Exhaustion. American Literary History, 23(3): 483–99. DOI: https://doi.org/10.1093/alh/ajr019

Hoberek, A 2015 The Post-Apocalyptic Present. Public Books, 15 June. Available at: http://www.publicbooks.org/the-post-apocalyptic-present/ [Last accessed 24 October 2018].

Huntley, K 2014 Station Eleven: Booklist Review, August. Available at: https://www.booklistonline.com/Station-Eleven-Emily-St-John-Mandel/pid=6862248 [Last accessed 24 October 2018].

❒❒❒

---

1. Research Scholar, Nirmala College for Women, Coimbatore
2. Assistant Professor of English, Supervisor, Nirmala College for Women, Coimbatore

The Language of Octavia Butler in Xenogenesis Trilogy

–Keerthi. R
–Dr. D. Deepa Caroline

Octavia Butler embroils the sexual dynamics of reproduction by concocting the alien species named oankali, with three sexes- male, female and third sex ooloi. The ooloi espouse with male and female oankali and human and help them in swapping genes. The importance of gender is manifested to be unfathomable through the keen examination of Butlers characters, for instance, Akin as first human and oankali construct and Jodah as the first third sex human and oankali construct.

Abstract

The present study tries to establish the role of Octavia Butler in the genre of science fiction. Octavia Butler's prose is runny and alluring; having techno- gibberish feel in it and that made her prose an epitome of 'traditional' sci-fi .The writing style of Octavia Butler is heavily influenced by her historical period and her life experiences. This is evident through investigation of her historical period, life experiences, and her Xenogenesis trilogy. Butler uses Xenogenesis Trilogy as a means of exploiting racism, suffering, and the black female narrative of isolation and disconnectedness from society in many of her novels, namely, Xenegenesis trilogy and Kindered. .Butler's xenogenesis trilogy includes extensive discussions of nature, feminism, the body, and identity. In the midst of a very frightening atmosphere, there are still seeds of hope in her novels and this approach makes her Xenogenesis Trilogy very unique.

Keywords: Gender, Bio-politics, Genetic discourse, Racism, Utopia.

INTRODUCTION:

"I write about people who do extraordinary things. It turned out that it was called science fiction"(1). Octavia Butler's prose is runny and alluring, having techno- gibberish feel in it and that made her prose an epitome of 'traditional' sci-fi. Butler, an African-American novelist and theorist, is a 53-year-old black woman who overcame dyslexia and aspects of racism in America to become someone who performs exceptional things. Butler also helped African-American novelists and theorists break into the science fiction genre. Butler's xenogenesis trilogy includes extensive discussions of nature, feminism, the body,

and identity.As the name implies, Xenogenesis is derived from the Greek word Xenos, which originally had the dual meanings of guest and alien. This trilogy serves as an origin narrative for an alien humanity, one that won't endure by "recreat[ing] the sacred image of the same (2)" as Donna Haraway puts it. The human lady Lilith "Awakens" from suspended animation at the beginning of the Xenogenesis trilogy in what is ultimately revealed to be a live spaceship circling a devastated Earth. She finds out that an extraterrestrial race known as the Oankali has saved the few remaining humans and is holding them in an organic hibernation while terraforming the planet so that humans might live there once again. The tentacled, Medusiod Oankali ask for a "deal" in return: "Our genetic material for yours." The humans have no choice in the matter because they awaken on the Oankali ship, while being disgusted by such an intimate exchange with such non-human beings. The first novel, Dawn, chronicles Lilith's efforts to persuade humans to accept partners who are roughly comparable to Oankali, which is a difficult transition for most people.Butler initially presents the becoming process through the Oankali species in the opening scene of the Xenogenesis trilogy, which stars the human heroine Lilith. Lilith discovers that the Oankali's genetic trade with humans is not their first or last transaction; rather, it is part of a single, never-ending process. "We are as committed to the genetic trade as your body is to breathing" (3). The Oankali are a multiplicity, a materialization of a becoming with "capacities to impact and to be affected," and a species that "cannot lose or acquire a dimension without changing its nature." (4)

CHARACTER AS GENDER:

Octavia Butler embroils the sexual dynamics of reproduction by concocting the alien species named oankali, with three sexes- male, female and third sex ooloi. The ooloi espouse with male and female oankali and human and help them in swapping genes. The importance of gender is manifested to be unfathomable through the keen examination of Butlers characters, for instance, Akin as first human and oankali construct and Jodah as the first third sex human and oankali construct. These characters pave the way to think about multiple-referenced-identity .Butler's creation of the genus ooloi changed the traditional idea of two person system of reproduction, incubation(gestation) and accouchement of offspring remained limited to the females of Lilith's Brood. And thus Butler in an interview with Rosalie G Harrison says, "Universe is either green or all white(5)."

BIOPOLITICS AND RACIAL FORMATION:

Octavia Butler's science fiction is particularly useful in revealing the connection between fabulation and the fabrication of a people to come. Science fiction formulates protocols of the politics of a people to come. They hunt for other life forms on new planets as a nomadic race; using the genetic material they find to

further their own evolution. This may be viewed as biocolonialism or a sort of slavery. Butler is very interested in the role of the black woman as a breeder, the history of eugenics in reproduction, and the development of scientific racism. "Fight the oankali' the good old way" and either die in the long run or lead isolated, sterile lives." This includes the continuing exploitation of the reproductive labour of black and brown people from the developing globe in burgeoning "tissue economies," as well as the legacy of slavery—especially reproductive slavery and coercion—in the antebellum south. The distinctly racist modern bioeconomy—the neoliberal markets based on life science sectors like IVF, tissue engineering, and gene therapy—resonates with xenogenesis.In Xenogenesis, this is discussed in terms of anything from slavery to the growing financialization of women's bodies by large corporations through genetic engineering and other life sciences. As a "invasion of her body," Lilith's forced pregnancy evokes "ambivalent sensations" that are comparable to those of slave women who gave birth to offspring for white owners (6).In this passage, Butler highlights the way that race has been "grafted on" to human biology and, through her dramatisation, shows how bio-politics is always a "racialized assemblage" (Weheliye's Habeas Viscus)(7). But in all of them, politics continues. The new possibilities are not necessarily better, just different.

PATTERNS OF VIOLENCE:

One of Butler's most compelling representations of the violated and violent teacher is Lilith, the main character of the Xenogenesis. When Lilith agrees to take on the responsibility of guiding the first group of humans, she adopts a role that appears to be the opposite—teaching rather than learning—but the pattern of enforcement continues."To teach, to give comfort, to feed and clothe, to guide them through and interpret what will be, for them, a new and frightening world. To parent"(8). The Oankali are worried that Lilith won't be "inspiring" enough because "people were impressed by size." As a result, they alter her completely, giving her the physical and mental strength to impose their authority.

GENETIC DISCOURSE:

When we suggest that our genetics influence intelligence, illness, disease, or even behavioural qualities, we are frequently using analogies from programming or pre-written code. Using the consequences of the prevailing biblical metaphors in the current genetic discourse which give birth to expressions like "writing" and "re-writing" and so naturally invite intervention. Beyond the descriptive dystopia that so many readers detect in Butler's work, Butler's involvement provides a utopian option.The language of Xenogenesis develops a more directly interventionist proposal of genetic manipulation by reflecting, developing, and changing the verbal metaphors of genetic discourse. One can state that humans are predisposed to specific habits and diseases thanks to common metaphors of DNA as code or

even She turns to a more overtly DNA-based paradigm in the late 1980s, once the concepts of recombinant DNA and genetic engineering gained popularity, to support her biological essentialism. The language of Xenogenesis develops a more directly interventionist proposal of genetic manipulation by reflecting, developing, and changing the verbal metaphors of genetic discourse. Picture converting a person into just informational form.The Xenogenesis trilogy was looked at in the context of how post DNA functions metaphorically and discursively in modern American language. Dystopian language is well suited to the discourse of DNA, and the metaphors and vocabulary one employ to discuss DNA are inherently dystopian in their assumption of complete genetic control over the individual self. Lilith, an African-American woman selected from the general human population for her genetic and reproductive potential, experiences comparable deep-seated worries as a result of a long history of scientific racism and other racializing assemblages. Lilith always clings to the remnants of her original genetic citizenship as a human, even though her attitude toward the oankali gradually softens during the book, especially once her construct children depend on human friendship for their survival. Joseph recognizes the eugenic implications of what he perceives as "Genetic meddling" right away. He reminds the others of the genetic research conducted prior to the war, which could have easily "grown into some sort of eugenics program."The Oankali, the Earth's savior aliens, are "gene traders" who will mix their DNA with that of the remaining human population to create "construct" children. These hybrid kids will be the only ones to repopulate the planet with the first survivors. People who modify DNA as naturally as we handle pencils and paintbrushes are in controlling us "we're in the hands of people who manipulate DNA as naturally as we manipulate pencils and paint brushes" (9).DNA has always stood for much more than what it is, according to Judith Roof, because many analogies used to describe have their own cultural connotations and "promote an exaggerated sense of action and control" (10).Walter Gibert, a Nobel Prize recipient, predicted in 1992 that "one will be able to pull a CD out of one's pocket and declare, 'Here is a human being; it's me'" (11).There is a well-known example where a New York Times editorial states that "Researchers are deploying genetics to understand our political decisions in the same manner that they have teased out a role of genes in predicting sexual orientation or the propensity to smoke" (12).

UTOPIAN BEINGS:

Thus, Butler's idea of malleable social structures and bodies embodies a particular utopian heritage. The same mutability and heterogeneity that were primarily discovered in the earth seed books through reflections on language and its function in social construction also place her in a long tradition of rhetoric, one that emphasizes contingency, perspectives, and positionality frequently in the service

of a social dream or a rhetor's own dream of taking Oankali as idealistic creatures. They respect life and value diversity. Their links to the environment are all-encompassing and environmentally healthy, they naturally heal, their relationships are loving, they cannot inflict harm without experiencing it themselves, and they govern the collective through consensus in the world. New living possibilities and styles of being are defined in each instance. However, politics persists in each one of them.Concerned reader's worry that Buttler's biological essentialism eliminates opportunities for freedom. A path out of the closed system is provided by the response in xenogenesis, though. The fantastical components in Butler's novel offer a utopian diversion from the apocalyptic genetic jargon we've grown accustomed to. Butler doubled down on this break by first speculating about aliens that are capable of altering DNA with a freedom and scope that is beyond our comprehension and then by starting to reject the metaphors that are employed to constrict human imagination.She fits neatly into the utopiantradition of "social dreaming" of transformation for the better because xenogenesis still requires societal frameworks to control its own impulses toward entropy or annihilation.

CONCLUSION:

The most well-known science fiction author of her era is regarded as being Octavia Butler. The dystopian genre appealed to her because it provided her as a writer more creative flexibility. She was a feminist who always thought that women deserved their fair share of freedom. Butler offers the Female as body, rescuer, healer, settler, mother, liberator, rebel, builder, defendant, honourable, and innately moral. She articulates the injustices and inequalities that exist in our society through her novels and is successful in delivering important and timely messages through them. The works of new generations of science fiction writers of colour have been affected by Octavia Butler's contribution, which is typically acknowledged as the first black woman to receive broad praise and respect as an exploration fiction writer. In her books, Butler demonstrates how contemporary utopian visions and the political clout of specific American society segments lead to future dystopias. She often represented concepts like, gender, religion; social status in symbolic language and wretched open the science fiction gates of gender and colour with her extraordinary vision, imagination and courage.

References:

Butler, Octavia. Adulthood Rites.1988 New York: Warner, 1997.

Butler, Octavia. Dawn.1987. New York: Warner, 1997.

Butler, Octavia.Imago.1989. New York: Warner, 1997.

Butler, Octavia E. and Conseula Francis. *Conversations with Octavia Butler*. University Press of Mississippi, 2010.

Curtis, Michael Kent, St. *George Tucker and the Legacy of Slavery*. William & Mary Law Review, 2005.

Deleuze, Gillies and Felix Guattari. *A Thousand Plateaus*: Capitalism and Schizophrenia. Trans. Brian Massumi. Minneapolis: University of Minnesota P, 1987.

Haraway, Donna. "A cyborg Manifesto: Science, Technology and Socialist- Feminism in the late Twentieth Century". *Simians, Cyborgs and Women: The Reinvention of Nature*. New York: Routledge, 1991.149-81.

Haraway, Donna. *When Species Meet*. Minneapolis: University of Minnesota p, 2007.

Jacobs, Naomi. "Posthuman Bodies and Agency in Octavia Butler's Xenogenesis." *Dark Horizons: Science Fiction and the Dystopian Imagination*. Eds. Raffaella Baccolini and Tom Moylan. New York: Routledge, 2003.91-111.

Jesser, Nancy. "Blood Genes and Gender in Octavia Butler's Kindred and Dawn." *Extrapolation* 43.1(2002): 36-61.

Johns, J . Adam. "Becoming Medusa: Octavia Butler's Lilith's Brood and sociology." SFS 37.3 (2010): 36-61.

Peppers, Cathy. "Dialogic Origins and Alien Identities in Butler's Xenogenesis." *Science Fiction Studies* 22(1995): 47-62

Vint, Sherryl. "Becoming Other: Animal, Kinship and Butler's Clay's Ark." *Science Fiction Studies* 32(2005): 281-300.

Vint, Sherryl. *"Bodies of Tomorrow*: Technology, Subjectivity, *Science Fiction*. Torronto: U of Torronto P, 2007.

Weheliye, Alexander G. Habeas Viscus: Racializing Assemblages, Biopolitics, and Black Feminist Theories of the Human. Durham: Duke UP, 2014.

Zaki, Honda M. "Utopia, Dystopia, and Ideology in the Science Fiction of Octavia Butler." *Science Fiction Studies* 17(1990): 239-51.

Walter Gilbert – Nobel Lecture. NobelPrize.org. Nobel Prize Outreach AB 2022. Fri. 23 Sep 2022. https://www.nobelprize.org/prizes/chemistry/1980/gilbert/lecture/

❒❒❒

1. Research Scholar, Department of English, KAHE, Coimbatore- 641021.
2. Associate Professor, Department of S&H, KAHE, Coimbatore- 641021.

Research Article

Narrative Techniques in Roma Tearne's Novels

–M. Vidya
–Dr. D.M Amala

The entire novel is a tightly knitted framework of memory. Memory makes, destroys, recreates, and evaporates. The way the mosquitoes are present everywhere, memory is omni-present in the entire novel. When it comes to the notions of memory-mapping and memory-making, Roma Tearne's Mosquito carries various strands throughout. TheMosquito annihilates the reader with its every possible bounce of memory jerks, through its various characters and incidents.

Abstract

Narrative Narrative tactics are strategies and literary devices used by writers to create tale components. They include many narrative characteristics such as story, viewpoint, style, character, topic, and genre. Most types of writing, including literature, poetry, cinema, and theatre, may benefit from varied storytelling strategies. Many authors design locations that mirror the mood or circumstances of their characters. A location may also be used to influence a character's decision-making process, making it an active component of the story's conflict. Consider gothic books, which occasionally feature gloomy castles and individuals with a dismal attitude. You may disclose many facets of a character's defining features by establishing particular aspects of the castle environment, such as a corridor that is constantly chilly. This paper shows how narration is an important part of a novel. These are the narrative techniques that are shown in the novel.

Keywords: Narration, Techniques.

Introduction

The narrator's voice raises the issue of who we hear performing the narration. This is one of those issues that starts with a basic distinction and becomes richer and more intriguing as one delves further into it. The first difference is, of course, grammatical: that of person, that is, of two main points in narrative. The first, second, and third persons. The first person would say, "I woke up that morning with a wildland fire," and the third person would say, "she woke up that morning with a wind hangover." There have been several attempts with the notion of the second person, but they have not generated much fruit. The second person does not work because readers dislike being told what to think and do. It is important to note that

first-person narration almost always includes third-person narration. The text will almost certainly include third-person narration. Consider the text below.

> It is important that I describe the fabric of that day and the days that followed. AfterI dressed, I went outside into the garden and picked some white Japanese anemones. The sky was cloudless. That summer, the heat had built up in layers, slowly, beautifully, like daily washes of transparent colour, hinting at how it would be remembered in years to come. The greengages were luminescent in the light, heavy with juice, golden like sun. (17).

The majority of this is recounted in the third person ("That summer, the heat..."). However, we would classify it as a first-person narrative since the narrator has used "I" and "me" to refer to herself, and she has a participatory role (however short) in the tale. As this example shows, the degree to which the narrator refers to herself varies substantially throughout tales. Except for Swimmer, all of the other selected books are written in the first person.

Focalization

The next important aspect in the narration is focalization. Focalization is an awkward term, but it certainly plays its part.Focalization simply means the way something is focalized. In a narration, the narrator is a key person who guides the reader, and he is the lens through which the reader perceives the story. Whatever the narrator sees or hears, that is the connection that he makes and that will be the one that the readers will understand. It certainly refers specifically to the lens through which we can see characters and events in the narrative. But, however, this is not the case as the author can, through the third person narrative voice, make the reader understand certain things. So, focalization is an important part of all the fictions of Roma Tearne. Brixton Beach centres around the experiences of aSinhalese family caught in the middle of the civil unrest that plagues Sri Lanka due to ethnic mayhem. Most of the events in the novel unfold through the eyes of the main protagonist,Alice Fonseka. The novel also examines her relationships with her grandfather, Bee, who is a Sinhalese artist who dotes on his granddaughter; her mother, Sita, who is married to a Tamil man; and her grandmother, Kamala, and their lives in the family home at Mount Lavinia. When Alice and Sita leave for England, they become part of the transnational Sri Lankan community. Throughout the novel, we are given insights into how both Alice and Sita are able to maintain a relationship with their past through their memories.

> Alice watched yet another argument break like the rains. Unlike the monsoons, her parents' rows never showed any sign of stopping.That evening, their last together for some time, the meal was eaten in silence. Each of them was deep in their own thoughts. The wind had died down and the rain was abating, leaving faint streaks of washed-out colour against

the sky. The dusty sun-faded garden looked as though it had been touched with a coat of paint.(BB 160)

The entire novel is a tightly knitted framework of memory. Memory makes, destroys, recreates, and evaporates. The way the mosquitoes are present everywhere, memory is omni-present in the entire novel. When it comes to the notions of memory-mapping and memory-making, Roma Tearne's Mosquito carries various strands throughout. TheMosquito annihilates the reader with its every possible bounce of memory jerks, through its various characters and incidents. The narrative moves in between constant flashbacks from the past, often at a clash with the present. In the "Introduction" to his work, Memory, Nationalism, and Narrative in Contemporary South Asia, J. Edward Mallot exclusively talks about the problematic connections between memory, narrative, and nationalism in South Asian countries. Different kinds of memory become the'site' "only to return to the same, seemingly unanswerable quandaries of remembering the past" (2-3). Thus, Mallot further observes, The tri-partite structure of the novel is the striking expression of this polyphonic aspect of the text. Each part of the book is told by a first-person narrator, starting with Ria, then Anula, and Lydia. The use of first-person narrators reinforces the contrast of experiences between different individuals. Again, an intention to link the personal to the collective is at stake. Roma Tearne suggests that we must shift our perspectives on a single storey or period of history. This use of three narrators may then be viewed from the same investigative lens mentioned before. Like an investigator questioning different witnesses inorder to resolve a case, the reader is led through three different voices, three different prisms, which are all linked to the storey of Ben's fate, representing the variety of refugees and migrants' fates and hidden stories. All three of them are charged with the trauma of Ben's death, which ends up determining their lives and futures as they try to deal with it.

This combination of a search for the truth through different insights and an effort to deal with past trauma reinforces the idea of Roma Tearne's text standing as a metaphorical collective work of grieving. The setting of the psychoanalytical session, which frames the last part of the book told by Lydia, thus constitutes the metonymical example of an urge to heal Sri Lanka's past wounds and deal with its history, memories, and identities.

The next concept is distance. Usually, the way the narrator plays a part in the story has an impact on the assessment of the information the narrator gives the reader. Here, distance would mean the narrator's degree of involvement in the story. This is certainly variable. Pip, for example, tells the storey of himself in Great Expectations. But Nelly Dean, the servant in Wuthering Heights, seems to tell the stories of different people. In the novel, Great Expectation is a grown man, and with both time and maturity, he has attained a distance from the youth who made so many mistakes. But Nelly Dean, on the other hand, is a narrator who's

actually witnessing the storey right in front of her. Because she's close to the characters and the events, the question of narrative distance has to be more of a problem in Nelly's Dean's case. Similarly, in the novels of Roma Tearne, the proximity or distance of the narrator from the storey is close. There is an affinity between pain and character. Most of the incidents are seen through the eyes of Alice. Her father's behaviour, her mother's behaviour, and how others treat her are all seen through the eyes of Alice. Even though the third person stands to tell the story, it is a focalization from the point of view of Alice.

Conclusion:

Throughout her works, Sri Lanka is perceived as a site that offers both the comfort of home and alienation. Despite being ostracised in her own country due to mixed parentage and being alienated in England, Alice is able to come to terms with her memory of the trauma she has gone through. Through her art, Alice is able to reconcile with Sri Lanka and remember the land through her "lived experiences" within that locality. As Alice puts it, the notion of reconciling with her past would be seen as punabbhava, or rebirth. "In Sri Lanka,

they would call it rebirth" (Tearne 390). At this point, we are able to see the existence of sub-text in Buddhist thought, which also hints at the path of reconciling and being reborn. Ultimately, Tearne's narratives echo what Selvadurai discusses in terms of the role of creative writing, as it is able to 'bridge polarities and develop empathy between the divided communities in Sri Lanka today' (15). Reckoning with the past is done with different narrative techniques in the works of Roma Tearne. The roots of the routes are made clear with the help of all the techniques discussed, from framing, paratexts, outer limits of narrative, the rhetoric of narrative, causation, normalization, voice, focalization, distance, and reliability of the narrator.

Reliability

The next concept is reliability, and as already mentioned about voice and distance, focalization also plays a major role. Wayne Booth referred to this as reliability. And also, focalization has much to do with what vein both refer to as the narrator's reliability. In a fiction book, it is rather important to know. If the narrator is to be trusted, they might be stating facts, or they might be misleading the reader in a certain way. The reliability of the narrator is quite important. For instance, in novels like Wuthering Heights, Nelly Dean is very judgmental of Catherine and she is too soft in her judgement of Heathcliff. Similarly, other novels have this problem as well. And Booth quotes that: holds that they differ markedly depending on how far and in what direction they depart from their authors. Uncertainty about norms is used to disrupt the narrative. There should be some sense of who the narrator is. And how he places himself in the broader spectrum of dependability. But the difficulty of this task is that it is not very easy to understand the authors and why they would choose to entrust their narrative to an unreliable narrator in the first place. Narration is a technique used in fiction, and thus it's imperative that the

author choose narrators who are 31 able to take the storey forward. In the care of Roma and Tearne, characters directly or indirectly affected by the war. There might be Mad Men. Lovers who are jealous, meanspirited relatives, and liarsIf this century has seen an increasing number of unreliable narrators, They have actually been there for a long time. One important advantage of such a narrative is that the narration itself is difficult. His liability to be subverted by one's own interests, prejudice, and blindness becomes part of the subject. "And As far as the novels of Roma Tearne are concerned, the reality fluctuates with each novel. Whatever it is, sometimes the narrator can be trusted and other times they can't be trusted, but whatever it is, War is a serious subject, and they are moving from the place of their roots. In search of an alien land (routes). It is an honest confession of the narrator. The unreliability part, as far as Roma Tearne novels are concerned, emerges from the fact that the narrators are from Tamil Nadu. In other words, the ideas and judgments that we infer from the narrative are to be in keeping with the sensibility that is intended for these effects. So let's say that this is the only valid way to read a narrative. One argument is that this accords with the way we usually behave when we interpret. That is, we usually assume a narrative like a sentence that is coming from someone bent on communicating. As the novelist Paul Auster says, in a work of fiction, one assumes there is a conscious mind behind the words on the page. Intentionally leading so respects the author behind the implied author, in the same way that most people want to be respected by their own narratives. It is through the eyes of Alice, but in Third Person. So it is reliable. Teame's Mosquito operates in largely the same manner, eschewing detailed analysis of the causes of or claims about the Sri Lankan conflict in favor of a position that merely ascribes horrific 32 violence tothe "condition" of the country as a whole. While Nulani may not "paint the war," Teame does-her brushstrokes broad, blurry and bleak. The verbal picture she creates is, without question, moving, elegiac, antinationalist and carefully balanced; it would be difficult to accuse the author of portraying prejudice or violence as one-sided, or to claim thather effort does not whatsoever "bring a forgotten war" to readers' notice. But in achieving this "objectivity," Teame paints a picture of violence so endemic as to be expected, so natural as to appear cultural.

References:

Tearne, Roma. *Brixton Beach*. 2018.

Tearne, Roma. *Mosquito*. 2008, https://doi.org/10.1604/9781933372570.

Tearne, Roma. *The Road to Urbino*. 2012.

Tearne, Roma. *Bone China*. 2008.

"Narrative Techniques." *Retroactive Continuity, Stream of Consciousness, Flashback, Exposition, Chekhov's Gun, Dream Sequence, Suspense*, 2011.

❒❒❒

1. Research Scholar, Madurai Kamaraj University, Madurai
2. The Guide and Supervisor, Associate Professor and Head, Department of English, Sri Meenakshi Govt. Arts College for Women, Madurai

Research Article

Inter Diasporisation in Sudha Murty's *Dollar Bahu*

–P. Sakthivel
–Dr. V.Anbarasi

The story* dollar bahu *contains a number of diasporas. Right from Chandru and Jamuna, along with Gouramma, the readers can also perceive the relentless efforts of the occupants to get acclimatized with the host country's norms and living structure. Jamuna, for example, systematically follows the unwritten codes of grooming. She leaves her two days old baby girl in a separate room in accordance with the grooming style incorporated by the Americans.

Abstract

The objective of this paper is to highlight with the application of various theories on Sudha Murty's text dollar bahu that the aftermath of dislocation and dispersal from the known to the unknown need not necessarily always bring woes, loss of identity, and sense of non-belongingness. Building in oneself empathy, solidarity and ethno-communal and cultural consciousness will certainly make one live a contended and meaningful life anywhere. People living in an alien soil are very easily able to cultivate such a sensibility adeptly. The lack of the same will pose a lot of maladjustment issues and resultantly while inter-diasporisation yields fruitful results, intra-diasporisation ends up in creating animosity, rivalry, enmity and hatred. Only sensible and sensitive people perceive and regulate their life and live the way life deserves to be lived.

Key Words: Diasporisation, ethno –communal consciousness, cultural consciousness, trauma, solidarity, evolution, inter- diasporisation, intra-diasporisation.

The concept of Diaspora has been attaining newer interpretations and facets ever since Globalisation has become a significantly influential aspect of life of all and sundry. In general, diasporic study is about migration, dispersal and its aftermath. Initially people migrated from their homeland to a host land out of sheer necessity, helplessness and compulsion. This compulsion eventually results in complication, conflict, identity crisis, sense of non-belongingness, longing for the home land, dissatisfaction and frustration. After the advent of globalization and the internet, in the

present scenario, this concept of diaspora is treated "as a substitute for any notion of expansion and scattering away from the centre" (Tololyan 10).

Diaspora represents a comprehensive theory that investigates multiple forms of migration. Observes Kafle, "In a broader sense, diaspora encompass a multitude of ethnic, religious and national communities – such as political refugees, alien residents, guest workers, immigrants, expellees, ethnic and racial minorities, oversees communities – who find themselves living outside of the territory to which they are historically 'rooted'"(136). In its original Jewish sense, diaspora is identical with uprooting and trauma. But this has evolved to such an extent that it signifies every type of dispersal and has become a "pervasive field of studies focusing more on the forms of identification" (Kafle, 138). This pervasive spirit exemplifies the multi-dimensions of the diasporic experiences, where as prior to that, it is viewed as woeful and denial of rights.

This change in perception naturally attributes newer shades of meanings that "offer a new and exciting way of understanding cultural differences and identity politics"(Cohen, 6).This shift from the "classical" notions of diaspora to a "broader conceptualization" automatically paves way for the "inclusion of immigrant communities that would be otherwise sidelined in the conventional literature of diaspora"(Cohen, 42).In the wake of globalization, ardent seekers of educational and employment opportunities for the betterment of self, in turn the family and in turn the society comprise the diasporic lot. Such diasporas are not governed with a sense of unknown fear or disaster or trauma.

Diasporas of contemporary period refer to all "ethnic minority groups of migrant origins residing and acting in host countries maintaining strong sentimental and material links with their countries of origin - their homelands"(Sheffer, 3). Invariably every type of migrant retains a collective memory, vision and myth about their native land. Despite the most favourable living physical and financial conditions, "they continue in various ways to relate to that homeland and their ethno-communal consciousness and solidarity" (Safran, 84).

Displacement and dislocation from the known to the unknown geographical location may lead to positive outcomes if the members of the new territory do not terrorize the new occupants through their behavioral patterns, non-acceptance and high handed haughtiness. Unlike the immigrants of the past, who were either compelled or driven to quit their homeland or in many cases were victims of the flesh trade, today's migrants leave their homeland in pursuit of betterment with utmost clarity, willingness, hopes and aspirations. The educational and employment opportunities thrown open, open new vistas to the pursuant elevating his/her lifestyle both in the host and home lands. Seeing and observing the constructive changes in the standard of life, many others are also motivated to tread in the same path.

Sudha Murty, one of the most renowned and acclaimed humanists, entrepreneurs, creative geniuses, and staunch realists, with the might of her creativity is able to sketch most natural and true to life characters, depict pen pictures regarding the plights and pleasures of people in a given environment and above all discuss vital issues which are the essence of life. Though each of her stories revolves around the family dramas, they distinctly portray the most disturbing elements in life most relevantly thereby making what is otherwise a personal phenomenon into a universal factor. Her *Mahashweta*, for instance, stripes open the physical, emotional, psychological and financial estrangement experienced by a young and talented woman inflicted with luekoderma. The inequal status attributed on women from time immemorial and the bold and highly appreciable ventures of women are the crux of her *gently falls the bakula*. *house of cards,* as does the name imply, insists on mutual love, respect and trust as the foundation stone for happy family life lest despite the so called mundane accomplishments, glory and prosperity, one should lose peace of mind eventually resulting in leading a meaningless life.

Sudha Murty, in her *dollar bahu,* has very deftly delineated the way life is lived in India and in USA very clearly and authentically. Her impactful picturisation enables the readers to comprehend the complexities involved in the lives of the immigrants. Diasporisation is the complex process involved in the life of any diaspora owing to the dislocation and dispersal. People living in the homeland are under the false conception that living in USA and earning in dollars entitle them to live a life of heaven on earth and that they live a carefree life bereft of botherations. Contrarily every living ambience poses its own problems and life is certainly not a bed of roses anywhere. Since the value of dollars is higher than that of the Indian rupee, people living in India mostly look upon their USA counterparts with awe, wonder and respect treating them akin to lords and nobles.

Murty's pen pictures of the lives of a number of diasporas in *dollar bahu* undoubtedly and clearly creates an awareness regarding the advantages and disadvantages of living abroad. The distinct needs of each individual, the compelling state of affairs, the professional assignments, the dreams and aspirations of the concerned and the affluent life are some of the major reasons that stimulate people towards foreign ventures. Cohen has identified a typology of five diasporas:"victim, trade, labour, imperial and cultural diasporas"(26-27). Though till date, labour is a vital reason for the dislocation of many from various countries; it does not carry the tagline of a victim in most cases. Prior to the introduction of internet and vigorous implementation of globalization, the possibility of staying connected with the homeland is a very distant and impossible dream. But these two factors have literally nullified the physical distance and there is no qualm about leaving the homeland in the current scenario.

In the nine point list that depicted the common or identical characteristics of diasporas, Cohen identifies “a strong ethnic group consciousness based on a common history and belief in a common fate, a sense of empathy and solidarity with co-ethnic members in other countries of settlement, and the possibility of a distinctive creative, enriching life in host countries with a tolerance for pluralism” (29) as pervasive among the immigrants. So dispersal is hardly traumatic anymore, and the willing and voluntary migrants move out of their mother land with hope and optimism.

The story *dollar bahu* contains a number of diasporas. Right from Chandru and Jamuna, along with Gouramma, the readers can also perceive the relentless efforts of the occupants to get acclimatized with the host country’s norms and living structure. Jamuna, for example, systematically follows the unwritten codes of grooming. She leaves her two days old baby girl in a separate room in accordance with the grooming style incorporated by the Americans. Knowing pretty well that a thick bond cannot be developed between parents and children if they are brought up in the company of loneliness, yet Jamuna resorts to the western ways as that should be the way her daughter Manasi should grow. Celebrating the festivals, performing important pujas not on the prescribed dates but on a convenient common holiday and throwing birthday parties during weekends are the ways of the place where they live and everyone resorts to such ways.

The various characters introduced in this novel can be categorized under both the inter and intra diasporisation. Each one has a very valid cause or reason for the dispersal and the roots, processes and outcome of the diasporisation are highly discernible. The family of Radhakrishna brings out the plights of the first generation conservatives, their moral and psychological dilemma, the resultant trauma and the cultural conflict. Radhakrishna’s analytical acumen has fetched him very rosy offers in America. While the shift to this country has very promisingly upgraded his research endeavours, at the personal side, his wife Savitri and he cannot overrule the influence of their cherished cultural codes. They poignantly remember “ I come from a family of Vedic scholars, highly respected for their knowledge of our religion, philosophy, traditions and customs” (Murty 97).

This deep seated cultural consciousness has propelled them to bring up their daughter Shama to inculcate and inherit the dearly held cultural codes. This sort of construction and idealization of an imagined motherland “as a symbol of identification” (Kafle 146) subsequently results in maladjustment, frustration and dismay especially among the second generation youngsters. Caught between the peer group pressures and parental anxieties, they are torn into pieces before becoming decisive. All the sincere efforts and stringent measures of the seniors ultimately results in the serious severing of the relationship between the daughter

and the parents. Tololyan is accurate in his perception. He observes: “These communities keep more or less tight control over their ethnic boundaries, whether voluntarily or under constraint from the host society” (6). The unacceptability of the changes and unmindful of the demands of the host land, the crude insistence of the parents has ruined the life of the girl and the happiness and the peace of mind of the parents. The girl eventually decrees rather decries “You have destroyed my life…From now on I want to live the way I want. Don’t you dare interfere!” (97). While life in general is quite progressive, both the generations are trapped in a bottle neck and they are able to be themselves only when they accept wholeheartedly their present conditions.

The evolution in the case of Chitra brings out the positive side of the migration. The timid, hapless and victimized Chitra has made the best possible use of the given opportunities and stands in front of Gowramma as a well-built, confident woman. Her marriage with Joseph, an engineer, has been a fruitful one. He has been cultivated with wonderful manners and Gowramma senses him to be a real human being and she could also observe Chitra’s life to be filled with peace, simplicity and contentment. The innate wish of the immigrants to establish and sustain their contacts with their original country is best exemplified through this incident.

Another couple, Malati and Gopinath, though are not highly qualified, by the tint of their hard work manage to earn well. Expresses Malati:”We are honest and work hard. In three years, we have made good money. Now, we are building a shopping complex in Jayanagar. This country rewards those who work hard. We are both extremely happy and admire and appreciate this country. It has changed our life” (Murty 114). As much the displacement poses challenges, that also throws open a lot of chances too. Such migrants are neither victims nor trampled under imperialism. They are voluntary immigrants whose main purpose is trade, business or labour because that is the only avenue that will elevate the standard of their lives.

The way Padma manages her labour is yet another episode that brings to light how the diasporas have invariably imbibed and incorporated the western ways into their lives. The writer’s watchful eyes have dutifully observed and recorded the growing loneliness and the weakening human bonds. An ordinary woman Asha Patil was in depression and it took two years treatment to recover and become normal. The least favourable familial ambience, the inhumanistic attitude of the in-laws and the irresponsible and spineless husband were too much for the sensitive Asha. When there is a demand for a hard-working couple, that is utilized as the most awaited and viable opportunity by her. She has come to USA with her husband and their dedicated service earned the trust and good will of their employer. She is an entrepreneur now running Bombay Grocery Stores.

This land of settlers has accommodated Asha and her family too. This land certainly has brought in a sea change in the lives of her in-laws, parents and themselves too. She pours out in full throated ease:"There are many women like me in India, tortured by their mothers-in-law. But they do not have any option. Sometimes they commit suicide, sometimes they run away and some get into depression. For me, god helped in the form of America. I am extremely happy here and I don't feel like going back"(Murty 124).

The displacement has been regarded once as detachment, severing of one's ties with one's own land and above all loss of identity. But in the recent years, this concept diaspora enjoys a lot of semantic eclecticism. In the contemporary use of diaspora, Vertovec has detected three dimensions namely "diaspora as *social form*, as *type of consciousness* and as *mode of cultural production*" (278). This has been further deconstructed by Kafle. He delineates:

> In Vertovec's terms diaspora as a social form refers to three factors; the *process* of becoming scattered, the community living in foreign parts, and the *place* or geographic *space* in which the dispersed groups live. Diaspora as *a type of consciousness* refers to "variety of experiences, a state of mind and a sense of identity"; and "awareness of decentred attachments, of being simultaneously 'home away from home' or 'here and there' or awareness of multi-locality". Finally as *a mode of cultural production* diaspora is known to be born out of the "worldwide flow of cultural objects, images and meanings" and is usually "conveyed in discussions of globalization". (143)

These being the inevitable outcomes of diasporisation, the characters depicted by Sudha Murty substantiate those findings. While some long for their homeland and oscillate between the inherited home culture and the acquired host culture, mostly they get reconciled with the existing scenario for the wealth, comforts, change of attitude and independence the settled land offer them. Instead of solely depend on others for their livelihood, they become inter-dependents and eventually independent too.

When people migrate to an alien land, their inter - diasporic state offers them invaluable experiences. The advent of internet and the privilege to stay in instant touch with dear ones anywhere around the world has removed the taboos about deserting the homeland. In the same novel, Sudha Murty has captured the nuances of intra-diaspora too. Vinuta, the second daughter-in-law, true to the observatory remarks of Asha, suffers the throes of displacement mainly because of the negligent attitude of her mother-in-law. The various fearful concepts that are discussed regarding the conditions of settlers are wholly experienced by Vinuta rather. Her devotion, dedication, acceptance, commitment, genuine concern and contribution

for the welfare of the family are never recognized by Gowramma. That Vinuta has not brought any wealth with her has made Gowramma remain blind folded towards the precious virtues of Vinuta. Constant improper comparisons that highlight the poverty-stricken state of Vinuta and utter disregard to her presence, her views and her needs and requirements ultimately stress her so intensely driving her towards depression. Fortunately the timely intervention of the father-in-law makes her be firm and decisive.

Sudha Murty, through her subtle and effective analysis of the minds of people is able to project the pros and cons of life in homeland and host land. Diasporisation has its own telling impact on the sensitivity and sensibility of people, resulting in the betterment of life in most cases. Sailing along with the current is the judicious move and accepting things as they come to one would result in a meaningful life. Refusing bluntly to discern the truth will only complicate the life process and wise ones will comprehend this as is the case of Gowramma in *dollar bahu.*

References:

1. Cohen, R. (1997). *Global diasporas*: *An introduction*. London: UCL Press.
2. Kafle, Hem Raj. Bothi: An Interdisciplinary Journal, ISSN: 2091-0479 Vol. 4 No. 1 Serial No.4 2010. 136-149.
3. Murty, Sudha. *Dollar bahu,* New Delhi: Penguin Books India, 2007, print.
4. Reis, M. (2004) Theorizing diasporas: Perspectives on ‘classical’ and ‘contemporary’ diaspora. *International Migration,* 42 (2), 41-56.
5. Safran, W. (1991) Diasporas in modern societies: Myths of homeland and return. *Diaspora,* 1 (1), 83-99.
6. Sheffer, G. (1986) A new field of study: Modern diasporas in international politics. In Gabriel Sheffer (Ed.), *Modern diasporas in international politics* (pp. 1-15). New York: St. Martin’s Press.
7. Tololyan, K. (1996). Rethinking diaspora(s): Stateless power in the transnational moment. *Diaspora,*5 (1), 3-36.
8. Vertovec, S. (1997). Three meanings of ‘diaspora’ Exemplified among South Asian religions. *Diaspora* 6 (3). 277-300.
9. Vertovec, S. (2005). The political importance of diaspora (Working paper No. 13). University of Oxford, Centre on Migration Policy and Society. Retrieved April 20, 2008, from http://www.compas.ox.ac.uk/publications/papers/Steve%20Vertovec%20WP0513.pdf

❑❑❑

1. Ph.D Research Scholar, Department of English, Government Arts College (Autonomous), Salem-636007.
2. Associate Professor & Head, Department of English, Government Arts College (Autonomous), Salem-636007.

Research Article

Myth, Dream and Journey in Paulo Coelho's *The Alchemist*

–M Vasanthamullai

When Santiago sees a portrait of Jesus hanging in the living room of an elderly lady, he finds himself at a place where he can no longer accept the call. As a student of theology, he rejects the idea that one should have profound confidence in a religious image. Fishwick offers the following explanation for the icon: ". . . physical emblems of immaterial ideas" (131).

Abstract

In the novel The Alchemist by Paulo Coelho, the protagonist, Santiago, goes on a journey of self-discovery. The main character, Santiago, leaves his childhood home and family in search of an unknown buried treasure when he is a teenager. Santiago's voyage from Andalusia to Africa in pursuit of a buried wealth is unusual because he starts his journey in response to an unusual recurrent dream in which a kid invites him to the Pyramids of Egypt. This dream takes place when Santiago is in Andalusia. Thus his adventure is unique in comparison to that of the other heroes.

Keywords : Journey, mythology, Culture, journey, self-discovery

Paulo Coelho's *The Alchemist* creates have powerful underlying universal themes, which ultimately boil down to fundamental questions that humans often ask themselves in response to the many challenges that they face in life. Even if the topics that are explored in his books change from one tale to the next, there are consistent elements that emerge while reading a collection of his work. Love, religion, and the age-old struggle of good vs. evil are some of the apparent elements that run across all of Paulo Coelho's works and help them flow together seamlessly.

Paulo Coelho's *The Alchemist* was published in 1988 and tells the story of an incredible adventure that a shepherd named Santiago takes from Andalusia to Africa in quest of a buried treasure. Coelho has been writing since 1947. The story of the average shepherd who set off to discover the undiscovered world has all the makings of a folktale. In a similar vein, the idea of popular culture is more or less derived

from the notion of folklore. And so it is that Santiago sets off on his travels in response to a child's voice in his dream directing him to the Pyramids of Egypt. In the course of his journey, Santiago is confronted with a number of obstacles. His encounters with the dream interpreter woman, the elderly man who asserts that he is the king of Salem, the time spent with an alchemist, Santiago's love experience with Fatima, his captivity in a military camp, and other events serve as examples of these challenges. After everything is said and done, he is successful in unearthing the long-lost wealth at the conclusion of the voyage. Because of this, the story of a shepherd written by Coelho has been drawing the interest of intellectuals ever since it was first published.

Two of the most common methods of communication are the media and television. In one of his interviews with Glauco Ortolano, Coelho describes the creative vision he has for his work. "My literature is committed to a new political attitude: man in search of his own identity. It does not deal with the old and worn-out categories of right and left" (Ortolano and Coelho 58). The political overtones that are often associated with writing about politics are avoided in Coelho's works, since the author's primary goal is to establish a novel direction in the academic world via his writing. Some authors consider *The Alchemist* to be more than just a book because of the profound impact it has had on the lives of millions of readers throughout the world. Sonia Soni states, "Coelho's concept of art of living in order to make life beautiful by following one's vision" (90). The statement that Soni makes about Coelo's ideology is reminiscent of the words said by the Indian spiritual guru Ravi Shankar. In all likelihood, a writer's level of success is directly proportional to the degree to which they pursue their passion in good faith. The goal of this paper is to respond to the journey of an ordinary shepherd from Andalusia to Africa in order to prove the claim of a hero's unusual journey.

Shepherds have a difficult existence since they are forced to work outside. They investigate the vast landscape for sources of food and water as they make their way across the continent. To put it another way, they do not have any knowledge of the outside world. In a same vein, they are cut off from the news, modern technology, and the majority of the general population. However, because he has access to literature, the protagonist of *The Alchemist* by Paulo Coelho represents an exception to this rule. The wonders of the planet are reflected in the way he lives his life.

Santiago sets off on his adventure so that he might learn about the world that exists outside the landscape of Andalusia. He likes the adventure of exploring the unknown globe. In spite of his occupation as a shepherd, Santiago has developed the admirable practise of reading books. In this particular setting, Kristjana Gunnars makes the assertion that for the shepherd Santiago, "books are like caravans"

(25). The example provides an explanation of the process of how knowledge is transformed. On the other side, Juan Arias sheds light on the meaning of travel. Arias asserts, “Journey has a very profound symbolic importance in people’s existence.” (197). There is no such thing as a pointless travel; rather, each one has some kind of symbolic import. His parents had wanted him to become a priest, and thereby a source of pride for a simple family. He had studied Latin, Spanish, and theology. Santiago sets off on his adventure to familiarize himself with the other world. He disregards the wishes of the parents as well as his own religious convictions. It would seem that his childhood interest is the driving force behind his taking the opportunity to travel the globe. The recurring dream that Santiago has is foreshadowing an important upcoming change in his quest. According to Campbell, it is a trip of a hero to an unknown location that results in personal growth. The evolution of a hero is often shown by travel to previously unexplored regions.

A cryptic dream that Santiago has in which he is visited by a little boy leads him to the Pyramids of Egypt serves to encourage Santiago to proceed on the voyage. “instant information demands immediate response,” as the saying goes “When confronted with immediate challenges, we need heroes who can provide immediate solutions” (Fishwick 74). Santiago makes the decision to seek the advice of an elderly lady in order to decipher the dream. It makes little sense to readers living in this century who are hearing it. In addition, he wants to determine his future by deciphering the meaning of the dream. In point of fact, one might discover his or her destiny by first coming to terms with their selfhood.

When Santiago sees a portrait of Jesus hanging in the living room of an elderly lady, he finds himself at a place where he can no longer accept the call. As a student of theology, he rejects the idea that one should have profound confidence in a religious image. Fishwick offers the following explanation for the icon: “. . . physical emblems of immaterial ideas” (131). In other words, ideas that are difficult to pin down cannot stand in for spiritual symbols. Therefore, Santiago would rather tend to his everyday responsibilities than to participate in a religious image. The way of life that Santiago leads brings to mind a number of cultural practices that are common among young people in the 21st century. Santiago, despite this, the allure of travel cannot be denied.

The first part of the book comes to a close with Santiago making the choice to continue with the adventure. The guidance offered by the wise elderly person has already been given to him. As a result, Santiago decides to make a significant detour in the middle of his voyage in order to get through the looming barrier. The ordeal that awaits Santiago starts almost immediately after he departs the breathtaking landscape of Andalusia. At the port of Tangier, he is the victim of a robbery committed by his new companion. The reader is left with a similar sensation

after reading about Santiago's adventure. "They went together through the small alleyways of Tangier... However, the young man never turned his attention away from his new companion. In spite of the fact that he had all of his money, he was unable to locate his friend anywhere (35-36). Santiago is unable to identify his new companion despite the fact that they are walking together. Despite this, he did not give up on his dreams or his faith in his life. Within the context of the study of popular culture, Santiago's performance has the potential to establish a new paradigm.

Next, Santiago embodies the characteristics of a hero in a parallel reality, in which an unknown individual in the middle of a marketplace rouses him from sleep. Within this environment, Santiago is faced with a difficult choice. Actually, he is not searching for sustenance or water; rather, he is on the prowl for a prize that was misplaced a long time ago. Santiago is happy with his present condition since it is the direct result of a decision that he made for himself. As a result, he is comfortable with his current status. Santiago concocts a plan in his head so that he might live an adventurous life like the ones he reads about in the books. Reading literary works instills in him a feeling of fulfillment and strengthens his sense of identity. In the end, the knowledge that he obtains from reading the books will be of great assistance to him in reaching the destination that he need.

In addition to this, Santiago is going to have to work for the crystal trader in order to make his dream come true. He even advises to the company owner that they construct a display stand for the crystal so that they may attract more customers. His idea provides a glimpse into the role that popular culture plays in the lives of an average shepherd. According to Mathew Arnold, culture is "...the greatest that has been thought and expressed in the world." (qtd. in Storey 19). To put it another way, the most interesting aspects of culture tend to spread over the globe. For example, the culture of the pilgrimage is being replaced by the culture of travelling as a result of travelling being more popular than the pilgrimage in current times. It turns out that this is the strategy that the ordinary people may use to take over the globe. "He was more confident in himself, though, and felt as though he could conquer the world" (Coelho 60). Santiago's self-assurance fuels his desire to fulfill his dream of being a global conqueror. Unquestionably, self-assurance is one of the defining characteristics of a hero.

In any case, Santiago continues his travels with the Englishman in the hopes of discovering a buried treasure. Because there is a report of tribe conflicts, his gang has been travelling nonstop in order to reach Oasis as quickly as possible. When Santiago approached Fatima in the Oasis to enquire about the alchemist, she was the one who drew his attention. During the voyage, the enticing beauty is impossible for the hero to resist. Coelho describes the situation of Santiago in the following way:

> At that moment, it seemed to him that time stood still, and the Soul of the World surged within him. When he looked into her dark eyes, and saw that her lips were poised between a laugh and silence, he learned the most important part of the language that all the world spoke-the language that everyone on earth was capable of understanding in their heart. It was love….(88)

Fatima's charisma attracts Santiago. He discovers a global language that reveals the heart's speech. They love without words or images. Santiago falls in love with Fatima, but the passion is followed by challenges on the voyage. The hero sacrifices himself in the heroic journey. He likes cosmic over earthy experience. The hero's quest leads to revelations. Santiago understands love won't stop him from pursuing his dream. So he continues his travels and abandons Fatima. When three armed tribesmen take Santiago to the military camp, he must turn into the wind. Nature approves of Santiago's wind experiment. The tribesman may murder him otherwise. His non-human contact with nature saved his life. Santiago becomes a regional legend.

Santiago's hunt for a treasure ends with his remarkable performance. He's thrilled with Egypt's Pyramids. Santiago searches for hours on his chosen spot but discovers nothing. Campbell believes, "When the hero-quest is achieved, via penetration to the source or through the grace of some masculine or female, human or animal embodiment, the adventurer still must return with his life-transforming prize" (179). The explorer always returned with a great prize despite hardships. Coelho reminds Santiago the sycamore of a Spanish ruin cathedral via a figure who won't cross the desert due of a recurring dream. Novel's finale shows the truth. The Egyptian Pyramids have no treasure. The person is Santiago's prize for finding himself in the desert.

Paulo Coelho's *The Alchemist* continues to influence modern culture via myths, omens, symbolism, and most importantly, love. Santiago's heroism combines natural and supernatural elements. His realization of his actual character changes popular literature. Santiago's trip mirrors the most critical aspects of the hero's quest, and his mission to find the undiscovered world develops a new hero paradigm in popular culture. The conclusion is that popular culture will always seek a new hero. Travel literature covers the good and bad of travelling.

The observation suggested that Paulo Coelho's *The Alchemist* had a positive view on humanity. At the end of the novel, he can fully accept who he is. Santiago's biggest reward is personal improvement. Passion drives risky endeavours, not power or prestige. The shepherd's achievements break with traditional norms. His reciprocal relationship with the natural world and its things may also be worth studying. His communion with the wind is one of the book's most stunning parts.

This concept aims to highlight the importance of reciprocity, which is lacking in today's environment.

References:

Arias, Juan. *Paulo Coelho: Confession of a Pilgrim.* Translated by Ann McLean, Harper Collins, 2001.

Campbell, Joseph. *The Hero with a Thousand Faces.* Princeton UP, 2004.

Coelho, Paulo. *The Alchemist.* Harper Collins, 1988.

Fishwick, Marshall. *Seven Pillars of Popular Culture.* Greenwood Press, 1985. Gunnars, Kristjana. "On Writing Short Books." *World Literature Today,* vol. 78, no. 2, May -Aug., 2004, pp. 21-25. http: D D www.jstor.com D stable D 40158388.

Ortolano, Glauco, and Coelho, Paulo. "An Interview with Paulo Coelho: The Coming of Age of a Brazilian Phenomenon." *World Literature Today,* vol. 77, no. 1, Apr. –Jun., 2003, pp. 57-59. htttp: jstor.com D stable D 40157785.

Soni, Sonia. "Life Realized through Riddles: A Study of Paulo Coelho s *The Alchemist." MIT International Journal of English Language and Literature,* vol. 1, no. 2, Aug., 2004, pp. 85-91.

Storey, John. *Cultural Theory and Popular Culture: An Introduction.* 8th ed. Routledge, 2018.

❑❑❑

1. Guest Lecturer, Dept of English, Arignar Anna Govt Arts College, Vadachennimalai Attur

Exploration of Sonny's and Will's Cultural Identity and Identity Crisis in Gordimer's *My Son's Story*

–Dr. T. Alagarasan
–M. Sathya

***My Son's Story** is primarily concerned with social identity and the crises that 'Coloured' individuals face as a result of their 'in-betweeness', ambiguity, 'doubleness', and other characteristics. Their persecution stems mostly from their insecurity and exploitation by whites. After being fired from his work, he decided to get involved in politics for the good of the town. Sonny's family was provided a home among the whites by the political group.*

Abstract

Cultural identity completely evaluates people's traditions, heritage, language, religion, ancestry, aesthetics and social structures of particular group of people. Identity crisis is totally contradictory to cultural identity. It mainly affects adolescents. African literature has been a record of African writers on their cultural identity as well as their identity crisis. It has been an unresolved crisis of Africa. The most extreme cause for this problem is man's greediness and economical variations. By this way, the branch spreads and try to occupy the society. This factor plays a vital role in Gordimer's novel, *My Son's Story*. The protagonist of the novel, Sonny the school teacher have been low paid since the white school teacher gets more. Even Sonny has a higher qualification than the white school teacher. In every way the blacks were suppressed by the cultural identity and their quest for identity remains unfulfilled. Therefore, the black people strive to bring back their identity.

Keywords: Cultural Identity, Identity Crisis, tradition, heritage, sufferings, economic crisis

The term "culture" comes from the Latin word "cultura", which means "natural process of tending" or "mind nurturing". Cicero, a Roman orator, created the term "culture", which literally means "culture of the people". In the 18th and 19th centuries, as well as in the middle of the 19th century, culture was developed. Some scientists have used the term "culture" to describe a universal human capability. Then came the next phase, which was language and it allowed humans to advance. Culture refers to a portion of land that has been cultivated. Man lived in communities in the beginning and each community

established its own set of beliefs, customs, rituals and behaviours. People who had similar cultural traits formed their own civilizations or communities.

Human groups were tiny and distinct and they travelled in a predictable pattern. They had their own distinct personalities and sought methods to set themselves out from the crowd. They had few groupings, such as men and women, young and old, in contrast to present times; practically all humankinds have some similar features by nature. Some are proficient in the use of tools and weapons, while others rely on trained individuals for protection while hunting. The expert individual then instructed the group of people, and they attempted to create their required items. They are divided into communities based on their occupation once more.

Cultural identity refers to a person's sense of self, which is influenced by factors such as nationality, ethnicity, religion, socio-economic class, generation, and location. It can be represented through certain wardrobe styles and other aesthetic indicators. Cultural identification is a component of the communication theory of identity and it consists of four identity frames: personal, enactment of communication, relational and community. Cultural identity enquires about human nature and perceptions. In the last several years, "a new form of identification has emerged which breaks down the understanding of the individual as a coherent whole subject into a collection of various cultural identifiers" (Bunschoten R.,Binet, H.,& Hoshino (4). People identify the new born infant that whether he or she is a male or a girl at the time of birth. This name identity defies categorization. This has a lot to do with his or her ancestors and their traditions. It is also influenced by one's accomplishments as well as negative thinking.

The phrase "Identity Crisis" was invented by psychologist Erik Erikson. One of the most fundamental struggles that humans ever confront, according to Erikson, is the construction of identity. The average man's capacity is harmed by identity crisis, which causes tremendous anxiety. He says that no matter where a man encounters a crisis, there are ways to reclaim a better sense of self. In this regard, self-help is critical in quenching one's own or cultural identity.

South Africa is known as a "rainbow" nation. It features a diverse group of individuals from various cultures and countries. Some are immigrants, while others are indigenous. They are typically classified as black, white, or coloured based on their skin colour and race. South Africa, on the other hand, has Zulu ancestors. The country contains a variety of resources, including gold, coal and petroleum products, among others. It has a hot climate in nature and is the world's greatest greenhouse emitter in the artificial world.

In South Africa, the word "Coloured" refers to people who are "mixed race," "half-breed," "half-caste" or "mulatto" meaning they have white and black ancestry. Gavin Lewis states that,

> The categorization 'coloured' is an administrative invention, an attempt by the white supremacist state to divide blacks and preserve white, "racial purity" by treating Coloureds as a separate, coherent and homogenous "race" apart from both Africans and whites with a few more privileges than the former and much fewer than the latter (1987:3).

Despite their mixed caste, the white South African public opinion and the state resisted or rejected to integrate the 'Coloured' people. It was common throughout the apartheid era. In many social amenities, public areas, education, profession, and politics, the designation 'Coloured' and black people were segregated and marginalised. The state passes an act against coloured that, "The Population Registration Act of 1950 defines 'Coloured' as 'a person who is not a white person or a native" (February 1981: 192). Sonny, the school teacher, the protagonist in Gordimer's novel, *My Son's Story* is a 'Coloured' protagonist. The author imbues the figure with hybridity and cross-cultural energy in order to confront the system.

Because of ethnic, cultural and biological diversity, historical inquiries into the ethnic roots of 'Coloured' people reveal a further challenge in defining the word. The 'Coloureds' are known to have emerged shortly after the first settler arrived at the Cape of Good Hope in 1652. Francis Valentyn (1971) describes the huge range of ethnic components in the Cape at the beginning of the eighteenth century and traces their ethnic roots. Mixed-race individuals ranged from destitute rural proletariat to sophisticated craftsmen. Indigenous Khoisan peoples as well as slaves from Madagascar, Mozambique, and West Africa were among their forefathers. Political exiles from Indonesia, as well as slaves from the Dutch East India Company's zone of influence in the East, such as India, Sri Lanka and Malaya, were among those of Asian descent. The children of white-slave marriages tended to stay as slaves, whilst those of white-Khoisan heritage tended to be assimilated into the ranks of the Cape's free people. There was always extensive cohabitation across the colour line in the Cape Colony in the late eighteenth century. In any case, Afrikaner racial consciousness was strong enough to prevent absorption and the Cape Colony's white rulers considered the 'Coloured' people as a distinct and inferior group.

Despite the problematic nature of a 'Coloured' identity and its role as an imposed identity, the term was accepted by some of the 'Coloured' communities' elites, political and cultural organisations as a method of advancing their own interests as a group. 'Coloured' people, for example, desire assimilation into white societies. Van der Ross, a 'Coloured' academic and a key political figure in the history of 'Coloured' politics, refutes 'the myth of Coloured identity', claiming that

'Coloureds' and whites share the same culture and that the main difference between them is economic rather than cultural. Gordimer is interested in the tensions, paradoxes and ambiguities that surround the question of 'Coloured' identity. This novel investigates the prospects of social, political and cultural transformation in South Africa through the 'Coloured' narrative.

The apartheid regime divides both private and public spaces. They designate distinct public seats for blacks and whites at bus stations, parks, beaches, hotel tables and public restrooms, among other places. They offer a neat and clean environment for the whites, whereas the blacks' environment is messy and located at a great distance. This dramatic situation has been insisted by the words of Gordimer as,

> The Greek had a few tables set out with fly – spotted artificial flowers and tomato sauce bottles, at which people could be served, but not this family. If – as always – the children needed to go to the lavatory, the parents trotted them off down to the railway station, where there were the only toilet provided for their kind, although the department store had a cloak room for the use of other customers. As some lordly wild animal marks the boundaries of his hunting and mating ground which no other may cross, it was as if the municipality left some warning odour (MSS 11,12).

The system's fundamental philosophy is that the black people are typically treated as slaves and it is illustrated in the novel *My Son's Story*, where Sonny was banned to join and worried that it was sad for a Shakespearian lover. Sonny's need for knowledge and longing for Shakespeare and Kafka's writings are constantly ignored. Sonny's respect for him has never waned and he named his kid William with the intention of him becoming a writer. Sonny was nasty and violent in his attempts to breach the system's norms and regulations. On the other hand, white liberals have preserved the phrase and pillared it in order to present it as authentic.

Segregation is practised in many aspects of life, including public transportation, public seats, beaches, and a variety of other facilities. There is a clear link here between apartheid's ideological practises and Foucault's concept of physical segregation of the people through jail. Apartheid ideology necessitated a perception of racial separateness in individuals, in addition to the actual confinement of blacks under explicitly oppressive methods of apartheid.

In the novel *My Son's Story,* there is an identity crisis. Gordimer conveys the consequences of current South African apartheid, which repressed black African's. Social, political, economic, familial and racial themes are all addressed in the novel. Sonny, the school teacher's family and his community members are denied access

to the same possibilities as white people. Sonny was the first person in his town to receive a diploma. Hard woods and bricks were used by his parents and grandparents. He became the community's lighthouse. He was fired from his job after performing a demonstration to raise racial awareness among the school children. Will, Sonny's son, tells the narrative with his acute awareness of 'Coloured' identity as a self-divided category between white and black blood. The narrator's malediction of the black pigment in his veins encapsulates the tensions and incapacity that surround 'Coloured' community battles for 'unbelongingness' between the black and white. Despite the fact that the word "coloured" is derived from white blood, they do not regard it as either white or black.

Sonny shuts himself off from all cultural and political developments. On the other hand, even after receiving his university diploma, he is paid a pittance for his work. His white co-workers, on the other hand, are paid more than he is, despite the fact that they do not have the same qualifications. The apartheid system pays people based on their race and caste, not on their qualifications or expertise. The establishment wants the economic conditions of the black and 'Coloured' communities to remain the same. Because if their economic situation improves, they will no longer listen to the authorities. Even basic education was prohibited for them, but after several efforts and demonstrations by leaders, they were granted their right to school. They have for example, distinct schools with no technology advancements, infrastructure, or transportation amenities.

My Son's Story is primarily concerned with social identity and the crises that 'Coloured' individuals face as a result of their 'in-betweeness', ambiguity,'doubleness', and other characteristics. Their persecution stems mostly from their insecurity and exploitation by whites. After being fired from his work, he decided to get involved in politics for the good of the town. Sonny's family was provided a home among the whites by the political group. It's an act of disobedience against the Group Areas Act. The white settlement in Johannesburg from which the working class Afrikaners move out for a better life is referred to as a 'Grey Area' by the narrator. It was thought to be uprooting them from their current place and dislocating them in an unfamiliar environment. They felt as though they had been cast out in a strange place.

Aila, a revolutionist represents a new cultural identity among the oppressed. She is transformed from the traditional picture of a 'Coloured' lady, not only for herself but for all women. In Gordimer's prior works, black women are given only little political power and are depicted in isolation. She manages her family in numerous challenging conditions as a normal and quiet woman. She appears to be an excellent observer and she uses this skill to study various interpretations and bargaining strategies. Aila's profound adjustment results in a greater focus in and

around the family, as well as in society. She encourages and protects her daughter, Baby to pursue a fresh path and approach in their life.

Aila appears to be a metaphor for the prospect of future cultural transition in South Africa, as Gordimer improves Michel Foucault's assertion about the function of transgression in cultural change as,

> Transgression perhaps one day it will seem as decisive for our culture, as much a part of soil, as the experience of contradiction was at an earlier time for dialectical thought… Transgression contains nothing negative, but affirms the limitlessness into which it leaps as it opens this zone to existence for the first time (Foucault, 1977: 33-35).

According to Gordimer, there is nothing wrong with cultural adoption or transformation. Even in terms of convenience and enjoyment, it happens regularly. Meanwhile, she employed the 'Coloured' characters as the central characters to establish trans-ethnic and multi-racial ideals as the 'Coloured' community's symbolic representation.

The last part of the novel clarifies Sonny's and his son's strong determination. Will carry's his father's bag from the airport after his trip, along with comrades. Immediately they came across a problem that the white neighbors show their opposition against Sonny's family for their involvement in political activities. They accused Sonny's family for illegally occupies in mid of the whites. They start to shout and involve in riots that the land belongs to them. And it is not for any blacks or Communist, who are supposed to be their enemies. In this intolerable situation Will screams, "This is my father's house" (MSS 272). But no one accepts or minds his words. Even police tries to disperse the crowd, but does not take any action towards the revolutionaries. This inequality makes Will to disgust. At extreme, someone in the crowd throws the petrol bomb, which burns the entire house.

In front of Sonny and Will, the house burns entirely. It symbolizes their family's destruction or disintegration. Thus Sonny assimilates a strange gesture. Will's revival happens as soon as the horrible incident and says, "We can't be burned out, he said, we're that bird, you know, it's called the phoenix, that always rises again from the ashes. Prison won't keep us out. Petrol bombs won't get rid of us. This street – this whole country is ours to live in. Fire won't stop me" (MSS 274). This smell of destruction induces his thought provoking and he strongly commits himself in politics. He accepts his intention, before the crowd of whites, comrades and police etc., That there is no other possibility to revoke it.

My Son's Story is one of the country's historical texts. The impacts of the apartheid system have split the country, and it demonstrates the progression of a person's displacement and neglect. The attempt's major goal is to establish an intercultural identity in a multiracial and cross-cultural society. The importance of

self-identification and cultural identity in one's life cannot be overstated. It is a severe accusation if it is embarrassing to someone else for whatever reason. It is becoming increasingly important in current times, combined with a futuristic perspective. Individual displacement and its influence develop to cultural pluralism in the end, forming a new reality for a more emancipated society. Aila's trans-territorial migration and development of intercultural identity are emblematic of the new situation in post-apartheid South Africa as a multiracial and cross-cultural society.

References:

Bhabha, Homi K. *The Location of Culture*, Routledge, London, 1994.

Biko Steve (1978). *I write What I Like*, ed. Aelred Stubbs C. R., London: The Bowerdean Press.

Clingman Stephen. *The Novels of Nadine Gordimer: Private lives /Public Landscapes*, Baton Rough: Louisiana State Up.1985.

Foucault, Michel (1977). *Preface to Transgression Language, Counter-Memory, Practice*, ed. Donald F. Bouchard, trans. Donald F. Bouchard and Sherry Simon, Ithaca: Cornell University Press.

Gordimer Nadine, *My Son's Story*, London: Bloomsbury: Penguin, 1991.

Jadhav Gopal Maruti. Racism in Nadine Gordimer's *My Son's Story.* Pune Research Times (ISSN 2456-0960) Special issue Oct 2018.

Lewis, Gavin (1987). *Between the Wire and the Wall: A History of South African 'Coloured' Politics*, Cape Town and Johannesburg: David Philip.

Liukkonen, Petri. "*Nadine Gordimer". Books and Writers* (Kirjasto.sci.fi). Finland: Kuusankoski Public Library. Archived from the original on 4 December 2008.

Mohan.S, Major Issues in Nadine Gordimer's *My Son's Story* Gorteria Journal ISSN: 0017-224.

Sakamoto Toshiko. 'Coloured' Identity and Cultural Transformation in Nadine Gordimer's *My Son's Story*. http://www.ristumei.ac.jp>Ics.

Van der Ross, R.E. (1971). 'Coloureds', standard Encyclopedia of South Africa, III, Cape Town: Nasau.

Weinhouse, Linda (1993). The Paternal Gift of Narration: Nadine Gordimer's *My Son's Story.*

❏❏❏

1. Associate Professor, Department of English, Government Arts College, Salem-7
2. Ph.D Research Scholar, Department of English, Government Arts College, Salem-7

Research Article

Man-Woman Rapport: A Study of the Novels of Manju Kapur

–N. Kalaiarasi
–Dr. G. Keerthi

The novel is set against the background of partition which can be symbolically seen in Virmati's life too. She fights for independence against her family, society and also tries to fight her feeling towards a married man but she miserably makes lines of partition around her. Throughout her life she is reproached for her relationship with Harish because it is unsuitable in a society where patriarchy is so deeply rooted.

Abstract

The paper aims to evaluate the wide range of human emotions in the novels of Manju Kapur with special attention on man-woman relationship. Shaped by social and cultural code of conduct, the man-woman relationship has been the focal point in a number of literary texts. Apart from these features Kapur focuses on other rudiments that shape the man-woman relationship like physical environment, personal desires, financial position, bodily aspiration, emotional requirement etc. The novels of Manju Kapur are mostly looked at from the lens of feminism and the honest depiction of the feelings of men and women in her novels is not fully explored. The readers find a detailed expose of the intricacies of man-woman bond especially of the urban middle class in her novels.
Keywords: Patriarchy, Man-woman relationship, Identity, Psychological, Female heroes

INTRODUCTION

Rajeswari Sunder Rajan in her seminal text, *Real and Imagined Women: Gender, culture and postcolonialism* opposes feminist theory is by no means a single or homogeneous body of conjecture. On the contrary it is a persuasive analysis of the patriarchal modes of thinking and its political approach to literature. One of the major contributions of the feminist scholars has been the questioning of the absence of female authorial representation in the literary norm. With the increase of the feminist movement in the West, the women began to fight the oppressive gender arrangements in which they had an entity but no being. Opposed to which in India the image of Sita and Savitri flourished in literature for a substantial span of time.

The literary formations by Indian women writers were discharged as sensational or imitative. Therefore,

they had to follow to conventional themes like love, faith, motherhood etc. However, the twentieth century India saw an extreme rise in the number of women writers who grew prejudiced of the patriarchal suppression. There came a revolutionary change in the depiction of women characters and writing style of women writers. They unrestricted the orthodox representation of women characters as silent spectators or tools for pleasure of men. The women writers delicately initiated to project the desires, expectations, refusals and longings strange to women. Thus women writing about women not only offered a trustworthy picture of the dilemma of women but also became a political act.

One of the major hitches of the feminisms before the post-colonial era was that it universalized the understandings of women, overseeing the social and political power of colonialism. It also failed to take into account the social and cultural principles that shaped the Second and Third world countries. With Indian women writers writing in English this matter seem to have resolved.

Gender connection via man-woman relationship

The status of English has induced attention from every corners of India too. Indian writings in English have attained a significant position through the works of writers like Amitav Ghosh, Khushwant Singh, Salman Rushdie etc. However, Indian women writing in English is a reasonably new phenomenon which is swiftly gaining importance by the ineffaceable traces left by the works of writers such as Kamala Markandaya, Kiran Desai, Manju Kapur, Shashi Deshpande etc. All these writers deal with the sufferings that a woman has to undergo primarily in the male-dominated Indian society but the works of Manju Kapur does not simply voice the boundaries levied upon a woman. She deals with a wide range of subjects like identity crisis, personal fulfilment, inter and intrapersonal relationships.

Manju Kapur is a critically celebrated Indian novelist who has five novels to her credit, *Difficult Daughters, A Married Woman, Home, The Immigrant* and *Custody*. She deals with the combination of traditional and modern moral beliefs. All women novelists base their fiction around the experiences that they have had in their personal lives and thus intentionally or unintentionally dwindle in the territory of feminist declarations of one or the other kind. The writings of Kapur constitute a treatise that does not simply aim at undermining the patriarchal concepts governing a women’s life but she also provides a deep insight into man-woman relationship. She offers a close view on the man-woman relationship entangled in forced arranged marriages, love affairs that are not accepted by the society.

The women protagonist or ‘female heroes’ of Kapur’s novels pass through these complex relationships and evolve into independent and self-directed individuals. Thus, the gender relation in a patriarchal society through man-woman relationship is one of the central insertions in the novels of Manju Kapur.

The novel, *Difficult Daughters* is set against the political turmoil of partition. The novel spins around a young woman Virmati who is born into a conventional

family. Her yearning to study is creased by the proprietors of patriarchy and they soon begin to search a suitable match for her. Virmati fervently opposes the idea of arranged marriage, owing to her secret relationship with Harish, a married professor. Harish confesses his love for Virmati but disagrees to marry her, dreading the criticism it would draw from the society. He feels no attachment towards his uneducated wife Ganga but lacks the courage to dessert her. The mounting worry in Virmati's mind regarding her relationship with the professor prompts her to commit suicide but she is saved within time. When her family probes the reason of her action she discloses them her desire to pursue her education. In the end the difficult daughter Virmati is sent to Lahore for further studies. She tries to isolate herself from the professor but his constant efforts at reunion leads to physical intimacy between them and a result Virmati gets pregnant. Virmati who is left alone to gets the baby aborted. This incident further worsens her agony because she wants to achieve something meaningful in life but miserably dithers between her sensibleness and emotional dependence on Harish. She zealously wishes to actively participate in the freedom struggle like other women but is unable to snap her bonds from the professor. Kapur writes thus:

> She felt out of place, an outcaste amongst all these women. She thought of Harish who loved her. She must be satisfied with that. These larger spaces were not for her. She felt an impostor sitting in the hall. Again, scenes from her private life came unbidden before her eyes. (DD 144)

After completing her B.T. she becomes the headmistress of a college in Nahan which marks the beginning of independence in her character. Later she is expelled from the institute because Lalaji comes to know about her illicit relationship with the professor but she does not lose hope and decides to go to Shantiniketan. Harish follows her there and finally opines to marry her. Despite being disliked by her family and being conscious that she would have to compete for her husband's affection, Virmati marries the professor. She quite plausibly has to put up with corrosive remarks of professor's first wife and is also deprived of any contribution in the household errands. Her marital life seems to stagnate because of disapproval from the society, lack of warmth in Harish's household and a miscarriage. The only solace that she gets is a chance to study in Lahore again but she is forced to return due to the political conflict of partition. Virmati is left with no option but to adjust and amend in the stifling borders of her husband's house. She begets him a daughter and dies an almost trivial death.

The novel is set against the background of partition which can be symbolically seen in Virmati's life too. She fights for independence against her family, society and also tries to fight her feeling towards a married man but she miserably makes lines of partition around her. Throughout her life she is reproached for her relationship with Harish because it is unsuitable in a society where patriarchy is so deeply rooted. The society stimulates only those bonds that suit the boundaries defined by it. Thus, the strong radical potential of the novel is somehow affected by aesthetics of dependence of a woman on man.

Kapur's second novel, *A Married Woman* is located in the time of socio-religious flux of the country. The novel untangles the developments in the life of the protagonist, Astha. Being the only child, Astha's parents are the prime decision making authority in her life. Her first encounter with a boy is in her youth which soon ends due to the interlude of her strict mother. In her prime adolescence, Astha gets involved in another romantic affair with Rohan. She yields herself emotionally and physically hoping to get married to him. However, she is disheartened when Rohan undoubtedly states his plan to go to Oxford for further studies. On the other hand Astha's parents who are on the brim of retirement are worried to see their daughter married and settled. Astha eventually succumbs to her parent's protestations and agrees to marry Hemant who seems more convincing than the other suitors on account of his education in the United States and a bureaucrat family background.

As the author expounds the married life of Astha, the reader becomes aware that she feels stuck in the claustrophobic environment comprising of a loveless marriage, responsibilities of motherhood, overarching in laws and an ever prying mother. Hemant seems to disagree with everything that Astha wishes to undertake further broadening the gap of temperamental mismatch between the two. Despite the protest from Hemant and her parents, Astha makes her mind to teach in a public school. During her time in the school she participates in a theatre workshop where she meets a creative street theatre artist named Aijaz Akhtar Khan. Astha is deeply disturbed when she reads the tragic news of Aijaz's assassination during Hindu Muslim riots. Hemant reprimands his wife for showing more than required interest in the death of Aijaz which makes Astha even more detached from him.

In due course of time, Astha comes in contact with Aijaz's widow, Peeplika Khan and finds avent of her suppressed emotions. She embarks upon a lesbian relationship with Peeplika Khan which provides her serenity like never before. Peeplika Khan forcesAstha to desert her seemingly happy marriage and live with her but Astha decides to bear the notions of her marriage and continue living with Hemant. The communal tension in the backdrop of the novel serves as an exposition of the inner chaos of Astha. She understands that the grade of a married woman in a patriarchal household, especially in Hemant's household is merely of a "willing body at night, a willing pair of hands and feet in the day and an obedient mouth." (MW 231) Despite this she lacks the guts to hold an unusual relationship over the miseries of the relationship with her husband. Kapur in an interview said:

> All the novels explore the difficulties of reconciling the devotion to family expected of middle class Indian women with their aspirations and desires for a life outside. As she said "I am interested in the lives of women whether in the political arena or in domestic spaces. One of the main pre occupation in all my books is how women manage to negotiate both inner and outer spaces in their lives- what sacrifices do they make in order to keep the home burning – and at what cost

to their personal lives, do they find some kind of fulfilment outside the home.

A Married Woman is an honest assessment of the psyche of an Indian woman who like Astha is caught in the ordinary and annoying atmosphere of marriage. All the dimensions of man-woman relationship have been set by men in whose making women had an insignificant or no part at all. Astha tries to recover herself and regain her lost identity in the company of Peeplika Khan. But the presence of her husband handicaps her direct access to the problem. As the societal norms dictate, she again proceeds to put up a disguise of happy marriage with Hemant and her love for Peeplika and last hope for freedom remains unanswered.

A house is a physical structure which is used as a residence or accommodating place by the people but a house can be called as a home only when it includes unconditional attachment, attention, support, nurturing and protection of family members towards each other. ManjuKapur in her third novel, *Home* deals with myriads of implications that this word can have. The novel is set among the hustle bustle of the Banwarilal cloth shop where from an early age the children are directed to preserve the traditional value of the household. In the novel the men executeorthodox role of bread winners while the women are preoccupied with making food and emotional ease available to their male counterparts. All the marriages are negotiated keeping in mind the bulky amount of dowry that the bride would fetch. However, the turning point in the novel comes when the elder son, Yashpal rebels the prevalent mode of wife selection and admits his love for Sona, a girl from an ordinary family.

After much argument both are married but Sona's mother -in-law target banters at her for she fails to bear a child. Meanwhile, Banwari Lal's married daughter, Sunita passes away under mysterious circumstances and the responsibility of her orphaned son Vicky is handed over to Sona on account of her being childless. After a sequence of fasting and visit to holy shrines, Sona gives birth to a daughter, Nisha and a son, Raju. Vicky who by now gets fifteen years of age seduces the young Nisha due to which she becomes emotionally alienated with her family and surroundings. Her sense of home as a place of warmth and care is slanted because of the sexual assault by her cousin on her. Nisha's younger brothers are married before her because she her horoscope declares her as mangli.

Nisha proceeds to pursue a degree in English where she meets and courts Suresh. Her affair produces restlessness in the household because according to Nisha's family since Suresh belongs to a low caste he is in no way eligible to marry her. Nisha protects Suresh and rebels. However all her efforts are in vain and finally the chapter of Suresh is never conversed again. Compelled by her seclusion and fervent sense of becoming independent Nisha becomes an entrepreneur. She feels isolated in her family because being a thinking woman she has no endurance with typical code of conduct which force a woman to recourse to dependence on man. The family's search for a groom whose horoscope matches with hers finally settles on a widower,

Arvind. When Nisha meets Arvind she does not present herself as an anxious female but as a daring individual for whom her work is her identity. In *Home* the man-woman relationship functions chiefly on the level of economic considerations and social demands. The novel divides the men and women in the dual opposites of providers and nurtures thus it does not rise much above a domestic fiction. Here it is right to quote the words of N.S Warake:

> Though Manju Kapur has portrayed the character of Nisha as an educated, confident, self-assured, bold and independent, high spirited new woman, paying honor to Indian tradition, like Ezekiel believes 'Home is where we have to gather grace." (Warake 277)

Conclusion

Popularly known as the Jane Austen of India, Manju Kapur writes women-centric novels sketching their journey from feminine to feminist. Her novels with deviously simple titles like *Difficult Daughters, A Married Woman, Home* etc., involve an acute understanding of human relationships and social insincerity. The female heroes of her novels risk the security of marriage, family and household in the search of sovereignty which is smothered by the burden of phallocentrism in society and plethora of family duties. However, one characteristic that remains complete in every novel of Kapur is her foregrounding of intense shades of man-woman relationships. All her women character experience various dilemmas regarding their relationship with their male counterparts and are destined to negotiate with this evolution in their own ways. Some of them abandon their relationship with their lovers or husbands while the others yield to the cultural trap of honour and acceptance in the society.

References:

Primary Sources

Kapur, Manju. *Difficult Daughters*.Faber and Faber, 1998.

—. *A Married Woman*. Roli Books, 2002.

—. *Home*. Random House India, 2006.

—. *The Immigrant*. Random House India, 2002.

Secondary Sources

Chandana, Yashika. "QUEST FOR IDENTITY' BY "HER" IN THE NOVELS OF Manju Kapur- Difficult Daughters, and A Married Woman." *IJELR*, vol.1, no.4, 2014.

Kumar, Gajendra. *Indian English Literature: A New Perspective*. Sarup and Sons, 2001.

Rajan, Sunder Rajeswari. *Real and Imagined Women: Gender, Culture and Postcolonialism.* Routledge, 1993.

Sethi, Honey. "The Womenly Observation by ManjuKapur."*IJIET*, Oct.2012.

Warake, N.S. "Quest for Identity and Survival: A Studyof Manju Kapur's Home." *JLCMS*. vol.2, Dec.2010.

❒❒❒

1. Ph.D Research Scholar, Government Arts and Science College, Komarapalayam

2. Research Supervisor and Assistant Professor of English, Government Arts and Science College, Komarapalayam

Research Article

Idiosyncrasies: A Psychological Analysis in Roopa Farooki's *Half Life*

–S. Yasmeen Firdous
–Dr. T. Gangadharan

Bipolar disorder is well known as manic depression .It is characterized by periods of depression and periods of atypical elevated happiness that last from days to weeks each. If the elevated mood is grave or correlated with psychosis. In hypomania, the individual may experience crying and have a negative outlook. It contains other mental health issues such as anxiety disorder or disorders, which often results in decreased productivity in both personal and the professional arenas of the patient's life.

"Life doesn't have a neat beginning and a tidy end; Life is always going on,

You should begin in the middle and end in the middle and it should be all there"

\- V.S.Naipaul

South Asian literature includes the works written by the writers of Indian Sub- Continent and its diaspora. These writers are from Pakistan Bangladesh, Sri Lanka, Nepal, Bhutan, Myanmar, Tibet and Maldives. The South Asian literature reflects the similarities in custom, philosophies of life, struggles and success of these developing nations and its people. The female writers have penned novels on different topics as child marriages, love stories and family issues. Some of the South Asian writers include Jhumpa Lahiri, Arundhati Roy, Salman Rushdie, Vikram Seth, Rupi Kaur, Chitra Banarjee Divakaruni and Rohinton Mistry.

The word 'diaspora' is used to refer to the mass dispersion of a population from its indigenous territories or the displacement of other peoples. The salient characteristic features of the diaspora writings are the quest for identity, nostalgia, up-rooting and de-rooting. Its meaning is 'to sow over'. Some of the notable female writers are Roopa Farooki, Monica Ali,and Zadie Smith, Bharathi Mukherjee and Uma Parameswaran.

Roopa Farooki, the British novelist and medical doctor ,was born in Lahore, Pakistan in 1974 to Pakistani father Nasim Ahmed Farooki and Bangladeshi mother Nilofar Farooki. She was seven months old, when her parents moved to London. She studied Philosophy, Politics and Economics at New College Oxford University. She worked at Arthur

Anderson as corporate Finance and Account Director at Saatchi and Saatchi and JWT. Now she works in London as a junior doctor. Her notable work is *Bitter Sweets* in 2007 and it was shortlisted for Orange Award for New writers. Her other novels are *Corner Shop* in 2008*, The Way Things Look to Me* in 2009 and it was voted as one of the Times Top 50 paperbacks in 2009 and also it received Orange Prize in 2010. Her fourth novel is *Half Life* published in 2010. It was selected in USA as a second novel on The Entertainment Weekly as 'Eighteen Books we can't wait to read this Summer' and she received International Muslim writers award in 2011. Her fifth novel *The Flying Man* was published in January 2012 and *The Good Children* in 2015 and she graduated as a doctor. She turned to write Children's Fiction on the female BAME protagonists in *The Double Detectives: Medical Mystery* at Oxford University press. She wrote *The Cure for a Crime* in 2020 and *Diagnosis Danger* in 2021.

It is indispensable to identify the salient features of diasporic sensibility. Nostalgia, being a part of diasporic sensibility, is associated with a longing for the past events and also personalities. The recollections of one's past events, people who care about and places where once spent time are strong triggers of nostalgia. The word 'nostalgia' is a originated from Greek compound, namely, homecoming. Homecoming is a word, which means 'pain' or 'ache'. It was coined by a nineteenth century medical student to describe the anxieties displayed by Swiss mercenaries fighting away from home.

Idiosyncrasy is an unusual feature of a person, behaviour or way of thinking, mannerism of a person. It may be used both for positive and negative aspects .But mostly it describes negative cannotations. The background of the novel took place when Civil war arose between East and West Pakistan and Bangladeh emerged as a state in 1971. Aruna Ahmed Jones read the poems and letters of Harihassan ,a Bengali writer. It persuaded her to leave her husband, Doctor Patrick and met her ex-lover Jazz. She is a scholar and she is known for her research on 'Influences of the modern subcontinental poems'

This article aims to show the psychological sufferings of the character throughout the novel. The central protagonist of the novel' Half Life', Aruna Ahmed Jones with her Bengali descent was raised in Singapore. She was an academic dependable with her research work on 'Influences of the modern Sub continental Poem' for which she read the poems and letters of Hari Hassan, a well reputed Bengali writer. She married a lovable doctor Patrick in London. She amalgamates the modern urban dream. Her avidity to make peace with the life which she left mislaid in search of ratification .She bemoans it in search of her self-identity. Her catastrophic attempts were using street drugs, vodka at breakfast. She was a spoiled woman struggling with bipolar disorder. She had three miscarriages. She was a self-destructive character in search for her identity.

Hari Hassan, a well reputed Bengali writer, looked after his wife but ignored to love her. He wished to expose his truth of life to his son Jazz .But Jazz abandoned him .Hari was epitomized as Tagore's heir and had Wifred Owens sensibility. Finally Jazz envisaged Aruna that running away is easy but coming home is difficult. It was written by his father Hari Hassan. Hari was now dying in Kuala Lumpur General hospital and he wished to reveal the truth about his wife. He often felt pain to write. He wrote a letter to his son Jazz again and again, who is a pulp fiction writer. But Jazz never responded. Harihassan's worse condition was due to paralysis of legs and chest and muscle weakness.

Hari felt that his son wanted him to be a prisoner in a private room .Jazz is a pulp fiction writer in Singapore .Once he abandoned Aruna to complete his profession as a writer. Harihassan also abandoned his wife who took care of Hassan for nearly thirty years. His only love, Nazneen died of Eclampsia. Hassan thought that his friend Anwar's words .He saw the real sufferings of the people in the war and deaths. So he stayed in Calcutta, though it was risky. Hassan thought that it would be better to die for the country and not to watch other people die. He had not imitated Tagore or Owen instead. Hassan was caught while comparing others like a ventriloquist with a puppet. "The riot like a flame ,devouring without reason. When the bodies or on the ground ,God will choose his own." (Farooki 43).

The novel *Half Life* is woven around Aruna , Jazz and Hassan with their past and present. Aruna psychologically suffers throughout the novel. One morning when she reads the poems and letters of Hari Hassan,a well-renowned Bengali writer. She takes herself off from her half eaten porridge, in Bethnal Green London flat, leaving her husband Patrick in search of her past life. These words echo in her mind often. 'It's time to stop fighting and go home' (47). She dresses for the place, where she moves. In her flat, her availability is more notable than her presence. Every casual greetings seem ambiguous to her .When she moves to Singapore, she sits in a café at Heathrow and waits for her flight with quivering sensation. She waits for Jazz to extricate her like a damsel in unremitting distress. Jazz is more to her than her husband Dr Patrick Jones and her family. Her life dangle between present and the past. Aruna and Jazz were together when they were in school days. Everybody assumed them as siblings. They were too intimate to each other and later they started dating. Meanwhile, Jazz's mother hadn't been well and he remained in Singapore, whereas Aruna moved to London. Aruna could not understand the responsibilities of a mother, when she was three months old and she was nurtured by her grandmother. She was very much distracted by her father.

Her London life was monotonous. She always called her home as flat. Her bitter experiences are described thus:

"Perhaps the real she could fall away without anyone noticing
Like a tree falling unheard in the forest and all that would be left
Was the unreal her that he believed her to be; Perhaps it was only a
Matter of perception after all" (Farooki 61).

Aruna's addiction of drugs became intensified and it began during her breakfast . Her self medication was using of cannabies, cigrattes and sex addiction. After departing from Jazz, she married Patrick Jones. A girl'ss relationship with her father shapes her childhood experience. If her father is absent or erractic in behaviour, this sets his daughter up for feeling of low self esteem and trouble with unsuspicious men in general. Therefore father plays a well -being role for his daughter .Father can simply show his amenable behaviour to be around in conversation and take interest in all areas of her life.

Mr.Ahmed's general frailty ,his death made Aruna harder,firm which really hurts her.Mr.Ahmed hadn't been an awful father but not concerned as good enough.Aruna suspected that she had followed his example for not being a good daughter.She let herself sink psychiotically into her grief.

Apart from Jazz, she was accountable to no one. Once a nurse assumed that both Aruna and Jazz are Bengali. Aruna muttered ambivalently that if they were cousins or more than that. Her mood got worse and she took off from his work as a lecturer in literature and language faculty. The Doctor explained to Aruna for precise stage of grieving with the emotions of denial, anger, bargaining, depression and after that final stage was acceptance. Her anger and depression was "growing with the vegetable speed of jungle devouring human remains; it Crushed her in a muscular embrace,collapsing walls to become the world around her" (Farookin 82). Finally, Aruna reached the manic depression of Bipolar Disorder which tends to peak in early childhood . "The storm is where the story starts, A bolt of lightning,and a death" (Farooki 83).

Bipolar disorder is well known as manic depression .It is characterized by periods of depression and periods of atypical elevated happiness that last from days to weeks each. If the elevated mood is grave or correlated with psychosis. In hypomania, the individual may experience crying and have a negative outlook. It contains other mental health issues such as anxiety disorder or disorders, which often results in decreased productivity in both personal and the professional arenas of the patient's life. Aruna's mental state becameworsened. She seemed to have prepared so long for death. She seemed to have no idea how to live." she carried on like a walking ghost,a survivor of a nuclear accident who carried the promise of dying within her" (Farooki 147).

She lived only for Jazz which was painful to her. Finally, Aruna was surprised to see the natural thing. "My brother enemy,my brother friend. She finally got the

answer she wanted. Aruna is finally going home; she should feel satisfied or at least content, but instead she feel ambigious, instead full of hope for future. She is thinking of the past" (Farooki 238).

Aruna is passing many blemish both old and new. Aruna's father died in storm when he was in sixties and for not being in good health. While having dinner with his daughter, he had chest pain and a heart attack and died. Her father had not been awful. Aruna followed her father for not being a good daughter. " She is floating between the two worlds, Jazz and Patrick. She takes medication. She feels guilty of doing something which she shouldn't have. She tells herself it's better to live. It's better to have even half a life, to have half chance for happiness, than none at all" (Farooki 247).

Jazz in his latest book wished to get apology from his old friend. Aruna for leaving her. She went off to meet Jazz from London to Singapore looking untidy and dirty appearance. She does not wish to care herself. Even Jazz said to Aruna that she did not come back to Singapore for him. She came back to ask forgiveness for leaving and to say goodbye. It is because they never had the chance before to complete their story. Aruna says that the moment they shared together will never change. It is because she always loves him always. With a little kiss, they end up with his latest novel which Jazz has written. "Her suffering isn't fake,unlike the rest of her; it is like a weight, a parasite, she carries around with her, like a pregnancy" (Farooki 85). Finally Aruna thinks that the word Jazz had written to her inside his novel which was presented by Jazz to Aruna. "My dearest Rooney. My sister my friend. It's time to stop fighting and go home" (Farooki 158). It is so proved that Roopa Farooki's novels delineate the idiosyncratic behaviour of her characters, who suffer due to complexities of life.

References:

Farooki, Roopa. Half Life, Pan Macmillan Publishers 2011. Print. https:en.m.wikipedia.org.

❒❒❒

1. Ph.D. Scholar (Part Time), Government Arts College (Autonomous), Salem-636 007, Tamil Nadu
2. Associate Professor of English, Government Arts College (Autonomous), Salem-636 007, Tamil Nadu

Research Article

Inspiring Image of Epic Women in the Select Novels of Amish Tripathi

–Joshi Usha
–Dr. J. Dharageswari

Women are expected to be dedicated, loyal and devoted as wives, daughters and mothers. but apart from these characters, these two protagonists are also very courageous, strong and wise. They were also eligible to take the state affairs in their hands and rule the kingdom. Many writers have written about them either in the form of poetry and fiction. One such writers is Amish Tripathi. Amish is a banker turned author. He is well-known for his Shiva's Trilogy, Ram Chandra Series and other non-fiction books.

Abstract

Indian Literature is one of the most celebrated arts in the world. The myth and fantasy in Indian novels play a very prominent role in Indian Literature. Epics like the Ramayana and the Mahabharata are the two most unforgettable epics of India. Different people have their own different ways to interpret these epics. Amish Tripathi has made an attempt to this. He has picked the prominent characters of these epics and presented his own views through his novels. He has given a special place for women in his novels. The picture of poised and composed Sita and Sati are shown as warriors and dauntless. Amish has given a total different picture of these legendary women of Indian epics. Even though the men in the novels like Shiva, Ram, Dilipa, are shown as the central figures in his novels, women like Sati, Ayurvati, Sita, Kali are, nonetheless, the absolute head turners. The story is knitted around them. It gives the readers immense pleasure and emphasis on all characters beyond gender.

Keywords: unflappable, empowerment, myth, fantasy, patriarchy, distinctively phenomenal.

Objectives:

1. To study the status of iconic women of Indian epics through a different dimension.
2. To research on the possible relationship of men and women in the ancient India through the selected novels of Amish Tripathi.

In India, literature is one of the most celebrated and prominent arts. There are many authors, poets, novelists, story writers, lyricists in India. Female writers hold a prominent role in Indian Literature. Literature has always been given one of the most

crucial places in our country since ages. People in India are imbibed with keen interest, knowledge and creativity, be it essays or novels or epics. Indian literature is rich in spirituality, emotions, morals, family values, myth, fantasy, history, patriotism, culture, tradition etc. History, diversity, cultural richness are reflected with great perception and sensitivity in art works of India.

Even if you meet a small kid in India, he will murmur some kind of a small rhyme, just for fun, playing with his friends. Indian mothers skilfully make some kind of lullabies by putting instantly formed ideas, spun with some rhyming words to make their dear children sleep. Indian grandmothers are very impromptu in spinning instant stories. Famers can be seen making their own lyrics, getting ideas from their surroundings. In this way, Indians are not needed to be introduced to literature, since they are, someway or the other, deeply rooted to it since ages. They may not be evident in the form of writing, but are passed on by word of mouth.

Immense pieces of writings are contributed by Indian writers to the field of literature. One can relish the real taste of Indian culture, tradition, villages, beliefs, heritage, history etc while reading Indian piece of literature. Not only that, Indian literature is also contributed by feminism and female oriented works. This subject is well- fed when it comes to Indian writings. 'Female' is considered both curse and boon in Indian families. In the form of Goddesses, like Goddess Lakshmi, Goddess Parvati, Goddess Saraswati, Goddess Sita, Goddess Kali etc, feminism is celebrated, it is worshipped. Whereas, in most of the families, feminism is suppressed under the blanket of patriarchy.

In some Indian houses, it is seen that the men want women to be submissive, meek and obedient, rendering their service to house hold chores, bearing and growing up children, taking care of her family etc. Dogmatic women are not entertained in most of the Indian families even today. This dogma also reflects in Indian literature. Keeping this aside, Indian literature has also shown women very powerful and has given equal importance and respect. For eg., 'The God of Small Things' by Arundhati Roy, 'The Inheritance of Loss' by Kiran Desai, 'The Palace of Illusions' by Chitra Banerjee Divakaruni. Now a days, Indian literature is open for shielding equal political and social rights just as for men, and this kind of literary works are appreciated by Indian male society.

Women are usually portrayed as very cultured, well-groomed, poised, submissive, beautiful, graceful etc, in most pieces of art, be it Indian paintings, Indian movies or Indian literature. Indian epics also is big evidence for this. In the two most prominent epics of India, The Ramayana and The Mahabharata, everyone is well aware of the two female protagonists, Devi Sita in The Ramayana and Devi Draupadi in The Mahabharata. Both the women characters are epitome of Indian

women. People talk about how cultured, loyal, dedicated and well-mannered the two women are and also expect their family women to follow the footsteps of these two devis.

Women are expected to be dedicated, loyal and devoted as wives, daughters and mothers. but apart from these characters, these two protagonists are also very courageous, strong and wise. They were also eligible to take the state affairs in their hands and rule the kingdom. Many writers have written about them either in the form of poetry and fiction. One such writers is Amish Tripathi. Amish is a banker turned author. He is well-known for his Shiva's Trilogy, Ram Chandra Series and other non-fiction books. He has portrayed these historic Indian women as warriors. In his novels, not only he has portrayed the female protagonists as 'adarsh bharatiya nari', but also the other hidden talents and characteristics of women are shown. Some of his novels are 'The Immortals of Meluha', 'The Secrets of the Nagas', 'The Oath of the Vayuputras', Ram – Scion of Ikshvaku, Sita – The Warrior or Mithila etc.,

Tripathi's way of putting forth his ideas of womanhood through the strong legendary characters in his novels is phenomenal. Tripathi says, "The most powerful force in a woman's life is the need to be appreciated, loved and cherished for what she is." The female characters are very strong and powerful in Amish Tripathi's novels. They exhibit pure courage and unflappable nature in his novels. He tried to picturise his females with different and unique features. Some of the female characters of Amish are Sati, Sita, Kali, Anandamayi, Ayurvati etc. Each female character is distinctively phenomenal in its own way.

In the first book 'The Immortals of Meluha', Tripathi introduces Sati to the readers. Amish has portrayed Sati as a warrior and the most suitable match for Shiva. She is depicted as the epitome of women empowerment. She is the daughter of King Daksha and Queen Veerini. She is considered as unlucky and cursed, mentioned as 'vikarma' in the novel, also means 'untouchable'. It is believed that she brings misfortune to her clan, according to her father, King Daksha. She gives birth to a deformed child from her first marriage and is declared as untouchable.

In the novel, Shiva is a human with flesh and blood, called as Neelkanth, the saviour and the destroyer of evil. When he expresses his desire to marry Sati, Nandi explains him the concept of 'vikarma' as, "Vikarma people, my Lord," says Nandi sighing deeply, "are people who have been punished in this birth for the sins of their previous birth. Hence, they have to live this life out with dignity and tolerate their present sufferings with grace. This is the only way they can wipe their karma clean of the sins of their previous births. Vikarma men have their own order of penance and women have a different order. There was a procession of Vikarma women on the road are just left. Is their puja a part of the order?" asked Shiva.

“Yes, my Lord. There are many rules that the Vikarma women have to follow. They have to pray for forgiveness every month to Lord Agni, the purifying God, through a specifically mandated puja. They are not allowed to marry since they may poison others with their bad fate.

They are not allowed to touch any person who is not related to them or is not part of their normal duties. There are many other conditions as well that I am not completely aware of. If you are interested, we could meet up a Pandit at the Agni temple later and he could tell you all about Vikarma people.” (‘The Immortals of Meluha,’)

Shiva is astonished on hearing this. In spite of this, he was still willing to make Sati his wife. He wanted to marry her, crossing all societal barriers.

Sati, on the other hand, strongly stands parallelly in support of Shiva. She is the true motivator of Shiva. It’s like the embodiment of an ideal couple. Since India is a country where we always grow up listening to mythical and epic stories, taking lessons and morals from them, the novels of Amish Tripathi is surely a support to meet such quench for this present generation. Even though, the events in the novels are imaginative and fictional, the characters which are taken from the epics of Indian Literature are real and are much familiar to Indian society. Therefore, it puts much impact on the readers and inspires the people of India, especially, the youth.

Conclusion:

Feminism will always be a topic of discussion when it comes to literature. Women are mostly shown as very timid, shy and conservative, busy in household chores in Indian Literature. Amish Tripathi’s way of portraying a woman is very impressive and inspiring. Any woman who has read his novels would always love to adapt the phenomenal qualities of Sati and Sita.

References:

1. Tripathi, Amish, The Immortals of Meluha, Westland Limited, Chennai, First Edition, 2010.
2. Tripathi, Amish, The Secret of the Nagas, Westland Limited, Chennai, Reprint, 2012.
3. Tripathi, Amish, The Oath of the Vayuputras, Westland Limited, Chennai, Reprint, 2012.
4. Tripathi, Amish, Scion of Ikshvaku, Westland Limited, Chennai, Reprint, 2015.
5. Tripathi, Amish, Sita Warrior of Mithila, Westland Limited, Chennai, Reprint, 2017.

❒❒❒

1. Research Scholar, Department of English, Kandaswami Kandar’s College
2. Assistant Professor, Department of English, Kandaswami Kandar’s College, Paramathy Velur, Namakkal, Tamil Nadu – 638 182

Women are Exploited as Immigrants and Expatriates in Certain South Asian Novels

–S.Deviga
–Dr. B.Vishalakshi

In stark contrast to the before novel mentioned, Chandani Lokuge's novel, Turtle Nest*, is completely different. Aruni, the main character of* Turtle Nest*, is a young spinster searching for her biological identity at a time when Dimple married women seeking to construct an identity as wives. Aruni returns to Sri Lanka from Australia to trace her ancestry when Dimple faces difficulties establishing an immigrant identity in their foreign country.*

Abstract

Women have historically experienced discrimination on the basis of race, class, psychology, physical appearance, and economic factors. These discriminations affect women of all ages and are a universal problem; they are not limited to any one ethnicity, time period, or geographic region. Women's exploitation has been examined in this research by comparing at random the writings of three South Asian female authors, Bharati Mukherjee's Wife, and Chandani Lokoge's Turtle Nest, to those of immigrants' and expatriates' experiences.

Keywords: immigrants, feminism, exploitation, exploration, and expatriates.

The history of women begins with the development of civilization in diverse places of the world. The ancient, the mediaeval, and the contemporary periods make up the three main divisions in this history of the situations and treatments of women. It is asserted that a woman was the first homosapien to be appraised. She gave birth to another female while being a hermaphrodite. Man entered the evolutionary process many years later. Women first worked as food gatherers and hunters. Male looked after the house. Over time, pregnancy inducements and associated obligations compelled women to remain at home. This opened the door for males to become hunters. Pregnancy, delivery, and breastfeeding were difficult jobs that tested women's power.

The difficulties that man had while hunting and gathering food increased his strength and turned him into a physically robust being. Man began to set laws that were favourable to him as he gradually rose to

power. The religious framework severely diminished the status of women. Every religion has portrayed women as a secondary source that is less valuable than her man. Women were not permitted to undertake any ceremonies during the Vedic era. Even Islam, Taoism, Buddhism, and Christianity view women as inferior to men.

The degree-holding female protagonists of these authors leave their homes, assume respectable roles in society, move overseas, and bravely take on obstacles. Anita Nair states,

> Literature has always been ambivalent in its representation of women. Good women as in ones who accepted societal norms were rewarded with happily ever after. Even feisty heroines eventually go onto find content and life's purpose in a good man's arms, be t Elizabeth Bennett (Pride and Prejudice) or Jane Eyre (Jane Eyre). Alternatively they are left to rye their lot with a contrived courage as with Scarlett O Hara (Gone with like wind) or have to take their lives lke Anna Karemira or karuthamma (Chemmeen) or Emma Bovary (Madame Bovary).

This study analyzes the resilience of the protagonists in Chandani Lokoge's Turtle Nest and Bharati Mukherjee's Wife against exploitation and discrimination.

The second novel written by Bharati Mukherjee, Wife, was published in 1975 and tells the tale of Dimple Dasgupta, an Indian woman. She and her husband relocate from Calcutta to New York and come from a middle class Bengali household. The protagonist's condition and the mental and psychological harm caused by her experience are both examined in the story. The book details Dimple's life in both India and the US. Dimple, a 17-year-old girl, continues to live in her make-believe universe. Dimple is distinct from other everyday girls in every way. She is an idealist who is engrossed in her own imaginative formation.

The story centres on Dimple's struggle to understand her original country and culture while being held captive. Additionally, it depicts the young girl's inner thoughts as she grows up to become a woman. Dimple's life changes when she moves to New York City. Dimple had grown accustomed to the patriarchal code since she was a young girl. She enjoys living the ideal Bengali wife's life. From the viewpoint of her male-dominated family, she avidly fantasies about being married.

Even though they come from a wealthy, upper-class, traditional Indian family, Dimple's family lives in a very tiny house. Twenty-year-old Dimple is captivated with marriage, both as a concept and as a series of occurrences. As it is echoed; "Marriage would bring her freedom, cocktail parties on carpeted lawns, fund-raising, and dinners for noble charities. Marriage would bring her love" (*W* 3). As she considers the favourable change of circumstances, Dimple is unable to think of

anything but the marriage. For her, marriage gives freedom, joy, and financial success. Dimple picks a neurosurgeon to wed in order to live a wealthy life.

On the other hand, Mr. Das Gupta, the father of Dimple and an employee of the Calcutta Electric Supply Company, prefers to marry an engineer. Dimple's fantasies about her marriage and future spouse always take over. She thinks getting married will fulfil all of her life's goals.

Observing Dimple's propensity for fantasising, Jasbir Jain says "it is difficult to treat the novel as a study of cultural shock fir even while in Calcutta, Dimple is an escapist and lost in her private world's fantasy?" (15).

Dimple views the planning and preparation that goes into being married as a practise run for her marriage. She spends days with zeal and excitement getting ready for the marriage. She makes plans for the fortunate time when her father is looking for the "best man." She is concerned about her deteriorated structure and appearance, which she uses emotionally to define her future life and destiny. She looks into every avenue—chicken soup, trips, homoeopathic medications, and back rubs—to better herself. She reads periodicals to learn beauty advice, and she even buys skin-whitening cream.

Education, in her opinion, is a crucial component of a happy marriage. Amit and Dimple both acknowledge that marriage is the foundation of life. She is upset when her school exam is put off because it is difficult for her to find a good partner without a degree. She makes an effort to study for her university exams, but her thoughts are always drawn back to getting married. Finally, her father marries her to Amit Kumar Basu, an engineer from a bland middle-class family who immigrated to the US. According to Indian tradition, Dimple relocates to Amit's home after getting married.

Dimple initially feels uneasy being at her in-laws' home. She dislikes their home because it does not appear to be lovely or roomy. Additionally, she has to deal with Amit's mother and sister. Her mother-in-law prefers to refer to her as "Nandini," as she despises the term "Dimple."

Dimple lives in a fantasy world all the time, but the realities of life clip her wings. When her dreams are crushed, she experiences agony. Dimple gradually comes to the realisation that her marriage has stolen all of her dreams. She communicates with Amit as frequently as she can about their new life path. Amit takes her to Kwality's one evening and orders stew chicken, pan-fried rice, and chicken spring rolls. She is uncomfortable handling the bits of chicken. Dimple considers how Amit could never fulfil her fantasy of being her spouse. Their marriage's happiness deteriorates day by day. Dimple experiences curiosity as she learns of her pregnancy. She continues to be a strange girl and experiences disgusting illness all day long.

Even being pregnant, a sign of womeness' completion, seems to be a curse for Dimple. She believes that being pregnant makes travelling abroad difficult and burdensome. She has an abortion without thinking twice, even if her spouse is not informed. Despite Amit's anger about the abortion, she could persuade her husband with ease. Dimple's vital self-abortion reveals her uniqueness unbound by any restrictions associated with gender. She won't allow a child to be born into her womb without her consent. She never gives a second thought to terminating her pregnancy. In her article "The Dynamics of Psyche in Bharati Mukherjee's Wife," Knika Agarwall discusses Dimple's confusion and exemption, citing the following as the rationale:

> Dimple is an extremely immature girl who constantly dreams of marriage as she hopes that it would bring her free demand love. At the same time she is not clear about these concepts. This ambiguity underlying her mental make-up defines the incompleteness of her very being. After an exuviating painful waiting which makes her desperate and suicidal, she is finally married to Amit Kumar Basu, an average middle-class, unimaginative, young engineer who dreams of making a fortune in America and retiring to live a comfortable rich life in Calcutta. But soon after her marriage, she feels cheated as her romantic, adolescent mind cannot grasp the reality that freedom to has certain limitation. She begins to resent her new home, her in-laws and even her husband who doesn't seem to be capable of helping her to achieve her fantasy-life. At this stage, when she begins to reconstruct her ideal man from faces from magazines, and is unable to identify herself with anyone in the family, the prospect of becoming a mother enrages her. She treats it as an outrage on her body and induces an abortion, disposing of that "tyrannical and vile" thing deposited in her body. (n-page)

Dimple is imprisoned by fear once she has arrived in America. She frequently encounters rape, murder, and smuggling. This information is widely reported in American newspapers and TV stations. Even at parties and other social events, rape and murder-related topics take centre stage. Even American films deal with themes of sex and violence. When Ina and Milt Glesser cut short their visit, Dimple feels abandoned and distant. Amit refutes even her performance of looking for work by offering some sincere justifications. Dimple is forced to lead a difficult existence in Mukherjee's apartment in Manathan, where she spends her days watching TV.

She has sleeplessness as a result of the violence she witnesses on television. As a result, she kills her spouse and, guiltlessly, justifies murder as an effort to

watch television. She stabs him seven times in the chest to represent the seven stages that the couple must take to bind them, which is the most important Hindu marriage process.

In stark contrast to the before novel mentioned, Chandani Lokuge's novel, *Turtle Nest*, is completely different. Aruni, the main character of *Turtle Nest*, is a young spinster searching for her biological identity at a time when Dimple married women seeking to construct an identity as wives. Aruni returns to Sri Lanka from Australia to trace her ancestry when Dimple faces difficulties establishing an immigrant identity in their foreign country.

Living in Australia with her adoptive parents Neela and Mohan is Aruni. She feels the need to reroute her maternal biological root when she learns that Mohan is her real father and Neela is not her biological mother but rather Mohan's wife. Aruni learns about her mother's side. through her father Mohan, Nirmala. When they were in Sri Lanka, Mala worked as a maid in Mohan's home. Mala's beauty captivated Mohan, who began an illicit connection with her.

Neela and Mala both had babies at the same time. But only a month after giving birth, Neela tragically loses her baby Kumari. Mala, who works as a maid, observes Mala's grief over the death of the kid. As a result, Mala ascends after giving birth and leaves her newborn at Mohan's doorstep. This is the brief background Aruni learns about Mala from Mohan.

Aruni Ratnayake stays at the "Ceyshores" hotel when travelling to Sri Lanka from Australia in quest of her mother and maternal line. Her predicament is narrated thus: "Young girl with suffering face … Desolate and confused, the eyes of the broken-winged bird that Priya held in his palm" (*TN* 3). She befriends Paul, a 45-year-old man from Australia who is on vacation and is writing a series on tourism about his experiences in South Sri Lanka.

Aruni discovers information about Mala's prior existence and early experiences thanks to Simon. Aruni also tells Simon her tale and describes the catalyst for her curiosity in learning more about her mother. "when I heard the song, I know I had to come here and find out more about her." *(TN* 25-26) Turtles that visit their home during the rainy season are a favourite of Mala and her brother Priya. Mala was raped sexually by a boy named Rathu when she was just 12 years old, despite Simon's affection for her. Despite the fact that this is a typical sight on a Sri Lankan beach, Simon cautions Aruni to "be a bit careful on this beach, missy" (*TN* 25). Aruni feels herself as a hybrid product as she says "Neela is a Buddhist. My father is a Catholic. My real mother, Mala was also a Catholic. I have no idea what I am. Everyone's a bit of everything when they're Sri Lankan." (*TN* 36)

Even Priya, Aruni's maternal uncle, suffers from poverty because to his sale of Ganja, despite the fact that he makes money by mending nets and manually examining boats. Additionally, it describes the pitiful status of the young boys who try to

deceive tourists into parting with money by showing them turtles on the beach, corals, and the ocean below through the persona of Premasiri. "The boys speak in English now. 'We can show you turtles, black and white and brown turtles, turtles laying eggs, and beautiful corals at the bottom of the sea. We take missy and sir in glass-bottom boat'" (*TN* 12).

When young girls experience this, their plight is more sympathetic, therefore Mala selling herself to strangers for cash is not surprising. Given the mother's condition, the daughter also suffers the effects of Sri Lankan society. Finally, Aruni is also gang raped, and she was forced to accept this as a part of the tradition in her motherland.

Thus, two female novelists demonstrate the shock of simultaneous character exploitation. Aruni and Dimple relocate to a new location in pursuit of their freedom and individuality. But in a foreign country, these tasks become difficult. Despite living a joyful, carefree life, they were forced to forge a new identity and fell prey to the local culture in the process.

References:

Agarwal, Kanika.. "The Dynamics of Psyche in Bharati Mukherjee's *Wife*". The

Criterion: An International Journal n English, vol, 6, no. 1, February 2015. https://www.the-criterion.com/the -dynamics-of-psyche-in-bharati-mukherjee's-wife

Lokuge, Chandani. *Turtle Nest*. New Delhi: Penguin Books India.

Mukherjee, Bharati. *Wife*. New Delhi: Penguin Books, 1975.

Pundir, Ishita and Alankrita Singh. — Portrayal of Women in Indian Fiction.

International Journal of Research in Engineering, IT and Social Sciences, Vol. 09, Issue 02, Feb 2019, Pp.137-141. Academia Edu, https://www.academa.edu/39681850/ Portrayal-of-Women-in-Indian- Fiction

❒❒❒

1. Research Scholar, E.R.K Arts and Science College, Erumiyampatti, Dharmapuri
2. Assistant Professor, E.R.K Arts and Science College, Erumiyampatti, Dharmapuri

Research Article

A Study of Cultural Predicament in Foreign Land in Divakaruni's The Mistress of Spices

–K. Thamarai Selvi
–Dr. K. Mangayakarasi

Divakaruni's works are translated into twenty languages. Her works feature Indian- born woman between classical and modern world. Her works bring out picture of the South Asian diasporic experience in abroad land. 'Nostalgia is the sense of past remembrance that exposing with unforgettable memories. By the view of Jasbir Jain the 'exile' denotes the obligatory isolation.

Abstract

The world is geoid shaped every living things are revolving around their own destination who has already depicted in preplanned way . The complete discourse of diaspora which has been showing its own idea , ignoring their self – identification like losing , thirsting for obtaining their traditional lives from the notion of homeland . Totally the concepts of diasporic feeling bases on the homeland longingness. There is a vast differentiate and disrupt between rootedness and uprootedness that is the beginning stage life to still now. Thus, diaspora is merged with the pulverization of Transculturalism, identity, migration, space, nostalgia, space, distinguish between homeland and Hostland, hybridity and psychological feeling towards their mother land.

This paper is focused on the theme of nostalgic expression on the perception of Chitra Banerjee Divakaruni's work of *The Mistress of Spices* in 1997. The novel described the life journey of Tilo who is the leading character of immigrant. There the two options has given in the hands of Tilo's that is one from the westernize and another from the easternize its just emitting of predicament in Maya's world .

Keywords : Pulverization, Transculturalism, hybridity, migration.

An important play that the past place has to screen under the scanner which has adopted by knowingly and unknowingly from the past event of historical events. Most of the north Indian writers are selected the Diasporic essence for recent study that helps to bring out that the portrayal of their own community for the different types readers . That the study pave the way to recognize their life style through

the works of various authors . Also the readers may get knowing the difficulties of cultural losing or cultural dislocation. Now a days through the writing only that the readers can easily feel the nostalgic outpouring expression about the pathetic condition on immigrants.

A few centuries before there has been great challenge on notion of Diaspora because it has been considered a proliferation of literature . in the beginning God has made all the creatures then after he created the human beings they are our fore parent Adam and Eve. From the commencement of earth creation a great distraction happened in the Eden garden is one the opening pretence in history. Due to the blunder mistake of the fore parent they pushed away from the garden to earth , it is the turning part odyssey of Diaspora started . The experience of exile and expatriate had born in the form of newly appearance.

Most of the expatriate write has been bringing out that the pain of every steps . Also they retaining their own cultural identification and sustaining the initial position of their fore parent symbolic representation with patriotic sense, pioneer myth, destination and desire. The author 's quench has to search and rediscovery the sense of cultural identity that too especially in the Diasporic writing . In that a new generation in new literature waves in south Asian female writers who has put their mile stone in this universe .

Chitra Banerjee Divakaruni is an inseparable to the typical norm and has been acclaimed and revered by many as one of the greatest novelist. Divakaruni being an instance for better analysis in identities are rebuilt. The problem of nostalgia, the pain and suffer of migration , dilemma, frustrate , trauma, faced by the expatriates in the novel of the *Mistress of Spices*. Divakaruni not only expose the feeling of exile and shifting of place. She pointed the spices of different nature like smells, taste, medicine miracles of spices through the experiences of Tilo's.

Nostalgia is a high peak of longingness . Tilo's nostalgia is that her perfume lands of spices. She strongly believes that spices are resembling like good omen that stands for purity, magnetic forces of human welfare. In greek the word nostalgia " nostos" denotes meaning of " return home " and "algia" indicates "yearning " . It is a two sides of one coin that is an image of home and foreign , of previous and present , of assumption (dream) and routine life. It is a native motherland sentiment appearing to be a yearning for a native place, but it is represents for a different duration- the soft rhythms of our own aesthetic sense . It is a like a civil rebellion against past life and to modern era of time, not accepting to agree to the irreversibility of time that plagues (causes) the human condition.

Divakaruni who raises voice on the un-human simplicity of female characters like Sita in *The Forest of Enchantments* , Tilo in *The Mistress of Spices*, female in *Sister of My Heart*. Divakaruni depicts the females character in an honest

manner. She brings beautiful journey in the mulitiple flavor of intricacies of the female mind. She also narrates the upcoming difficulties of the female in diaspora that have found themselves in the land of foreign. Like the sculpture of idol, she portrays in her every story either from one continent to another .

Divakaruni awards are listed they are American Book Award, a PEN Josphine mile Award, a premio Scanno awarded. The Last PEN awarded the times of India best fiction award in 2022. Divakaruni is an author Indian-American in 1956. She is professor of Gene MC David at the university of Houston creative writing program. She came from middle family in Kolkata in Indian . Her few books are listed *Sister of My Heart, The vine of Desire, The Mistress of Spices, The palace of Illusion.*

Divakaruni's works are translated into twenty languages. Her works feature Indian- born woman between classical and modern world. Her works bring out picture of the South Asian diasporic experience in abroad land. 'Nostalgia is the sense of past remembrance that exposing with unforgettable memories. By the view of Jasbir Jain the 'exile' denotes the obligatory isolation. Immigrants of which 'nostalgia' is the perfect reason for the question of 'home' and 'native land' (homeland). The impact of nostalgia is often observed on the aspect of dislocation and displacement in the diaspora writings. The people who are shifted to strange place , they found themselves by thinking about past homeland life also they are mentally feel very depression and emotionally upset . They try to strive, they try to seek their originality, and they recollecting their previous lives through the stream of consciousness . It is reflecting of untold story of frequent music where keats' shown in his poem the *Ode on Gracian Urn* descriptions. Always past event have some sort of extreme lovely painful than present situation. Recollecting of past events are golden memories . Divakaruni proves that no one of us have a explain journey. In that case everyone is having different of uniqueness and it affects the individual in particular way or in some other way.

The mistress of spices narrates the struggles on cultural, geographical , social, political and people behaviors ,customs and traditions. Tilo , " I am a mistress of Spices".(MS 3) and the frequent visitors of Tilo's shop help to re-invent with an ancient heritage and merge with India. The stimulation of different spices smells tags along with nostalgic about their childhood days. Tilo's duty is to guide her regular visitors and tells about the spices wisdom through the ultimate power of spices. But Tilo's love and concern is always there for customer she could easily read the heavy heart of her customers about their hidden burden and worries. according to that she supplies the spices for customers . Fennel help to process well for digestive system , the root of gnarled wisdom for strengthening the mind set. Through the fantastical story that the read can find the hope for the upcoming days while they receiving the positive opinion of Tilo's foretelling or predicts.

Through Tilo's in *The Mistress of Spices* that the readers find that each different spices make the touch of soil of Indianness. It shows the true characters and lead us back to the motherland and to feel the perceiving both the occident and orient. It creates and proves that the spiritualistic in Indian culture there is so difference in both sides of Tilo's . The adaptation of culturalisms, characters are in dilemma and in- between situation. The protagonist Tilo's reveals " sometimes I wonder if there is such a thing a reality, an objective and untouched nature of being Or if what we imagined it to be has already been changed in all encounter it to be. Slowly she light up her nostalgic about her childhood past and wonder about reality in foreign land.

"Tilo" is in the first chapter later on it changes as "Maya" in the second chapter which depicts two distinguish roles of her character on the other remaining chapters represent in each spice has to represent each specification for human beneficial. However Tilo's engross of her customers in spiritual path, she too falls in the emotional trap in sense of love and fails in her attempts and surrender herself to Raven, who has an American, the result is that the holy spice world which has shaken and feel guilty about it. That she breaks the rules and norms where she takes oath of her entire life for spices world.

Divakaruni shows the huge difference between the names Tilo's and Maya's. After committing herself Tilo find a new life and regain new fame that make faithful meaning to her existence. Tilo's acceptances of life with Raven it is reflecting the conflict cultures between Indian and American, which indicated two approaches in Tilo's internal and external life. The name itself explains incongruity of life and the paradoxical life.

The author Divakaruni gradually nurturing a meaningful concern for women in present century. Her thirsty is women should binds with their rootedness and develops the belongingness of Indian customs and traditional life. She put optimistic skeptical for need of heritage solution in contemporary women. Divakaruni brings light to the isolation in western country and erase all sorts of alienation feelings. So that it paves the ways for fruitful life.

Divakaruni sow some soft seeds of confusion in physically and psychologically for guide us to lead our life at a right moment in order to overcome all the challenges and resentment in human world. Tilo is a healer, reformer in the words of Divakaruni's descriptions. In the perception of author 's thought Tilo is knowing of boundaries, crossing in different stages of worlds and in the form a trail by water, by fire finally by earth-burial transformation. How Draupadi will make purify by these way, Tilo also makes her life in new identity. *The mistress of spices* is a study of several social destruction it has an epitome for all social issues. That is racial intolerance, domestic violence, class and gender discrimination apartment from that there is a

hollowness between emotional and spiritual . It's like an amalgamation of holistic and mystical healing practices with Indian spices through Tilo's life in Divakaruni's novel.

Divakaruni is considered as one of well familiar Indian diasporic women writer women are center leading in her novels where she focuses on environment of women and immigrant experiences. The entire novel revolves around spices . These spices simply indicating the struggles handle by females in social environment, women experiences in immigration, relationship in family bond etc., finally it is the diasporic tale which has built on stream of voices in author interweaves of magical realism and feminine discourse. It is a modern scenario novel of socio- economic, cultural globalization, myth is used as a tool to connect with regenerative perception of native cultures that is mother bond.

References:

Roxanne Farmanfarmaian , "Chitra Banerjee Divakaruni: writing from a Different Place," *Publishers weekly*, 14 May 2001;

Divakaruni, Chitra Banerjee . " The Brides come to Yuba City" and "Yuba City School" have been taken from *The Open Boat* : poems from Asian America , ed. Garret Hongo (New York, 1993) pp . 77 – 78 ; 79 – 80.

Chitra Banerjee Divakaruni. *The Mistress of Spices* . Doubleday, 1997.

Divakaruni, Chitra Banerjee.(1997*). The Mistress of Spices* . Grreat Britain : Black Swan.

Cohen, Robin. Global Diaspora : *An Introdution*. London : UCL press, 1997. Print.

Merlin, Lara. The Mistress of Spices. Worldlitrature Today. University of Ok lahoma. 01 J 1998. Print.

❐❐❐

1. Ph.D. Research Scholar PG & Research Department of English, Government Arts College (Men). Krishnagiri, Tamil Nadu, India

2. Assistant Professor & Research Supervisor PG & Research Department of English Government Arts & College for Women Bargur, Tamil Nadu , India

Women the 'Strongest Soul': A Study of Premchand's "Sati"

–B. Riyaz Ahmad
–Dr. S. Abdullah Shah

Kallu works lot and earn money to buy saree for his wife but e could not afford much money for that. He tried to purchase costly saree for his wife so he needs credit from the saree shop. The shop owner refuses to give saree for the credit so he buys ordinary cotton saree for his wife. She too happy with the sari which is given by her lovable husband. She does not value the saree by its worth but she values the saree with his husband's hard work.

Abstract

Infidelitu has influenced works of literature, cinema, and theatre. Either the biological or the cultural point of view may be used while conducting an investigation into adultery. To phrase this another way, sexual tactics are often seen as actions that originate from human nature, and as a result, they are analysed through the lens of biology and human genetics. On the other hand, the acquisition of a hierarchical sequence of norms and values throughout the process of socialization causes our sexual preferences to be created and conditioned in a manner that is primarily directed toward gender roles. This paper tries to prove that women is sexually victimized through the emotional aspect rather than the biological aspects.

Keywords: Emotional, Victim, Fidelity, Abuse, Love, Care

An intimate relationship does not go well as expected due to various reasons such as lack of understanding, lack of quality time, lack of romance, domination and control over a partner, any form of abuse, abandonment, less interest in each other hobbies or passion lead to disappointment in a relationship and become a key in building an affair. While no possible reason justifies infidelity, it occurs often.(*TOI*)

Infidelity has influenced works of literature, cinema, and theatre. Either the biological or the cultural point of view may be used while conducting an investigation into adultery. To phrase this another way, sexual tactics are often seen as actions that originate from human nature, and as a result, they are analysed through the lens of biology and human genetics. On the other hand, the acquisition of a

hierarchical sequence of norms and values throughout the process of socialization causes our sexual preferences to be created and conditioned in a manner that is primarily directed toward gender roles.

Each school of thought offers a distinctive interpretation of the factors that lead up to adultery as well as its repercussions. Infidelity has been examined from the points of view of sociobiology and the sociology of emotions for the aim of this article, with gender serving as the axis of analysis. The primary purpose of this study is to make an effort to determine whether or not the biological aspect is the primary cause of infidelity or if it is, rather, the product of socio-cultural training.

One of the most prominent authors in the field of Hindi literature is Prem Chand. Before him, the genre, short story was in a romantic mood, and it responded to the preferences and requirements of individual readers. Prem Chand first incorporated the element of reality into a Hindi fiction. He is against the individualistic way of writing and favours the sort of literature that is able to infuse a spirit of creation among people. This is because he believes that literature should be shared. He adheres to a humanistic perspective when it comes to life. In his view, literature only reaches its full potential and acquires significance when it is able to liberate individuals from the shackles of their own complexes and beliefs. It makes it possible for a person to develop a unique sense that is capable of bringing together the everyday and the drive to create something original. In her book *Between Two Worlds*, Geetanjali Panday gives Premchand's perspective on how he feels about literature:

> Literature should criticize and analyze our life . . . The literature which does not…infuse the reins of society were controlled by religion…today literature has taken charge and its means is love for beauty. . . The downtrodden, the pained and the deprived- their protection and in us true strength and determination is worthless for us in our present times. . . In earlier age advocacy is the duty of literature. (Gupta 502)

Munshi Prem Chand respects the presence and importance of a person in social context and surroundings and believes in authentic issue depiction and analysis. His aim as a writer is to contribute to the general improvement of society. In this regard, the social realism of Prem Chand is unlike that of any other writer of his time period; it is more optimistic and forward-thinking. In individualistic and psychoanalytic approaches of writing, the primary goal of the authors is to convey components of both their conscious and subconscious selves. However, insofar as the development of human consciousness is concerned, it is important to note the substantial role that society and collective experiences have played. Novelists who write from a social viewpoint are able to more clearly and effectively envision

not just the wellbeing of the individual but also the welfare of society as a whole in their work. This perspective on life is mirrored in their writing, which contributes to the art they create being more expressive and true.

At the subconscious level, one is better able to perceive senses via the means of a psychological insight and a point of view. In Godan, the categorization of personalities follows more of a scientific system than a simple psychological one. In addition, only because a social-theme-based book makes heavy use of psychological approaches does not mean that it is a pure psychological novel. In Prem Chand's story, the heroes are portrayed as idealists and dreamers because during the course of their search for a utopian kingdom, they are always striving to achieve new goals. The passion that Munshi PremChand has for the causes he writes about in his social novels is the primary source of creative motivation for him. He is of the opinion that persons in the aggregate construct society, and that the study of individuals is the most effective method to get an understanding of society and the challenges it faces. Individuals are responsible for their own difficulties as well as their own societal duties, and Prem Chand does not downplay the significance of a person in any way. He contends that the answers to man's problems may be discovered within the framework of society.

The main character in Prem Chand's short tale "Sati" is a woman named Mulia. She is considered to be the most attractive lady in her area, which is why many of the guys in her hometown are interested in marrying her. However, she ends up marrying Kallu, who is not only unattractive but also a poor guy. They have a joyful life together and they love each other without caring about external things like looks, wealth, or other pleasures of this world. Because Kallu is fully aware of how fortunate he is to have such a lovely wife, he makes it his top priority to ensure that his wife is content during their whole life together. Even though he puts a lot of effort into earning money, he only brings in a very little quantity. He gives the money to her and works hard to maintain the peace in their family for the foreseeable future. She is also incredibly devoted to her spouse and ecstatic with the love and attention that he provides for her. "He is willing to sacrifice himself for her. He gets distraught if Mulia has so much as a headache. Mulia too feels the same for him. She yearns for him like a fish caught in a net until he comes back from work." ("Sati" 21)

Kallu has a cousin named, Raja tries to seduce Mulia by saying tempting words. He says that Kallu is not the perfect match for Mulia and he asks the reason behind the selection of Kallu. Mulia says that she is very happy with her husband and that her fate to be with Kallu.

Mulia said, 'He was destined to be my husband, so how could I have found you?'

When he heard this, Raja though that he had finally got the opportunity to impress Mulia. He said, 'Destiny faltered there.'

Mulia smiled and said, 'well! If it did, then surely it will rectify its mistake.'

Raja was speechless. ("Sati" 22)

The above conversation of Mulia turns her life and it brings ever-changing sufferings to her. Raja takes her reply as the sign of green signal and tries to impress Mulia. Raja tries to visit Mulia often in the absence of Kallu but initially she does not realize the real motto of Raja. Gradually she comes to know the motto behind Raja but she does not try to stop the visit of Raja. Some men try to seduce women by using their situation. In this story Premchand portrays the very simple issue in the family which leads the break between the couple.

Kallu works lot and earn money to buy saree for his wife but e could not afford much money for that. He tried to purchase costly saree for his wife so he needs credit from the saree shop. The shop owner refuses to give saree for the credit so he buys ordinary cotton saree for his wife. She too happy with the sari which is given by her lovable husband. She does not value the saree by its worth but she values the saree with his husband's hard work. This common simple family leads the very happy harmonious life. Raja after learns that Kallu just purchases cotton saree for her he purchases costly Chanderi Saree for her.

Mulia said, 'I have already got a sari.'

Raja said, 'I have seen it. That is why I got this for you. That sari is not worth your beauty. Bhaiya gets economical in such matters. He just buys the cheapest stuff available.'

Mulia subtly mocked him, 'Why don't you you make him understand this?'

But Raja felt flattered. Drunk on arrogance, he replied, 'An old parrot cannot be made to learn.'

'I like my cotton sari.'

'Wear this chundari once, it will look wonderful on you.' ("Sati" 23)

First Mulia refuses the saree but raja emotionally threatens her that if she rejects the saree then he will take poison. So she gets the Saree from raja to avoid some serious issues. But she very well knows that if she accepts the gift given by Raja then her husband will be wounded lot. So she intentionally hide the saree from her husband. She thought that she does not cross her limit with Raja so this not the betrayal. But her conscience never allows her to sleep because she hides the thing from her husband. Even she lies that Raja has come to get tobacco from her and hides that he presents a saree to her. This ricks her lot because she never tells lies to her husband before that.

Mulia wonders why she speaks with Raja and accepts his saree. Actually this present paper analyse the psyche of women who accepts the other persons' concern and love. Mulia does not know the reason because most of the family women do not aware of their activities. They are silent victims of fame, care, and love. Every woman needs excessive love from man who is very busy with his work. Most of the men engage with lots of responsibility and they have to work to carry out all his responsibilities. Due to this familial duty often they have very less time to spend with their family. The criminals have noticed this and they easily enters the house and heart of the woman who is longing for the love and care of her husband.

One day Mulia informed Kallu that she has lied him regarding the visit of Raja. She cried and informed him that she receives the gift given by Raja. She expresses her apologizes but Kallu is not in a position to accept her apology. After this incident he never lives as before as and visits the home like a guest. The love between them vanishes and they just live together without sharing their love. Mulia realizes that her activity makes him to drink and lead a detached life. She regrets for her mistakes.

Unfortunately, Kallu is affected by Syphilis and could not live independently. Mulia has to do all the regular works for him. She realizes that because of her attitude his husband is affected so she serves him patiently. One day when Mulia nurses him, he asks what was happened between Raja and Mulia when he gifted a saree to her. Mulia replies, Mulia was shoked. "There was nothing between the two of us. Let God punish me if here was something between us.he had given me a chundari. I took it from him andburnt it. I have not spoken to him since then." ("Sati" 27)

Kallu sighed in relief and he informs her that he misunderstands her, he doubts her fidelity so that he has lost his senses. He blames her and indulges in sinful acts. Because of all this he gets the disease and he too realizes his mistakes. They both discuss their problem frankly and find solution for their issues. The today's couple have not taken this kind of solution. So they are facing lots of issues. In a family forgiveness is very important and the couples should ready to forgive the others' mistake. In most cases, the unintentional mistakes have been forgiven but the intentional mistakes have not been forgiven by the life partners. If the life partners analyze the mistake which is done by their soul mate and tries to speak frankly. This open conversation alone brings solution to any sort of family problems. Once again, Raja enters the house of Kallu when the disease seriously affects him. He tries to seduce by saying that he can give better life to Mulia then Kallu. But this time Mulia understands the real intention of the Raja. She shouts at him:

> I know for sure, had I died, my husband would have cried for me throughout his life. Wives die for such husbands and become Satis.

People like you can only lick from half-eaten plates. It is your fate. Lick it! But beware, don't you dare step into my house after this day, otherwise you will lose your life for sure! Just get out!' ("Sati" 31)

Raja was frozen with fear and could not utter a retort because her appearance was so dazzling and her words were so piercing. He sneaked out of the home without making a sound. This kind of braveness should be possessed by every women to avoid this kind of abuse. The stability of society is necessary for the protection of man since man is an essential component of society. When assessing a person, Prem Chand looks at them from a social standpoint. His characters are constrained by outmoded ideas and societal norms, and they are devoid of initiative and vitality in his writing. They do not act in the same manner as the characters in the existential works of Saul Bellow, Camus, Sartre, or Samuel Beckett. The personal issues of the person are of secondary importance to them, and they are more concerned, more anxious about societal commitments and religious concerns. Characters with comparable traits may be found in works such as Pillai's Chemmeen and Anathamurthy's Samskara. As a writer, Prem Chand only offers as much in-depth examination of a person's character as is necessary for the advancement of society. He finds it unacceptable for the desires and emotions of the individual to take precedence over the established order of society. Characters who have responsibilities appear in both his short tales and his novels. His primary purpose is to encourage the behaviours that may foster the development of a healthy society and society as a whole. This has been proved through the story "Sati". This paper proves that the infidelity never depends on the biological issues rather it depends on the most emotional matters.

References:

Geetanjali Pandey, *Between Two Worlds*: An Intellectual Biography of Premchand and Manohar Publications, 1989

Premchand. *The Complete Short Stories*. Trans. by M Asaduddin. Penguin Random House India Private Limited, 2018.

Times of India. Why are women more into Infidelity in Present times?. https: // timesofindia.indiatimes.com/ 16 Oct. 2022. Accessed. 22 Oct.2022.

❐❐❐

1. Ph.D. Research Scholar (PT), Department of English, Islamiah College (Autonomous), (Affiliated to Thiruvalluvar University, Vellore) Vaniyambadi

2. Assistant Professor of English, Islamiah College (Autonomous), (Affiliated to Thiruvalluvar University, Vellore) Vaniyambadi

Research Article

Postmodernist Perspective of Yann Martel's Beatrice and Virgil

–Chandra R
–Dr. P. Mythily

Metafiction and historical metafiction are all features of postmodernism. In the beginning of the novel the protagonist who is also an author explains that it is a fictional form instead of biography or autobiography. Generally the Holocaust narration are all made by the victims or next generations of the victims. As a non Jewish writer he admits that it is a fictional one.

Abstract

Post modernism is a broad term which includes many disciplines such as philosophy, architecture, arts and literature. It started after the Second World War. It is an extension or departure of modernism. Yann Martel is well known for dealing the themes in a postmodernist perspective. His debut novel *Self* portrays gender issues by the protagonist's transforming gender and his booker prize winner of the second novel *Life of Pi* deals with the theme of a castaway with the choice of unbelievable story with appealing ending and his third novel *Beatrice and Virgil* deals with the most sensitive theme of the Holocaust which is generally dealt by Jewish , but as a non Jewish writer he boldly handles the theme in a post modernistic perspective of inter-textuality, and experimental literature. This paper is to highlight the features of post modernism in *Beatrice and Virgil*

Key Words: Postmodernism, gender transformation, castaway, inter-textual and experimental literature

Introduction

In the beginning of the novel itself the author indirectly briefs about the novel and the theme, its structure which reminds the quality of postmodernism. Literature reflects society, modernism supports realistic novels. But skepticism is the basic feature of postmodernism. Postmodernism is the offshoot of the Second World War. There are some features similar to modernism but there is a slight deviation in it. Both modernism and postmodernism have the features of fragmentation, modernism views it as negativity whereas postmodernism views it as positivity. Postmodernism ignores the dividing line between the

different types of genres as a result experimentation literature, irony, mini-narrative, pastiche, intertextuality, parody and playfulness are all basic features of it. The fictitious nature of the text is openly admitted through metafictional narration. Postmodernism not only supports the mixture of genres, it combines the literature of the past and present literature in the name of inter- textuality. There is no objective reality but there are so many subjective perceptions. The truth is personal, it varies by interpretations and based on the culture, society and personal experience it varies. There is no exact method for ultimate reality and there is no specific method to understand a text.

There are many definitions for postmodernism as it is a complex and multilayered term. In the Beginning of postmodernism, the term post modernism is defined as “Their fiction displayed a plurality of forms, a skepticism towards generic types and categories, ironic inversions, a predilection for pastiche and parody, and a metafictional insistence on the arbitrariness of the text’s power to signify.”(70) and also Postmodernist fiction reveals the past as always ideologically and discursively constructed. It is fiction which is directed both inward and outward, concerned both with its status as fiction, narrative or language, and also grounded in some verifiable historical reality. Postmodernism tends to use and abuse, install but also subvert, conventions, through the use of either irony or parody. (69-70)

Postmodernism has many features, one of which is mini narrative rather than grand style. At the end of the novel the author gives thirteen games which contain only five to ten lines. The Jewish tomentation is reflected in these lines. The serious subject is handled in a playful way that is one of the qualities of postmodernism which also can be traced in these gaming parts of the novel. “Games of Gustav ‘’ GAME NUMBER ONE your ten-year-old son is speaking to you. He says he has found a way of obtaining some potatoes to feed your starving family. If he is caught, he will be killed. Do you let him go?”

According to postmodernism there are no originals, there are only copies and there are no realities there are only simulations. As per the Holocaust there is a myth that only Jewish can write about it. They undergoes all those tortures privately at the concentration camp and no one witneses it. At last very few of them are rescued because of the defeat of Germany. The secret diaries are also open to the public. As a non Jewish writer he questions the rights of Jewish people writing of their experiences at concentration camps. “ Henry had noticed over years of reading books and watching movies how little actual fiction there was about the Holocaust .The take on the event was nearly always historical, factual, documentary, anecdotal, testimonial, literal.”(9)The author tries to portray the institutional suffering of animals and leaves it to the reader’s imagination similar situations faced by the Jewish people.

Fragmented approach is also one of the qualities of postmodernism which is followed by the author. The play is narrated not continuously there is a gap in between the play. Postmodernism encourages the mixture of genres. It is a mixture of fiction, play and games. The author has combined all these genres in a single book. The fiction is embedded with play and gaming. "(Virgil and Beatrice are sitting at the foot of the tree. They are looking blankly Silence.)

VIRGIL: What I'd give for a pear.

BEATRICE: A pear?

VIRGIL: Yes. A ripe and juicy one.

(Pause.)"(44)

Metafiction and historical metafiction are all features of postmodernism. In the beginning of the novel the protagonist who is also an author explains that it is a fictional form instead of biography or autobiography. Generally the Holocaust narration are all made by the victims or next generations of the victims. As a non Jewish writer he admits that it is a fictional one. "The unwieldy encumbrance of history was reduced and packed into a suitcase. Art as suitcase, light, portable, essential-was such a treatment not possible, indeed, was it not necessary, with the greatest tragedy of Europe's Jews?"(11)

In historical metafiction a theme is taken from history and it is retold. The author has used the animals as the characters to narrate the story of the Holocaust. The history of the Holocaust is fictionalized by the author. It is part of the Second World War and it reveals the dehumanizing nature of people. "He had taken this double approach because he felt he needed every means at his disposal to tackle his chosen subject."(6)

The author has mentioned some of the text in the novel; these are all related to the novel indirectly or directly. From Dante's *Divine Comedy* the title as well as the name of the characters are chosen. And another text mentioned by the author is Flaubert's The *Legend of Saint Julian the Hospitator* which has similarities between these character plays and Saint Julian. Though he kills his own parents and animals, at last he becomes a Saint. The Holocaust is also a massacre in the name of religion. And Lessing's *Nathan the Wise* is the story with Jewish protagonist, who insists on the point of religious tolerance. Similar to George Orwell's *Animal Form* it is a historical allegory. Art Spiegelman's *Maus* has similarities to this novel. Both of them deal with the theme of the Holocaust with animal characters. Camus' *The Plague,* Picasso's *Guernica* also mentioned because of it is related to Germany

Pastiche means to combine or make together the different genres. Here the author has combined fiction, history, illustrations and play. With the help of animal character the Holocaust theme is narrated in between the fiction. Under the heading

of "A HORRORS HAND GESTURE" there is a pictorial representation in four sections which are the initial salutation postures for Hitler.

Fragmented approach is also one of the characteristics of postmodernism. Play is narrated in between the fiction, so the lack of continuity is purposely made and the play contains a set of words that are not used and left it to readers to comprehend. So there are fragments in the work and it is intentionally made by the author. The author has mentioned the title as a blue striped shirt which is the uniform of the Jewish at the Concentration camps. The taxidermist mentioned that "That's right. Coat, Shirt, Trousers, but it could have been Germany, Poland, Hungary" (106) These are the major hub of the Concentration Camps and the place of Holocaust. There is no detailed explanation for these words the reader has to comprehend. There is a mention of a train boarding announcement and after that there is silence. "ALLABOARD, ALLABOARD!...CHOO-CHOOO-CHOO…"(140) Though it is not clarified in a detailed way it has to be understood that the train which transports the Jewish people to the various camps. Once they are transported the silence prevails as they do not come back. The above mentioned details can be understood through other texts. Intertextuality is also one of the features of postmodernism.

Lack of coherence and continuity is also the features of postmodernism. From the list of words the play is developed so there is a lack of coherence and continuance in the play. Instead of explaining he gives the numbers as street names. The reader has to comprehend from that the story and the numbers "He kept an eye on the numbers on the buildings; they were getting close: 1919…1923…1929…"(56) The author has used the name such as Erasmus and Mendelssohn for their pets and both of them are died in the middle of novel. These two names belong to Christian and Jewish origin. There is a relation between these two religion and the Holocaust. The title of the play is *A 20th Century Shirt* which is not explained anywhere the reader has to comprehend that the Holocaust which is happened in the middle of the twentieth century.

And mini narrative is the characteristics of postmodernism. The author narrates under the title of Games of Gustav which is a mini narrative. There are different types of genres used in the novel, they are fiction, play illustrations and mini narrative. So there is no fixed genre. The genre is blurring in the novel, which is also the features of postmodernism.

There are list of words used to describe the Holocaust in the novel but all the words are not used completely. Some of the words are ambiguous in nature and unfinished and jugged words are the features of postmodernism, which is also followed in this novel. " A Horrors' Sewing Kit a howl, a black cat, words and occasional silence, a hand gesture sits with one arm missing, a prayer, a set speech

at the start of every parliamentary session, …a facial expression, Second hand gesture, a verbal expression, [sic] dramas, 68 Nowolipki /street, games for Gustav, a tattoo, an object designated for a year, aukitz"(148-149).

Postmodernism promotes the experimentation method. The author tries to narrate the Holocaust in a newer ways instead of usual method of realistic narration. "Henry chose this unusual format because he was concerned with how best to present two literary wares that shared the same title, the same concern, but not the same method."(6)

The irony playfulness, black humour are all features of postmodernism. The author also makes use of irony, black humour and playfulness by using animal characters. The Games of Gustav is for the dead Gustav it is a black humor. And the serious subject like the Holocaust is narrated in a playful manner through games and animal characters. In the beginning of the novel itself the author justifies experimentation method. Serious war theme is tried in different methods. Similar war theme he is trying or experimenting the Holocaust in different way at last it has been proved by the author. "to exemplify and argue this supplementary way of thinking about the Holocaust, Henry had written his novel and…(11) Virgil wants to say jokes but Beatrice avoids it by saying she cannot laugh anymore and replies that "Then those criminals have truly robbed us of everything.'(124)

Conclusion

The author has applied the postmodern techniques to the unique theme of the Holocaust. The obsessive thought of Adolf Hitler leads to the Holocaust. If it is just a history it remains only in history books and meant for specific readers. History helps to analyze the mistakes of the past incidents and consequences and reminds us not to repeat the same mistakes. More than six million people are killed in the name of religion. People should remember that the religious terrorism is a new version of the Holocaust. When history takes a form of art it reaches mass and carries it to following generations easily. George Orwell's *The Animal Farm* is an example of the literature of political history, though it is restricted for publication and circulation in that period it reminds the political environment of Russia in that period. United States the Holocaust Memorial Museum helps to remember the Holocaust clear way than history books. The author contributes to society by his literary work; he reminds the consequences of obsession to religion rather than humanity. Religious tolerance is the need of the hour which is reminded by the author through his novel *Beatrice and Virgil.*

References:

Abrams.M.H, Harpham Geoffrey Galt. https://www.pdfdrive.com/glossary-of-literary-terms-10th-edition-d169848855.html

Anti-Semitism https://www.jewishvirtuallibrary.org/anti-semitism

Barry, Peter. 2018. Beginning Theory an Introduction to Literary and Cultural Theory. New Delhi: Viva books private Ltd.

Martel, Yann. 2011. Beatrice and Virgil. New York: Spiegel & Grau Trade Paperbacks.

Encyclopedia.comhttps://www.encyclopedia.com/environment/encyclopedias-almanacs-transcripts-and-maps/langer-susanne

Holocaust, European history https://www.britannica.com/event/Holocaust

Introduction to the Holocaust https://encyclopedia.ushmm.org/content/en/article/introduction-to-the-holocaust

Oxford Bibliographies ttps://www.oxfordbibliographies.com/view/document/obo-9780190221911/obo-9780190221911-0009.xml

The Holocaust: An Introductory Historyhttps://www.jewishvirtuallibrary.org/an-introductory-history-of-the-holocaust

68th anniversary of discovering the second part of the Ringelblum Archive https://www.jhi.pl/en/articles/68th-anniversary-of-discovering-the-second-part-of-the-ringelblum-archive,404

Woods, Tim. 2018. Beginning Postmodernism. New Delhi: Viva books private Ltd.

❑❑❑

1. PhD Scholar, PG & Research Department of English, Thiruvalluvar Govt Arts College, Rasipuram, Tamilnadu, India

2. Associate Professor & Head, PG & Research Department of English, Thiruvalluvar Govt Arts College Rasipuram, Tamilnadu, India

Research Article

A Study of Existential and Psychological Concepts in Anita Desai's Select Novels

–Ms. M. Uma
–Dr. S. Kirubhakaran

Anita Desai's another novel, **Bye-Bye Blackbird,** ***studies the human relationships in a different way. The characters are haunted between their native cultures and settled one. The earlier novel talks of relationships crisis between individuals of a family, this novel brings out the relationship between individual and society. This novel explores the human relationships tormented by cultural encounters.***

Abstract

This research paper explores the growth of existential and psychological concepts in the novels of Anita Desai. Anita Desai is one of the strongest and psychologically well balanced minds in Indo-Anglican fiction. Her novels reflect the inner struggle of female characters, their desire to break the tradition, come out of the shells of their cacoon existence and assert themselves as human beings, Her portrayal of human relationships and their inner recess lays ample focus on the intricacies of human mind. The recurrent themes in her novel are especially of man and woman relationships, loneliness, alienation and imperfect communication between them. This paper tries to bring out the psychic tumult of man and woman conflict with reference to her novels *Cry the Peacock* and *Bye-Bye Blackbird.*

Introduction

Anita Desai's novels bring a sense of collective feminism. She has illustrated the cruelty, torment and aggression confronted by women in Indian society through probing deep into women's psyche. Her themes of mismatched relationships, alienation, search for independent identity and authentic existence almost unconsciously interweave into her themes and characters. She has successfully exposed about the long term effects on the psyche of women not only in the family but also in the society. She has also brought out how the woman characters compromise themselves bringing a change in their attitude. She explores the inner recesses of her protagonists' minds by revealing the individuals extreme condition where they are forced to live.

Cry the Peacock

Desai's first novel *Cry the Peacock* (1963) is about marital disharmony and maladjustment in husband-wife relationship. Larger portion of the novel consists of Maya's interior monologue. Maya is the daughter of a rich advocate in Lucknow. Since her mother is already dead, she is the only female member of the family. Her elder brother has gone to America for career purpose. She is the one who gets all the attention from her father. The excessive affection or we can call it pampering Maya gets from her father makes her a naïve person. Her father's over protective love does not allow her any independent thinking and grow as an entity. Since she has been brought under father with unconditional love, Maya expects the same kind of love from her husband Gautama as well. But unfortunately life is harsher than her expectations. She is not anymore a pampered daughter in her father's house. She is now a 'wife'.

Maya misinterpreted the term 'wife' to be a companion of the husband in all spheres of life, which is not the case in real life. In real life wifehood is a confined allotted space where a girl enters after her marriage, where she will be provided few basic things and in return she ought to perform a long list of things repeatedly for years to come. After a certain time Maya starts to realize this fact. This is pretty normal to many women of her society, but Maya finds it suffocating. Maya's marriage with Gautama was more or less a marriage of convenience. Maya's marriage to Gautama lacks the emotional attachment which is in contrast to her joyous childhood. Maya is highly sensitive and imaginative; on the other hand Gautama is exactly the opposite- unimaginative and insensitive. It is a contrast that continues to grow up as the novel proceeds. Not by any means Gautama is a villain character. Instead he can be considered a very good husband in „normal sense as he performs the duties towards his wife. He simply finds Maya's physical and mental demands often too naïve and does not worth his precious time. Thus, Maya's most sensitive emotional and physical urges are denied by Gautama's practicality. Gautama's insensitivity towards Maya's feelings is very evident throughout the novel. Maya experiences the first emotional crisis in the novel when her pet dog "Toto" dies. She being deprived of a love bond in her marital life lavished all her affection towards Toto. When she discovers that Toto is dead, she first could not stand the sight of her beloved dead dog and she rushed to "the garden tap to wash the vision from her eyes" she thinks that "she saw the evil glint of a blue bottle" and grows hysterical and finds the setting sun "swelling visibly like... a purulent boil" (Desai, Anita. Cry the Peacock: 5-6). Her grief is inflamed by Gautama's casual and unsympathetic statement, "It is all over, come and drink your tea and stop crying. You mustn't cry." (Desai, 7).

Though Maya and Gautama try their best to live together, still Maya's involvement and Gautama's quietness remain irreconcilable. Desai here deals with conjugal incompatibility because of their emotional differences.

Cry the Peacock breaks new ground in delineating the psychological problems of alienated person. Maya's moods, obsessions, dilemmas, and abnormality have been brought out more effectively in the novel.

Bye-Bye Blackbird

Anita Desai's another novel, *Bye-Bye Blackbird*, studies the human relationships in a different way. The characters are haunted between their native cultures and settled one. The earlier novel talks of relationships crisis between individuals of a family, this novel brings out the relationship between individual and society. This novel explores the human relationships tormented by cultural encounters. This novel is most intimately related to her own experiences. The novel captures the confusions and conflicts of alienated persons. The immigrant blackbird involves issues of alienation and accommodation that the immigrant has to confront in an alien and yet familiar world. In this novel Anita Desai analyses the immigrants' problems by delineating realistically the situations of three different characters, Dev, Adit and Sarah. Desai explores the racial hatred through their sensibility. Dev, a stranger in England, feels put out in the early stages of his stay in London because of the racial discrimination shown by the callous and arrogant English men. He then gradually turns Anglophiliac and finds the life "enthrallingly rich" (p.99) and highly lucrative.

Adit's situation is entirely different. He has married an English girl and settled in England with no desire to return to India. He is ridiculed by his friends as "book licking today", and "spineless imperialist lover"(p.21) because of his absolute love for England. At one stage he gradually feels disenchanted with London and considers himself "a stranger, non-belonger" (p.212). The growing nostalgia torments him; he decides to leave for India to lead a real life short of all pretences.

Sarah's situation is more complex and precarious than that of Aditi. Since Sarah is practical and objective, she faces the reality boldly and rationally. Sarah, an English girl, is neglected by her own people because she has married an Indian. She feels daunted in the land of racial hatred between her real self- Sarah, an English girl, the Head secretary in the school for English children and herself as the wife of Aditi who takes care of home. She is uncertain whether she has any existence or identity of her own apart from these two roles. She speculates "if she would ever be allowed to step off the stage, leave the theatre and enter the real world-whether English or Indian, she did not care, she wanted only sincerity, its truth",(p.39). When she decides to go with Aditi to India, she makes up her mind not to come back and bid adieu to her English self.

Anita Desai's *Bye-Bye Blackbird* explores the trauma of dislocation, an acute sense of loneliness and the pangs of estrangement suffered by many expatriate Indians. They try adapting themselves to new environment but in vain. They try unsuccessfully to balance themselves between 'home' and 'abroad'. Sarah's loneliness is entirely different from other heroines of Desai. Being an English girl, she fell in love with Aditi, an Indian expatriate. Both of them belong to different cultures. The loss of identity is for both of them. They try to reconcile themselves but in vain.

Conclusion

Therefore, in both the novels Anita Desai has effectively exposed the complexity, ins and outs human minds, and workings of human relationships in the present scenario. These novels genuinely portray the problems of human relationships in this modern world. The true relationship has lost its values. Everyone looks at each other with distrust in this materialistic world. Even the relationships among father, mother, daughter, son, sister, husband and wife have become precarious and suspicious. Anita Desai's creative world is unique and she creates in her novels phenomenally sensitive creatures. Her novels expose the internal lives of hypersensitive women whose quest for successful and independent life thwarted by their marriage.

References:

Desai, Anita, *Cry the Peacock,* Orient Paperbacks, New Delhi, 2001.

Desai, Anita, *Bye-Bye Blackbird*, Orient Paperbacks, New Delhi, 2001.

Bande, Usha. *The Novels of Anita Desai: A Study in Character and Conflict*, Prestige Books, New Delhi, 1988.

Dhawan, R.K., ed., *The Fiction of Anita Desai*, Bahri Publications, New Delhi, 1989.

Web Sources

https://dotnepal.com/bye-bye-blackbird-analysis-of-anita-desais-bye-bye-blackbird/

❒❒❒

1. Research Scholar in English, Arignar Anna Government Arts College, Namakkal

2. Assistant Professor of English, Arignar Anna Government Arts College, Namakkal-637002

The Role of Proxy Advisory Firms in Shareholder Activisim in India

–Dr. Dolly Misra
–Dr. Sanjeev Gupta

After the 2008 Satyam Scandal, the demand to review India's corporate governance policy became prevalent. As a result of this many steps have been taken in this sphere, and new committees constituted that can advise strengthening the corporate governance policies. SEBI came up with many new regulations.

Abstract

Now, the business world has changed so have its practices. Proxy Advisory firms are the result of active shareholder activism taking force in India's last two decades. SEBI regulations, corporate mismanagement, and frequently occurring corporate scams are the major reasons to demand clarity about corporate matters for their shareholders. Institutional Investors and fund managers constitute a large part of the corporate holding, making them liable to act as proxies on behalf of their shareholders. This paper uses a case study method to explain Proxy Advisory firms This paper first explains the evaluation and meaning of proxy advisory firms in India and globally. It also explains briefly the literature review and SEBI regulations regarding the Proxy Advisory industry in India.

Keywords: Proxy Advisory Firms, Institutional Investors, Corporate Governance, Accountability

I. INTRODUCTION

For the last two decades, India has seen a sudden change in the corporate governance sphere. The globalization of corporate practices, easy access to databases, digitalization of processes, and many new changes in companies' laws in 2013 in India are the major reasons to bring a change in corporate working style especially if it concerns shareholders. Since 2000, SEBI has worked rigorously to create a regulatory framework and processes for publicly listed companies. Holding a company's share makes shareholders the owner of the same company. The relationship between shareholders and the company is not limited to buying a certain percentage of company equity shares. Now shareholders have

started realizing that they play an imperative role in reshaping the corporate decision-making process by using their power in the appointment of directors and auditors of the company and most importantly using their vote right effectively.

'Proxy', this one word takes us to our childhood wherein we used to hear this word in our classrooms. (Managers et al., 2018). Proxy Advisory Firms are advisory firms that advise institutional investors and retail investors to go for and against the company's resolution. According to Regulation 2(1)(p) of the SEBI (Research Analysts) Regulations, 2014, 'proxy advisor' refers to "any individual or any organization that prepares recommendations and gives advice for the institutional investors or shareholders to aid them in the casting of their vote in respect of any policy issues or a public offer." (GOI, 2010). Regulation 2(1)(p) of the SEBI (Research Analysts) Regulations, 2014, also defines "research analyst" means a person who is primarily responsible for (GOI, 2010), -

i. preparation or publication of the research report's content; or
ii. providing research report; or
iii. making a 'buy/sell/hold' recommendation; or
iv. giving price target, or
v. offering an opinion concerning the public offer,

The Proxy Advisory landscape is not very old in India, it is only in its nascent stage. The lack of a formal governing body and the absence of a regulatory framework for these proxy firms can also create some serious corporate governance issues. These firms do the company's in-depth research and their resolutions as well. So, based on their findings, proxy advisory firms suggest their shareholders go in favor or against the resolution. Proxy Advisory firms are independent Analyst firms. These firms are meant to analyze the decisions, a company is going to take. These decisions would be related to the Companies Restructuring policy, related top member remuneration, merger, acquisition, the appointment and removal of CEOs and Top board members, etc. Proxy Advisory firms analyze and critically examine the matters that a company is going to put in AGMs, EGMs, or other pre-decided meetings. These firms suggest their investors cast a vote either in favor or against the resolution.

II. LITERATURE REVIEW

S. Subramanian (2016) has explained the Indian proxy advisory industry and also briefly explained about three major proxy advisory firms in India, namely, InGovern (In Govern Research Service), Institutional Investor Advisory Service (IAS), and Stakeholders Empowerment Services (SES) (Subramanian, 2016). James R. Copland, David F. Larcker, and Brian Tayan in their research paper published in May 2018 found out that corporate policy might get influenced by proxy firms' decisions and issued guidelines. The Paper has focused that even

Institutional Investor's voting decisions are also got influenced by proxy advisory firms' recommendations (Copland et al., 2018). The reason behind that is to get favorable remarks from proxy advisory firms. In 2021, Aiyesha Dey, Austin Starkweather, and Joshua T. White analyzed the impact proxy advisory is making on the company's shareholders' engagement policy (Dey et al., 2021). In the same year in 2021, Umang Agarwal and Rishabh Mishra explained in their research paper about SEBI'S regulations for proxy advisory firms in India and covered other countries' regulations regarding proxy advisory firms (In et al., n.d.).

III. RESEARCH METHODOLOGY

A) **OBJECTIVES OF THE STUDY**

1) To Analyse the present position of Proxy Advisory firms in India
2) To examine the impact of decisions taken by Indian Proxy Advisory firms

B) **DATA COLLECTION**

For this research paper, a descriptive research design is being adopted. In the process of collecting secondary data companies' websites, newspaper articles, SEBI circulars, companies' annual reports, and other financial documents are being used to collect the data.

IV. EVOLUTION OF PROXY ADVISORY FIRMS

For US and European countries, the concept of proxy advisory firms is three decades old. Now, these countries have structured frameworks for proxy advisory firms. These countries have already identified the importance of Institutional Investors' votes on companies' key proposals. Many regulatory codes and principles are been issued by different countries to make proxy advisory firms clear about their structure and working style.UK has UK Stewardship Code[1], 1, ICGN Guidance on Institutional Investors Responsibility,[2] and so on. In India, the Securities and Exchange Board of India is the regulatory body issuing all the rules and regulations to regulate proxy advisory firms in India. SEBI has decided on compliance policies, discloser policies, conflict of interest, voting recommendations, etc for Indian proxy advisory firms.

V. SHAREHOLDER ACTIVISM

Shareholder Activism is a movement toward making shareholders aware of their rights in a company. That time has gone when shareholders' role in a company is limited to buying the shares. Failing independent directors' roles is one of the reasons to raise the demand for an institution that can minutely take care of ongoing corporate issues, protect investors' money, and create transparency in the company's activities. (Varottil, 2012) Many reasons behind the stimulation of shareholders' activities in India are the downfall in economic activities, sudden negative changes in the market, the pandemic era, growing awareness among shareholders, the increasing role of proxy advisory firms, etc. Shareholder activism

is not a sudden response against corporate houses, but it is an evolving philosophy that took its true form in the late 90s to maintain accountability and transparency in business activities in which shareholders have invested.

After the 2008 Satyam Scandal, the demand to review India's corporate governance policy became prevalent. As a result of this many steps have been taken in this sphere, and new committees constituted that can advise strengthening the corporate governance policies. SEBI came up with many new regulations. More than that it was expected the shareholder to cast their vote for each resolution company putting on. Institutional shareholders, especially Mutual fund companies, equity companies, wealth management companies, insurance companies, etc., already have so many issues that they can't spare time to ponder each and every resolution recommended by management. In this case, the proxy firms help them out.

After taking a full-fledged role in a research-based advisory company, there were many cases where their voting recommendations changed the board's decision. Many cases across the globe have been witnessed where shareholders have ruled out the management's proposal. US-based major proxy firm ISS recommended Investors vote against the reappointment of Deepak Parekh as a non-executive director of HDFC ltd as he is already on the other 8 companies' boards. In that case, he will not have enough time for a new engagement. Same time, Deepak Parekh was on the board of, Fairfax India Holdings Corporation, HDFC Standard Life Insurance, Vedanta Resources Plc, GlaxoSmithKline Pharmaceuticals Ltd., Siemens, and The Indian Hotels, DP World Ltd. Some International Proxy companies do not favor the appointment or reappointment of directors on more than five companies' boards. At last Deepak Parekh got 77.36% votes in favor and 22.64% against. In another instance, Bangalore-based Proxy advisory firm InGovern has advised investors to vote against the reappointment of BC Prabhakar as an Independent Director in Wipro. It also has objection to reappointing the two independent directors Shardul Shroff and SH Khan on the board of IDFC. According to Managing Directors of InGovern Shriram Subramanian "It is surprising to see that leading company continue to appoint independent directors whose independence can be seen to be compromised. We believe institutional shareholders should raise these issues at AGMs to enhance the quality of corporate governance in India." Recently, Siddhartha Lal the Managing Director of Eicher Motors is responsible for reshaping the future of Eicher Motors and is credited to renovate Royal Enfield's image and operations. But when the proposal of a certain % hike in its remuneration is being proposed by management, it is rejected by the shareholders completely due to the company's low performance. Based on a regulatory filing,26.9% of shareholders voted against this resolution.

In the recent case, all 3 big proxy advisory firms including Institutional Investor Advisory Services India (IiAS) have advised shareholders to vote against the resolutions of One97, the parent company of Paytm, for the reappointment of Vijay Shekhar Sharma as the company's MD. InGovern reason to oppose the reappointment of Sharma was that Sharma is not liable to retire on rotation bases. Another proxy advisory firm Stakeholders Empowerment Services (SES) was also against this resolution, "dual post and excessive remuneration were the reasons to oppose his appointment. After this decision came to light, Paytm's stock fell 4.82% percent on the same day.[3] These proxy advisory firms also recommend having young minds on the board. As Shriram Subramanian, MD, InGovern Research Services said "Our view is that Indian companies need younger boards and there should be appropriate board refreshment. If there is a board where many directors are above 75 years, we look at the average age, the reason, and contributions made by the board members and make appropriate recommendations." As a result, HDFC disapproves the reappointment of two directors namely, Bansi Mehta and Bimal Jalan before the AGM.

A) GLOBAL PROXY ADVISORY FIRMS

1. Egan-Jones Proxy Services, part of Egan-Jones Rating Company (USA)
2. Glass, Lewis & Co (USA)
3. Institutional Shareholder Services (USA)
4. Minerva Analytics Ltd (UK)
5. Institutional Investor Advisory Services India Limited (IiAS) (India)
6. Stakeholders Empowerment Services (SES) (India)
7. GIR Inc. (Canada)

B) MOST FAMOUS PROXY FIRMS IN INDIA

1) InGovern (In Govern Research Service)
2) Institutional Investor Advisory Service (IAS)
3) Stakeholders Empowerment Services (SES)

VI. REGULATORY FRAMEWORK FOR PROXY ADVISORY FIRMS IN INDIA

Here are the timelines for regulation taken by SEBI concerning proxy advisory players in India.

1) SEBI (Research Analysts) Regulations 2014[1] (the 'RA Regulations')[4]

The Securities and Exchange Board of India (SEBI) issued its first circulars named 'the SEBI (Research Analysts) Regulations 2014, a first step to regularise proxy advisors' industry. This is the first time PA firms come under the legal radar and some guidelines or laws are introduced about their survival. A few main points are given below: -

1) Firms have to get registered under SEBI to do proxy advisory business in the country.
2) Mandatory disclosure about their recommendation.
3) Proper Framework for internal policies and functioning.
4) Keeping voting recommendation records

2) **SEBI formed a 'Working Group 'in 2018:**
In 2018, a working group was formed to analyze the proxy advisory industry's ongoing working framework and provide inputs and recommendations. The main purpose behind forming this working group was to review all the provisions of the 'RA Regulation' and suggest updates. Some other matters were also under this group on which the working group.

3) **SEBI Working Group on Proxy Advisors in its 'Report on Issues Concerning Proxy Advisors' dated 24 May 2019 (Working Group Report)[5]**
The working group formed in 2018 gave its recommendation on 24 May 2019. The Working group issued 39 pages report containing information under three heads
1) Conflict of interest, governance, and disclosures
2) Infrastructure and skills requirements
3) Voting, fiduciary duty, and information sharing
4) interaction with corporates
5) setting basic industry standards
6) cost and competition
7) additional points

4) **On 3 August 2020, SEBI issued one circular regarding 'Procedural Guidelines for Proxy Advisors '(Procedural Guidelines),[6] and on 4 August 2020, SEBI issued guidelines for 'Grievance Resolution between listed entities and proxy advisors' (Grievance Resolution Circular)[7] (collectively SEBI Circulars)**
These guidelines focused on proxy advisory firms' discloser policy. SEBI directed PA firms to follow the already specified Code of Conduct. Proxy Advisory firms need to formulate policies related to the voting recommendation and at the time of voting, it should be disclosed to the clients. All these policies need to be reviewed once a year. PA firms are also directed to share the processes and methodology used to take in the process of making voting recommendations.

5) **SEBI's latest circulars, effective from 1 January 2021, make the company disclose the information related to the following under two heads.[8]**

1) Formulation and adaptation – Companies need to properly disclose the Conflict-of-interest policy, sharing policy of reports (make sure reports have been shared with the company and clients at the same time), voting recommendation policy, etc.
2) Discloser- Under this clause focus has been given to disclosing the voting recommendation to the company's clients and also sharing that information on its website. Along with this, the methods and processes have been used to decide the voting recommendation also been asked to share with the clients. Companies are asked to disclose conflicts of interest etc.

VII. PROBLEMS AND CHALLENGES

1) Retail investors are not found taking interest in casting their votes. They feel that their negligible share is not going to materially impact the outcome of the resolution to be taken by the company. Contrary to political democracy, corporate democracy is still gathering speed and popularity in India. It has been empirically observed that retail investors do not take pain to cast votes in the meeting even when online or E-voting has been facilitated.
2) The typical feudal mentality of Indian investors is that they associate the company with their governing board controlled by the owner/promoter. They assume that decisions taken by the board must be in the interest of the company and that the "Love the company, Love the owner "mentality is present. Because of their love and trust, they do not doubt the Genuity of the proposals to be adopted.
3) There is a question about proxy firms' neutral attitudes. These proxy firms may be played with, whether they can actually visualize the impact of decisions, the way a long-established and well-run company does. Sometimes the vision and forth-sightedness of the top management of a corporation cannot be a matched by person analyzing things from the distance.
4) Resources handicap has been observed at the level of proxy firms and this handicap relates to human financial and technical areas. With new areas of growth in different spheres presenting a complex futuristic environment, taking a holistic view of corporate strategies required the deployment of an expert of high caliber, and the alignment with the company's vision requires in-depth meaningful considerations.

CONCLUSION

It is observed that over a period of time perhaps in the next 5-10 years, with an increase in shareholder awareness through various governing bodies and social media platforms, increasing acceptance of proxy advisory firm's role by corporate, especially listed corporate entities, the emergence of some more proxy firms resulting in higher competition, induction of specialized human resources by proxy advisory firms, widening role of professionally owned corporate in place of family-

owned corporate, increasing emphasis on implementation of ESG Standards, the role of proxy advisory firm's will keep on increasing and more meaningful furthering the cause of corporate democracy.

References:

1. https://www.researchgate.net/publication/267327619_CORPORATE_GOVERNANCE_NOTES

2. https://www.fm-magazine.com/news/2019/nov/role-of-proxy-advisers-201922438.html

3. http://www.legalservicesindia.com/article/2303/Role-of-Proxy-Advisory-Firms-In-Corporate-Governance.html

https://www.livemint.com/news/india/sebi-issues-disclosure-standards-for-proxy-advisory-firms-11596457774523.html

4. https://lexpeeps.in/shareholder-activism-and-corporate-democracy-in-india-and-u-s-a-role-of-proxy-advisors/

5. https://www.fm-magazine.com/news/2019/nov/role-of-proxy-advisers-201922438.html

6. https://www.thehindubusinessline.com/opinion/columns/slate/all-you-wanted-to-know-about-proxy-advisory-services/article9395194.ece/amp/

7. https://m.economictimes.com/markets/stocks/news/sebi-extends-timeline-for-proxy-advisors-guidelines-compliance-to-jan-1/amp_articleshow/77781711.cms

8. https://economictimes.indiatimes.com/markets/stocks/news/proxy-advisors-boon-or-bane-for-corporate

9. https://www.ibanet.org/article/288eaa21-69da-4807-afb7-6e43071761fa

10. https://www.thehindubusinessline.com/business-laws/rising-shareholder-activism-in-india/article64910251.ece

11. https://taxguru.in/sebi/proxy-advisory-industry-changing-face-shareholder-corporate-governance.html

12. https://www.sebi.gov.in/legal/regulations/sep-2014/sebi-research-analysts-regulations-2014_27895.html

13.Copland, J. R., Larcker, D. F., & Tayan, B. (2018). Proxy Advisory Firms: Empirical Evidence and the Case for Reform. May.

14. Dey, A., Starkweather, A., & White, J. T. (2021). Proxy Advisory Firms and Corporate Shareholder Engagement. SSRN Electronic Journal. https://doi.org/10.2139/ssrn.3871948

15. GOI. (2010a). The Gazette of India. DisClosure -Indian Nursing Council, 2011(2), 1–216. http://egazette.nic.in/WriteReadData/2020/221325.pdf%0Ahttp://www.cdsco.nic.in/writereaddata/GSR 327(E) Dated 03_04_2017.pdf

16. In, D., To, E. E. D., & The, R. O. N. O. U. T. (n.d.). R EGULATING P ROXY A DVISORS IN I NDIA – A N EED TO I RON OUT THE.

17. Managers, P., Investment, A., Estate, R., & Trusts, I. (2018). SEBI seeks public comments on Report submitted by the working group on Issues related to Proxy Advisers (PA). i.

18. Subramanian, S. (2016). Proxy advisory industry in India. Corporate Ownership and Control, 13(2), 371–378. https://doi.org/10.22495/cocv13i2cLp5

19. Varottil, U. (2012). The Advent of Shareholder Activism in India. SSRN Electronic Journal, March. https://doi.org/10.2139/ssrn.2165162

(Footnotes)

[1] https://www.frc.org.uk/getattachment/d67933f9-ca38-4233-b603-3d24b2f62c5f/UK-Stewardship-Code-(September-2012).pdf

[2]https://www.icgn.org/sites/default/files/ICGN%20Institutional%20 Investor%20 Responsibilities_0.pdf

[3] https://indianexpress.com/article/business/companies/three-proxy-advisory-firms-red-flag-paytm-8087391/

[4] https://www.sebi.gov.in/legal/regulations/aug-2021/securities-and-exchange-board-of-india-research-analysts-regulations-2014-last-amended-on-august-03-2021-_34615.html

[5] https://www.sebi.gov.in/reports/reports/jul-2019/report-of-working-group-on-issues-concerning-proxy-advisors-seeking-public-comments_43710.html

[6] https://www.sebi.gov.in/legal/circulars/dec-2020/procedural-guidelines-for-proxy-advisors_48633.html

[7] https://www.sebi.gov.in/legal/circulars/aug-2020/grievance-resolution-between-listed-entities-and-proxy-advisers_47252.html

[8] https://www.khaitanco.com/thought-leaderships/Tightening-the-noose-on-proxy-advisors-influencers-of-India-Inc#_ftn5

❐❐❐

1. Assistant Professor, Department of Management, Aarupadai Veedu Institute of Technology, Vinayaka Mission's Research Foundation (Deemed to be University)
2. Senior Faculty, Department of Commerce, Dr. Shakuntala Misra National Rehabilitation University Lucknow

Rabindranath Tagore and Nationalism: A Post-colonial Reading

–Dr. Nikhilesh Dhar

The nation, with all its paraphernalia of power and prosperity, its flags and pious hymns, its blasphemous prayers in the churches, and the literary mock thunders of its patriotic bragging, can not hide the fact that the Nation is the greatest evil for the nation, that all its precautions are against it, and any new birth of its fellow in the world is always followed in its mind by the dread of a new peril.

Rabindranath Tagore (1861–1941) was a prolific and accomplished poet, novelist, playwright and is perhaps best known for his literary output, a massive corpus comprising superb writing in both Bengali and English and above all a sympathetic man of letters, a profound thinker, a strategic experimentalist and an indisputable humanist who has been inspiring generations of intellectual and empathetic minds irrespective of their religion, race, language and also the barriers such as state and nation.

He was born under a socio economic setting of colonial subjugation and the onset of the Renaissance in Bengal and to quote Rabindranath himself, "that is not an important date of history, but it belongs to a great period of our history of Bengal ... just about the time I was born the currents of three movements had met in the life of our country". (Das Gupta 4). Necessarily, as a learned person of creative output it was impossible for him to avoid the socio political and cultural cross currents of the prevalent time. Accordingly, he expressed his views on nationalism in the West and Japan including India like any other contemporary issues on various occasions. The present paper is an attempt to analyse and examine Tagore's thought-provoking, unconventional and integrated perception on nationalism as a whole focusing the very soul of his intellectual deliberation from a post-colonial perspective.

With the outbreak of the First World War (1914) Rabindranath was intelligent enough to correctly understand the causes of war which was nothing but open and violent display of contradictions among the domineering capitalist-imperialist powers of Europe. In a short essay "Laraiyer Mul"(Origins of War) he wrote with a tinge of banter, "The hegemony of the

trader capitalists has recently been established the world over. But trade has ceased to be a mere trade; capital and empire have become united in an unlawful marriage…". (Tagore 229-31, vol. xiii) He further stated, "As a result an entirely novel phenomenon has occurred in the world to-day, and that is the hegemony of one country over another, no matter if they are separated by oceans and seas". (Tagore 229-31,vol.xiii) He was of the opinion that "Such gigantic overlordships never existed in the past. Asia and Africa are the hunting grounds of Europe". (Tagore 229-31,vol.xiii) The European conflagration, into which India as a British

colony was automatically drawn, stirred such thoughts in the mind of Rabindranath that in a perturbed frame of mind he read out the speech "Ma Ma Hingsi"(5/8/1914) at the Prayer House at Santiniketan and in the essay "Paper Marjana" (26/8/1914) made a fervent prayer to God to get the world rid of all kinds of sin. But Tagore's indignation and protest against the brutish savagery of the imperial aggression reached its zenith in a letter to Smt Semur:

In Europe the War-fiend is abroad. The chained barbarism in the heart of the Western Civilisation, fed in secret with the life-blood of alien races, has snapped its chain at last, springing at the throat of its own master. Greed of Empire, worship of force, cruel exploitation of the helpless have had the sanction of science in the West, but the time is ripe when God shall assert his own and man shall learn once again that his best instincts are based on Eternal truth and not upon any doctrine of science. (Tagore cited in Paul 32)

It was during February 1915, Tagore met Gandhi for the first time and when Gandhi had asked him in a letter written on 5 April,1919 for a public declaration of support for the *satyagraha*, in response, Tagore wrote a letter to Gandhi on 12 April , "…Our authorities have shown us their claws … this power of good must prove its truth and strength by its fearlessness, by its refusal to accept any imposition which depends for its success upon its power to produce frightfulness and is not ashamed to use its machines of destruction to terrorise a population completely disarmed". (Tagore Cited in Dutta & Robinson 216) Moreover, "power in all its forms", he wrote, "is irrational – it is like the horse that drags the carriage blindfolded. The moral element in it is only represented in the man who drives the horse. Passive resistance is a force which is not necessarily moral in itself; it can be used against truth as well as for it". (Tagore Cited in Dutta & Robinson 216) At this point I may also allude to the final stanza of one of Tagore's poems which contains much of the philosophical essence that would guide Tagore's response to Gandhi's enactment of non-cooperation as a means of resistance to colonial rule, and it closes thus:

Give me the supreme courage of love, this is my prayer – the courage to speak, to do,/ to suffer at thy will, to leave all things or be left alone.

Give me the supreme faith of love, this is my prayer – the faith of the life in death, of / the victory in defeat, of the power hidden in the frailness of beauty, of

the dignity/ of pain that accepts hurt but disdains to return it. (Tagore Cited in Dutta & Robinson 218)

Rabindranath set out for Japan on 3rd May,1916 and from there on to America and delivered some lectures which are collected in a slender volume entitled *Nationalism*. The

book contains three essays: (i) "Nationalism in Japan" (ii) "Nationalism in the West" and finally (iii) "Nationalism in India". But it is also interesting to note that his discussion on Nation and Nationalism is not at all a novel matter to him. In fact, long back in Bangadarshan (1901) he wrote an essay "Nation Ki" (What is Nation?) based on the views of the French thinker Renan on this subject. In it, Tagore elaborates Renan's views and proceeds on to add that language, geographical boundary, a rich heritage and memories of the past, and a vision of the future modeled on that heritage — none of these has been an essential condition for making of the western nation. "For Tagore, nation is a mental construct as well as an organic entity comprising two essential features: first, historical memory of the people; and second, a consensus among the people to live together in a specific geographical location". (Chakravarty cited in Ganguly and Sen 26) In the essay "Bharatbarsia Samaj" Tagore clearly makes a distinction between the idea of 'nation' in the west and the idea of 'society' in Indian history :

What we have to understand is that society or community reigns supreme in India. In other countries, nations have protected themselves from various revolutions for survival. In our country society has survived countless convulsions from time immemorial…The fact that we have not yet been driven to the bottom of degeneration through thousands of years of revolutions, tyranny and subjugation is because we have been saved by the moral values embedded in our ancient society. (Tagore qtd. in Ganguly and Sen 26)

Tagore, however, was a supporter of nationalism during the first decade of the 20th century when he had confidence in nationalist ideology as the means of cultural survival. But as he found that the imperial power of the west engaged themselves in the first world war and Japan became involved in it as a newly emergent hegemonist, Rabindranath availed himself of this opportunity to direct a passionate intellectual crusade against the dehumanizing effects of capitalism and nationalism, which in the form of imperialism had been continuing with its stupendous crimes recorded in history. In other words, Tagore's disillusionment came when he saw the ugly face of nationalism revealed in Japan's deadly war of aggression against China, in Europe's march towards the global conflict of 1914-1918, and in outbursts of nationalist terrorism. This disillusionment and his consequent shift to anti-nationalism unsurprisingly angered many in the mainstream of the national movement in India. This was reflected in the editorial of a leading Bengali newspaper, Ananda Bazar Patrika on 5th June, 1923:

Those who are familiar with the swadeshi era know how much new nationalism or patriotism of Bengal or of India owes to Rabindranath Tagore. Today, after only a few years, the same Rabindranath is putting all his force against nationalism! Perhaps the terrible destructiveness of the last World War of Europe and the ugly face of nations mutually at loggerheads, have hurt the poet's soul. But, however much the poet's soft and idealistic soul may be hurt…there is no denying that nationalism is a necessity for the oppressed countries like India…In the present world the effort to bind the strong and the weak by the bond of love may be nice to imagine, but it is hopeless as a practical proposition. (Cited in Bhattacharya 29)

But such reactions could not dislodge Tagore from his new stance of anti-nationalism, for he realized that nationalism was another name for appropriation, by brute force if necessary, of the wealth, and raw materials of other countries, and that nationalism would breed isolationism and violate the highest ideals of humanity. "For Tagore the defining criteria of colonialism, named as 'government by the nation', are its impersonality and its bureaucratic-mechanical dimension, which make it so different from past pre-colonial governments". (Mukhopadhyay qtd. in Dasgupta & Guha 131) Therefore, it is interesting to note how Tagore has equated Nationalism with what the Economists have termed Colonialism and Imperialism while defining nationalism. To Tagore Nationalism and Colonialism in the stage of Imperialism are only two sides of the same coin. Accordingly, a Nation, in his view, "in the sense of the political and economic union of a people, is that aspect which a whole population assumes when organized for a mechanical purpose". (Tagore, *Nationalism* 43) He also stated, " …the living bonds of society are breaking up, and giving place to merely mechanical organization…"(Tagore, *Nationalism* 44) and "…when this organization of politics and commerce, whose other name is the Nation, becomes all powerful at the cost of the harmony of the higher social life, then it is an evil day for humanity, — when it allows itself to be turned into a perfect organization of power, then there are few crimes which it is unable to perpetrate…". (Tagore, *Nationalism* 45-46) Like a guardian of the whole world Rabindranath warned us with the words: "We have felt its iron grip at the root of our life, and for the sake of humanity we must stand up and give warning to all, that this nationalism is a cruel epidemic of evil that is sweeping over the human world of the present age, and eating into its moral vitality." (Tagore, *Nationalism* 49)

Rabindranath had been nursing his subdued anti-imperialist wrath in his mind and that his wrath chose its own moment to erupt into literary creations. As already stated, his three

months stay (May-July,1916) in Japan when her imperialist aspirations and fervour were at their intensest pitch, he chose to make it eventful by vehement denunciation of imperialism working havoc in the name of nationalism. He wrote:

The nation, with all its paraphernalia of power and prosperity, its flags and pious hymns, its blasphemous prayers in the churches, and the literary mock thunders of its patriotic bragging, can not hide the fact that the Nation is the greatest evil for the nation, that all its precautions are against it, and any new birth of its fellow in the world is always followed in its mind by the dread of a new peril. Its one wish is to trade on the feebleness of the rest of the world…. (Tagore, *Nationalism* 60)

Rabindranath considered Nationalism to be the most evil passion of human being and so "under the influence of its fumes the whole people can carry out its systematic programme of the most virulent self-seeking without being in the least aware of its moral perversion" (Tagore, *Nationalism* 71) – and therefore he pointed out:

This European war of Nations is the war of retribution…In this war the death-thrones of the Nation have commenced. Suddenly, all its mechanism going mad, it has begun the dance of the Furies, shattering its own limbs, scattering them into the dust. It is the fifth-act of the tragedy of the unreal. (Tagore, *Nationalism* 72-73)

In the same tune when Rabindranath published his novel *The Home and the World* in 1915 sharply criticizing the nationalist engaged in the Swadeshi Movement and as I have already deliberated in *Nationalism* how he argued, 'the organized selfishness of Nationalism' is the 'path of suicide', his reputation fell quickly and it was at bottom in India and in the West. Indeed, Tagore's comments on western idea of nation and nationalism made it an open secret that he was wholly against the cult of nationalism.

Later, in the year 1925, however, Rabindranath once again had a brief discussion on the issue of Nationalism in his speech "People and Nation" at Milan in Italy. Here, with a new approach Tagore differentiated between 'people' and 'nation' as that between 'the natural man' and 'the professional man'. He opined that with the predominance of the professional aspect of the people of the west, their humanity has become subordinated resulting in increase in their power as in the case in Germany and Britain. So, Tagore stated :

Western civilization may have created circumstances which have urged you to cultivate the spirit of professionalism. Once one nation becomes strong and gives itself over the cultivation of muscle, of army and navy, and to the game

of high finance, you also are compelled to cultivate that because of this unhealthy, unnatural condition. This course may have been necessary, yet it ought to be condemned. Collective egoism is that feeling of the nation which must never be encouraged ('Manchester Guardian' cited in Mazumdar 230)

What is interesting to note here is that from the above portion of my study it is seen that Tagore's role as a critique of Nationalism has undergone a certain kind of development starting from the essay "Nation Ki?"(What is Nation)(1901) to "People and Nation" (1925). This is clear from all his writings that he finds the

western idea of nationalism as a source of war and massacre and destruction of all moral principles. In other words, he does not see it as a way of bringing about international solidarity which induces a larger and more expansive vision of the world. Thus, "he was opposed to the nationalism of *Realpolitik* and hyper-nationalism that breathed meaning into Thucydides's ancient maxim that "large nations do what they wish, while small nations accept what they must"(Chomsky 147) and that in which, as Radhakrishnan said, "self-interest is the end; brute force, the means; conscience is taboo". (Cited in Quayum, n.pag ; web)

But Tagore's hostility to nationalism should not make us think that he was not patriotic or that he was anti-West. He believed in a synthesis of the East and the West and a deep association or a living relationship between the two cultures. As already said, Rabindranath's love for the mother land transcended the bounds of a narrow, selfish and self - aggrandizing nationalism. To put it in other words, he was not confined to a national consciousness. Rather, a world-consciousness and cosmopolitanism, a "visvabodh" (global feelings) in which every country would make its own lamp of mind burning for the illumination of the world was always the dominant tone of his imagination. (Cited in Quayum, n.pag ; web) As Nikhil says in *The Home and the World*, "I am willing to serve my country; but my worship I reserve for Right which is far greater than my country. To worship my country as a god is to bring a curse upon it" (Tagore, *The Home and the* World,13) and as Atin says to Ela in *Four Chapters*:

The patriotism of those who have no faith in that which is above patriotism is like a crocodile's back used as a ferry to cross the river ... That the life of the country can be saved by killing its soul, is the monstrously false doctrine that nationalists all over the world are bellowing forth stridently. My heart groans to give it effective contradictions. (Tagore qtd. in Iyengar,109)

It is on these grounds that critics like Ashis Nandy, Gauri Viswanathan, and Martha Nussbaum do not consider Tagore a nationalist. They argue that he was a patriot and anti-imperialist because he loved his country and did not want the British to rule it. But he was a universalist rather than a nationalist because he was a strong advocate of the creation of a culture common to all people, instead of separate national cultures, and because he did not want independence if that also meant adopting the form of a 'nation-state'. Tagore's nationalism has therefore to be defined by moving beyond the national map. Some of his poems in *Naibedya* alert us about imperialism that was tearing Africa asunder during the second Boer War which he felt would lead to greater world catastrophe. Tagore's perception of nationalism consequently has mainly relied on ancient Indian philosophy, where the world was accepted as a single nest. In this way, Tagore was striving to dissociate himself from the general belief of nationalism and trying to associate it with ideas such as peace, harmony, welfare and benevolence. He argues further that if anyway

India decides to contribute the world; it should be only in the form of humanity, nothing else for Tagore himself once wrote that patriotism cannot be his final spiritual shelter ; his refuge is humanity which always requires a broad sense of transnational ideology in a long run paving the way to global mindset that will equate to a kind of universal and cosmopolitan outlook on his part as a whole.

References:

Bhattacharya, Sabyasachi. ed. *The Mahatma and the Poet: Letters and debates between Gandhi and Tagore 1915* – 1941. New Delhi : National Book Trust of India,1999. Print.

Chakravarty, Bikash. "Swadeshi Samaj: Rabindranath and the Nation" in *Rabindranath Tagore and the Nation : Essays in Politics, Society and Culture*, eds. Swati Ganguly and Abijit Sen. Kolkata : Punascha, 2011. Print.

Chomsky, Noam. *Pirates and Emperors, Old and New: International Terrorism in the Real World* . U.S.A: South End Press, 2002. Print.

Das Gupta, Uma. Ed. *Rabindranath Tagore: my life in my words*. India: Penguine Book, 2006.Print.

Dutta, Krishna and Andrew Robinson. eds. *Selected Letters of Rabindranath* Tagore. Cambridge : Cambridge University Press,1997. Print.

'Manchester Guardian', dated. 23rd Feb,1925. Cited in Nepal Mazumdar, *Bharate Jatiyata O Antarjatikata Ebang* Rabindranath, Vol. ii.. Calcutta : Dey's Publishing,1985. Print.

Mukhopadhyay, Amartya. "'**Bhinnata**' of 'nation': Tagore's search in Nationalism, '**Bharatbarsia Samaj**' and Beyond" in *Tagore – At Home in the World*, eds. Sanjukta Dasgupta and Chinmoy Guha. New Delhi : Sage Publications India Pvt. Ltd., 2013.Print.

Paul, Prasanta Kumar. *Rabijibani: A Biography of Rabindranath Tagore*, Vol. VII. Calcutta : Ananda Publishers Private Ltd, 1997. Print

Quayum, Mahammad, "Imagining "One World": Rabindranath Tagore's Critique of Nationalism" in Interdisciplinary Literary Studies 7.2(2006):n.pag. Web. 4 April 2011. <http://mukto-mona.net/Articles/mohammad_quayum/Tagore_Nationalism.pdf>.

…"Paradisiacal Imagination: Rabindranath Tagore's *Visvovod* or Vision of Non-National Neo-Univerdalism" in Quodlibet: The Australian journal of Trans-national Writing1 (2005) : n.pag.Web.3 May 2011.<http://fhrc.flinders.edu.au /quodlibet/ vol1/ downloads/ Tagore.pdf>.

Tagore, Rabindranath. *Rabindra Rachanabali* (Collected Works of Tagore)vols.1-15. Calcutta : Govt. of West Bengal,1961. Print. [All the incidental translations are mine]

...Four Chapters (Translated from Bengali *Char Adhyay* by Surendranath Tagore) cited in, Iyengar, K. R. Srinivasa. *Indian Writing in English*. New Delhi: Sterling Publishers, 1962. Print.

… *The Home and the World* (translated from Bengali *Ghare Baire* by Surendranath Tagore). New Delhi: Doaba Publications, 2002. Print.

... *Nationalism* : New Delhi, Rupa and Co., 2005. Print.

❑❑❑

1. Assistant Professor, Dept. of English, Onda Thana Mahavidyalaya, Bankura - 722144

Research Article

Swami Vivekananda's Vision: A Nationalistic Perspective

–Dr. Ramyabrata Chakraborty

Swami Vivekannada, the pioneer of Indian religious tradition was also very much associated with a decolonized concept of nationalism as well as other nationalistic discourses. Though growth of Nationalism is attributed to the Western influence but Swami Vivekananda's nationalism is deeply rooted in Indian spirituality and morality.

Abstract

Swami Vivekananda was a pioneer of Indian religious tradition which was very much associated with a decolonized concept of nationalism as well as other nationalistic discourses. Any discussion on Indian nation and nationalism will not complete without an assessment of Swami Vivekananda's idea of these. Like Sri Aurobindo and Bipin Chandra Pal, Swami Vivekananda was a stern supporter of the concept of nationalism which is based on religion and spirituality. By religion Vivekananda understood the eternal principles of moral and spiritual advancement. He believed in universal toleration and not in social and religious imposition. Therefore he can't be charged with sectarianism or communalism (Panda 31). Keeping these in view, the present study will try to investigate Vivekannada's vision from nationalistic point of view.

Keywords: Vivekananda, nationalistic discourse, spiritualism, religion.

INTRODUCTION:

Any discussion on Indian nation and nationalism will not complete without an assessment of Swami Vivekananda's idea of these. Ernest Renan attempts to define a nation in his essay "What is a nation." According to him:

> A nation is a soul, a spiritual principle. Two things, which in truth are but one, constitute this soul or spiritual principle. One lies in the past, one in the present. One is the possession in common of a rich legacy of memories; the other is present-day consent, the desire to live together, the will to

> perpetuate the value of the heritage that one has received in an undivided form. Man, gentlemen, does not improvise. The nation, like the individual, is the culmination of a long past of endeavours, sacrifice, and devotion. Of all cults, that of the ancestors is the most legitimate, for the ancestors have made us what we are (quoted in Das 36).

Renan attempts to define a legitimate nation by reflecting on the uprisings led by nationalist leaders during the revolutions of 1848. He advocates people to come together, and look to common bonding experiences that do not smother progress and unity because of the differences in race, language, religion and geography. Ernest Renan's central argument is that a nation is a corporation of people who share a common past and have derived a strong bond, with an agreement to stay together and be governed by mutual consent in the future (Chakraborty 2013:5).

Swami Vivekannada, the pioneer of Indian religious tradition was also very much associated with a decolonized concept of nationalism as well as other nationalistic discourses. Though growth of Nationalism is attributed to the Western influence but Swami Vivekananda's nationalism is deeply rooted in Indian spirituality and morality. He contributed immensely to the concept of nationalism in colonial India and played a special role in steering India into the 20th Century. His influence on the youth of 20th century is iconic (Tyagi 2015).

DISCUSSION OF THE PROBLEM:

"Vivekananda's thought found sustenance in the common roots of Hindu nationalism" (B. Gokhale 39). His early name was Narendranath Dutta. He became associated with the activities of the Brahmo Samaj, and in 1881 he met Swami Ramakrishna Paramahamsa (1836-1886), the great mystic-saint of Bengal. This meeting changed Narendranath's life, for instead of aspiring to be an affluent barrister-at-law, he became an ascetic calling himself Vivekananda. After Ramakrishna's death in 1886, Vivekananda completely devoted himself to a life of religious effort in the cause of the regeneration of Hinduism. He said, "in each nation, as in music, there is a main note, a central theme, upon which all others turn. Each nation has a theme, everything else is secondary India's theme is religion. Social reform and everything else are secondary" (Vivekananda 1: 140).

Throughout his life Vivekananda played a decisive role as philosopher of the Hindu nationalist movement and tried to discover the forgotten glories of the spiritual tradition of India. On September 11, 1893, he delivered his now famous address to the Parliament of Religions in Chicago. He firmly believed that India was the centre of the world's spirituality. He said,

> Let others talk of politics, of the glory of acquisition of the immense wealth poured in by trade, of the power and spread of commercialism, of the glorious fountain of physical liberty, the Hindu mind does not understand it. Touch him on spirituality, on religion, on God, on the soul, on the infinite, on spiritual freedom, the lowest peasant, I am sure, is better informed in India than many a so-called philosopher in other lands (Vivekananda 3: 148).

His conviction was that "India is still the first and foremost of all the nations in the world" because of its being the motherland of philosophy and spirituality, ethics and sweetness, gentleness and human love (Vivekananda 3: 147). Vivekananda argued that Indian spirituality conquered the world once. That world is now overcome with weariness, and "it is Indian spirituality that will once again save the world from its destruction" (B. Gokhale 38).

But regarding the present condition of India, Vivekananda freely admitted that India had fallen on evil days. There was poverty in the country, and there was a lack of education. There was political subjection and cultural humiliation. The rationalist in him made him speak out against ignorance, superstition, untouchability and caste system. But he was hopeful that spiritual education would be helpful for the removal of these evils from the Indian society (Chakraborty 2019: 45). According to him, "the Indian nation cannot be killed. Deathless it stands and will stand so long as the spirit shall remain as the background, so long as the people do not give up their spirituality" (Vivekananda 4: 160). And the Hindu, the common, down-to-earth Hindu, cannot give up his spirituality for "he has been the blessed child of God always (Vivekananda 3: 105).

Mysticism is the basis of Vivekananda's nationalism. In fact, mysticism plays a prominent role in the formation and development of Hindu nationalism from Dayananda Saraswati to Mahatma Gandhi. Gopal Krishna Gokhale, the Moderate leader and philosopher of Indian Liberalism once expressed his mystical faith in the future of India when he said,

> a new consciousness of power is stirring within us - a new meaning of existence is breaking upon our mind.., and altogether we seem to see the first faint streaks of a new dawn which, in God's Providence, must in course of time grow into the perfect day (G. Gokhale 948).

Similarly Gandhi also believed that Divine Providence had meant India to play a special role in human history and that was to deliver the message of *Satyagraha* to the world for "no other country will precede her in the fulfillment of the message" (Dhawan 344-345).

> This mystical faith in the special role of the country in the history of humanity was a part and parcel of the Hindu revival which forms the basis of much of Indian nationalism from 1875 onwards (B. Gokhale 40).

The gradual expansion of the scope of politics from the Western educated, English-speaking upper middle classes to the urban lower middle classes and finally to the rural masses demanded a shift in the basis of the nationalistic appeal. It also brought the necessity of using Indian languages for political propaganda and communication with the masses in the place of English. These languages were suffused in the *Sanskritic* and Hindu tradition, just as the mind of rural and lower middle class urban India was largely Hindu in its ideas and concepts. For them a term like *Ram Raj* was much more evocative than a Welfare State, and the persistent use of the former term by Gandhi in his speeches is an indication of the importance of Hindu concepts in the development of a mass nationalism in India.

> Hindu mysticism and Hindu concepts of spiritual greatness were thus essential and inevitable elements in the process of the development of Indian nationalism, and of this Vivekananda was one of the earliest exponents (B. Gokhale 40).

Vivekananda felt that India was a country full of diversities and conflicts. There were different religions, languages, sects and regional societies often at cross-purposes with each other. There was the need to discover a common basis which would help the people "transcend the barriers of language and regional societies and weld them into a nation inspired by a vigorous and creative nationalism" (B. Gokhale 40). In his opinion such a basis could be found only in religion and spirituality which meant the Hindu spiritual tradition. He said,

> The only common ground that we have is our sacred tradition, our religion. That is the only common ground, and upon that we shall have to build…the unity in religion, therefore, is absolutely necessary as the first condition of the future of India (Vivekananda 3: 286-288).

Vivekananda was convinced that "national union in India must be a gathering up of its scattered spiritual forces. A nation in India must be a union of those whose hearts beat to the same spiritual tune" (Vivekananda 3: 371).

This spiritual tune was compounded of the theological, metaphysical, and ethical elements developed by Hinduism through the ages. He opposed the movement of social reform if it tended to destroy faith in Hinduism, since if that faith was destroyed everything was destroyed (Vivekananda 3: 216-219). He was not against borrowing ideas and techniques from other countries and civilizations, though he decried the imitation of Western materialistic attitudes by the educated Indians of

his day. He also acknowledged the importance of political work such as was done by the Indian National Congress, but considered it a mistake if the awakening of the nation was seen only in political and social reform movements, for the awakening was quite as real in religion and it was this awakening of religion that would provide nationalism with vitality and through it pervade the life of every Hindu.

> Vivekananda was by no means a Hindu fanatic, but he was deeply convinced that nationalism in India could be effectively based and developed into a mass movement only if it acquired a religious content (B. Gokhale 41).

Along with Mahatma Gandhi and Balgangadhar Tilak Vivekananda, forms a part of one continuous process. Many of Gandhi's ideas on Hinduism and spirituality have similarity with Vivekananda's ideas on same. Like Vivekananda, Gandhiji also believed that spirituality must permeate everyday life; and Gandhi would not consider of politics as detached from religion, though for him this religion was not a particular dogma but a universal religion of belief in a well-organized moral government of the universe. For him *Swraj* was synonymous with Ram Raj which he interpreted as the Kingdom of Righteousness on earth (Bose 223-224). With the advent of Indian freedom movement, the study of the Indian nationalism had assumed great importance. By that time Vivekananda's writings and speeches had contributed a good deal to the strengthening of the moral foundations of Bengal nationalism in theory and practice. In fact, through his writings he imparted among the nationalists a sense of pride in the past and gave a cultural confidence to people who had lost their self- esteem (Panda 32).

CONCLUSION:

Therefore it is pertinent to say that whatever philosophical interpretation Swami Vivekananda might give of terms like Ram Raj, he could not dissociate them of the religious significance associated with them in the Hindu mind. Swami Vivekananda also profoundly influenced the mind of Subhas Chandra Bose, who was particularly struck by the Swami's exhortation on the acquisition of moral and physical power (B. Gokhale 42). Regarding Vivekananda's nationalism B. G. Gokhale comments:

> Vivekananda's Hinduism was tolerant and broad-minded, and he was as much an inter-nationalist as a nationalist. He did not turn his back completely on the West, but his emphasis on the reacquisition of a "Hindu-ness" by the Hindu meant, as in the case of others, a rejection, more or less complete, of the West and its materialistic values. Vivekananda attacked secularism and denounced the secularization of life initiated under the Western impact on Indian culture. He urged a return to what he called "spirituality," which in effect meant Hinduism purged of all of its

superstitions and antiquated concepts of social and economic relations. In this he began as a symbol of his age but went on to become its prophet, the prophet of a renascent Hinduism which when fused with a sense of unity would grow into the force of Indian nationalism (B. Gokhale 42).

Dr. Saroj Kumar Panda was right when he said,

Vivekananda's views on nations and nationalism can be summarized like these:

(i) The strength of nations is in spirituality.

(ii) Each nation represents one theme in life.

(iii) Common hatred or love unites a nation.

(iv) The ability of nations depends on the goodness of man and

(v). Nations must hold to their national institutions (Panda 33).

In course of the present study, it is seen that Swami Vivekananda's nationalism is associated with spiritualism. He linked India's regeneration to her age-old tradition of spiritual goal... His nationalism is based on Humanism and Universalism, the two cardinal features of Indian spiritual culture. He taught people to get rid first of self inflicted bondages and resultant miseries (Tyagi 2015).

References:

Bose, N. K. *Selections from Gandhi*, Ahmedabad: Navajivan Publishing House, 1948.

Chakraborty, R. *Nation and It's Narration: A Re-reading of R. K. Narayan's Novels*, Mauritius, Scholars' Press, 2019.

Chakraborty, Ramyabrata. *R.K. Narayan and the Idea of the Nation* [Doctoral Dissertaion, Assam University]. Shodhganga, 2013. http://hdl.handle.net/10603/93331

Das, Arindam. "Nation and Nationalism: Reassessing the Theoretical Periphery of Renan, Gellner, Anderson and Partha Chatterjee." *Indian English Fiction: A Reader*. Ed. Sarbojit Biswas. Kolkata: Books Way, 2009. 34-44.

Dhawan, G. *The Political Philosophy of Mahatma Gandhi*, Ahmedabad : Navajivan Publishing House, 1957.

Gokhale, B.G. "Swami Vivekananda and Indian Nationalism." *The Journal of Bible and Religion* 32.1 (1964): 35-42. Print.

Panda, Saroj Kumar. "Swami Vivekananda and Nationalism". Odisha Review, Vol. LLX, No.6, January 2014, pp. 31-33.

Tyagi, Alkesh. "Swami Vivekananda and Nationalism." Press Information Bureau, 12 January, 2015,www.pib.gov.in/newsite/printrelease.aspx?relid=114532#:~:text= Swami%20Vivekananda's%20nationalism%20is%20 associatedhas%20a%20 mission% 20to%20accomplish.

Panda, Saroj Kumar. "Swami Vivekananda and Nationalism". Odisha Review, Vol. LLX, No.6, January 2014, pp. 31-33.

Vivekananda, Swami. *The Complete Works of Swami Vivekananda*. 8 Vols. Mayavati: Advaita Ashrama, 1947.

❑❑❑

1. Assistant Professor & Head, Department of English, Srikishan Sarda College, Hailakandi, Assam Email: ramyabrata1@gmail.com, ramyabrata@sscollegehkd.ac.in

Research Article

Employee Selection Process in IT Sector: How it can be Improved

–Sadhana Tiwari
–Dr. Ashish Saxena
–Dr. Sharad Chaturvedi
–Priyanka Agarwal

Human resource management is the process of finding, choosing, onboarding, orienting, educating, and developing staff members, evaluating their overall performance, identifying reimbursement and rewards, motivating staff members, maintaining good relations with staff members and their alternate unions, and ensuring that personnel protection, welfare, and fitness measures are in compliance with labour laws.

Abstract

Satisfied staff is a top asset of any organization aiming for rapid development. The overall performance of employees is highly influential in the revenue generated through the use of the company itself. Therefore, we need a useful resource of humans with a plethora of abilities and loyalties. Every effort is made to improve the overall performance of employees. One of them is selecting happy staff to improve their overall performance. Better selection techniques lead to better organizational performance. Selection can be described as the method by which the company selects from a large pool of applicants those it believes will be able to adequately meet the process requirements given the current environmental conditions. In today's competitive business environment, agencies must be responsive to people's needs. It is important for companies to have well-established selection policies that can be effectively implemented to achieve the most satisfactory results. This will help the company see where the problem is and reveal how to advocate approaches to improve selection methods. Here, we will look at the knowledge of the knowledge selection method.

Qualitative and Quantitative studies techniques are used on this thesis to apprehend extraordinary organization policies. Structured Interviews and survey accomplished to discover worker perspective.

Keywords: Recruitment; Selection; Reference; Interview; Qualification.

INTRODUCTION

Organizations devote time and resources to finding suitable human resources because they understand that people are their company's most valuable asset.

The overall set of recommended performance of the commercial firm is shaped by the individual traditional normal performance of an employee at the time of convergence. As a result, employees are visible due to the fact that consumers are everything.

HR function and talent management organizations work together to domesticate a hardworking, quick-thinking workforce that supports the success of any commercial corporation or business venture. Human resource management is frequently thought of as being limited to the process of terminating employees, but they can actually be the foundation of much more. Similarly, talent management goes beyond high-quality management of a difficult and quick group of people.

Human Resource Management (HRM)

Human beneficial aid control is a precise time period for the vintage model or Personnel control, or we are capping a role to say that to address the personnel or manpower this new time period has been evaluated.

In fact, according to Murad, Human Assistance Control is a comfortable and green environment for monitoring staff sports activities, allowing staff to walk in a comfortable and precise environment, coordinate with each other, and exercise better control. It seems like a way to provide a rich way.

Human beneficial aid talents embody quite a few precise strategies which can be or have an impact on all the regions of the corporation or business enterprise.

There are six fundamental talents of human beneficial aid control:

(1) Human beneficial aid planning, recruitment, and choice;
(2) Human beneficial aid improvement;
(3) Compensation and benefits;
(4) Safety and fitness;
(5) Employee and labour participants of the personal own family;
(6) Human beneficial aid studies.

We are pushing up a position to say that somehow this innovative timeframe has been evaluated to identify the personnel or manpower. Human favorable assistance ownership is an accurate timeframe for the style model or Employees control.

In fact, Human Assistance Control, in Murad's opinion, is a comfortable and environmentally friendly setting for keeping an eye on staff athletic activities. It enables staff to walk in a precise and comfortable setting, coordinate with one another, and start exercising better control. It appears to be a means of offering a wealthy way.

Human helpful assistance skills include a number of precise techniques that can be applied to it and have an impression on all areas of the company or business.

The second function, specifically the choice of staff and how it might be enhanced, is the focus of this study. Following the selection of new employees, training and development of the workforce is the way or necessity of the company enterprise.

Human resource management is the process of finding, choosing, onboarding, orienting, educating, and developing staff members, evaluating their overall performance, identifying reimbursement and rewards, motivating staff members, maintaining good relations with staff members and their alternate unions, and ensuring that personnel protection, welfare, and fitness measures are in compliance with labour laws.

Planning, organizing, directing, and controlling are among the control skills that human resource management provides.

It provides with human beneficial aid purchase, education & enhancement, and rights of public beneficial aid.

It enables the accumulation of moral, organizational, and societal goals.

The study of human resource management spans many academic fields.

It incorporates sociology, psychological, communication, economics, and the test of control.

It also deals with encouraging collaboration and crew spirit.

It is a never-ending process.

Figure 1. HRM Process [1]

The department of human resource management, which oversees all aspects of personnel, has a variety of skills, including planning for human welfare, conducting job analyses, conducting mission system interviews, selecting human resources, orienting, training, going to compensate, offering advantages and incentives, admiring, preserving, job placement, work engagement, employee discipline, preventing sexual harassment, human welfare auditing, and protecting businesses.

Vitality of Human Resources

Every good or service that is produced involves human thought, labour, and time and effort (taking walks hours). No goods or services can be created without

human assistance. A human being is a necessary and advantageous component in the creation of anything. Every firm decides to hire qualified employees in order to make their workplace pleasant and fulfilling. In terms of the five Ms of management—men, money, machinery, materials, and strategies—HRM focuses mostly on the first M, which is men. It is claimed that "men" are difficult to manage inside the 5 Ms.

They may be almost entirely accurate when they say that "every person is not as great."

While the chance Ms are all ineffective or devoid of intelligence and, as a result, lack the power to decide what is best for them, Ms inside the experience that guys possess the power to govern the opportunity Ms.

1.1 Recruitment

- Recruitment is a way to attract talented people and inspire them to use the system in your company.
- Recruiting is the process of hiring the right applicant in the right system.
- Recruitment and Selective Hobbies are primarily addressed as:

Usually, Mandatory Human Auxiliary Controls or Staff Controls and Highly Professional Psychological Aspect Competency Modeling plus distinct types of Literature, interviews, and several types of psychometric tests dedicated to the adequacy (absolute and relative) of recruitment strategies.

Approaches to Recruitment

There are many different recruitment strategies, although in the interest of clarity, they were all grouped beneath broad themes.

1. Internal Hiring
2. External Hiring

The Advantages and Significance of Recruitment

1. Aids in building a talent pool of qualified candidates with the employer's consent.
2. To expand the candidate pool while paying the least amount of money possible.
3. It makes it possible to increase the choosing process's success rate by reducing the number of visits from qualified or overqualified process candidates.
4. Aids in identifying and preparing possible candidates for the procedure who might be the best candidates.
5. Last but not least, it allows for increasing employer and candidate efficacy of various recruiting tactics and for all types of process applicants.

1.2 Selection

Recruitment is followed by selection. In addition to picking the best candidates, it's critical for employers to influence the selection process in order to draw in prepared and qualified individuals.

Standards stated and implemented (both expressly and implicitly) by selectors are knowledge connected to the selection process. Likewise how they replicate

their comprehension of critical competency. Decision techniques should be used to evaluate decision makers' generalizations, commitments, realities, and confusions in connection to the subculture-specific expectations of their employer and how they attempt to achieve and exceed them. The recruitment and screening interview and the final enrollment selection are typically the two steps in a selection competition.

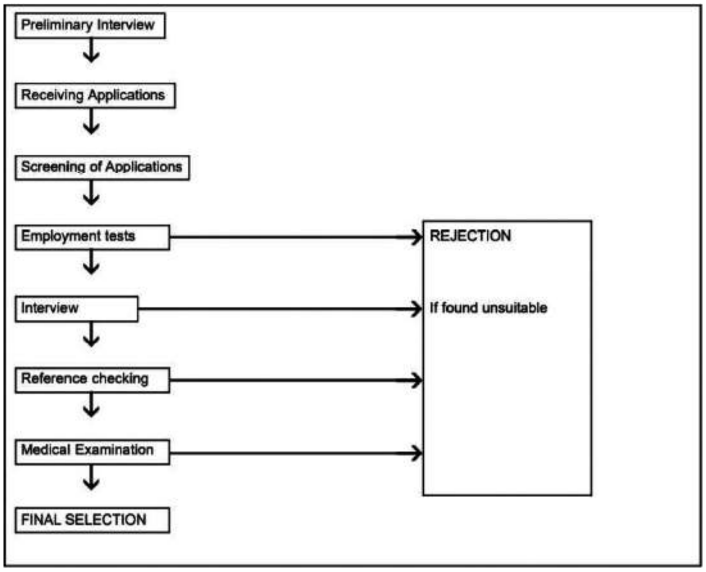

Figure 2. Selection Process [2]

- Preliminary Interview: It is a generic, brief interview conducted to weed out candidates who are utterly unable to work for the organisation.
- Receiving Applications: The power to transfer programmers to the company is a practise of the litigation staff.
- Application screening: After a programme is received, our own judging panel reviews it and chooses candidates from the programme for interviews.
- Employment Tests: The business should evaluate a character's talents and abilities before deciding on the best process for that character.
- The evaluation interview follows the employment interview in the hiring process. To completely evaluate a candidate's abilities and appropriateness for the post, recruitment interviews are conducted.
- Verifying References: The Absolutely Important Fact Provider is the person who offers a reference for a prospective employee. Referees have past groups, knowledge of a character's abilities, and managerial and control abilities.
- Medical Exam: A vital component of the screening process also includes laboratory tests. Employers can determine whether a potential cap applicant is physically and psychologically capable of carrying out the duties by conducting a medical examination.

- The penultimate step in the selection process is the Final Selection and Appointment Letter. A letter of appointment confirming the selection is issued following the candidate's successful completion of all written, interview, and clinical tests.

The significance of the selection procedure

- Proper people selection and placement lead to business company growth and advancement. Due to the skills of its employees, the business organisation can similarly, excellently be as correct.
- The short-term achievement of business company goals is a result of recruiting talented and experienced individuals.
- Since the necessary technical manpower is hired for the right positions, industrial injuries will significantly decline in number over the same period.
- People like their work more when they have occupations they are good at, and as a result, both their standard of excellence and productivity increase.
- People who enjoy their employment are more likely to have high levels of motivation and morale.

LITERATURE REVIEW

Sujjet Kumar & Ashish Kumar Gupta in **2014** studied on **"A Study On Recruitment & Selection Process With Reference"** and determined it to be "Talent acquisition," This is a challenging assignment for HR managers because it is essential to comprehending how the Human AIDS department contributes to the agency's overall goals. [3]

Song Wei, Xu Husheng , Muhammad Shabbir ,Muhammad Altaf , Shuliang Zhao et al. in **2014** studied on **"Effective Recruitment and Selection Procedures"** and came to the conclusion that the Groups lack the capacity to address recruiting equity and selection. Due to the fact that businesses lack a strong, clear spectrum for recruitment and selection to satisfy the straightforward objectives of recruiting (large pool of candidates) and choosing (the right man or woman for the right job). [4]

Onyeaghala OH* and Hyacinth MI in 2016 studied on "Effects of Employee Selection Process on Productivity withinside the Public and Private Sectors" and they came to the conclusion that there are significant distinctions in the selection methods used in the public and private sectors. Productivity can be increased through voting tactics used in both the public and private sectors, though to various degrees. The elements affecting voting technology in the public and private sectors are identical. [5]

Gerald E. Calvasina & Richard V. Calvasina in **2016** studied on **"Using Personality Testing As Part Of The Employee Selection Process"** and came to the conclusion that before employing tools that are now still not backed by

continual empirical evidence, decision makers should examine the cost associated with validation, the advantages, and the potential criminal risk. Hiring difficult to manipulate smooth should be the leading principle for finding the right person to fill positions until more consistent empirical evidence is released. [6]

Dr. V. Vijay Anand, Dr. M. Shanthanlakshmi, Dr. G. Uppili Srinivasan et al. in **2018** studied on **"A Study On Effectiveness Of Recruitment Organisational Support IT'S** and concluded that the HR supervisor of the chosen agency has to recognition on deciding on the proper humans via different resets like campus, placements, sourcing, walk-in, consultancy etc. The choice is performed with the aid of using comparing the candidates skills, knowledge, and talents which can be extraordinarily required for the vacancies withinside the agency.[7]

Filip Lievens, & Sackett, P. R. in **2017** studied on **"The outcomes of predictor approach elements on choice outcomes: A modular method to employees choice strategies"** and concluded that a modular attitude on choice strategies will offer the impetus for programmatic and theory-pushed studies at the one-of-a-kind dimension additives of choice strategies. [8]

Eugene F. Stone-Romero, Dianna L. Stone, David Hyatt in **2003** studied on **"Personnel Selection Procedures and Invasion of Privacy"** and concluded that the effects of our research offer essential statistics approximately (a) the relative stages of invasiveness of numerous employee's choice strategies, and (b) the variables that can be accountable for invasiveness perceptions. Through the system of such rules, it needs to show viable to layout choice structures which are touchy to each the dreams of people for privacy, and the wishes of agencies for legitimate records upon which to base choice decisions. [9]

Md. Mamin Ullah in **2010** studied on **"A Systematic Approach of Conducting Employee Selection Interview"** and concluded that the choice interview performs an essential function in bringing the excellent personnel into the agency. The undertaking of today's HR managers is to expand and preserve a legitimate and efficient choice interview. There isn't any magic formulation for hiring the excellent candidate for a activity. The proposed three-step (3D) interview technique doesn't assure hundred percentage fulfillments in hiring the excellent personnel, however it can, at least, offer a street map to the HR supervisor to consider the choice interview in a concrete manner. [10]

Van der Zee, K. I., Bakker, A. B., & Bakker, P in **2002** studied on **"Why are dependent interviews so hardly ever utilized in employees choice?"** and concluded that dependent interviews seemed to be a beneficial framework for predicting managers' intentions. Attitudes and subjective norms have been predictive of intentions to interact in both approaches. Only intentions in the direction of the unstructured case have been associated with managers' real behavior. [11]

Derek S. Chapman, 1 Jane Webster in **2003** studied on **"The Use of Technologies withinside the Recruiting, Screening, and Selection Processes for Job Candidates"** and concluded that the usage of HR technology is in a country of flux with maximum agencies persevering with to apply a combination of conventional and era-primarily totally based HR methods. Furthermore, era-primarily based totally answers aren't always a panacea for HR managers: almost a 3rd said that their tries to apply HR era have ended in confined or slight fulfillment.[12]

HSU-SHIH SHIH, LIANG-CHIH HUANG, HUAN-JYH SHYUR in **2005** studied on **"Recruitment and Selection Processes Through an Effective GDSS"** and concluded that the recommended prototype has been checked via an instance with the aid of using the human assets branch of a chemical organization in southern Taiwan. Thus, the illustrated instance has empirically demonstrated the feasibility of our study. Moreover, the designed device gives the industrial GDSS environments a one-of-a-kind model of architecture. With minor modification, it has extraordinary capacity to suit different firms. [13]

Nugraha Arif Karyantain, Pratista Arya Satwika & Shelly Astriana in **2003** studied on **"Perceived Problems on Employment Selection Process"** and concluded that the recruitment technique should improve themselves to be extra disciplined in sporting out the employee recruitment technique in a clean, transparent, professional, and honest This will make sure that the activity may be stuffed with the aid of using the proper candidate. Pre-activity schooling packages additionally want to offer enter on the usage of the channels they need to attain statistics approximately current jobs. [14]

Syamala Devi Bhoganadam, Dr. Dasaraju Srinivasa Rao in **2014** studied on **"A Study On Recruitment and Selection Process"** and concluded that the personnel have been happy however adjustments are required steady with the converting situation of recruitment method that has a superb effect on running of the agency as a smooth blood, new concept enters withinside the agency. [15]

Ram Kumar et al. (2019), the goal of the study was to evaluate the effectiveness of the recruiting and selection process in the IT industry and to offer recommendations to help the sector address its difficulties. The structured questionnaire was used to obtain the data from the online survey. 105 employees made up the sample size for the IT sector, and multivariate regression analysis, regression analysis, the krukall-wallir test on independent samples, and the mann-whitney test on independent samples were all utilized to assess the data. The outcomes, which included two factors that confirmed the hypothesis and two others that did not, aided the hiring and selection procedures in the IT sector. [16]

Anju Khandelwal et al (2019) goal is to understand the organization's recruiting and selection process, as well as how it connects to the development

and success of the organisation. The best applicant with the appropriate fusion of skills, knowledge, and talents is chosen in order to be cost-effective. Research also assesses the firm's atmosphere and hiring practices for competence. [17]

Nuno Rebelo Dos Sants' (2017) research is based on accessibility of the hiring and selection processes, The primary subjects of discussion include the criteria used to rate applications and the connections between those involved. The researcher came to the following conclusions as a result of this investigation, which was inspired by a number of theories: levels of recruitment and selection as well as the behaviors and attitudes of people in authority. [18]

Usmani Sania in 2020 A Qualitative, Quantitative, and Experimental Perspective on Aesthetic Desirability and Social Desirability in the Workplace Recruitment and Selection Process. (2020). The subjective, numerical, and experimental views on perceived qualities and social desire offer the most important results and recommendations from this review's evaluation of three studies on workplace recruitment and selection. The data analysis in all three studies led to the same conclusions: beauty has little influence on judgments about employment and advancement. Each evaluation will help to clarify theories regarding the factors affecting the hiring process. The study's results will also act as the foundation for any future studies on resumes, communication abilities, confidence, and looks. [19]

Dharshini.K.A. and Seleena.R. In 2020, Human Resources Trends in the Recruitment and Selection Process in Non-Banking Financial Companies in the Kanyakumari District: A Practical Study (2020) The most important study made the case that it was crucial to enhance the new approaches to hiring talent, including campus recruiting, the trainees programme to find the best candidates, and the effectiveness of candidate assessment during recruitment. This study came to the conclusion that non-banking financial firms' recruiting practices and personnel decisions have a positive effect. Regarding the employees' pleasure at work, the company still has to participate more in innovative hiring strategies in the next years. [20]

Bushra Bintey Mahbub 2020 Internship Report on BRAC Bank LTD(BBL) .'s Recruitment and Selection Process (2020) The most important study made the case that it was crucial to enhance the new approaches to hiring talent, including campus recruiting, the trainees programme to find the best candidates, and the effectiveness of candidate assessment during recruitment. This study came to the conclusion that non-banking financial firms' recruiting practices and personnel decisions have a positive effect. Regarding the employees' pleasure at work, the company still has to participate more in innovative hiring strategies in the next years. [21]

CONCLUSION

First, we want to emphasise that analysis will help with providing comments. Through the procedure, we learned that the company has a successful hiring process that makes the most of the procedure. My research indicates that networking and getting references from references are the best methods for finding people. We encountered several situations throughout the process when the role of a Hr executive and the relevant skills he searches for in applicants were demonstrated.

Since recruiting is a continual process in this field owing to financial system's design and research, new, innovative ways must be taken into consideration and implemented to meet the need.

A business should place more emphasis on consistent long-term performance than on quick profits. Recruitment personnel education and skills development require a deeper and more persistent focus. Despite the myriad challenges that the HR manager must face,

According to the method, the majority of the IT company staff were satisfied, but adjustments are required to reflect the hiring process' dynamic nature, which has a big impact on how the organisation runs when new people and ideas are added. The hiring team at their organisation is doing an excellent job of placing candidates and filling vacancies for employment at all tiers, and the selection procedure is very effective

SUGGESTIONS

Several steps for enhancing worker choice may be taken to discover the high-satisfactory humans to lease and growth productiveness and fulfillment to your business.

- A complete process map can be produced by the human resources division of a business. The name of the location and a description of each site feature should be included on this map (technology, training, and requirements). Everyday activities; as well as process expectations. An experienced hiring rate manager should be able to clearly describe the newspaper and web advertising processes. The more comprehensive you are, though, the more you can weed out candidates who don't fulfil the requirements, saving companies time and money.
- To entice pleased candidates, HR departments can make aggressive offers of compensation. Place listings in tandem with lucrative salaries in ads where rivals are offering equivalent roles. If you aren't making money, you can't expect to draw the greatest number of applications.
- Document processing descriptions on websites and periodicals that are specialised to your sector, and as a last resort, use your preferred process website, like Craigslist. By concentrating on industry-specific communities,

this avoids the need to gather resumes from dozens or even hundreds of individuals who are only partially certified.

- Attach importance to the application process and frequently invite prospects back for for two or three sessions. Verify the applicant's suitability for the position and their ability to blend in with the company's culture. Ask questions that lead to answers that shed light on the applicant's personality in addition to those that require the candidate to discuss their accomplishments. Determine the candidate's honesty, sincerity, selfishness, self-righteousness, and temperament by using their answers as risks.
- Find extremely satisfied job prospects who fulfil the long-held aspirations of employers. Assess whether the applicant has the appearance of a developer and will be valuable to companies in 2, 3, or 5 years. Choose a person who has solid recommendations, enjoys themselves moderately, and seems to be dating a range of people.

References:

1. https://whatishumanresource.com/human-resource-management.
2. https://www.toppr.com/guides/business-management-and-entrepreneurship/human-resource-management/selection-process/.
3. A Study On Recruitment & Selection Process With Reference; Sujeet Kumar & Ashish Kumar Gupta, Vol-1, Issue-10 November 2014.
4. Effective Recruitment and Selection Procedures: an Analytical Study Based on Public Sector Universities of Pakistan; Ghulam Nabi, Song Wei, Xu Husheng, Muhammad Shabbir, Muhammad Altaf, Shuliang Zhao, Vol.4, No.10, 2014.
5. Effects of Employee Selection Process on Productivity in the Public and Private Sectors: A Case of Benue State; Onyeaghala OH and Hyacinth MI; Bus Eco J 7: 273.
6. Using personality testing as part of the employee selection process: Legal and policy issues for employers; Gerald E. Calvasina, Richard V. Calvasina; Volume 19, Number 2, 2016.
7. A STUDY ON EFFECTIVENESS OF RECRUITMENT ORGANIZATIONAL SUPPORT IN ITeS; Dr. V. Vijay Anand, Dr. M. Shanthanlakshmi, Dr. G. Uppili Srinivasan,V. Arunkumar, G. Icewarya, S. Nandhu*,S. Monisa Kamatchi; Volume 119 No. 7 2018.
8. The Effects of Predictor Method Factors on Selection Outcomes: A Modular Approach to Personnel Selection Procedures; Filip Lievens, Paul R. Sackett, September 2016
9. Personnel Selection Procedures and Invasion of Privacy; Dianna L. Stone, David Hyatt; Vol. 59, No. 2, 2003.
10. A systematic approach of conducting employee selection interview; Md. Mamin Ullah; May 2010.
11. Why are structured interviews so rarely used in personnel selection?; Karen van der Zee, Arnold B Bakker; March 2002
12. The Use of Technologies in the Recruiting, Screening, and Selection Processes for Job Candidates; Derek S. Chapman, Jane Webster; volume 11 numbers 2/3 june/september 2003
13. Recruitment and selection processes through an effective GDSS; Huan-Jyh Shyur, Liang-Chih Huang; November 2005

14. Perceived Problems on Employment Selection Process: Study on Recent University Graduates; Nugraha Arif Karyanta, Pratista Arya Satwika, Shelly Astriana; volume 128, January 2017.

15. A Study of Recruitment and Selection process in Sai Global Yarntex (India) Private Limited; Syamala Devi Bhoganadam, Srinivasa rao Dasaraju; Volume 4, October 2014.

16. Ram Kumar, A., &Rajini, G. (2019).Effective Recruitment and Selection System for the IT Software Industry in India. EXECUTIVE EDITOR, 10(1), 74.

17. Khandelwal, A., & Kumar, A. (2019). A study on recruitment and selection process with reference to current scenario in organizations. Malaya Journal of Matematik (MJM), 7(3, 2019), 412-418.

18. Dos Santos, N. R., Pais, L., Cabo Leitão, C., & Passmore, J. (2017). Ethics in Recruitment and Selection. The Wiley Blackwell Handbook of the Psychology of Recruitment, Selection and Employee Retention, 91.

19. Usmani, S. (2020). Recruitment and Selection Process at Workplace: A Qualitative, Quantitative and Experimental Perspective of Physical Attractiveness and Social Desirability. Review of Integrative Business and Economics Research, 9(2), 107-122.

20. Mahbub, B. B. (2020). Internship Report on Recruitment and Selection Process of BRAC Bank LTD.(BBL).

❑❑❑

1. Research Scholar[1], Amity Business School, Amity University, Noida (U.P.) – India, Assistant Professor[1], School of Business Studies, Sharda University, Greater Noida (U.P.), E-mail.id: sadhanahi@rediffmail.com
2. Assistant Professor[2], Sharda School of Business Studies, Sharda University, Greater Noida, E-mail.id: ashish.saxena2@sharda.ac.in
3. Professor[1], School of Business Studies, Sharda University, Greater Noida (U.P.), Email id: sharad.chaturvedi@sharda.ac.in
4. Assistant Professor[2], Amity Business School, Amity University, Noida (U.P.) – India, E-mail id: pagarwal5@amity.edu

Research Article

Gender, Patriarchy and Identity: A Study of the Select Novels of Meghna Pant and Meena Kandasamy

–Rwisumwi Brahma
–Pradip Kr. Patra

Amara was unable to comprehend Prashant's coldness towards her. She made every effort to modify herself according to his likings. She changed her whole identity for his sake but Prashant remained indifferent to her. After the death of his mother, Prashant decided to divorce Amara saying that he could never love her as her wife. Amara begged him to stay and save their marriage.

Abstract

Meghna pant is an Indian contemporary writer, speaker and journalist who has written boldly on various issues related to gender inequalities including domestic violence, body-shaming, divorce, surrogacy and rape etc. Pant's works include novels, short stories and non-fiction writings. She has also shared her views about the evils of domestic violence on TEDx talks. This paper is focused on the analysis of Pant's debut fictional novel *One and a Half Wife* and the issues and dilemmas endured by divorced women in India as depicted in the novel. Gender, Patriarchy and identity are the important themes of the novel that have been analyzed in the paper through various details illustrated in the novel. Meena Kandasamy (b.1984) is the Indian woman novelists in Indian writing in English Literature. She is a very brave poet, fiction writer, activist and translator. In her works, she raises her voice against the gender disparity and tries to establish self-identity of their own. Meena Kandasamy's *When I Hit You or A Portrait of the Writer as a Young Wife* is all about of gender issues to the subject of marital sexual violence. The paper aims to analyze the gender issues and identities in Meghna Pant's *One & a half wife* and Meena Kandasamy's *When I Hit You or A Portrait of the Writer as a Young Wife.* Both writers explore feminist aspect through their works. The present Paper will explore about all these themes of women issues on the basis of feminist point of view.

Keywords : Gender, Patriarchy, Identity, Violence, Abusive marriage.

Meghna pant is an Indian contemporary writer, speaker and journalist who has written boldly on

various issues related to gender inequalities including domestic violence, body-shaming, divorce, surrogacy and rape etc. Pant's works include novels, short stories and non-fiction writings. She has also shared her views about the evils of domestic violence on TEDx talks. This paper is focused on the analysis of Pant's debut fictional novel *One and a Half Wife* and the issues and dilemmas endured by divorced women in India as depicted in the novel. Gender, Patriarchy and identity are the important themes of the novel that have been analyzed in the paper through various details illustrated in the novel.

Meena Kandasamy (b.1984) is the Indian woman novelists in Indian writing in English Literature. She is a very brave poet, fiction writer, activist and translator In her works, she raises her voice against the gender disparity and tries to establish self-identity of their own. Meena Kandasamy's *When I Hit You or A Portrait of the Writer as a Young Wife* is one of the significant works to the subject of marital sexual violence. It is an incredible personal account, written from the first person point of view wherein the unnamed narrator is a woman in isolation after getting married. She falls in love with a college lecturer and marries him. She undergoes many different violent challenges under her husband that eventually leads her to take a strong decision to walk out from her abusive marriage. This paper will analyse how the narrator and the millions of women like her in India encounter and undergo the gender inequality, self-identity crisis and marital violence with reference to the novel of Meena Kandasamy's *When I Hit You or A Portrait of the Writer as a Young Wife* . She is famous for her novels namely *When I Hit You or The Portrait of the Writer As A Young Wife* (2017) and *Exquisite Cadavers* (2019). She is basically narrates how she has been suffering from abusive marriage to lift the veil on the silence that surrounds domestic violence and marital rape in modern India.

This young and rebellious writer in her works focuses a very strong common thing on caste oppression, women empowerment and psychological pressures of women and she plans to grant the women an identity. The novel *When I Hit You* is about a young wife who is an unnamed narrator. She falls in love with a man who was a college lecturer and marries him. In her marital world she first encounters with her space and identity in crisis. The narrator moves with her husband from Chennai to Mangalore, a new town, where she is not allowed to speak in her own mother tongue. She is confined for two months in the space of three rooms and a varanda with a limited access. No friends, no family networks is there. She learns Kannada in which she is not comfort. She says, "In this language I am nothing except a housewife."(p.93)

Gender, Patriarchy and identity have become a global issue since time immemorial. Though this disparity is a global issue, it is found hugely in many parts

of India.This causes many evil attitudes borne like misogyny, man-hater etc. Patriarchal world believes that women are really inferior to men. A girl child is considered a burden, a curse. So the girl child born is received with dismay whereas baby boy born is celebrated with great pomp and ardour.

In Indian society we can find some causes of gender discrimination and unstable identity. The root causes of gender inequality are patriarchal system and dowry custom deeply rooted in the society. Our various religious dogmas have made this system a legal and valid one. As Manu, the Hindu law giver says, "Women are supposed to be in the custody of their father when they are children, they must be under the custody of their husband when married and under the custody of their son in old age or as widows. In any circumstances she should not be allowed to assert herself independently."Infact, in every stage of lives their identities are changed.

Here, in this paper primarily I dealt with descriptive as well as analytical method in order to discuss about the several gender issues and identities within the patriarchal society in which status of women played a predominant role. The Paper aim is to highlight women in select novels of Meghna Pant and Meena Kandasamy who are not ready to settle down with their forced situation, they love themselves and want other to love them for who they are, freed from shame, freed from comparison, and liberal to be them. Paper also highlights sacred and honest place for any women in society and family and the courage they eventually show which was always there inside her allowing her to be a competent woman. Our society is filled with endless comparisons, for duties and performance which in turn developing enormous strain on them, and constantly horrifying them of being out casted. All of this leaves women with identity issues or brings to light the problems that are there right along and have not been addressed. Generally, women can be categorized into two types of characters either they are typical or modern that they must be silent and weak and the other one are unconventional or radical they generally breach the very accepted norm of society and called rebellions. It not that conventional' sufferings are any less that unconventional, but their sufferings are consecrated by the norms of a patriarchal society. The radical or unconventional women suffer due to defiance of the tolerated norms set by patriarchal society. Due warning is given to them, even if they are questioning the hierarchy and if any budding resistance is seen it is smashed with immediate effect. But our both protagonists are strong enough, trying to make self-defiance by searching their own to identity and individuality.

"The years of societal and cultural conditioning teaches the women to be self-effacing, submissive and subordinate to men, suffering of a patriarchal society in silence." (Dr Syed Hajira, 2017)

The term gender Identity was originally coined by Robert J. Stoller in 1964. "Gendered identity is both categorical, centering on the awareness of oneself as biologically female or male, and variable, or influenced by social expectations and the degree to which one is feminine or masculine... Gender identity is the personal sense of one's own gender. Gender identity can correlate with assigned sex at birth or can differ from it." (Feminist Perspectives on Sex and Gender, 2008) Gendered identity is not entirely a result of personal choice but social structure play a pivotal role in framing and imparting specific role according to gender which lives with an individual for their entire life basically we can call them culturally specific gender roles, norms and socialization "Gendered identity can change over time; we can display different gendered behaviors at different times or in different situations." (Martina & Ruble, 2010)

In *One and a Half Wife,* Meghna Pant remarkably attempts to display the effect of divorce on a woman's life and honor. Amara – who was raised with the teachings that marriage is an invincible institution and a woman's life should be dedicated to her husband's desires – finds herself divorced, the most appalling and bewildering situation for her. How she survives the circumstances and manages to keep her identity intact are the main events around which the web of the story has been weaved by the author. Feminist writings aim to establish equal grounds for women's position and recognition in societies. Although influences of women's empowerment in contemporary times have resulted in improving the women's positions and appreciations but still there are various stereotypes that are bound around the life of female identity. Women are acquiring more appreciation on professional fronts but burden of domestic chores, cooking meals and rearing children are still considered their unannounced responsibilities. In most of the cases, if a woman wants to pursue her career, she must possess the capacity to balance her whole household responsibility as well as professional work. In any case, men are considered to be the primary source for the family and women are supposed to prioritize their homes' responsibilities. In Indian societies, Divorce is considered a taboo and divorced people are subjected to face social and cultural stigmas attached to the notion of 'being divorced'. Divorce leaves a deep saddening impact on the psychology of the concerned people. When the marriage of a person breaks, it becomes very difficult for him/her to overcome the depressing contemplations and devastation of the relationship. Although it is a decision taken by partners' individual consents, still termination of a marriage leaves people broken and vulnerable – socially, culturally, personally, economically as well as psychologically. In Indian male-dominated communities, women have to endure several challenges after the legal termination of a marriage. More often, women are held responsible for not being able to sustain the relationship. On the legal front, there are various laws that are available to assist the situations faced by divorced women. They

have rights to demand alimony (one-third of their ex-husbands' property) for financial stability but on social level, they become targets of humiliating behaviors; her language is raw, emotional and impactful.

Pant's *One and a Half Wife* is the coming-of-age story of Amara Malhotra – a naïve and obedient Indian girl – whose life is dictated by her mother's notions and moral tenets. She is the single child of her parents and the story starts when she is 14-years old. From her early childhood, Amara knew nothing but to conciliate her mother, "it is Biji's desire contoured Amara's identity." Her own identity was shadowed by the desires that she needed to fulfill before herself – 'God's desire', 'Biji's (her mother) desire' and 'His desire'. "His" was her future husband whose presence in her life since early constraints made it impossible for her to embrace American Culture. During her initial years in America, she tried to change her identity by imitating her sophisticated cousin Riya. She tried to wear short dresses and apply modish make-up but all her efforts ended up in futile imprudence and humiliation. Eventually, she accepted herself and focused her attention on her study and career. Amara's life took a turn when a wealthy and sophisticated Indian woman noticed her in Riya's Birthday Party and decided to marry his son with Amara. Biji was delighted with this match and Amara found herself married to a Harvard-educated, single child of super-rich parents, Prashant Roy. But this marriage proved to be miserable for Amara as Prashant had no interest in her. He had married Amara out of his filial obligations for his mother.

"He had married her out of duty to his mother. A familial duty executed out of love could not translate into marital happiness". (One and a Half Wife p. 132).

Amara was unable to comprehend Prashant's coldness towards her. She made every effort to modify herself according to his likings. She changed her whole identity for his sake but Prashant remained indifferent to her. After the death of his mother, Prashant decided to divorce Amara saying that he could never love her as her wife. Amara begged him to stay and save their marriage. The thought of being a divorcee broke her more than any pain or humiliation that she had faced in their relationship. She was more afraid to face her parents and society than to think about her own predicaments and pain.

"Talking about marriage in bad terms was considered sacrilege in the Indian community. Everyone around her was married, and claimed to be happy so, despite public fights and snide rumors. She often wondered if there was anyone else who had daily failures in marriage, like she did." (*One and a Half Wife*, p.139 & 140).

Meena Kandasamy has portrayed horrific picture of household where wife stay with husband, where husband employs number of tactic to keep wife under his control, the unnamed narrator shares her emotions, her feelings, and the treatment of society that related to Indian marriage at large. Kandasamy successfully exposes the power dynamics that allow violence against women. She talks about marital

rape, physical violence, open threats and insults. And when the narrator finally begins standing up for herself, she is raped every night. Thus, the unnamed narrator becomes the victim of violence by her husband in many ways. Though she married him by falling in love with him as a perfect guy. But her husband' sick mentality gradually comes out. She makes herself strong and states that-"Try harder, husband. Try harder. I am not going to be tamed by these tantrums."(*When I Hit You* p.131)

She becomes the object of oppression and the man continuously tries to tame her by abusing, torturing, beating and raping in marriage.

"When I am in bed with my husband, I have learnt to be still and silent"(*When I Hit You* p.94) even while doing sex too. Thus she loses the self and becomes the woman of Indian cinema in which it is shown that sex itself will elicit no noise and no other movement from the woman."(*When I Hit You* p.95)

To stop her sexual moaning or to make her silent forcibly he uses branches of fresh neem leaves ,Mac's power cord, leather belt, electrical cables and he beats her badly with them as he seems demon within her to be killed. So before she manages to escape, she murmured by herself:"..When he hits me, the terror flows from the instinct that this will go further, that it does not end easily…." (*When I Hit You* p.155)

Kandasamy portrays how Protagonist is oppressed and dominated by man through the novel. Finally, she rejects domination, Patriarchy and in doing so, releases herself from the roles of unequal life Partner. Kandasamy (below) writes with poetic intensity. "Hope prevents me from taking my own life. Hope is the kind voice in my head that prevents me from fleeing. Hope is the traitor that chains me to this marriage." (Kandasamy, 2017) This is why Kandasamy's voice, her narration is so important: it punctures the social complacency and silence around violence, and stresses that women survivors. The perceived consequences of sexual violence vary across cultures.

"In the eyes of the world, a woman who runs away from death is more dignified than a woman who runs away from her man. In place of a firing squad, I stare down the barrels of endless interrogation… Sometimes the shame is not the beatings, not the rape. The shame is being asked to stand to judgment." (Kandasamy, 2017)

Kandasamy's Unnamed Protagonist suffers existential crisis, but soon decides that she will not allow herself to be lost. This affirmation is spontaneous. Kandasamy's work is also a quest for respect and equality in life and marriage. The theme of novel *When I Hit You* is the struggle of a woman against tradition, sexual abuse and equality in marriage which continues even today.

Thus from the above discussion it is clear that education has been icebreaker in many situations, it helps in realization of the fact that oppression and suppression of women in marriage is due to unawareness of their right of equality. Awareness

of the fact that they must stand for themselves and nobody else will be coming for their rescue. Both the novels of two authors belong to Indian literature, consequently, is male dominated. In their struggles against the social order, Amara and Kandasamy's Unnamed Protagonist turns into a symbol of this anti-male domination crusade. Education had a vital role in the lives of protagonist, as intellectual minds and a questioning attitude towards this patriarchal and colonial order which aims to subordinate women as subservient creatures. Kandasamy's and Pant's' novel leaves a positive impression. The experience shared by them can be acknowledged by all, as it effectively speaks on the theme of Pursuit for Identity. To Sum Up, the quest for identity as a theme clearly manifests in the novels of Meghna Pant and Meena Kandasamy. Amara and unnamed narrator have managed to establish themselves as an individual fighter.

References:

Ahmed, O. (2017, May 30). *Interview: Meena Kandasamy on Writing About Marital Violence*. Retrieved from The Wire: https://thewire.in/books/meena-kandasamy-marital-violence

Gender is Not in Your Genitals but in Your Mind: Meghna Pant 18 September 2018. https://www.outlookindia.com/website/story/interview-writer-author-meghna-pant-says-gender-is-not-in-your-genitals-but-in-your-mind/316722. 26 September 2019.

J Stoller, Robert. *Feminist Perspectives on Sex and Gender*, 2008.

Kandasamy, M. (2010). *Nailed.* Navayana.

Kandasamy, Meena.(2017). *When I Hit You Or, A Portrait Of The Writer As A Young Wife.* New Delhi: juggernaut.

Kapoor, Arushi. "India has the lowest divorce rate in the world, here's why it isn't necessarily a good thing." 01 feb 2019. www.scoopwhoop.com/india-lowest-divorce-rate-is-not-a-good-thing/. 17 oct 2019.

Martina, C. L., & Ruble,D. N. (2010). Patterns of Gender Development. *Annu Rev Psychol.*, 353–381.

Pant, Meghna. *One and a Half Wife*. New Delhi: Westland ltd, 2012. Kindle Ed.

Pant, Meghna and Chopra Shaili. *Feminist Rani.* Paperback, 17August 2018.

Pant, Meghna. "Why societal violence of women must stop." 13 April 2015. https://www.shethepeople.tv/news/why-societal-violence-of-women-must-stop. 20 September 2019.

Patra, Pradip Kumar and Brahma, Rwisumwi. *Gender, Patriarchy and Identity: A Study of the select novels of Meghna Pant and Meena Kandasamy.*

Philosophy, S. E. (2008, May 12). *Feminist Perspectives on Sex and Gender.* Retrieved 11 30, 2020, from https://plato.stanford.edu/entries/feminism-gender/

Rowbotham, S.(1972). *Women, Resistance And Revolution, A History Of Women And Revolution*

❑❑❑

1. Research Scholar, Bodoland University Dept of English, Email id: rwisumwibrahma14@gmail.com, Contact no. : 7002746267
2. Supervisor, Professor, Bodoland University, Dept. of English

Trends in Digitalization and Concerns

–Dr. Shinam Batra
–Dr. Sunil Kumar

he benefits of online/ digital education cannot be leveraged unless the digital divide is eliminated through concerted efforts, such as the Digital India campaign and the availability of affordable computing devices. It is important that the use of technology for online and digital education adequately addresses concerns of equity. Teachers require suitable training and development to be effective online educators.

Abstract

India is a global leader in information and communication technology and in other cutting-edge domains, such as space. The Digital India Campaign is helping to transform the entire nation into a digitally empowered society and knowledge economy. While education will play a critical role in this transformation, technology itself will play an important role in the improvement of educational processes and outcomes. Given the latest developments in ET & ICT, the CIET has expanded itself in the field of ICT from generating Quick Response (QR) codes to developing platforms and mobile apps to repositories with multi-function characteristics. Media Production Division (MPD) is to produce high quality educational audio-video programmes for the school going children (age 5 to 18 years) and teachers (primary and secondary). It has also started helping various States of India to broadcast their e-Content on television. The Council developed e-Content which include images, 700 audio programmes, 597 video programmes, interactive, graphics, animations, digital books, timelines, digital maps, etc., for the entire syllabus of NCERT at all stages of school education. Massive Open Online Courses (MOOCs) platform popularly known as SWAYAM, i.e., Study Webs of Active Learning for Young Aspiring Minds (https://swayam.gov.in/) offered various online courses for school education and teacher education. SWAYAM Prabha DTH Channel telecast educational video programmes for learners of secondary and senior secondary students and teachers. National Repository of Open Educational Resources (NROER), an online repository (http://

nroer.gov.in (NROER) in which the learners can freely access and use resources under the CC by SA license. e-Pathshala, a portal/app developed and launched in November 2015, hosts educational resources for teachers, students, parents, researchers and educators, can be accessed on the Web, and is available on Google Play, App Store and Windows.

Key Words: ICT, MPD, MOOCS, e-Content, NROER, SWAYAM

INTRODUCTION: NEP 2020 PERSPECTIVES

Education plays a significant and remedial role in balancing the socio-economic fabric of the Country. Since citizens of India are its most valuable resource, our billion-strong nation needs the nurture and care in the form of basic education to achieve a better quality of life. This warrants an all-round development of our citizens, which can be achieved by building strong foundations in education. In pursuance of this mission, ICT plays a very important role.(Website MoE, GOI)

India is a global leader in information and communication technology and in other cutting-edge domains, such as space. The Digital India Campaign is helping to transform the entire nation into a digitally empowered society and knowledge economy. While education will play a critical role in this transformation, technology itself will play an important role in the improvement of educational processes and outcomes; thus, the relationship between technology and education at all levels is bidirectional. Given the explosive pace of technological development allied with the sheer creativity of tech savvy teachers and entrepreneurs including student entrepreneurs, it is certain that technology will impact education in multiple ways, only some of which can be foreseen at the present time. New technologies involving artificial intelligence, machine learning, block chains, smart boards, handheld computing devices, adaptive computer testing for student development, and other forms of educational software and hardware will not just change what students learn in the classroom but how they learn, and thus these areas and beyond will require extensive research both on the technological as well as educational fronts. (Document NEP,2020)

Information Communication Technology helps to improve multiple aspects of education like accessibility, equity, effectiveness and assessment. An autonomous body, the National Educational Technology Forum (NETF), will be created to provide a platform for the free exchange of ideas on the use of technology to enhance learning, assessment, planning, administration, and so on, both for school and higher education. The aim of the NETF will be to facilitate decision making on the induction, deployment, and use of technology by providing to the leadership of education institutions, State and Central governments, and other stakeholders, the latest knowledge and research as well as the opportunity to consult and share best practices.

The NETF will have the following functions:

a) provide independent evidence-based advice to Central and State Government agencies on technology-based interventions;
b) build intellectual and institutional capacities in educational technology;
c) envision strategic thrust areas in this domain
d) articulate new directions for research and innovation.

To remain relevant in the fast-changing field of educational technology, the NETF will maintain a regular inflow of authentic data from multiple sources including educational technology innovators and practitioners and will engage with a diverse set of researchers to analyze the data. To support the development of a vibrant body of knowledge and practice, the NETF will organize multiple regional and national conferences, workshops, etc. to solicit inputs from national and international educational technology researchers, entrepreneurs, and practitioners. (Document of NEP, 2020)

It is also important to pay attention on disruptive technologies that will necessarily transform the education system. it was difficult to predict the disruptive effect that the internet would have brought, during the formulation of 1986/1992 policies. Our present education system is still unable to cope with these rapid and disruptive changes in an increasingly competitive world. For example, while computers have largely surpassed humans in leveraging factual and procedural knowledge, our education at all levels excessively burdens students with such knowledge at the expense of developing their higher-order competencies. NEP 2020 has been formulated at a time when an unquestionably disruptive technology - Artificial Intelligence (AI) 3D/7D Virtual Reality - has emerged. AI's disruptive potential in the workplace is clear, and the education system must be poised to respond quickly. One of the permanent tasks of the NETF will be to categorize emergent technologies based on their potential and estimated timeframe for disruption, and to periodically present this analysis to MHRD. In response to MHRD's formal recognition of a new disruptive technology, the National Research Foundation will initiate or expand research efforts in the technology. In the context of AI, NRF may consider a three-pronged approach: (a) advancing core AI research, (b) developing and deploying application-based research, and (c) advancing international research efforts to address global challenges in areas such as healthcare, agriculture, and climate change using AI.

HEIs will play an active role not only in conducting research on disruptive technologies but also in creating initial versions of instructional materials and courses including online courses in cutting-edge domains and assessing their impact on specific areas such as professional education. Once the technology has attained a level of maturity, HEIs with thousands of students will „be ideally placed to scale

these teaching and skilling efforts, which will include targeted training for job readiness. Disruptive technologies will make certain jobs redundant, and hence approaches to skilling and deskilling that are both efficient and ensure quality will be of increasing importance to create and sustain employment. Institutions will have autonomy to approve institutional and non-institutional partners to deliver such training, which will be integrated with skills and higher education frameworks. (Document National Education Policy, 2020)

INTERVENTIONS ALREADY BEEN DONE WITH SPECIAL EMPHASIS ON DIGITALIZATION

Utilisation of educational technologies like radio, TV, films, satellite communications and cyber media either separately or in combinations is already in full swing. Department of Information and Communication Technology (CIET,NCERT) is playing a key role in creation of multimedia materials for students and teachers, imparting training on use of ICT in teaching-learning process and research methodology for ICT in education, etc., for teachers and teacher-educators. Given the latest developments in ET & ICT, the department has expanded itself in the field of ICT from generating Quick Response (QR) codes to developing platforms and mobile apps to repositories with multi-function characteristics.(http://ciet.nic.in)

In order to take forward the dialogue in research, It has also been instrumental in publishing an online open access peer-reviewed journal, Indian Journal of Educational Technology (ISSN 2581–8325) since January 2019 which has been listed under UGC list.

The primary mandate of the Media Production Division (MPD) is to produce high quality educational audio-video programmes for the school going children (age 5 to 18 years) and teachers (primary and secondary). Expanding its horizon to serve the learners even in the far-flung areas of the country, the division is now instrumental in telecasting 24×7 DTH TV Channel as well as radio programmes on Gyan Vani. (http://ciet.nic.in)

It has also started helping various States of India to broadcast their e-Content on television. In order to keep pace with the new developments in the field of content development, it has developed Augmented Reality (AR) based content that have been embedded in the NCERT textbooks.

Engineering Division main mandate is to equip the institute with the modern and latest technologies to help the CIET to achieve its goals and objectives. The division has been procuring and maintaining the equipments (hardware) and software required by the other three divisions of CIET apart from maintaining the digital learning lab developed exclusively for training purposes.

Recognising the potential of technology in teaching-learning, various innovative curricular materials have been developed by the NCERT. The Council developed e-Content which include images, 700 audio programmes, 597 video programmes, interactive, graphics, animations, digital books, timelines, digital maps, etc., for the entire syllabus of NCERT at all stages of school education.

Massive Open Online Courses (MOOCs) platform popularly known as SWAYAM, i.e., Study Webs of Active Learning for Young Aspiring Minds (https://swayam.gov.in/) offered various online courses for school education and teacher education. (http://ncert.nic.in)

During the academic year 2019–20, Cycle 4 has started with 21 courses (including 19 courses for students and 2 courses: Action Research in Educational Technology course for in-service teachers and Food Nutrition for Healthy Living course for teacher-educators and generic audience). A total of 7,293 learners were enrolled in these courses.

Cycle 5 has started with 27 courses (22 students courses, 2 for teacher-educators and 3 generic courses) from 1 October, 2019 till 31 March, 2020.

SWAYAM Prabha DTH Channel telecast educational video programmes for learners of secondary and senior secondary students and teachers.

NCERT has been assigned Channel #31, 'Kishore Manch'. five hundred and fifty four episodes of daily live discussion programme were telecast on every working day from 11:30 am to 12:00 noon. Forty-eight live episodes were telecast on every Friday (Educational administration) from 3:00 pm to 3:30 pm. Apart from this, 5 hours of content telecast on SWAYAM Prabha Channel #31 'Kishore Manch'.

National Repository of Open Educational Resources (NROER), an online repository (http://nroer.gov.in (NROER) in which the learners can freely access and use resources under the CC by SA license. Around 5080 new resources including 1016 audios, 12 images, 62 videos, 836 interactives and 3154 documents have been added during the year to NROER platform.

e-Pathshala, a portal/app developed and launched in November 2015, hosts educational resources for teachers, students, parents, researchers and educators, can be accessed on the Web, and is available on Google Play, App Store and Windows. The content is available in English, Hindi and Urdu. It offers educational resources, including NCERT textbooks for Classes I–XII, audio-visual resources developed by the NCERT, periodicals, supplements, teacher training modules and a variety of other print and non-print materials. Digital textbooks of NCERT (Reprint 2020–21) of Classes I–XII in PDF, 504 Flipbooks and 696 e-Pub are available in this platform. (NCERT, Annual report 2019-20, MoE Website)

INTERVENTION TO BE DONE AS PER PERSPECTIVES OF NEP 2020 ONLINE AND DIGITAL EDUCATION & ENSURING EQUITABLE USE OF TECHNOLOGY

New circumstances and realities require new initiatives. The recent rise in epidemics and pandemics necessitates that we are ready with alternative modes of quality education whenever and wherever traditional and in-person modes of education are not possible. In this regard, the recognizes the importance of leveraging the advantages of technology while acknowledging its potential risks and dangers. It calls for carefully designed and appropriately scaled pilot studies to determine how the benefits of online/digital education can be reaped while addressing or mitigating the downsides. In the meantime, the existing digital platforms and ongoing ICT-based educational initiatives must be optimized and expanded to meet the current and future challenges in providing quality education for all. (National Education Policy 2020)

However, the benefits of online/digital education cannot be leveraged unless the digital divide is eliminated through concerted efforts, such as the Digital India campaign and the availability of affordable computing devices. It is important that the use of technology for online and digital education adequately addresses concerns of equity. Teachers require suitable training and development to be effective online educators. It cannot be assumed that a good teacher in a traditional classroom will automatically be a good teacher in an online classroom. Aside from changes required in pedagogy, online assessments also require a different approach. There are numerous challenges to conducting online examinations at scale, including limitations on the types of questions that can be asked in an online environment, handling network and power disruptions, and preventing unethical practices. Certain types of courses/subjects, such as performing arts and science practical have limitations in the online/digital education space, which can be overcome to a partial extent with innovative measures. Further, unless online education is blended with experiential and activity-based learning, it will tend to become a screen-based education with limited focus on the social, affective and psychomotor dimensions of learning.

Given the emergence of digital technologies and the emerging importance of leveraging technology for teaching-learning at all levels from school to higher education, this Policy recommends the following key initiatives:

(a) Pilot Studies for Online Education

Appropriate agencies, such as the NETF, CIET, NIOS, IGNOU, IITs, NITs, etc. will be identified to conduct a series of pilot studies, in parallel, to evaluate the benefits of integrating education with online education while mitigating the downsides and also to study related areas, such as, student device addiction,

most preferred formats of e-content, etc. The results of these pilot studies will be publicly communicated and used for continuous improvement.

(b) Digital Infrastructure

There is a need to invest in creation of open, interoperable, evolvable, public digital infrastructure in the education sector that can be used by multiple platforms and point solutions, to solve for India's scale, diversity, complexity and device penetration. This will ensure that the technology-based solutions do not become outdated with the rapid advances in technology.

(c) Online Teaching Platform and Tools

Appropriate existing e-learning platforms such as SWAYAM, DIKSHA, will be extended to provide teachers with a structured, user-friendly, rich set of assistive tools for monitoring progress of learners. Tools, such as, two-way video and twoway-audio interface for holding online classes are a real necessity as the present pandemic has shown.

(d) Content Creation, Digital Repository and Dissemination

A digital repository of content including creation of coursework, Learning Games & Simulations, Augmented Reality and Virtual Reality will be developed, with a clear public system for ratings by users on effectiveness and quality. For fun based learning student-appropriate tools like apps, gamification of Indian art and culture, in multiple languages, with clear operating instructions, will also be created. A reliable backup mechanism for disseminating e-content to students will be provided.

(e) Addressing the digital divide

Given the fact that there still persists a substantial section of the population whose digital access is highly limited, the existing mass media, such as television, radio, and community radio will be extensively used for telecast and broadcasts. Such educational programmes will be made available 24/7 in different languages to cater to the varying needs of the student population. A special focus on content in all Indian languages will be emphasized and required; digital content will need to reach the teachers and students in their medium of instruction as far as possible.

(f) Virtual Labs

Existing e-learning platforms such as DIKSHA, SWAYAM and SWAYAMPRABHA will also be leveraged for creating virtual labs so that all students have equal access to quality practical and hands-on experiment-based learning experiences. The possibility of providing adequate access to SEDG students and teachers through suitable digital devices, such as tablets with pre-loaded content, will be considered and developed.

(g) Training and Incentives for Teachers

Teachers will undergo rigorous training in learner-centric pedagogy and on how to become high-quality online content creators themselves using online teaching platforms and tools. There will be emphasis on the teacher's role in facilitating active student engagement with the content and with each other.

(h) Online Assessment and Examinations

Appropriate bodies, such as the proposed National Assessment Centre or PARAKH, School Boards, NTA, and other identified bodies will design and implement assessment frameworks encompassing design of competencies, portfolio, rubrics, standardized assessments, and assessment analytics. Studies will be undertaken to pilot new ways of assessment using education technologies focusing on 21st century skills.

(i) Blended Models of Learning

While promoting digital learning and education, the importance of face-to-face in-person learning is fully recognized. Accordingly, different effective models of blended learning will be identified for appropriate replication for different subjects.

(j) Laying Down Standards

As research on online/digital education emerges, NETF and other appropriate bodies shall set up standards of content, technology, and pedagogy for online/digital teaching-learning. These standards will help to formulate guidelines for e-learning by States, Boards, schools and school complexes, HEIs, etc.

(k) Creating a Dedicated Unit for Building of World Class Digital Infrastructure Educational Digital Content and Capacity Technology in education is a journey not a destination and capacity will be needed to orchestrate the various ecosystem players to implement policy objectives. A dedicated unit for the purpose of orchestrating the building of digital infrastructure, digital content and capacity building will be created in the Ministry to look after the e-education needs of both school and higher education. Since technology is rapidly evolving, and needs specialists to deliver high quality e-learning, a vibrant ecosystem has to be encouraged to create solutions that not only solve India's challenges of scale, diversity, equity, but also evolve in keeping with the rapid changes in technology, whose half-life reduces with each passing year. This centre will, therefore, consist of experts drawn from the field of administration, education, educational technology, digital pedagogy and assessment, e-governance, etc.(Document NEP, 2020)

Final Thought

The thrust of technological interventions will be for the purpose of improving teaching learning and evaluation processes supporting teacher preparation and

professional development, enhancing educational access and streamlining educational planning, management, and administration including processes related to admissions, attendance, assessments, etc. A rich variety of educational software, for all the above purposes may be developed and made available for students and teachers at all levels. All such software will be available in all major Indian languages and will be accessible to a wide range of users including students in remote areas and Divyang students. Teaching-learning e-content will continue to be developed by all States in all regional languages, as well as by the NCERT, CIET, CBSE, NIOS and other bodies/institutions, and will be uploaded onto the DIKSHA platform. This platform may also be utilized for Teacher's Professional Development through e-content. CIET will be strengthened to promote and expand DIKSHA as well as other education technology initiatives. Suitable equipment will be made available to teachers at schools so that teachers can suitably integrate e-contents into teaching-learning practices. Technology-based education platforms such as DIKSHA/SWAYAM, will be better integrated across school and higher education, and will include ratings/reviews by users, so as to enable content developers create user friendly and qualitative content.

References:

1. Abhishek, Patil. (2020, April 10). Covid-19 pandemic. E-learning trends need to watch for. Retrieved from http://www.indiatoday.in
2. Aharony, N., & Ilan, J. B. (2016). Students' perceptions on MOOCs: An exploratory study. Interdisciplinary Journal of e-Skills and Lifelong Learning, 12, 145-162.
3. NCERT Annual Report 2019-20, NCERT, New Delhi.
4. Behera Biswajit.(2021).Digital Inclusion in Education: Mapping and Management. Indian Journal of Educational Technology Volume 3, Issue 2, July 2021,277-289
5. NEP (2020). Retrieved from https://www.mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/ files/ nep/NEP_Final_English.pdf
6. Rana Pavitra, Kumari Sarita (2021). Inside Online Classrooms: Teachers' Online Teaching Experiences during COVID-19 Pandemic. Indian Journal of Educational Technology Volume 3, Issue 2, July 2021, 77-88
7. UNESCO (2017). Working group on Education: Digital skills for life and work. Accessed from: https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000259013/PDF/259013 eng.pdf.multi.
8. Retrieved from (http://ncert.nic.in)
9. Retrieved from (http://ciet.nic.in)

❑❑❑

1. Assistant Professor, District Institute of Education and Training, J&K Block, Dilshad Garden, Delhi, Email: shinambatra@gmail.com
2. Assistant Professor, District Institute of Education and Training, J&K Block, Dilshad Garden, Delhi, Email: sktet2010@gmail.com

Research Article

Uniformity in Civil Laws Vis a Vis Positive Secularism

–Dr. Monika Malik[1]
–Chhavi Ahlawat[2]

The fundamental right of freedom of religion can be put to reasonable restrictions on the grounds of health, morality, public order as well as its subjection to other fundamental rights enshrined in Part III of the Constitution. Every religion is governed by its own personal law. These personal laws are not of recent origin but are the creation of the past. The sources of these personal laws find their origin in the ancient times when the society was changing drastically.

Abstract

India being a secular nation allows all the citizens to peacefully practice, profess and propagate the religion of their choice without declaring any state religion or an official religion. The concept of Positive Secularism is followed in India wherein a duty is casted upon the state to ensure that no religion is being favoured and also to check any invasion upon the principles of the Constitution of India. Religious matters in India are dealt by the respective personal laws. These laws are both codified as well as uncodified and deal with the matters which are not purely religious in nature but also some pure civil matters like marriage, maintenance, succession, adoption etc. are also included in them. All the individuals have an equal right over these civil laws but an uncontrollable intrusion of the civil laws into the personal laws of different religions has led to injustice and inequality to the people. Therefore, uniformity in civil laws is must to ensure justice to the people in the society with regard to their civil rights. Idea of uniformity in civil laws emerged in the minds of the framers of the Constitution in India with a possibility of its implementation in future and has been placed within the Directive Principles mentioned in the Constitution of India as a mandate to the state while formulating the policies for the country. Uniformity in the civil laws is a fundamental requirement to glorify the concept of secularism in the country as well as to let the society enjoy an equal entitlement over the civil laws without any discrimination. Judiciary in India has manifested activism in ensuring the implementation of the welfare laws and eradication of the biased laws. Thus, in order

to ensure the application of secularism in real sense, the adoption of Uniform Civil Code is required.

Keywords: *Uniform Civil Code, Secularism, Gender Equality, Religion*

INTRODUCTION

India is a multi-religious and multi-linguistic nation where a variety of customs, traditions, rituals and beliefs exist. Religious tolerance is also prevalent in the society. People belonging to different tribes, religions, races, sects, classes, castes, place of birth and so on, speaking different languages varying from region to region, live together and what binds them together in the society is the concept of secularism. The word "secularism" was used for the first time by an English secularist, *George J. Holyoake*, in order to express his opinions to promote such an order in the society which would be separate from the aspect of religion, without criticizing or banishing the existing religious beliefs. India follows the concept of secularism. Through the 42nd Amendment Act of 1976, the word "secular" got added in the Preamble of the Constitution of India. In the simplest form, secularism means that every citizen of the nation has a right to follow the religion of his or her choice without the intervention of the state, except on the reasonable terms. The secularism in India inflicts on the state a command not to recognize any state religion and treat every citizen with a spirit of "*Sarv Dharm Sambhav*".[3] The fundamental rights enshrined in the Constitution of India guarantee to all the citizens of the country a dignified life where they can freely and equally enjoy their rights without any kind of discrimination. Freedom of Religion has been ensured to all the citizens where they can practice, profess or propagate any religion of their choice. The religious groups of the country are allowed to manage and administer their own religious affairs.[4] But the fundamental right to religion is not absolute otherwise it would lead to lawlessness.

The fundamental right of freedom of religion can be put to reasonable restrictions on the grounds of health, morality, public order as well as its subjection to other fundamental rights enshrined in Part III of the Constitution. Every religion is governed by its own personal law. These personal laws are not of recent origin but are the creation of the past. The sources of these personal laws find their origin in the ancient times when the society was changing drastically. Customs, commentaries and digests, various schools, Holy Scriptures, experiences, decisions of the courts and so on, formed the basis of these personal laws.[5] However, these personal laws contain some pure civil rights such as marriage, adoption, inheritance, succession, divorce etc. within their ambit since initial period. This intrusion has played a major role for creating various societal problems both in the past as well as in the present time with regard to the violation of the civil laws of the people. All the individuals living in a society have a right to freely and equally enjoy their civil

rights regardless of any discrimination on the grounds of gender, caste, race, sect, religion etc. But they often face trouble because of the infringement of their civil rights and the reason is that their civil rights are governed by the personal laws. The uniformity in civil laws means a common set of civil laws for the whole nation. It is mentioned within the Article of Directive Principles mentioned in Part IV of the Constitution which lays down that "the State shall endeavor to secure for the citizens a uniform civil code throughout the territory of India."[6]

HISTORICAL DEVELOPMENT OF CIVIL LAWS

India is home to various religions and communities such as Hindus, Christians, Muslims, Jews, Parsis, Buddhists, Jains, Sikhs and so on and the Hindu religion is considered to be one of the oldest religions of them all. The concept of secularism prevails in the society since beginning and the administration of justice for both the civil as well as criminal matters was also secular in nature under the Mauryan Dynasty and Medieval era. It is believed that some sort of civil law system prevailed during the era of Indus Valley Civilization as well.[7]The word "religion" means to have faith in particular gods or goddesses, but the religious society started treating with civil laws according to their own cultural practices and had set their own laws for the same. These laws were called the personal laws which guided these civil laws. Every religion has its own personal law. There were no codified laws so the customs, traditions, holy texts such as Vedas, Manusmritis, Upanishads, Quran, Adi Granth, Bible, various philosophical schools, experiences, judicial decisions, commentaries and digests etc. served as the ancient as well as modern sources of personal laws. The society was patriarchal and various laws were framed which were mainly gender biased. Evil customs such as Triple Talaq, Sati pratha, child marriage, polygamy, polyandry etc.prevailed under the domain of civil laws within different religions.

In Muslim community, the Qazis and Muftis dealt with the issues related to the civil laws whereas the Hindus followed the system of Dharma. The other religions too followed their own rituals in dealing with the issues related with the civil laws. With the arrival of Britishers in India, various reforms took place which led to the framing of the laws through Parliament. The reformation was necessary to eradicate the evil societal issues pertaining to the civil laws dealt within different personal laws. The process was very slow because of the oppression by the minority communities with regard to their personal laws, as they feared to be crushed under the hands of the dominating communities. Reformation started taking place in the personal laws and various Acts for Hindus dealing with marriage,[8] adoption and maintenance[9] were enacted. The same trend was manifested in Muslim jurisprudence and some significant Acts dealing with marriage, succession[10], divorce[11] were enacted. Christians also enacted legislations dealing with marriage,

divorce [12],succession[13]etc. Parsis enacted the legislations on marriage and divorce[14]. Although the civil laws related to marriage, adoption, maintenance, and other family and property affairs were now being dealt through these enactments but they were and still exist under the ambit of the personal laws. The theory of Uniform Civil Code suggests the uniformity in laws with respect to civil matters related to family and property affairs. Until and unless the civil laws are not kept out of the domain of the personal laws, the societal issues related to civil matters shall not be solved. Thus, there is a need to think about the adoption of a civil code uniform in nature for the whole nation.

CIVIL LAWS IN DOMAIN OF PERSONAL LAWS

The civil laws deal with the matters revolving around both the family as well as proprietary affairs. Matters such as marriage, adoption, divorce, maintenance, inheritance, succession etc. are all concerned with civil entitlements but they are dragged within the domain of respective personal laws. Unfortunately, these pure civil entitlements are governed according to the customs and practices as prevalent among the different personal laws instead of there being existence in the civil laws of the country. This leads to the unequal entitlement of civil rights to the people living in the society. The civil laws, just like criminal laws, are independent in nature must exist autonomously, but because they lie within the domain of the personal laws, it has become a matter of big concern. On one hand, the personal laws are excluded from the term "laws in force" as enshrined in the Constitution of India,[15]on other hand, letting the civil laws under the hands of the personal laws is just a step away from anarchy. Various protests have happened in the past and majority of them were concerned with the unequal entitlement of the civil laws. Uniformity in the civil laws is hoped to be a boon for the equal enjoyment of the civil rights by the people. Civil laws should be dealt independently, the same way as the criminal matters are dealt. The codification of the civil laws is a dire need, especially with regard to the matters dealing with marriage, adoption, inheritance, succession etc. which are treated unequally because they are governed by the personal laws. Only then, we can hope for justice in the society in real sense.

UNIFORM CIVIL CODE: JUDICIAL APPROACH

There have been various landmark judgments in the past which have touched the incidences of the impact of the personal laws on the civil rights of the individuals. Starting with the case with regard to the issue related to the personal law, wherein it was contended that bigamy committed by Hindu men was prohibited while the same was allowed for Muslim men, which was in derogation with the fundamental right to equality. It was held by the Bombay High Court that the personal laws were out of the ambit of "laws in force" as given in the Constitution of India[16] and even if the personal laws were found to be against any fundamental right, they

could not be invalidated.[17] This judgment was upheld by the Apex Court and was highly criticized later as the Constitution of India is supreme and there cannot be any law which could violate its fundamental principles. But in another judgment, the Supreme Court reversed the decision and held that any provision in personal law which violates the fundamental right, will be void.[18]It was in the year 1985 that the need for the incorporation of the civil code, being uniform in nature was urged through a landmark judgment pronounced with regard to the maintenance rights of the women. The petitioner was refused her regular maintenance by her husband, the defendant, who gave her divorce by pronouncing triple talaq. The petitioner then moved to the Apex Court in order to seek her maintenance right and it was stated by the Apex Court to be regretful matter that the incorporation of the uniform code on civil laws is still a dead letter. The conflicting ideologies prevailing within the personal laws with regard to the civil laws can be swiped away through the common civil code.[19] Another landmark judgment was pertaining to the evil customary practice of Triple Talaq in which the husband would easily give divorce to his spouse by pronouncing the word "talaq" three times. The Apex Court had found this evil custom of Triple Talaq as the main reason for violation of the civil rights and also the infringement of the constitutional principles. Thus, it directed the Parliament for its abolition and indicated towards the need of the uniform civil code in India.[20] In a recent judgment, in order to obtain divorce, the issue was whether the couple should be governed by the Hindu personal law or by the provisions of the Meena tribe to which they belong. The Delhi High Court observed the need for the uniform code of civil laws which would enable the principles to apply uniformly upon matters such as divorce, marriage, succession etc.[21] Another judgment was with respect to the inter-faith marriage wherein the High Court took the view of uniform civil code and stated that the right of choosing a partner irrespective of the religion is an exclusive right of every individual. It further stated that the implementation of the uniform code of civil laws is long overdue and urged upon the Central Government to adopt the Uniform Civil Code.[22]In the famous case of Sabarimala temple[23] the issue was with regard to the violation of the fundamental right of religion as well as discrimination on the basis of gender. Such an issue was regarded to be against the spirit of secularism as no religion can contravene with the fundamental right of any citizen and hence, the Supreme Court again stressed upon supremacy of the Constitution and stated that no law can contradict with it. Thus, the judiciary has been playing an active role by indicating the necessity for the adoption of the uniform civil code through its judgments. Thus the Supreme Court being the watchdog of the Constitution of India has been playing a significant role in pushing the Legislature to frame or enact such laws

which ensure the equal entitlement of the civil rights to the individuals and eradicate and amend such laws which are violating the same.

POSITIVE SECULARISM AND APPLICATION OF UNIFORM CIVIL CODE

Society in India is manifested by religious diversity and follows the concept of "positive secularism" where an active role is played by the state to make sure that all the religions are treated equally and no partiality or favoritism is done to any particular religion. As long as personal laws are abiding by the constitutional principles and are in tune with the spirit of secularism, the state shall not interfere in their application. There are various religious communities in the society which follow their own rituals and traditions with respect to their religious affairs. Secularism binds these religious communities together in the society. But there is a directive upon the state for ensuring that the religious society does not take the advantage of secularism by going beyond the basic principles of the constitution such as natural justice, non-discrimination, equity, justice and good conscience and so on. The inculcation of civil laws within the sphere of religion has been the major cause of concern in the society. Societal problems with regard to the civil laws emerge mainly because of this reason. For ensuring the functioning of positive secularism in the religious society of India in true sense, uniformity in the civil laws is must. The need for adoption of the Uniform Civil Code was first realized during the British government in India in the year 1935 through a report which stressed the need for its implementation. While formulating the draft of Constitution of India, the Uniform Civil Code was deemed to be desirable by Dr. B.R. Ambedkar but was left with a hope of its implementation in future voluntarily.[24]

Our society has seen few instances wherein the legislation has done major enactments concerning with the uniformity in the matter of the civil laws. The Act of 1954[25] dealing with the issues regarding marriage has been proved as a boon for those couples who had been facing problems in their inter-religious marriages. Before the law came into force, couples had to change their religion in order to marry their partner belonging to another religion. Now this legislation has solved all these problems as wherein the couples can freely enjoy their right of marriage while practicing their own religion. The Act thereby ensures satisfactory application of non-discrimination principle of the Constitution. Another Act on the part of legislation is the Indian Succession Act of 1925 that applies on all the religions- Hindus, Jains, Sikhs, Buddhists, Parsis, Christians and Jews, for the purpose of testamentary succession. It is not applicable on Muslims. However, some of its provisions are not applicable on Hindus as they are governed by their own law of succession[26]. In the same way, the law of succession for the Muslims is again different from the Hindus and is based on their holy Quran and other sources. These are some of the examples wherein the civil rights of property and marriage

are governed by the universal laws applicable on all the religions. Though the Indian Succession Act of 1925 does not apply on Hindus and Muslims, but is applicable on the other religions. Thus, to ensure justice with regard to the civil rights of the individuals in the society, uniformity is a fundamental tool to ensure the same.

CHALLENGES INVOLVED IN THE PERSONAL LAWS

There have been various instances in the past, where the right to freedom of religion, had extended its wings and violated the civil rights of the individuals. Various organizations emerged and opposed the judgments based on uniform laws. These organizations continuously feed the minds of the people in the society with the discriminatory thoughts and beliefs. This has been slowing down the process of implementing the uniformity in civil laws and the root cause of all the societal issues with regard to civil rights is the inclusion of these rights within the domain of the personal laws. The civil rights are not the religious rights but in fact they are the individual rights and every person has an equal right over them regardless of any gender or religion. Some of the provisions of the personal laws are discriminatory in nature and it straightaway goes against the constitutional principle of non-discrimination.[27] Such as the system of polygamy that exists in Muslim personal law but the Hindu personal law forbids the same. Women belonging to a particular community face issues with respect to the same civil right to which the other women belonging to different community are equally entitled. This difference with regard to the treatment of civil laws under different personal laws is a biggest issue around which the matter of uniform civil code is revolving around. The civil laws do not belong to any community, rather they are the laws which should have an equal application upon all the individuals of the society regardless of any type of discrimination and apply uniformly throughout the country. These civil laws are required to become uniform so that the issues which are involved in the personal laws can be solved peacefully.

CONCLUSION AND SUGGESTION

The incorporation of the code of uniform civil laws in India has become a highly debatable issue since many years and this is the reason why the framers of the constitution in India placed it within the domain of Directive Principles of State Policy, Part IV of the Constitution for its possibility of voluntary adoption in future. Though, the Constitution of India has placed Uniform Civil Code under the Directive Principles which makes it clear that they are fundamental for the governance of the nation[28], it clearly amplifies the necessity for its necessary implementation throughout the nation, but still, the Parliament has not implemented it. The aim of introducing uniformity in the civil laws is to elevate national integration, dignity of women as well as to inculcate equality in the society.[29]The uniformity in the civil laws, by

enhancing the secular tolerance, can pave the way for the full enjoyment of the equality rights of the people. In India, the personal laws are very vital because there exist infinite religious communities. The existence of these personal laws provides umbrella protection to these religious communities and preserves the spirit of secularism in the nation. It will lead to uniform civil laws governing each and every individual of the country irrespective of religion, class, gender, language, caste, race, place of birth and so on. Though, the term "laws in force" enshrined in the Constitution of India does not include the personal laws as they are governed by the customary practices as well as traditions[30]but at the same time reasonable restrictions may be put by the state, if they are contradictory to any other right mentioned under Part III of the Constitution. Thus the principles enshrined in the Constitution under Part III in the form of fundamental rights work as filter and scrutinize the personal laws. Therefore, it is high time to put religions out of purview of the civil laws as the civil laws are the matter of equal entitlement and personal laws are personal to every individual with respect to his/her particular religion. The concept of positive secularism may be ensured in the way by letting people enjoy their fundamental right to religion, keeping the civil laws out of their religious domain. Let people follow their beliefs, customs and traditions as per their personal laws and the state must not consider any religion to be official. The religious tolerance should prevail keeping in mind the welfare of the people as a whole. Uniformity in the civil laws is a major requirement of today's welfare society. The vision with regard to the implementation of the uniform code of civil laws in the whole nation is a goal towards which the country should move ahead.[31]In India, at present, Goa is governed by the Uniform Civil Code in the form of Portuguese Code of 1867 without having regard to any caste, religion or gender. There is a common family law and all the Hindus, Muslims, Christians, Jews, Parsis who are domiciled in the state are equally bound to follow the same law which is related to the marriage, inheritance, divorce, succession etc.[32]Uttarakhand is believed to become a second state in India to adopt the code of uniform civil laws throughout the state. Awareness among the masses with respect to the evil societal practices within the personal laws and their agitations against them has led the Judiciary to give landmark judgments securing civil entitlements and fundamental rights. At the same time these societal factors compel the legislature to repeal and amend the biased personal laws. Just like codified criminal laws equally apply upon all, the civil laws are also required to be applied equally and it is possible only through uniformity in civil laws. Therefore, the government should take measures to make people aware about the positive effect of the code of uniform civil laws in the society as justice shall prevail only when the civil laws are dealt uniformly without having regard to any discrimination.

(Footnotes)

[3] LexQuest Foundation, "Uniform Civil Code: Still a dream for every Indian?" LexQuest Foundation, 2015available at: https://www.lexquest.in/uniform-civil-code-still-a-dream-for-every-indian/ (last visited April 22, 2022).

[4]The Constitution of India, arts. 25, 26, 27, 28, 29,30

[5] Anubhuti Rastogi, "Uniform Civil Code" Law Times Journal, 2019available at: https://lawtimesjournal.in/uniform-civil-code/ (last visited April 22, 2022).

[6]The Constitution of India, art. 44

[7]"Brief History of law in India",The Bar Council of India, *available at:*http://www.barcouncilofindia.org/about/about-the-legal-profession/legal-education-in-the-united-kingdom/ (last visited April 10, 2022).

[8]The Hindu Marriage Act, 1955

[9]The Hindu Adoption and Maintenance Act, 1956

[10]The Muslim Personal Law (Shariat) Application Act, 1937

[11] The Muslim Women (Protection of Rights on Divorce) Act, 1986

[12]The Christian Marriage Act, 1872

[13]Indian Succession Act, 1925

[14]Parsi Marriage and Divorce Act, 1936

[15]The Constitution of India, art 13.

[16]*Ibid.*

[17]The State of Bombay v. NarasuAppa Mali AIR 1952 Bom 84.

[18]C. MasilamaniMudaliar **v.** The Idol of Sri SwaminathaswamiThirukoil (1996 8 SCC 525).

[19]Mohd Ahmed Khan v. Shah Bano Begum 1985 (1) SCALE 767.

[20]ShayaraBano v. Union of India AIR 2017 9 SCC 1 (SC).

[21] Satprakash Meena v. Alka Meena 07 July 2021

[22] Mayra Alias Vaishnavi Vilas Shirshikar and Anr v. State of UP and Ors. (2021)

[23] Indian young lawyers association v. the state of Kerala (2019) 11 SCC 1.

[24] "Main Answer Writing Practice," Drishti IASavailable at: https://www.drishtiias.com/mains-practice-question/question-359 (last visited April 22, 2022).

[25] The Special Marriage Act of 1954

[26] The Hindu Succession Act of 1956

[27] Jyotika Kalra August 10, 2021UPDATED: August 10 and 2021 15:17 Ist, "Uniform Civil Code: A journey not a destination" India Todayavailable at: https://www.indiatoday.in/news-analysis/story/uniform-civil-code-journey-destination-features-1839110-2021-08-10 (last visited April 22, 2022).

[28]Sneha Mahawar, "UCC in India" iPleaders, 2022available at: https://blog.ipleaders.in/ucc-india/ (last visited April 21, 2022).

[29]"Overview on the Uniform Civil Code," The Times of India.

[30]*Supra* note 13.

[31]*Supra* note 20.

[32]"Uniform Civil Code in Goa," *available at:* http://www.legalservicesindia.com/article 2157/Uniform-Civil-Code-in-Goa.html (last visited April 10, 2022).

❒❒❒

---

1. [1]Head Department of Law, Central University of Haryana, Mahendergarh, contact no.- 9416318299
2. [2] Research Scholar, Department of Law, Central University of Haryana, Mahendergarh, contact no.-9667217949

Research Article

Identity Subjective in Laxmi Narayan Tripathi's *Me Hijra, Me Lamxi*

–Neetu Kundu
–Dr. Anu Rathee

The identity term itself is complicated to describe as it has manifolds; everyone has their thoughts and personality, which never match others' expectations. Society sets many parameters to define identities, like caste, class, family, religion, and sexuality. Community plays a crucial part in determining identities and acceptance of the person.

Abstract

Humankind makes a difference and supports individuals who need caring love, help, and attention. Literature comprehends shaping our behavior and human nature. One of the concerned social issues within India alarming the country's progress is 'the identity of transgender.'Nowadays, across the world, people have started raising their voices against the injustice done to transgender. Transgender people do not fit the gender binary of male and female society. Transgender people have been with us since the ancients, but till the day, they are not accepted because of their uniqueness created by god. Transgender (unique gender) identity is known as 'Third Gender.' The issues, challenges, and problems they faced were neglected before, but now they are supported by familiar people and the government. The transgender community is rejected chiefly and excluded from any social, political, or cultural activity and mainly marginalized and excluded because of their identity. This paper will specifically look upon the issue of identity faced by the third gender in their daily routine. The paper looks at Laxmi Narayan Tripathi's autobiography *Me Hijra, Me Laxmi,* as a critical intercession in the identity discourse. The paper aims to bring into viewpoint the plight of the third gender. The objective of this paper is to prospect the identity questions done to transgender people in the light of the autobiographical work *Me Hijra, Me Laxmi.* The present paper will also define third-gender culture, life, pain, desires, trauma, exclusion, experience, and silence faced by them and the behavior of how people treat them.

Key words: Sex, Third Gender, Transgender, Hijra, Gender issues, Gender Identity, Trauma, Otherness, Marginalized.

Introduction:

Transgender have existed since human life was rooted, existed, and recorded. The meaning given to transgender is 'beyond gender' and 'unique gender.' They are unique or beyond gender because they do not fit under the socially constructed male and female characteristics. They present various gender identities, expressions, norms, roles, and behaviors associated with them. Transgender comes under the LGBTQ group. In India, transgender is commonly called Hijras. Some Indians tease them by calling them hijras because, in Indian society, they are neither accepted nor respected.

In India, Hijras have prosperous mythological and historical existence. During Mughal and sultanate periods, the Hindu Mythology, pre- and post-independence phases, have confirmed their social position and acceptance by our Gods.

Hijras were considered clever, trustworthy, and fiercely loyal. They had free access to all spaces and sections of the population, thereby playing a crucial role in the politics of empire building in the Mughal era. (Michelraj, 2015).

All these references have been brought into practical action to sustain their presence and identity. But somewhere, the portrayal of these figures have lost its real identity due to multiple creative narrative device.

Each of us seeks to know our personal identity and where and how we fit in to the scheme of things so that we can make sense of our lives and plan for the future…[Zarina Patel, a young Kenyan ('Who Am I?' Daily Nation, Nairobi, March 28, 2000)].

The identity term itself is complicated to describe as it has manifolds; everyone has their thoughts and personality, which never match others' expectations. Society sets many parameters to define identities, like caste, class, family, religion, and sexuality. Community plays a crucial part in determining identities and acceptance of the person. Society has set norms of sexuality, who do not follow those norms are marginalized. Gender identity defines personal feelings and emotions, which one feels and accepts their sexuality. In India, people don't like to see transgender and abuse them by calling them chakka, or hijra. They are only welcomed when people want good wishes and mainly badhai for the child.

Hijras' were once a revered and accepted group in Indian culture. The Vedas, ancient Hindu texts, include eunuchs and characters with both male and female characteristics. They were believed to bring luck and provide extraordinary fertility power. For centuries, they have performed badhai, or blessings, at weddings and births (DelliSwararaos 2016).

Hijras are marginalized in India because of their identity and suffer a massive imbalance in legal and non-legal services. Hijras are problematized because of

their assigned sex by birth or by their choice to be transgender. Hijras can't designate them even with their families because they are not accepted by their families and don't have any religion or class. In modern times, the third gender has made their own space in a community full of themself, representing their culture, festivals, and profession. Their family leaves them without any support system for their living. They work hard to feed their stomach by selling them and doing the work done by the hijra community.

The third gender situation differs worldwide as different regions have diverse cultures and adhere to conventions and traditions. A few nations are working to provide equal status to the transgender community and acknowledgment in society. Still, the situation in which they currently live is intolerable and, in some circumstances, pitiable. Individual transgender suffers from many forms of marginalization, like racism, sexism, poverty, and homophobia, that affect their mental and physical health. They suffer discrimination, harassment, threat, and violence because of their sexual appearance and profession. Neither do they have job opportunities, nor academic sector, institutions, and medical stores do not provide them health care services. Their main issue now with their identity is there is no public toilet made for the third gender. They are treated like others as a thing because of their singularity.

Although in modern times, there is a massive shift in treating the LGBTQ community- recognizing them, accepting them, respecting them, supporting them, and fighting for them. Law has also helped them by giving them their right and legal laws on the LGBTQ community. Their presence in public places like restaurants, cinemas, malls, etc., is unrestricted. Recently, transgender identity looked at a new dimension with 'Third Gender.'

Third gender is marginalized in social work as well as literary works. Trans-activist like Laxmi Narayan Tripathi gave their community strength to stand up for them and gain their rights. Writing is a tool for them to outcast their experience, trauma, and sufferings and let the world know their natural side. In *Me Hijra, Me Laxmi*, she shares her life from the start and how she gained respect and fought with herself and society. Laxmi Narayan Tripathi was first one to represent her community at Asia Pacific UN. She writes,

I felt empowered, and empowerment is not a word that normally exists in the vocabulary of a hijra (Tripathi 62-63).

Laxmi paints a transparent picture of her journey from a boy named Raju to a transgender person in India. She was born in a conservative Brahmin family where her sister and father supported her. In her childhood, she was fascinated by feminine clothing and accessories. She used to dress up like a girl, wearing a saree and putting on makeup, wearing bangles and accessories, and walking like a lady. She

enjoys being a woman. Her friends make fun of her for dressing like a woman, and her mother occasionally hits her.

I liked being a drag queen. But then drag queens cross-dressed only sporadically, for show, where as I wanted to drape myself in a sari and wear skirts every single day (Tripathi 29).

She used to dance to Bollywood songs with her sister. She was fragile like a girl, and had a weak body. She was confused by the mystery of his body. She was unclear about her identity. She voiced her sentiments to her friend,

I now myself began feeling attracted to boys in general. While I did not want some boys anywhere near me, I was attracted to others and strongly desired them. I wondered if this happened because inwardly I was a woman. I did not know. I was only in the fourth standard then. How was I to know? (10).

She explored her inner self, finally found her identity, and decided to become a hijra. Everyone stopped her, but she flew away and became a renowned person who changed many lives. She left her home and became a hijra. She was not accepted by her parents when she was a hijra. Her parents wanted her to live an everyday life, get married, and have children. Her parents didn't come out of their house because of the abuse society yelled at them. Before, she was well looked after by her parents, but now they are ashamed to be called her parents.

She felt normal being a hijra, but society made her feel different. In her prior stage of hijra, she worked in red-light areas as and sex worker. She had many intimate relations with her male friends, and they hurt her. She was bullied by boys who ordered her to clap as they were born clappers and even raped her. But no one knows how to heal the rapped transgender, and everyone blames them. Society often blames them even when they are not at fault. Later she completed her education and fought for her rights. She writes,

A Hijra from India had been accorded diplomatic status in the world's richest country! It only happened in fairy tails (Tripathi 108).

She detailed in her autobiography that accepting a third-gender community and having equal rights as an ordinary citizen only exists in a fairy tale. In her autobiography, she narrated how passionately Raju wanted to be Laxmi and fulfilled her desires. It is an autobiography of a bold Raju who transforms her gender identity and stood up for the betterment of sexual minorities. She is an educated, responsible transgender who transfigured from the stain of being a victim to accepting the life of hijra by adorning it.

Conclusion:

The conceptions of gender and sexuality are all in our thoughts. People will ultimately prejudice against you if you let them. Laxmi's success story begins with challenging herself to a new beginning and towards activism. She was respected and honored when invited to workshops and conferences and gave public appearances. She stood for her community and globally represented their life,

desires, trauma, social exclusion, and plight due to their identity. She fought many battles and gained power over the stigma assigned to them. Her battle to achieve the dignity of the community and others members of the LGBTQ is a nonstop way. There is an immense need to step in at individuals to safeguard the rights of transgender. There is a need on our part to give them an environment to open up and participate in gender binary at social events. Youths must know about gender identity. The individual should be respected for their own personality, emotion, and desires. It is wrong to judge and discriminate against people who are different from the stereotypes manufactured.

Reference:

1. Bhardwaj, Vandhana. The Plight of The Third Gender: Quest for Identity in the *Narratives Me Hijra Me Laxmi* and *The Truth About Me: A Hijra Life Story.* Thesis Submitted To Lovely Professional University. Master of Philosophy (M.Phil.in English), 2016 2017. http://dspace.1pu.in:8080/jspui/bitstream/123456789/2390/1/11614940_5_9_2017%201_48_44%20PM_comp lete%20thesis.pdf

2. DelliSwararao, K. "Hijras and Their Social Life in South Asia." Imperial Journal of Interdisciplinary Research (IJIR),vol-2,no-4, 2016, pp. 515-521. https://ijellh.com/OJS/index.php/OJS/article/download/5970/5035/8115.

3. Dwivedi, Dr. Vachaspati. "Hijra Autobiographies: Trauma, Discrimination and Social Exclusion in India." An International Refereed e-Journal of Literary Explorations, vol.4,no.4, November, 2016, https://www.academia.edu/30241356/Hijra_Autobiographies_Trauma_Discrimination_and_Social_Exclusion _in_India.

4. Jani, Dr. Darsha. '*Me Hijra Me Laxmi'*: A Stirring Saga of a Transgender." The Criterion: An International Journal In English, Vol. 7, NO. 3, June 2016, http://www.the-criterion.com/V7/n3/004.pdf.

5. Michelraj, M. "Historical Evolution of Transgender Community in India." Asian Review of Social Sciences. Vol-4, No-1, 2015, pp. 17-19. https://www.trp.org.in/wp-content/uploads/2015/10/ARSS-Vol.4-No.1-JanJune-2015-pp.17-19.pdf

6. Mishra, Nimisha. "Indian Society and Position of Third Gender: A Comparative Study of Past and Present Scenario." International Journal of Multidisciplinary Research and Development, vol. 4, no. 7, July 2017; pp. 38-41. http://www.allsubjectjournal.com/download/3277/4-6-69-186.pdf

7. Saba, Shabbir. "Review: Larger than Life: Me Hijra Me Laxmi by LaxmiTripathi". Dawn.4.Oct.2015.<http://www.dawn.com/news/1210459>

8. Singh, Bhojraj. "The Plight of Transgender in Laxmi Narayan Tripathi's Red Lipstick." Journal of Information and Computational Science, vol. 9, no. 11, 2019, http://joics.org/gallery/ics-1653.pdf

9. Stryker, Susan. "(De) Subjugated Knowledges: An Introduction to Transgender Studies." The Transgender Studies Reader. Eds. Susan Stryker and Stephen Whittle. Routledge, 2006. 1-18.

10. Tripathi, L. *Me Hijra, Me Laxmi.* Trans. by R Raja Rao & P G Joshi, New Delhi: OUP, 2015.

11. 'Who Am I?' Zarina Patel, a young Kenyan, Daily Nation, Nairobi, March 28, 2000.

❒❒❒

1. Research Scholar, Deptt. Of English and Foreign Language, Maharishi Dayanand University, Rohtak, Haryana, E-mail: neetukundu8373@gmail.com
2. Associate Professor, C.R.A. College, Sonepat

Research Article

Exploring the Cultural Consciousness: A Study of Sudha Murthy's

–Monika
–Dr. Naresh Rathee

Many Indian writers try to depict social and cultural realities through their writings. Sudha Murthy is a well-known educator and author who has contributed a lot to Indian English writings by picking up the themes related to social, cultural, and economic concerns.

Abstract

Culture plays an essential part in the growth of society. Culture reflects social ideology, political discourses, historical structure, and all the practices people share in any community. Sudha Murthy, the contemporary writer in Indian writings, is famously known for her social works and community service. As a writer, she cherishes and celebrates the richness of long-established Indian values or reflects the traditional sensibilities, religious beliefs, and mythologies in almost all her works. The paper aims to analyze her select work's social and cultural phenomena. The study will be a comprehensive attempt to discover the cross-cultural conflicts and identity crises through the characters of *Dollar Bahu.* The paper is an effort to study Sudha Murthy's *Dollar Bahu* from the standpoint of cultural theory and social-psychological dimension.

Keywords: cultural consciousness, positionality, identity crisis, cultural conflict.

Introduction: -

The word culture originates from the Latin "Colere," which means "to cultivate." Culture is an umbrella term that accommodates ideology, habits, norms, systems, beliefs, attitudes, ideas, and symbols. According to Milton Bennett,

Cultural studies are concerned with all the practices, institutions, and systems of classification through which there are inculcated in particular population values, beliefs, competencies, routines of life, and habitual forms of conduct(Bennett,1998:28).

In other words, culture means sharing the same history and thoughts. Culture is essential for human

life because it helps to understand man's evolutionary history and provides a sense of belonging, self-worth, human unity, and identity. Matthew Arnold is the foremost first critic to talk about culture in his book *Culture and Anarchy.* He explains, "Culture is a pursuit of our total perfection by means of getting to know, on all the matters that most concern us, the best which has been thought and said in the world (Arnold,2)."

The cultural study started in the Birmingham center in 1969 and incorporated many critical approaches. Many theorists of Marxism and Structuralism have always mentioned cultural criticism in their literary works. Marxists focused on the historical perspective to know the cultural background of any society and explained how production and consumption depend on people's social needs; on the other side, Ferdinand de Saussure associates culture with language. Structuralists coined the term 'Language Culturalism,' which focuses on interpreting language to find the link between culture and symbolic meaning.

The phenomenon of cultural studies emerged as an interdisciplinary approach with the work of sociologist and critic Stuart Hall. Hall explains how collective consciousness affects everyday life communication in a particular community. After Stuart Hall, many scholars like Raymond Williams and Richard Hoggard worked at Birmingham University. Raymond Williams gives his views on popular culture in his essay "Culture is Ordinary" and relates culture dependency on ordinary people rather than the elite class.

Sigmund Freud, the founding father of psychoanalysis, formulated the concept of consciousness. He describes how people's consciousness depends on their social-cultural environments; for example, 'Namaste' is a greeting gesture in India, but in western countries, the person meets with a handshake. Individuals' cultural consciousness helps people to connect with their social norms and perceptions. Cultural consciousness means a deep understanding of culture and awareness of one's traditions. Collins English Dictionary defines cultural consciousness as "someone's cultural consciousness is their understandings of the differences between themselves and people from other countries or other backgrounds, especially differences in attitudes and values." Shortly, it teaches the ability to make the differences between two cultures.

Many Indian writers try to depict social and cultural realities through their writings. Sudha Murthy is a well-known educator and author who has contributed a lot to Indian English writings by picking up the themes related to social, cultural, and economic concerns. Her books offer a lot of potentials to attract global readers with her novels, folk tales, short stories, or autobiographies and provide a moral message for life. She writes about ordinary people with their life complications, and her characters represent the middle-class milieu. She admires the masses'

Culture and their everyday rituals in her works. Her books reflect Indian culture through Indian habits, regional beliefs, folk tales, and mythologies.

***The Dollar Bahu* at a glance:**

The book *Dollar Bahu* discusses the story of a middle-class family who lives in Banglore. Gouramma, the book's female protagonist, is an ambitious and passionate woman adherent to religion and Culture. She is the mother of two sons, Girish and Chandru. Girish is an honest boy who marries Vinuta, a kind-hearted schoolteacher. They both give more importance to happiness rather than money. Vinuta presents Indian spirituality in the book, but Gouramma always ignores her good qualities.

On the other hand, Gouramma's younger son Chandru is a replica of her mother. He wants to go to America to make money for a lavish life. After getting the green card from America, he marries Jamuna, an arrogant rich girl. Gouramma always praises Jamuna because she belongs to a wealthy family. When Gouramma gets a chance to go to America, she understands the difference between Indian and American cultures, and here starts the journey of her cultural awareness.

Cultural Conflicts Experienced by the Characters of *Dollar Bahu:*

In the Book *Dollar Bahu,* the title itself symbolizes cultural conflict. Sudha Murthy uses 'Hinglish' language for the book title. She combines two Languages and cultures here, i.e., English and Hindi. 'Dollar' is an English word that stands for power and strength; on the contrary, 'Bahu' is a Hindi word; it is supposed to be helpless or ineffectual. Sudha Murthy tries to discover which stances of cultural clash affect human attitudes and aptitudes.

Gouramma is the representative of the cultural materialism in the book. She connects power with money. According to her, people having more money enjoy more societal control. Gouramma is the money-centered character in the book. As she says, "The Dollar is all-powerful. You know it is the Dollar that has changed our life" (59). She is so fascinated and attracted to Dollar. There she gets a chance to experience and understand American Culture. She finds America as a different place from India. At the beginning of her journey, she is enthusiastic, excited, and amazed to see America's superstructure and high-speed cars. She utters,

What a difference between this land and India. No teeming crowds of cyclists pushing their way through, no rickshaws, cows, bulls, hand-carts: just zooming more and more cars. The Hindu epics describe different worlds like Nagaloka and Yakshaloka; this is one of them (81).

But over time, few things or incidents create juxtaposition in Gauramma's mind and heart. Her religious beliefs are shattered when she observes that the naming ceremony is only part of a formal gathering in America. Everything is pre-planned here, as Chandru and her wife selected their baby's name before birth.

But on the other side, In India, the occasion has religious and spiritual meanings. When a child is born in India, this is a happy time to the celebration for all family members. Gouramma is surprised that a week's frozen food is typical in America. But in India, she continuously learns that God gives blessings in the form of food. In her Indian consciousness, stale food is improper or unhealthy to eat.

Adults depend on their parents for education, food, and home in India. All members live together as a family. But in America, there is different living process and system. People could not punish their children because it is illegal. Gouramma became perplexed to know this; she always believes that children are their parent's assets. She is so surprised when Chandru says,

Amma, in this country, you cannot "punish" children. They will call the police. Being Indians, we do not like our children to be like American children (103).

In the context of Indian traditions, festivals are always part of people's social life. Sudha Murthy talks about the Ugadi, the regional festival of Karnataka, which celebrates the beginning of the new year. Further, people pray for good health and happiness on this pious occasion. The festival's religious context helps to understand Indian culture and values. But people spend this festival in America according to their convenience and spare time.

Indian society is a patriarchal society. There is a gendered division of work present in Indian families. It is believed in Indian society that earning money is the man's duty; furthermore, women are homemakers. According to Indian beliefs, it is disgraceful for a man to go into the kitchen for the household chores. The kitchen is considered only a happy place for women. The main thing that strikes Gouramma's unsophisticated mind is that men and women share equal responsibilities for the household work in America, and there is no difference between male and female toil. Gouramma remembers that her husband never assisted her in the kitchen, but her son Chandru helps Jamuna with everything from cooking to dishing. Now Gourmma feels so upset that she suggests to Chandru,

Please don't work in the kitchen. Don't you remember? Your father and Girish never come into the kitchen (103).

In India, marriage is a social institution that needs both sides' respect, trust, and faith. In *Dollar Bahu*, Vinita and Girish exemplify a successful marriage. Vinita tries to adjust to every situation for her husband, but Jamuna is very arrogant and selfish. She is always pretending to be a good wife. Gouramma feels so shocked to know about her real personality. She has control of everything in the house. But in America, she is a servant in her son's house. She has remaining no power to take any decision.

These bitter experiences raised awareness in her unconscious mind, and she lost all interest and charm in America. She feels separated, lonely, and nostalgic

for her Indian life. She faced culture shock when she got acquainted with the realities of American society, which is a little different and not adjustable for her. According to Felix Nayak,

when a person moves away from his own culture and imbibes another, his old values clash with the new ones he finds (Nayak,2015,p.593).

In the book, Gouramma feels the same way. Now she learns everyone has their Culture, festivals, way of living, social structure, and habits. It is challenging for immigrant people to adapt to a new environment, such as Chandru feels devastated in a foreign land. He explains his internal anxiety to Vinuta by saying:

You Vinuta, are living among your people, speaking the same language, sharing the same Culture. Your child will grow up with grandparents with the same set of values; you are not compelled to live in another country with a different language and attain climate conditions. We are in two other worlds, two different cultures: we are lonely (72).

Sudha Murty conveys through Dollar Bahu that a man feels complete when he connects with his own Culture; otherwise, guilt, identity crisis, and regret occur. Now, Gouramma realized that every person has a unique way of life, behavior patterns, institutions, and mode of perception. At last, she recognizes the importance of her own culture, the richness of traditions, and family values; as the writer explains: -

She realized that there was always greener on the other side. America was no longer a fantasy land for her. There was pain, misery, and happiness there, as in any other country. It was no longer a land of mighty Dollar, which made magic. It was not Paradise (136).

Conclusion:

The paper examines from the perspective of cultural theory and Sigmund Freud's concept of consciousness. The paper's finding is that writer depicts the immigrant experience, cultural conflicts, identity clash, and at last cultural consciousness with the help of her characters, like Gouramma and Chandru. Through her book, *Dollar Bahu*, Sudha Murthy finds about the awakening of Indian Culture and presents how social and cultural consciousness helped grasp one identity. The paper brings out the cultural conflicts of Gouramma, which she experienced in America, resulting in the realization of her Culture and traditions.

References:

Murthy, Sudha. *Dollar Bahu.*PenguinPublication,2008.

Arnold, Matthew. *Culture and Anarchy.* Oxford University Press, 2009.

Barry, Peter. *Beginning Theory: An Introduction to Literally and Cultural Theory.* Viva Books, 4th Edition, 2018.

Barker, Chris, and Emma A Jane. *Culture and Cultural Studies.* Saga Publications Ltd, 5th Ed.

Habib, M.A.R. *Modern Literary Criticism, and Theory: A History.* Blackwell Publishing, 2005.

Nayar, K. Pramod. *An Introduction to Cultural Studies.* Viva Book Private Limited, 2016.

Naik, M.k.*A History of Indian English Literature.*Sahitya Akademi,1980.

Rao, A.S. "Exploration of Indian Culture in Sudha Murthy's*Mahashweta*." ISSN No. 2347-3150.

S, Prema ,and Arputhamalar Aruna."Acculturating experience in Sudha Murty's Dollar Bahu: Beholding Cultural Shock" ISSN 25158260, Vol. 7, Issue no., 2020.

William, Raymond. "Culture is Ordinary," 1958.

❒❒❒

1. Research Scholar, Department of English and Foreign Languages, Maharshi Dayanand University, Rohtak, Haryana, Siwachmonika19@gmail.com

2. Associate Professor, C.R.A. College, Sonepat

Self Incrimination in view of Constitutional Law and Human Rights: A Light of Godhra Carnage Case

–Reema Bhattacharya
–Dr. Aqueeda Khan

The privilege against self-incrimination makes it possible to uphold human dignity and adhere to civilised norms in the administration of criminal justice by shielding individuals from having to reveal private information.

Abstract

Because scientific development has overtaken legal reform or the layperson's legal awareness, what can be entered as evidence in court is complicated. Narcotic analysis is a frighteningly widespread science in India. Narcoanalysis is a diagnostic and psychotherapy procedure in which psychotropic medicines, most often barbiturates, are used to create a coma from which mental elements with strong related affects emerge. Medical research raises various legal, medical, and ethical problems. Narcoanalysis violates Article 20 (3) of Constitution of India, for protection against self-incrimination. The media's revelation of Telgi's case files, which included a Narcoanalysis approach, generated a heated controversy. In this study, researchers put Narco's initial appearance in India's Godhara Carnage Case under the microscope. Through doctrinal methodology research, the Apex Court and High Court of India have proclaimed various precedents.

Keywords: Law, Science, Constitution, Criminal Justice System, Godhara carnage, Narco, Brain Mapping, Forensic, Medicine

1. INTRODUCTION

Science has surpassed the evolution of law or the layperson's understanding of it, making courtroom decisions problematic. In India, narcoanalysis has become popular. Narco Analysis uses psychotropic drugs, mainly barbiturates, to induce a stupor in which the therapist can exploit mental aspects with powerful sentiments. Horseley developed narcoanalysis. Narcoanalysis is illegal, dangerous, and unethical. Article 20(3) narcoanalysis? Telgi's narcoanalysis was recently in the news.

2. NARCO ANALYSIS FROM CONSTITUTIONAL & LEGAL STAND POINTS

Since semiconscious admissions are not admissible in court, these tests are prohibited. After taking into account the test's conditions, the court might approve restricted entry. In one instance, petitioners argued that judges couldn't order lie detector tests, brain mapping, or narcoanalysis against the will of the accused. Art. 20 of the Indian Constitution governs crime investigation and trial (3). It covers self-incrimination privilege. In common law criminal jurisprudence, the protection against "self incrimination" is a fundamental principle. This privilege is embodied in Art. 20(3), which states that no one accused of a crime may be forced to testify against themselves. A lot of individuals think that putting the accused through the test, as the Indian investigative agencies have done, is a gross violation of Art. 20(3), which was determined to be binding on the Constitution.

The application of the narcoanalysis test raises a fundamental concern with regard to legal issues as well as human rights. The legality of using this approach as an investigative assistance presents important concerns, such as the invasion of a person's rights, freedoms, and freedom. It must be proven that the accused in State of Bombay v. Kathikalu was forced to make a statement that was likely to implicate himself. Compulsion is defined as being under duress, which includes assaulting, threatening, or imprisoning a spouse, parent, or kid. Therefore, art. 20(3) does not apply when the accused confesses voluntarily and without being coerced, threatened, or promised anything.

The privilege against self-incrimination makes it possible to uphold human dignity and adhere to civilised norms in the administration of criminal justice by shielding individuals from having to reveal private information. It also violates the principle known as "***Nemo Tenetur se Ipsum Accusare***," which states that "No man, not even the accused himself can be compelled to answer any question, which may tend to prove him guilty of a crime, he has been accused of." If the confession given by the accused is the result of any kind of physical or moral coercion (even if it was given while they were under the influence of hypnosis), then the court ought to have the right to disregard it. The legislature has ensured that a citizen's right to avoid self-incrimination is protected within the Criminal Code. According to section 161 (2) of the Code of Criminal Procedure, every person must answer truthfully all inquiries posed by a police officer, unless the answers could lead to a criminal accusation, penalty, or forfeiture. Narcoanalysis is considered mental torture and infringes on one's right to life, which is protected by Article 21 of the European Convention on Human Rights. Invasion-of-privacy rules would ban brain fingerprinting evidence in court.

The decision in the case of Nandini Sathpathy v. P.L. Dani established the accused's right to silence during questioning; as a result of this privilege, no one may forcibly extract information from the accused (investigation). She proclaimed that Article 20(3) of the Indian Constitution and Section 161(2) of the CrPC gave her the right to remain silent. The Apex Court upheld her arguments. Additionally, tests like narcoanalysis are not thought to be highly trustworthy. In the United States of America, it was determined in the case of ***Townsend v. Sain*** that the petitioner's confession was constitutionally omitted if it was obtained by police questioning while the petitioner's will was being suppressed by a material with the properties of a truth serum.

In ***M.P.Sharma v. Satish Chandra***, The protection extends to compelled evidence obtained outside of a courtroom, the Apex Court noted, because the terms "to be a witness" and not "to appear as a witness" were used in Article 20(3). The similar concept was emphasised in the case of Kathi Kalu Oghad. The term "Right to Privacy" refers to a broad range of rights that are accepted as having an innate idea or ordered liberty. Without his permission, no one may publish anything addressing the aforementioned issues, whether it is true or false, positive or negative. If done so, it would be a violation of the person's right to privacy and would subject the offender to a lawsuit for damages. The protection of life, liberty, and freedom has been construed consistently throughout the Indian constitution, and articles 14, 19, and 21 serve as the best examples of any constitution working against the right to privacy. The Division Bench also noted that "minimal bodily harm" was involved in the testing, which is incorrect as well because carelessness in medication administration can be lethal.

The term "damage" is defined in Sections 44, 323, 324, and 328 of the Code of Criminal Procedure, with a maximum sentence of 10 years in jail. Thus, administering a narcotic substance is equivalent to causing harm. Furthermore, there is some debate regarding the validity of scientific tests. The history of article 20(3) of the constitution must be remembered. We are aware of the situation where this court granted a rule to search books in a criminal prosecution without any consideration, according to R v. Purnell.

2.1 AN INDIAN LAW-BASED NARCO-ANALYSIS

India is one democracy that uses narcoanalysis. Liberal democracies frown on narcoanalysis probes. The media and critics' newfound interest in narcoanalysis grabbed my interest because it raised several issues concerning the test's reliability as a scientific investigation tool, admissibility in court, and potential to breach test participants' privacy. Anesthesiologist, psychiatrist, clinical/forensic psychologist, audio-videographer, and nurses perform the narco analysis exam in India.

Narcoanalysis is growing prevalent in Indian law enforcement, courts, and labs. In State of Bombay v. Kathi Kalu Oghad, an eleven-judge panel ruled that self-incrimination entails providing information based on intimate knowledge and cannot be limited to formal court disclosure. In Ram Jawayya Kupar, the Supreme Court declared that the executive branch cannot violate a person's rights. In the absence of legislation, every violation of a person's fundamental rights is illegal.

The lie detection test is part of the overall power of research (Sections 160-167, Cr.P.C.). It should be stressed that it is up to the individual whether or not to consent to a polygraph test, and that decision shouldn't be made solely at the police department's whim. It must be regarded as unlawful and unconstitutional unless authorised by law. The following statement serves as an illustration of voluntary behaviour: "I want to take a lie detector test because I want to clear my name." It proves the individual's volition, but it has yet to be proven whether or not this volition was motivated by coercion. It is impossible to claim that a lie detector test was voluntary if a person is told by police, "If you want to clear your name, perform a lie detector test," or "Take a lie detector exam and we will let you go." Such statements are regarded as self-incriminating.

2.2 ADMISSIBILITY IN THE COURT

While Narcoanalysis provided a wealth of information, it also raised numerous questions, with several critics expressing deep concern about the use of serum on witnesses to extract truth. However, questions have been raised about whether it amounted to judicial testimonial compulsion and a breach of human rights, individual liberty, and freedom..

Legal experts disagree on whether or not P300 and Narco Analysis can be used as evidence in court, arguing that semiconscious confessions are not acceptable. In 2002, India's first use of narcoanalysis occurred during the Godhra massacre when On February 26, 2002, a Sabarmati Express coach was set ablaze by a mob at the Godhra train station, killing 59 people. This subject gained considerable attention during the well-known Arun Bhatt kidnapping case in Gujarat, in which the accused refused to submit to a narco-analysis and instead appeared before the NHRC and the Supreme Court of India. The Telgi stamp paper scam resurfaced in December 2003 when Abdul Karim Telgi was tested. Even though Telgi offered a lot of evidence, its admissibility was questioned.. In a landmark ruling in the case of ***Ramchandra Reddy v. State of Maharashtra***, The legality of the P300, or Brain Fingerprinting and Narco Analysis Test, was upheld by the Bombay High Court. The investigation of drug use has taken centre stage in the wake of the notorious Nithari village (Noida) serial murders. Narcoanalysis was performed on Mohinder Singh Pandher and Surendra Kohli, the two major suspects in the Nithari serial murders. Surendra Kohli and Mohinder Singh Pandher were the main suspects.

The Supreme Court of India stopped a metropolitan judge from narcoanalyzing K. Venkateswara Rao in the ***Krushi Cooperative Urban Bank case*** in 2006, indicating that a decision on the constitutionality of narcoanalysis will soon be made. A court order was required to address the situation since Mr. Rao refused to sign the consent form and the Forensic Science Laboratory in Gandhinagar refused to conduct the narco-analysis test without a consent form that was correctly completed and signed. The Supreme Court has not yet issued its decision.

3. NARCOTEST CRITICISM

Despite its widespread use, narcoanalysis has been criticised for its alleged inaccuracy. Several people were found to have given quite obviously fraudulent information. A number of people were found to have made patently fraudulent statements. To be effective, the interview must be conducted by a trained professional who knows how to ask questions that are both timely and informative.

With a narcoanalysis, long-lost memories of the suspect can be rediscovered. If this test is used to determine guilt, the results may be suspect. Narcoanalysis has potential medical applications, including the management of psychiatric disorders. It is unethical to employ a polygraph examination in a criminal investigation unless the defendant has given his or her informed agreement to the procedure.

4. RIGHT TO SELF-INCRIMINATION- CONTRARY TO THE PUBLIC INTEREST

The employment of the Narco analysis test as a tool to gather data and support research is another justification for its legality, as it does not amount to testimonial compulsion. When improved, narcoanalysis may offer a kind and efficient substitute for third-degree methods. The investigating officer must take care not to abuse or misuse this technique, and it must be used in conjunction with supporting evidence. In ***Dinesh Dalmia v. the State of Madras***, the Madras High Court found that polygyny is an acceptable scientific indicator of guilt. It would not be considered breaking his silence forcibly if the accused underwent a narcoanalysis or brain mapping test to elicit the truth.

The paradox of contemporary legal doctrine is that while numerous knowledgeable attorneys are employed to protect the rights of the accused, no one is available to protect the cause and interests of the general people. The Krushi and Charminar Bank Scam pushed hundreds of depositors to the edge of bankruptcy and suicide after they lost their life savings and money set aside for their children's schooling, their weddings, and their retirements. On the other hand, when the M.D. of Krushi Bank was arrested, he refused to submit to a drug test.

When a narcoanalysis test is required for an accused or witness in a severe crime, it opens the door to strengthening the evidence system and improving the quality of criminal justice. This change will result in a qualitative shift in the criminal justice system, with former police station execution rooms being replaced by

operating rooms that deliver truth serum to criminals, giving some optimism that justice will be done.

5. CONCLUSION/SUGGESTION

The development of law is an ongoing, dynamic process that adapts to new understandings of society, science, ethics, and other topics. As long as they do not violate fundamental legal principles and are for the benefit of society, new scientific findings and advancements should be included into the legal system. In India, there has been a lot of discussion on the topic of employing narco analysis tests as a method of interrogation. In the not-too-distant future, certain aspects of it, such as the degree to which it is acknowledged in our legal system and our culture, will become more transparent. Several high court rulings have confirmed the reliability of narco analysis. Judgments like this stand in stark contrast to prior Supreme Court rulings that interpreted Art. 20(3). The truth is that in the Indian criminal court system, Narco analysis is still in its infancy and is not governed by any laws or guidelines. In order to protect India's dedication to individual freedoms and a transparent criminal justice system, the Central government must adopt a firm stance on narco analysis policy.

References:

1. Akbaruddin Owaisi vs The Govt. Of A.P. Rep 2005 Cri Lj 150, Journal section
2. Crimal Law Journal Edition July 2006 ,page 2401
3. https://ijlpp.com/a-case-analysis-of-the-state-of-bombay-v-kathi-kalu-oghad-and-ors-air-1961-sc-1808/ Accessed on 30th October 2022
4. J.M MacDonald, Narcoanalysis and Criminal Law, 1954 Edition
5. M. P. Sharma And Others vs Satish Chandra, AIR 1954 SC 300
6. Nandini Satpathy vs Dani (P.L.) And Anr AIR 1978 SC 1025
7. P.Ramanahaa Aiyer Law Lexicon,2nd edn,p.1689
8. P.Ramanahaa Aiyer Law Lexicon,2nd edn,p.1689
9. R v. Purnell , (1748) 1 Wm Bl 37
10. Rai Sahib Ram Jawaya Kapur And Ors. vs The State Of Punjab , 1955(2) SCR 225
11. See Kharak singh's case ,1964(1)SCR332
12. State of Bombay v. Kathi Kalu Oghad, AIR 1961 SC 1808
13. The Hindu 21st Jan,2006, https://frontline.thehindu.com/magazine/2006/, Accessed on 20th September 2022
14. The State Of Bombay vs Kathi Kalu Oghad And Others, AIR 1961 Cri LJ , Vol 2, 2007
15. Townsend v. Sain 372 US 293 (1963)

❒❒❒

1. Bhattacharya Research Scholar, Ph.D. in Law, Amity Law School, Amity University, Noida
2. Associate Professor, Amity Law School, Amity University, Noida

Research Article

Perceiving Marriage Through Virmati's Life in Manju Kapur's Difficult Daughters

–Prikshit Singh
–Dr. Naresh Rathee

As a way out of an unfulfilling marriage, the professor's connection to her is also a source of isolation and confinement because of the way their relationship is kept under wraps. It takes a long time to build the self-confidence essential to develop one's own business.

Abstract

Marriage creates a hole in life, nothing more than a confused sense of loss. This sense of identity crisis and the resulting anxiety has been critical for the contemporary woman's existential perspective. This quest for identification serves as the novel's leitmotif. Her heroine is befuddled; she is always on the run from what she does not understand. She engages in a crazy race, whether in her educational pursuits or marital modifications. She lacks focus in her head. Regrettably, she encounters discord and failure. Her existence crumbles under the weight of illusions, disappointments, social expectations, and an unknown future, all of which wreak havoc on her brain. This explains her scepticism toward established social standards and even against existence. It allows her to rebel against societal and family norms and pursue her identity search.

Keywords: Marital, Modifications, Disappointments, Indomitable, Family, Identity.

Manju Kapur exposes patriarchal society's constraints and praises women's rebellion against conventions and restrictions. *Difficult Daughters* (1998) is the story of Virmati, a woman from an 'austere household' who demonstrates indomitable courage in defying her parents' and family's authority to marry Harish, an Oxford-educated professor, and father of two children, but who reveals herself to be a pale, insipid shadow of a woman when it comes to asserting herself before her lover. The eternal female aspires to be like her man, whereas the eternal male is concerned with his wants and desires. Harish's behaviour from the start indicates that Virmati is a means to a goal. Throughout her struggle to preserve

the parochial community, the girl is left alone. Virmati is expected to be available to Harish at all times, despite the constraints put on her.

Virmati's sexuality is a stumbling point in her life. She is a pre-adolescent who is susceptible to the psychological issues associated with her age. On the other hand, the professor is mature and provides "a little bit of himself" in the form of lending books, pressuring her to stay for tea, and bestowing appreciative glances on her. Tired of the day's work and child care, the professor's attention makes her feel desired and cherished, transporting her into the realm of romance. The professor's strategy of working his way through her inhibitions is typical of lovers' traps, but Virmati's immaturity and possibly sameness in life prevent her from seeing this.

Love injects new vitality and enthusiasm into her existence. When Virmati visits Lahore, the professor initially implores her through letters and eventually convinces her to change her mind about not seeing him. Lahore acts as a gathering point for them rather than a study centre. Virmati defers to the professor's judgment (Agarwal 76). Though Virmati is never without moral reservations, she likes the natural culmination of her body. When she is not with him, she mentally recreates those moments of connection. Indeed, Virmati plays a critical part in her demise. It is her sexual satisfaction, a need she is aware is ethically wrong but cannot overcome.

Virmati admits to Swarna Lata her mental condition. "When Harish is here, I am unable to think about anything else. And when he is not present, all I can do is wait for him" (Kapur 140). She despises this concealed insecurity, the dread of being noticed. Her existence continues in the same unending, infinite, shapeless, and terrible fashion. Her sexual desire has drawn her into the treacherous territory of illicit love for Harish. Virmati's ambitions of independence and her battle for a cause are still not hers. After her voyage, she discovers that her mouth remains bound and is still expected to follow and never lead. She realizes on the very first day of her marriage, "She would walk tight-lipped and silent down the route that fate had mapped out for her".

As a way out of an unfulfilling marriage, the professor's connection to her is also a source of isolation and confinement because of the way their relationship is kept under wraps. It takes a long time to build the self-confidence essential to develop one's own business. As the second wife, she must combat social exclusion from the outside world and compete for the kitchen and marital bed with Ganga, the first wife.

Harish is, in fact, responsible for Virmati's bidirectional pull. She refuses to marry Inderjit, a Canal Engineer since she is trapped in hopeless illicit love. She first believes Harish is intimidating but eventually torn between education and

marriage. When Virmati raises her cudgels against male chauvinism, she comes off as aggressive, vocal, resolute, and action-oriented, yet she is well aware of the futility of her forbidden love. She becomes a penumbra in her husband's company, a cast shadow, as she ceases to use her rights and freedoms. Though the social contempt is not stated overtly, she seems to shrink into isolation, silence, and withdrawal.

Professor embrace no longer offer her any consolation. Virmati believes his affection for her is only carnal. He needs her companionship in order to inflate his ego. The readers perceive that she gradually loses her self-esteem; her energy is devoted to gratifying him while she stays parched. She aims for a broader spectrum and canvas throughout her time in Lahore, when she becomes involved in trashy love affairs and unwed pregnancy. It is not only her desire to have sex with Harish but also her desire to be free from the patriarchal limitations of her Indian family that she is fighting against. Indeed, Virmati's spiritual journey is to liberate herself from the rigid conventions of conventional society and embrace the professor's sensuous ideals.

Harish's abuse takes another toll in the form of rape just before he is compelled to marry Virmati. He will not relinquish his loving dictatorship until he has sealed all exits for Virmati from his life. After graduating from BT, Virmati is offered a position as a teacher at Pratibha Kanya Vidyalaya in Sirmaur's hill state (Agarwal 121). Harish makes his first unsuccessful foray into Virmati's teaching life. However, the second time he sees her in the dead of night, he succeeds in completely shattering Virmati's forte. He forces his way into her hut and makes love without first obtaining Virmati's permission.

Despite Virmati's protests, Harish quenches his thirst with the ferocity of a beast. This encounter alters Virmati's outlook on life. Her conditioning that a woman's worth is determined by the guy who touches her wreaked havoc on her life. She ruminates on the fact that "She was his for life, regardless of whether he married her or not." He had left his imprint on her body; she could never look elsewhere, never imagine any option" (Kapur 177). Virmati is incensed with herself. She is self-hating. She moves from location to location as though fleeing from life. She strives but fails to grasp life in the palms of her hands. She has no control over the past, and the present holds no promise for her. "How many fresh beginnings has her friendship with the professor resulted in?" she wonders.

Virmati becomes pregnant as a consequence of her romance with Harish. However, she is required to terminate the kid. She is offended not just as a woman but also as a mother. She views it as liberation from something heinous. "Nothing was hers, not her body, nor her future," she realizes (Kapur 174). It is difficult for her to accept the elders' censure unquestioningly. In her instance, free education

was pointless and empty. Her free life in Lahore and other cities has been similarly extravagant. When she is aborted, she experiences isolation at the hands of both herself and her boyfriend. When Diwan Sahib discharges her in Nahan, she is accompanied only Swarna.

Their marriage eventually takes place at the home of Harish's buddy. After marrying him, Virmati knows, rather than feels, "that the load of the preceding five years had been removed" (Kapur 202), and "she was thrilled to finally find a discernible pattern in her life". On the other side, she is sure that her parents or grandparents will never forgive her. The rejection process that began with her suicide attempt in Tarsikka would end. Upon returning home and being addressed as "Gandi lady" by family members, Virmati is compelled to admit, "I should never have married you... and it is already too late".

Virmati's life has become a burden. In Harish's home, she tries to assist Chhotti, Harish's daughter, with her schoolwork, but no one wants her assistance. She attempts to entice Giridhar, Harish's kid, by teaching him to sketch, but the outcome is, "Who invited you to cause problems where you are not wanted?" (Kapur 219). Virmati is unwelcome in the household. She visits her parents after her marriage to Harish. "You have completely blackened our face!" her mother exclaims. Her new residence is described as a "cheap, dishonoured residence". Her links to the family are severed due to all this care, worry, sacrifice, and duty. When her father is killed in a communal riot, Virmati visits him but is rejected by her family. She maintains a peripheral position, leaning slightly against the wall to escape everyone's gaze.

The writer addresses the problem of women in a male-dominated culture where males make the rules governing women, and a spouse serves as sheltering tree' beneath which a woman demonstrates her fortitude through her sufferings. Professor Harish considers Virmati an integral component of his physical, emotional, intellectual, and spiritual fulfilment. According to Hasin, "a man-woman relationship outside of a social framework has all the attitudes and values associated with culture" (Hasin 12). Virmati is oblivious to the subtle patterns that underpin the Professor's attractive appearance and appealing words. She readily acknowledges as much, stating, "When he spoke and looked like that, she was powerless to dispute; she had to show she trusted him" (Kapur 172).

Kapur does not dwell on establishing Virmati's correct steps; instead, she attempts to portray her inner thoughts, pains, and perplexity as a co-wife. Women are uninterested in monetary or physical pleasures in *Difficult Daughters*. Virmati engages in an unlawful relationship with Harish, yet she also forgives in her heart. Virmati's illegal love attraction may be compared to the fresh yearning of a new woman, as Betty Friedan discusses in her book. Women lack the guts to confess

that married life is tiring and challenging. The family's leaders are all cogs in a wheel of existence that their male spouses do not operate.

After Virmati's failed suicide attempt in Tarsikka to escape from the marriage with Inderjit and continue the love affair with Harish, she decides to go to Lahore to do BT. "As an escape from the reproaches of her family and her mother's silent disapproval" (Hasin 134). Virmani's revolt against deep-rooted family tradition finally results in her parents getting their second daughter married to an engineer to whom Virmati has been betrothed and permitting her to travel to Lahore to continue higher studies.

Manju Kapur expresses her uncertainty concerning the position of women in the Indian social scenario. No matter how much a woman attains her education to establish her identity, her conventional domestic life is the only determinate evaluated and estimated (Mukul 112). The novel also registers the rigidness of society on women and how they are stigmatized and disreputed if they do not pursue society's protocol and decorum. Manju Kapur also examines which perfect combination of domestic bliss and intellectual fulfilment can ensure a woman's respect and happiness.

References:

Agarwal, B.R. *Indian English Literature and Crisis in Value System, A Study of Difficult Daughters by Manju Kapur*. New Delhi, Sarup and Sons, 2007.

Barbuddhe, Satish. *Manju Kapur's Difficult Daughters, A Powerful Story of Man-Woman Relationship*. The Commonwealth Review. 2008.

Chakravarty, Joya. *A Study of Difficult Daughters and A Married Woman*. New Delhi, Sarup and Sons. 2006.

Choubey, Asha. *Love in Difficult Daughters*. *The Quest*. Dec 2003.

Shobha, De**.** *Strange Obsession*. New Delhi, Penguin, 1992.

Hasin, Attia. *Sunlight on A Broken Column*, New Delhi, Arnold Heinemann, 1987.

Kapur, Manju. *Difficult Daughters*. England, Faber and Faber, 1998.

Malik, Seema. *Crossing Patriarchal Threshold, Glimpses of the Incipient New Woman in Manju Kapur's Difficult Daughters*. New Delhi, Prestige Books, 2001.

Mukul, Kewasan. *50 Years of Indian Writing*. New Delhi, Indian Association for English Studies. 2000.

Naik, M.K. *A History of Indian English Literature.* New Delhi, Sahitya Akademi, 2010.

Prasad, Amar Nath. *Indian Women Novelists in English*. New Delhi, Atlantic Publishers and Distributors, 2001.

Rishi, Jaydeep. *Mother-Daughter Relationship in Manju Kapur's Difficult Daughter*. New Delhi, Sarup and Sons, 2002.

Roy, Anuradha. *Patterns of Feminist Consciousness*. New Delhi, Prestige Books, 1999.

Singh, Shaleen Kumar. *Tradition Versus Modernity in Difficult Daughters*. New Delhi, Sarup and Sons. 2010.

❑❑❑

1. Research Scholar, Department of English and Foreign Languages, Maharshi Dayanand University, Rohtak, prikshitsinghpsp@gmail.com
2. Associate Professor, C.R.A College, Sonipat

Research Article

Articifical Intelligence in Digital Marketing: Applications and Challenges

–Partho Banerjee
–Dr. Akhilesh Upadhyay

Digital marketing is the practice of promoting goods or services via digital channels like the Internet, mobile devices, display ads, and other digital media. SEO, content creation, influencer marketing, and automated content are all growing in popularity as technology progresses. In 2021, Bansal et al. Digital marketing is increasingly encompassing offline approaches that offer digital media.

Abstract

Through the use of electronic services, digital marketing has been able to provide value for businesses and boost customer engagement. With the development of technology, a brand-new, very competitive industry for digital marketing has developed. Marketers all across the world utilize digital technology to increase the effectiveness of their businesses and the level of customer service they offer.

Objectives: In this study, we tried to highlight how artificial intelligence may be used in digital marketing, as well as the difficulties that could come up when doing so.

Methodology : The current study uses a descriptive methodology. Several secondary sources were used to compile the data. A thorough review of the literature was conducted using a variety of resources, including journals, books, and the internet.

Ramifications: Because this study contributes to the body of knowledge already available on the use of artificial intelligence in digital marketing and helps professionals understand its uses and difficulties, it has implications for both academics and businesses.

Keywords: Digital Marketing, Artificial intelligence, Marketing platforms, Business

INTRODUCTION

Technology known as artificial intelligence (AI) enables computers or machines to think like people and carry out tasks that are similar to those carried out by the human brain. Nowadays, artificial intelligence and technological breakthroughs are practically used in every aspect of life. It has been utilized along with digital marketing to assist businesses in reaching out to customers when they should be.”

Marketers are able to handle a lot of data processing while meeting customer expectations. The application of AI to guarantee consumer happiness has already occurred. India's use of the internet is expanding, which enables new business opportunities. The current era's extensive field of artificial intelligence (AI) which makes use of cutting-edge methods to extract perspectives from massive amounts of data. Teaching robots to practice is the fundamental tenet of AI handle issues that are encountered frequently.

ARTIFICIAL INTELLIGENCE

AI is defined as intelligence that is superior to human intelligence. A system of intelligent agent robots that represents AI examines the environment in order to achieve its aim. Any machine that needs to think and act like a human in order to learn and solve issues is said to have artificial intelligence. These characteristics set artificial intelligence apart. For some people, a repetitive task may grow boring or uninteresting. On the other hand, no task as challenging as this will ever be required of anyone. An artificially intelligent machine is always carrying out menial tasks for people. Artificial intelligence provides crucial consumer insight into behavior, which is essential for drawing in and retaining customers. The total experience is redefined by artificial intelligence, which suggests the customer's subsequent action. Techniques utilizing artificial intelligence are helpful for figuring out client expectations and charting a strategy for the future. 2020 (Ambati) Artificial intelligence is used in a variety of business-related situations nowadays. Practitioners and scholars agree that AI is the future of our society. The world has transformed into a complicated web of network links as technology has advanced. The application of technology resulted in an investment in AI for big-data analytics to generate market intelligence. In many different businesses, AI is used. There are many applications for AI. The customer's next move is suggested by AI, which redefines the entire experience. Techniques utilizing artificial intelligence are helpful for figuring out client expectations and charting a strategy for the future. Artificial intelligence (AI) is used in a variety of business contexts nowadays. Practitioners and scholars agree that AI is the future of our civilization. AI is already applied in many different sectors of the economy. People now frequently engage with AI in some form on a daily basis.

DIGITAL MARKETING

All marketing initiatives that rely on a technological device or the internet are considered to be part of digital marketing. Businesses engage with present and potential customers using digital channels like web pages, social networks, email, and their sites. A range of digital strategies and networks are used in digital marketing to connect with customers where they spend a lot of time: online. (Desai 2019) Digital marketing encompasses a wide range of techniques, from a company's

website to its online branding assets, internet marketing, e-mail marketing, digital brochures, and more.

Digital marketing is the practice of promoting goods or services via digital channels like the Internet, mobile devices, display ads, and other digital media. SEO, content creation, influencer marketing, and automated content are all growing in popularity as technology progresses. In 2021, Bansal et al. Digital marketing is increasingly encompassing offline approaches that offer digital media.

Digital marketing is identical to traditional marketing, with the exception of the manner of interacting with clients. In its most basic form, digital marketing leverages internet access as a quick, simple, and affordable mode of engagement to carry out the fundamental marketing categories. First-time marketers who are capable of promoting certain goods or services as well as implementing various techniques to hasten the marketing process's speedy Internet expansion.

The following are the methods of digital marketing:

Figure:1 Digital Marketing Methods

- **Search Engine Optimization:** The process of building and improving a website's position in search engine results pages in order to attract more natural traffic. Infographics, blogs, and webpages all benefit from SEO.
- **Social Media Marketing:** This tactic uses social media to promote your brand and content in order to increase brand recognition, attract customers, and provide leads for your company. Twitter, for example, is a form of social media marketing. In 2014, Bansal et al.

- **Content Marketing:** Information marketing is the process of creating and distributing content with the aim of enhancing brand visibility, traffic, lead generation, and customer acquisition. 2020 (Bruyn et al.)
- **Affiliate marketing:** Affiliate marketing is a form of success advertising where you are compensated for promoting the products or services of others on a website. One of its strategies is to host video advertising.
- **Pay-Per-Click:** Pay-Per-Click is a method of boosting internet traffic that involves compensating a publication each time an ad is clicked. Google Ad Words, one of the most well-known PPC platforms, allows you to pay for prominent positions on Google's search engine results pages dependent on how frequently people click on your links. Paid advertisements on social media sites are a part of PPC.

LITERATURE REVIEW

- **Desai (2019) :** The focus of Desai was on developing a conceptual understanding of digital marketing, how it helps modern firms, and a few case studies that served as illustrations.
- **Ambati (2020):** Writing from the perspective of an employee, understood the factors that improve the acceptability of technology and AI techniques in businesses. To achieve their goal, the authors employ semi-structured interviews and grounded theory. Executives can build design-specific policies for its execution with the help of emerging factors that boost AI adaption in an organization, whether they are positive or negative.
- **Bruyn et al. (2020) :** We looked at the challenges and potential of AI in marketing in light of research on the perspectives of knowledge generation and knowledge transmission. Also highlighted were the issues and risks associated with technology. Marketing professionals need to know when to implement AI in their company.
- **Wisetsri et al. (2021):** Wisetsri et alsystematic's literature study from 2021 emphasized the value of AI in marketing and paved the road for further research for further research. The literature published between 1982 and 2020 was examined in this study utilizing bibliometric, conceptual, and to offer a comprehensive examination of AI in marketing, use intellectual network analysis.
- **Kumar & Thilagavathy (2021):** Due to impending trends, Kumar and Thilagavathy concentrated on the intriguing and expanding interaction between digital marketing and artificial intelligence (AI) even while providing AI engagement techniques for app development. The study's objective was to gain a thorough understanding of how employees felt about AI in order to identify factors that may affect its adoption in the workplace.

- **Hassan (2021):** He looked into the connection between artificial intelligence (AI) and the digital marketing sector, highlighting the most significant applications of AI in this area**.**
- **Han et al. (2021**): The difficulties of AI-enabled B2B marketing innovation and the many functions of AI in this context were discussed by Han et al. in 2021. This study investigated the potential applications of AI in B2B marketing innovation.

OBJECTIVES AND METHODOLOGY

The study aims at achieving following objectives:

1. To study the applications of AI in digital marketing.
2. To study the challenges in using AI in digital marketing.

This study makes use of secondary data that has been acquired from numerous websites, journals, books, and other available e-content to accomplish the aforementioned aims.

APPLICATIONS OF ARTIFICIAL INTELLIGENCE IN DIGITAL MARKETING

- **Locating marketing authorities and influencers**

  There isn't enough time to create relevant lists or assign a different message to each influencer given how marketing gurus now interact with influencers and social media. In addition to prior posts that influencers have written, how competitors handle influencers when launching product campaigns, and how influencers are classified with greater numbers of feedback/outcome and influence using Artificial Intelligence technology, influencers' comments can be analyzed to assess their influence.
- **Professional content creation**

  The key area in which artificial intelligence (AI) can have a big impact on content development and marketing is based on data collected from consumers. Like AI, augmented reality can be used to provide customers additional ways to see an item before they buy it. Customers may therefore comprehend the decision-making process clearly as a result. In 2021, Han et al. coined the meaning of AI in Digital Marketing in a 367-word assessment of the pre-purchase product that enhances consumer happiness and encourages customer response.
- **More accurate data about customers and their behavior to understand brand image**

  It's important to know how customers feel. AI empowers marketers to make decisions based on information about consumers and their behavior, the effectiveness of campaigns, and social listening by enabling sentiment analysis, a significant area of social media techniques to determine post-purchase

reactions of customers about the product, service, or brand. Wisetri and associates, 2021

- **Campaign success metrics**
  Machine learning helps an AI method gather sufficient data about user behavior and provides a database based on users' interests; the process also produces accurate results.
- **Estimating sales**
  A volatile market can occasionally lead to very significant changes in enterprises, as the Great Recession of 2008 demonstrated. Artificial intelligence, on the other hand, makes it simpler to anticipate future market trends, enabling the adoption of important digital marketing trends while saving time and labor.
- **Improved marketing Advertising is necessary for branding**
  Advertisers frequently create ads that have nothing to do with their companies. Additionally, as artificial intelligence (AI) gathers and analyzes user data and forecasts user behavior, marketers can tailor their adverts to their target audience's preferences. They would get customized advertisements based on their preferences.
- **Reducetime**
  It takes a long time and a lot of work to become an expert in marketing. In this industry, it takes a lot of effort to schedule meetings, write press releases, analyze data, and maintain strategic client statistics. Humans undoubtedly make mistakes when given such a difficult task. According to current technology, artificial intelligence (AI) can aid in these repetitive tasks by enabling machine learning techniques to collect and multiply data with more accuracy. To help marketing staff members make better use of their time, provide more creative client solutions that give them more chances to develop new skills, and streamline their work rather than spend more than half of their time auditing data, which currently takes up more than half of their time.
- **Harmony between creativity and science**
  Marketers will need to be data gurus in order to understand how to target consumers' consumption and lifestyles. Marketing will increasingly depend on data analysis, and any business that doesn't use data wisely will be at a disadvantage. Marketers should mix data and creativity, a strategy that has historically supported marketing campaigns, to predict future trends, acquire new customers, guarantee that programs are engaging to end users, and avoid unthinking management of raw data

ARTIFICIAL INTELLIGENCE IN DIGITAL MARKETING: PROBLEMS AND SOLUTIONS.

- **To expand the audience**

Artificial intelligence can help marketers better engage potential customers who fit their existing customer profiles. The marketing team can analyze and sort through a sizable amount of data by using a combination of customer preferences, buying patterns, and past transactions. By enabling businesses to develop extremely effective email marketing, marketing content, social media marketing, and SEO campaigns that would not be possible without AI's processing capacity, this increases marketing efficiency. Kumar and Thilagavathy, 2021

- **Customer adherence**

  The hardest part of gaining new clients is keeping them happy. The success of any business depends on its existing clients, so offering value and helpful material is just the beginning. Through the use of digital marketing tools, artificial intelligence enables businesses to give individualized, customer-focused service, make personalized suggestions, stay current with minimal input, and distribute content tailored to their target audience.

- **A rise in productivity**

  You can cut costs while improving efficiency using a chatbot. All clients receive personalized information from chatbots, either in real time or in a kind and helpful manner. Artificial intelligence (AI) offers increased productivity while enhancing user experience through customization and appropriate timing. For the majority of consumers, chatting with a chatbot is becoming more and more popular and cozy. Hassan in 2021.

CONCLUSION

These days, businesses are changing the way they operate to become more competitive, responsive, and productive. Artificial intelligence is a tool that marketers may utilize to realize potential personalization and relevance. Artificial intelligence will change how people engage with information, technology, companies, and services. Applications of AI will raise the caliber of the marketing product. It is skilled at compiling data from "social media" and organizing it to carry out tasks more quickly and accurately than humans. The world of the future is being built with the help of artificial intelligence.

References:

[1] The authors of "Factors Influencing the Adoption of Artificial Intelligence in Organizations - From an Employee's Perspective" are Loknath Sai Ambati, Kanthi Narukonda, Giridhar Reddy Bojja, and David Bishop (2020). Proceedings from MWAIS 2020. 20. Aisel.Aisnet.org/mwais2020/20

[2] Dadhich, V., Masood, R., and Bansal, R. (2014). Social Media Marketing: An Innovative Marketing Tool Journal of Organizational Management, 3(1, January 2014), 1–7 (An International Journal of HATAM Publishers, Malaysia).

[3] R. Bansal, A. Painoli, R. Singh, & A. Kukreti (2021). Impact of Digital Marketing on Young People's Purchasing Behavior with Particular Reference to Uttarakhand State. pages.

162-182 of the book “Big Analytics for Improved Accuracy, Efficiency and Decision Making in Digital Marketing.” USA IGI Global

[4] Brock, J. K. U., Beh, Y. S., von Wangenheim, F., Viswanathan, V., de Bruyn, A. (2020). Marketing and artificial intelligence: Risks and Opportunities. 51, 91–105, Journal of Interactive Marketing. https://doi.org/10.1016/j.intmar.2020.04.007

[5] V. Desai (2019). Review of digital marketing. Journal of Trend in Scientific Research and Development International (IJTSRD).

[6] Tan, K. H., Dwivedi, Y. K., Zhan, Y., and Wang all contributed to this study (2021). synthetic intelligence (AI) Business-to-business marketing: a bibliometric review of the state, trajectory, and future of the field Industrial Management & Data Systems, 121(12), 2467–2497. https://doi.org/10.1108/imds-05–2021– 0300 Hassan, A.

[7] (2021). A review of artificial intelligence’s use in digital marketing Implementations of 357–383 in Artificial Intelligence in Business, Education, and Healthcare (DOI: 10.1007/3-030- 72080-3 20

[8] Thilagavathy, N., and E. P. Kumar (2021). An overview of artificial intelligence in digital marketing. Nat. Essential Oils & Volatiles, 8 (5).

[9] Wisetsri, W., t S. R., Aarthy C. J., V. Thakur, D. Pandey, & K. Gulati (2021). Systematic Evaluation, Future.

❐ ❐ ❐

1. Research Scholar, Institute : JS University, Shikohabad, Guide - Dr. Akhilesh Upadhyay, Email: parthobanerjee.143@gmail.com

Exploring Space, Identity and Family Values in Vivek Shanbagh's *Ghachar Ghochar*

–Manish
–Dr. Anu Rathee

The mass population of Haryana has preserved their classical social traditions in the form of folk songs and they participate in these songs with an unparalleled delight. Also, the celebration of different festivals with boundless enthusiasm and traditional fervor represents the significant influence of cultural history on its subjects.

Abstract:

Shanbagh's critically acclaimed novella, *Ghachar Ghochar,* has been translated by Srinath Perur from Kannada to English. The title *Ghachar Ghochar* precisely summarises the Narrator's status quo. **This paper attempts to explore the concepts of space identity and family values as presented by Shanbagh in his psychological novella *Ghachar Ghochar.* This novella showcases that identity cannot be defined in concrete terms and is subject to various factors. This paper also aims to comprehend the parallel between the physical and the psychological space of the characters in the novella.**

Keywords: space, identity, family, violence, values

Introduction

Vivek Shanbagh is an Indian fiction writer and playwright who writes in Kannada. He has to his credit- five short story collections, two dramas, and three novels. He has also edited two anthologies. **Shanbagh** primarily writes in Kannada, but his works have been translated into English and other Indian languages. Shanbagh's writings have appeared in *Granta, Seminar, Out of Print* and *Indian Literature*. Many of Shanbagh's stories have been adapted for the stage, and "Nirvana" has been adapted into a short film. He founded the pioneering Kannada literary journal *Desha Kaala* and edited it for seven years.

Shanbagh's critically acclaimed novella, *Ghachar Ghochar,* has been translated by Srinath Perur from Kannada to English. The title *Ghachar Ghochar*

precisely summarises the Narrator's status quo. A lucid description of the scene towards the end of the novella illustrates the complex predicaments from which it derives its title. It is a novella and a psychological fiction drama set in Bengaluru.

The novella opens with the anonymous Narrator sitting at the Coffee House, musing over the restaurant's past over the years. The use of short sentences lends itself to an expressive and distressing narrative. The Narrator's father returns from his job as a salesman one day with the distressing news of his forced retirement from the company. Subsequently, Chikkappa, the Narrator's uncle, creates *Sona Masala* with the start-up capital provided by his brother's savings. This newly built business catapults the family into a strange new house and even less familiar prosperity.

The unexpected and bewildering turn in their fortune is not entirely a good thing. The family, who was earlier used to the Appa's modest monthly salary, finds its earlier life and balance rapidly eroding on exposure to the luxurious lifestyle served by their rapidly growing business. Changes in material wealth parallelly alter the emotional fabric of their lives. For instance, in moving from the old house to the new, they barter away their intimacy and familiarity of living in close quarters for the "cells of individual rooms" (58), where they could retreat after a conflict. In this new environment, they are surrounded by an unknown threat, and the possibility of peace seems like a passing mirage.

The Narrator's family goes from occupying a space similar to the proletariats to the bourgeois placed in urban Bengaluru. The family's strenuous transition from their old small space to a new bigger space reflects this conflict. Their first house is a small, confined space in which there is a sense of closeness among the family members. Regardless of their low income, their life had a strong moral underpinning. The second and bigger house increases the distance between the family members. When the Narrator hears his sister crying over her separation from her husband, he chooses to ignore her and retire to his room. Their evolution from one space to another reinforces the influential qualities of possessing money and the effects of mobility that capitalism brings. The second house is large in its physical space, but even in such a large space, there is a growing sense of claustrophobia and lack of privacy. The change in their living space also changes their values.

Chikkappa, with his shady business, becomes the focal point of the family around whom everyone functions. The unnamed male narrator when observes his family's world intimately and pronounces that "it's not we who control money, it's the money that controls us. When there's only a little, it behaves meekly; when it grows it becomes brash and has its way with us."(58)

A prominent Marxist feminist, Maria Mies, gives the background of the historic confinement of women to domestic structures within established structures of

capitalism. According to her, it is essential to support the engagements of men outside of society because otherwise, it would expose their ways to the world and leave them vulnerable and defenceless. She states:

Patriarchy and Accumulation on a World Scale' states that 'the bourgeoisie first withdrew 'their' women from this public sphere and shut them into their cosy 'homes' from where they could not interfere in the war-mongering, moneymaking and the politicking of the men. (104)

The women characters, such as Anita or Malati, are constantly subjugated to threats when they seem to disturb the ideological foundation of the family they are married into. They find themselves in constant revolt against the traditions of their new families. Chitra is another bold character who is the Narrator's friend and works with a women's welfare organisation. The first story Chitra narrates to the Narrator is about a case she is handling. Chitra tells him about the woman whose mother-in-law turns her out in the middle of the night and that she has to spend the night outside. She says, "while the woman shivered outside, her husband and his parents and sister all slept warm in their blankets…. At dawn, she hid her shame from the milkman by pretending she was waiting for the milk."(14)

Even amongst the feminine identities, there is a contradiction. The Narrator's mother and sister strongly support the male members, who are the bread earners for the family, while maintaining angst and psychological torture against the women who are outsiders to the house. The patriarch of the family, Venkatachala or Chikkappa's power, is portrayed through the seamless acts of organising his clothing or putting his things back in their designated places. As when the Narrator reveals his Chikkappa can "fling his clothes in the bathroom or in a corner of his bedroom or anywhere at all in the house, and they'll materialise washed and ironed in his room,"(18) it reinforces his power and the pain the women take to satisfy Chikkappa. Malati's relationship with Chikkappa is exceptionally strong and exposes the selective insubordination to other men at her in-law's home is only possible because of Chikkappa's support and her family's wealth indirectly. Chikkapa addresses Malati as Queen M and she in return calls him Jugnu. When Malati get in conflict with her husband, Chikkappa sends thugs to intimidate her in-laws.

Malati and Amma defend him when Tuvvi, his formerly unknown mistress visits him and they greet her with abuses and violently threaten her to leave. The Chikkappa's commitment to work and his initial idea of starting the business of Sona Masala symbolises power and wealth. There is no mention of whether the women could be involved in the family business or take any form of agency in it.

It is ironic that despite the Narrator's male privilege and his evident dislike for her mother and sister's cruel words, he chooses to remain silent. On the other

hand, his wife, Anita, speaks up and reminds him that his silence supports his family in their misdoings and abuse. She scoffs, "It's enough for a man to simply stand there and watch. It's worse than shouting at her yourself."(26)

His anonymity suggests that he represents a typical helpless member of the urban bourgeoisie, with all the accompanying problems that belong to his class. However, the fact that his domestic problems enable him to delve into his consciousness particularises him. He escapes to the coffee house to reflect upon his circumstances whenever things get tense. However, when Chitra starts narrating stories of exploited women, it makes him too uncomfortable, and he changes the topic.

For the Narrator, his family is his whole world, and he seizes to separate his individuality and fate from that of his family. Additionally, after each incident, he stays tongue-tied until it reaches the stage where it is no longer possible for him to speak his mind. It is not that he is unaware; instead, he is attentive and aware of all the mishappenings in his surroundings, but he does nothing against it. He is ashamed of his silence, yet, he does not speak.

'Ghachar Ghochar,' a phrase used by Anita, means getting too entrapped in something without any visible means of escaping it. The capitalist structures that do not support the reproductive working class are all profusely intermingled within contemporary society. It is impossible for women to free themselves without experiencing its repercussions. Anita's character is the voice of social consciousness; however, curtailed in the end, which shows the author's lack of hope in the capitalist economy. It also discusses the hopelessness of the author because Anita's strict sense of morality makes her intolerant of the Narrator's association with patriarchal systems and deceitful appearances based on his job, ultimately leading to her downfall.

CONCLUSION

The change in the physical space of the family brings with it, a shift in their family values. The family space in this family is also in contradiction to the emotions that are generally associated with family. There is a lack of trust, warmth and comfort among the family members. Identities cross the margins of class and gender. They are not merely defined by gender in the novella. One is the mother-in-law, who is the mouthpiece of patriarchy and the oppressor. Another is Anita, the resistor who tries to overthrow the oppressor's power. Moreover, third is the meek and submissive victim of staunch patriarchy. Patriarchal power is not merely sustained by the patriarch in the family, that is, male; instead, the identity of the oppressor is also shared by both genders- male and female.

Also, the men of the family cannot be put in the same pool. There is a contradiction as not all males are powerful, rude and oppressive. On one side is

the Narrator, who is meek and submissive, whereas his uncle is rude and powerful. The power is omnipresent, i.e. uncle is not always present in the story and does not say much, but his presence is suffocating, oppressing and felt every moment in the book. Here come the means of oppression that are used; instead of physical or money power, he uses the mother-in-law to maintain his position of power. The role of ideology that Althusser talk about is of utmost importance here. Whereas in case of the husband, his presence is not felt, even when he is present. He has no say. Therefore, we can say that identities in the work are not so innocent and straightforward; there is a muddle in which they are formed.

References:

Dhawan, RK, editor. *The Fictional World of Arun Joshi*. Classical Publishing Company, 1986.

Mies, Maria. *Patriarchy and Accumulation On A World Scale: Women in the International Division of Labour.* Palgrav Macmillan, 1998.

Mongia, Sunanda. "Recent Indian Fiction in English: An Overview." *Spectrum History of Indian Literature in English* by Singh Ram Sewak and Sing Charu Sheel. Atlantic Publishers and Distributors, 1997.

Mukherjee, M. *Realism and Reality: The Novel and Society in India*. Oxford University Press, 1985.

Naik, M. K. *Dimensions of Indian English Literature*. New Delhi: Sterling Publishers, 1985.

Sadana, R. *English Heart, Hindi Heartland: The Political Life of Literature in India*. University of California Press, 2012.

Sapiro, G. (2016a), 'How Do Literary Works Cross Borders (or Not)?: A Sociological Approach to World Literature', *Journal of World Literature* 1 (1): 81–96.

Shanbagh, Vivek. *Ghachar Ghochar.* Translated by Srinath Perur. Penguin Books, 2017.

Smith, Deborah. "Ghachar Ghochar by Vivek Shanbhag review- a masterful English-language debut." *The Guardian* , 27 April 2017.

❑❑❑

1. Research Scholar, Department of English and Foreign Language, MDU, Rohtak, e-mail: mishagulia1048@gmail.com
2. Associate Professor, C.R.A College, Sonepat

केंद्रीय हिंदी संस्थान

शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

संपर्क : हिंदी संस्थान मार्ग, आगरा-282005, वेबसाइट : www.khsindia.org

संक्षिप्त परिचय

केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा 1961 ई. में स्थापित एक स्वायत्त शैक्षिक संस्था है। इसका संचालन स्वायत्त संगठन केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल द्वारा किया जाता है। संस्थान का मुख्यालय आगरा में स्थित है और इसके आठ क्षेत्रीय केंद्र : दिल्ली, हैदराबाद, गुवाहटी, शिलांग, मैसूर, दीमापुर, भुवनेश्वर तथा अहमदाबाद में हैं।

संस्था के प्रमुख उद्देश्य—

(i) भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुपालन में अखिल भारतीय भाषा के रूप में हिंदी का विकास करते हुए इसके विकास और प्रसार की दृष्टि से उपयोगी शैक्षणिक पाठ्यक्रमों की प्रस्तुति एवं संचालन (ii) विभिन्न स्तरों पर गुणवत्तापूर्ण हिंदी शिक्षण का प्रसार, हिंदी शिक्षकों का प्रशिक्षण, हिंदी भाषा और साहित्य के उच्चतर अध्ययन का प्रबंधन, हिंदी के साथ विभिन्न भारतीय भाषाओं के तुलनात्मक भाषा वैज्ञानिक अध्ययन को प्रोत्साहन और हिंदी भाषा एवं शिक्षण से जुड़े विविध अनुसंधान कार्यों का आयोजन (iii) अपने विभिन्न पाठ्यक्रमों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के लिए परीक्षा आयोजन तथा उपाधि वितरण (iv) संस्थान की प्रकृति एवं उद्देश्यों के अनुरूप उन अन्य संस्थाओं के साथ जुड़ना या सदस्यता ग्रहण करना या सहयोग करना या सम्मिलित होना, जिनके उद्देश्य संस्थान के उद्देश्यों से मिलते-जुलते हों और इन समान उद्देश्यों वाले संस्थानों को संबद्धता प्रदान करना (v) समय-समय पर नियमानुसार अध्येतावृत्ति (फैलोशिप), छात्रवृत्ति और पुरस्कार, सम्मान पदक की स्थापना कर हिंदी से संबंधित कार्यों को प्रोत्साहन आदि।

संस्थान के कार्य—

● **शिक्षणपरक कार्यक्रम :** (i) विदेशी विद्यार्थियों के लिए हिंदी शिक्षण (ii) हिंदीतर राज्यों के विद्यार्थियों के लिए अध्यापक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम (iii) नवीकरण एवं संवर्द्धनात्मक कार्यक्रम, (iv) दूरस्थ शिक्षण कार्यक्रम (स्ववित्तपोषित) (v) जनसंचार एवं पत्रकारिता, अनुवाद अध्ययन और अनुप्रयुक्त हिंदी भाषा विज्ञान के सांध्यकालीन पाठ्यक्रम (स्ववित्तपोषित)

● **अनुसंधानपरक कार्यक्रम :** (i) हिंदी शिक्षण की अधुनातन प्रविधियों के विकास के लिए शोध (ii) हिंदी भाषा और अन्य भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक व्यतिरेकी अध्ययन (iii) हिंदी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में आधारभूत एवं अनुप्रयुक्त अनुसंधान (iv) हिंदी भाषा के आधुनिकीकरण और भाषा प्रौद्योगिकी के विकास के उद्देश्य से अनुसंधान (v) हिंदी का समाज भाषा वैज्ञानिक सर्वेक्षण और अध्ययन (vi) प्रयोजनमूलक हिंदी से संबंधित शोधकार्य। अनुसंधानपरक कार्यों के दौरान द्वितीय भाषा एवं विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण के लिए उपयोगी शिक्षण सामग्री का निर्माण।

● **शिक्षण सामग्री निर्माण और भाषा विकास :** (i) हिंदीतर राज्यों और जनजाति क्षेत्र के विद्यालयों के लिए हिंदी शिक्षण सामग्री निर्माण (ii) हिंदीतर राज्यों के लिए हिंदी का व्यतिरेकी व्याकरण एवं द्विभाषी अध्येता कोशों का निर्माण (iii) विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण पाठ्यपुस्तकों का निर्माण (iv) कंप्यूटर साधित हिंदी भाषा शिक्षण सामग्री का निर्माण (v) दृश्य-श्रव्य माध्यमों से हिंदी शिक्षण संबंधी पाठ्यसामग्री का निर्माण (vi) हिंदी तथा हिंदीतर भारतीय भाषाओं के द्विभाषी/त्रिभाषी शब्दकोशों का निर्माण।

संस्थान के प्रकाशन : हिंदी भाषा एवं साहित्य, भाषाविज्ञान, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, तुलनात्मक एवं व्यतिरेकी अध्ययन, भाषा एवं साहित्य शिक्षण, कोश विज्ञान आदि से संबद्ध विभिन्न विषयों पर उपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन। अब तक 200 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। विभिन्न स्तरों एवं अनेक प्रयोजनों की पाठ्यपुस्तकों, सहायक सामग्री तथा अध्यापक निर्देशिकाओं का प्रकाशन। त्रैमासिक पत्रिका-गवेषणा, संवाद पथ, समन्वय दक्षिण, समन्वय पश्चिम, प्रवासी जगत, समन्वय पूर्वोत्तर, शैक्षिक उन्मेष, भावक, संस्थान समाचार एवे दो छात्र पत्रिका 'हिंदी विश्व भारती' तथा 'समन्वय' का प्रकाशन किया जाता है।

पुस्तकालय : भाषाविज्ञान, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, भाषा शिक्षण और हिंदी साहित्य के विभिन्न विषयों की पुस्तकों के विशेषीकृत संग्रह की दृष्टि से हिंदी के सर्वश्रेष्ठ पुस्तकालयों में से एक। एक लाख पुस्तकों का विशाल संग्रह उपलब्ध है। 75 से अधिक जर्नल, शोधपरक पत्र-पत्रिकाएँ उपलब्ध।

संस्थान से संबद्ध प्रशिक्षण महाविद्यालय : हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के स्तर को समुन्नत करने तथा पाठ्यक्रम में एकरूपता लाने के उद्देश्य से उत्तर गुवाहटी (असम), आइजोल (मिजोरम), दीमापुर (नागालैंड) के राजकीय हिंदी शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों को संस्थान से संबद्धता।

योजनाएँ : (i) भारतीय सांस्कृतिक केंद्र, कोलंबो एवं कैंडी में सिंहली विद्यार्थियों के लिए केंद्रीय हिंदी संस्थान के पाठ्यक्रम की 2007-08 से शुरुआत (ii) अफगानिस्तान के नान्गरहर विश्वविद्यालय (जलालाबाद) में संस्थान द्वारा निर्मित बी.ए. का पाठ्यक्रम 2007-08 से प्रारंभ (iii) विश्व के कई अन्य देशों (चेक, स्लोवानिया, संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, मॉरीशस, बेल्जियम, रूस, जापान, उज्बेकिस्तान एवं कज़ाकस्तान आदि) के साथ शैक्षणिक सहयोग और हिंदी पाठ्यक्रम संचालन के संबंध में संवाद जारी (iv) हिंदी के बहुआयामी संवर्धन के लिए हिंदी कॉर्पोरा परियोजना, हिंदी लोक शब्दकोश परियोजना, भाषा-साहित्य सीडी निर्माण परियोजना, पूर्वोत्तर लोक साहित्य परियोजना, हिंदी विश्वकोश परियोजना पर कार्य।

-श्री अनिल कुमार शर्मा
उपाध्यक्ष, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल
ई-मेल : vicechairmankhs@gmail.com

-प्रो. बीना शर्मा
निदेशक
ई-मेल : directorkhs1960@gmail.com

विश्व हिंदी साहित्य परिषद

हिंदी साहित्य, संस्कृति एवं भाषा

से संबंधित पुस्तकों के प्रकाशन के लिए संपर्क करें

अध्यक्ष : डॉ. आशीष कंधवे

ईमेल : vhspindia@gmail.com
www.vhspindia.in

संपर्क : 011-47481521, 9811184393

1. हिंदी एवं भारतीय भाषा का प्रचार-प्रसार एवं समग्र विकास
2. अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी भाषा के विकास और विस्तार के लिए सेमिनार, सम्मेलनों का आयोजन
3. उत्तम साहित्य का प्रकाशन
4. साहित्यकार सहायता योजना
5. हिंदी को तकनीक से जोड़ना
6. पुरस्कार / प्रतियोगिता का आयोजन
7. रोजगारोन्मुख हिंदी के लिए प्रयास एवं योजनायें
8. संग्रहालय / पुस्तकालय / संगोष्ठी कक्ष की स्थापना
9. साहित्य एवं संस्कृति के चहुँमुखी विकास के लिए प्रयासरत
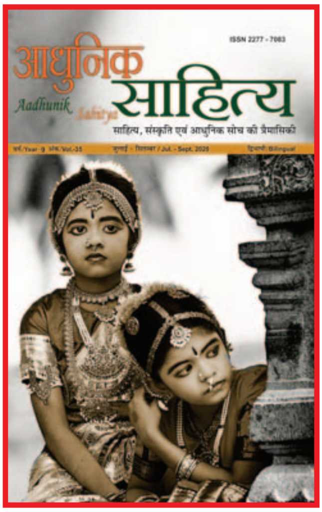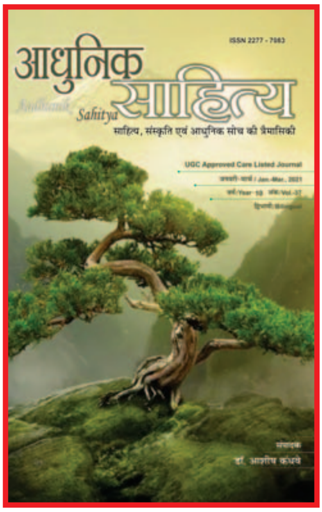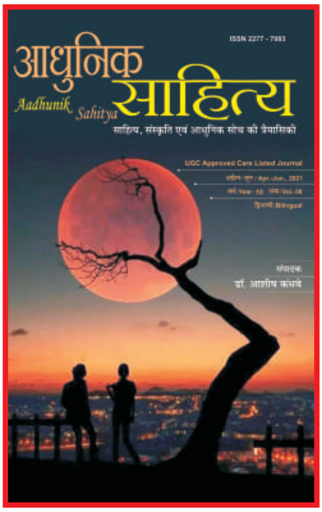
RNI No. DELBIL/2012/42547